बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड–31

डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग– I)

बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब

डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड 31

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 31

डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग–1)

पहला संस्करण : 2019 (जून)

ISBN : 978-93-5109-139-4

© सर्वाधिकार सुरक्षित

आवरण परिकल्पना : श्री देबेन्द्र प्रसाद माझी

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

खंड 22–40 सामान्य (पेपरबैक) के 1 सेट का मूल्य :

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

15, जनपथ

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय

भारत सरकार, नई दिल्ली – 110 001

फोन : 011–23320588, 23320571

जनसंपर्क अधिकारी मोबाइल नं. 85880–38789

वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in

Email-Id : cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
एवं
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्रीमती नीलम साहनी
सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

श्रीमती रश्मि चौधरी
संयुक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार
एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री देवेन्द्र प्रसाद माझी
निदेशक
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार
संयोजक
बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

अंग्रेजी में सकंलन
श्री वसंत मून

अनुवादक
सीताराम खोड़ावाल

पुनरीक्षक
श्री उमराव सिंह

सत्यमेव जयते

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्‌वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

प्राक्कथन

भारत रत्न बाबासाहेब डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर अप्रतिम प्रतिमा के धनी थे। वे सच्चे देशभक्त थे। उन्होंने देश की महान सेवा की। देश को कमजोर बनाने वाली समस्याओं को समझा और उनके कारणों को एक अन्वेशी के रूप में तह तक पहुंचकर जानने का अथक प्रयास किया। समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था को वे प्रजातंत्र के लिए घातक मानते थे। वे वर्ण–व्यवस्था को, जाति व्यवस्था की जननी मानते थे। मनुष्य–मनुष्य के साथ अमानवीय व्यवहार करे, उसके साथ छुआछूत बरते, वह मनुष्य सभ्य नहीं कहा जा सकता, वह समाज जो इसकी आज्ञा दे वह समाज सभ्य नहीं कहा जा सकता। आज समाज की कुप्रथा को अवैध करार दे दिया गया है। बाबासाहेब के प्रयासों का ही परिणाम है।

बाबासाहेब डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर के अंग्रेजी में प्रकाशित वाङ्मय को हिन्दी के अतिरिक्त देश की अन्य 8 क्षेत्रीय भाषाओं में अनुदित किया जा रहा है।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय, सामाजिक न्याय और अधिकारिता 'मंत्री' एवं सचिव, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

प्रस्तुत हिन्दी खंड–31 में **"डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग–1)"** नामक शोधपूर्ण रचना समाहित है। मानविकी के अध्येताओं लिए तो आधारभूत सामग्री है ही, साथ ही यह सामग्री समाज निर्माण के सुधी एवं सजग प्रहरियों के लिए चिंतन का आधार बनेगी। पाठकों के बहुमूल्य सुझावों की प्रतिक्षा बनी रहेगी।

नई दिल्ली

रश्मि चौधरी
सदस्य सचिव,
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

<u>प्रकाशकीय</u>

महाराष्ट्र सरकार द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, वाङ्मय का हिंदी एवं अन्य 8 क्षेत्रीय भाषाओं में डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अनुवाद किया गया। इस अनूदित कार्य का सुधी पाठकों ने हृदय से स्वागत किया है।

हमें प्रसन्नता है कि हम अपने पाठकों के समक्ष खंड 31 (अंग्रेजी खंड–13) हिंदी में समर्पित कर रहे है।

प्रस्तुत खंड में "**डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग–I)**" में शोधपूर्ण सामग्री समाहित की गई है। बाबासाहेब अम्बेडकर ने भारतीय इतिहास के तथाकथित स्वर्णयुग से छुआछूत के औचित्य पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। आज की सभ्यता और आवश्यकता के संदर्भ में सुधी पाठक, इतिहास को नए सिरे से देखना चाहेगा।

अंत में मैं अपने संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों आदि सभी सहयोगियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

हमें आशा और विश्वास है कि हमारे पाठक पूर्ववत की तरह इस खंड का भी स्वागत करेंगे।

नई दिल्ली

देबेन्द्र प्रसाद माझी
निदेशक,
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

अस्वीकरण

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र हैं। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "**बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर: संपूर्ण वाङ्मय**" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रण किया जा रहा है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में तथा व्याकरण एवं मुद्रण सम्बधी सुझाव से डॉ अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि हिंदी में प्रथमवार अनुदित, इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकें।

पाठकों के बहुमूल्य सुझावों की प्रतिक्षा बनी रहेगी।

निदेशक

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान,
नई दिल्ली–01

जिस समाज में कुछ वर्गों के लोग जो कुछ चाहें वह सब कुछ कर सकें और बाकी वह सब भी न कर सकें जो उन्हें करना चाहिए, उस समाज के अपने गुण होते होंगे, लेकिन इनमें स्वतंत्रता शामिल नहीं होगी। अगर इंसानों के अनुरूप जीने की सुविधा कुछ लोगों तक ही सीमित है, तब जिस सुविधा को आमतौर पर स्वतंत्रता कहा जाता है, उसे विशेषाधिकार कहना अधिक उचित होगा।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर

विषय सूची

संदेश v

प्राक्कथन vii

प्रकाशकीय viii

अस्वीकरण ix

प्रस्तावना : माननीय श्री मनोहर जोशी पृष्ठ संख्या
मुख्यमंत्री, महाराष्ट्र, राज्य शासन 307

सम्पादकीय : 309

हिंदू विवाह वैधता विधेयक
(प्रवर समिति की रिपोर्ट के प्रस्तुत करने के लिए समय–सीमा में वृद्धि) 66

भाग–1

अनुभाग एक

हिंदू संहिता विधेयक को प्रवर समिति को सौंपा जाना
(17 नवम्बर, 1948 से 9 अप्रैल, 1948 तक) 314

अनुभाग दो

प्रवर समिति द्वारा संशोधित तत्कालीन हिंदू संहिता
सहित डॉ. अम्बेडकर द्वारा तैयार हिंदू संहिता विधेयक का प्रारूप 353

अनुभाग तीन

प्रवर समिति से वापस भेजे जाने के पश्चात् हिंदू संहिता पर की गई चर्चा
(11 फरवरी, 1949 से 14 दिसम्बर, 1950 तक) 482

भारतीय गैर–न्यायिक भारत 516

हिन्दू संहिता – जारी... 610

भाग 3

दत्तकग्रहण 681

भाग 5

संयुक्त परिवार की संपत्ति 713

पुरुष मरुमक्कत्तायस इत्यादि की संपत्ति का उत्तराधिकार 747

मरुमक्कतायम स्त्री आदि की संपत्ति का उत्तराधिकार 753

अध्याय 3

वसीयती उत्तराधिकार 768

भाग 9

विविध 787

हिंदी खंड 31

भाग I

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया अंग्रेजी में भाषण दें।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : चूंकि यह निर्णय अत्यधिक महत्व का है। अत: इसी कारण से मैं हिंदी में भाषण देना चाहूँगा।

डॉ. मनमोहन दास (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : हम माननीय शिक्षा मंत्री द्वारा हिंदुस्तानी में बोले गये भाषण को समझ सकते हैं। यह भाषण सेठ गोविन्ददास अथवा पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी में बोले गये भाषणों से नितान्त भिन्न है। नौसिखियों के रूप में हम यह नहीं जानते हैं कि हिन्दुस्तानी क्या है।

माननीय उपाध्यक्ष : ऐसा कोई भी स्थापित मानक नहीं है जिसकी यहां नकल की जाये जो कुछ भी बोला जाता है, वही हिन्दुस्तानी है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : अपना भाषण प्रारम्भ करने से पूर्व (**माननीय सदस्यगण :** कृपया अंग्रेजी में बोलें) कई सदस्यों की इच्छा है कि मुझे अंग्रेजी में बोलना चाहिये। मुझे माननीय सदस्यों की इच्छा का आदर करने में तनिक भी हिचक नहीं है। परन्तु सभी माननीय सदस्य जानते हैं कि खुद को अंग्रेजी की अपेक्षा अपनी भाषा में अभिव्यक्त करना अधिक सरल है। अत: यदि मुझे अनुमति दी जाये तो मैं हिंदी में बोलना चाहता हूँ। परन्तु यदि वे मुझे अंग्रेजी में बोलने के लिए ही कहते हैं तो मुझे अंग्रेजी में अपना भाषण प्रारम्भ करने में किसी प्रकार की हिचक नहीं होगी। (**माननीय सवस्यगण :** 'हिंदी हिंदी') जैसा कि मेरा विचार है कि अधिकांश माननीय सदस्य अंग्रेजी में बोलने पर जोर नहीं दे रहे हैं, अत: मैं हिंदी में बोलना चाहता हूँ।

श्रीमती जी दुर्गा बाई (मद्रास : सामान्य) : कृपया सरल हिंदी में भाषण दें, ताकि हम भी समझ सकें।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं सरलतम हिंदी में बोलने की कोशिश करूंगा। आज जब सदन के समक्ष मैं हिंदू संहिता विधेयक के बारे में भाषण देने के लिए खड़ा हुआ हूँ, तो मेरे हृदय में अनेक परस्पर-विरोधी विचार कचोट रहे हैं। प्रारम्भ में ही निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो यह घोषित करते हैं कि हिंदू संहिता विधेयक, हिंदू-संस्कृति और हिंदू-सभ्यता की मृत्यु का शंखनाद होगा। मेरी यह इच्छा है कि हिंदू-संस्कृति, हिंदू-समाज और हिंदू-सभ्यता अनन्त काल तक जीवित रहे जब तक कि इस विश्व का अन्त न हो जाये। मैं किसी भी प्रकार से इस का विरोधी नहीं हूँ। मैं थोड़ा भी भयभीत नहीं हूँ कि यह विधेयक या अन्य कोई विधेयक हिंदू-संस्कृति या सभ्यता को किसी भी प्रकार से कोई हानि पहुंचायेगा। मेरी इच्छा है कि वे सभी दुर्गुण जो काफी समय से हिंदू समाज में घर कर गये हैं और जिनके बारे में डॉ. अम्बेडकर ने इस सदन के समक्ष अपने निष्कर्ष में अपील की है, उसे हटाया जा सकता है और उस

अपील पर गहरे चिन्तन और शाक्त-हृदय से सोचा जा सकता है। परन्तु वास्तव में, यदि हिंदू समाज को संरक्षित किया जाना है तो इसमें सन्देह नहीं कि यदि समाज के सुधार के लिए आवश्यकता महसूस की जाएगी तब फिर समाज सुधार करना होगा।

दोपहर 12 बजे

मैं कठोरता से उन व्यक्तियों का विरोध करता हूँ जो इस बात का समर्थन करते हैं कि यह विधेयक, हिंदू संस्कृति का अन्त कर देगा। मैं यह स्वीकार करने के लिए एक क्षण के लिए भी तैयार नहीं हूँ। वह तथ्य कि यह सदन अथवा इस सदन के माननीय सदस्य जो प्राचीन-काल के स्मृतिकारों के समान योग्यता रखते हैं, उनके पास शास्त्रों अथवा कानून में कोई परिवर्तन करने का अधिकार नहीं है। मैं इस बात का समर्थन करता हूँ कि प्रत्येक सदस्य और समुदाय सदस्यों को समय की आवश्यकताओं के अनुरूप कानून बनाने का पूरा अधिकार है। आज, यदि कोई अपील करता है कि यह एक पुराना रिवाज होने से हमें तद्नुसार कार्य करना चाहिए। तब इस आरोप के बारे में यह निवेदन करना चाहूँगा कि ऐसा एक भी रिवाज नहीं है जिससे भारत ने प्रयोग न किया हो। भारत में कुछ ऐसे स्थान हैं जहां उत्तराधि-कार की पद्धति भारत के अन्य भागों से नितान्त भिन्न है। क्या हम यह नहीं जानते कि खासी जन-जातियों और दक्षिणी पंजाब के कुछ भागों में उत्तराधिकार की समूची पद्धति इस तथ्य पर आधारित है कि सम्पूर्ण सम्पत्ति बेटों की अपेक्षा बेटियों के अधिकार में होती है। भारत में कुछ ऐसे भी भाग हैं जहां लड़की को ससुराल जाने के स्थान पर लड़की के पति को पत्नी के परिवार में ही लाया जाता है। भारत ऐसा देश है जहां प्रत्येक प्रकार का रिवाज और कानून प्रचलन में रहा। क्या ऐसी कोई एक सामाजिक प्रणाली है, जिसका हमने परीक्षण न किया हो। कल ही डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि कुछ स्मृतियों में इस बात का उल्लेख है कि बेटियों को बेटों के साथ समान रूप से उत्तराधिकारी घोषित किया जाना चाहिये। अतः यह व्यवस्था काफी समय से विद्यमान थी। इसके अलावा मैं ऐसा कोई कानून नहीं जानता जिसे नया कानून कहा जा सकता है। तलाक आज भी कई स्थानों में प्रथागत है। प्राचीन स्मृतियों के अध्ययन करने से यह विदित होता है कि उनमें भी तलाक का उल्लेख है। मैं यह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ कि हमें उन प्राचीन आदर्शों को उलट देना चाहिए क्योंकि उनका उल्लेख प्राचीन स्मृतियों में किया गया है। यदि हम सोचते हैं कि वे आदर्श हमारे आज के समाज के उपयुक्त नहीं हैं, तो ऐसे आदर्शों का पालन क्यों किया जाये। मैं जानता हूँ कि भारत में एक समय ऐसा था जब विवाह संस्था स्वयं भारत में प्रचलित नहीं थी और लोग विवाहों के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। प्राचीन काल में नियोग की प्रणाली भारत में काफी समय तक प्रचलित रही। हिंदू कानून में आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख है। इनमें से कुछ विवाह ऐसे भी हैं जिन्हें विवाह नहीं कहा जा सकता। क्या कोई इस बात को स्वीकार कर सकता है कि इस प्रकार के आदर्शों को वर्तमान समय में पुनः प्रारम्भ किया जाना चाहिये। मेरे विचार

से तो ऐसा कोई नहीं है। अतः मैं इस प्रश्न पर विचार नहीं करना चाहता जो आज हमारे सामने है, प्राचीन काल में क्या प्रचलित था, कि कैसे हमारे पूर्वज अपने खुद के कानून बनाकर समाज को अधिनियमित करते थे। मेरे सामने प्रश्न यह है कि हमें किन चीजों की जरूरत है, अपनी आवश्यकताओं, विधिक सकल्पनों और जरूरतों पर पूर्ण रूप से विचार करने के उपरांत आज के समय में क्या चाहिए। इस संहिता ने देश भर में बड़े पैमाने पर अप्रसन्नता, अशान्ति और कठोरता पैदा की है। कुछ महिलाएं यह घोषित करती हैं कि उन्हें पुरुषों के समान अधिकार चाहिये। अतः यह संहिता उनका पक्ष लेती है। पर कुछ व्यक्ति घोषित करते हैं कि महिलाओं के कोई अधिकार नहीं हैं। मैं अति विनम्र होकर इस सदन से यह निवेदन करता हूँ कि जब तक यह विधेयक इस सदन में विचाराधीन है तब तक हमें इसके विभिन्न नारेबाजियों अथवा इस तरह की चीजें जैसे आरोपों की ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये कि यह विधेयक महिलाओं के पक्ष में है अथवा पुरुषों के पक्ष में है। शान्तभाव से हमें यह विचार करना चाहिये कि क्या यह विधेयक पर्याप्त है अथवा पर्याप्त नहीं है। वह कौन आदमी है जो यह कह सके कि वह महिला से नहीं जन्मा है और वह कौन महिला है जो यह कह सके कि वह आदमी की बेटी नहीं है। इसलिए इस प्रकार के मामले में क्या हम अपनी बहनों, बेटियों और माताओं के साथ सहानुभूति पूर्ण व्यवहार नहीं करेंगे? क्या हमारी माताएँ, बहनें और बेटियां यह मांग करेंगी कि वे अपने पतियों, भाईयों और बेटों के साथ उचित रूप से व्यवहार नहीं करेंगी? इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि इस मामले में कटु वाद-विवाद हों। मैं जानता हूँ कि यह अत्यन्त नाजुक समस्या है। अतः हमें उपयुक्त तरीके और शांतमन से इस पर विचार करना चाहिये।

इस बारे में अधिक विचार करने से पूर्व मैं इस प्रश्न के सम्बंध में कुछ बातें प्रस्तुत करना चाहता हूँ ताकि सदन के माननीय सदस्य और विशेष रूप से मेरी बहनें यह न सोचें कि मैं कुछ पूर्वाग्रह के साथ इस विधेयक का खण्डन करना हूँ अथवा इसका समर्थन करता हूँ। सर्वप्रथम मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैं ऐसी विचारधारा से संबंध रखता हूँ जो यह विश्वास करता है कि जब तक महिलाओं को अचल और चल दोनों सम्पत्ति में उचित अधिकार नहीं दिया जाता, तब तक उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं होगा। मैं जोरदार शब्दों में महिलाओं के आर्थिक निर्भरता का खण्डन करता हूँ। मैं सीता जी के उस श्लोक को पसन्द नहीं करता जिसमें उन्होंने कहा है:

मितं ददाति हि पिता मितं भ्राता मितं सुतः।
अमितस्यतु दातारं भर्तारन् का न पुजयेत।।

मैं रामायण का अत्याधिक आदर करता हूँ परन्तु मैं एक क्षण के लिए यह सिद्धान्त स्वीकार करने के लिए तैयार नही हूँ कि महिलाओं को सदैव आश्रित रखना चाहिए। मैं एक क्षण के लिए स्मृतियों में से कुछ का आदेश स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ

कि जब तक महिला का विवाह न हो जाये, उसे अपने पिता के नियन्त्रण में रहना चाहिये और विवाह के बाद पति के नियन्त्रण में और यदि वह विधवा हो जाती है तो अपने पुत्र के नियन्त्रण में होना चाहिये। मैं स्मृतियों के इस आदेश का विरोध करता हूँ इस कारण नहीं कि ये आदेश महिलाओं के लिए दुख:दायी हैं। मैं जानता हूँ कि जब तक भारत में महिलाओं का व्यक्तित्व सशक्त नहीं होता, तब तक महिलायें अपनी आर्थिक दशा में सुधार नहीं कर पायेंगी और जब तक उनका चहुँमुखी विकास नहीं होता, हमारी वंशावली में सुधार नहीं होगा। पुरुषों के समान महिलाओं को भी अपने विकास के लिए सभी प्रकार के अवसर दिये जाने चाहिये। मैं सोचता हूँ कि यह बिल्कुल भी न्यायसंगत नहीं है कि इस प्रश्न को संकीर्ण दृष्टिकोण से देखा जाए। हमें इस प्रश्न पर अधिक बुद्धिमत्ता से विचार करना है समग्र राष्ट्र तथा देश के कल्याण और उन्नति को ध्यान में रखते हुए।

हजारों वर्षों से हम कुछ प्रचलित **रिवाजों और अनुष्ठानों** के बारे में विश्वास करते रहे हैं और हम उन्हें सुरक्षित भी रखे हुए हैं। परन्तु इसके साथ ही हमें अपने कार्य की रूपरेखा का भी निर्धारण करना है कि हमें उन मुद्दों के सम्बंध में किस प्रकार कार्यरत होना है जो आज विश्व में उठाये जा रहे हैं जैसे 'महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलने चाहिये'। हमें इस सिद्धांत को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं करना चाहिये, परन्तु हम कम से कम इस बात के लिए वचनबद्ध हैं कि पुरुषों के समान उन्हें विकास के लिए अवसर और सुविधायें प्राप्त हों। हमें इस सिद्धांत को ध्यान में रखना होगा। अत: बिना किसी आपत्ति के मैं यह निवेदन करता हूँ कि महिलाओं को चल और अचल सम्पत्तियों में उनके कानूनी अधिकार मिलने चाहिए। मैं बलपूर्वक इसका समर्थन करता हूँ और मैं डॉ. अम्बेडकर को बधाई देता हूँ, उनके इस विधेयक में विवाह तथा गोद लेने के मामलों में जाति उन्मूलन के सिद्धांत को अस्वीकार करने। मेरे पास यह बताने के लिए शब्द नहीं हैं कि मैं आपको यह बता सकूं कि मैं इस प्रश्न को कितना अधिक महत्वपूर्ण मानता हूँ। मैं इस प्रश्न को राष्ट्र निर्माण के प्रकाश में देखता हूँ। यह प्रश्न हमारे जीवन-मरण का प्रश्न है, यह प्रश्न हमारे आधारभूत सिद्धांतों से संबंधित है। यदि किसी बात ने भारत का विनाश किया है उसकी प्रगति में बाधा डाली है तथा पाकिस्तान बनाने का कारण बनी है, तो वह जाति-प्रथा है। यदि कोई बात हमारे समाज में प्रवेश कर गई और उसकी शक्ति को खा रही है। जिसने ब्राह्मण को दूसरों का शत्रु बना दिया है, जाट को इतर जाट का शत्रु बना दिया है और को अन्य समुदायों का शत्रु बना दिया है। यह केवल जातिवाद है। मैं यह नहीं जानता कि हम किस प्रकार एक वर्गहीन समाज के निर्माण के मार्ग का अनुसरण, अस्वीकार कर सकते हैं जिसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस देश को दिखाया है। दो बातें, जो इस देश के लोगों को एकता में पिरोने के सूत्र हैं, वे रोटी-बेटी के सम्बंध को अपनाने में हैं। जहां तक अन्तर्जातिय विवाहों का सम्बंध है और जब तक इस प्रश्न का समाधान नहीं हो पाता, तब तक भारत में राष्ट्र-निर्माण की समस्या का समाधान नहीं हो सकता। इसलिए जहां तक इस प्रश्न का सम्बंध है, मैं सशक्त रूप से इसके पक्ष में हूँ।

जहां तक एक पत्नीत्व का प्रश्न आता है, कोई भी सदस्य इसके विरुद्ध नहीं हो सकता। जहां तक एक पत्नीत्व के परिणामों का सम्बंध है, मैं जानता हूँ, इसका पारित करना उस क्षेत्र को बुरी तरह प्रभावित करेगा जहां से मैं आता हूँ। चूंकि आज भी, परिस्थितियों के अनुसार यदि कोई अपनी विधवा छोड़कर मरता है, उस विधवा को उसके छोटे भाई से पुनर्विवाह कर दिया जाता है। मैं जानता हूँ कि भविष्य में हम इन कालातीत-रिवाजों को नहीं चला पायेंगे। मैं समझता हूँ कि इस कालातीत प्रणाली के दोषों के बारे में उन लोगों को बताया जाये और इसके बारे में स्पष्ट किया जाये जो इससे प्रभावित होंगे, तो वे भी इस प्रणाली को त्यागने के लिए तुरन्त तैयार हो जायेंगे।

जहां तक एक के प्रश्न का सम्बंध है और उन लोगों का जिसकी मैं बात कर रहा हूँ। मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि ये लोग अपनी आवश्यकताओं और बुद्धि के अनुसार उस समय इस सिद्धांत के बारे में सोचा और स्वीकार किया था जब विधवा पुनर्विवाह भारत में प्रचलित नहीं था। बिना किसी आपत्ति के मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि जहां तक एक पत्नीत्व, जातिप्रथा का उन्मूलन और महिलाओं को पूरे अधिकार दिये जाने का प्रश्न है, मैं उनका पूर्ण समर्थन करता हूँ।

जहां तक तलाक के प्रश्न का सम्बंध है, मैं जानता हूँ कि तलाक की प्रणाली भारत के अधिकांश भागों में विद्यमान है, पर इन दिनों कुछ लोगों को तलाक देने की प्रणाली बुरी लगती है। वास्तव में, हमारे जैसे देश में जहां रीति-रिवाजों के अनुसार महिलायें सती हो जाया करती थीं। तलाक की प्रणाली के बारे में विरोधी मत आश्चर्य की बात नहीं है। हमारे विश्वासों के अनुसार विवाह एक अविभाजित सम्बंध है और इस दृष्टिकोण से तलाक का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिये। परन्तु मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि हमारे देश में तलाक देने की प्रणाली सदैव रही है और यह आज भी विद्यमान है। यदि लोग अपनी आंखें मूंदकर चलना चाहते हैं और यदि वे यह देखना नहीं चाहते कि उनके चारों ओर विश्व में क्या घट रहा है, तो यह उनके अपने सोचने-समझने की बात है। डॉ. अम्बेडकर ने हमें बताया है कि यह प्रणाली इस देश के 90% लोगों में पायी जाती है। मैं इस बारे में निवेदन करता हूँ कि ये आंकड़े अधिक अनुमानित आंकड़ों की तुलना में कम अनुमानित आंकड़े हैं। जहां तक एक ओर भारत में इसके प्रचलन का प्रश्न है मैं पूर्णतया: इसका समर्थन करता हूँ, इस कारण नहीं कि ये आज के समाज में विद्यमान है बल्कि इस तथ्य के लिए कि यह हमारे रीति-रिवाजों में से एक है। इसलिए मैं तलाक के पक्ष में हूँ।

प्रश्न यह उठता है कि इस हिंदू संहिता विधेयक में, जैसा कि प्रवर समिति से उभरा है, इसका मुख्य दोष यह है कि यह दूरदर्शी नहीं है। वास्तव में, हमारे देश में जो रीति-रिवाज प्रचलित हैं और प्रवर समितिओं द्वारा जो सुधार सुझाये गए हैं, बहुत ही कम हैं। पंजाब के लोग इतने पिछड़े नहीं हैं। जहां तक, सामाजिक सुधारों का प्रश्न है, पंजाब के लोग

भारत के शेष भागों की अपेक्षा कहीं आगे हैं। यह संहिता उस हद तक भी सुधार नहीं सुझाती। उनके लिए इस संहिता में सामाजिक सुधार नहीं है, बल्कि यह उन्हें पीछे ले जाती है। यदि इस संहिता को पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में किसी हिंदू या सिख को दिखाया जायेगा, तो वह कहेगा "श्रीमान, आप क्या कर रहे हैं? आप तो हमें पीछे धकेल रहे हैं। हम इस सबसे बहुत आगे हैं। आप हमें फिर भी पीछे ले जाना चाहते हैं। पंजाब के लोग इससे लाभान्वित नहीं होंगे।" प्रवर समिति से आई वर्तमान संहिता में पंजाब के लोगों की आवश्यकतायें बहुत पीछे छूट गई हैं। ये आवश्यकतायें केवल पीछे ही नहीं छूटी हैं, अपितु इस विधेयक में कछ बातें हम पर ये दबाव डालती हैं। यदि यह विधेयक अपने वर्तमान रूप में ही बना रहता है तो हम इस विधेयक को बाहर फैंक दें। यदि हम अपनी संस्थाओं को सुरक्षित रखना चाहते हैं, तो वे इस विधेयक के वर्तमान स्वरूप में सुरक्षित नहीं रखी जा सकतीं और इस प्रकार यह विधेयक आक्रोश पैदा करने वाला होता है।

श्री मोहन लाल गौतम (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : इस बारे में कोई उदाहरण दीजिये।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं अभी एक उदाहरण देता हूँ। इस भूमिका के बाद, श्रीमान आपकी अनुमति से मैं यह आपत्ति प्रस्तुत करने का निवेदन करता हूँ कि मुझे इस विधेयक के विरुद्ध उठना है और यह कहना है कि मैं किस सीमा तक इस विधेयक का समर्थन करता हूँ। इस विधेयक में ऐसे अनेक प्रावधान हैं जिसके बारे में किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती। कुछ ही ऐसे लोग होंगे जो कहना चाहेंगे कि वे इस विधेयक के सभी उपबंधों के विरुद्ध हैं। परन्तु श्रीमान, यदि आप इस विधेयक का अध्ययन करें तो आपको यह पता लगेगा कि प्रवर समिति के सत्रह सदस्यों में से ग्यारह सदस्यों ने इस विधेयक पर असहमति प्रकट की है। और वे कौन हैं? उनमें श्रीमती अम्मू स्वामीनाथन और श्रीमती रेणुका रे हैं। इन दोनों महिलाओं की असहमति की टिप्पणियां भी हैं।

श्रीमती रेणुका रे (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : वे टिप्पणियां मूलभूत सिद्धांतों पवांर नहीं हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं इसी विषय पर आ रहा हूँ। यदि सच बात कही जाए तो ग्यारह सदस्य जिन्होंने असहमति की टिप्पणियाँ दी हैं, इस विधेयक का विरोध किया है जो प्रवर समिति के समक्ष से आया है। अब मैं यह निवेदन कर रहा हूँ कि इस पर असहमति का नोट किन सदस्यों ने लिखा है। असहमति की टिप्पणी देने वालों में से एक सदस्य बक्शी टेक चन्द हैं, जिन्होंने जीवनपर्यन्त समाज सुधार के लिए कार्य किया है और वे समाज सुधारों के लिए किसी भी सीमा तक जा सकते हैं। यदि वे भी असहमति की टिप्पणी लिखते हैं तो यह हमारे सोचने के लिए है कि हम कहां जा रहे हैं? यदि इन असहमति की टिप्पणियाँ को सावधानी से पढ़ा जायेगा तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि सत्रह सदस्यों में

से कम से कम ग्यारह सदस्य दृढ़ता से उस विधेयक का विरोध करते हैं, जिस रूप में यह विधेयक प्रवर समिति से आया है। इस भूमिका के बाद, मैं यह निवेदन करता हूँ कि मैं इस प्रकार के प्रस्ताव रखने के लिए क्यों तैयार हूँ, जो सामान्य रूप से उस विधेयक के विरोध में विलम्बकारी समझे जाते हैं, जिस रूप में विधेयक प्रवर समिति से आया है।

श्री तजामुल हुसेन (बिहार : मुस्लिम) : श्रीमान मैं एक सूचना पाना चाहता हूँ। माननीय सदस्य ने बताया है कि प्रवर समिति के 17 सदस्यों में से 11 सदस्यों ने इस पर असहमति की टिप्पणी लिखी है। यदि वे इस विधेयक के विरोध में हैं, तो मैं माननीय सदस्यों से यह पूछना चाहूँगा कि इस विधेयक की प्रवर समिति द्वारा यह किस प्रकार की सिफारिश की गई है, कि हम उसे पारित कर सकें।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मेरी राय में यह प्रश्न न तो सूचना संबंधी है और न व्यवस्था का, आप स्वयं इस विधेयक का अध्ययन कर सकते हैं। श्री भारती ने भी इस पर असहमति की टिप्पणी लिखी है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : मेरा विचार इस विधेयक से कुछ आगे का है। मैं इस विधेयक का कार्य-क्षेत्र भी बढ़ाना चाहता हूँ। यही मेरी असहमति की टिप्पणी है।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य प्रत्येक टिप्पणी और प्रत्येक वाक्य को स्पष्ट करना चाहते हैं? मुझे यह आवश्यक नहीं लगता।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : नहीं, श्रीमान मैं···

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य की असहमति की टिप्पणी मुद्रित अवस्था में है। उन्हें उनकी बारी आने पर समय मिलेगा यदि वे कोई स्पष्टीकरण देना चाहते हैं। इसमें कोई अच्छाई नही है कि वक्ता के बोलने के समय हस्तक्षेप किया जाये और अन्य माननीय सदस्य भी एक साथ बोलने के लिए खड़े हो जायें।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान, क्या मैं कुछ कह सकता हूँ···

माननीय उपाध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य को पर्याप्त सुन चुका हूँ।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के बिन्दु पर श्रीमान्।

माननीय उपाध्यक्ष : शांत शांत!

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, मैं श्री भारती को यह कष्ट नहीं देना चाहूँगा कि वे सदन के समक्ष अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करें। अत: मैं स्वयं उनका दृष्टिकोण प्रस्तुत करता हूँ। श्री भारती की टिप्पणी यह है कि वे इस विधेयक के मूलभूत सिद्धांतों

के विरुद्ध नहीं हैं। वे चाहते हैं कि तर्कसम्मत परिणाम में महिलाओं को यह अधिकार दिया जाना चाहिये कि ऐसी सभी महिलायें जिनकी सीमित सम्पत्ति है। वह चाहते हैं कि तत्काल सम्पत्ति की पूर्ण स्वामिनी बन जाएं। मैं सोचता हूँ, मैं सही कह रहा हूँ?

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मुझे उत्तर देने की अनुमति नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य पंडित भार्गव अपनी बात जारी रखें।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, इस कारण से मैं यह निवेदन कर रहा था कि प्रवर समिति के कई सदस्यों ने इस विधेयक के प्रारूप पर अपनी असहमति की टिप्पणी लिखी है। जैसा यह विधेयक प्रवर समिति से आया है। इसी पर कौन-से इरादे से ये असहमति की टिप्पणियां लिखी गई थीं। मैं बाद में निवेदन करूंगा, परन्तु मैं चाहता हूँ कि मेरे भाषण के बीच में टोकाटाकी न की जाए।

श्रीमान, मैं यह निवेदन कर रहा था कि यद्यपि यह विधेयक एक सीमा तक जाता है और मैं इससे भी परे जाने को तैयार हूँ, पर जहां तक सामाजिक सुधारों की बात है परन्तु फिर भी मैं अपने को ऐसी स्थिति में नहीं पाता हूँ कि इस विधेयक का पूर्णतया समर्थन करूं। और यह बात बिल्कुल स्वाभाविक है। यहां तक कि डॉ. अम्बेडकर स्वयं, जिनकी कृपा से इस विधेयक ने यह रूप लिया है और जिन्होंने ऐसा भाषण दिया है कि जिसके लिए प्रत्येक भारतीय और विशेषकर हिंदू को गौरवान्वित महसूस करना चाहिये, इस विधेयक के सभी उपबंधों का समर्थन नहीं करते। उसके बाद उन्होंने बताया है कि प्रवर समिति जगह-जगह तर्कसंगतता के बाहर गई है। मैं अधिक कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहता, परन्तु मैं यह कहूँगा कि वे भी इस विधेयक के विरुद्ध हैं और इस प्रकार असहमति के लिए 12 टिप्पणियां हैं। इसीलिए मैं यह निवेदन कर रहा था कि इन 17 सदस्यों में से 12 सदस्य इस विधेयक के विरोध में हैं। तब ऐसी परिस्थिति में सदन को आश्चर्य प्रकट नहीं करना चाहिये, यदि मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत संशोधन का समर्थन करूं कारण स्पष्ट है। मैं यह नहीं चाहता कि आप में से कोई व्यक्ति मुझे गलत समझे। इस विधेयक में ऐसी कई धारायें हैं, जिनके बारे में मैं नहीं चाहता उनके पारित किये जाने में एक मिनट का भी विलम्ब हो। यदि यह प्रस्ताव विलम्बकारी होता, तो मैं माननीय सदस्य का समर्थन नहीं करता। मेरे कई प्रस्ताव भी विलम्बकारी नहीं थे। मैं यह जानता हूँ कि यह विधेयक इस विधानसभा में अर्थात् विधानसभा के इस सत्र में पारित नहीं हो रहा है। इस विधेयक को पारित करने के लिए विधानसभा का विशेष सत्र बुलाना होगा। अगल सत्र लगभग छः महीने बाद आरंभ हो पायेगा। अत: मैं जो आपत्ति उठा रहा हूँ, उसका निर्णय छः महीने की अवधि में आसानी से हो सकता है। श्रीमान, आपकी अनुमति से मैं यह निवेदन करना चाहूँगा कि मैं यह नहीं चाहता कि यह विधेयक दुबारा प्रवर समिति के समक्ष जाये और मेरे इस प्रस्ताव के कारण, नितान्त भिन्न हैं। शायद कुछ मान्य सदस्य यह विचार कर

सकते हैं कि मैं यह चाहता हूँ कि किसी न किसी प्रकार यह विधेयक समाप्त हो जाये। मैं इस विधेयक को समाप्त नहीं करना चाहता। मैं चाहता हूँ कि यह विधेयक पारित हो जाये। मैं यह चाहता हूँ कि इस विधेयक में की गयी सभी अच्छी बातें स्वीकार की जायें। इसलिए यह आवश्यक है कि इस विधेयक को शान्त भाव से देखा जाये। यह आवश्यक नहीं है कि आक्रोश पैदा किया जाये, इसलिए मैं चाहता हूँ कि जो कुछ भी मैं निवदेन करूं आप उसे शान्त भाव से सुनने की कृपा करें। मेरा विचार है कि डॉ. अम्बेडकर भी इसे गलत न समझेंगे। मैं यह सब विनम्र भाव से निवेदन करना चाहता हूँ तथा इसे किसी विरोधी भावना से व्यक्त नहीं कर रहा, परन्तु मुझमें यह कहने का साहस होना चाहिए जो मैं कहना चाहता हूँ और मैं चाहता हूँ कि अन्य सदस्य भी उसे कम से कम ठीक ढंग से समझें, चाहे वे इसे उदारता से न स्वीकारें। मैं यह सभी बातें विनम्र भाव से प्रस्तुत कर रहा हूँ और इस बारे में यह कम महत्व नहीं रखता। अब मैं यह प्रस्तुत करना चाहता हूँ जैसे कि इस सदन का प्रत्येक माननीय सदस्य यह जानता है कि नये चुनाव होने वाले हैं। यहां उपस्थित सभी सदस्य अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा आये हैं। जिन सदस्यों को हमारे बाद आना है, वे प्रत्यक्ष चुनाव और वयस्क मताधिकार द्वारा आयेंगे। हमारी इस संविधान सभा द्वारा जो प्रस्ताव पारित किया गया है उसके अनुसार चुनाव 1950 में आयोजित किये जायेंगे। उसी समय मैं यह कहने के योग्य होऊँगा। श्रीमान् जैसाकि आपने भी कहा था वह एक प्रभुसत्ता सम्पन्न निकाय होगी। फिर भी मैं औचित्य के सिद्धांत के आधार पर विनम्रभाव से यह निवेदन करना चाहता हूँ कि इस विषय में निर्णय करने की बजाय यह ठीक होगा कि उन लोगों को जिनको प्रत्यक्ष चुनाव और वयस्क मताधिकार से विधानसभा में आना है, उन्हें, चूँकि इस विषय का सम्बन्ध 30 करोड़ लोगों के दैनिक जीवन से है, इस बारे में निर्णय करना चाहिए। मैं यह निवेदन करूंगा कि यही उपयुक्त मार्ग होगा। मैं औचित्य के सिद्धांत के आधार पर विनम्र भाव से कहना चाहता हूँ। कुछ लोग महसूस करते हैं कि यह सदन केवल संविधान ही बना सकती है। यह ऐसा तर्क है जिसे कल प्रस्तुत किया गया था कि जब बारह बेटों के मध्य सम्पत्ति के विभाजन से सम्पत्ति के टुकड़े नहीं होते, तो किसी बेटी को सम्पत्ति में सम्मलित किये जाने पर सम्पत्ति के टुकड़े-टुकड़े नहीं हो सकते। परन्तु मेरा कहना है कि 'एक भूल दूसरी भूल को न्याय-संगत नहीं ठहरा सकती'।

श्री मोहन दास गौतम ने कहा है कि यह सदन संविधान बनाने के लिए भी सक्षम नहीं है। मैं उनके इस विचार से सहमत नहीं हूँ, परन्तु यदि आप सहमत हैं, तो इस प्रकार की भूल क्यों दोहरा रहे हैं? यह बिल्कुल गलत है। यदि आप इस विचार का समर्थन नहीं करते तो यह एक अलग बात है। मेरे मत के अनुसार यह संविधान निर्मित करने वाली सदन प्रभुता-सम्पन्न निकाय है। यह पूर्ण रूप से वैधानिक है और इसी प्रकार यह सदन पूर्ण रूपेण किसी भी कानून को, जिसे वह चाहती है, आज पारित करने के लिए प्राधिकृत है। फिर भी औचित्य और अनुपात की समझ हमसे यह चाहती है कि हम इस विषय में शीघ्रता न करें। हम हजारों वर्षों से इन सिद्धांतों का पालन करते आये हैं, इसीलिए मैं यह

कहना चाहता हूँ कि आगामी छः महीने में आसमान टूट कर हमारे सिर पर नहीं गिर पड़ेगा कि हम इस विधेयक को शीघ्रता छोड़ तत्काल पारित करें। इसलिए मैं अति विनम्र भाव से यह कहना चाहूँगा जैसे कि श्रीमान, आपने अपनी असहमति की टिप्पणी में लिखा है: कि इन बारह व्यक्तियों में, जो 12 राशियों के संकेत हैं, उनमें से एक आप भी हैं। और आपके साथ ही बाबू रामनारायण सिंह ने भी पृष्ठ 11 पर अंकित किया है:–

"सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किये गये हैं और उन्हें मतदाताओं से जनादेश प्राप्त नहीं है। अधिकांश अभिमत और सदस्यों का बहुमत इस विधेयक के अधिकांश उपबंधों के विरुद्ध हैं और यह विधेयक हिंदू समाज की सैद्धान्तिक संरचना को बदलता है।"

अतः मैं अति विनम्र भाव से यह निवेदन करता हूँ कि न्याय की मांग यही है कि इस विधानसभा में निर्वाचित होने के बाद प्रत्यक्ष चुनाव के प्रतिनिधियों को इस विषय में निर्णय करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिये। हमारे सम्मानित और देश के सच्चे नेता डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने इस सिद्धांत से सहमत होते हुए एक पत्र लिखा था कि यह विधेयक सम्पूर्ण रूप से आगामी प्रतिनिधित्व करने वाली विधानसभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाये।

श्री तजामुल हुसैन : वह विषय क्या था, जिसके बारे में वायसराय ने लिखा है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, आप जो कुछ गवर्नर जनरल के बारे में कहते हैं, यहां उल्लेख किया जा चुका है। परन्तु मैं अति विनम्र भाव से यह कहता हूँ कि मैं ज्येष्ठ व्यक्तियों के अभिमत का अधिक आदर करता हूँ। आज इस विषय का मुझसे जो सम्बन्ध है और उस प्रत्येक महिला से, जो सुदूर गांव में रहती है संबंध है। प्रत्येक व्यक्ति इस विधेयक से प्रभावित होगा, अतः प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह इसके बारे में अपना मत प्रकट करे। मैं सहमत क्यों नहीं हूँ, यह है कि कल ही मेरी माननीय बहन श्रीमती सुचेता कृपलानी ने कहा था कि इस प्रकार से तो सदियां बीत जाएंगी। यह विधेयक पिछले दस वर्षों से विचाराधीन है क्योंकि इस विधेयक का मसौदा सन् 1941 में तैयार किया गया था। मुझे यह तर्क अपील नहीं करता। क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि इस देश में कितनी साक्षरता है? क्या मैं यह जान सकता हूँ कि इस देश में कितनी महिला साक्षर हैं? मैं अपनी माननीय बहन को सम्बोधित कर चाहता हूँ कि इस सदन के सदस्य कौन हैं और मैं किन सदस्यों के मत का अधिक आदर करता हूँ, परन्तु मैं यह कहना चाहूँगा कि क्या उनकी हजारों बहनें जो गांवों और नगरों में रहती है, उनके पास इस विषय में अपना मत अभिव्यक्त करने का अधिकार है? यही कारण है मैं अपनी माननीय बहनों से आग्रहपूर्वक कहना चाहूँगा कि उन्हें इस विषय में धैर्य रखना चाहिए और कुछ संयम का परिचय देना चाहिए। मेरा अभिप्राय था कि उन लोगों के अभिमत को भी सम्मिलित किया जाए जिन्हें अपने मत को अभिव्यक्त करने का पूरा अधिकार है, तो इसे एक अपराध नहीं समझा जा सकता। अति विनम्र भाव से मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि जो लोग नगरों और गांवों में रहते हैं, वे अवगत नहीं हैं

इस विधेयक से और वे प्रावधानों से कि वे क्या हैं? **कुछ माननीय सदस्य कहते हैं**, "सुनिये" सुनिये।" अति विनम्र भाव से मैं यह निवेदन करता हूँ कि जिन लोगों ने इस विधेयक के उपबंधों का अध्ययन नहीं किया है और इस सदन के कई सदस्य यह बिल्कुल भी अनुभव नहीं कर पाये हैं कि इसका महत्व क्या है।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : जब आप सुधार के लिए अपने अन्य विधेयकों के उपबंधों को समझने के लिए इस देश की महिलाओं को योग्य पाते हैं, तो क्या आप यह नहीं समझते कि वे महिलाएं इस विधेयक के उपबंधों को भी समझने योग्य होंगी?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं इस हस्तक्षेप का स्वागत करता हूँ, क्योंकि मुझे एक अवसर प्रदान करता है सही बात को स्पष्ट करने का। श्रीमान, एक आपत्ति उठाई गई थी कि एक बार सती विधेयक पारित हो गया था, विधवा-विवाह विधेयक पारित हो गया था, शारदा अधिनियम पारित हो गया था और आज सदन के समक्ष जो विधेयक है वह भी उसी वर्ग का है। जो कि श्रीमती दुर्गाबाई के अनुसार यह विधेयक उन विधेयकों के स्तर से कुछ ऊँचे स्तर का है, जिन्हें आम आदमी की राय को ध्यान में रखते हुए पारित किया जा सकता है।

श्री तजामुल हुसेन : क्या मुझे व्यवस्था का प्रश्न उठाने की अनुमति दी जा सकती है?

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया बतायें कि व्यवस्था का प्रश्न क्या है?

श्री तजामुल हुसेन : श्रीमान, व्यवस्था का मेरा प्रश्न यह है कि मेरे माननीय मित्र द्वारा पूरे सदन की अवमानना की गई है। आपने उन्हें कहते हुआ सुना है, उन्होंने कहा कि सदन में ऐसे भी सदस्य हैं जो हिंदू संहिता विधेयक को समझ नहीं पाए हैं। यह सदन की अवमानना है और मैं इस बारे में निर्णय चाहता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे नहीं लगता कि इसमें कोई व्यवस्था का प्रश्न है। माननीय सदस्य के कहने का अर्थ है कि विधेयक का उद्देश्य यह है कि इसके पूरे निहितार्थों को अलग-अलग वर्ग के लोगों द्वारा अलग-अलग समझा जा सकता है। उनके अनुसार वे नहीं समझ पाये हैं कि किस तरीके से मान्य सदस्य इस विधेयक को समझेंगे।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, इसके अलावा मैं यह दावा नहीं करता और मैं यह सब कुछ कहने के लिए तैयार नहीं हूँ कि मैंने इस विधेयक के उपबंधों को समझा है जैसाकि इस सदन के अन्य सदस्यों से कुछ अधिक समझा है। जहां तक मेरा प्रश्न है, मैं कहने को तैयार हूँ कि मैंने सभी प्रावधानों, सभी उपबंधों और इस विधेयक के सभी निहितार्थों को समझ लिया है और यह मैं सभी माननीय सदस्यों और विशेषत: खुद के बारे में कह सकता हूँ। यहां ऐसे माननीय सदस्य हैं जो अधिवक्ता नहीं हैं,

वे कह सकते हैं कि उन्होंने विधेयक को पूर्णतया समझा है। परन्तु जो अधिवक्ता यहां उपस्थित हैं, वे विश्वास के साथ यह नहीं कह सकते कि उन्होंने इस विधेयक के उन सभी उपबंधों को समझ लिया है, जो प्रवर समिति द्वारा तैयार किये गये हैं। मुझे इस सदन में यह कहने की अनुमति नहीं है। किंतु यदि मुझे अनुमति दी जाये, तो मैं श्री तजामुल हुसेन से दो या तीन प्रश्न करना चाहूँगा और वे मुझे उत्तर दें कि क्या वे समझते हैं या नहीं समझते? यह मेरा बिल्कुल भी इरादा नहीं है कि मैं सदन की अवमानना करूं। अति विनम्र भाव से मैं यह निवेदन करता हूँ कि ऐसा तनिक भी मेरा इरादा नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रत्येक नागरिक से कानून जानने की अपेक्षा की जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक माननीय सदस्य से विधेयक का अध्ययन करने की आशा की जाती है। अतः माननीय सदस्य अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : महोदय, मैं निवदेन कर रहा था इस भूमिका के बाद, मैं निवेदन कर रहा था कि मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन के पक्ष में क्यों हूँ। श्रीमान, मैंने आपके विचारार्थ कुछ तथ्य प्रस्तुत किये थे कि यह सदन वैसा प्रतिनिधित्व नहीं करता, जैसा कि यह आने वाले दिनों में कर पायेगा और इसमें अधिक समय नहीं लगेगा। कुछ ही महीनों में नया सदन अस्तित्व में आ जायेगा और इसलिए यह उचित होगा कि (जब तक नया सदस्य अस्तित्व में न आ जाये) इस विधेयक पर विचार करना स्थगित रखा जाए।

श्रीमान, मेरे निवेदन के पक्ष में एक सशक्त दलील यह है कि आप इस तथ्य से भली-भांति अवगत हैं कि आज संपत्ति में दो अलग प्रकार की चीजें सम्मलित हैं। एक भू-सम्पत्ति है, तो दूसरी गृह-सम्पत्ति है। जहां तक भू-सम्पत्ति का सम्बंध है यह विधेयक उसे प्रभावित नहीं करता। इसका भारत जैसे देश में उत्तराधिकार पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा जो मुख्यतया कृषि प्रधान देश है और जहां 90% लोग गांवों में रहते हैं। किसी व्यक्ति के निधन के बाद उसकी भू-सम्पत्ति एक कानून द्वारा अधिशासित होगी और गांव में इसकी गृह सम्पत्ति किसी दूसरे कानून द्वारा अधिशासित होगी। मेरे साथ क्या होगा? यदि मेरे पास दिल्ली में कुछ सम्पत्ति है तो वह एक कानून द्वारा अधिशासित होगी और बहादुरगढ़ में मेरी भू-सम्पत्ति दूसरे कानून द्वारा अधिशासित होगी। बहादुरगढ़ के मेरे खेतों में बना घर एक कानून द्वारा अधिशासित होगा और दिल्ली में बना घर दूसरे कानून द्वारा अधिशासित होगा। क्या यह एकरूपता है? यदि ऐसी स्थिति बनाई रखी जाती है तो इसका परिणाम क्या होगा? बहादुरगढ़ में जिस उत्तराधिकारी को नियुक्त किया जायेगा उसे हिंदू संहिता मान्यता नहीं देगी। तब वह लड़का जिसे उत्तराधिकारी नियुक्त किया जायेगा, बहादुरगढ़ में भू-सम्पत्ति का निःसंदेह उत्तराधिकारी होगा, परन्तु मृतक के आवासीय गृह के उत्तराधिकार का दावा कोई अन्य व्यक्ति करेगा। लड़के को भू-सम्पत्ति का अधिकार तो होगा, परन्तु उसका घर पर कोई दावा नहीं होगा तब ऐसी स्थिति में वह लड़का कहां जायेगा? इस विधेयक का प्रभाव यह होगा कि वह भू-सम्पत्ति पर लागू नहीं होगा।

मैं सोचता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर की इच्छा ऐसे विधेयक के पारित कराने की है, जहां आर्थिक जोतें बनाई जा सकें, पर आम आदमी की भू-सम्पत्ति का विभाजन न हो। परन्तु जब यह अधिनियम लागू हो जायेगा और जब जमींदारी का उन्मूलन प्रभावी हो जायेगा, तब क्या स्थिति होगी, मुझे इसका ज्ञान नहीं है।

श्रीमती रेणका रे : तो आप ही तत्काल ऐसा विधेयक प्रस्तुत कर सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : अति विनम्र होकर मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि इस दुनिया में इरादे आसानी से पूरे नहीं होते। जैसाकि मेरी माननीय बहन सोचती है, क्या विधेयक के प्रस्तुत करने से इरादे की पूर्ति हो जायेगी। यह विधेयक देश के लाभ के लिए है, परन्तु इस विधेयक को ही कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। यह विधेयक, जिससे प्रत्येक के अधिकारों का अनधिकृत उपयोग होगा कितना समय लेगा और यह कहां पारित होगा? यह अभी प्रान्तीय सरकार की शक्ति के अधीन है। मैं चाहता हूँ कि हम अपने संविधान में ऐसे परिवर्तन कराएं जिनसे जहां तक भूमि के प्रश्न का संबध है, संविधान के तहत केन्द्रीय सरकार की शक्तियों के अन्तर्गत किया जा सकता है। यदि यह विधेयक इसी रूप में पारित हो जाता है, तो मुझे यह दोष दिखाई देता है कि विधेयक आवासीय सम्पत्ति को तो प्रभावित करेगा पर यह भू-सम्पत्ति को शामिल नहीं करेगा। इसी में भारी उलझन है। अभी मूल-विधेयक में एक परिवर्तन भी किया गया है। वह यह कि विधेयक केन्द्र प्रशासित क्षेत्रों में भूमि पर भी लागू किया जायेगा, अर्थात् यह विधेयक अजमेर, मेरवाड़ और दिल्ली में, आवासीय और भू-सम्पत्तियों दोनों पर लागू होगा पर अन्य प्रान्तों में यह विधेयक भू-सम्पत्ति पर लागू नहीं होगा। दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ में यह विधेयक ग्रामीण और नगर दोनों सम्पत्तियों पर लागू होगा। यह इस विधेयक का सबसे बड़ा दोष है और यही इसके जड़ को उखाड़ सकता है।

अभी लोग इस बात से भी अवगत नहीं हैं कि यह विधेयक किन लोगों पर प्रभावी होगा। इसी कारण मैंने यह निवेदन किया था कि इस विधेयक के लिए पूरा प्रचार नहीं किया गया है। मैं जानता हूँ कि यदि आज लोग यह जान लें कि यह विधेयक दूरगामी प्रभावी है और सैद्धान्तिक परिवर्तन किए जा रहे हैं। उनके उत्तराधिकार के कानून में परिवर्तन जिनका प्रभाव प्रत्येक पर और भारत के प्रत्येक परिवार पर होगा, तो एक बार समस्त भारत के लोग दिल्ली आकर अपने आवेदन-पत्र प्रस्तुत करेंगे कि यह कानून पारित न हो। अनेक लोग इस बात से अवगत नहीं हैं। इस सदन के सदस्यों, बार एसोशिएसन और कुछ अन्य व्यक्ति जो समाचार पढ़ते हैं, को ही इसके बारे में जानकारी दी गई है। आप भली-भांति जानते हैं कि ऐसे लोगों की संख्या कितनी कम है। ऐसा विधेयक जो समस्त हिंदू समाज को प्रभावित करेगा, को पर्याप्त ढंग से प्रचारित नहीं किया गया है और इस बारे में अभिमतों का संग्रह भी नहीं किया गया है। पहले एक समिति का गठन किया गया था। उस समिति ने जगह-जगह पर साक्ष्य इकट्ठे किये और उस समिति की

रिपोर्ट मेरे पास है। यदि आप यह देखें कि समिति के सदस्य कहां-कहां गये थे, उन्होंने क्या किया और उन्होंने कौन-कौन से साक्ष्य रिकार्ड किये, तब आपको विदित होगा कि समिति ने कुछ समृद्ध और शिक्षित व्यक्तियों के ही मत एकत्र किये थे। उन्होंने देश के अधिकांश भागों के अभिमत इकट्ठे नहीं किये थे। यों इसमें शिक्षा का कोई प्रश्न ही नहीं है। इस विधेयक के लिए प्रत्येक माता और पिता, अपने उत्तरदायित्वों को पूर्णत: महसूस करते हैं, अपना अभिमत दे सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जो इस विधेयक के द्वारा प्रभावित होता है और इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपना मत देने में सक्षम है। इसके अलावा मैं यह निवेदन करना चाहूँगा कि किसी को उन परिवर्तनों का ज्ञान नहीं है, जो प्रवर समिति ने मूल विधेयक में किये हैं। केवल विधानसभा के सदस्य ही इन परिवर्तनों के बारे में जानकारी रखते हैं। शेष व्यक्ति भी नहीं जानते कि प्रवर समिति ने क्या परिवर्तन किये हैं। अब प्रश्न उठता है कि प्रवर समिति ने इस विधेयक में परिवर्तन किये हैं, अत: इस विधेयक का व्यापक प्रचार अति आवश्यक है। पुराने प्रश्न को एक तरफ हटा दीजिये कि कोई भी कानून लोगों के पुराने रीति-रिवाजों में तत्काल परिवर्तन करने के लिए न बनाया जाये तब तक कि अधिकांश लोग जो ऐसे विधेयक द्वारा प्रभावित होते हैं, उनका अभिमत न जान लिया जाये। आज जो विधेयक प्रस्तुत किया जा रहा है, वह ऐसा विधेयक है जिसमें चयन समिति ने ऐसे परिवर्तन किये हैं जो अधिक महत्व के हैं और जिसके बारे में प्रत्येक व्यक्ति को पूरी जानकारी होनी चाहिये। इसी कारण से इसका व्यापक प्रचार भी अति आवश्यक है। इससे पूर्व कि इन परिवर्तनों के बारे में कुछ कहूं मैं एक बात की ओर इस सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ और मुझे यह बताने का खेद है कि विधि विभाग ही, जिसका अपना नाम 'विधि विभाग' है और जो कानून से भी पूर्णतया अवगत है, वही कानून का आदर नहीं करता। जब कानूनी लोग स्वयं ऐसी प्रक्रिया स्थापित करते हैं, जो उन्हें स्थापित नहीं करनी चाहिये, तो मुझे यह कहना होगा।

मैं उस प्रश्न के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता, जिस पर आपसे पहले के उपाध्यक्ष ने निर्णय दिया है। चूँकि इस प्रश्न का निर्णय हो चुका है, वह विनिर्णय मेरे लिए अन्तिम है। मैं उसके बारे में प्रश्न नहीं करता मैं उस विनिर्णय का आदर करता हूँ, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि मेरे मत के अनुसार वह विनिर्णय सही नहीं था। फिर भी मैं इस बारे में प्रश्न नहीं करना चाहता।

श्री तजामुल हुसेन : सदन के भीतर कोई भी व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि अध्यक्ष का विनिर्णय गलत है।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे खेद है कि माननीय सदस्य ने श्री भार्गव को बिल्कुल ही नहीं समझा है। वे यह कहते हैं कि उनकी विनिर्णय के साथ सहमति नहीं है, परन्तु वे उस विनिर्णय का प्रश्न यहां नहीं उठाना चाहते। प्रत्येक सदस्य के लिए यह खुली छूट है कि वह स्वयं विचार करे और यह भी कहे कि वह इस मत को स्वीकार नहीं

करता। फिर भी वह उस निर्णय से बाध्य है, तो मैं समझता हूँ कि इसमें कुछ भी गलत नहीं है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे इस बात का बेहद दुख है कि जब कभी मेरे माननीय दोस्त तजामुल हुसैन व्यवस्था का कोई प्रश्न उठाते हैं, तो वह प्रश्न एक मिनट के लिए भी नहीं ठहरता। मैं चाहता हूँ कि वह व्यवस्था का ऐसा प्रश्न उठायें जिसका मैं उत्तर दे सकूं। मैं जानता हूँ कि इस समय वे किसी मान्य सदस्य से पूछताछ कर रहे हैं कि क्या यह विधेयक भू-सम्पत्ति पर लागू होता है अथवा नहीं। परन्तु वह यह दिखावा करते हैं और कहते हैं कि वह इस संहिता-विधेयक को समझते हैं। अत: मैं यह तब निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं पूर्णतया ऐसा अधिकार रखता हूँ कि ऐसे विनिर्णय पर मेरा अलग मत है। मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि कुछ ऐसे अन्य आधारभूत सिद्धांतों की बात करूं, जिनके संबंध में माननीय अध्यक्ष के विनिर्णय में किसी प्रकार का कोई उल्लेख नहीं है। अति विनम्र भाव से मैं सदन का ध्यान विशेष रूप से इस तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि यह सदन जो संविधान बनाने वाला सदन है, अपने ही कानूनों का स्वामी भी है। हमारे मामलों में से किसी को देश के किसी न्यायालय में नहीं उठाया जा सकता। यदि यह सदन कुछ अधिनियम पारित करने के लिए अपने ही सिद्धांतों का परित्याग करता है, तो हम ऐसी भूल करते हैं कि हम अपने दायित्वों से उत्तृण नहीं हो सकते। मैं सविनय कहना चाहता हूँ कि इस दुबारा तैयार किये गये विधेयक में जैसा कि प्रवर समिति द्वारा बताया गया है, जो भूलें वहां हमने की हैं, जो तीन प्रकार की हैं। पहली जब कोई विधेयक सदन के समक्ष आता है तो वह सदन के अधिकार में हो जाता है। सदन में पेश होने पर इसके बाद सदन के सिवाय, सदन का कोई सदस्य, चाहे वह कितना ही बड़ा या अच्छा क्यों न हो, उस विधेयक में जब तक कि सदन की अनुमति न हो, एक अर्ध विराम भी परिवर्तित नहीं कर सकता। यदि किसी प्रकार से किसी लिपिक की भूल हो जाती है, तो यह दूसरी बात है। और यदि किसी प्रकार की सामग्रीगत् भूल है, तो उसे फिर से मुद्रित किया जायेगा और उसका प्रचार किया जायेगा तथा इसके बाद सदन के समक्ष प्रस्तुत किये जाने के बाद किसी समिति को विचारार्थ भेजा जा सकता है। श्रीमान, अति विनम्र भाव से मेरा निवेदन है कि मैं दो या तीन बातें आपके विचारार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ। इन बातों के संबंध में मैं अन्य मान्य सदस्यों के समक्ष विनम्र भाव से यह निवेदन करना चाहूँगा, परन्तु इसमें डॉ. अम्बेडकर सम्मिलित नहीं हैं क्योंकि वे तकनीकी नियमों और वस्तुओं से परिचित हैं तथा वे जानते हैं कि इन तकनीकी नियमों को छोड़ देने से कितना अन्याय हो सकता है। इसलिए मैं यह निवेदन कर रहा था कि उन तकनीकी नियमों के त्यागने से अन्याय और अवैधानिक बातों के अलावा ऐसा कुछ भी नहीं मिल सकेगा, जो लाभकारी हो। श्री ओस्लो, हाउस ऑफ कॉमन्स के अत्यंत प्रसिद्ध अध्यक्ष हुए हैं। उन्होंने यह बताया था कि तकनीकी नियमों का उल्लंघन करके कोई कार्य नहीं किया जाना चाहिये। अल्प-संख्यकों की सुरक्षा, सदन की समग्रत: सुरक्षा के संबंध में तकनीकी नियम हैं और ये नियम ऐसे

सैद्धान्तिक चरित्र के हैं कि जब कभी उनकी सीमाएं पार की जाती हैं, तो गलतियों के सिवाय और कुछ नहीं प्राप्त होता। यह सिद्धांत 'में के संसदीय व्यवहार' में दिया गया है, जो संसद के परिपाटी की माँ मानी जाती है। परिपाटी है कि जैसे ही विधेयक प्रस्तुत किया जाता है, वह उस सदस्य के हाथों से बाहर हो जाता है जिसने उसे प्रस्तुत किया था और वह सदन की शक्ति के घेरे में आ जाता है। मैं 'में की संसदीय व्यवहार' के उन शब्दों का अनुवाद कर रहा हूँ जिन्हें मैं शीघ्र ही आपको पढ़कर सुनाऊंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं यह नहीं सोचता कि सदन में किसी भी व्यक्ति को इस बात का संदेह है कि किसी माननीय सदस्य वह विधेयक प्रस्तुत करने वाला भी हो सकता है, उसे विधेयक में परिवर्तन करने का अधिकार है। यदि उसने वह विधेयक सदन के समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया है जैसाकि मैं समझता हूँ कि माननीय अध्यक्ष का आदेश है कि यह विधेयक प्रवर समिति द्वारा विचार किया गया था, इसलिए उस स्थिति के बारे में कुछ कहने की जरूरत नहीं है। माननीय विधि मंत्री ने यह नहीं कहा था कि प्रवर समिति द्वारा किसी अन्य विधेयक पर विचार किया गया था, यद्यपि अन्य मसौदा जिसे उन्होंने चयन समिति के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, पर मूल विधेयक के साथ विचार किया गया था। चूंकि कोई भी माननीय सदस्य, टुकड़ों-टुकड़ों में संशोधन प्रेषित करने की बजाय प्रवर समिति के समक्ष संशोधन प्रस्तुत करने का अधिकार रखता है, उसके अनुसार उन्होंने अपने सभी संशोधनों को मुद्रित किया है और समिति के समक्ष रखा है। माननीय अध्यक्ष महोदय का यह आदेश है। इसको छोड़कर माननीय सदस्य आगे वक्तव्य दे सकते हैं। कोई भी संसदीय व्यवहार में बतायी गई स्थिति पर संदेह नहीं कर सकता कि एक सदस्य के लिए खुली छूट नहीं है चाहे वह विधेयक का प्रस्ताव ही क्यों न हो कि वह उस विधेयक में कोई परिवर्तन कर सके, यदि सदन ने उस विधेयक को अपने कब्जे में ले लिया है। माननीय अध्यक्ष ने कहा है कि ऐसा नहीं किया गया है। हम इससे बाध्य हैं, अन्यथा माननीय सदस्य अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आपके मन को सुनने के बाद में केवल यही निवेदन करना चाहता था कि मैं अपने विश्वास पर और अधिक निष्ठावान हो गया हूँ। आपने यह निर्णय किया है कि यदि यह किसी प्रकार सिद्ध हो जाता है कि वास्तव में, इस विवादास्पद प्रश्न पर कोई संशोधन प्रवर समिति के समक्ष नहीं आये हैं, तो यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि पुनः मसौदा तैयार किए हुए विधेयक पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस कारण से मैं यह निवेदन करना चाहूँगा कि मुझे आपके समक्ष उस आदेश को फिर से उल्लेख किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। श्रीमान मेरे पास 1873 के हंसार्ड खंड 215 का आदेश है जिसमें पृष्ठ 302 पर यह दिया गया है कि यदि कोई सदस्य किसी विधेयक के प्रस्तुत करने का नोटिस देता है और वह विधेयक मुद्रित है, तो वह सदस्य द्वितीय वाचन के पूर्व उस विधेयक में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता

है और यदि वह कोई परिवर्तन करता है तो माननीय अध्यक्ष ने यह निर्णय दिया है कि विधेयक वापस हो, इस विधेयक पर आगे विचार-विमर्श नहीं हो सकता।

माननीय उपाध्यक्ष : कानून की स्थिति स्वीकार की जाती है। इसके बारे में बहस की आवश्यकता नहीं है। मैं नहीं सोचता कि मान्य विधि मंत्री, कानून की स्थिति को नकारते हैं कि वह परिवर्तन करने के अधिकारी नहीं हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : नहीं।

माननीय उपाध्यक्ष : ''' कोई भी अल्पविराम या अर्द्ध विराम या जैसा कि प्रवर समिति द्वारा स्वीकार किया है को छोड़कर परन्तु यह उनके लिए छूट है कि वह ऐसी बात को चयन समिति के समक्ष प्रस्तुत करें। मेरे विचार से यह अध्यक्षीय आसम्दी का आदेश था, मान्य सदस्य अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, अति विनम्र भाव से मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि कोई अन्य मूल विधेयक सदन के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तो मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। यदि सदन में इस विधेयक पर इस प्रकार विचार किया गया होता तो किसी को भी इस पर कोई आपत्ति नहीं होती। किंतु विधेयक इस प्रकार प्रस्तुत किये जाने के बाद तो विधेयक को उपबंध और शब्दश: तकनीकी रूप से विचार किया जाना है। यदि इस प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया और यदि यह विधेयक प्रवर समिति को भेजा गया और प्रवर समिति में इस पर उपबंध और शब्दश: विचार नहीं किया गया, तब मैं यह पूछना चाहूँगा कि यदि पहला विधेयक मान्य सदस्य के समक्ष था अथवा उसकी जेब में था अथवा वह अपने घर पर उस विधेयक को पढ़ने के बाद यहां आये थे। श्रीमान मैं आपका ध्यान संसदीय प्रक्रिया की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि प्रवर समिति के किसी सदस्य को इसके विरुद्ध कोई दावा नहीं करना है। मेरे पास इसके सशक्त कारण हैं। और श्रीमान, मैं आपका ध्यान उनकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। प्रथम स्थान में शायद बहुमत की रिपोर्ट में ऐसा लिखा गया है: "हमने अपना विचार-विमर्श दुबारा तैयार किए विधेयक तक ही सीमित रखा है।"

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्या मैं हस्तक्षेप कर सकता हूँ? यह सही नहीं है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मूल विधेयक पर, वास्तविक अर्थ के संदर्भ में खंडवार और शब्दवार विचार नहीं किया गया है। आम भाषा में जैसे कि माननीय अध्यक्ष ने कहा था और उस अर्थ में जिसमें श्री बाल कृष्ण शर्मा ने सदन के समक्ष निवेदन किया था, वह विधेयक हमारे समक्ष है। तब, मुझे इसे विधेयक के विरोध में कोई आपत्ति नहीं है। मैं स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ जो कुछ श्री बाल कृष्ण शर्मा और माननीय अध्यक्ष ने कहा है'''(यहां हिंदी में भाषण का अंग्रेजी में अनुवाद खत्म होता है)।

श्रीमती दुर्गा बाई : व्यवस्था के प्रश्न पर। वे अध्यक्ष के आदेश पर प्रश्न उठा रहे हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य को समझता हूँ, यद्यपि मैं उनके प्रत्येक शब्द को नहीं समझ पाता, जो वे सोचते हैं। मैं इस बात के लिए बाध्य हूँ कि अध्यक्ष के आदेश की रक्षा की जाए। मैं यह देखने में रुचि नहीं रखता कि मैंने आज क्या कहा है, पर मैं अपने बाद के किसी सभापति द्वारा कही गई बात से विचलित हो सकता हूँ। माननीय अध्यक्ष का आदेश मौजूद है यद्यपि मान्य सदस्य एक या दो बातों को बलपूर्वक कहते हैं, पर मैं समझता हूँ कि वे सदन को यह बताना चाहते हैं कि देश को ऐसा अवसर प्रदान किया जाए कि लोग इस विधेयक पर विचार करें। यही वह सब है, जो उनका अभिप्राय है। (**मान्य सदस्य**-"नहीं, नहीं") मैं तत्काल यह बता देता हूं कि मैं माननीय अध्यक्ष के आदेश के पीछे से हटने का कोई इरादा नहीं है। यहाँ उन तर्कों का स्वागत है, जो व्यापक रूप से देश के इस सदन के विचारार्थ बड़ी आशा में प्रस्तुत किये गये हैं, परन्तु वे किसी भी दशा में अध्यक्ष के आदेश पर सवाल उठाने की भावना से नहीं है।

डॉ. मोहन दास : सूचना के प्रश्न पर, मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या माननीय सदस्य अगले दस मिनटों तक भाषण देंगे, कि हम जो हिंदुस्तानी समझ नहीं पाते अपने होटलों को वापिस चले जाएं?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : चूँकि आपने प्रसन्नतापूर्वक यह बताया है कि आप मेरी बातों को समझ नहीं पाते और मैं चाहता हूँ कि मेरा प्रत्येक शब्द सदन द्वारा समझा जाए और आप भी उसे समझ सकें, अतः मैं अब अपनी टूटी-फूटी अंग्रेजी में बोलने का प्रयास करूंगा।

श्री टी.ए. रामलिंगम चेट्टियर (मद्रास : सामान्य) : अभी तक आपने इस सदन के उन लोगों के बारे में विचार नहीं किया जो हिंदी नहीं जानते। इस सदन में ऐसे लोगों की संख्या काफी है, अतः यदि आप उनकी चिंता नहीं करते और यदि आप नहीं चाहते कि वे आपकी बातें सुनें, तो यह आपका अपना दृष्टिकोण है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं पहले ही यह निर्णय कर चुका हूँ कि अब मैं अंग्रेजी में अपना भाषण दूँगा और मेरे मित्र के आदेश हैं। इसके पूरक आपने इसे कहने में जो प्रसन्नता व्यक्त की है, मैं अब अंग्रेजी में बोलूँगा।

माननीय उपाध्यक्ष : जो कुछ अब तक सुना गया है, वह हिंदुस्तानी भाषा में सुना गया है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं वह सब कुछ नहीं दोहराऊँगा, जो मैंने कहा है क्योंकि यह संभव भी नहीं होगा। भविष्य में, मैं आपसे पहले ही निवेदन कर दूँगा, जो

मुझे कहना है ताकि मेरे प्रयास के लिए कुछ किसी न कहा जाए"

श्री तजामुल हुसेन : किसी बात की पुनरावृति न हो।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं नहीं चाहता कि श्री तजामुल हुसेन मुझे कोई आदेश दें। यदि वे नहीं चाहते, तो"

श्री तजामुल हुसेन : मैं सभापति को संबोधित कर रहा हूँ।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं नहीं चाहता कि श्री तजामुल हुसेन विवेकहीन बाधा डाले।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे इस बात का दुख है कि श्री तजामुल हुसेन बार-बार हस्तक्षेप करते हैं। मैं यहां सदन की रक्षा के लिए हूँ। ताकि किसी बात की पुनरावृति न हो। यह दुर्भाग्य की बात है कि हमारा अधिकांश समय इस प्रकार बीत रहा है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं दोहराना नहीं चाहता। मैं निवेदन करता हूँ कि जिस प्रकार मान्य अध्यक्ष ने अपना आदेश दिया है, मैं उसका आदर करता हूँ और मैं आदेश के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहूँगा। श्रीमान, आदेश अंतिम नहीं है।

श्री तजामुल हुसेन : इस सदन में यही अंतिम शब्द है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं इन बातों को उलाहना देने की ओर नहीं जा रहा हूँ। मैं सोचता हूँ कि यह सदन अपने खुद के आदेश को संशोधित कर सकता है। मैं इस संबंध में एक पुस्तक: "डिसीजन्स ऑफ चेयर" से एक आदेश कर सकता हूँ। इसी बीच उद्धृत सदन को यह विचार नहीं करना चाहिये कि मैं उपाध्यक्ष से यह निवेदन कर रहा हूँ कि वे इस स्थिति में आदेश की समीक्षा कर लें मैं ऐसा नहीं कर रहा हूँ अत: सदन को अधीर नहीं होना चाहिए। परन्तु मैं यह पूछना चाहता हूँ कि ऐसा कहां नियम है कि जब एक बार दिया गया आदेश संशोधित नहीं हो सकता? इस प्रकार का कोई नियम नहीं हैं। चूंकि मैं किसी भी आदेश के संशोधन का प्रयत्न नहीं कर रहा हूँ, अत: यह प्रश्न ही नहीं उठता। मैं यह बता रहा था कि अध्यक्ष का आदेश इस बारे में हुआ था कि इस विधेयक पर मसौदा पुन: तैयार किये गये विधेयक के साथ विचार किया गया था। वास्तविक अर्थ में नहीं और न ही तकनीकी संदर्भ में, जिसमें हम समझते हैं कि "विचार" का अर्थ क्या है। मैंने यहाँ आपके विचार के लिए निवेदन किया था कि तकनीकी दृष्टि से हम 'विचार किया' शब्द का प्रयोग करते हैं, इस दृष्टि से इस विधेयक पर कभी भी विचार नहीं किया गया।

श्री मोहन लाल गौतम : मैं यहाँ यह निवेदन करना चाहता हूँ कि यह उसी बात की पुनरावृति है जो उन्होंने हिन्दुस्तानी में कही थी।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इस बात के निःहितार्थ समझने का प्रयास करूँगा।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : इस प्रारम्भिक टिप्पणियों के बिना मैं अपनी बात नहीं समझा सकता था और वे जो जानते हैं उन्होंने महसूस किया होगा कि मैं इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता था। मैं आपको आश्वस्त करने की दृष्टि से यह निवेदन कर रहा था कि वास्तव में, सही विचार-विमर्श जिसे तकनीकी दृष्टि से कहा जाए, दिया गया था फिर से मसौदा तैयार किये गये विधेयक को मैंने कहा था कि मैं कुछ खास तर्क प्रस्तुत करना चाहता था। प्रथम: रिपोर्ट यह कहती है कि "हमने फिर से मसौदा तैयार किये गये विधेयक के बारे में ही विचार-विमर्श को सीमित किया है।" दूसरे, श्रीमान बक्शी टेकचन्द तथा बाल कृष्ण शर्मा की असहमति की टिप्पणी उसी बात को बताती है। मैं इसे आगे नहीं पढ़ना चाहता, क्योंकि सदस्यों ने इसको पढ़ लिया है और यह समय का दुरुपयोग होगा कि मैं इसे फिर से पढ़ूं। जब श्री बाल कृष्ण शर्मा ने अपना भाषण दिया था तब माननीय अध्यक्ष ने प्रसन्नतापूर्वक उनके वक्तव्य को स्वीकार किया था। उन्होंने अपने भाषण में फिर वही बात दोहराई थी कि हमने "फिर से मसौदा तैयार किए गये विधेयक के बारे में अपना ध्यान केन्द्रित किया है।" और जब आप रिपोर्ट देखते हैं तो आपको पता लगेगा कि रिपोर्ट में ही कुछ ऐसे संकेत हैं जैसे कि खंड 99 कि केवल फिर से मसौदा तैयार किए गये विधेयक पर ही तकनीकी दृष्टि से विचार किया गया था।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इस बात को समझ नहीं पा रहा हूँ कि माननीय सदस्य इस संबंध में कहना क्या चाहते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे खेद है कि मैं वह नहीं सुन सका जो श्री के. सी. शर्मा ने बोला था।

माननीय सदस्यगण : व्यवस्था! व्यवस्था बनाये रखें।

श्री तजामुल हुसेन : बैठ जाइए।

माननीय उपाध्यक्ष : यदि आप मुझे अनुमति देंगे तो मैं इस बात को समझाने का प्रयास करूंगा। यहाँ दो प्रश्न हैं। यदि यह प्रश्न है कि इस विधेयक पर आगे विचार नहीं किया जाना चाहिए तो इस बात पर पहले निर्णय हो चुका है। यह विधेयक यहाँ विचार के लिए ही स्वीकार किया जा चुका है। अध्यक्ष ने पहले ही कहा था कि यह विधेयक प्रवर समिति के समक्ष था और अन्य संशोधनों के साथ इसे सदन में रखा गया था। अतः जहां तक इस विषय का संबंध है मैं तत्काल यह कह सकता हूँ कि मैं अध्यक्ष के आदेश से परे नहीं जा सकता। जहां तक दो वाणी व्यवहार संहिता के इसी तरह के एक मामले को छोड़कर इस संबंध में पुनः वैसे न किया जाये। यह अन्य बातों के लिए उदाहरण नहीं होना चाहिए। यदि यह किसी अन्य संदर्भ में सदन के समक्ष आता है तो अध्यक्ष तथा सदन के सदस्यों जो भी पारित हो उस आदेश पर ध्यान देना होगा। यहां पर ऐसी कार्रवाइयों में

मैं उसके पीछे जाने के लिए बाध्य नहीं हूँ। ऐसी परिस्थितियों में मैं माननीय सदस्य से यह जानना चाहूँगा कि इन तर्कों को उठाने का उद्देश्य क्या है। जैसे कि कुछ समय पहले मैं समझा हूँ कि यह केवल सदन के लिए है। उसे व्यापक प्रचार के लिए स्वीकार कर लिया जाए। इस पृष्ठभूमि में कि प्रवर समिति ने इस विधेयक का मूल मसौदा नहीं देखा था, परन्तु दूसरा देखा था और दोनों ही मसौदे सदन के समक्ष विचाराधीन थे। इसलिए यह व्यवस्था का प्रश्न नहीं है परन्तु सदन को उस पर ध्यान देने का उद्देश्य है। जिसे मैं समझ सकता हूँ। इसके लिए 'मे की संसदीय व्यवहार' और अन्य आदेशों को देखने की आवश्यकता नहीं है? जहां तक कानून का संबंध है, उस बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है और अब मैं माननीय सदस्य से यह निवेदन करना चाहूँगा, यदि संभव हो, तो वह अपने भाषण का निष्कर्ष निकालें और अन्य किसी विषय पर अपना भाषण करें।

श्री आर.के. सिधवा (सी.पी. और बिरार : सामान्य) : श्रीमान, पूर्व वक्ता पंडित ठाकुर दास भार्गव ने कहा है कि अध्यक्ष का आदेश अन्तिम नहीं है। श्रीमान, क्या मैं आपका ध्यान आकर्षित कर सकता हूँ...

माननीय उपाध्यक्ष : इस विषय में मैं कोई अन्य बहस नहीं चाहता। मैं पहले ही अपना आदेश दे चुका हूँ कि जहां तक इस कार्रवाई का संबंध है, अध्यक्ष का आदेश अंतिम है। इस विवाद में अनुमति नहीं दे सकता कि कोई उसे प्रश्नगत करे। यह अनावश्यक है कि तर्कों को सुदृढ़ किया जाए अथवा मुझे मजबूत किया जाए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, यह मेरे मस्तिष्क में दूर-दूर तक नहीं है कि मैं आपको आमंत्रित करूं कि अध्यक्ष के आदेश के विरोध में कोई आदेश/प्रति आदेश दिया जाए। मैं आपसे ऐसा करने के लिए नहीं कह रहा हूँ। मैं भली-भांति समझ सकता हूँ कि यह वांछनीय नहीं है कि उस आदेश की समीक्षा की जाए जिसे उसी मामले में दिया जाता है, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि कानून के अनुसार आप पूर्ण रूप से सक्षम हैं कि आप दूसरा आदेश दें। कानून इतना संकरा नहीं है कि वह ऐसे मामलों में जिसमें अन्याय का बढ़ावा हो, व्यवस्था न कर सके। अत: मैं इस पर अधिक नहीं बोलूँगा कि अध्यक्ष के आदेश पर पुनः विचार किया जा सकता है। मैं जो निवेदन कर रहा हैं वह यह कि सदन के समक्ष अनेक प्रस्ताव हैं और क्योंकि यही व्यापक प्रचार के लिए अकेला नहीं है। यही विधेयक प्रवर समिति के समक्ष पुनः भेजा जा सकता है और वहां से पन्द्रह दिनों में वापस आ सकता है। जैसे कि मैंने पहले भी यह निवेदन किया था कि यह मामला विलंबकारी रणनीति का नहीं है। वह सब जो मैं चाहता हूँ कि सदन को ऐसी प्रक्रिया अपनानी चाहिए, जो कानून के अनुसार हो तथा जो सैद्धान्तिक रूप से सही हो। मैं इस सदन का एक सदस्य हूँ और इस प्रकार मुझे यह देखने का अधिकार है कि विधेयक जो प्रवर समिति को भेजा जाए, उस पर उसी तरह विचार-विनिमय हुआ है जैसी कि कानूनन आवश्यकता है। इसमें किसी बचाव की गुंजाइश नहीं है, अत: उसी

प्रवर समिति से इसकी सिफारिश होनी है। यही वह कारण है, जिसे मैं आपके समक्ष निवेदन करना चाहता हूँ। आखिरकार करदाता को उस समय के प्रत्येक मिनट के लिए कर अदा करना होता है, जो सदन में व्यतीत होता है। और मैं विलम्बकारी अथवा बाधा पहुँचाने वाली बात को पसंद नहीं करता। इसी प्रकार ...

श्री तजामुल हुसैन : आप वही सब कुछ कर रहे हैं।

एक माननीय सदस्य : वह अध्यक्ष के आदेश पर ही फिर से भाषण कर रहे हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं आशा करता हूँ कि यह सदन मुझे कुछ समय तक और सुनना चाहेगा।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य और अधिक समय लेना चाहेंगे?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : जी हां, श्रीमान।

(सदन भोजन अवकाश के लिए कुछ सयम तक स्थगित हो गया।)

(सदन की बैठक भोजन अवकाश के बाद अपराह्न 2.30 बजे पुनः आरम्भ हुई।)

माननीय उपाध्यक्ष (श्री एम. अनंत सयनम आयंगर) सभापति के आसन पर विराजमान हुए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, जब सदन भोजनावकाश के लिए स्थगित हुआ था, उस समय मैं आपके विचारार्थ यह निवेदन कर रहा था कि प्रवर समिति का कार्य विधेयक की पठन सामग्री के शब्द प्रति शब्द को देखना है; प्रवर समिति का कार्य विधेयक की पठन सामग्री में खंड प्रति खंड जाने का है, और यदि आवश्यक हो तो शब्द प्रति शब्द पर विचार करना है। इस संबंध में मैं, में की संसदीय व्यवहार, पर का उल्लेख करना चाहूँगा।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या मैं माननीय सदस्य से यह निवेदन कर सकता हूँ कि वह दूसरा विषय उठायें क्योंकि मैं पहले ही आदेश दे चुका हूँ।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं आपके आदेश का आदर करता हूँ। आपने कृपापूर्वक यह कहा था कि आप अध्यक्ष द्वारा दिये गये आदेश को बदलना नहीं चाहते और मैं भी नहीं चाहता कि उस आदेश को बदला जाए। वास्तव में, यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं खुद को ऐसा नहीं कर पाया कि सदन की सराहना प्राप्त हो। अध्यक्ष आसन्दी का आदेश है कि यह विधेयक प्रवर समिति के पास उस समय था, जब इस विधेयक के मसौदे पर विचार किया जा रहा था। मैं इसके बारे में बिल्कुल विवाद नहीं चाहता। मेरे विवाद का विषय यह है कि प्रवर समिति का कार्य यह था कि उन्हें मूल विधेयक पर खंड प्रति

खंड, शब्द प्रति शब्द विचार करना था। केवल यही बात नहीं है। जिस प्रकार सदन बाध्य है, उसी प्रकार प्रवर समिति इस विधेयक खंड प्रति खंड और शब्द प्रति शब्द पर विचार करने के लिए बाध्य है।

माननीय उपाध्यक्ष : हम यह मान कर चलेंगे कि इस आदेश के तहत मूल विधेयक और संशोधित मसौदा दोनों ही प्रस्तुत किये गये थे और सदस्यों ने इस पर खंड प्रति खंड विचार किया था। इसके बाद की स्थिति क्या है? क्या यह प्रश्न है कि हमें इस पर विचार नहीं करना चाहिए और क्या यह सदन इस विचार करने के लिए सक्षम नहीं है? यदि ऐसा है तो इस बारे में पहले ही आदेश दिया जा चुका है। जब एक बार उस पर आदेश दिया जा चुका है, तो कैसे उसे पुनः विचार करने के लिए खोला जा सकता है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : प्राप्त तथ्यों के प्रश्न पर मैं फिर भी प्रवर समिति के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे कृपा करके सदन को बताएं कि क्या ये दोनों विधेयक लिए गए थे और एक साथ विचार किया गया था। मान लिया जाये कि यह तथ्य सही है तो मेरा अभिप्राय यह है कि जब तक मूल विधेयक के प्रत्येक खंड पर विचार नहीं किया जाता और जब तक विधेयक के एक वाक्यांश के बाद दूसरे खंड और जब तक वह खंड प्रति खंड और शब्द प्रति शब्द विचार नहीं किया जाता, कानून और प्रक्रिया की आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया गया है।

श्री एच.वी. कामथ (सी.पी. और बरार : सामान्य) : क्या अध्यक्ष महोदय द्वारा प्रवर समिति की सक्षमता के प्रश्न को सदैव के लिए नहीं निपटाया गया है?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं स्वयं इस विषय के बारे में बताने का प्रयत्न कर रहा हूँ। जब कभी मैं कठिनाई महसूस करता हूँ तो मैं माननीय सदस्य श्री कामथ से सहायता देने के लिए कहूँगा। मैंने पहले कहा है कि मैं इस बात को जानने के लिए चिन्तित हूँ कि आगे का विषय क्या है। मैं एक क्षण के लिए यह मान लेता हूँ कि दोनों ही विधेयक प्रस्तुत किये गये थे और दूसरे मसौदा विधेयक को खंड प्रति खंड विचार किया गया था। इससे आगे क्या है? कानूनी आपत्ति क्या है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मेरा निवेदन है कि मुझे दो या तीन मिनट दिये जायें, ताकि मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर सकूं। इस विषय का एक अन्य पहलू भी है। इसके अलावा यह एक सैद्धान्तिक नियम है कि मूल विधेयक पर खंड प्रति खंड और शब्द प्रति शब्द विचार किया जाना चाहिए इस तरह कि पूरे विधेयक पर विचार किया जाना है कि मूल विधेयक के प्रत्येक खंड पर विचार हो सके और उसके बाद नये खंड पर विचार किया जाना चाहिए, तत्पश्चात् अनुसूची, और तब नई अनुसूची पर संसदीय व्यवहार यही प्रदान करती है। दूसरा प्रश्न यह है कि इसका क्या प्रभाव हुआ? इसके बाद क्या होगा, यही प्रश्न अब आपके सामने है। मैं विनम्र होकर व्यवहार और कानून

के सामान्य सिद्धांत और साथ ही साथ इसमें निहित मुद्दों के संबंध में ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। जहां तक सामान्य व्यवहार की बात है, कानून का नियम पूर्णत: स्पष्ट है कि जब किसी कानून या किसी व्यवहार या सामान्य सिद्धांत को आवश्यकता होती है कि किसी खास प्रक्रिया का पालन करना है। जब तक कि उस प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता है। तब तक यह नहीं समझा जाता कि वह वैधानिक रूप से की गई है। इस सिद्धांत के लिए मैं प्रिवी कांउसिल के प्राधिकार को उद्धृत करना चाहूँगा, जो 1936 में प्रिवी काउन्सिल की कार्रवाई के पृष्ठ 253 पर अंकित है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं अगले कदम का भी अनुमान कर रहा हूँ। मैं मान्य सदस्य के तर्क कदम-ब-कदम ले रहा हूँ। हमें अनुमान करना चाहिये कि ऐसा ही है कि प्रवर समिति ने इस पर विचार नही किया अथवा किसी अन्य पर विचार किया। तब मान्य सदस्य प्रत्यक्षत: यह कहना चाहते हैं कि इस विषय में मेरा कोई कार्यक्षेत्र नहीं है। ऐसा है इस संबंध में मैं कहना चाहता हूँ कि इस बात पर पहले ही अध्यक्ष ने आदेश दे दिया है। मैं मान्य सदस्य को सुनना चाहूँगा यदि मुझे इस बात से संतुष्ट करने योग्य है कि वह आदेश इस बात के लिए नहीं है, जो बात वे कहना चाहते हैं। जहां तक मेरा संबंध है मैंने इस बात पर सावधानी- पूर्वक विचार किया है और मैं यह विश्वास करता हूँ कि इसमें वह बात समाविष्ट है। इसलिए मैं यह सुझाव दूंगा कि मान्य सदस्य बिना कुछ अधिक समय लिए अपना अग्रीय भाषण जारी रखें क्योंकि पहले ही हमने इस विषय पर काफी समय लगा लिया है। यहां और अन्य वक्ता भी हैं, प्रतीक्षारत हैं। मैं मान्य सदस्य से निवेदन करूँगा कि वे यथा शीघ्र इस बात को समाप्त कर दें और दूसरा विषय उठायें, यदि वे वैसा चाहते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मेरा नम्र निवेदन यह है कि सभापति के पूर्व आदेश ने इस विषय पर विचार नहीं किया था। श्री नजीरुद्दीन द्वारा उठाया गया विचार-बिन्दु केवल यह था कि इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जा सकती क्योंकि फिर से तैयार किये गये मसौदे पर ही विचार किया गया था। यह एक साधारण बिन्दु था। वह बिन्दु जिसे मैं निवेदन कर रहा हूँ जो खंड प्रति खंड विचारित किए जाने के संबंध में है, पर विचार-विमर्श ही नहीं किया गया। इसका परिणाम यह होगा कि यह विधेयक प्रवर समिति को भेजा जाएगा और यदि आप इस सैद्धान्तिक नियम का पालन नहीं करते तो कोई भी अन्य मंत्री इस विधेयक के बाद तैयार मसौदा रखता है तो इस पर विचार किया जाएगा। और इस प्रकार सैद्धान्तिक नियम का वास्तविक उद्देश्य; यह है कि यह खंड प्रति खंड विचारित किया जाए, विफल हो जाएगा। यहां इसका पर्याप्त आधार है। एक किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि जो कुछ भी विधेयक में हो उसमें किसी तरह का बदलाव किया जाये। इसलिए मैं आपको यह बात बताऊंगा कि कॉमन्स में किए गए अध्यक्ष का आदेश (हैन्सार्ड का पृष्ठ 301, खंड 215) यदि आप इस बारे में मुझसे सहमत हैं

और समिति को खंड प्रति खंड विचारित किये जाने के लिए है, तो स्थिति नितांत स्पष्ट है कि यह विधेयक उसी प्रवर समिति को सौंप दिया जाये। मैं नहीं चाहता कि प्रतिवेदन इसी सत्र में नहीं आना चाहिए—मैं चाहता हूँ वे दो घंटे का समय लें और मूल विधेयक को खंड-व-खंड विचार करें और तब हम इसे विचार के लिए लेंगे। यह बिन्दु जिसका निवेदन करता हूँ, पर अध्यक्ष महोदय द्वारा कभी भी विचार नहीं किया गया और मैं आपसे सविनय निवेदन करता हूँ कि आप इस विषय पर कृपापूर्वक विचार करें।

इस विषय को अलग करके और जैसाकि आपने मुझे कहा है, इस विषय पर अधिक समय न लगाया जाये, मैं अन्य विषयों के बारे में कुछ कहना चाहूंगा। अब प्रश्न यह है कि इसका क्या प्रभाव हुआ है। मैंने पहले ही यह स्वीकार किया है कि हमें नियमों का पालन करना चाहिए और इस प्रकार के विषय में सैद्धान्तिक नियम ऐसे हैं, जिनकी अवहेलना नहीं की जा सकती। तब इसका वास्तविक प्रभाव क्या है? यही मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ। अब मूल विधेयक के उपबंधों और प्रवर समिति से आए विधेयक के उपबंधों के बीच जो अंतर अथवा कमियां हैं वे केवल प्रक्रिया के मामलों तक ही सीमिति नहीं हैं। अपितु अन्तर्निहित विषय-वस्तु तक है। बक्शी टेकचन्द और पंडित बाल कृष्ण शर्मा द्वार प्रस्तुत असहमति की टिप्पणी में यह बताया गया है कि फिर से तैयार किए गये मसौदे वाले विधेयक में तथ्य परक उग्र परिवर्तन किए गए हैं और उन्होंने इन परिवर्तनों के उदाहरण दिये हैं। मैं इस बात से संतुष्ट नहीं हूँ कि उन्होंने दिये गये समय में सभी ठोस परिवर्तन कर लिए हों, और मैं आपसे सविनय निवेदन करूँगा कि इस दृष्टि से भी इन बातों पर विचार किया जाए। जब मैंने आपना भाषण प्रारंभ किया था तब मैंने इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया था कि इस तारतम्य में फिर से मसौदा तैयार किये जाने वाले विधेयक के विचारित किये जाने के बाद जैसे कि प्रवर समिति से आया है उसमें कई परिवर्तन किये गये थे, जो ऐसी प्रथाओं के लिए निश्चय ही विनाशकारी हैं, जो पंजाब में नहीं हैं। मैं सर्वप्रथम एक उत्तराधिकारी की नियुक्ति करने वाली प्रथा की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा। जहां तक उत्तराधिकारी की नियुक्ति का संबंध है, इस बारे में हमने माननीय डॉ. अम्बेडकर के विचार समझ लिए हैं। उन्होंने स्वयं कहा कि उनका विचार था कि उत्तराधिकारियों की चयन क्रिया एक कृत्रिम मामला है। मेरा भी यही विचार है। हम श्रीमती हंसा मेहता के उस समय के भाषण को याद करते हैं, जब यह विधेयक चयन समिति को भेजा गया था। उन्होंने कुछ टिप्पणियां की थीं। अब वर्तमान विधान के अनुसार कोई भी व्यक्ति किसी भी उत्तराधिकारी को गोद नहीं ले सकता, विवादित स्थिति के अतिरिक्त। जबकि मूल विधेयक के अनुसार कृत्रिम और गोद लेने की विधियां भी स्वीकार्य थीं। जहां तक दत्तक लेने का संबंध है, किसी पुत्र का दत्तक रूप से ग्रहण करना केवल कपोल कथा है किस प्रकार बेटा वास्तविक बेटा हो सकता है? परन्तु हिंदू कानून में इस प्रकार की व्यवस्था है और मेरा उनके साथ कोई विवाद नहीं है जो इसमें विश्वास करते हैं। परतु संपत्ति के उत्तराधिकारी की नियुक्ति के संबंध में जैसे कि रोम वासियों ने नोमिनीस हेरेडिटियों के रूप में किया।

यदि पंजाब के लोगों के पास उसी तरह की प्रथा है तो किसी को उसे रोकने का कोई अधिकार नहीं है। हमारी रीति-रिवाजों के अनुसार किसी भी उत्तराधिकारी की नियुक्ति में भले ही दत्तक के समान प्रभावी हो, फिर भी इसमें कोई धार्मिक प्रभावोद्पादकता नहीं है। इसके लिए विशेष धार्मिक उत्सव नहीं किए जाते। इसमें आयु का प्रश्न नहीं उठता। कोई पुत्र परिवार में दत्तक के रूप में आरोपित नहीं किया जाता, परन्तु वह अपने ही परिवार में वैसे ही रहता है। इस संबंध में कई प्रकार के नियम हैं और पंजाब उच्च न्यायालय ने इस बिन्दु पर सैंकड़ों निर्णय दिये हैं। यह प्रथा लोगों के मन में सशक्त रूप से जड़ें जमा चुकी है और आप कम से कम एक करोड़ लोगों के रिवाज में हस्तक्षेप करेंगे, यदि आप इस बात को अपनी संहिता में सम्मलित नहीं करते। हिंदू संहिता के वर्तमान स्वरूप के अनुसार उसमें किसी भी अन्य प्रकार के दत्तक लेने की अनुमति नहीं है। यह बात दूर तक नहीं जाती। मैं समझता हूँ कि जहां तक रिवाज का संबंध है, उसमें रिवाज को नकार दिया गया है, उस सीमा तक जहां तक मान्यता दी गई है।

जब मैंने डॉ. अम्बेडकर के उस भाषण को पढ़ा, जिसे उन्होंने उस समय दिया था जब यह प्रस्ताव प्रवर समिति के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, मैंने यह समझा था कि उनकी प्रवृत्ति तर्कसंगत है और उन्होंने रिवाज के संबंध में कुछ वक्तव्य दिये थे जो इस विधेयक के कुछ उपबंधों के विपरीत हैं। श्रीमान, मुझे काफी संदेह है कि क्या विधि विभाग की समिति में विधि मंत्री को भी सम्मलित किया गया था? मैं यह नहीं जानता कि वे कौन-कौन व्यक्ति थे, जिन्होंने इस विधेयक में परिवर्तन किये हैं, परन्तु इसके साथ ही मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि मैं अब ज्यादा सशक्त रूप से संदेह करता हूँ। यद्यपि मुझे इसके बारे में ज्ञात नहीं था कि डॉ. अम्बेडकर वहाँ नहीं थे, क्योंकि वह इस बात के लिए अधिक चिंतित थे कि 90 प्रतिशत लोगों के रिवाज प्रभावित नहीं किये जाएं, जैसाकि मैं भी इस बारे में चिंतित हूँ। या तो यह बात उनसे छूट गई, उन्होंने इसकी सराहना नहीं की, अथवा कुछ ऐसे अन्य व्यक्ति हैं जो प्रवर समिति के सदस्य नहीं थे, पर उन्होंने विधेयक को पूर्णतया बदल दिया, जिसके बारे में उन्हें वैसा करने का कोई अधिकार नहीं था। इसके बाद वहाँ दूसरा विधेयक आ गया, उसी पर विचार किया गया। इसलिए यह एक काल्पनिक कथा है कि वहाँ मूल विधेयक था और उसी पर विचार किया गया था। श्रीमान, मैं उस कार्रवाई के पृष्ठ 3652 (9 अप्रैल, 1948) की ओर आपका ध्यान आकर्षित करूंगा, जिसमें डॉ. अम्बेडकर ने कहा था:-

"उनकी दूसरी टिप्पणी यह थी कि विधेयक पर पारम्परिक कानून की दृष्टि से विचार नहीं किया गया था। उन्होंने प्रिवी काउंसिल के कुछ आदेश उद्धृत किये थे। मुझे यह विचार करना चाहिए था कि आज इस समय यह आवश्यक था कि प्रिवी काउंसिल के प्राधिकार को बताया जाये, क्योंकि निर्णयों के लम्बे दौर द्वारा यह भली-भाँति स्थापित किया जा चुका है कि जहां तक हिंदुओं का संबंध है उनके रिवाज "स्मृति" के पाठ को पीछे छोड़ देते हैं। हम सभी

यह जानते हैं। परन्तु हम कर क्या रहे हैं? क्या हम जो कर रहे हैं वह यह है। हम नये रिवाजों की संवृद्धि को रोक रहे हैं। हम वर्तमान रिवाजों को नष्ट नहीं कर रहे हैं। हम वर्तमान रिवाजों को मान्यता दे रहे हैं क्योंकि हिंदू समाज में जो नियम और कानून प्रचलित हैं वे रीति-रिवाजों के परिणाम हैं। वे रीति-रिवाजों से ही उत्पन्न हुए हैं और हम यह महसूस करते हैं कि वे रीति-रिवाज इतने मजबूत हैं कि हम उन्हें एक कानूनी व्यवस्था द्वारा वास्तव में राज व्यवस्था में मूर्तरूप और विधान मण्डल द्वारा जीवन दे सकते हैं।"

डॉ. अम्बेडकर ने श्रीयुत रोहिनी कुमार चौधरी के भाषण का उल्लेख कर रहे थे। उन्होंने यह भी कहा थाः–

"हमने जन-जातियों के लोगों के प्रश्न पर विचार नहीं किया था, जिनका जीवन निःसन्देह अधिकांशतः पारम्परिक कानून द्वारा अधिशासित होता है। यदि मेरे मित्र ने इस संहिता में इस परिभाषा को पढ़ा होता कि कौन हिंदू है और कौन नहीं है और किस पर यह संहिता लागू होती है, तो उन्होंने यह भी देखा होता कि वहां तक खंड है, जिसमें केवल यह बताया गया है कि ऐसे व्यक्ति जो मुसलमान, पारसी या इसाई नहीं हैं, हिंदु हैं। इसका परिणाम यह है कि यदि जनजाति का व्यक्ति यह कहता है कि वह हिंदू नहीं है तो इस संहिता के अन्तर्गत उसे पूर्णतया छूट होगी कि वह अपने अभिप्राय के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करे कि वह एक हिंदू नहीं है और यदि न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष स्वीकार कर लिया जाता है तो वह निश्चय ही उन बातों के लिए बाध्य नहीं होगा जैसी कि इस विधेयक में दी गई हैं।"

अतः स्थिति यह हैः यदि मैं अपनी प्रथाओं को अच्छा मान कर स्वीकार करता हूँ, यदि मैं उन रिवाजों के अनुसार अपने उत्तराधिकारियों की नियुक्ति करता हूँ जो मुझे अधिशासित करते हैं, तथा डॉ. अम्बेडकर के अनुसार मैं हिंदू नहीं हूँ। यही मेरी कठिनाई है। आप उन एक करोड़ लोगों के लिए व्यवस्था करें और उनके रिवाजों को स्वीकार करें, या फिर**

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : मेरी कोई इच्छा नहीं है कि मैं अपने मित्र के भाषण में हस्तक्षेप करूं। परन्तु मुझे कहना चाहिए कि मैं उनकी उस व्यवस्था को स्वीकार नहीं करता, जो उन्होंने मेरे भाषण के हिस्से में जोड़ी है। क्योंकि यह नितान्त अलग विषय है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे प्रसन्नता है कि मैं गलत हूँ। यह मुझे सन्तोष प्रदान करता है कि डॉ. अम्बेडकर नहीं चाहते थे कि एक करोड़ लोग हिंदू विधि की सीमा से बाहर हो जाएं। परन्तु इसके साथ ही मैं यह दलील दे रहा था कि यदि यह रिवाज़ अच्छा है–और मैं भी स्वीकार करता हूं कि यह रिवाज़ अच्छा है, क्योंकि इसी विधेयक में दी गई परिभाषा के अनुसार रिवाज़, प्राचीन रिवाज़ है, तर्कसंगत है तथा लोक नीति अथवा नैतिकता के विरुद्ध नहीं है। मैं दावा करता हूं कि इस रिवाज़ को संहिता द्वारा मान्यता दी जानी चाहिए, परन्तु उसमें इसे मान्यता नहीं दी गई है। किसी सीमा तक कृत्रिम रूप

को मूल विधेयक द्वारा अच्छा स्वीकार कर लिया गया था, परन्तु मौजूदा विधेयक में कहा गया है कि उस दत्तक प्रकार के सिवाय कोई भी दत्तक प्रकार स्वीकार नहीं किया जायेगा जो डॉ. अम्बेडकर के अनुसार कुछ विशेष नियमों द्वारा अधिशासित होता है। वे नियम क्या है? एक व्यक्ति को 15 वर्ष की आयु से अधिक नहीं होना चाहिए। उसे किसी व्यक्ति द्वारा दत्तक दिया जाना चाहिए। उसे विवाहित नहीं होना चाहिए। यहां कि मौजूदा बिल दत्तक के अनुसार ऐसे नियम वहां नहीं हैं। मान लीजिए कि हिंदू बेटी और दामाद की मृत्यु हो जाती है तो बेटी का बेटा दत्तक नहीं लिया जा सकता। बहन का बेटा दत्तक नहीं लिया जा सकता यहां तक कि भतीजा भी दत्तक नहीं लिया जा सकता, यदि उनके माता-पिता जीवित नहीं हैं। यह आमान्य सोच की बात है और आज भी यह नियम कि यदि कोई व्यक्ति विवाह कर लेता है तो उसे दत्तक नहीं लिया जा सकता, प्रचलन नहीं है और कानून के अनुसार प्रचलित है, यह आवश्यक नहीं है कि किसी व्यक्ति को दत्तक लिए जाने से पूर्व विवाहित नहीं होना चाहिए। यही नियम आयु के बारे में है, यानी इस तरह वे सभी इस प्रकार परिवर्तित कर दिये गये हैं कि वे मौजूदा परिस्थितियों में ठीक नहीं बैठते अथवा वे हमारे लिए उपयोगी नहीं हो सकते, अथवा वे हमें अधिशासित नहीं कर सकते।

हमने संविधान सभा में यह पारित किया था कि हम एक सिविल संहिता चाहते हैं। यदि वह हिंदू संहिता नहीं होती और यदि डॉ. अम्बेडकर को सिविल संहिता तैयार किये जाने का दायित्व सौंप जाता (मेरा विचार है कि संविधान के पारित होने के बाद उन्हें यह कार्य सौंपा जाएगा।) तो वे निश्चय ही उत्तराधिकारी के नामांकन की इस सिविल प्रथा को सम्मिलित करेंगे। एक व्यक्ति वृद्धावस्था में उनकी सहायता करने के लिए समर्थ हो सकता है, वे उसे अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करते हैं। इस संबंध में मेरा निवेदन है कि यही बिन्दु अकेला यह जानने के लिए पर्याप्त है कि वास्तव में फिर से मसौदा तैयार किया गया विधेयक, मूल विधेयक से काफी खराब है और मूल विधेयक पर पूरा ध्यान नहीं दिया गया है। यदि पूरा ध्यान दिया जाता तो इस बात पर भी विचार किया गया होता। यदि यह खंड प्रति खंड विचारित किया गया होता तो आप इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचते।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं कहना चाहता हूँ कि विधेयक के इस भाग पर बहुत अधिक विचार किया गया था।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, मुझे प्रसन्नता है कि मूल विधेयक पर विचार किया गया था। तब केवल यही तकनीकी विचार-बिन्दु शेष रहता है कि यह खंड प्रति खंड विचारित नहीं किया गया था। इसमें आन्तरिक साक्ष्य है कि इस पर इस प्रकार विचार नहीं किया गया था। इसका क्या प्रभाव पड़ा? मान लीजिए कि कुछ उपबंधों को निकाल दिया गया तो वे उपबंध किस प्रकार सम्मिलित किये गये थे। जब पूरा ध्यान अन्य विधेयक

के मसौदे पर दिया गया था तो उन खंडों पर विचार नहीं होता। यह एक तकनीकी विषय नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य इस बात से अवगत हैं कि प्रवर समिति ने जो कुछ भी किया है, उससे यह सदन बाध्य नहीं है। प्रवर समिति ने एक सिफारिश भेजी है; यह मान्य सदस्य पर है कि वह उसे स्वीकार करे या न करे। यदि वह स्वीकार नहीं करता तो वह प्रयास कर सकता है कि सदन उसे न स्वीकारें। हमें इस बात पर फिर विचार नहीं करना है, आखिरकार कुछ सदस्य वहां उपस्थित थे। यह सही नहीं है वहां जाना कि उन्होंने क्या विचार किया अथवा क्या विचार नहीं किया। उसके लिए माननीय सदस्य इस सदन को संबोधित करना चाहेंगे कि हम क्यों किसी प्रावधान को स्वीकर न करें अथवा हमें उसे स्वीकारना चाहिए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमान, मैं आपके परामर्श को स्वीकार करता हूँ। मैं इस बात का भविष्य में उल्लेख नहीं करूंगा कि प्रवर समिति के समक्ष क्या हुआ। मैं आपकी अनुमति से सिर्फ यह बात कहूँगा। चाहे प्रवर समिति की संलिप्तता इस जालसाज़ी में हो कि मूल विधेयक पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है, बाध्य नहीं है। यदि एक अभियोगी फौजदारी अदालत के सामने किसी ऐसी प्रक्रिया से सहमति प्रकट करे जो अवैध है; तब वह उस पर बाध्य नहीं है। क्या मैं कुछ आदेशों को उद्धृत करूं। न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता है और स्वयं यह पता करने की आवश्यकता है कि क्या किसी अभियोगी को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के अधीन बाध्य करने के लिए ठोस साक्ष्य अथवा अभिलेख हैं। अभियोगी कहता है, 'मैं उस साक्ष्य में बाध्य होने के लिए सहमत हूँ।' तो न्यायालय कहता है, 'आप बाध्य हैं'। परन्तु अपील सुनने वाला न्यायालय यह आदेश दे सकता है कि प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है, और गलत प्रक्रिया में अभियोगी की सहमति आदेश को वैध नहीं बनाती।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य प्रवर समिति की रिपोर्ट फाड़कर टुकड़े-टुकड़े करते हुए संतुष्ट हैं? क्या वे कहना चाहेंगे कि वे 'अभियोगी' हैं?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : जो सदस्य ऐसी प्रक्रिया के सैद्धान्तिक नियमों की, जो प्रवर समिति को शासित करते हैं, अवहेलना करने के दोषी हैं और आज इस सदन के समक्ष अभियोगी हैं। मुझे दुख है मैं कुछ कहना है जो मेरे मित्रों को अच्छा नहीं लगे, परन्तु मुझे अति विनम्र भाव से ऐसा करना है। सदन के अधिकारों की रक्षा और प्रतिष्ठा की दृष्टि के साथ अब मैं यह बात छोड़ता हूँ और दूसरी बात पर आता हूँ।

विवाह और तलाक के संबंध में जो अधिक महत्व के विषय हैं, उनके बारे में संहिता क्या कहती है और आज इस बारे में क्या तथ्य है? पंजाब में उन विवाहें के लिए किन्हीं विशेष प्रकार के उत्सव मनाने की आवश्यकता नहीं है जिन्हें करेवा और चादर और

अंदाजी विवाह कहते हैं। उनमें महिला, पति द्वारा दी गई चूड़ियां पहनती है अथवा पति अपनी पत्नी को चादर उढ़ाता है और विवाह सम्पन्न हो जाता है। (**श्री महावीर त्यागी: 'चार्मिंग मैरिज'**) श्री त्यागी के लिए यह अति सरल है कि वह स्वयं इस प्रक्रिया को अपना लें। यह न तो सांस्कारिक विवाह है और न सिविल मैरिज (कानूनी विवाह) है। पुनः मूल संहिता में एक बचाव का रास्ता भी था। ऐसे व्यक्ति अदालत में जा सकते थे और वे अपने विवाह का पंजीकरण करा सकते थे। परिवर्तित नियमों में जब तक विवाह सांस्कारिक है, उसका पंजीकरण नहीं हो सकता। कुछ अन्य बातें भी हैं, जिनके बारे में मैं आपके समक्ष अवसर होगा कहने का, परन्तु मैं इस विषय में सामान्य टिप्पणियां करना चाहूँगा कि अनेक व्यक्तियों के बारे में क्या हो रहा है और आम आदमी की दृष्टि से किस पर विचार नहीं किया गया है।

मुफस्सिल क्षेत्रों के लोग निरक्षर हैं। वे गरीब हैं। वे कानून की पेचीदगियों को नहीं जानते। तलाक के प्रश्न पर जब डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि वे नब्बे प्रतिशत जनसंख्या की बात कह रहे थे। मैं जानता हूँ कि और कुछ नहीं बल्कि सत्य कह रहे थे। आज तलाक किस प्रकार होता है? वे अर्जी लेखक के पास जाते हैं और छुटकारा का पत्र ले लेते हैं। दूसरा विकल्प यह है कि वे एकत्र हो जाते हैं और महिला पर श्वेत चादर उढ़ा देते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : और एकत्रित व्यक्तियों में पर्याप्त मात्रा में मदिरा बाँट देते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : परन्तु यह धर्मानुष्ठान का हिस्सा नहीं है। श्रीमान, इस समय का कानून क्या है? हमारे नेताओं ने आपके लिए किया क्या है? मैं उन गरीब लोगों का प्रतिनिधि हूँ। मैं स्वयं को उनमें शामिल समझता हूँ। परन्तु जब डॉ. अम्बेडकर अपनी उंगली से ऐसा संकेत देते हैं कि वे भी उनमें से एक हैं, तो वे मुझे क्षमा करेंगे कि मैं उनके साथ सहमत न होऊँ। डॉ. अम्बेडकर तो यहां स्वर्गतुल्य महल में रहते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं कई वर्षों तक 'इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट' की चालों में रहा हूँ, मुझसे तीन रुपए किराया वसूलते थे।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आप उन्हें अपने पैरों तले कुचल सकते हैं। आप उन्हें अपने अंगूठे के नीचे रख सकते हैं। परन्तु श्रीमान, क्या आप यह सोचे सकते हैं कि कोई गांव वाला प्रतिदिन लगभग एक रुपया अथवा डेढ़ रुपये प्राप्त करता है, वह किसी अधिवक्ता की सहायता के बिना, सीधा न्यायाधीश के पास पहुंच सकता है? डॉ. अम्बेडकर एक अधिवक्ता हैं। वे चाहते हैं कि सारा विश्व सिर्फ उनके समान अधिवक्ताओं से भर जाए और दूसरा कोई भी न हो। ऐसी स्थिति में इन लोगों का क्या होगा? क्या वे अपने विवाह-विच्छेद यानी तलाक के लिए जिला न्यायाधीश के पास पहुंच सकेंगे? (**एक माननीय सदस्य: 'असंभव'**।)

और यह पर्याप्त नहीं है। यदि उसे डिक्री मिल जाती है, तो उसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा होनी चाहिए जो कि जहां तक पंजाब का मामला है, वह कार्य शिमला स्थित उच्च न्यायालय में सम्पन्न किया जाएगा। अब यह प्रक्रिया भी लोगों को मालूम नहीं है, लगता है उन लोगों के लिए बड़ी क्रूरता है। आप उन व्यक्तियों के लिए कानून बना रहे हैं जो बम्बई के मैरीन ड्राइव में रहते हैं अथवा कलकत्ता और दिल्ली के महलों में निवास करते हैं न कि उन लोगों के लिए जिनके लिए आपके हृदय में कोमल भाव है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : वे इसे कठिन बनाना चाहते हैं। पर क्या आप इसे सरल बनाना चाहते हैं?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : इसका दूसरा उत्तर यही है कि वे इसे कठिन बनाना चाहते हैं। मैं तलाक को आसान बनाना नहीं चाहता, बिलकुल भी नहीं। मैं तलाक के पक्ष में केवल एक शर्त के साथ हूँ कि आप ऐसे कानून बनाएं जिसमें वैसी परिस्थितियां बनना बहुत कठिन हो जाएं कि तलाक लिया जा सके। चरित्र तथा पारिवारिक जीवन की प्रवाहिता हमारी संस्कृति की धुरी है। परन्तु यदि मैं तलाक का समर्थन करता हूँ, तो इसका कारण यह है कि मैं अनेक महिलाओं को परित्यक्ता देखता हूँ। उसी कारण से मैं इसके लिए सहमत हूँ। पर एक गरीब आदमी जो नितांत निरक्षर है, किस प्रकार एक अधिवक्ता को नियुक्त कर सकेगा तथा जिला या उच्च न्यायालय में पहुंच सकेगा? यह असंभव है कि इस बात को स्वीकार किया जाए। 1869 पुराना का अधिनियम बनाया गया था, वह पंजाब अथवा भारत के किसी भी भाग के गरीब लोगों के लिए नहीं था। वह अधिनियम ऐसे ईसाइयों के लिए बनाया गया था, जो उसी जाति के थे, जैसे कि उस समय के शासक थे। उनमें तथा इन लोगों में भारी अन्तर है। यदि आप विधेयक के अनुच्छेद 38 से 50 तक के उपबंधों का अध्ययन करें, तो आप इस निष्कर्ष पर पहुँच जाएंगे कि इतनी जटिल और पेचीदा प्रक्रिया बना दी गई है कि उसका अनुसरण कर पाना एक कठिन कार्य है। यदि आप गहराई से विचार करें तो आप पायेंगे कि समग्र हिंदू समाज आपका विरोध करेगा कि आप इन उपबंधों को पारित करते हैं। आपके कानून के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति अपनी बुआ की बेटी से विवाह करता है तो ऐसा विवाह ठीक है। यदि वह अपने मामा की पुत्री के साथ विवाह करता है, जैसा कि यह मुम्बई के कुछ भागों में प्रचलित है, तो मैं समझता हूँ⋯(**एक माननीय सदस्य :** 'और मद्रास।' परन्तु जहां तक हमारा संबंध है, इसे हम निकट कौटुम्बिक व्यभिचार मानते हैं। इसमें काफी अन्तर है। (**श्री महावीर त्यागी:** 'उस व्यक्ति की हत्या भी की जा सकती है।') श्री त्यागी सत्य से बहुत अधिक दूर नहीं हैं। यह तथ्य है कि पूर्वी पंजाब के सभी जिलों में—और मैं ऐसी भावना से इसलिए नहीं कि मैं बलपूर्वक कहना चाहता हूँ बल्कि इसे मैं सत्य समझता हूँ यदि आप उन्हें होने दें कि वहाँ पुरुष को मार दिया जाएगा और कोई भी और व्यक्ति उसका साथ नहीं देगा। (**श्री तजामुल हुसेन :** क्या वहाँ कोई दबाव है?) यदि कोई पुरुष अपनी बहन अथवा

माँ से विवाह करता है, क्या इसमें कोई बाध्यता है? क्या यह उपाय सक्रिय करने के लिए है? यह असहनीय है। हमारे लिए यह असंभव है कि हम इस स्थिति के साथ इसलिए समझौता कर लें क्योंकि यह रिवाज़ कुछ लोगों में स्वीकार्य है। मैं यह नहीं कहता कि उन लोगों की सुरक्षा न की जाए, परन्तु उनके लिए उपलब्ध बनाया जा सकता है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : वास्तव में ऐसी ही व्यवस्था की गई है, यदि आप धारा (5) का अवलोकन करें यानी दोनों पक्षों को आपस में सपिंड नहीं होना चाहिए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : क्या मैं विनम्र भाव से यह पूछ सकता हूँ कि किसी पुरुष का विवाह उसकी चाची की बेटी से हो सकता है? मैंने भी नियम देखे हैं। मैं आपके विचारार्थ निवेदन करना चाहता हूँ कि ऐसे मामलों में कानून में परिवर्तन किया जा चुका है और जब तक हमारी परिस्थितियों के अनुकूल कानून नहीं बनाया जाता, तब तक हमारे लिए यह कठिन है कि ऐसी कार्रवाई का समर्थन लिया जाए। वह हो सकता है जब प्रवर समिति के समक्ष संशोधन प्रस्तावित किए जाएँ, मैं नहीं चाहता कि यह विधेयक ठप कर दिया जाए या समाप्त कर दिया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस सदन द्वारा एक संशोधन करके भी ऐसा किया जा सकता है।

एम. माननीय सदस्य : मुझे आशा है कि आप स्वीकार कर लेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं कोई भी तर्कसंगत संशोधन स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं अति प्रसन्न हूँ और उस सीमा तक मैं इस विधेयक का समर्थन करने के लिए तैयार हूँ।

श्री तजामुल हुसैन : क्या माननीय सदस्य का इरादा है कि आज पूरा कर लिया जाए?

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में इसमें रुचि रखते हैं, जो इस विधेयक द्वारा प्रभावित हैं। मैं वह देख रहा हूँ। मैं माननीय सदस्य से यह नहीं कह सकता कि वह कब समाप्त करने का प्रस्ताव करते हैं। यह बात उसी पर निर्भर है कि वह बिना पुनरावृति के संबंध में तर्कसंगत समय ले।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मेरा यह इरादा नहीं है कि मैं एक मिनट भी उससे अधिक लगाऊं जितनी कि आवश्यकता है। यदि मैं पुनरावृति करता हूँ तो मेरे विरुद्ध व्यवस्था का प्रश्न उठाया जाए। यदि हमारे समक्ष ऐसा विधेयक है जो तीस करोड़ लोगों के जीवन को प्रभावित करता है, तो यह अधिक नहीं है कि उस पर कुछ दिनों तक विचार किया जाए।

अब मैं उन उपबंधों, पर आता हूं, जिन्हें प्रवर समिति ने तैयार किया है और इस संबंध में सबसे जटिल प्रश्नों पर हमारा दृष्टिकोण क्या होना चाहिए? चाहे वे मामले उत्तराधिकार और भरण-पोषण के लिए ही क्यों न हों, मैं बलपूर्वक इनके बारे में अपनी बात कहूँगा। जैसा कि मैंने पहले भी अपने अवलोकन में कहा था, मैं इस पक्ष में हूँ कि भारतीय महिला को चल और अचल सम्पत्ति में सहभागिता का अधिकार दिया जाए ताकि वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो सकें। परन्तु इसी के साथ मैं इस बात का विरोध करता हूँ कि पिता की सम्पत्ति में बेटी को कोई भाग दिया जाए। मैं यह चाहता हूँ कि जहां तक अविवाहित पुत्री का संबंध है, उसे बेटे के समान पूरा हिस्सा दिया जाना चाहिए, जब तक वह विवाह न करे। परन्तु जैसे ही वह विवाह कर लेती है, तब स्थिति अलग होती है। मुझे लगता है कि हमारे कानून में कोई कमी है परन्तु नया कानून बनाकर उस कमी को पूरा किया जा सकता है कि जैसे एक महिला एक पुरुष के साथ विवाह करती है, तब एक पुरुष और महिला जब वे प्रेम के बंधन में बंध जाते हैं, वे सम्पत्ति में भी एक हो सकते हैं। अन्ततोगत्वा पुरुष और महिला संयुक्त रूप से सम्पत्ति के स्वामी बन जाते हैं और जब पति के पिता का देहान्त हो जाता है, तो दोनों ही समान रूप से पिता की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बन जाते हैं। इसके अलावा सम्पत्ति का विघटन विशेष प्रकार से भी होता है। मैं जानता हूँ कि शायद समानता की मांग इस प्रकार पूरी नहीं हो पाती। परन्तु इस प्रकार के मामलों में मैं नहीं समझता कि हमारी बहनों को अच्छा परामर्श दिया जाता है प्रत्येक प्रश्न को सुनहरे मापदंड पर तौलते हुए। जिस मापदंड का वे उपयोग करती हैं, सही नहीं है।

क्या मैं यह निवेदन करूं कि जहां तक भरण-पोषण का प्रश्न है, उनके पास ऐसे कानून हैं और ऐसे प्रावधान हैं कि उनके समान अन्यत्र कहीं भी नहीं हैं। श्रीमान, उत्तराधिकार के प्रश्न तथा भरण-पोषण के प्रश्न पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए। यदि उन पर एक साथ विचार नहीं किया जाता तो कठिनाई यह होगी। प्रावधानों के कार्यान्वयन का पूर्णतः एहसास नहीं हो पायेगा। इस समय भरण-पोषण के संबंध में पति या पुरुष के कर्तव्य महिलाओं को सौंपे गए कर्तव्यों से नितांत भिन्न हैं। भरण-पोषण के अध्याय के अनुसार, पत्नी का अधिकार है कि उसका पति उसका भरण-पोषण करे, परन्तु क्या पति का अधिकार है कि उसकी पत्नी भरण-पोषण करें? मैं केवल यह बता रहा हूँ कि उसमें अधिकार सामान नहीं हैं। मैं मानता हूँ कि अधिकार सामान नहीं हो सकते हैं, वे अलग-अलग होते हैं। महिलाओं और पुरुषों को अलग-अलग कार्य करने पड़ते हैं और इस आधार पर उन्हें इस प्रकार व्यवस्थित किया जाना चाहिए कि महिलाओं को अपने पूरे अधिकार प्राप्त हो सकें, और न कि पूर्ण समान अधिकार।

श्रीमान् पुनः एक पिता को अपने अल्प वयस्क बेटे के भरण-पोषण का अधिकार होता है, परन्तु जहां तक बेटी का संबंध है, बेटी के अधिकार क्या हैं श्रीमान? यदि बेटी विधवा हो जाती है अथवा उसका विवाह हो जाता है या वह अविवाहित है और बेटी की आयु

कुछ भी क्यों न हो उसके भरण–पोषण का दायित्व रहता है। तथ्य की दृष्टि से जहां तक भरण–पोषण के उपबंधों का संबंध है, मैं डॉ. अम्बेडकर को उनके प्रस्ताव के लिए निश्चय ही बधाई देना चाहता हूँ कि महिलाओं की प्रत्येक स्थिति में सुरक्षा की जानी चाहिए और उसके लिए पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए। परन्तु यदि यह एक उपयोगी प्रावधान है, तो यह भी है कि महिलाओं को अपने पिता की सम्पत्ति में हिस्सा मिलना चाहिए।

माननीय डॉ. अम्बेडकर ने कल हमें बताया था कि प्राचीन काल में एक साथ सम्पत्ति का हस्तांतरण कर दिया जाता था और नारद के अनुसार बेटी को लगभग एक–चौथाई भाग मिला करता था। मैं नहीं जानता कि उन दिनों सामाजिक अस्तित्व का आधार क्या था और परिवार का गठन उसी प्रकार होता था, जैसा कि आज होता है। मैं यह नहीं जानता कि इस बात को हिंदू कानून की किसी पठन–सामग्री में समझाया गया है। यह स्वीकृत स्थिति नहीं है। कुछ लोगों का कहना है कि एक साथ ही उत्तराधिकार की व्यवस्था केवल अविवाहिता महिला के लिए ही थी। परन्तु इसको अलग हटाकर मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि उस समय उसको ठीक समझा गया, तो प्रश्न पर प्रश्न यह है कि क्या आज हम हजारों वर्षों या इससे भी अधिक समय से 'सपिंडिता के सिद्धान्त' के अनुपालन के बाद इसे न्यायसंगत स्वीकार करने की स्थिति में हैं कि बेटी को भी सम्पत्ति में हिस्सा मिलना चाहिए किसी परिवार में क्या होता है? जब तक पिता जीवित हैं, तब तक पुत्र व्यापार या खेत में, मिलकर धन पैदा करने में, अपने पिता के साथ काम करता है। जब पिता वृद्धावस्था के कारण मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, तब पिता के नाम की सम्पत्ति वस्तुतः पिता और पुत्र के संयुक्त प्रयत्न से अर्जित सम्पत्ति है। अब यदि यह कहा जाए कि ऐसी सम्पत्ति में बेटी का भाग होना चाहिए, जबकि बेटी ने उस सम्पत्ति को बनाने में किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया है। शायद तब वह अन्यत्र बच्चे पैदा कर रही थी। यह सही नहीं है। यहां मुझे गलत न समझा जाए। मैं नहीं चाहता कि बेटी को पूरे अधिकार नहीं दिए जाने चाहिए। उसे वे अधिकार मिलने चाहिए। परन्तु मैं नहीं चाहता कि यह अभिनव परिवर्तन जो ऐसे सैद्धान्तिक प्रकार का है जो हमारे देश में प्रत्येक घर को प्रभावित करेगा, किया जाना चाहिए। मैं अपने लोगों को भली–भाँति समझता हूँ। चौधरी रणबीर सिंह जो जाट हैं, जानते हैं कि परिवार में उनके दामाद का किस प्रकार का स्वागत किया जाएगा। मैं 40 वर्षों से अधिवक्ता के रूप में काम कर रहा हूँ और मैं जानता हूँ कि स्वअर्जित सम्पत्ति के मामले में बेटी को तभी हिस्सा मिलता है, तब पुत्र नहीं होते। अब यदि यह अभिनव परिवर्तन गांवों में प्रारंभ किया जाता है। समस्त सम्पत्ति के मामलों में तो इसकी परेशानी का कोई अन्त नहीं होगा। यदि आज प्रत्येक घर में यदि दामाद और पिता और दामाद की माता को चाची के बेटे तथा उसके परिवार के साथ रहने देते हैं तो वे असंभव परिस्थिति पैदा कर देंगे। इसका कारण यही नहीं है कि हम अपनी बेटियों को प्यार नहीं करते। हम उनके लिए

सब कुछ करते हैं। हमारे गाँवों में यदि बेटी अपने माता-पिता के घर आती है, तो प्यार के बहाने उसे हमेशा कुछ न कुछ दिया जाता है।

श्रीमती रेणुका रे : इस देश में बेटियों को जन्म ही नहीं लेना चाहिए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : इस बारे में मैं जानता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर क्या कहेंगे। वह कहेंगे, कि पुत्रों की अपेक्षा पुत्रियों का जन्म होना चाहिए। क्या हम यह नहीं जानते कि अनेक राजपूतों के परिवारों में बेटियों को मार दिया जाता है। मैं नहीं चाहता कि ऐसा किया जाए। यह निश्चित ही सही नहीं है। जो मैं निवेदन कर रहा हूँ कि सैकड़ों वर्षों तक हम ऐसे समाज में रहे हैं। हमने बेटे को परिवार की धुरी समझा है। बेटे के बिना परिवार में बेटी को गिना नहीं जाता। वह पुत्र ही है, जो पिता को नरक से बचाता है। (पतात त्रायते) यदि हम मुसलमानों के सामन होते तो हम निश्चित रूप से इसे स्वीकार कर लेते, परन्तु यह बहुत कठिन है। रेणुका रे का वह व्यवधान मेरे तर्क को कुछ राहत देता है कि जहां तक लोगों की संकल्पनाओं का संबंध है और उनके मानसिक विचारों का संबंध है, इस प्रकार का अभिनव प्रयत्न अन्य कुछ न लाकर विपदा ही लाएगा। अत: मेरा नम्र निवेदन है और इस मामले में श्रीमती रेणुका रे भी मेरा समर्थन कर रही हैं।

श्री कृष्णास्वामी भारती : मैं नहीं जानता कि यह देश के किस भाग से आए हैं, परन्तु ऐसा लगता है कि उन्हें यह ज्ञात नही है कि पंजाब में क्या रिवाज़ है। किसी अन्य प्रान्त में कह सकता हूँ कि स्थितियाँ एक जैसी नहीं हैं। ये स्थितियाँ क्यों हैं? ये इस तथ्य के कारण हैं कि हजारों वर्षों से हमारे परिवारों के संबंध में हमारी नीति और हमारे सिद्धान्त तथा हमारे विचार परिवार के संबंध में ठीक नहीं रहे हैं जैसे कि पंजाब में रहे हैं। दामाद सभी बुरे नहीं होते। पुत्र भी सभी बुरे नहीं होते।

श्री महावीर त्यागी (उ.प्र. : सामान्य) : यह साले साहब हैं जो करते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : एक कहावत है जो इस प्रकार है:

(उर्दू की कहावत का अनुवाद)

(1) घर का निर्माण करने का अर्थ है, गांव का कूड़ा-करकट जमा करना (झगड़ों के लिए निम्न कारण पर्याप्त हैं।) (2) गांव के पास खेत; आम है; और (3) गांव में दामाद का निवास-स्थान। दूसरी कहावत है:

(उर्दू की कहावत का अनुवाद)

यम, दामाद, भांजा, चौकीदार और सुनार कभी भी अपने नहीं हो सकते। आप चाहें तो इनके साथ निभा कर देख सकते हैं।

यह सच्चाई है। मुझे कहना यह है कि आप किसी भी व्यक्ति को पंजाब जाने के लिए कह कर इसे सिखों तथा जाटों के बीच देखने को कह सकते हैं।

जहां तक इस विधेयक का संबंध है, जब यह विधेयक प्रस्तुत किया गया था, मुझे याद है, इसके उद्देश्य और कारणों में यह सामने आया था:

"इस विधेयक का उद्देश्य सभी प्रांतों और सभी समुदायों के हिंदुओं के लिए कानून की सभी शाखाओं में एकरूपता लाना है। इसमें हिंदू कानून के पुराने, जटिल, पेचीदा और अलग-अलग प्रावधानों को भी सरल कर दिया गया है। विधेयक के अधिकांश प्रावधान अनुमत अथवा समर्थक प्रकार के हैं, जो किसी दबाव अथवा दायित्व को आरोपित नहीं करते, चाहे वह समुदाय कट्टरवादी वर्ग का क्यों न हो। उनका प्रभाव केवल यह है कि वे समृद्ध हो रहे हिंदू समुदाय के पुरुषों और महिलाओं को जीवन जीने की स्वतंत्रता देते हैं जो वे चाहते हैं जीना बिना किसी प्रकार के प्रभावित या खंडित किए बिना उसी प्रकार की स्वतंत्रता जो प्राथमिकता देते हों जुड़े रहने की पुराने रीति-रिवाज़ों से रहना पसंद करते हैं।"

अब श्रीमान, इसी भावना से डॉ. अम्बेडकर ने कल भाषण दिया था। अतः हम चाहते हैं कि इसमें प्रबुद्ध और अप्रबुद्ध दोनों वर्ग समाहित हों। मेरा उनसे विनम्र निवेदन है कि जहां तक उनका संबंध है, वे सही हैं। परन्तु वे विनम्र लोग जिन्हें आप सामाजिक जीवन के मार्ग पर न तो प्रबुद्ध और न अप्रबुद्ध मानेंगे। आपने उनके लिए विधेयक में सही प्रावधान नहीं दिए हैं। डॉ. अम्बडेकर से मेरा नम्र निवेदन है: 'कृपा पूर्वक उन्हें भी इस धरती पर रहने दिया जाए।'

श्रीमान, इस संहिता का सारतत्व यह है कि इसमें कुछ ऐसे खास सहायकारी उपायों को सम्मिलित किया गया है। प्रगतिशीलता को बढ़ावा देते हैं और उन रिवाजों को भी मान्यता देते हैं जो इसके विपरीत होते हुए भी स्वीकार्य हैं। ऐसा कभी भी इरादा नहीं था कि स्थापित अधिकारों और कानून के प्रावधान इस निर्दयता से परिवर्तित कर दिए जाएं, इससे समाज में द्वेष पैदा हो जाएगा। हमारे सभी रिवाज़ और हमारी सभी पली हुई प्रथाएँ इस विधेयक द्वारा कुचली जा रही हैं।

जब मैं उत्तराधिकार से संबंधित अन्य प्रावधानों की ओर आता हूँ स्थिति और अधिक आश्चर्यजनक होगी। श्रीमान, अब जहां तक मिताक्षर का संबंध है हम जानते हैं कि इसका आधार सगोत्रता है और जहां तक दयाभाग का संबंध है, उसमें धार्मिक ही उत्तराधिकार का आधार है। डॉ. अम्बेडकर ने कृपापूर्वक उत्तराधिकार का एक अन्य आधार बताया है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि वे उस गलती से काफी दूर हैं, जो कि वह कर रहे हैं। वे सही काम कर रहे हैं, परन्तु मैं नहीं जानता कि इस स्वाभाविक प्रेम और स्नेह को मापने का क्या पैमाना है। प्रेम और स्नेह शायद समझे जा सकते हैं। स्वाभाविक प्रेम क्या है, मैं नहीं जानता। हमारी संकल्पनाओं के अनुसार भाई हमारे अधिक निकट होता है। हमारी पवित्र रामायण के लक्ष्मण में प्रतिष्ठापित है। श्रीमान, चाचा लोग जो हमारे माता-पिता के समान होते हैं वे भी बहुत प्रिय होते हैं। परन्तु चाचा लोगों और भाइयों की स्थिति हिंदू

संहिता में क्या है? यदि मैं यह बताऊं कि वह स्थिति किस प्रकार प्रभावित हुई है कहां वे निर्वासित किए गए हैं, जहां उन्हें उत्तराधिकारियों की सूची में रखा गया है, आपको आश्चर्य ही होगा। यदि आप कृपापूर्वक सातवीं अनुसूची देखें तो उत्तराधिकार के संबंध में हिंदुओं पर लागू किए जाने के लिए बनाई गई है, तो आप पायेंगे कि पहली धारा सात प्रकार के लोगों को शामिल करती है और श्रीमान, मैं यह जानना चाहता हूँ कि स्वाभाविक प्रेम और स्नेह का यह नया सिद्धांत इस प्रावधान से जैसे प्रभावित हुआ है। सर्वप्रथम बेटा; विधवा; बेटी; यह मैं भली-भांति समझ सकता हूँ। तब आप पाते हैं, पूर्व मृतक पुत्र का पुत्र, यहां भी मैं सहमति दूंगा। तब आता है 'पूर्व मृतक पुत्र की विधवा' गिनाई गई। श्रीमान, मैं नहीं समझता कि स्वाभाविक प्रेम और स्नेह के कानून के अंतर्गत उसे पुत्री, पुत्र या चाचा की तुलना में कैसे वरीयता दी जाती है। मैं यह नहीं सोचता कि जहां तक स्वाभाविक स्नेह का संबंध है, पूर्व मृतक पुत्र की विधवा अथवा पूर्व मृतक पुत्र के मृतक पुत्र के पुत्र को स्वीकार किया जा सकता है। मेरा अभिमत है कि यह विधेयक गलत वैचारिकों पर आधारित है, क्योंकि यह उनके लिए ऐसी व्यवस्था करता है। मैं यह समझ सकता हूँ कि यदि यह केवल महिलाओं के लिए व्यवस्था करता हो। यदि उनके लिए अन्यत्र कोई व्यवस्था नहीं की गई, यदि वे विधवा को नहीं चाहते। परन्तु पूर्व मृतक पुत्र की पत्नी अथवा पुत्र की पत्नी चाहते हैं, तो मैं इस बात को समझ सकता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह कानून के अनुसार है। यदि मेरे माननीय मित्र महिला संपत्ति कानून, 1937 का अध्ययन करेंगे, तो वे यह समझ लेंगे कि इन व्यक्तियों को एक श्रेणी में एक साथ क्यों रखा गया है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : डॉ. अम्बेडकर के मित्र इसे भली-भांति जानते हैं। परन्तु 1937 के अधिनियम में जब यह व्यवस्था की गई थी, तब उसमें पुत्री को सम्मिलित नहीं किया गया था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैंने यही ही कहा है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आप इसे जोड़ना चाहते हैं कि पुत्री एक पिता की उत्तराधिकारी बन सके और अपने सुसर की भी उत्तराधिकारी बन सके। यह नितांत अनुचित है। मैं नहीं देखता कि आप क्यों इसके लिए व्यवस्था कर रहे हैं जब आप नई संहिता तैयार कर रहे हैं। आप ऐसे कानून बना रहे हैं, जिनमें सभी दावे संतोषजनक ढंग से पूरे होने हैं। आपको इन प्रावधानों में क्यों रखना चाहिए क्योंकि 1937 को अधिनियम में लागू था। मैं यह नहीं सोचता कि यह समिति ऐसा करने के लिए सक्षम थी। उन्हें पूरी संहिता तैयार करनी थी, जिसमें प्रत्येक दावे की पूर्ति हो। आप इसको अन्यथा न्यायसंगत नहीं ठहरा सकते। इसलिए आपने उसे कवच बनाया है। श्रीमान, यह स्थिति है।

जब मैं मूल विधेयक की धारा-2 को देखता हूँ तो 'माता' को अपेक्षाकृत अधिक अच्छा

उत्तराधिकारी समझा जाता था, क्योंकि 'माता' स्वत: एक श्रेणी वर्ग है और 'माता' अकेली ही उत्तराधिकारी है। यहां मैं स्वाभाविक प्रेम को समझ सकता हूँ। पर अब पिता को भी माता के साथ स्थान दिया गया है और वे दोनों एक साथ आते हैं। परन्तु यदि आप आगे बढ़ते हैं तो जो मेरी धारणा है, उसे अधिक अच्छी तरह समझा जाएगा। जब आप दूसरे मामले पर आते हैं तो आप पुत्र की पुत्री और पुत्री की पुत्री को कैसी पाते हैं के बारे में विचार करना होगा। पुत्र की पुत्री ने मिताक्षर कानून में विशेष स्थान पाया है और मिताक्षर के अनुसार, वह पसंदीदा उत्तराधिकारियों में से एक है। श्रीमान, अब क्या हुआ है कि विधेयक में पहली श्रेणी में पुत्री का पुत्र, माता और पिता से पूर्व आता है। पर अब पुत्री के पुत्र को सबसे नीचे के स्थान में भेजा गया है। श्रीमान, यदि आप आगे बढ़ते हैं, श्रेणी IV में भाई और बहन आते हैं। और श्रेणी V में भाई का पुत्र, बहन का पुत्र, भाई की पुत्री आती है सब अन्दर आते हैं। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ भाई के पुत्र को, बहन के पुत्र के समान माना गया है और बहन की पुत्री के समान थी इस समानता में पागलपन है, मैं यही कहना चाहता हूँ। हम यह जानते हैं कि हमारे परिवारों में भाई और भाई के पुत्र की क्या स्थिति है। यह हमारी प्रणाली अथवा परिवार की संस्था का परिणाम है जैसा कि हम गत 1000 वर्ष से देख रहे हैं। अब हम भयंकर द्वेष-भाव से बच नहीं सकते। आप उस विधेयक में ऐस प्रावधान सम्मिलित कर रहे हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को आपका विरोधी बना देगा क्योंकि ये अभिनव व्यवहार में परिवर्तन किसी आदेश द्वारा नहीं किए जा सकते। इस विधेयक के प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक हिंदू-पुरुष और महिला को अधिकार प्राप्त है कि वह अपनी सम्पत्ति की वसीयत करे तथा भविष्य में प्रत्येक पुरुष और महिला इस उत्तराधिकार के स्पष्ट स्वामी होंगे। आपने मेरे हाथ में महिलाओं को हानि पहुंचाने की शक्ति दे दी है, और मेरा मन नहीं चाहता कि वह महिलाओं को हानि पहुंचाने के लिए उपयोग किया जाए। आखिरकार पिता जब मर रहा है, अपने पुत्रों की शक्ति की परिधि में होगा और तब पुत्र यह देखेंगे कि पिता अपनी वसीयत में पुत्रियों को कोई स्थान न दे। जब मैं यह कह रहा हूँ, मैं आपको बता सकता हूँ कि मेरी एक पुत्री है और मैंने उसके लिए भी तभी व्यवस्था कर दी है, जब मैंने अपने पुत्रों के लिए व्यवस्था की थी। जिस घर में मैं अपने पुत्रों के साथ रह रहा हूँ और जिस घर में मेरे पुत्र की पत्नियां रह रही हैं, मैं नहीं चाहता कि पुत्री और उसका पति, उसका ससुर और उसकी सास तथा उसका बड़ा देवर सभी आ जाएं तथा कुछ कमरों में रहने लगें। यह एक असंभव प्रस्ताव होगा।

माननीय उपाध्यक्ष : इस विधेयक के अंतर्गत ससुर और सास को संरक्षित करने की कोई संभावना नहीं है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : वे दामाद के साथ आ सकते हैं। मैं यह कहना चाहूँगा कि इस प्रकार का अवसर उनके लिए काफी अच्छा है। एक पिता अपनी पुत्री के घर का पानी भी नहीं छूना चाहता, पुत्री की सम्पत्ति लेगा और उसके पति की। मैं आ रहा हूँ परवर्ती बातों पर।

मैं केवल यह निवेदन कर रहा हूँ कि महिलाएं इस प्रकार अपने अधिकारों को अधिक जोखिम में डालने की स्थिति में होंगी। पिता अपनी पुत्री को वसीयत में अस्वीकार करेगा। वह श्रेणी I के अनुसार एक उत्तराधिकारी नहीं है; वह अपने ससुर की सम्पत्ति की उत्तराधिकारी पुत्र की पत्नी के रूप में नहीं बन सकती, वह केवल विधवा होकर ही उत्तराधिकारी बन सकती है। तब वह कहां होगी? मैं यह नहीं समझता। उसे काफी हानि उठानी पड़ेगी। श्रीमान, मैं चाहता हूँ कि महिला को अपने पूरे अधिकार प्राप्त हों। मैंने जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है–मैंने व्यापक उसे बड़े विचार की शक्ल नहीं दी–मैंने उसे समस्त सदन के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत किया है और डॉ. अम्बेडकर के विचारार्थ भी प्रस्तुत किया है–मैं यह नहीं जानता कि इससे अन्य दूसरों पर क्या प्रभाव होगा- इसमें त्रुटियां हो सकती हैं और मैं इसके प्रमाणित नहीं करता- परन्तु इसके साथ ही मैं सोचता हूँ कि वर्तमान व्यवस्था की तुलना में यह अपेक्षाकृत अधिक अच्छी व्यवस्था होगी। सिद्धान्त यह है कि अविवाहित पुत्री, पुत्र के साथ ही समान रूप से उत्तराधिकारी बनती है। विवाह होने पर वह अपने पति की सम्पत्ति की संयुक्त स्वामिनी बन जाती है, जैसाकि पति भी अपनी पत्नी की सम्पत्ति में संयुक्त स्वामी होगा। तब दोनों ही पति के परिवार की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बन जाते हैं।

श्रीमान, इसके बाद भाई के पुत्र के लिए क्या होगा? और बहन का पुत्र? वे दोनों ही एक स्तर के व्यक्ति हैं। भाई का पुत्र शायद उसी घर में रहता है अथवा पड़ोस में रहता है तथा प्रतिदिन सेवा करता है। किंतु बहन का बेटा इलाहाबाद या मद्रास में रहता है अथवा किसी अन्य स्थान में रहता है। वे एक समान कैसे हो सकते हैं? अन्य प्रावधानों के संबंध में भी- मैं संक्षेप में कहना चाहता हूँ- यदि यह सदन मुझे अन्य प्रावधान के बारे में भी कहने की छूट दे, तो मैं पूर्णतया तैयार हूँ। और मेरे उन परिवर्तनों के बारे में सारी टिप्पणियां हैं कि वे हमें कैसे प्रभावित कर सकती हैं, परन्तु मुझे समय लेना होगा अथवा सदन को इस प्रकार कि दूसरे सदस्यों को उनके अधिकार से वंचित होना पड़े।

माननीय सदस्यगण : आप जारी रह सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : ऐसे अनेक धाराणाएं हैं, जो यह बताते हैं कि यह धारा-2 के अन्तर्गत प्रावधान का आधार सगोत्रता अथवा धार्मिक और प्राकृतिक स्नेह तथा प्रेम की दृष्टि से भली-भांति स्थापित नहीं है।

इसके बाद मैं महिला के उत्तराधिकार पर आता हूँ। हिंदू संहिता विधेयक के लागू होने के बाद महिला अपने पिता और पति की सम्पत्ति की उत्तराधिकारी हो जाती है। कल्पना की जाए कि उस महिला का देहान्त हो जाता है अपने पति और बच्चों को यहां छोड़ कर, तो यह स्पष्ट है कि पति को उत्तराधिकारी का अधिकार मिल जाता है तथा बच्चे भी उत्तराधिकारी बन जाते हैं। ऐसा होना ठीक है। मगर तब जब उसके बाद पति

और बच्चे भी न रहें तो कौन उत्तराधिकारी बनेगा? महिला के पिता और माता। ये लोग लोग उनके समान लाखों अन्य लोग हैं, जो अपनी पुत्री के घर का पानी भी नहीं छूना चाहते, उसकी सम्पत्ति ले लेंगे? (**श्री एल. कृष्णास्वामी भारती :** "क्यों"?) आप यह नहीं समझ सकते, यह मेरी कठिनाई है, आप यह महसूस नहीं कर सकते। क्या मैं यह निवेदन करूं, श्रीमान, पिता जैसे ही अपनी पुत्री को दामाद को सौंपता है, पिता अपनी बेटी के घर कभी नहीं जाता। वह अपना भोजन उसके घर नही लेता और उसके घर जल भी ग्रहण नहीं करता। इसलिए कि पवित्रता बनी रहे। किसी पुत्री को विवाह में केवल किसी धारणा के लिए अथवा दूसरे भौतिक लाभ के लिए ऐसे कोई लोग हैं जो उस गांव में नहीं जाते हैं जहां पुत्री का विवाह हुआ है। हमें इन तथ्यों को उसी प्रकार जानना चाहिए जैसे कि वे हैं। यह कहने का कोई अर्थ नहीं है कि वे जानते ही नहीं। यह संभव हो सकता है कि वे नहीं जानते हों। अब यह होगा कि एक ससुर महिला से उसकी वसीयत की सम्पत्ति प्राप्त करेगा। यह असहयनीय स्थिति होगी। मान लीजिए कि वह महिला, पति या बच्चे नहीं छोड़ती तथा उसके न तो पिता हैं और न ही माता, तब क्या होगा? यह जटिल स्थिति है। महिला को पिता से सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिली है। पति, बच्चों, पिता अथवा माता की अनुपस्थिति में वह सम्पत्ति, महिला के पिता के पुत्र यानी भाई को नहीं मिलेगी। मुझे स्पष्ट स्थिति प्रस्तुत करने दें सम्पत्ति 'क' के परिवार की है, परन्तु सम्पत्ति 'क' के परिवार को वहीं जाएगी। महिला के भाई समान रक्त और मांस के वास्तिक भाई हैं, परन्तु वह सम्पत्ति पति के परिवार की उस सूची के सैकड़ों को मिलेगी जो यहां दी गई है। महिला का देहान्त हो जाता है, उसके पति, बच्चे, पिता और माता नहीं हैं, ऐसे मामले में उसकी सम्पत्ति का उत्तराधिकार उसके भाई अथवा भाई के बेटे या अन्य लोगों का नहीं होगा, बल्कि सम्पत्ति का उत्तराधिकार पति के परिवार का होगा ऐसा क्यों है? क्योंकि आपकी प्रवर समिति ऐसी सक्षम नहीं हो पाई है कि वह उस धारणाओं से अलग नहीं हो पाए, जो काफी लम्बे समय से पूरे समुदाय को प्रभावित कर रही है। (**श्री एल. कृष्णास्वामी भारती :** वर्तमान में क्या स्थिति है?) हमारा उससे कोई संबंध नहीं है। आप वर्तमान स्थिति से पूर्णतया अवगत हैं। यह '*स्त्रीधन*' है: इस पर पुत्री का उत्तराधिकार नहीं होता, उसकी स्थिति भिन्न है। मैं निवेदन कर रहा था कि एक परिवार की सम्पत्ति महिला के भाई को उत्तराधिकार में प्राप्त नहीं होती। परन्तु यह सम्पत्ति अन्य लोगों को मिल जाती है। यह ऐसी स्थिति है जिसके बारे में मैं समझ नहीं पाता। परन्तु, आपको यह महसूस करना चाहिए कि स्थिति ऐसी है। आप उसका उपचार कर सकते हैं और मेरी प्रार्थना है कि आप इसका उपचार करें। यह ऐसा प्रश्न है जिसके संबंध में आपको दुरुस्त सलाह दी जाएगी। यह उनमें से एक बिन्दु है जो मैं आपके विचारार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ। मैं यहीं पर उत्तराधिकार के प्रश्न को छोड़ूंगा ऐसी अन्य कई बातें भी हैं जिन्हें अब आपके विचारार्थ प्रस्तुत किए जा सकते।

इसके बाद मैं सम्पत्ति निपटारे की शक्ति पर आता हूँ। मैं भली-भांति उन विकट कठिनाइयों को समझता हूँ, जब महिलाओं की सम्पत्ति के संबंध में बहुत सीमित अधिकार थे। जहां तक संयुक्त-परिवार का संबंध है, उसे इस विधेयक के अधीन कुचल दिया गया है। संयुक्त परिवार विघटन की स्थिति में है, यह टूटने के कगार पर है। काफी समय से ऐसी विशेष परिस्थितियां इस प्रकार हैं, जिनके संयुक्त हिंदू परिवार का बने रहना असंभव है। श्रीमान, मैं नष्ट होने वाले संयुक्त-परिवार के लिए आंसू नहीं बहाना चाहता। आयकर अधिनियम संयुक्त-हिंदू परिवार को मारने वाला सबसे बड़ा दैत्य है। मैं जानता हूँ कि संयुक्त-हिंदू परिवार अब अधिक समय तक टिका नहीं रह सकता। परन्तु जहां तक इस विधेयक का प्रश्न है, यदि वह रहता है, तो भविष्य में उसमें आम दखलदार होंगे। मेरा कोई विवाद नहीं है। यह बात अन्य विधेयक में दी गई थी और इसे इस विधेयक में भी दिया गया है। मैं अत्यधिक यथार्थवादी नहीं हूँ कि मैं आंसू बहाऊं क्योंकि मेरा पवित्र प्राचीन संयुक्त-परिवार नष्ट हो रहा है। ऐसे भी दिन थे जब संयुक्त परिवार का अधिक उपयोग था। अब हम सहकारी खेती, सहकारी सम्पत्ति के स्वामित्व आदि की ओर बढ़ रहे हैं। ठीक इसी समय हम सामाजिक बीमा आदि की व्यवस्था भी कर रहे हैं। हम यह सब इस तरीके से कर रहे हैं, जैसे उन सिद्धान्तों की ओर लौट रहे हैं जिन पर पुराना संयुक्त हिंदू परिवार निर्भर था। यह अलग बाते हैं जहाँ तक कानून का संबंध है, जहां तक देश की सामान्य परिस्थितियों का संबंध है, जहां तक इस संयुक्त परिवार का संबंध है, मैं नहीं सोचता कि यह कहा जाना चाहिए...

माननीय श्री जगजीवन राम (श्रम मंत्री) : यह लक्ष्य से भटकना है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आप जो कुछ कहें, श्रीमान, पर यहां किसी लक्ष्य का प्रश्न नहीं है। मैं इस विचार को पसंद नहीं करता कि विधान संयुक्त हिंदू परिवार की हत्या करे।

जहां तक विवाह का संबंध है, श्रीमान, मैं कुछ और बिंदुओं को प्रस्तुत करना है। यह और भी कठिन विषय है।

एक माननीय सदस्य : इस पर पहले विचार हो चुका है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैंने कुछ बातें प्रस्तुत की थीं पूर्व में।

एक माननीय सदस्य : यह दूसरे विवाह का प्रश्न है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं स्वयं को अच्छे साथियों के साथ पाता हूँ जब मैं कहता हूँ...

माननीय श्री जगजीवन राम : आप स्वयं विधि मंत्री के साथ हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : श्रीमती अम्मू स्वामिनाथन, श्री शिवराव और श्रीमती रेणुका रे ने इस प्रकार टिप्पणी की है—

"हिंदू विवाह के प्रकार के तारतम्य में संहिता के भाग II की धारा 6 के हम बताना चाहेंगे कि देश के कुछ भागों में काफी समय से ऐसे रिवाज या प्रथाएं हैं, जो वैध विवाहों को मान्यता प्रदान करती हैं, जो कि उस श्रेणी के अन्तर्गत नहीं आएंगे, जो इस भाग में दिए गए प्रावधानों के अनुसार सांस्कारिक अथवा सिविल विवाहों की श्रेणी में आते हैं। इसलिए हम धारा 6 के अन्त में ऐसे प्रावधान का प्रस्ताव देंगे, जो ऐसे विवाहों की वैधता की पुष्टि करें।"

यह क्या है? मैं समझता हूँ कि भारत के उस भाग की कठिनाई भी ऐसी ही है, जहां से श्री भारती आते हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : सौभाग्यवश में उस भाग से नहीं आता। मैं तमिलनाडु से हूँ और वे मलाबार से आते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : जहां तक दत्तक लेने का प्रश्न है, मैं इस असहमति की टिप्पणी में वही बात पाता हूँ। इसलिए केवल पंजाब अकेले नहीं है। यह अन्य भागों में भी है। जहां विवाह और तलाक तथा गोद लेने के नियम परम्परावादी नियमों से अलग हैं। अतः उन सभी को संरक्षित किया जाना चाहिए और मैं इस बात से अति प्रसन्न हूँ कि असहमति रखने वाले सदस्यों ने इस बारे में टिप्पणी कर अपने निर्वाचन-क्षेत्र का बहुत अच्छा प्रतिनिधित्व किया है।

मैं सांस्कारिक विवाहों की बात कर रहा था। जहां तक गैर-सांस्कारिक विवाहों का संबंध है, मैंने उनके बारे में एक शब्द भी नहीं कहा है। मैं चाहता हूँ कि उनकी भी सुरक्षा की जाए। सांस्कारिक विवाहों के संबंध में समिति ने जो विध्वंस किया है, उसकी अभिव्यक्ति नहीं की जा सकती। मैं एक बार भी नहीं समझ पाता कि सिविल विवाह को इस अध्याय में कैसे सम्मिलित किया जाए। यदि यह सिविल विवाह है, तो वह सिविल संहिता का विषय है। हमारे पास 1872 का अधिनियम हैं। यह बहुत त्रुटिपूर्ण अधिनियिम है और मैंने इसे सुधारने के लिए एक विधेयक प्रस्तुत किया है। और विधेयक जिसे मैंने कुछ दिन पूर्व इस सदन में सभी दूसरे विवाहों को वैध बनाया जा सके, वे हमारी बहुत अधिक रक्षा करेंगे, इस संहिता को यहां समाहित करने की अपेक्षा। मैं समस्त भारत के लिए एक समान सिविल संहिता के पक्ष में हूँ और मैं चाहता हूँ कि सभी के लिए नियम समान हों। हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसा करें परन्तु यहां हम सिविल विवाह को क्यों सम्मिलित करते हैं? यदि उस कानून को दोषयुत प्रभावों को अलग हटाना है, तो दूसरे रास्ते खुले हैं। इस सिविल संहिता में क्या होता है तथा नए प्रकार के विवाह में क्या होता है, जो न तो सांस्कृतिक होता है न सिविल विवाह होता है। वरना एक सांस्सारिक पंजीकृत विवाह होता है, जिसमें सांस्सारिक रूप में सम्पन्न होता है किन्तु वह मूल रूप से कौटुम्बिक व्यभिचार ही है। इसके बाद आप पंजीकरण करने वाले अधिकारी के पास जाते हैं और आप उसको वैध बना लेते हैं।

श्रीमती जी दुर्गाचार्य : यह केवल वैकल्पिक स्थिति है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैंने उत्तर दे दिया है। वह वैकल्पिक हो सकता है, परन्तु क्या इससे वह मामला समाप्त हो जाता है? 'हिंदू संहिता' कहती है कि पांच शर्तें हैं, जब विवाह होता है अन्यथा विवाह करने की अनुमति नहीं होगी। शब्द इस प्रकार हैं–"सांस्कारिक विवाह से संबंधित शर्तें" इसका अर्थ है सैद्धान्तिक मामलों में जैसे ही इनमें से एक प्रावधान का उल्लंघन होता है, आप कानून को अनुमति देते हैं तथा अपने को बचाने के लिए कानून की दरारों से सुरक्षित रह सकें। जहां तक सपिण्ड संबंध के निषेध का संबंध है, मैं विनम्रतापूर्वक यह निवेदन करता हूँ कि कठिनाई यह है कि उस कानून की एकरूपता, जिसके लिए हमारा लक्ष्य है, उसे भारत जैसे देश में प्राप्त करना बहुत कठिन है। यह कहा जा चुका है कि इस प्रकार की एकरूपता ला पाना चमत्कार ही होगा। मैं डॉ. अम्बेडकर को बधाई देता हूँ कि उन्होंने इस प्रकार चमत्कार का कार्य किया है और मैं इस चमत्कार के लिए उनका समर्थक हूँ कि यह कार्य सम्पन्न किया जाए। परन्तु जब ऐसे स्थानीय मामलों में वैधानिक कठिनाइयां होती हैं जिनमें वर्तमान स्थिति से उस स्थिति तक जिससे हम कानून बनाकर देखना चाहते हैं। बहुत और बहुत हिंसक होता है। मैं सदन से पूछना चाहूँगा कि इन मामलों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाए कि यह टकराव बचाया जा सके।

अब, श्रीमान मैं पंजाब के एक ऐसे स्थान से आता हूँ, जहां गांवों पर गांव हैं, समान गोत्र के तथा वे यह विश्वास करते हैं कि वे एक ही पूर्वज की संतान हैं। आप इस सपिण्ड संबंध को जानते हैं, जिसमें प्रतिबंध पूर्व की तीन अथवा पांच पीढ़ियों तक ही होता है। फिर भी जहां तक कि उन लोगों का संबंध है। मैं नहीं चाहता यह कहना कि आप इसे और अधिक प्रसार दें। ठीक इसी तरह यह अस्वीकार्य होगा और इससे ऐसी बात पैदा हो, जिसके साथ हम कभी भी समझौता नहीं कर सकते। यह एक असंभव स्थिति है, जहां तक हमारा संबंध है और यदि आप इसकी अनुमति देते हैं तो आप हमारी सामाजिक प्रणाली की जड़ों को ही काट रहे हैं जैसा कि पंजाब में बहुत समय से लोग इसको स्वीकार रहे हैं। वैसी ही मेरी भावना सम्पूर्ण भारत के लिए भी है। निःसंदेह मैं शेष भारत के लिए कुछ नहीं कहता, क्योंकि यहां कुछ ऐसे बंधु हैं जो इस पर सवाल उठा सकते हैं। मेरा विचार है कि संपूर्ण भारत में इसी प्रकार की स्थिति होनी चाहिए। ठीक है इसके बारे में मैं हठधर्मी नहीं हूँ। परन्तु यह बहुत गलत नियम है जिसे हम कानून बना रहे हैं और धारा VII की ऐसी आवश्यकताएं जो विवाह करने वाले दम्पत्ति पर, जहां तक पंजीकृत सांस्कारिक विवाह का संबंध है सपण्डि न होने की शर्त लगाती है, उन्हें हटा दिया जाना चाहिए। जहां तक शारदा एक्ट की सीमा है, उसके अनुसार हिंदू कानून और हमारी धारणाओं के अनुसार तक बार सम्पन्न हुआ विवाह सदैव अविघटनकारी होता है। हम इस नियम से हट रहे हैं, जहां तक हम संहिताओं अथवा रिवाजों द्वारा विवाह के विच्छेद की व्यवस्था

कर रहे हैं। अन्यथा जब नियम III रद्द किया गया, तो आप व्यक्ति को अभियोगी बना सकते हैं और उसे जेल भेज सकते हैं। मैंने इस सदन के सामने विधेयक के माध्यम से निवेदन किया है कि जब व्यक्ति की समुचित आयु न है और विवाह कर दिया जाता है, तो उस पर जुर्माना किए जाने के बजाय उसे जेल भेज देना चाहिए और कानून का कोई ऐसा उपयोग विवेकाधीन नहीं होना चाहिए कि उसे स्वतंत्र छोड़ दिया जाये। समस्त देश शारदा एक्ट के विरुद्ध था और वर्तमान प्रावधान दिखाता है कि यदि नियम III का अनुसरण किया जाता है, तो विवाह हो जाएगा। यह उन परिहार्य सिद्धांतों के विरुद्ध है जिन्हें हमने 20 वर्ष से अधिक समय से स्वीकार किया हुआ है।

जहां तक हिंदू संहिता के मुख्य प्रावधानों का संबंध है, मैंने उनका सारांश में उल्लेख कर दिया है, इस उद्देश्य से कि उन्हें सदन के सामने लाया जा सके और चूंकि मेरी यह भावना है कि यह विधेयक रुकने नहीं जा रहा है, मैं उन मामलों के बारे में बताऊंगा जिनमें खंड प्रति खंड विचार किया जाएगा।

निष्कर्षतः मैं यह कहना चाहता हूँ कि जहां तक इस सदन का संबंध है, यह ठीक होगा कि या तो इस विधेयक को व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए भेज दिया जाए क्योंकि ऐसी स्थिति में कुछ भी हानि नहीं होगी। बल्कि तथ्य यह है कि हमें बहुत कुछ लाभ ही होगा। जनता का परामर्श मिल जाएगा और जनता यह महसूस नहीं करेगी कि उसकी अवहेलना कर दी गई है। वास्तव में यह तथ्य है कि इसमें कई संशोधन उस समय किए गए हैं जब यह विधेयक प्रवर समिति के विचार के बाद सदन में आया यहां तक प्रवर समिति के पूर्व लोग सामान्य रूप से इस बारे में कुछ नहीं जानते थे। फिर भी जो कुछ कहा गया है, इसके बावजूद, मैं इस बात से आश्वस्त हूं कि लोग जानते हैं इस बारे में भी। डॉ. अम्बेडकर ने दो महानुभावों का उल्लेख किया है जिन्होंने इस रिपोर्ट का मसौदा तैयार किया है और यह बताया है कि दोनों ही व्यक्ति भले व्यक्ति थे और ऐसे नहीं थे कि उन्हें उनके विचारों में अत्यधिक प्रगतिशील माना जा सके। मेरे पास उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के कई अभिमत हैं और प्रतिदिन अधिकाधिक मत प्राप्त हो रहे हैं। वे सभी लोग इसके विरुद्ध हैं। मैं यहाँ वे साक्ष्य पढ़ाना नहीं चाहता जो हिंदू कानून समिति की प्रतिवेदन में प्रकाशित हुए हैं। मैं आपकी अनुमति से इस प्रतिवेदन के पृष्ठ 13 का संदर्भ देना चाहूँगा, जहां एक महिला का साक्ष्य है। वह महिला फतेहचंद कॉलेज फॉर वूमेन की प्रिंसिपल कुमारी सुब्रुल हैं। उन्होंने कहा है:-

"अविवाहित बेटी जो विवाह करने के योग्य न हो अथवा जिसने विवाह न करने का इरादा कर लिया हो, उसे सम्पत्ति में उतना ही भाग मिलना चाहिए जितना पुत्र को तथा उसके भी वही दायित्व होने चाहिए जैसे कि पुत्र के। पर विवाहित बेटी का सम्पत्ति में कोई भाग नहीं होना चाहिए। यदि अविवाहिता बेटी का विवाह हो जाता है, तो उसका भाग उसके भाइयों को वापस मिल जाना चाहिए।"

जब यह समिति साक्ष्यों का अभिलेख करने के लिए लाहौर में थी, तब उस प्रतिवेदन में यह कहा गया थाः–

"वास्तव में यह तथ्य है कि पंजाब में जहां मैं इस समिति की अध्यक्षता कर रहा था, लगभग 500 महिलाओं ने लाहौर स्थित कामर्शियल म्यूजियम हॉल में प्रवेश किया, जहां बैठक की कार्यवाही चल रही थी और उन्होंने करबद्ध यह कहा–'आप दामाद को परिवार में न लायें और परिवार के अन्दर पारिवारिक धंधों को बर्बाद न करें।"

यदि आप पारिवारिक धंधों के संबंध में कृपापूर्वक विचार करते हैं कि लोगों के पारिवारिक धंधों पर इसका क्या प्रभाव होगा, तो आपको सीधे-सीधे बदनाम कर दिया जाएगा। मान लीजिए पिता और उसके पुत्रों द्वारा संचालित कोई अच्छा व्यापार चल रहा है और पिता का देहान्त होता है और व्यापार परिवार के शेष सदस्यों द्वारा संयुक्त प्रयास से चलाया जा रहा है। दामाद तब व्यापार में प्रवेश करता है। ऐसी स्थिति में व्यापार में क्या होगा? वह बर्बाद हो जाएगा। मैं सदन का ध्यान उस प्रतिवेदन के पृष्ठ 139 की ओर आकर्षित करता हूँ। यह कहना गलत है कि सभी महिलाएं इसके पक्ष में हैं। हजारों प्रबुद्ध महिलाओं ने इसका समर्थन नहीं किया था, इसका कारण यह नहीं है कि वे पुत्री को अधिकार नहीं देना चाहतीं। मैं इस बात को दोहराना चाहता हूँ कि जहां तक मेरा संबंध है, साथ ही उन लोगों का संबंध है, जो मेरे समान ही विचार करते हैं, हम यह नहीं देखना चाहते कि पुत्री को पूरा अधिकार नहीं दिया जाए अथवा महिलाओं को उसका पूरा अधिकार नहीं दिया गया है। हम चाहते हैं कि महिलाओं को पुरुष के बराबर आना चाहिए तथा उन्हें समान अधिकार मिलने चाहिए। मैं डॉ. अम्बेडकर के साथ हूँ। मैं उनके समान ही प्रगतिशील परंपरावादी हूँ। मैं इस अभिव्यक्ति को अत्यधिक पसंद करता हूँ। मैं प्रगतिशील विचार से संबंधित नहीं हूँ। डॉ. अम्बेडकर ने बताया है कि यह विधेयक न तो क्रांतिकारी है और न ही सुधारवादी है। यह विधेयक कुछ मामलों के विषय में है परन्तु इस विधेयक में कुछ सुधार जरूरी हैं। आज हिंदू समाज में कुछ आत्मविश्लेषण किया गया है और यह देखने में आया है कि हिंदू समाज का क्षरण हुआ है। यह हमारा कर्तव्य है कि हम यह देखें कि डॉ. अम्बेडकर के शब्दों में इस कुछ का सधारण किया जाना है इसलिए मैं यह निवेदन करता हूँ कि इस विचार से किसी व्यक्ति को दूर नहीं भागना चाहिए। इस रिक्त सोच से कि हम अपनी बहनों और पुत्रियों के साथ न्याय करना नहीं चाहते। यदि हमारी बहन और पुत्रियां इस प्रकार का विचार रखती हैं, तो यह उनकी बड़ी भूल है। श्रीमान, मैं आपकी सद्‌भावना जानता हूँ। आप महाशय भी इस विचार के पक्ष में हैं कि उनके अधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए। इसलिए मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि उसे इस विचार की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि इस विधेयक का व्यापक प्रचार-प्रसार हो और यह प्रचार-प्रसार आगामी चुनाव के बाद हो सकता है जब हमारे सदन में अधिक जन-प्रतिनिधित्व हो। मैं यह नहीं कहता कि यह

सदन पूर्णतया सक्षम अथवा सार्वभौम नहीं है। यदि सदन इस कार्रवाई पर दृढ़ रहती है, तो उसमें कोई गलत नहीं है, परन्तु मैं यह देखना चाहूँगा कि इस विधेयक पर विचार किया जाए और उसके प्रत्येक हित के साथ न्याय किया जाए। ठीक इसी समय मैं एक अधिवक्ता के रूप में और सदन के सदस्य के रूप में यह कहना चाहता हूँ कि इस विधेयक पर प्रवर समिति द्वारा फिर से विचार किया जाना चाहिए, चाहे वह दो घंटे के लिए ही क्यों न हो, ताकि इसकी सभी गलतियों को दूर किया जा सके और इस मूल विधेयक को विधि के अनुकूल बनाया जाए। खंड प्रति खंड उसमें एक वाक्यांश बाद दूसरे वाक्यांश विचार करते हुए और इसी विधेयक को स्थानापन्न किया जाए, यदि प्रवर समिति चाहे। मैं कहता हूँ कि यह कहना नितांत त्रुटिपूर्ण है कि मूल विधेयक पर विचार उसी प्रकार किया गया था, जैसाकि कानूनन आवश्यकता है, उस पर विचार करने की, अथवा संशोधन उसी प्रकार प्रस्तावित या स्वीकृत किए गए, जैसे प्रत्येक प्रवर समिति द्वारा किए जाते हैं। ऐसा नहीं किया गया था। हमें नितांत सावधान रहना चाहिए कि हम किसी बात की अनुमति न दें कि चीजें जैसी हों जो मूल रूप से गलत हैं। मैं डॉ. अम्बेडकर से यह विचार करने के लिए निवेदन करूँगा यदि वे संतुष्ट हैं कि मेरी आपत्ति सही है, मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे कृपापूर्वक पंजाब के गरीब लोगों के दृष्टिकोण से विचार कर लें जिनका हिंदू विधि समिति में कोई प्रतिनिधित्व नही था।

माननीय सदस्य : डॉ. बक्शी टेकचंद के बारे में क्या कहना है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : यदि आप उन डॉ. टेकचंद की बात करते हैं, जो इस प्रवर समिति में थे, तो मुझे प्रसन्नता होगी। यदि आप उस पर भी वजन दें। यदि उन्होंने यह असहमति की टिप्पणी नहीं लिखी होती तो आप कहां रहते। यदि आप उन्हें स्वीकार करते हैं ऐसा व्यक्ति जिनके विचारों का आदर किया जाना चाहिए तो उनके विचारों के साथ जाएं, यह मेरी प्रस्तुति है। मैं सिर्फ उसकी आवाज अथवा ध्वनि विस्तारक यंत्र हूँ जो डॉ. बक्शी टेकचंद ने लिखी है। उन्होंने अपनी टिप्पणी में यह कहा है कि आपको उत्तराधिकारी के नामांकन को अनुमति देनी चाहिए जैसे कि आप तलाक को अनुमति दें, होने के लिए उसी प्रकार जैसे कि आज हो रहा है। उन्होंने गैर-सांस्कारिक विवाहों के बारे में भी उल्लेख किया है। इन सभी बातों के बारे में जब आप उनका नाम लेते हैं, तो आपसे मेरा निवेदन है कि आप कृपापूर्वक उनका अनुसरण करें, जो उन्होंने अपनी असहमति की टिप्पणी में की हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : श्रीमती रेणुका रे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान मेरी शिकायत नहीं सुनी जा रही।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य की शिकायत अनसुनी नहीं रहेगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : क्या मैं निवेदन करूं कि मेरे कुछ विचार-बिंदु थे और मैं उनको प्रस्तुत किये जाने का लाभ भी उठाना चाहूँगा और दिये गये जवाब का भी।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य को बिना किसी चुनौती के अपने कथन का लाभ मिलेगा अगर उसका कोई अवलोकन प्रश्नगत् नहीं होगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान मुझे यह पसंद नहीं।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने पहले ही आदेश दिया है कि माननीय सदस्य को अभी अपनी पारी नहीं मिलेगी। मैंने श्रीमती रेणुका रे को आमंत्रित किया है।

***श्रीमती रेणुका रे :** विधेयक जो इस समय इस सदन के समक्ष विचाराधीन है, जिन सिद्धांतों को इसमें मूर्त रूप दिया गया है वह 1943 से इस विधानमंडल के विचाराधीन हैं तथा उन परिवर्तनों के लिए जोर दिया जा रहा है जो इस विधेयक में मूर्त हैं, हमारे देश के सामने बहुत समय से हैं। यह सौ वर्ष से अधिक का समय था जब राजाराम मोहन राय ने एक लेख लिखा था जिसे 'द राइट्स ऑफ फीमेल्स टू इनहेरिट प्रॉपर्टी एंड देयर राइट्स ऑफ मैरिज' (महिलाओं के सम्पत्ति के उत्तराधिकार और उनके विवाह के अधिकार) पुकारा गया और यह प्रथम बार जनता के ध्यान में लाया गया था। सन् 1931 और 1932 से देशभर में यह लगातार मांग रही है और इसी के साथ महिलाओं की वैधानिक निर्योग्यताओं के हटाने की आवश्यकता तथा विधिसम्मत एकरूपता और व्यापक वैधानिक संहिता की आवश्यकता भी इस देश में मानी गई थी। इस तथ्य के कारण कि यह मामला विधानमंडल के समक्ष विचाराधीन है, इस संबंध में कई विधेयक इस विषय पर तैयार किए गए थे। इस कारण कि कानूनों को टुकड़ों-टुकड़ों में बनाने का कार्य कानून में विषमताओं को पैदा कर रहा था तथा इसकी मांग जोरों पर थी। उस समय की सरकार पर यह दबाव था कि हिंदू कानून समिति जिसे 'हिंदु कानून पर राउ समिति' के नाम से बेहतर जाना जाता है, की नियुक्ति की जाए। यह इस समिति की रिपोर्ट का परिणाम निर्वसीयती उत्तराधिकार और विवाह पर दो विधेयक 1943 में प्रस्तुत किए गए। उस समय विरोधी, जो अब फिर से अपना सिर उठा रहे हैं, तब भी अग्रपंक्ति में आये थे। उस समय भी विरोधियों की बात का सारांश वही था जो आज है परन्तु तरीका बिल्कुल अलग था। यह तरीका स्वाभाविक रूप से अलग था क्योंकि तब इस सरकार को विदेशी सिद्ध करना था। यह पहुंच इस आधार पर बनायी गयी थी कि वे ऐसे स्वामिभक्त थे जो सरकार के प्रखर समर्थक थे और वह कांग्रेस थी जो विद्रोह कर रही थी, जो उस मांग के पीछे थी जिसे भारत की महिलाओं ने आगे बढ़ाया था और कि सरकार को उसके लिए कोई श्रेय नहीं देना चाहिए था। मैं बिना किसी आधार के यह वक्तव्य नहीं दे रही हूँ। यह कहना है कि इस देश की राष्ट्रीय प्रेस ने विरोधियों

*सीए (विधि) डी, खंड 2, भाग II, 25 फरवरी, 1949, पृष्ठ 925-39।

को अधिक अवसर नहीं दिया था। फिर भी विरोधियों ने कई पैम्फलेट निकाले थे, हमारे राष्ट्रीय नेताओं को बुरा-भला कहते हुए, हमारे प्रिय नेता महात्मा गांधी को भी नहीं छोड़ा था। उस समय एक साप्ताहिक पत्र 'हिंदू' नाम से प्रकाशित किया जाता था जिसमें इन विधेयकों पर आक्रमण किया गया था और उन पर इस आधार पर आक्रमण किया गया था कि इस देश के राष्ट्रीय नेता उसके पीछे थे और उन्हीं के परामर्श के कारण तथा उनके प्रभाव के अधीन ऐसा किया जा रहा था। इस तथ्य के साथ जब सरकार ने देखा कि इस देश की महिलाएं तैयार नहीं थीं जो उनको और आगे बांटना चाहती थीं तथा उनमें वैमनस्य लाना चाहती थीं। जब यह महसूस किया कि महिलाएं पृथक मतदान की विरोधी हैं और वे उन लोगों के पीछे खड़ी हैं, जो इस देश की आजादी के आन्दोलन के लिए कटिबद्ध थे, तब अधिक आशा नहीं थी कि इस प्रकार का विधान कई महिलाओं को उन्नत करने और उन्हें उनके अधिकार दिलाने के लिए सत्ता में विदेशी सरकार के रहते पारित हो जाएगा। यह तब जब हमने यह महसूस किया कि उस समय तक प्रतीक्षा करना आवश्यक था, जब तक राष्ट्रीय सरकार सत्ता में आ जाए। बाद में सरकार ने हिंदू विधि समिति की नियुक्ति की और इन विधेयकों का पुनः प्रचार-प्रसार किया गया। इस सदन को ज्ञात है कि उस समिति ने देश भर में दौरा करने के बाद प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था। अंतरिम सरकार के आने के बाद 1946 में हजारों व्यक्तियों और संगठनों के अभिमत लेते हुए, मैं उसके बाद के कामों को फिर से याद नहीं करूंगी जब यह विधेयक इस विधानमंडल के समक्ष 1947 के बाद, पुनः प्रस्तुत किया गया जैसा कि इस सदन के सदस्यों को भली-भांति ज्ञात है। परन्तु मैं केवल यही बताना चाहती हूँ कि विरोधी स्वर का यथार्थ और चरित्र एक जैसा है, का नयी पहुंच के साथ है। मैं जानना चाहती हूँ कि वे कौन से व्यक्ति हैं जिन्होंने उन दिनों कॉंग्रेस का विरोध किया था, आज यह कहने के लिए कि यदि हिंदू संहिता अधिनियम पारित किया गया तो आप चुनाव में हार जाएंगे। मैं उनसे यह पूछना चाहूंगी जब वे स्वतंत्रता आंदोलन के विरुद्ध जान-बुझकर, जब उन्होंने इस आंदालेन का न तो समर्थन किया था, न इस आंदोलन के साथ कोई सहानुभूति दिखलाई थी—जब इसके होते हुए भी कॉंग्रेस ने चुनाव जीते और देश को आजाद कराया। तब आज वे कौन हैं जो कांग्रेस से कहें कि कॉंग्रेस चुनाव नहीं जीत पाएगी। यदि उनमें से कोई व्यक्ति आज देश के विधानमण्डलों में आता है तो यह कांग्रेस की ही अनुकम्पा है और यही स्थिति कल भी रहेगी।

वह विरोधी पक्ष जिसने अपना सिर ऊंचा किया है और जो पहले की भांति अपने चरित्र में समान है, उसने कई कुटनीतियों को अपनाया है। उन्होंने विभिन्न प्रकार की रणनीति अपनाई है। सदन इस तथ्य से अवगत है कि गवर्नर जनरल के नाम का भी प्रयोग किया गया था और यह एक साजिश थी। केवल दो या तीन दिन पहले कलकत्ता के एक समाचार-पत्र में मैंने श्यामा प्रसाद मुकर्जी का नाम देखा है। और उसके बाद दो या तीन अन्य जाने-पहचाने विरोधियों के नाम भी देखे हैं और मैं आश्चर्य में थी कि

मैंने छोटे कोष्ठक में शब्द (उत्तरपाड़ा) देखे। श्रीमान स्पष्ट रूप से यह भ्रांति-जनक था और यदि प्रश्न किया तो यही बताते कि यह 'उत्तरपाड़ा की' है। ये कूटनीतियां हैं, ये रणनीतियां हैं और विपक्षियों द्वारा इनका प्रयोग किया जाता रहा है। जैसा कि आप जानते हैं कि हमें उन लोगों को प्रश्नगत् नहीं करते, जो प्रमाणिक आधार पर मतभेद रखते हैं, परन्तु इस प्रकार की चालबाजियों जिन्हें आज अपनाया जा रहा है…

श्री नजीरुद्दीन अहमद : सूचनार्थ जानना चाहूँगा, क्या वह डॉ. श्यामा प्रसाद मुकर्जी नहीं हैं?

श्रीमती रेणुका रे : नहीं वह केन्द्रीय मंत्रिमंडल के मंत्री थे। मैं नहीं जानती कि यह श्यामा प्रसाद मुकर्जी कौन से हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने विवरण से जो समझा, वह इस प्रकार था: डॉ. श्यामा प्रसाद मुकर्जी, अध्यक्ष, हिंदू महासभा।

श्रीमती रेणुका रे : ऐसा नहीं है। वह उत्तरपाड़ा के थे। तो ऐसी रणनीतियां थीं जो उनके द्वारा अपनाई गईं। और यहां तक कि श्री नजीरुद्दीन अहमद को भी उनके बारे अपने में उनके द्वारा लिया गया। दकियानूसी विरोधी पक्ष के लोगों में उस समुदाय के सदस्यों में भी ऐसे बड़े समर्थक पा लिए जो उत्तराधिकार में बेटी के अधिकारों को मान्यता देते हैं। यह अत्यंत आश्चर्य की बात होगी, यदि माननीय श्री नजीरुद्दीन अहमद अपनी हिंदू बहनों के लिए उन अधिकारों का निषेध कर देंगे, जो वे स्वत: अपनी महिलाओं को देते हैं।

मैं इससे आगे यह कहना चाहूंगी कि कुछ ऐसे लोग हैं, जिन्होंने पूछा है कि यह कैसी स्थिति है कि तार, परिपत्र और पोस्टर देश भर में कम से कम दिल्ली में—और एम.सी.ए. में प्रचुर मात्रा में तार भेजे जा रहे हैं। पर यह कैसी स्थिति है कि जो इस बाबद समर्थन करते हैं, वे ऐसा नहीं करते? श्रीमान् जो इस संहिता का समर्थन करते हैं, वे भी कई समाज-कल्याण संगठनों के प्रतिनिधि हैं, वे ऐसे लोग हैं जो इस देश की भलाई के लिए कार्य करते हैं। आज किसी ऐसी निधि के संबंध में राष्ट्रीय आपातकाल है जो वे रखते हैं, तो वे इसे सही और उचित नहीं समझेंगे कि वे ऐसी निधि का तारों और पत्रों के भेजने में उपयोग करें। वे इस राशि का उपयोग शरणार्थियों के पुनर्वास हेतु करते हैं। इस सदन में एम.सी.ए. को भेजे गए एक तार की लागत 165 रु. है। इस राशि के एक शरणार्थी महिला को तीन महीने के लिए पुनर्वास हेतु रोजगार-प्रशिक्षण दिया जा सकता है। क्या आप चाहते हैं कि फिर भी ऐसे तार आपको भेजे जाएं? मेरा विचार है कि इस प्रक्रिया को अपनाने के लिए यह कार्य पूर्णतया गलत है। यदि हमने पोस्टर और परिपत्र तथा तार नहीं किए हैं तो इसका अर्थ यह नहीं है कि हम परिवर्तनों के लिए मांग नहीं करते।

माननीय विधि मंत्री के मेधावी और विशेषतापूर्ण विश्लेषण के बाद, मैं विधेयक के

प्रावधानों के बारे में विशेष विवेचन नहीं करूंगी। यह बिल्कुल अनावश्यक है। एकता ऐसी चीज है जिसे हम इस देश में चाहते हैं तथा उन हिन्दुओं के लिए एक समान तथा व्यापक संहिता चाहते हैं, जो देश में बहुसंख्यक हैं तथा जो वास्तव में उनकी जरूरत है।

एकपत्नीत्व की बात करने पर, मैं यह पूछना चाहूँगी, क्या इस सदन में अथवा देश में कोई ऐसा व्यक्ति है जो अपनी बहन या अपनी बेटी को उस पुरुष की पहली पत्नी बनाने के लिए गंभीर विचार करेगा, जिसने दुबारा विवाह किया है। यह सही है कि बहुपत्नी का रिवाज अधिक नहीं है, कुल मिलाकर यह स्थिति विरल ही है। परन्तु हाल के वर्षों में हमने देखा है कि बहुपत्नी की प्रथा चलन में आती जा रही है और यह स्थिति भारतीय महिलाओं के लिए बेहद शर्म की स्थिति है। ऐसी महिलाएं भी हैं जो जानबूझकर या स्वेच्छा से ऐसे पुरुषों की दूसरी पत्नियां बनने पर सहमत हुई हैं। मैं यह विचार नहीं करना चाहती कि मुझे इस बात को अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि उन महिलाओं की शिकायतों और दुखद स्थिति को करने के लिए कानून बनना चाहिए, जो ऐसे पुरुषों की पहली पत्नी हैं।

अब मैं अन्तरजातीय विवाह और सगोत्र विवाह की बात प्रारम्भ करती हूँ। हमारे संविधान के सैद्धांतिक अधिकारों में हमने कहा है कि जाति और लिंग के कारण तथा अन्य बातों के विषय में सभी प्रकार के भेद–भाव छोड़ देने चाहिए। वास्तव में अन्तरजातीय विवाह जो कानून के अनुसार भी स्वीकार्य है, इस दिशा में पहला कदम होगा।

माननीय उपाध्यक्ष : जाति छोड़ी जा सकती है; पर लिंग कैसे छोड़ा जा सकता है?

श्रीमती रेणुका रे : मैंने कहा था कि जाति और लिंग के कारण भेदभाव।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य अपना भाषण जारी रखें।

श्रीमती रेणका रे : इस संहिता में तलाक के उपबंध पर ध्यान देते हुए मैं इस बात से समहत हूँ कि इस उपबंध में प्रतिबंधित शर्तें हैं। घर समाज का केंद्र है और मैं इस बात में विश्वास करती हूँ कि विवाह के लिए प्राथमिक कारण यह है कि वह बच्चों की सुरक्षा के लिए है और उसमें तलाक तुच्छ कारणों पर नहीं दिए जाने चाहिए। परन्तु दारुण दुःख के वास्तविक मामलों में हम तलाक की व्यवस्था कर सकते हैं। सन् 1943 से, जब प्रथम बार विवाह विधेयक प्रस्तुत किया गया था, मुझे दर्जनों पत्र मिले थे और अनेक लोग मुझसे मिलने आए थे, अपनी बेटियों के साथ जिन्होंने मुझे दिखाया था कि कितनी बड़ी और कितनी भयानक त्रासदी है जिसे महिलाओं को भुगतना पड़ता है। जब तक ऐसी व्यवस्था नहीं की जाती दोनों पुरुषों और महिलाओं के लिए तब तक वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होगी। श्रीमान, तो कुछ समय के लिए मैं इस विषय से अलग हटना चाहती हूँ। कारण यह है कि विपक्ष के बारे में मैंने कहा है और

उसी विपक्ष के लोग उन अनेक महिलाओं को जाकर बता रहे हैं जो कानून अथवा इस संहिता के उपबंधों को नहीं समझतीं कि उनकी अपनी महिलाएं ऐसे कानून को लाने का प्रयास कर रही थीं, जिनके द्वारा उनका तलाक हो जाएगा। वे यह महसूस नहीं करते कि यह केवल अनुमत कानून है और केवल दुखी व्यक्ति है। तलाक का दावा कर सकता है और उसके लिए निर्वाह-धन की व्यवस्था भी की जाती है। इन बातों का प्रायः उल्लेख नहीं किया गया है। सैंकड़ों सार्वजनिक सभाओं में ये मामले मेरे समक्ष लाए गए हैं और मैंने इस बात को स्पष्ट किया है और मेरा विचार है कि इस विधानसभा की महिला सदस्य भी यही बात कह सकती हैं।

संयुक्त मिताक्षर परिवार की बात प्रारम्भ करने पर मैं यह नहीं सोचती कि मेरे लिए इस बात की आवश्यकता है कि माननीय विधि मंत्री ने इस विषय पर जो कुछ कहा है उस विषय में एक शब्द भी जोड़ने की आवश्यकता महसूस करूं। उन्होंने इस बारे में विस्तृत विवेचन कर दिया है।

जहां तक सम्पत्ति के उत्तराधिकार में बेटी का संबंध है इस पर विरोधीमत के नेताओं ने ध्यान केंद्रित किया है। यह स्थिति स्वाभाविक है क्योंकि यही स्थिति सिद्ध करती है कि यह अत्यधिक कट्टरता नहीं है और न ही अन्धा दुराग्रह है, परन्तु यह निहितार्थ है, जो हमारे सम्मुख है। माननीय विधि मंत्री ने पहले ही इस विषय पर बात की है, परन्तु मुझे इस बारे में एक-दो बातें करनी हैं। किसी महिला की आर्थिक प्रतिष्ठा तभी स्थापित हो सकती है, जब उत्तराधिकार में बेटी के अधिकार को मान्यता दी जाए। यह एक ऐसा विचार बिंदु या जिसे कल मेरे माननीय मित्र सेठ गोविंददास ने प्रस्तुत किया था। उन्होंने कहा था (मैं नहीं जानती कि इसमें उनका कितना विश्वास था) उन्होंने कहा "हमें उत्तराधिकार क्यों चाहिए?" निश्चय ही मैं इस बात से सहमत हूँ कि समय आएगा और आना ही चाहिए-यदि हम सभी के लिए अवसर की समानता चाहते हैं और इसमें विश्वास करते हैं। यदि हम चाहते और विश्वास करते हैं कि सम्पत्ति की असमानता समाप्त हो जाए। समानता में अब से सब को हो, यदि हम विश्वास करते हैं कि सम्पत्ति का समय आना चाहिए, जब उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति अलग हो। परन्तु इस समय तक यदि बेटी और बेटे में अन्तर है, तब इस अन्तर का अर्थ यह है कि प्रतिष्ठा में अन्तर है। यह बेटी की प्रतिष्ठा है, जिसको मान्यता दी जानी है। वह बेटी के रूप में, एक महिला के रूप में स्वाभाविक उत्तराधिकारी है। यह केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से ऐसा नहीं है, जिसका मैंने उल्लेख किया है। हम निर्वसीयती उत्तराधिकार के बारे में बताते हैं और यह अधिक स्वाभाविक है कि पिता अपनी बेटी को दाय से वंचित नहीं करेगा, जबकि एक ससुर ऐसा करेगा। इस तथ्य के बावजूद जैसा मेरे माननीय मित्र पंडित भार्गव ने कहा था। संयुक्त परिवार में महिला के अधिकारों ने जो गत वर्षों में अधिक उपयोगी उद्देश्य की पूर्ति की है, वे वर्तमान परिस्थितियों में हाल के वर्षों में ऐसे नहीं हैं। मेरी माननीय सहेली सुचेता कृपलानी ने कल एक बात कही थी, जिसकी मैं पुष्टि करना चाहूँगी। वे महिलाएं अथवा पुरुष जो सामाजिक कार्यकर्ता हैं, जानते हैं कि

यदि इस देश के अनाथ आश्रमों में रहने वाली महिलाओं की दशा का विश्लेषण। यह सिद्ध करेगा कि इनमें कितनी महिलाएं हैं जो संयुक्त परिवार से बाहर कर दी गई हैं। उन्हें खुद को चलाने का प्रशिक्षण दिए बिना, अपने घरों से बाहर कर दिया गया है, शर्मनाक जीवन बिताने के लिए विवश होना पड़ा है। यह ऐसा प्रश्न है कि जिससे हिंदू समाज को सामना करना है। मैं इस बात से आश्वत हूँ कि जिन व्यक्तियों ने हिंदू कानून पारित किया है, उन्होंने कभी भी ऐसी स्थिति के बारे में सोचा नहीं होगा।

महिलाएं वंश की माताएं हैं, अतः कोई भी वंश तब तक आगे नहीं बढ़ सकता जब तक महिलाएं उत्तरदायी माताएं और सचेत नागरिक न हो सकें। शिक्षित महिलाओं के बारे में काफी प्रचार किया गया है। यह कहा गया है। कुछ थोड़ी–सी शिक्षित महिलाएं यह कहा गया हिंदू संहिता चाहती हैं, अथवा उसमें ठहरते हुए धीमे सुधार चाहती हैं। श्रीमान, जहां तक महिलाओं का संबंध है, संख्या थोड़ी–सी होनी चाहिए क्योंकि इस देश में शिक्षित तत्वों का अनुपात 15 प्रतिशत है और महिलाएं जो शिक्षित हैं 3 या 4 प्रतिशत हैं। अतः जहां तक महिलाओं का संबंध है, वह थोड़ी–सी ही होना चाहिए, परन्तु उनके पीछे केवल आज नहीं, अपितु गत दशाब्दियों से बड़ी संख्या में प्रबुद्ध और प्रगतिशील पुरुष खड़े हुए हैं। यह इस देश की महिलाएं नहीं हैं जो अकेले इस तथ्य के लिए उत्तरदायी हैं कि कोई नारी मताधिकार आंदोलन या नारी विमर्श–आन्दोलन नहीं है। इस देश में बल्कि इसका कारण यह है कि गत दशाब्दियों से उनके नेतृत्वकर्ता पुरुष रहे हैं। आज भी वही स्थिति विद्यमान है और मुझे विश्वास है कि सदन के बहुमत के पीछे वे ही हैं। यह देश के शिक्षित महिलाओं की माँग नहीं है, अपितु यह मांग उन सभी की है जो चाहते हैं कि भारत की प्रगति हो। बिना महिलाओं के सचेत नागरिक में सही स्थान प्राप्त किये हुए, समाज, नागरिक, यह संभव नहीं होगा कि हम प्रगति कर सकें।

श्रीमान, यह सर्वविदित है कि दासों ने भी उस समय विरोध किया था, जब उनकी दासता की बेड़ियां काट दी गई थीं। यह भी तथ्य है कि पददलितों ने स्वतंत्रता के लिए आपत्ति की है। इससे भी क्या है हमारे ही देश में ब्रिटिशों द्वारा यह माना गया था कि वे केवल नीच कांग्रेस विद्रोही ही थे, जो स्वतंत्रता चाहते थे लेकिन अधिकांश लोग इस बात के इच्छुक थे कि दयनीय दासता में ही संतुष्ट रहा जाए। यदि आज आप महिलाओं के बीच दयनीय संतोष की बात कहते हैं, तो यह सत्य है और यह नितांत सत्य है कि अभी तक अनेक महिलाएं सचेत नहीं हुई हैं। परन्तु क्या यही कारण है कि आप उन्हें नहीं जगायेंगे, कि वे उस संयुक्त उद्यम में पुरुषों की तुलना में समान न हों, पर हमारे सामने आज नए भारत के निर्माण के लिए स्वतंत्रता के वातावरण में हैं? मैं पूछती हूँ, क्या कोई है जो यह महसूस करता है कि इस देश में महिलाओं के बिना आगे बढ़ना संभव है?

निष्कर्ष निकालने से पूर्व मैं एक–दो शब्द उसके बारे में कहना चाहूँगी, जो हमारे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने कहा है। मैं यह अवश्य कहूँगी कि मैं उनके

भाषण को समझ नहीं सकी। आज प्रातः उन्होंने सदन की क्षमता का प्रश्न उठाया और दोपहर के बाद, बैठने से पूर्व उन्होंने कहा कि वह**

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैंने इस सदन की क्षमता का प्रश्न कभी नहीं उठाया।

श्रीमती रेणुका रे : इसलिए, मेरा अनुमान है कि उन्होंने अन्त में कहा था कि क्या हो रहा है। उन्होंने ग्यारह असहमति की टिप्पणियों के बारे में बहुत कुछ कहा था। परन्तु जैसा कि वह जानते हैं और सदन को पता है कि असहमति की टिप्पणियों में से अधिकांश टिप्पणियां छोटे-छोटे मामलों से संबंधित हैं और इस प्रकार की टिप्पणियां सभी विधेयकों के साथ संलग्न की जाती हैं, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि विधेयक का पुनः वितरण किया जाए। प्रातःकालीन सभा में पंडित भार्गव ने कहा था कि दो भूलें मिलकर सही नहीं बन जातीं और तब उन्होंने कहा था कि यह संवैधानिक विधानसभा स्पष्ट रूप से भारत का संविधान बनाने के लिए उपयुक्त नहीं है। मुझे आश्चर्य है सदन में वे कैसे ठहर सकते हैं। दो गलतियां एक सही नहीं बनाते हैं। मैं उनकी बात का खंडन नहीं करना चाहती या जो कुछ भी उन्होंने दोपहर के बाद कहा है उसे पुनः कहना चाहती हूँ, क्योंकि मेरा विचार है कि माननीय विधि मंत्री ने योग्यतापूर्वक कह दिया है और पंडित भार्गव ने उनमें से कुछ बातों का स्वयं ही खंडन कर दिया था।

एक अन्तिम बात यह है कि जिसे मैं कहना चाहूँगी। इस बात की चीख-पुकार हुई है कि हिंदू समाज, सुधार के इस हल्के और लंगड़े उपायों के कारण खतरे में है। मेरा भी विचार है कि हिंदू समाज खतरे में है। यह भारी खतरे में है, खतरा उन लोगों से, जो उसे बन्दी बना देते हैं और पैरों में बेड़ियां डाल देते हैं। उन लोगों से, जो घिसे हुए रिवाजों को बदलने नहीं देते वरन् उन्हें अनुमति देते हैं हमारे समाज जीवन-रक्त को श्वासावरोधी बनाने। यदि वे जो आज हिंदू समाज के बारे में इतने चिन्तित लगते हैं, थोड़ा विचार करेंगे, वे उस बात से सहमत होंगे जो माननीय विधि मंत्री ने कही है। अर्थात् अपने समाज को सुधारो, यदि आप उसे जीवित रखना चाहते हैं। हिंदू समाज के साथ खड़ा होने का। मैं उन पर ध्यान नहीं देना चाहती। मेरे विचार से ऐसे लोग वे हैं, जो उसे बांध लेंगे या हथकड़ी लगा देंगे। वे लोग मित्र नहीं हैं, वे हिंदू समाज के शत्रु हैं। हिंदू समाज को अब सभी कुछ पुनः प्राप्त करना है जो वह अनेक वर्षों में खो बैठा है और बर्बादी की कई शताब्दियों तक हिंदू दास रहे हैं। अतः अब वे स्वतन्त्रता के उस वातावरण में आना चाहते हैं जो आज हमारे देश में व्याप्त है। पुरुष और महिलाएं अब समान रूप से आगे आना चाहती हैं, ताकि वे देश के लिए काम कर सकें। और उनमें समानता नहीं हो सकती, यदि देश के सामाजिक कानूनों में समानता नहीं है। इसलिए मैं यह दलील देती हूँ कि आज जो इस संहिता का विरोध कर रहे हैं, उन्हें इस संहिता

*सीए. (विधि) डी. खंड 2, भाग II, 25 फरवरी, 1949, पृष्ठ 929-34

पर कुछ अधिक विचार करना चाहिए। यदि वे ऐसा नहीं करते तो यह भी हो सकता है कि हिंदू समाज और हिंदू कानून बहुत पीछे रह जाये। इसलिए हमें आगे बढ़ते रहना चाहिए, क्योंकि भारत को दासता की ओर या अन्य व्यक्तियों द्वारा आधिपत्य बनाये रखने के लिए पीछे नहीं लौटना है।

***श्री वी.एस. सरवते (मध्य भारत)** : मैं डॉ. अम्बेडकर को विधेयक के बारे में उनके विविधतापूर्ण तथा सहज वक्तव्य के संबंध में बधाई देता हूँ, जो उनके प्रोफेसर और अधिवक्ता व्यक्तित्व के लिए भी है।

इस विधेयक के कई उपबंधों के संबंध में कोई भी व्यक्ति निश्चित रूप से कुछ व्यक्तियों के साथ सहमति और अन्य के साथ असहमति रखेगा। यह ऐसा अवसर नहीं है कि सहमति अथवा असहमति के मुद्दों पर यहाँ ज्यादा जोर दिया जाए। मैं सामान्य रूप से उस बहस में भाग लूंगा और अपने को कतिपय व्यापक सिद्धांतों तक सीमित रखूँगा तथा मैं यह दिखाने का प्रयत्न करूँगा कि सिद्धांततः यह विधेयक उन विचारों की विरोधी दशा में जाता है, जो मेरे मत के अनुसार हिंदू कानून की पृष्ठभूमि में हैं।

हिन्द समाज का एक व्यापक वर्ग इस कानून के विरोध में हैं इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता, इसे छिपाया भी नहीं जा सकता। कुछ लोग कह सकते हैं यह धर्मसंकट का समय है। यह संवेदनशील बात है, यह तर्कहीन बात है। सब कुछ होते हुए भी, जो लोग ऐसा कानून बनाने के लिए तुले हुए हैं, जिसका सशक्त प्रभाव 20 करोड़ लोगों से अधिक के समाज पर होगा, उन्हें इसके सारांश पर गंभीरता से विचार करने के लिए रुकना पड़ेगा। उन्हें यह विचार करना चाहिए कि इस विधेयक में ऐसा है, जो इतने अधिक बुद्धिमान और शिक्षित लोगों को इस विधेयक के विरुद्ध खड़ा कर रहा है।

[इसी समय माननीय उपाध्यक्ष ने आसन खाली किया, जिसे एस.वी. कृष्णामूर्ति राव (अध्यक्ष के पैनल के एक सदस्य) ने ग्रहण कर लिया।]

मैं यह निवेदन करता हूँ इसके दो कारण हैं। पहली बात, जिसका मैं उल्लेख करुंगा, का संबंध संयुक्त सम्पत्ति की प्रकृति के परिवर्तन से है। मैं यह निवेदन करूँगा कि संयुक्त सम्पत्ति के सह-समांशी पक्ष के पीछे काफी अच्छे विचार हैं। सह-समांशी का अर्थ यह है कि उसमें सामुदायिक हित है, क्योंकि घर का प्रत्येक सदस्य इसे जानता है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को इससे लाभ पाने का पूरा अधिकार है, परंतु उसका सम्पत्ति में व्यक्तिगत हिस्सा नहीं है और न ही उसे बेचने का अधिकार है। मेरी समझ से आधुनिक समाज की समग्र प्रवृत्ति, समाज के विचारों की प्रगति, इसी दिशा में है। हम साम्यवादियों की भर्त्सना कर सकते हैं, परन्तु विशुद्ध रूप में उन्होंने भी कुछ विचारों में संशोधन किया है और वे विचार आने हैं अतः वे विचार आयेंगे। इस बारे में साम्यवाद का क्या अर्थ है, जैसाकि मैं समझता हूँ, इसका अर्थ है–'प्रत्येक व्यक्ति

अपनी योग्यता से और प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार' इसे स्वीकार करता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि एक व्यक्ति कम से कम सम्पत्ति का आनन्द उठाता है। उसे अपनी वैयक्तिक स्थिति को दूसरों के लाभार्थ लगाना है। उसे यह कभी नहीं सोचना है कि सम्पत्ति में उसका नितांत वैयक्तिक हित है। यदि यही आधारभूत समझ है और यदि प्रगतिशील विचारों का संसार इस दिशा में आगे बढ़ रहा है, तो मेरा विश्वास है कि यह स्वीकार किया जाएगा कि इसकी विपरीत दिशा में जाना एक भूल होगी। इस प्रकार के विचार को प्रोन्नत करने के लिए हर समय प्रयास किया जाना चाहिए और इस प्रकार की संस्थाओं को भी प्रोन्नत किया जाना चाहिए, जो उस प्रकार का विचार प्रोत्साहित करती हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में सविस्तार उन प्रयत्नों पर प्रकाश डाला है जो अब तक स्मृतिकारों और अन्य व्यक्तियों ने किए हैं ताकि सह-समांशी का विचार समाप्त किया जा सके। यह मानकर कि ऐसा है, अब विपरीत दशा में प्रयत्न करना चाहिए ताकि नष्ट करने की प्रक्रिया को पूरा न किया जा सके, अपितु सह-समांशी सम्पत्ति का पुनरुद्धार किया जा सके।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : असंभव।

श्री वी.एस. सरवते : असंभव? जी हाँ, ऐसी प्रत्येक बात, जिसके बारे में प्रयत्न नहीं किया जाता, 'असंभव' कह कर टाल दी जाती है।

यदि आप प्रयत्न करें तो इस विश्व में कुछ भी असंभव नहीं है। इसलिए अब मैं निवेदन करता हूँ कि सह-समांशी सम्पत्ति प्रणाली का विचार स्वीकार किया गया है। प्रत्येक वैयक्तिक सदस्य अथवा सह-समांशी उभयनिष्ठ सम्पत्ति का पूर्ण रुपेण आनन्द उठा सकता है, यद्यपि उस सम्पत्ति में उस व्यक्ति का एकमात्र अधिकार नहीं होता तथा वह उसमें अपने हित को हस्तांतरित नहीं कर सकता। इसलिए जब आप इसके बारे में सोचते हैं, तो आपको कुल मिलाकर सह-समांशी के विचार को स्वीकार करना चाहिए। संयुक्त सम्पत्ति का विचार जैसा कि मिताक्षर में दिया गया है, ऐसा ही प्रतीत होता है कि उसमें उत्तराधिकार का अधिकार है, तथा उसमें व्यक्ति को इकाई नहीं माना जाता अपितु प्रत्येक परिवार को इकाई माना जाता है। इसका अर्थ यह भी है कि उसमें परिवार वैयक्ति रूप से आगे बढ़ता है तथा चाहे पुरुष हो अथवा महिला, प्रत्येक को उपभोग का समान अधिकार रहता है। कहने का अर्थ है कि समानता की दृष्टि से लिंग कुछ भी क्यों न हो, व्यक्ति के अधिकार समान होते हैं। इसलिए इसका अभिप्रायः यह है कि परिवार की सम्पत्ति कुछ भी क्यों न हो, वह सम्पत्ति उन्हीं व्यक्तियों में हस्तांतरित की जाएगी, जो परिवार बनाते हैं। इसलिए यदि बेटी परिवार नहीं बनाती, यदि वह किसी अन्य परिवार की सदस्य है तो वह निश्चित रूप से उस परिवार में किसी भी प्रकार का अधिकार-सुख नहीं पा सकेगी। यह बेटी के लिए लापरवाही अपना अनुचित व्यवहार या स्नेह की कमी नहीं है। संयुक्त परिवार का मूल विचार यह है कि जो भी सदस्य हो, चाहे वह विधवा हो, पुरुष या महिला हो,

यदि वह परिवार का सदस्य है तो उसे (पुरुष या महिला) परिवार की सम्पत्ति का उपयोग करने का अधिकार है तथा उस सम्पत्ति को कोई अन्य हस्तांतरित नहीं कर सकता। मैं इस संबंध में एक प्रभावी उपबंध का स्वागत करूँगा कि संयुक्त पारिवारिक संपत्ति का विभाजन नहीं किया जाएगा और कि किसी व्यक्ति अथवा परिवार के सदस्य को उस सम्पत्ति के हस्तांतरण का अधिकार नहीं होगा। इस स्थिति का अधिक स्वागत किया जाएगा तथा इसकी सही दिशा की सराहना भी की जाएगी। यह उस विचार के अनुसार है जो संयुक्त परिवार प्रणाली के पीछे सैद्धांतिक रूप से है। यह परिवार ही है जिसे समाज में इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है तथा व्यक्ति को एक इकाई नहीं समझा जाता। इस दृष्टिकोण से विचार करने पर, किसी भी बहन को यह सोचने की आवश्यकता नहीं है कि उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया है, क्योंकि इस मामले में वह और उसका भाई समान अधिकार का सुख उठाते हैं। इसलिए मैं डॉ. अम्बेडकर के विचारार्थ यह निवेदन करूँगा कि भारत जैसे विशाल देश में कुछ भी नष्ट नहीं होगा, यदि सामाजिक इकाइयों के अनुसार अलग–अलग प्रयोग किए जाते हैं। यदि इस बात की आवश्यकता है कि व्यक्ति को इकाई होना चाहिए तो कहीं पर यह प्रयोग किया जाए। यदि संयुक्त परिवार को समाज की इकाई होना है, तो अन्यत्र यह भी प्रयोग हो। हम एक विशाल देश के लोग हैं, समाज में विविध प्रकार के प्रयोग किए जाने के लिए दोनों प्रयोगों को चलने दें और लोगों को ऐसे कानून अथवा प्रणाली का चयन करने दें, जिसका वे अनुसरण करना चाहते हैं। अतः यदि भारत के 20 करोड़ लोगों के लिए संहिताबद्ध समान कानून के स्थान पर एक से अधिक प्रणाली जारी रखें, तो कोई हानि नहीं होगी।

मैं इस संबंध में डॉ. अम्बेडकर द्वारा किए गए अवलोकनों में से एक अवलोकन की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा। मैं उनकी विद्धता की प्रशंसा करता हूँ। मैंने उन्हें आदरपूर्वक सुना है, क्योंकि अपनी दलीलों से वे किसी पर झपटने के स्तर तक कभी नहीं गए। उन्होंने जोरदार शब्दों में प्रतिवाद किया, परन्तु वे सीधे एवं स्तरीय प्रहार थे। परन्तु एक दिन उनके प्रतिवाद तीखे रहे जबकि उनका भाषण पारदर्शी था। उन्होंने कहा था कि वे नहीं जानते, प्राचीन काल में ब्राह्मण इतनी अधिक जैसे 137 स्मृतियां तैयार करने में क्यों लगे रहे और डॉ. अम्बेडकर का प्रश्न था कि क्या उन ब्राह्मणों के पास कोई दूसरा काम नहीं था। मैं विश्वास करता हूँ जब माननीय मंत्री ने यह कहा, उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि उस क्षण उनसे अलग हो गयी थी। मैं उन्हें याद दिलाना चाहता हूँ कि ये 137 स्मृतियां एक साथ नहीं लिखी गई थीं। वे कम से कम 250 वर्षों से अधिक अवधि में लिखी गई थीं। इस प्रकार प्रत्येक स्मृति के लिखने में उन्हें लगभग 20 वर्ष लगे। इसका अर्थ यह है कि एक स्मृति एक पीढ़ी के लिए लिखी गई। परन्तु यहां क्या होता है कि वह एक वर्ष के अन्तराल में माननीय डॉ. अम्बेडकर एक से अधिक स्मृतियां तैयार कर लेते हैं। अतः उन्हें ऐसे अशिक्षाप्रद आकलन से बचना चाहिए। यह उनके तर्क की दृष्टि से भी अनावश्यक था।

श्रीमान, मैं संयुक्त परिवार की सम्पत्ति की बात कर रहा था। मेरा निवेदन है कि संयुक्त परिवार की सम्पत्ति का सिद्धांत यह है कि उसमें प्रतिबंधित उपभोग की अनुमति होती है।

महाशय, प्रायः यह प्रश्न पूछा जाता है कि हिंदू संस्कृति क्या है, हिंदू धर्म वस्तुतः क्या है? जहां देवदूत आगे आने में डरते हों, वहां मुझ जैसा व्यक्ति तेजी से आगे बढ़ने आया है। इसके लिए व्यक्ति कभी-कभी अस्थायी प्रयत्न करता है और मैं भी ऐसा प्रयत्न करूंगा। मेरे विचार से जहां तक इस विषय का संबंध है कि ऐसे सैद्धांतिक विषय उन्हें हिंदुओं ने अपने समक्ष रखा है, सर्वथा उपभोग पर अंकुश लगाने के बारे में हैं। उपभोग को प्रोत्साहन देने के स्थान पर उपभोग पर अंकुश लगाना ही उनका सिद्धांत था और उनके अनुसार अपने समुदाय की भलाई के लिए, व्यक्ति को स्वयं पर अंकुश लगाना चाहिए।

अब उक्त अंकुश के सिद्धांत को लागू करते हुए मैं निवेदन करता हूँ कि विवाह के पूरे अध्याय को फिर लिखा जाना चाहिए। इस संबंध में यह कहा गया है कि रिवाजों के अनुसार 90 प्रतिशत लोग तलाक का अधिकार रखते हैं, आप नया क्या कर रहे हैं? यह पूछा जा सकता है कि आप शेष दस प्रतिशत पर भी नब्बे प्रतिशत लोगों के रिवाज को थोपना चाहते हैं? मैं कहता हूँ, इस प्रकार की दलील प्रस्तुत एक उत्तम वाक्पटुता है, परन्तु यह तर्कसंगत नहीं है। हमें क्या विचार करना है और माननीय डॉक्टर साहब को क्या सोचना है, वह यह नहीं है कि रिवाज़ क्या है, परन्तु अपितु सोचना यह है कि अच्छा क्या है और लाभकारी क्या है। हमें यह विचार करना है कि वहां क्या होना चाहिए। यह कसौटी हमेशा रही है और यही कसौटी होनी चाहिए। अन्यथा विषमता बनी रहगी। उदाहरण के लिए, नम्बे प्रतिशत लोगों को शराब पीने की आदत होती है। हम निश्चित ही मद्‌य-निषेध को रोकने के लिए नहीं हैं, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि पीने का अपितु सोचना यह है कि रिवाज़ है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह रिवाज़ नहीं है।

श्री बी.एस. सरवते : ठीक है, आप ऐसा सोच सकते हैं, पर मुझे स्वतंत्रता है कि अपने तरीके से अपना विचार व्यक्ति करूँ। (**एक माननीय सदस्य :** 'नब्बे प्रतिशत लोग शराब पीने वाले नहीं हैं।') एक बात यह है कि इसे किसी समुदाय में रिवाज़ माना जाए और दूसरी बात यह है कि उन्हें पीने वाले समझा जाए। यही अंतर है। यह कहने की कोई दलील नहीं है कि किसी प्रकार का रिवाज़ है, अतः कानून द्वारा इसका परिपालन किया जाना चाहिए। तर्क यह होना चाहिए कि क्या यह लाभप्रद है और यदि इस दृष्टिकोण से विचार करते हैं और हिंदू समुदाय का अमुक वर्ग यह कहता है कि विवाह अविघटनीय है, तो उन्हें क्यों बाध्य किया जाए और यह कहा जाए कि विवाह विघटन होगा, यदि दोनों पक्ष ऐसा करना चाहें। इस बारे में दलील आगे दी जा सकती है कि इस विधेयक

में ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है, इसमें कोई दबाव नहीं है परन्तु इसमें एक विकल्प है। विकल्प हमेशा होते हैं। पीने वालों के लिए विकल्प है कि वे शराब की दुकान पर जाएं अथवा न जाएं। इसमें हमेशा वाला विकल्प है, परन्तु वे सदैव जाते हैं जब शराब की कोई दुकान होती है तो क्या शराब की दुकान को कानून द्वारा बन्द कर दिया जाना चाहिए? यदि इसी बात को समाज के किसी भाग पर लागू किया जाता है, तो मैं इसका स्वागत करूँगा। विवाह के कानून में एक पत्नीत्व होना चाहिए, मैं इस बात को स्वीकार करता हूँ। मैं इससे भी आगे जाना चाहता हूँ और यह कहता हूँ यदि आप यह विचार करें कि संयम के दृष्टिकोण से दूसरा विवाह नहीं होना चाहिए चाहे वे महिलाएं हों अथवा पुरुष हों तो यह व्यवस्था भी स्वागत योग्य है। परन्तु इसके अलावा हम दूसरे छोर की बात करना चाहते हैं और इस बात की व्यवस्था करना चाहते हैं कि प्रत्येक विवाह, यदि ऐसी इच्छा हो जाए, विघटन किये जाने योग्य होना चाहिए। मेरे विचार से यह वांछनीय नहीं हैं। इसमें संदेह नहीं कि तलाक की प्रथा किसी समय प्राचीन हिंदुओं में थी। बाद में इसका विरोध हो गया चाहे इसके ऐतिहासिक कारण प्रारम्भ में कुछ भी रहे हों। मुझे इसका कारण यह लगता है कि परिवार की एकता को बनाए रखना था। वे चाहते थे कि यदि एक बार विवाह हो गया है तो उसका विघटन नहीं किया जाना चाहिए ताकि किसी पुरुष के जीवन में अन्य कोई महिला प्रवेश नहीं कर पाये और वह महिला जो परिवार में थी, अलग नहीं हो पाए और उसके स्थान पर दूसरी महिला नहीं आ पाए। जहां तक संभव हो इस संभावित घटना को टाला जाए। मेरे विचार से यह एक कारण था कि विवाह विघटन की अनुमति नहीं दी गई। इसलिए मेरा सुझाव यह है विवाह के अध्याय में दो भाग हों। ऐसे लोग जो यह चाहते हैं कि उनका विवाह-विघटन होना चाहिए, वे सिविल विवाह करें और जो कानून बना रहे हैं, उसके उपबंधों के अनुसार उन्हें स्वतंत्रता से विवाह-विघटन की अनुमति हो। दूसरे भाग में जो सांस्कारिक विवाह का भाग हो सकता है, इसमें विवाह विघटन न हो। मेरे विचार से यह दोनों पक्षों को संतुष्ट करता है। मेरा नम्र निवेदन है कि संबंध-विच्छेद को क्यों दबाव बनाया जाए?

श्री महावीर त्यागी : ऐसी स्थिति में उन्हें, विवाह से पूर्व संबंध-विच्छेद के बारे में निर्णय करना होगा।

श्री वी.एस. सरवते : मेरा विश्वास है कि मेरे माननीय मित्र ने मुझे बिल्कुल गलत समझा है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि वे पुरुष और महिलाएं जो यह चाहते हैं कि उनके विवाह-विघटन न हों, सांस्कारिक अधिकारों के साथ विवाह और वे जो चाहते हैं कि भविष्य में उनका विवाह-विच्छेद हो सकता है, वे सिविल विवाह प्रणाली के अनुसार विवाह करें।

श्री तजामुल हुसेन : क्या मेरे माननीय मित्र का अभिप्राय यह है कि विवाह से पूर्व ही तलाक निश्चित हो जाए?

श्री वी.एस. सरवते : सिविल विवाह का अर्थ तलाक नहीं है। इसका अर्थ विवाह-विच्छेद अथवा तलाक नहीं है। जब मैं सिविल विवाह कहता हूँ तो उसका अर्थ विवाह है; उसका अर्थ तलाक नहीं है।

श्री महावीर त्यागी : इसका अर्थ विवाह भी नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : शांत, शांत। माननीय सदस्य अपना भाषण जारी रखें।

श्री वी.एस. सरवते : श्रीमान, मेरा निवेदन है: हमें अपने दिमाग में स्पष्ट होना चाहिए कि क्या हम कुछ ऐसी बातें थोपना चाहते हैं जो कुछ लोग नहीं चाहते? मैं इससे आगे की बात कहता हूँ, जब एक बार आप सांस्कारिक विवाह को स्वीकार कर लेते हैं कि यह सांस्कारिक है। तब ऐसे विवाह के लिए परिस्थियां उपलब्ध कराने के धार्मिक प्रावधानों का परीक्षण हो। यदि कोई धर्म, बाल-विवाह और अल्प-वयस्कों के विवाह की अनुमति देता है, तो ऐसे विवाहों की अनुमति हो। यह प्रथम: शर्तों का विरोधाभास है जब यह कहा जाता है कि विवाह धर्म के अनुसार होना चाहिए और तब उसमें यह बात जोड़ दें कि यह धर्म के अनुसार होना चाहिए और साथ ही विधेयक के प्रावधान अनुसार भी। यह शर्तों का विरोधाभास ही है। या तो सांस्कारिक विवाहों को अनुमति हो अथवा न हो, यदि आप उसे पसंद नहीं करते। ऐसी दशा में जब सभी विवाह सिविल विवाह हों। यदि आप कहते हैं कि सांस्कारिक विवाहों की अनुमति दी जाती है, तब संस्कारों के अनुसार विवाह सम्पन्न किए जाएं। यह मेरा विनम्र विचार है और जहां तक खंड 7 के उपबंधों का संबंध है, वे संस्कारों के अनुसार नहीं हैं। संस्कार के साथ कुछ अन्य बातें जोड़ी जाती हैं। वह धर्म के अनुसार ही होना चाहिए, यदि धर्म को अनुमति देना है। यह दूसरी बात है जो मैं आपके ध्यान में लाना चाहता हूँ और इसे आसानी से किया जा सकता है। उससे संतुष्ट करेगा और काफी हद तक असंतोष के कारण दूर करेगा जो इस समय मौजूद हैं। सिद्धांतों की दृष्टि से मेरा मात्र सुझाव यह है कि इसी अधिनियम में इसका प्रावधान किया जाना चाहिए जो समाज को अनुमति दे कि सह-समांशी के रूप में परिवार बना रहे। इससे कुछ भी नष्ट नहीं होगा। इस देश में मुसलमान हैं, ईसाई हैं और पारसी हैं। पारसियों का बहुत छोटा समुदाय है, यदि उन्हें उत्तराधिकार आदि का अपना कानून अपनाने की अनुमति है, तब एक बड़े वर्ग को सह-समांशी को अनुमति दी जाती है यदि वे ऐसा चाहें। यदि इस सिद्धांत को एक बार स्वीकार कर लिया जाता है, तो उस सिद्धांत के अनुसार पूरे मसौदे में परिवर्तन किए जा सकते हैं।

मेरा आगे निवेदन है कि यह विधेयक अभिमत के लिए पुनः परिचालित किया जाए। यहां, मैं उस आदेश की बात नहीं उठाता, जो अध्यक्ष ने पहले ही दे दिया है। प्रश्न उठा था कि क्या नियमों के लिए प्रकाशन पर्याप्त था और आदेश था कि यह पर्याप्त था यद्यपि मुझे इस बात को उठाने में वंचित नहीं किया जा सकता कि क्या यह वांछनीय है कि विधेयक को प्रचार-प्रसार किया जाए। मेरा निवेदन है कि इस बात का कोई अर्थ

नहीं होगा कि यदि विधेयक पारित हो जाता है, तो वह स्वतः प्रांतों पर लागू होगा, चाहे डॉ. अम्बेडकर इसके विपरीत कुछ भी क्यों न कहें। मेरा नम्र निवेदन यह है कि यह राज्यों के उन सभी राज्य-क्षेत्रों में लागू होगा, जो प्रान्तों में सम्मिलित कर दिए गए हैं और उन सभी क्षेत्रों में जो सहमत हैं, केन्द्र के द्वारा उनके लिए कानून बनाने को।

श्री सीता राम एस. जाजू (मध्य प्रदेश) : यदि इसे भारतीय रियासतों में भी लागू किया जाए, तो इसमें आपत्ति क्या है?

श्री वी.एस. सरवते : मैं यही कह रहा हूँ कि इसे लागू किया जाना चाहिए। मैं इसके पक्ष में हूँ। मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्य मुझे बोलने की अनुमति दिए बिना ही मेरे बारे में पूर्वानुमान किए जा रहे हैं और कुछ टिप्पणियां कर रहे हैं। मैं निवेदन कर रहा था कि यह विधयेक भारतीय रियासतों पर लागू किया जाना चाहिए। लेकिन मैं केवल यह निवेदन कर रहा था कि यदि इसे ऐसे लागू किया जाता है और यह मेरी उत्कट इच्छा है, जब वहां एक सैद्धांतिक अधिकार का प्रश्न उठता है, जो आप न्याय की दृष्टि से प्रत्येक वृहद क्षेत्र को दे सकते हैं, जिसे आपके विधेयक के अधीन अधिशासित होना है अपना अभिमत व्यक्त करने। यह विधेयक अभी उन बड़े क्षेत्रों में प्रकाशित नहीं किया गया है और इसलिए वहां के लोग ऐसी स्थिति में नहीं थे कि इस विधेयक के बारे में गंभीरता से विचार कर सकें, जो कि वे अन्यथा कर सकते थे। अब जब उन्हें यह विहित है कि यह विधेयक उन पर लागू किया जाएगा और यह विधेयक प्रकाशित है, जो वे इस स्थिति में होंगे कि अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकें। प्रत्येक व्यक्ति का यह सैद्धांतिक अधिकार है कि उसे ऐसे विधान के बारे में अपना मत व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाए, जो उसे प्रभावित करेगा। इसके आगे, यह उनके प्रत्येक प्रतिनिधि का कर्तव्य है कि वह इस सदन में मत प्रदान करने से पूर्व उन लोगों के विचार जान ले। इसलिए राज्यों के प्रतिनिधियों के विचार और राज्य लोगों के विचारों के दृष्टिकोण, दोनों ही प्रकार से यह न्यायसंगत है कि उन्हें अपने मत प्रकट करने के लिए कुछ समय दिया जाए, ताकि वे अपने अभिमत व्यक्त कर सकें। इसलिए मैं एक मध्यम मार्ग का सुझाव देता हूँ कि किसी भी दशा में यदि इस विधेयक पर विचार इस सभा में पूरा नहीं होता और यदि किसी प्रकार की कोई आकस्मिकता है जिसके बारे में मेरा कहना है कि ऐसा हो सकता है, तब इस विधेयक के माननीय प्रस्तावक यह विचार कर सकते हैं कि क्या यह वांछनीय नहीं होगा कि बाद में किसी विशेष सत्र में इस पर विचार किया जाए। जो अवरोध कर सकता है, दो या तीन या चार महीने पर्याप्त होगा उन लोगों की प्रतिक्रियाएं जानने के लिए हों। मेरे विचार से यही न्यायसंगत होगा और प्रकाशन के उपबंधों की भावना के अनुसार भी। मैं यह देखने के लिए सदन से अपील करता हूँ कि क्या उसके लिए न्याय की आवश्यकता नहीं है। इससे यह अनुमान नहीं लगाना चाहिए कि संहिता के बारे में अन्तिम शब्द कह दिया गया है। यह हो सकता है कि एक सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी अपने उन सुझावों के साथ

आगे आएं, जो विद्वान डॉक्टर के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं। यदि इस प्रकार अवसर दिया जाता है, तो न्याय के उद्देश्य की पूर्ति हो सकेगी और यह उपयोगी भी होगा।

श्रीमान, इसी निवेदन के साथ मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं।

श्री एच.वी. कामथ : माननीय अध्यक्ष''

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : श्रीमान, व्यवस्था का प्रश्न है कि क्या कोई अविवाहित पुरुष जिसने विवाह न किया हो और पुत्र पैदा नहीं किया है, अपने पूर्वजों को पिंड दान कर सकता है, इस विधेयक पर भाषण दे सकता है और इस बहस में भी योगदान कर सकता है?

माननीय अध्यक्ष : इसमें व्यवस्था का कोई प्रश्न नहीं उठता। कोई भी जो हिंदू है, वह अपनी बात कह सकता है।

***श्री एच.वी. कामथ :** मैं व्यवस्था के प्रश्न का उत्तर देना चाहूँगा। श्रीमान, मैं दो अधिवक्ता-मित्रों और एक महिला मित्र के बाद बोलने के लिए खड़ा हूँ, मैं असहायता में परिश्रम कर रहा हूँ। मेरे पास न तो माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव और श्री सरवते जैसी कानूनी दलीलें और न मेरे माननीय मित्र रेणुका रे जैसी मधुर तर्किकता। जहां तक अधिवक्ताओं का संबंध है, मुझे विश्वास है कि मेरे माननीय मित्र विधि मंत्री उन पर ध्यान देंगे और उनकी दलीलों का जवाब देंगे जो उन्होंने आज अपने भाषणों में उठाई हैं। जहां तक श्रीमती रेणुका रे के भाषण का संबंध है, मैं मोटे तौर पर उनके कथन से सहमत हूँ और मेरे लिए आवश्यक नहीं है कि मैं उनकी किसी दलील का उल्लेख अपने प्रतिवाद के लिए करूँ।

मेरे माननीय मित्र श्री बी.दास ने व्यवस्था का प्रश्न उठाया था, जब मैं भाषण देने के लिए उठा था। मेरे विचार से उनके द्वारा उठाया गया व्यवस्था का प्रश्न मेरे पक्ष में जाता है। मैं महसूस करता हूँ कि इस सदन के समक्ष इस मुद्दे पर भाषण देने का मेरा दावा केवल इसीलिए बनता है क्योंकि मेरे पास न तो पत्नी है, न बच्चे हैं और न नाम के लिए सम्पत्ति है। मैं निष्पक्ष विचार से इस विषय को स्वीकार करता हूँ। हृदय की भावनाओं से उत्प्रेरित न होते हुए इस विधेयक के अधिकांश प्रावधान, विवाह और सम्पत्ति, दत्तक लेना तथा उत्तराधिकार के अन्तर्गत ऐसे मामलों से संबंधित हैं, जिन्हें हमारे प्रसिद्ध दार्शनिक के दो शब्दों में अभिव्यक्त किया जा सकता है, अर्थात् कामिनी और कंचन। इनमें से किसी से भी अभी तक भयाक्रांत न होने पर, आशा है कि मैं अलिस मान से इस विधेयक पर ज्यादा या कम तरीके से कुछ टिप्पणियां करके आपको और सदन को प्रसन्न करूँगा। अवश्य अरुचि न होते हुए अलिस भाव से।

*सीए. (विधा.) डी. खंड 2, भाग II, 25 फरवरी, 1949, पृष्ठ 934-36

इस बीसवीं सदी में ईसा मसीह के बाद, जैसा कि हम सभी जानते हैं और गवाह रहे हैं। इतिहास के मंच पर उभर कर आ गई, एशिया में, साथ ही साथ यूरोप और अमेरिका में है। इस विश्व आंदोलन के लिए भारत और हिंदू समाज भी अपवाद नहीं रहे हैं। ऐसे सभी क्रान्तिकारी विप्लव भाग्यवश अन्तर्ग्रथित हैं, जो हमारे समय में खुल कर उभर रहे हैं तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पुराने समाजों को परिवर्तित कर रहे हैं। साथ ही, पुरुषों और महिलाओं के अतीत को नए संबंधों में बदल रहे हैं। हमारे युग में महिलाओं की गतिशीलता का विशेष उल्लेख है जिन्होंने पुरुषों के साथ विश्व को आग में झोंक दिया है। (**एक माननीय सदस्य:** परन्तु आप अपवाद हैं) और ने विश्व के पुनर्निमाण की दिशा में कुछ योजनाएं बनाने में सहायता की है। यहां आकर मैं पूछता हूँ कि पुरुष ऐसी मृतआत्मा से क्यों श्वास लेता है जो गौरव से उन्हें स्मरण नहीं करता और उल्लास भरे हृदय से महिलाओं की उल्लेखनीय और वीरता की उपलब्धियों को याद नहीं करता। उनकी दयनीय स्थिति, अनिभज्ञता और निरक्षता, सत्याग्रह कहे जाने वाले अहिंसा के क्षेत्र में तथा रक्त और लोहा, अग्नि और इस्पात के रक्तजित युद्ध-क्षेत्र में भी भाग लिया है। हाथ जो शिशु का झूला हिलाते हैं, उन्हीं हाथों ने ऐसी शक्ति दिखाई है, जो तलवार चला सकते हैं और इतने कोमल हो जाते हैं कि जब आवश्यकता होती है तो वे आक्रमण के विरोध में मंगलकामना के लिए उठते हैं। दूसरे क्षेत्र और प्रदेशों को परे रखते हुए, हमारे अपने भारत में हम सभी जानते हैं कि पुरुषों के साथ महिलाएं, यद्यपि आधुनकि युद्ध कला से अनभिज्ञ हैं और लाठी चलाने में अनमियस्त हैं तथा गोली चलाने और कारावास से अपरिचित हैं, किस तरह हजारों की संख्या में महात्मा गांधी और नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के झंडे तले एकत्र हुई हैं। यह कहानी सुविख्यात है, मैं भी इसे अधिक विस्तार से कह सकता हूँ। अतः तीव्र गति से विकसित सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में हमें इस मुद्दे को देखना है, जो सदन के समक्ष विचारार्थ है। कोई भी कानून शून्य में नहीं चल सकता अथवा विनिर्मित नहीं हो सकता और सामाजिक परिवेश की दृष्टि से कानून न तो अलग हो सकता है और न उससे अलग देखा जा सकता है जिसमें उसका जन्म हुआ है। सार रूप में किसी मसखरे की परिहासशील टिप्पणी भी है कि इस युग में महिलाएं संसद में बैठती हैं और बसों में भी खड़ी होती हैं। सारांश में कहा जा सकता है कि यह ऐसा क्रान्तिकारी परिवर्तन है, जिसने वर्तमान पीढ़ी को पीछे छोड़ दिया है। महाशय, मैं महसूस करता हूँ, मैं भी न्यूनाधिक राजनीतिक परिव्राजक हूँ, मैं इस विधेयक के बारे में कुछ विचार प्रस्तुत करता हूँ।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि इस सदन में मेरे माननीय मित्र जो इस विधिकरण से तत्काल प्रभावित नहीं हैं, इस विधेयक में इतनी बड़ी रुचि ले रहे हैं। मेरे माननीय मित्र पुनः संदेहास्पद पंडित नजीरुद्दीन हैं और मैं महसूस करता हूँ, श्रीमान, कि यह शीर्षक नितांत असुरक्षित भी नहीं है। यदि श्रीमान, माउंटबेटन को 15 अगस्त, 1947 को पंडित कहा जा सकता है, तो मैं महसूस करता हूँ कि बर्मा के लार्ड माउंटबेटन से महाशय नजीरुद्दीन के पास 'पंडित' कहलाने का अधिकार अधिक है। कई ऐसे मित्र

इस विधिकरण में विशेष रुचि ले रहे हैं और मैं इसे समय का शुभ संकेत के रूप में स्वागत करता हूँ तथा भविष्य के लिए भी शुभ कथन मानता हूँ, क्योंकि इस प्रकार हम सीधे एकीकृत समाज की सही दिशा में जा रहे हैं तथा बहुत जल्द ही हमारे समस्त देश के लिए एक समान सिविल संहिता होगी।

सदन के भीतर और बाहर के सदस्य जो पूर्णतया इस विधेयक के पक्ष में नहीं हैं और जो पूर्ण रूप से इस संबंध में आगे नहीं आना चाहते, उनमें से कुछ लोग स्मृतियों, शास्त्रों और हमारे धर्म का सहारा लेते हैं। श्रीमान ठीक है, धर्म क्या है? जब तक हम निर्णय नहीं कर लेते कि इस प्रश्न का उत्तर क्या है, हम न तो प्रशंसा कर सकते हैं और न रद्द कर सकते हैं। उस आधार को जिसका इस देश के कुछ लोग सहारा ले रहे हैं, इस मुद्दे पर धर्म! क्या यह अनुष्ठान और बाह्य-कार्यों तथा उत्सवों की केवल एक संहिता है या कुछ गहन तत्त्व है जिसका संबंध आत्मा, हृदय, मस्तिष्क और भावना से है? धर्म! शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत में इस प्रकार है–'धर्म वह तत्त्व है, जिससे संसार को सहारा मिलता है: **'येवेदम धार्यते जगत।'** संसार मिलता है अर्थात् 'जगत' जिस तत्त्व से समर्थित होता है, वही धर्म है।

अब हम नहीं हैं यह पूछेंगे कि क्या कुछ उत्सवों, अनुष्ठानों और औपचारिक रिवाज़ धर्म बनाते हैं अथवा क्या यह इससे भी अधिक गंभीर बात है?

जहां तक स्मृतियों का संबंध है जो धर्म के साथ आपस में जुड़ी अथवा आपस में गुंथी हैं, मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने उस दिन कहा कि शायद 137 स्मृतियां हैं। यदि मैं सही नहीं हूँ तो वे मेरी भूल का सुधार कर दें। मुझे विश्वास है कि उन्होंने स्मृतियों की गिनती की है। जहां तक उपनिषदों का प्रश्न है, उनकी संख्या 108 बताई जाती है और अनेक उपनिषद् अज्ञात हैं या खोजे नहीं गए हैं। स्मृतियां भी अधिक हो सकती हैं अज्ञात और न अब तक खोजी गईं। पर अब 138वीं स्मृति का भी पता लगा है। वे मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं इस स्मृति का यहां उल्लेख करूं और यह उल्लेख सतही नहीं है, क्योंकि यह भी एक विधिकरण है, जो यद्यपि क्रांतिकारी नहीं है, उसने हमारे एक हिंदू सामाजिक संबंधों में परिवर्तन किए हैं। इसलिए मैं समान शब्दावली का प्रयोग कर सकता हूँ जैसा कि ऐसी अन्य हिंदू सामाजिक संहिताओं तथा सामाजिक पाठ्य-पुस्तकों पर लागू किया गया है जो पहले से हमारे लिए लिखे गए हैं। इसे हम 138वीं स्मृति कह सकते हैं। मैं इसे जैसे 'भीम स्मृति' कह सकता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर मुझे क्षमा करेंगे। यदि मैं इसे स्मृति कहकर संदर्भ दूँ। यदि मैं आन्दोलन के एक अन्य प्रतिपादक का नाम भी सम्मिलित करूं, जिसने मसौदा तैयार किया है तथा उसका विधेयक प्रस्तुत किया है, तो मैं जैसे नरसिम्हा का उल्लेख करूंगा। वह राउ समिति है, जिसने इस विधेयक का नेतृत्व किया। अंततोगत्वा मैं इसे, 'भीम स्मृति' न कहकर 'भीम नरसिम्हा स्मृति' का नाम दूंगा।

हमारे सामने जो विधिकरण है, अब उसकी ओर आते हैं। स्मृतियां सुविख्यात हैं, फिर भी वे परस्पर विरोधी हैं। एक ही स्मृतिकार स्मृति के विभिन्न पाठों में अन्तर कर देता है। यह बात सुविख्यात है कि एक ही कवि अपनी कविता में एक समान नहीं रहता। शेक्सपियर ने एक नाटक में महिलाओं के बारे में लिखा है–'चंचलता का नाम ही नारी है।' पर वे ही दूसरे नाटक में लिखते हैं–'वह इतनी सशक्त थी कि अपनी जंघा में स्वयं घाव भर लेती थी।' मेरा अभिप्राय ब्रूटस की पोरशिया से है। अब हम अपने देश की ओर आते हैं। महान कवि और दार्शनिक तुलसीदास ने कहा है–'ढोर गंवार शूद्र अरु नारी। यह सब ताड़न के अधिकारी।' मेरे उन मित्रों के लाभ के लिए जो हिंदी नहीं जानते हैं, इसका अर्थ है कि गंवार, निःक्षर व्यक्ति, पशु, शूद्र और नारी ये प्रताड़ना योग्य हैं।

श्री राज बहादुर (मत्स्य के संयुक्त प्रांत) : मैं सदन को सूचित करना चाहूँगा कि श्री कामथ द्वारा प्रस्तुत इस बहुश्रुत पद की व्याख्या नितांत अशुद्ध है।

श्री एच.वी. कामथ : मुझे आशा है कि मेरे मित्र अपनी व्याख्या उस समय प्रस्तुत करेंगे, जब उन्हें बोलना है।

श्री राज बहादुर : उसका अर्थ यह है कि शूद्र जो ढोल के समान है, नासमझ है और नारी (अर्थात् महिला) जो पशु (जंगली जानवर) के समान है, वे चेतावनी के अधिकारी हैं। इसका अभिप्राय है कि ढोल (खोखला) शूद्र पशु (जंगली जानवर) के समान औरत हैं, जो पीटने के योग्य हैं।

श्री एच.वी. कामथ : किंतु हमारे विधि-विधान में मनु का कथन है: **यत्र नार्यस्तु जन्ते रमन्ते तत्र देवतः।** इसका अभिप्राय यह है कि जहां महिलाओं का आदर किया जाता है वहीं देवता प्रसन्न होते हैं।

अलग-अलग स्मृतियों और शास्त्रों को एक ओर छोड़ते हुए क्या कहता है–हिंदुओं का सबसे महान ग्रंथ 'गीता' है। उस समय जब श्री कृष्ण गीता के माध्यम से अर्जुन को उपदेश दे रहे थे, तब हिंदुओं में अनेक रिवाज़ थे, जो समाज के कुछ वर्गों के लिए अपमानजनक थे। तब श्री कृष्ण ने मनुष्य रूप से अर्जुन को स्पष्ट बताया था कि किसी मनुष्य का सबसे बड़ा लक्ष्य क्या है?

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अपना भाषण सोमवार को जारी रख सकते हैं। (इसके बाद विधानसभा सोमवार 28 फरवरी, 1949 को पौने ग्यारह बजे तक के लिए स्थगित कर दी गई।)

*हिंदू विवाह वैधता विधेयक
(प्रवर समिति की रिपोर्ट के प्रस्तुत करने के लिए समय-सीमा में वृद्धि)

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"हिंदुओं सिखें, जैनों और इनकी अन्य अलग-अलग जातियों तथा उपजातियों के बीच वैध विवाह से जुड़े इस विधयेक पर प्रवर समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए निर्धारित तारीख को 25 मार्च, 1949 तक बढ़ा दिया गया है।"

यहां आदेश-पत्र पर दी गई तारीख 11 मार्च है, परन्तु आपकी अनुमति से मैं इसमें संशोधन करके इसे 25 मार्च रखना चाहूँगा, क्योंकि माननीय विधि मंत्री दिल्ली से बाहर रहेंगे और वह इस कार्य के लिए अपना अधिक समय नहीं दे पाएँगे। इसलिए मैं इस संशोधन के साथ यह प्रस्ताव करता हूँ।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे इस बात की बेहद चिंता है कि यह विधेयक इस सत्र में सदन के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। इसीलिए मैं माननीय विधि मंत्री से यह निवेदन करता हूँ और इस विधेयक के प्रभारी प्राधिकारी से कि कृपया यह देखें कि प्रवर समिति 25 मार्च तक अपनी रिपोर्ट तैयार कर ले। मैं सदन से यह निवेदन भी करता हूँ कि मेरा निवेदन प्राधिकारियों तक पहुंचा दिया जाए, ताकि यह विधेयक इसी सत्र में पारित कर दिया जाए क्योंकि यह विधेयक अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

श्री आर.के. सिधवा (सीपी और बरार : सामान्य) : यह मामला पूर्णरूपेण चयन समिति के अधीन है। सदन को इस मामले में क्या करना है? मेरे माननीय मित्र को प्रवर समिति से निवेदन करना चाहिए कि रिपोर्ट को शीघ्रता से तैयार करें और आशा है कि चयन समिति ऐसा करेगी।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं यह तारीख बढ़ाना चाहता हूँ। मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ क्योंकि यह मेरी चिंता का विषय है कि विधि मंत्री को यह देखना चाहिए कि रिपोर्ट समय पर तैयार की जाए। अत: सदन को इस विषय में मेरा समर्थन करना चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : प्रश्न यह है कि:

"हिंदुओं, सिखों और जैनों तथा इनकी जातियों एवं उपजातियों के बीच विवाह वैध करने से जुड़े इस विधेयक पर प्रवर समिति की रिपोर्ट के प्रस्तुत करने के लिए निर्धारित समय 25 मार्च, 1949 तक बढ़ा दिया जाए।"

यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया था।

---

*सीए. (विधा.) डी. खंड 2, भाग II, 28 फरवरी, 1949, पृष्ठ 940-56

हिंदू संहिता—जारी

माननीय अध्यक्ष : अब यह सदन हिंदू संहिता पर फिर से विचार करने के लिए अग्रसर होगी।

***श्री एच.वी. कामथ (सीपी और बरार : सामान्य) :** अध्यक्ष महोदय, जब शुक्रवार को यह सदन स्थगित किया गया था, तो उस समय मैंने मन में श्री कृष्ण का नाम था। मैं कह रहा था कि मानव अस्तित्व के सबसे उच्च आदर्श का जहां तक संबंध है, यह है कि 'गीता' में श्री कृष्ण ने पुरुष और स्त्री को समानता का निरपेक्ष आधार दिया है। 'गीता' हिंदुओं के लिए पवित्र स्मृति है अर्थात् सर्वोच्च शास्त्र है, सभी दर्शन और सभी धर्मों का सारतत्व है। उसमें एक बहुश्रुत श्लोक है, जिसमें श्री कृष्ण कहते हैं—**"स्त्रियों वैश्यास्तथा शूद्रास्तेपि याति परमगतिम"** यानी महिलाएं, वेश्याएं और शूद्र, जो उस युग में प्रत्यक्ष रूप से दलित और दलित वर्गों या जातियों के थे, वे भी श्री कृष्ण कहते हैं कि वे ब्राह्मण और अन्य जातियों से समानता के आधार पर बराबर हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : श्री कामथ आप ठीक कहते हैं।

श्री एच.वी. कामथ : जहां तक मोक्ष और पर गति का संबंध है, महिलाओं द्वारा उसे प्राप्ति करने में नितांत रूप से कोई बाधा नहीं है। मुझे यह कहते हुए दुख है कि आजकल कुछ ऐसे पुरुष और कुछ विशेष स्वामी, जिन्हें कथित रूप से धार्मिक अथवा आध्यात्मिक प्रमुख माना जाता है, इस बात में विश्वास करते हैं कि पुरुष और महिलाओं को समान स्तर पर नहीं रखना चाहिए। मैं सहमत हूँ कि वे सभी हर तरह एक जैसे नहीं हैं···

मौलाना हसरत मोहानी (यू.पी. : सामान्य) : वे एक समान कैसे हो सकते हैं?

श्री एच.वी. कामथ : परन्तु यह कहना कि वे असमान हैं और बेतुके कारणों द्वारा इस दलील को समर्थन देना, मेरे लिए स्तब्धकारी है। दूसरा दिन मेरे लिए सौभाग्य-दुर्भाग्य का दिन था कि मैंने एक स्वामी को सुना जो बता रहे थे कि पुरुष और महिला असमान हैं और उस वक्तव्य के पीछे क्या कारण थे? उन्होंने एक अजीब बात कही और यह सदन इस बात से सहमत होगा। उन्होंने कहा कि पुरुष के मूंछें उगती हैं लेकिन महिला की मूंछे नहीं होतीं। मैं उपहास नहीं कर रहा हूँ, श्रीमान, हमारे कई मित्र उस बैठक में सम्मिलित थे, जिसे स्वामी ने संबोधित किया था और उन्होंने यह बात अपनी पूरी निष्ठा से कही थी। उन्होंने यह बात पूर्ण गंभीरता से कही थी कि आदमी के मूंछें उगती हैं तथा महिला मूंछें नहीं उगा सकती, तथा एक वर्ष में अधिक से अधिक तीन, चार या पांच बच्चे पैदा कर सकती हैं।

---

*सीए, (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 28 फरवरी, 1949, पृष्ठ 941-50

एक माननीय सदस्य : एक वर्ष में?

श्री एच.वी. कामथ : यह इस बात पर निर्भर है कि वह एक बार में तीन, चार या पांच बच्चे पैदा करती है। श्रीमान, वह यह भी कहते गए कि पुरुष एक सौ या अधिक बच्चों के पिता होने की क्षमता रखता है। श्रीमान, मेरी समझ से यह ऊटपटांग दलील है।

जब हम पुरुष और स्त्री की समानता की बात करते हैं, हम जानते हैं कि इसका आध्यात्मिक आधार है, जिसे श्रीकृष्ण के द्वारा गीता में कहा है। उनका कथन है–

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतनि चात्मनि।

यही आधार है, यही मापदण्ड है, यदि मानव की समानता अथवा पुरुष और स्त्री की समानता के मापों की छड़ी है।

यो माम् पश्चति सर्वत्र, सर्वम्, च मयि पश्यति।

यह परीक्षण है, यही कसौटी है, यही मानव की समानता के मापने की छड़ी है, चाहे वह उच्च या निम्न हो, धनी या निर्धन हो, पुरुष या स्त्री हो।

मैं स्वामी द्वारा प्रतिपादित असमानता के विचार की पुष्टि नहीं करता। दूसरी ओर, मैं यह भी विश्वास नहीं करता कि स्त्री, जैसा कि हम में कुछ विश्वास करते हैं, धूम्रपान और मदिरा का सेवन करके पुरुषों की बराबरी कर सकती हैं। फिर भी कुछ ऐसा है जिसका विरोध किया जाना है, यदि उनके द्वारा पुरुष की समानता खोजी जाती है और न ही मैं महिलाओं के पश्चिम विचारधारा की प्रगतिशीलता से सहमत हूँ जो शायद पश्चिमी संस्कृति की शुरूआत है और प्रगतिशील होने का प्रयास, बॉल रूम डाविंसग और अन्य पश्चिमी आदतों को लेने पर है। श्रीमान, यह भी मेरे विचार से पुरुष की समानता प्राप्त करने का कोई उपाय नहीं है।

श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी (यू.पी. : सामान्य) : यह हिंदू संहिता में सम्मिलित नहीं की गई है। किंतु क्या वह किसी साथी के बिना नृत्य करती है?

श्री एच.वी. कामथ : मैं यह जानता हूँ, परन्तु हम यहाँ पुरुष और महिला की समानता की बात कर रहे हैं। हमारे महान विद्वान और दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णनन् जो हिंदू धर्म और हिंदू जीवन शैली के विशेषज्ञ हैं, ने कहा है:–

"आधुनिक महिला, यदि मैं ऐसा कहूँ, अपना आत्मसम्मान खो रही हैं। वह अपने व्यक्तित्व और विरल स्वभाव का आदर नहीं करती अपितु वह पुरुष के समीप आने के प्रयत्न में अचेतन योगदान देती है। वह तीव्र गति से पुरुष और उसका यंत्र बनती जा रही है।"

श्री आ.के. सिधवा (सी.पी. एवं बरार : सामान्य) : आधुनिक पुरुष के बारे में क्या कहा जाएगा?

श्री एच.वी. कामथ : मुझे आशा है कि हमारी महिलाएं इस बात को हृदयंगम् कर लेंगी और वे पुरुष की समानता के लिए ऐसे उपायों को नहीं अपनाएंगी।

श्रीमती एनी मेसकेरीन (ट्रावनकोर रियासत) : मैं यह प्रश्न पूछ सकती हूँ कि क्या आधुनिक पुरुष किसी भी प्रकार से उनसे बेहत्तर है?

श्री एच.वी. कामथ : यह महिलाओं के लिए उत्तर देने का है।

महाशय, जब मैं पुरुष और महिला के समानता की बात करता हूँ, तो मेरे सामने सीता, सावित्री, दमयंती, गार्गी, मैत्रेयी और उभय भारती जैसे ऐतिहासिक उदाहरण हैं। क्या आप अनुमति देंगे कि इन महिलाओं के बारे में अपने प्राचीन इतिहास से उल्लेख करने का कि इन महिलाओं ने हमारे प्राचीन वैदिक काल में कैसा उत्तम स्थान बना लिया था और अब बाद में भी, इस हिंदू संहिता के हमारे विरोधी उन पर निर्भर हैं। यह कहा जाता है कि वैदिक और उपनिषद्-काल में महिलाओं ने समाज में काफी ऊंचा स्थान प्राप्त कर लिया था। उपनिषद काल की विरली महिलाओं में मैत्रेयी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनकी आध्यात्मिक प्रबुद्धता का प्रकाश आज भी विश्व में व्याप्त है। केवल बौद्धिक कुशाग्रता के कारण दो महिलाएं विरल बुद्धिमता में आगे रही हैं। उसके काल में एक अखिल भारतीय धार्मिक सम्मेलन का आयोजन किया गया था। इस देश की परम्परा रही है कि इन सम्मेलनों में सब तरह की चीजें होती हैं और धार्मिक सम्मेलन भी अपवाद नहीं थे– तदनुसार एक अखिल भारतीय धार्मिक सम्मेलन का आयोजन प्रागैतिहासिक काल में तथा दूसरे अखिल भारतीय धार्मिक सम्मेलन का आयोजन बौद्धकाल के उपरान्त भी किया गया। इन सम्मेलनों का आयोजन बौद्धिक या अकादमिक बहस के लिए नहीं किया गया था, अपितु ऐसे सिद्धांतों की स्थापना के लिए किया गया, जो देश के आध्यात्मिक जीवन को शासित करें। पहला सम्मेलन मुनि याज्ञवल्य द्वारा आयोजित किया गया था, जो हमारे विधिवेत्ता थे तथा दूसरा सम्मेलन गुरु शंकराचार्य द्वारा आयोजित किया गया था। पहला सम्मेलन याज्ञवल्य का सम्मेलन का संचालन राजा जनक ने किया था। महान जनक, कर्मयोगी, उसमें जब भारत के सभी क्षेत्रों से ऋषि-मुनि एकत्र हुए थे। कश्मीर से कन्याकुमारी तक और मेरा अनुमान है कि खैबर से चेरापुंजी तक चुप हो गए थे, जब गार्गी उठी थी। महिलाओं की तरफ से दबे-कुचलों की बात रखने। श्रीमान, यह वह आदर्श है जिसके लिए हमारी महिलाओं को प्रगतिशील बनना है और मुझे आशा है कि वे ऐसा करेंगी। गार्गी लम्बे वाद-विवाद में कड़ी टक्कर देने के बाद परास्त हो गईं।

दूसरे सम्मेलन में, अर्थात् शंकराचार्य सम्मेलन में सभापतित्व के गौरवपूर्ण कार्यभार का दायित्व मण्डल मिश्र की पत्नी उभय भारती ने निभाया। अब यह अधिक महत्वपूर्ण है–और मैं चाहूँगा कि मेरी महिला मित्र इस पर ध्यान दें कि विश्व के इतिहास में ऐसी महिला का एक भी उदाहरण नहीं है, महिला को इतने महत्वपूर्ण सम्मेलन के

लिए न्यायाधीश चुना गया हो तथा जिसने अपनी बौद्धिक क्षमता तथा निष्ठा के बारे में इतना विरल योगदान किया हो। उन्होंने अर्थात् उभय भारती ने शंकराचार्य के पक्ष में अपना अभिमत दिया। (**माननीय सदस्य:** वाह-वाह।) इसके परिणामस्वरूप उनके पति सन्यासी बन गए तथा उनके प्रतिद्वन्दी के शिष्य हो गए। इसके बाद उनके विचार देश के परमोच्च सिद्धांत के रूप में स्वीकार किए गए। भारत की सांस्कृतिक विरासत 'कलचरल हैरीटेज ऑफ इंडिया', रामकृष्ण मिशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक में लेखक का कहना है कि यह कथन मूल लेखकों का नहीं है। इन शब्दों पर ध्यान दिया जाए कि यह कथन मूल लेखकों का नहीं है। सर्जनात्मक विचारकों के मुक्त विचारों के साथ, कृत्रिम विचार वाले समीक्षकों के साथ टीकाकारों, स्मृतिकारों ने नहीं, अपितु वे जिन्होंने टीकाएं लिखीं, जिन्होंने महिलाओं के अधिकारों के दमन के लिए लिखा और जिनके लिए उन्होंने उपेक्षा और भ्रम के साथ कठोर रूप में यह बात स्वीकार की और प्रचारित की।

श्रीमान, अब हमारे अधिकांश मित्र जो इस विधिकरण का विरोध कर रहे हैं, यहाँ मेरा आशय इस सदन से है, परन्तु जो सदन से बाहर हैं, वे धर्म के नाम पर डटे हुए हैं। उस दिन मैंने यह प्रश्न उठाया था, "धर्म क्या है?" हिंदू संहिता समिति के विरोधियों द्वारा बांटें गए, पैम्फलेटों में से एक पैम्फलेट में हमें कुछ परामर्श दिया गया है और वह क्या है? वे एक पुराने श्लोक को उद्धृत करते हैं। मैं सही तौर पर याद नहीं कर पाता कि यह कहां पर आता है, परन्तु पंचतंत्र में इसको उदधृत किया गया है–**'नस सभा यत्र न सन्ति वृद्धः वृद्धन्ते पे न वदन्ति धर्मम्'**, जिसका अर्थ है–"वह न तो सभा है, न विधानसभा, जहां वृद्ध न हों।"

एक मान्य सदस्य : किंतु इस सदन में अनेक वृद्ध व्यक्ति उपस्थित हैं।

श्री एच.वी. कामथ : वह व्यक्ति वृद्ध नहीं है, जो धर्म की बात नहीं करता। श्रीमान, मुझे खेद है कि हिंदू संहिता समिति के विरोधी हमारे मित्रों ने वृद्ध का सही अर्थ नहीं समझा है- वृद्ध कौन है और वृद्ध कौन नहीं है। महाभारत में एक कहानी है। सारस्वत मुनि बारह वर्ष के युवा थे जब देश में अकाल पड़ गया और सभी वृद्ध ऋषि जो सरस्वती नदी के किनारे प्रायश्चित के लिए उपवास कर रहे थे, वे अपने जीवन को बचाने के लिए भाग खड़े हुए। वे अपना जीवन बचाना चाहते थे। उस समय वह युवा लड़का अपनी जगह खड़ा रहा और उसकी मां सरस्वति; और यही कारण है कि सरस्वती ने उसे प्रातः मछलियां, दोपहर को मछलियां और रात को भी मछलियां खिलाईं और यही कारण है कि सारस्वत ब्राह्मण आज भी मछली खाते हैं। यह ब्राह्मण लड़का अकाल होते हुए भी अपनी जगह खड़ा रहा। कहानी में यह बताया गया कि उस भूमि में कई वर्ष तक अकाल रहा, यानी बारह वर्षों तक अकाल रहा, परन्तु हमारा युवक सारस्वत मुनि, विश्व के सारस्वतों के जनक, अपने स्थान पर तब तक खड़े रहे, जब अकाल समाप्त हो गया। तो ऋषि जो अपना जीवन बचाने के लिए भाग गए थे, वे अल्प संख्या में एक के बाद एक करके लौट

आए और सरस्वती नदी के तट पर अपनी उस तपस्या के प्रारम्भ करने में फिर लग गए, जो अकाल द्वारा खंडित हो गई थी और उन्होंने इस 24 वर्षीय लड़के पर शासन करने का प्रयास किया। यह लड़का 12 वर्ष का था जब अकाल प्रारम्भ हुआ था और यह लड़का 24 वर्ष का हो गया, जब अकाल समाप्त हुआ। उन्होंने उस लड़के पर अधिकार जमाना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने कहा, तुम हमारे चरणों में बैठो, हमसे अनुदेश प्राप्त करो, हमसे शिक्षा ग्रहण करो, हमारे शिष्य हो। उस लड़के ने कहा, "तुम पर धिक्कार है, यह शर्म की बात है कि तुम अपने को मुनि, ऋषि और तपस्वी कहते हो और तुम अपने जीवन को बचाने के लिए भाग खड़े होते हो। तुम मृत्यु के डर से भागते हो, तुम्हें मेरे चरणों में बैठना है और मुझसे शिक्षा ग्रहण करनी है। इस प्रकार उस 24 वर्षीय लड़के ने 70 या 80 वर्ष के वृद्धों से कहा आगे महाभारत में कहा गया है:

"न तेन वृद्धों भवति येनस्य पलितय शिरः
यो वै मूलत्यध्यनस्तं देवः स्थिपिरम स्वधुः।"

इसका अर्थ है–

'व्यक्ति वृद्ध नहीं होता यदि केवल उसके केश श्वेत हैं। यहां तक कि एक युवा लड़का जिसने अध्ययन किया है, देवताओं द्वारा 'बुद्धिमान पुरुष' माना जाता है।' वही व्यक्ति वृद्ध है जिसने 'वृद्धि' प्राप्त कर ली है। वस्तुतः वृद्ध शब्द को अशुद्ध रूप से अधिक आयु का कहा गया है। उसका अर्थ यह है कि जिस व्यक्ति ने 'वृद्धि' प्राप्त कर ली है। उसे ही बुद्धि, संवृद्धि, विकास अर्थात् 'वृद्धि' माना जा सकता है।''

"न स सभा यत्र न सन्ति वृद्धः
वृद्ध न ते पे न ववन्ति धर्यम्।"

मेरा विचारा है कि 'वृद्धि' या बुद्धिमता के अभिप्राय से यहां मेरे अनेक मित्र हैं, जो उस मानदण्ड पर खरे उतरेंगे। परन्तु हमारे कुछ मित्रों ने पूरे श्लोक को सारांश में उद्धृत करने से रोक दिया है। वे प्रारम्भ करते है कहकरः

"न स सभा यत्र न सन्ति वृद्धः
वृद्ध न ते मे न ववन्ति धर्मयो।"

परन्तु धर्म क्या है? श्लोक में आगे बताया गया है कि धर्म क्या है। ये भिन्न सुविधा के लिए श्लोक के इस भाग को छोड़ देते हैं। श्लोक में कहा गया है:–

धर्मः स न पत्र न सत्यंस्ति।

वहां धर्म नहीं है जहां सच नहीं है। इसलिए मेरा उन लोगों के साथ झगड़ा है, जो धर्म का सहारा लेते हैं परन्तु उन्होंने नहीं समझा है कि 'हिंदू धर्म' क्या है।

मैं पुनः आपको बाध्य करूंगा कि आप सदन को यह बताएं कि हमारे महान विद्वान और दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् इस विषय में क्या कहते हैं, विशेषकर 'हिंदू धर्म' के बारे में क्या कहते हैं। वे हमें बताते हैं:

"ऐसी कोई बात नहीं है जो हिंदुइज़्म को एकरूप, और अपरिवर्तनीय बनाता है, चाहे यह विश्वास अथवा व्यवहार की ही बात क्यों न हो। हिंदूवाद एक आंदोलन है; एक स्थिति नहीं है। यह एक प्रक्रिया है, परिणाम नहीं है। एक प्रगतिशील परम्परा है, वह स्थिर रहस्योद्घाटन नहीं है। इसका अतीत का इतिहास हमें यह विश्वास करने के लिए प्रोत्साहित करता है कि यह किसी भी आपात स्थिति के समान रूप से उपयुक्त होगा। यदि भविष्य चाहे वह विचार के क्षेत्र में ही क्यों न हो या इतिहास सामने लाता है।"

हमें इस बात से प्रसन्नता है कि यह भविष्यवाणी सत्य हो रही है। स्वामी विवेकानन्द ने पचास वर्ष पूर्व कहा था कि 'वेदांत' मानवता का धर्म होगा। वह वेदांत, जिसे हमारे मनीषियों, ऋषियों और मुनियों ने विश्व को दिया है। राधाकृष्णन् आगे लिखते हैं:–

"हम नई दृष्टि से अपने प्राचीन धर्म पर विचार कर रहे हैं। हम यह महसूस करते हैं कि हमारा समाज अस्थायी संतुलन की दशा में है। ऐसी काफी चीजें हैं जो मृत और रोगग्रस्त हैं, जिसको स्वच्छ किया जाना है।"

श्रीमान, मैं विश्वास करता हूँ कि हमारे अधिकांश मित्र अपने ही तरीके से हिंदू दर्शन और व्यवहार के भी नेता हैं। इसलिए मैं आश्वस्त हूँ कि–

"हिंदू दर्शन और व्यवहार के नेता इस बात से आश्वस्त हैं कि वे हिंदूवाद के आधारभूत सिद्धांतों से सहमत हैं, परन्तु अधिक जटिल और रोगग्रस्त सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकताओं के विशेष संदर्भ में उनकी पुनर्व्याख्या जरूरी है।"

उनका कहना है–

"यह प्रयास उस प्रक्रिया की केवल एक आवृत्ति होगी, जो हिंदूवाद के इतिहास में अनेक बार घटित हुई है। पुनर्समायोजन का कार्य प्रक्रियाबद्ध है। इसकी संवृद्धि मद्धिम है क्योंकि जड़ें गहरी हैं। परन्तु वे व्यक्ति जो अंधेरे में छोटी मोमबत्ती या छोटा दीप जलाते हैं, वे भी सम्पूर्ण आकाश को जगमग करने में सहायक होते हैं।"

मैं हिंदू धर्म से संबंधित इस वक्तव्य को अपने उन मित्रों को बताना चाहूँगा, जो इस विधेयक का विरोध करते हैं। यहां तक कि धर्म के कारण विधेयक को विचारार्थ भी प्रस्तुत नहीं करना चाहते। क्या वे नहीं जानते और क्या वे याद नहीं करते कि 'धर्म खतरे में है' अथवा 'समाज खतरे में है' की आवाज़ तब भी उठाई गई थी जब अतीत में किसी सुधार के प्रयत्न किए गए थे। क्या यह तथ्य नहीं है कि पच्चीस वर्ष पूर्व जब अस्पृश्यता के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ किया गया था, हमारे कुछ लोग यहां तक उच्च दकियानूसी हिंदुओं

ने कहा कि हिंदू खतरे में हैं, सामाजिक व्यवस्था खतरे में है और समाज में विशृंखलता बढ़ रही है? तब क्या हम अत्यावश्यक सुधारों के साथ नहीं थे? हमने समतावादी आधार पर हिंदू समाज के उद्धार को प्रोत्साहन देने में सहायता नहीं की? इन प्रयासों की पराकाष्ठा के रूप में ही नहीं हमने संविधान के मसौदे के एक अनुच्छेद में अस्पृश्यता के निवारण का उल्लेख किया है और उसे किसी दशा या रूप में अवैध घोषित किया है। यदि हम ऐसा कुछ कर सके, हिंदू धर्म के बारे में दकियानूसी पंडितों द्वारा जो कुछ कहा जाता है, के बावजूद तो हमें ऐसा कोई भी कारण दिखाई नहीं देता कि हम सामाजिक संबंधों और व्यैक्तिक कानून की व्यवस्था न करें अथवा इस बारे में कानून न बनाएँ।

श्रीमान, माननीय सदस्य उस विरोध को याद करना चाहेंगे, जो शारदा ऐक्ट के विरुद्ध प्रारंभ किया गया था। जो बाल विवाह को निषिद्ध करता था इस आधार पर कि हिंदू धर्म तथा हिंदू समाज खतरे में बताए गए थे। गत शताब्दी में जब सती प्रथा, विधवा का पति के शवदाह के साथ जलाने को उन्मूलन करने के लिए कहा गया था, इन्हीं प्रतिक्रियावादियों ने जिन्होंने प्रगति का मार्ग अवरुद्ध कर दिया था यह कहकर कि हिंदू-धर्म ने सती प्रथा की स्वीकृति दी है तथा सती होने से महिलाओं को परम् मुक्ति मिल जाती है, इसलिए यह प्रथा जारी रखनी चाहिए। उनके विद्रोह तथा अवरोध के बावजूद, अति आवश्यक सुधार स्वीकार किए गए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव ने उस दिन कहा था कि यह विधेयक ग्रामीण जनता के समीप नहीं पहुंचा था और अनपढ़ों या ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों ने इस विधेयक को पढ़ा नहीं है और इस पर विचार नहीं किया है। उन्होंने उस विधेयक के बारे में सदन में विचार करने से पूर्व, उनकी प्रतिक्रियाओं को जानने की चिन्ता व्यक्त की है। जब उन्होंने यह कहा था, तब वह यह तथ्य भूल गए कि उन्होंने जो विधेयक प्रस्तुत किए थे वे विधेयक उनके अपने हिसार के किसानों ने नहीं देखे थे। मुझे आश्चर्य है यदि यही उनका परामर्श है, तो हमें देश के प्रत्येक गांव, पुरवा-पल्ली तथा वासभूमि में इस विधेयक की प्रतियां परिचालित करनी होंगी।

श्री महावीर त्यागी (यू.पी. : सामान्य) : इन दिनों किसान नहीं गिने जाते।

श्री एच.वी. कामथ : मैं श्री त्यागी से यह सुनकर आश्चर्यचकित हूँ कि किसानों को इन दिनों गिना नहीं जाता। यदि वे नहीं गिने जाते, तो कौन गिना जाता है?

माननीय सदस्यगण : आप।

श्री एच.वी. कामथ : मैं वस्तुत: इस प्रशंसा के लिए आभारी हूँ। श्रीमान, मैं आशा करता हूँ कि निकट भविष्य में न केवल मैं, अपितु इस सदन से मेरे सभी मित्र मेरे समान ही गिने जाएंगे। श्रीमान, पंडित ठाकुर दास भार्गव ने जो विशेष टिप्पणियां की हैं, उनके प्रति मेरी सहानुभूति है। पर मैं यह नहीं सोचता कि हिंदू संहिता विधेयक का इस आधार

पर विरोध करना, किसी भी जांच के लायक है कि इस विधेयक का परिचालन अथवा प्रकाशन, प्रभावित व्यक्तियों के लिए नहीं किया गया है। यह दलील नितांत अमान्य है। इस तरीके से तो प्रत्येक विधेयक को जिसे यहां पारित किया जाना है और जो लाखों लोगों के जीवन को प्रभावित करता है। उन लोगों के पास भेजना होगा, ताकि वे अपनी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति दे सकें।

श्रीमान, मुझे आशा है कि अब संतोषजनक रूप से मैंने इस विक्षुब्ध करने वाले समानता के प्रश्न का समाधान कर दिया है। श्रीमान, पुरुष और महिलाएं आध्यात्मिक स्तर पर समान ही होती हैं। गीता, स्मृतियों और स्वयं श्री कृष्ण ने भी समानता का सिद्धान्त बताया है।

श्रीमान, सम्पत्ति के प्रश्न पर विचार करते समय यह कहना उपयुक्त है कि अधिकांश दार्शनिकों, राजनेताओं, सामाजिक कार्यकताओं तथा अन्य व्यक्तियों के अनुसार विश्व में सम्पत्ति सभी बुराइयों की जड़ है। इस संबंध में मैं सेठ गोविन्द दास द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ। वे इस समय सदन में नही हैं कि सर्वोत्तम उपाय यह होगा कि निजी सम्पत्ति का उन्मूलन कर दिया जाए। यहां तक कि मुकदमेबाजी भी काफी कम हो जाएगी, यदि ऐसा किया जाता है। हमारे सबसे महान कानून निर्माताओं में से एक कानून-निर्माता और प्राचीन काल में कुशल राजनीतिज्ञ, मनु अथवा याज्ञवल्कय नहीं, अपितु योद्धा राजनीतिज्ञ भीष्म पितामह ने महाभारत के दो पर्वों अर्थात् शान्ति पर्व और अनुशासनिक पर्व में अपने सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। वहां वे युधिष्ठर को सम्पत्ति के बारे में बतलाते हैं :

"नित्यो नित्योडिग्मोहि कनवन् मृत्योरस्य गतो यथो"

वे युधिष्ठर को बताते हैं कि उन्होंने अपने साम्राज्य और स्वैच्छिक गरीबी को तराजू पर तोला है। उनका कहना है कि अकिंचन की स्वैच्छिक गरीबी, सम्राज्य से कहीं अधिक भारी सिद्ध हुई है। उन्होंने कहा था, जिसे अंग्रेजी में इसके करीब होगा–'मुकुट धारण करने वाले का दिमांग अशांत रहता है।' व्यक्ति के पास सम्पत्ति है, तो वह मृत्यु से भयभीत रहता है।

मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के इस विचार से सहमत हूँ जब उन्होंने कहा कि पत्नी और पति को न केवल प्रेम में एक होना चाहिए अपितु संपत्ति में भी एक होना चाहिए। कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रेम ही उनकी सम्पत्ति होती है। यानि पति और पत्नी के पास कोई भी निजी सम्पत्ति नहीं होती, तब भी उनके पास केवल पारस्परिक प्रेम ही सम्पत्ति है। परन्तु श्रीमान, हमें आज के जीवन के यथार्थ का भी सामना करना चाहिए। फिर भी पंडित भार्गव के इस संबंध में व्यक्तिगत अनुभव जानकर अच्छा लगा। यह विश्व रहने के लिए आनन्ददायक है, यदि पंडित ठाकुर दास भार्गव और उनकी पत्नी के समान ही अन्य पुरुष और महिलाएं तथा पति और पत्नियां समान रूप से आनन्द में रहें। फिर भी आज सैंकड़ों ऐसे मामले हैं जिनमें पत्नी और पति के बीच सम्बंध वैसे

सुखद नहीं रह पाते जैसे कि होने चाहिए अथवा जैसा हम चाहते हैं। (हस्तक्षेप) श्रीमान, मैं ऐसे तथ्यों के आधार पर कह रहा हूँ जो मेरे माननीय मित्र श्री वी.दास ने बताए हैं और इस दिशा में अन्य मित्रों ने भी मेरा ज्ञानवर्धन किया है।

हमारा हिंदू संहिता विधेयक इस दिशा में यह व्यवस्था देता है कि किसी महिला को अपनी सम्पत्ति में पूर्ण स्वामीत्व का अधिकारी होना चाहिए। वैदिक काल और प्राचीन काल में भी जिनको हमारे धर्म और हिंदू संहिता विधेयक के विरोधी अपना आधार बनाए हुए हैं। स्थिति ऐसी ही थी। फिर मध्यकाल में ही ऐसा हुआ कि हिंदुइज्म का ह्रास हो गया था और तभी महिलाओं के सम्पत्ति के अधिकार भी प्रतिबंधित हो गए। इस तरह वैदिक काल में महिलाओं की सामाजिक स्थिति सामान्यतः उच्चस्तरीय थी।

माननीय अध्यक्ष : ऐसे और भी व्यक्ति हैं जो बोलना चाहते हैं। मैं माननीय सदस्य से अपील करता हूँ कि वे यथासंभव अपने भाषण को छोटा कर दें।

श्री एच.वी. कामथ : मैं संक्षेप में होने का प्रयत्न करूँगा, परन्तु मुझे भय है, यह विषय इतना बड़ा है कि संक्षिप्त भाषण करना कठिन काम है।

माननीय बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : श्री कामथ के लिए अनेक अवसर आएंगे जब अपना भाषण दे सकेंगे। कम से कम 130 धाराएं हैं।

श्री एच.वी. कामथ : परन्तु मैं नहीं चाहता कि आज कुछ बातें अनकही रह जाएं। मैं बता रहा था कि वैदिक काम में महिलाओं की सामाजिक स्थिति उच्च थी। अविवाहित पुत्री को अपने पिता की सम्पत्ति में भाग दिया जाता था तथा विवाहित पुत्री को कोई हिस्सा नहीं मिलता था, परन्तु उसे विवाह के समय बहुत दहेज दिया जाता था। इसलिए मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव के द्वारा प्रस्तुत दलील में मेरे विचार से इस पर सदन तथा माननीय विधि मंत्री द्वारा सहानुभूति पूर्वक विचार किया जाना चाहिए, क्योंकि मेरे द्वारा आधारभूत रूप से सम्पत्ति का विरोध किये जाने पर मैं नहीं सोचता कि सम्पत्ति की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक खराब बनाने से कुछ लाभ हो सकेगा जैसा कि आज है। डॉ. अम्बेडकर ने उस हिंदू परिवार की सम्पत्ति के बारे में उल्लेख किया है, जिसमें 12 बेटे और एक बेटी है। यह उनके लिए बहुत ठीक है कि उन्होंने यह उदाहरण दिया है, परन्तु क्या मैं एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत करूं जिसमें 12 बेटियां और एक बेटा है। क्या स्थिति होगी, जब जो आज की स्थिति में है हिंदू संहिता विधेयक इस मामले में लागू किया जाए? परिवार की सम्पत्ति को सभी बेटियों और एक बेटे में विभाजित करना होगा। बेटे को घर के एक छोटे-से कोने तक सीमित रह जाएगा और बेटियों के विवाह हो जाते हैं तो उन्हें अधिकार होगा कि वे अपने पतियों को ले आएँ और तब उन्हें अधिकार होगा कि वे घर के एक भाग को किसी अजनबी व्यक्ति के हाथ बेच दें। इस प्रकार अकेला बेटा छोटे-से चूहे के समान इधर-उधर रेंगता रहेगा और उसके

पास आराम से रहने के लिए कोना भी नहीं होगा। इसलिए श्रीमान, सम्पत्ति का प्रश्न अधिक विक्षुब्ध करने वाला प्रश्न है और हम यह विचार कर सकते हैं कि क्या बेटी को अपनी सम्पत्ति प्राप्त किये जाने के स्थान पर नकदी या आभूषणों के रूप में सम्पत्ति का अपना भाग लेने के लिए सहमत नहीं होगी, जैसा कि प्राचीनकाल और वैदिककाल में हुआ करता था। विवाह के समय बेटी का सम्पत्ति में कोई भाग नहीं हुआ करता था परन्तु सम्पत्ति के भाग के रूप में उसे पर्याप्त दहेज दिया जाता था।

इसके बाद विधानसभा भोजन के लिए ढाई बजे सायं तक स्थगित कर दी गई।

भोजन के बाद सायं ढाई बजे विधानसभा पुनः हुई।

माननीय अध्यक्ष (श्री एच.वी. कृष्णामूर्ति राव) विराजमान हुए

माननीय अध्यक्ष : बहस प्रारंभ करने से पूर्व मैं एक सुझाव प्रस्तुत करना चाहूँगा। इस समय सूची में 25 नाम हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण विधिकरण है और यथासंभव अधिकाधिक सदस्य इस संहिता पर अपने विचार व्यक्त करना चाहेंगे। इसलिए मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे यथासंभव संक्षिप्त भाषण करें और विधेयक के पक्ष अथवा विपक्ष में केवल संगत विचार ही प्रस्तुत करें।

बाबू एम. नारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : श्रीमान, मेरा नाम भी सूची में सम्मिलित कर लिया जाए।

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : मैं नहीं जानता था कि मुझे अपना नाम देना था। मैंने सोचा था कि मैं अध्यक्ष महोदय का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लूंगा।

माननीय अध्यक्ष : यही कारण है कि मैं माननीय सदस्यों से यह निवेदन कर रहा हूँ कि वे यथासंभव संक्षिप्त भाषण करें तथा विधेयक के पक्ष अथवा विपक्ष के मुख्य बिंदुओं की ओर ध्यान दिलाएं। जो सदस्य बोलना चाहते हैं, वे कृपया अपने नाम की पर्ची भेज दें।

जनाब तजामुल हुसेन (बिहार : मुस्लिम) : क्या मैं यह जान सकता हूँ, श्रीमान, कि मेरा नाम भाषण देने वालों की सूची में है? मैंने गत शुक्रवार को उपाध्यक्ष महोदय को इस बारे में बतलाया था।

माननीय अध्यक्ष : नई पर्ची भेजने में कोई दिक्कत नहीं है।

श्री एच.वी. कामथ : श्रीमान, मैं अपने छोटे-से भाषण को पुनः प्रारंभ करूं, इससे पूर्व आपको आश्वासन देता हूँ कि मैं अपेक्षाकृत कम समय लूँगा, मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव से जो उन्होंने लिया था।

माननीय अध्यक्ष : आपने पहले ही एक घंटा ले लिया है।

श्री एच.वी. कामथ : मैंने कहा, मेरे माननीय मित्र ठाकुर दास भार्गव ने जो समय लिया, उससे कम समय मैंने लिया है।

मैं सम्पत्ति के बारे में बोल रहा था। सम्पत्ति के आवंटन का आधार वह सिद्धांत था, जिसे शकुन्तला को विदाई देते समय, कण्व ने अभिव्यक्त किया था। कण्व ने कहा था–

"अर्थो हि कन्या परक्रिया ऐव तमद्या सम्प्रेश्य परिग्रहीता:

जातो ममायेम विश्व द: परकमम् प्रत्यर्पितरस्य-इवन तख्यो।"

प्रथम पंक्ति, 'अर्थों ही कन्या' का अर्थ यह नहीं है जैसाकि शब्द प्रति शब्द अनुवाद किया जाता है कि कन्या किसी अन्य की सम्पत्ति है। इसका अर्थ यह है कि कन्या अपने पिता के घर से अलग हो जाती है, जब उसका विवाह हो जाता है। यही वह आधार था जब वह दूसरे परिवार में चली जाती है। प्राचीन काल से तब वैदिक और बाद के काल में बेटी को सम्पत्ति में कोई भाग नहीं दिया जाता था, परन्तु प्रचुर मात्रा में दहेज दिया जाता था। इसके बाद वैदिक और स्मृति काल में जब पिता का कोई बेटा नहीं होता था, तब वह पिता अपनी बेटी को 'पुत्रिका' नियुक्त करता था और इस प्रकार वह बेटी-बेटे के समान मानी जाती थी। यही सिद्धांत अच्छी तरह विचारित किया जा सकता है, हमारे नए विधि निर्माताओं द्वारा यह प्रयास किया जा सकता है। इस सिद्धांत के सारतत्व को इस विधेयक में प्रतिष्ठापित करने।

मैं आशा करता हूँ कृषि-सम्पत्ति को पूर्णतया छोड़ दिया गया है जैसा कि पहले ही छोड़ दिया गया है जहां तक गवर्नर के प्रान्तों के संबंध है। मैं भाग VII, अध्याय I, धारा 94; का संदर्भ देना चाहता हूँ, जिसमें कहा गया है: 'यह भाग गवर्नर के प्रान्तों में कृषि-भूमि पर लागू नहीं किया जाएगा।' भूमि को टुकड़े-टुकड़े में बांटने को लेकर पहले ही हाहाकार मचा है। अत: हमें इस बारे में धीमी गति से कार्य करना चाहिए, ताकि इसमें और अधिक क्षोभ पैदा न हो सके। वास्तव में यदि सारी भूमि का राष्ट्रीकरण हो जाए तो कोई कठिनाई न हो। अत: जब तक यह प्रश्न ज्वलंत है तथा इस बारे में अन्तिम रूप से निर्णय नहीं किया जाता है। हम कृषि-भूमि को छोड़ने का निर्णय कर सकते हैं न केवल गवर्नर के प्रांतों पर अपितु केन्द्र शासित क्षेत्रों पर भी इस भाग के लागू होने का निर्णय न करें।

अब मैं उस बड़े प्रश्न का उल्लेख करूंगा, जिसने काफी समय से मानवता को विचलित कर रखा है। मेरा अभिप्राय, विवाह और तलाक है। इस प्रश्न पर एक सिद्धांत है जिसका हमें अनुसरण करना चाहिए। इस विषय पर विधान बनाकर स्वीकार किया जाना चाहिए, जो मेरे मस्तिष्क में है। 'विवाह सरल होना चाहिए परन्तु तलाक कठिन होना चाहिए।' मेरा विचार है कि यदि इस ठोस नियम को विवाह के लिए अपना लिया जाए, तो इससे हमारी अनेक कठिनाइयों का समाधान हो जाएगा।

सरदार भोपिन्दर सिंह मान (पूर्वी पंजाब : सिख) : आपके मामले में तो विवाह, तलाक की अपेक्षा ज्यादा कठिन है।

श्री एच.वी. कामथ : नियम के अपवाद सदैव होते हैं। मेरा अनुमान है कि मैं भी उनमें से एक हूँ।

यदि मुझे हाल ही के एक ऐतिहासिक उदाहरण को उद्धृत करने की अनुमति दी जाए कि जर्मनी में डेर फ्यूरेर हेर हिटलर, जब 1932 में चुनाव के लिए खड़े हुए थे, तो उनका एक नारा था–"जर्मनी के प्रत्येक नागरिक को रोजगार दिया जाएगा तथा जर्मनी की प्रत्येक महिला को पति दिलाया जाएगा।" मेरा विचार है कि इस नारे से उन्हें लाखों महिलाओं के मत प्राप्त हुए क्योंकि उन्होंने प्रत्येक जर्मनी की महिला के लिए पति दिलाने का वचन दिया था। यह उसी सिद्धांत को सिद्ध करता है जो मैंने आपके समक्ष प्रस्तुत कर दिया है कि विवाह सरलता से किया जाए, जबकि तलाक में कठिनाई हो। मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने उस दिन कहा था, जब वह इस विषय पर बोल रहे थे कि हमारे देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग प्रथाएं और रिवाज हैं, जिनके अनुसार 'तलाक' प्रभावी माने जाते हैं। मुझे बताया गया है कि एक सबसे सरल रिवाज है जिनके अनुसार पुरुष कहता है, 'तलाक' और वही शब्द तीन बार दोहराता है। इस तरह पत्नी को तलाक दे दिया जाता है। ऐसा ही रिवाज है अथवा कुछ अन्य प्रथाएं हैं। मैं नहीं जानता, इसलिए मैंने कहा, मुझसे कहा गया पर मैं व्यक्तिगत रूप से सोचता हूँ कि तलाक की प्रक्रिया को सरल नहीं होना चाहिए। एक आधुनिक देश, सोवियत रूस ने शताब्दी के प्रारंभिक बीस वर्षों में विवाह और तलाक दोनों को सरल बना दिया था। परन्तु उन्होंने अनुभव से यह सीखा कि परिवार सामाजिक इकाई के रूप में सशक्त और सुरक्षित रखा जाना चाहिए। साम्यवादी देश में अब वहां और इसलिए विवाह सरल है किन्तु तलाक लगभग असंभव है। इसलिए मेरा विचार है, यद्यपि मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के विचार से कितना ही सहमत क्यों न रहूँ परन्तु कुछ रिवाज और प्रथाओं को मान्यता दी जानी चाहिए तथा उन्हें जीवित रखना चाहिए। तलाक का संबंध है, मेरे विचार से उसमें जो प्रक्रिया अपनाई जाए, वह कठिन होनी चाहिए, ताकि परिवार सामाजिक इकाई के रूप में सशक्त और सुरक्षित रह सके।

एक और सुझाव है, जिसे मैं इस विषय में बताना चाहूँगा। श्रीमान, ऐसे भी उदाहरण हैं जहां कुछ कारणों से विवाह का विच्छेद वांछनीय नहीं माना जाता, अथवा पति-पत्नी में से किसी एक के द्वारा इस बारे में सहमति नहीं दी जाती। ऐसे मामलों में, जहां पत्नी इस बात से सहमत हो कि पति दूसरी स्त्री से विवाह कर सकता है, चाहे दूसरी पत्नी उसी घर में हो अथवा दूसरे घर में रहे। मैं नहीं देखता कि इसमें कोई कारण है, उनके होते हुए यहां कुछ कारण बताए गए हैं कि ऐसी स्थिति में पति और पत्नी में से किसी को भी विवाह-विच्छेद के बिना विवाह करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। जबकि दूसरे पक्ष को सहमति हो। दिल्ली में मैं एक लब्ध प्रतिष्ठ व्यक्ति को जानता हूँ जो एक साथ कई पत्नियों को रखता है और शायद अलग-अलग घरों में रखता है।

एक माननीय सदस्य : वह कौन हैं?

श्री एच.वी. कामथ : यहां किसी का नाम नहीं बताया।

जनाब तजामुल हुसेन : मैं समझ नहीं पाया–क्या मेरे मित्र बहुविवाह प्रथा से सहमत हैं?

श्री एच.वी. कामथ : मैं केवल यह कहूँगा…

जनाब तजामुल हुसेन : सिर्फ एक विवाहिता पुरुष ही ऐसा कह सकता है।

श्री एच.वी. कामथ : कभी-कभी, जब एक दम्पत्ति अधिक समय तक विवाहित रहता है, उसका हिंदू-मन अपनी पत्नी से विवाह का संबंध-विच्छेद करने का समझौता नहीं कर पाता, चाहे विवाह का उद्देश्य ही विफल क्यों न होने लगे। इसलिए प्रेम और मानवता की दृष्टि से नई संहिता में इस प्रकार की व्याख्या मेरी सोच के अनुसार की जानी चाहिए कि ऐसी स्थिति आने पर पति को अपनी पत्नी से यह अनुमति मिलनी चाहिए कि वह दूसरा विवाह कर ले और यदि पत्नी इस प्रकार की अनुमति दे देती है, तो न्यायालय को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। परन्तु विवाह का आदर्श जैसा कि पंडित ठाकुर दास भार्गव ने बताया है, सम्पत्ति और प्रेम की दृष्टि से एक समान होना चाहिए। मैं इससे आगे भी कहना चाहूँगा कि मस्तिष्क दो हों परन्तु विचार एक हो। दो दिल हों परन्तु धड़कन एक हो।

श्रीमती हंसा मेहता (बम्बई : सामान्य) : किंतु बहुविवाह में तो दो हृदयों से अधिक हृदय होंगे।

श्री एच.वी. कामथ : मैं बहुपति विवाह का विरोधी नहीं हूँ, यदि पति वैसा करने पर एतराज़ न करें।

श्रीमती पूर्णिया बनर्जी : बहुत उदार हैं आप!

श्री एच.वी. कामथ : मैं समानता के सिद्धांत के आधार पर ऐसे विचार रखता हूँ और मैं पुरुष और महिला दोनों के लिए ही अन्तिम सीमा तक जाता हूँ। यह हमारे इतिहास की खेदजनक घटनाएं या परिवर्तन हैं कि हमारे दीर्घकालीन और प्राचीन हिंदू इतिहास में हमारी महिलाओं ने आर्य युग, वैदिक काल, उपनिषद् काल और स्मृतिकाल में जिन अधिकारों का उपयोग किया था वे सभी अधिकार उनसे छीन लिए गए तथा बाद में मध्यकाल में इन्हें अप्रभावी कर दिया गया। मुझे आशा है कि यह संहिता इस प्रकार कार्य करेगी कि जिन महिलाओं का स्वर्ग मध्यकालीन युग के अन्धकार में विलुप्त हो गया है, वह उन्हें पुन: आधुनिक युग में प्राप्त हो सकेगा।

मुझे बाहर से एक मित्र द्वारा चेतावनी मिली है, जिसमें कहा गया है कि ईश्वर के

नाम पर, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के नाम पर, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के नाम पर, कृपया इस विधेयक पर अपना मत न दें। मैं सोचता हूँ कि यही तर्क विधेयक के पक्ष में मत देने के लिए पर्याप्त है। मैं कह सकता हूँ"

श्री बी.एल. सोधी (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : वह मित्र पुरुष है अथवा महिला?

श्री एच.वी. कामथ : मैं यह कहता हूँ, मैं कहने का साहस रखता हूँ कि ईश्वर के नाम पर जिसने पुरुष और महिला को समान बनाया है; राष्ट्रपति महात्मा गांधी के नाम पर जो पुरुष और महिला की पूर्ण समानता के लिए लड़ते रहे; नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के नाम पर जो पुरुष और महिला की पूर्ण मुक्ति के लिए कार्य करते रहे तथा आवश्यकता पड़ने पर महिलाओं को युद्ध में लड़ने के लिए भी बुलाया, उसी ईश्वर के नाम पर, गांधी के नाम पर, सुभाष के नाम पर मैं समझता हूँ कि यह विधिकरण आगे ले जाने वाला उपाय है। और यह हिंदू समाज के गौरव को बढ़ाएगा।

अब मुझे केवल एक टिप्पणी करनी है। मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने उस दिन अपने भाषण में कहा था कि या तो बार-बार मरम्मत करो अथवा नष्ट हो जाने दो। हमें मरम्मत करनी है। वास्तव में हम मरम्मत कर रहे हैं, इसलिए अब अच्छा समय समीप है। यदि हम मरम्मत नहीं करते, तो समाज दो भागों में विभाजित हो जाएगा। समय पर मरम्मत करने से सदैव बचत होगी; अन्यथा खर्च बढ़ता ही जाएगा और समाज दो टुकड़ों में बंट जाएगा।

श्रीमान, मैंने शुक्रवार को अपना भाषण शुरू किया था, वह दिन महाशिवरात्रि से पूर्व का दिन था, और मैं महाशिवरात्रि के दिन के बाद संक्षेप में अपने भाषण का समापन कर रहा हूँ। यह दिन इस युग की महान महिला महासती मां कस्तूरबा और महामानव, स्वामी दयानन्द सरस्वती की स्मृति में पवित्र दिन है। मुझे आशा है कि उनीक आत्माएं, मां कस्तूरबा और स्वामी दयानन्द सरस्वती की आत्माएं, हमें हमारे कार्य में प्रेरणा देंगी और हमारे कठिन कार्यों में हमारी सहायता करेंगी। यह मेरी आशा है और ईश्वर से प्रार्थना है कि पुरुष और महिला जीवन की तीर्थयात्रा में साथ-साथ यात्रा करें। खुद को समर्पित करते हुए अर्थ तथा काम की प्राप्ति में अपने जीवन को अर्पित कर दें। अर्थ और काम, धर्म में जड़ें जमाए हुए हैं तथा वे मोक्ष के लक्ष्य तक पहुंचाते हैं और बंधनों से मुक्ति दिलाते हैं एवं हम ईश्वर के सहारे जीवित हैं तथा गतिशील हैं और उसी के सहारे हमारा अस्तित्व है। अतः हम सभी पुरुष, सभी महिलाएं और सभी जीव समान, स्वतंत्र और ईश्वरीय शक्ति से ओत-प्रोत हैं।

हरिओउम् तत्सत्। ब्रह्मार्पणमस्तु।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : क्या मैं यह कह सकता हूँ कि मैं अब पुरावशेषों के समान होता जा रहा हूँ। मैंने मूल प्रस्ताव के विरोध का कार्य

स्वीकार किया है, पर मैंने अभी तक इस बारे में कुछ भी नहीं कहा है। यह भी हो सकता है कि किसी समय पर मैं धाकियाकर निकाल दिया जाऊँ। अभी अनेक वक्ता आने वाले हैं और मैं समझता हूँ कि कल चार बजे इस प्रस्ताव का समापन हो जाएगा।

माननीय अध्यक्ष : यह असंभव है कि श्री नजीरुद्दीन अहमद को धकियाकर निकाल दिया जाए। माननीय सदस्य को अवसर अवश्य मिलेगा। अभी श्री झुनझुनवाला।

श्री बी.पी. झुनझुनवाला (बिहार : सामान्य) : मैं किसी अन्य समय पर बोलना चाहूँगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : वे या तो तुरंत भाषण दें या फिर दें। किंतु नियमों के अनुसार, यदि किसी सदस्य से बोलने के लिए कहा जाता है, तो उसे अवश्य बोलना चाहिए। अन्यथा वह उस विषय पर बोलने का अवसर खो देता है।

माननीय अध्यक्ष : बाबू रामनारायण सिंह।

बाबू रामनारायण सिंह : मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। अध्यक्ष महोदय, आपने आज मुझे कृपापूर्वक उस अप्रिय विधेयक का विरोध करने का अवसर प्रदान किया है, जो इस सदन में विचार-विमर्श के लिए प्रस्तुत है। श्रीमान, सर्वप्रथम मैं इस सदन को बताना चाहूँगा कि मैं दकियानूसी नहीं हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आप दकियानूसी नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि आप नहीं हैं।

***बाबू रामनारायण सिंह :** मैं उन व्यक्तियों में से एक हूँ, जो चाहते हैं कि पुराने रिवाज़ों को बिना देर किए खत्म कर दिया जाए। परन्तु ऐसा कार्य बुद्धिमत्ता से किया जाना चाहिए। जब कोई कार्य किया जाता है तो बुद्धि की यह मांग है कि हमें जांचा-परखा जाना चाहिए कि कब क्या किया जाए और कैसे किया जाए। मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बडेकर का प्रशंसक हूँ और मैं महसूस करता हूँ कि वे देश के गौरव हैं। मेरे लिए भी वे गौरव के पात्र हैं। परन्तु मैं यह नहीं समझता कि ऐसा विद्वान व्यक्ति ऐसे व्यर्थ और विनाशक कार्य में क्यों लगा है। श्रीमान, यह सरकारी विधिकरण है। मैं नहीं जानता कि लोग कानून को क्या समझते हैं। कानून कुछ भी नहीं है, यह लोगों की इच्छा है जो कानून द्वारा व्यक्त होता है। मुझे क्षमा करें, सरकार नहीं समझती कि कानून क्या है? मैं कहता हूँ कि इस देश के अधिकांश लोग यह महसूस करते हैं कि यह विधिकरण सदन के समक्ष नहीं आना चाहिए था।

एक माननीय सदस्य : नहीं, क्यों?

---

*सीए. (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 28 फरवरी, 1949, पृष्ठ 950-53

बाबू रामनारायण सिंह : जनमत संग्रह करा लिया जाए और आपको पता लग जाएगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : हम यहां उन्हीं के प्रतिनिधि हैं।

बाबू रामनारायण सिंह : प्रत्यक्ष रूप से ऐसा लगता है कि हिंदू संहिता विधेयक एक विधिकरण है और इस सदन में इस पर बहस की जा रही है। परन्तु तथ्य यह है कि एक साजिश की जा रही है कि हिन्दू समाज को तोड़ने की। मैं महसूस करता हूँ कि यह ऐसी तैयारी है जो हिंदू समाज पर आक्रमण करना चाहती है। यह कोई भी नहीं बता सकता कि यह हिंदू समाज कितने समय तक विपरीत स्थितियों में भी जीवित रहा और सम्पन्न हुआ। मैं यह कह सकता हूँ कि विश्व के सृजन के समय से, सूर्य और चंद्रमा के सृजन समय से, मानव जाति के सृजन समय से, हिंदू-समाज जीवित रहा है और समृद्ध हुआ है। इन सभी कालों में हिंदू-समाज के विरुद्ध सभी प्रकार के आक्रमण हुए हैं। सर्वप्रथम बुद्ध आये। एक समय ऐसा लगा कि हिंदू समाज नहीं रहेगा, परन्तु विश्व गुरु शंकराचार्य आए और उन्होंने इस देश से बौद्ध धर्म को निकाल बाहर किया तथा हिंदू-समाज की पुनः स्थापना की। इसके बाद इस्लाम धर्म आया। वह भी बौद्ध धर्म जैसा ही आक्रमण था वह सैन्य कार्रवाई भी थी। लेकिन मुझे यह कहना है कि वह धर्म भी इस देश में असफल रहा…

डॉ. मॉन मोहन दास (पश्चिम बंगाल) : इस्लाम रक्षक बन गया है और आपने इस्लाम के संरक्षण को स्वीकार कर लिया है।

बाबू रामनारायण सिंह : इस्लाम रक्षक नहीं बन सकता, बल्कि इस्लाम इस देश में असफल हो गया। इस्लाम के अनुसार, कुरान में कोई जातिगत प्रथा नहीं है, परन्तु वहां इस्लाम के अनुयायियों में भी किसी न किसी प्रकार की जाति-प्रथा पनप गई। इसी प्रकार जैनधर्म, सिख धर्म सभी धर्म आये और मूलतः ये सब हिंदुत्व के विरुद्ध आक्रमण थे परन्तु समय के साथ वे सहिष्णु हो गए और हिंदू समाज के साथ-साथ विकसित और समृद्ध होने लगे। इस बार यह एक प्रकार का आक्रमण ही है। यद्यपि यह आक्रमण जनतांत्रिक है, किंतु इसके पीछे जो शक्ति है, वह तानाशाही जैसी है।

मेरे कुछ मित्रों ने पहले ही कहा है कि इस विधिकरण को कानून बनाने के लिए इस सदन के अधिकारों के बारे में बहस हो चुकी है। यह सत्य है और मैं आश्वस्त हूँ कि यह सदन सक्षम नहीं है कि इस प्रकार का विधिकरण किया जाए। यह संवैधानिक सभा ही नहीं है…

एक माननीय सदस्य : फिर यह क्या है?

बाबू रामनारायण सिंह : यह संवैधानिक सभा का एक भाग है। इस सदन के कई सदस्यों से व्यवस्था अथवा परम्परा द्वारा यह कहा गया है कि वे इस विधानसभा में उपस्थित न हों…

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : इस मामले में यह सदन प्रत्यक्ष रूप से संबंधित नहीं है। अध्यक्ष ने पहले ही कहा है कि यह मामला सदन के लिए नहीं है।

बाबू रामनारायण सिंह : अध्यक्ष का विनिर्णय कुछ भी क्यों न हो, मैं उसके विरोध में कुछ भी नहीं कह रहा। मैं अध्यक्ष के विनिर्णय के समक्ष नतमस्तक हूँ, परन्तु मैं इस सदन के इस विधिकरण को कानून बनाने की क्षमता अथवा प्राधिकार के संबंध में पूरे विश्व से कहने हेतु कृतसंकल्प हूँ। देश ने इस विधानसभा को विशेषाधिकार दिया है कि वह देश के संविधान का निर्माण करे। परन्तु जब तक यह संविधान पूरा नहीं हो जाता अथवा कार्यशील नहीं हो जाता, तब तक सरकार अपना कार्य करती रहेगी। विदेशी शासकों के साथ खिचड़ी जैसा समझौता किया गया था कि यह व्यवस्था इसलिए की गई है कि इस देश के प्रशासन के लिए आवश्यक बजट और अन्य महत्वपूर्ण कानून इस सदन के द्वारा पारित किए जाएं। परन्तु जिस विधिकरण के विरुद्ध देश भर में काफी शोरगुल है, उस विधेयक को इस सदन के समक्ष बहस करने अथवा कानून बनाने के लिए नहीं लाना चाहिए।

जब मैं पुरुष के समान नारी की समानता के बारे में इस सदन के भीतर या बाहर शोर सुनता हूँ, तो मैं यह समझने में असफल रहता हूँ कि…

जनाब तजामुल हुसैन : क्या मैं माननीय सदस्य से यह पूछ सकता हूँ कि उन्होंने उस समिति की सदस्यता क्यों स्वीकार की, जब वे इस माननीय सदन की संरचना के विरोधी हैं।

बाबू रामनारायण सिंह : ऐसे अनेक लोग हैं जो उलझन में हैं। यह प्रवर समिति को भेजा गया था। इसका अर्थ यह है कि इस सदन ने विधिकरण के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि इस विधिकरण को प्रत्येक सदस्य ने स्वीकार कर लिया है अथवा विधिकरण के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है। इस विधिकरण में कई सिद्धांत निहित हैं, परन्तु जहां तक इस सदन का संबंध है कोई भी नहीं कह सकता कि सदन ने यह या सभी उपाय स्वीकार कर लिए हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : अगर यह प्रवर समिति के पास भेजा गया था, तो इसका मतलब है कि समिति ने सभी सिद्धांत स्वीकार कर लिए हैं।

बाबू राम नामायण सिंह : मैं पुरुष और महिला की समानता के बारे में बात कर रहा था। हमारे शास्त्रों के अनुसार, पुरुष पूर्ण नहीं है और महिला भी पूर्ण नहीं है। हमारे शास्त्रों के अनुसार महिला को अर्धांगिनी कहा जाता है और इसीलिए आदमी भी पूर्ण नहीं है।…

एक माननीय सदस्य : आदमी को क्या कहा जाता है?

बाबू रामनारायण सिंह : आदमी भी आधा है। मैं आपको बता सकता हूँ…

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : श्रीमान, इस सदन में बोलना असंभव है। जब माननीय सदस्य ऐसे महत्वपूर्ण विधिकरण पर भाषण दे रहे हैं, तो उस पर असंख्य आलोचनाएं हो रही हैं, साथ टिप्पणियां की जा रही हैं। इसके साथ ही हंसी-मजाक भी चल रहे हैं। यह इस सदन की गरिमा के अनुकूल नहीं है। जो सदस्य, भाषण देना पसंद नहीं करते, वे शान्त रह सकते हैं, ताकि वे व्यक्ति सुन सकें, जो भाषण सुनना चाहते हैं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य कृपया वक्ता को अपनी बात कहने दें।

बाबू रामनारायण सिंह : श्रीमान मैं धन्यवाद देता हूँ कि मेरे माननीय मित्र पंडित मैत्रेय का जिन्होंने मुझे प्रोत्साहन किया है। मैं समानता के बारे में बात कर रहा था। जहां तक विश्व के उद्देश्यों का प्रश्न है, तथा जहां तक मानव-जाति की निरंतरता का प्रश्न है, वहाँ पुरुष और महिला में समानता अथवा अपमानता का प्रश्न नहीं उठता। कोई भी व्यक्ति हाथ से पैर की तुलना नहीं कर सकता कि क्या हाथ अधिक उपयोगी नहीं हैं अथवा पैर अधिक उपयोगी है। क्या यह आंख उस आंख की तुलना में अधिक उपयोगी है? पुरुष और महिला एक हैं और वे एक से ज्यादा कुछ नहीं हैं। जहां तक कानून का संबंध है, मैं देश भर में अपनी सभी बहनों से कहना चाहता हूँ कि कानून उनकी सहायता नहीं कर सकता। ऐसी क्या वस्तु है, जो प्रत्येक व्यक्ति को लाभ पहुंचाए और विशेषकर महिलाओं को लाभ पहुंचाए? वह प्रेम है और प्रेम के सिवाय ऐसा कुछ भी नहीं हैं जो उन्हें आनन्द दे सके। यह ठीक है, उन्हें तलाक का अधिकार मिल सकता है। आज एक महिला को तलाक मिल सकता है, तो अगले दिन दूसरी महिला का विवाह हो सकता है। एक पत्नीत्व का अर्थ है, एक बार विवाह होना। अतः आप पुरुष को दूसरी पत्नी से विवाह करने की अनुमति नहीं देंगे। यदि पहली पत्नी का तलाक हो जाएगा तो वह पति दूसरे ही दिन अपना दूसरा विवाह कर सकता है। फिर तीसरे ही दिन वह पति उस पत्नी को भी तलाक दे देगा और चौथे दिन वह फिर विवाह कर लेगा। यह प्रक्रिया जारी रहेगी। जहां तक शुद्ध प्रेम का संबंध है, मेरे विचार से लोगों का चरित्र सबसे महत्वपूर्ण है। हमें यह महसूस करना चाहिए कि इस देश में लोगों ने सर्वप्रथम अपना चरित्र खो दिया और उसके बाद में अन्य सब कुछ। अत: हमें इस मामले में अगर कुछ कहना है, तो हमें अपने चरित्र को बचाना है। जैसा मैंने कहा था कि हाथ के महत्व की पैरों के महत्व से तुलना नहीं की जा सकती। उसी प्रकार पुरुष के महत्व की तुलना महिला के महत्व से नहीं की जा सकती। मैं एक बात अवश्य कह सकता हूँ। हमारे शास्त्रों के अनुसार महिलाएँ देवी-लक्ष्मी हैं, हमारे समाज में महिलाओं को लक्ष्मी, सरस्वती, गृहलक्ष्मी भी कहते हैं। वे सब कुछ हैं। यदि मैं पुरुष और महिला की तुलना करूं, तो मैं कह सकता हूँ कि विश्व में पुरुष की तुलना में महिलाएं अधिक महत्वपूर्ण हैं। मैं इसे और स्पष्ट कर सकता हूं। यदि हम सभी पुरुषों को इस विषय से हटा दें अथवा

मार दें तो भी यह विश्व चलता रहेगा। (**माननीय सदस्य :** एक पुरुष छोड़कर)। एक भी पुरुष नहीं। जी हाँ, मैं कहता हूँ कि यदि विश्व में सभी पुरुषों को मार दिया जाए, फिर भी यह विश्व चलता रहेगा तथा मानव जाति बनी रहेगी। (**माननीय सदस्य :** प्रश्न)। मैं इसका स्पष्टीकरण दे सकता हूँ। यहां मेरे कई मित्र हैं जो मेरे वक्तव्य पर प्रश्न करते हैं। श्रीमान ठीक है, यदि आप आज ही सभी पुरुषों को मार दें, फिर भी महिलाओं के गर्भ में लाखों पुरुष रहेंगे। इसलिए जहां तक विश्व का संबंध है, महिलाओं का महत्त्व अधिक है। परन्तु जो, पुरुष और महिला के बीच की समानता की बात करते हैं, वे वास्तव में महिला को पुरुष से अलग करना चाहते हैं। दम्पत्ति को खुश रखने में सहायता करने की जगह वे वास्तव में विनाशकारी हैं। जैसा मैंने कहा है कि उनका महत्व निर्विवाद है, वे लक्ष्मी हैं। साथ ही यह कठिन है कि अत्यधिक कठिन है कि पुरुष की तुलना महिला से की जाए। प्रकृति ने पुरुष और महिला को जन्म दिया है। उनके कार्य अलग-अलग हैं, उनके कर्तव्य अलग-अलग हैं। उनके व्यवहार अलग-अलग हैं। दोनों की तुलना करने का क्या हक है? कोई भी तुलना वास्तव में इस मामले में सही नहीं ठहर सकती।

मेरे मित्रों ने इस विधेयक के उपबंधों के बारे में चर्चा की है। मैं केवल एक या दो बातों को स्पष्ट करूंगा, जहां तक पिता की सम्पत्ति में बेटी का संबंध है। सर्वप्रथम मैं बेटा था, उसके बाद भाई हुआ, उसके बाद पति बना, तदुपरान्त पिता और इसी प्रकार आगे बढ़ता गया। मैं कह सकता हूँ कि इसमें कोई अपवाद नहीं है। परन्तु मैं यह कहता हूँ कि प्रत्येक हिंदू पिता, मैं भी हिंदू पिता हूँ और मैंने भी अपनी बेटियों का विवाह इधर-उधर किया है। अस्तु प्रत्येक हिंदू पिता अपनी बेटी का विवाह ऐसे परिवार में करना चाहता है जो प्रतिष्ठा में उच्च हो तथा उसके परिवार की तुलना में धन तथा अन्य बातों में उच्च हो। अब पिता की सम्पत्ति में बेटी के भाग की चर्चा की जा रही है। इस बारे में उपहास भी किया गया है। पर बेटी का प्रत्येक दृष्टि से सम्मान किया जाता है और उसे उसका भाग भी कह सकते हैं जो दहेज के रूप में पिता की सम्पत्ति में और इसी प्रकार अन्य बातें कही जा सकती हैं। जब अलग भाग का प्रश्न उठता है, तो इस विषय में क्या किया जाएगा। साधारणतया यदि आप मेरे घर पर अतिथि के रूप में आते हैं, तो मैं आपका स्वागत-सत्कार अपने मित्र के रूप में कई प्रकार से करूंगा। परन्तु यदि आप अधिकार लेकर आते हैं तो मैं नहीं समझता कि आप मुझ से स्वागत-सत्कार करवा सकेंगे। मैं अपने मित्रों से कहता हूँ कि इस कानून से किसी को भी सहायता नहीं मिलेगी। जैसे ही पिता की सम्पत्ति में बेटी का अधिकार निरुपित हो जाएगा, तभी से मेरा विचार है कि प्रेम का प्रश्न नहीं उठेगा। मेरे मित्र श्री कामथ ने, यद्यपि अनेक बातों के सुझाव दिए हैं, जिनको मैं स्वीकार नहीं करता परन्तु एक बात ऐसी है, जिससे मैं सहमत हूँ। एक परिवार ऐसा है, जिसमें पुरुष के पास एक बेटी और दो या तीन पुत्र हैं। बेटी का कई मील दूर एक स्थान पर विवाह हो जाएगा। यदि सम्पत्ति बहुत कम है और विवाह के बाद दामाद पिता के घर सम्पत्ति में भाग लेने के

लिए आएगा अथवा सम्पत्ति में भागीदार बनेगा, तब उसका सम्मान नहीं किया जाएगा। प्रत्येक बात को सही प्रकार से विकसित किया जाना चाहिए तथा स्वाभाविक रूप से विकसित किया जाना चाहिए। अत: यदि यह विधिकरण कानून बना दिया जाता है, तो अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं जिससे हमारे देश में विवाद बढ़ जाएंगे तथा शुद्ध प्रेम का सिद्धांत समाप्त हो जाएगा।

इसलिए मैं इस सदन के प्रत्येक सदस्य से अपील करता हूँ कि इस मामले पर शान्तिपूर्वक से विचार करें। जैसा कि इस सदन के कई सदस्यों ने सुझाव दिया है और जैसा कि मैंने पहले कहा है, यह सदन इस विधेयक को कानून बनाने में सक्षम नहीं है। यह कैसी बात है कि वे इतने चिन्तित हैं कि यह विधिकरण आज ही पारित कर दिया जाए। एक या दो वर्ष तक प्रतीक्षा करने का साहस क्यों नहीं है? क्या मैं यह कह सकता हूँ कि वे नए चुनावों से भयभीत हैं?

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : नहीं, बिल्कुल नहीं।

बाबू रामनारायण सिंह : हिंदू समाज प्राचीन प्रथाओं और अन्य प्रत्येक बात के अनुसार अभी तक जीवित है और सुसम्पन्न है। अत: यदि हम इस विधेयक को परिचालित करें, तो कोई पहाड़ नहीं गिर पड़ेगा, जैसा मेरे मित्र नजीरुद्दीन ने कहा है। मैं सदन के प्रत्येक सदस्य से अपील करता हूँ कि वह इस विधिकरण के बारे में शांत भाव से विचार करें। लोग आगामी चुनाव से भयभीत हो सकते हैं कि कांग्रेस के सदस्यों को मत प्राप्त नहीं होंगे। यह प्रश्न पैदा ही नहीं होता। हमें अपने प्रति, अपने निर्वाचन-क्षेत्र के प्रति और उन लोगों के प्रति निष्ठावान होना चाहिए, जिन्होंने हमें यहां भेजा है।

इसलिए मैं अपनी समस्त शक्ति के बल पर इस विधिकरण का विरोध करता हूँ और अपने मित्र 'पंडित' नजीरुद्दीन अहमद के इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ कि यह विधेयक लोकमत के लिए परिचालित किया जाए।

***श्री एस. सिव्वावीरप्पा (मैसूर रियासत) :** मैं माननीय विधि मंत्री को बधाई देता हूँ कि उन्होंने इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करते समय अति सरल शब्दों में अपना भाषण दिया। श्रीमान, इस बारे में काफी कुछ कहा गया है कि यह विधिकरण गहरे तक हिंदू समाज को प्रभावित करता है। मैं देश के ऐसे भाग अर्थात् मैसूर से आता हूँ, जहां कुछ सैद्धांतिक बातें इस विधेयक द्वारा प्रारम्भ की जानी हैं, जबकि वे बातें वहां पहले से ही लागू हैं। उदाहरणार्थ, हमने दत्तक कानून और बेटी के हिस्से के संबंध में कानून को अपनाया है। और कई अन्य बातों को भी स्वीकार किया है, जो इस विधेयक में विद्यमान हैं। परन्तु इस बारे में सिद्धांत का निरूपण किया गया है। हमने 1934 में विधेयक बना

*सीए. (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 28 फरवरी, 1949, पृष्ठ 953-56

लिया था जिसे हिंदू महिला के अधिकार का विनियम (हिंदू वीमेन्स राइट्स रेग्यूलेशन) कहते हैं और गत चौदह वर्षों से मैसूर में यह विधेयक कानून है। वस्तुतः वहां हमने कोई विशेष उपद्रव नहीं देखा है। वहां न तो मुकदमेबाजी है और न वहां हिंदू समाज का विखंडन है, जैसा कि यहाँ कुछ माननीय सदस्यों ने बताया है। अपने अनुभव के आधार पर वास्तव में, हमने यह समझा है कि ऐसा विधिकरण, जिसकी आवश्यकता है अभी लागू नहीं समझा जाएगा तथा यह देखने के लिए दूसरी समिति का गठन कर लिया गया है कि वर्तमान विधिकरण में विशेष सुधारों की गुंजाइश है।

यह बताया है कि सदन के समक्ष प्रस्तुत विधिकरण हिंदू समाज की जाति प्रथा या अन्य सैद्धान्तिक विश्वासों या सिद्धांतों को प्रभावित करता है। श्रीमान, हिंदू साहित्य का मेरा अपना अध्ययन यह है कि यदि हम वैदिक युग का अध्ययन करें, जो युग 2000–1400 ईसा पूर्व है, और उस समय के मौजूद हिंदू समाज का अध्ययन करें तो हम उस समय हिंदू समाज में इन चार जातियों को नहीं पाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने गुण अपना कर्म के अनुसार जन्म लेता है तथा उसे अपने जीवन में ही सभी वर्णों अथवा आश्रमों में से होकर गुजरना होता था। एक लड़का जब तक वह बीस वर्ष का नहीं हो जाता, अपने परिवार के प्रति कर्तव्यों को निभाता था तथा अपने गुरु की आज्ञा का पालन करता था तथा उन सभी कार्यों को सम्पन्न करता था जो उसे सौंपे गए थे, तब वह 'शूद्र' कहलाता था। बीस वर्षों की आयु के बाद उसे विवाह की अनुमति मिल जाती है, तब उसे परिवार के दायित्वों को निभाने की जिम्मेदारी लेनी पड़ती थी तब कर्तव्य के अनुसार जो उसके लिए निर्धारित थे। उसके अनुसार उसे 'वैश्य' कहा जाता था। वह अपने जीवन का कुछ समय आनन्द से बिताने के बाद और 40 वर्ष की अथवा इससे कुछ अधिक वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद, जब देश की रक्षा के लिए प्रत्येक पुरुष की आवश्यकता होती थी, तब उसे 'क्षत्रिय' के कर्तव्य निभाने पड़ते थे। जब वह विशेष आयु अर्थात् 60 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेता है तथा जीवन का अधिक भाग बिता चुकता है, तब उसे अपने अनुभव और विद्वता के कारण अपने शिष्यों का अध्यापन करना पड़ता था तथा अन्य बुद्धिमत्ता के कार्य करने पड़ते थे और तभी उसे 'ब्राह्मण' कहा जाता था क्योंकि वह ऐसा व्यक्ति था जिसने ब्राह्मण के गुण प्राप्त कर लिए हैं।

इसलिए इस देश में जातिप्रथा अलग–अलग तरीकों से उत्पन्न हुई है तथा अलग–अलग तरीकों से विकसित हुई है। परन्तु आज हम समझते हैं कि लगभग 13,000 जातियाँ हैं तथा इससे भी अधिक उपजातियां हैं, जिनकी अलग–अलग परम्पराएं हैं, अलग–अलग रिवाज़ हैं तथा और भी बहुत कुछ है।

हमें यह पता है कि जहां तक राजनीतिक एकता का संबंध है हम एक हैं। यदि हम नियमों का एकरूपी मानक चाहते हैं या अपने कानून का एकरूपी मानक चाहते हैं तो ऐसी संहिता होनी चाहिए, जो हमें निश्चित मानक प्रदान करती हो। यदि सोच–विचार

की स्थिति में आवश्यक हो तो हम विचार कर सकते हैं कि कौन–सी धाराएँ आवश्यक हैं और कौन–सी धाराएँ आवश्यक नहीं हैं। परन्तु यदि हम यह कहें कि संहिता की आवश्यकता ही नहीं है तो मैं नहीं सोचता कि हम में से कोई भी, यदि हम समझ का प्रयोग करें तो उस स्थिति को स्वीकार कर सकते हैं। हम देखते हैं कि इस देश में ऐसे लोग हैं, जो विभिन्न प्रकार के विश्वास, यथा द्वैत और अद्वैत मानते हैं। ऐसे भी लोग हैं जो एक पत्नीत्व और बहुपत्नीत्व को मानते हैं और कुछ स्थानों में बहुपतित्व की प्रथा भी प्रचलित है।

इन परिस्थितियों के अंतर्गत क्या यह हमारे लिए आवश्यक नहीं कि हम देखें कि उत्तराधिकार, विवाह और कई अन्य बातों के प्रयोजनों के लिए एक समान संहिता प्राप्त हो। ब्रिटिश सत्ताधिकारियों के समय में हमने देखा कि धार्मिक तटस्थता के भेष में अथवा हस्तक्षेपहीन स्थिति में उन्होंने यह देखने की चिंता नहीं की कि हिंदू समाज के कौन–से दोष मिटे हैं। पर उन्होंने इस दिशा में कोई सुधार लाने का प्रयत्न नहीं किया। वास्तव में, जब बर्क द्वारा वारेनेहेस्टिंग की निंदा की गई थी तब यह कहा गया था कि उसके विरुद्ध लगाए गए अभियोगों में से एक अभियोग यह था कि उसने अपने व्यक्तिगत प्रशंसा के प्रयोजन के लिए जाति–सूचकों का उपभोग किया था। ब्रिटिश सत्ताधारियों ने यह देखा कि जाति-प्रथा उनके अपने लाभ के लिए ही उपयुक्त थी, अतएव उन्होंने कभी भी समाज में सुधारों की आवश्यकताओं के बारे में न सोचा और न कभी हस्तक्षेप किया। परन्तु आज ऐसा कोई कारण नहीं है कि जब हम स्वतंत्र हैं, तो हम अधिक वांछित सुधार लाने का उद्देश्य न अपनाएँ। किसी ने कहा है कि हम आगे बढ़ रहे हैं। हमें यह विधिकरण इतनी शीघ्रता से क्यों लाना चाहिए और हमें कुछ समय के लिए प्रतीक्षा क्यों नहीं करनी चाहिए? मेरा तर्क है कि इस सुधार को बहुत पहले किया जाना चाहिए था, क्योंकि यह काफी समय से लंबित था। किंतु यह भी तथ्य है कि हमारा देश परतंत्र था और हम अपने भाग्य के विधाता नहीं थे। अतः मेरा निवेदन है कि यह दिन जल्दी नहीं आया है।

इस सदन की क्षमता आदि से संबंधित कई अन्य आपत्तियाँ भी उठाई गईं। वास्तव में माननीय विद्वान प्रस्तावक ने यह स्पष्ट उल्लेख किया है कि हम इस वांछनीय फल को प्राप्त करने के लिए कहां तक सक्षम हैं। इसलिए अब मैं इस सदन का अधिक समय नहीं लेना चाहता, क्योंकि कई वक्ता भाषण देने की प्रतीक्षा में हैं।

जहाँ तक तलाक के सिद्धांत का संबंध है, मेरा यह मत है कि यह विषय है जिसके बारे में वर्तमान हिंदू समाज के अनेक लोगों में उत्तेजना है, चाहे वह सांस्कारिक विवाह हो अथवा किसी अन्य प्रकार का विवाह हो, मैं यह देखना नहीं चाहता कि किसी भी परिस्थिति में विवाह का अविच्छेदनीय बंधन बना रहे। इसकी बजाय लोगों को उन्मुक्त विवेक दिया जाए। मैं माननीय प्रस्तावक से निवेदन करूंगा कि वे इस विषय पर विचार

करें, अर्थात् समय-सीमा लगा दी जाए यानी 5 वर्ष या 3 वर्ष, जो भी सदन द्वारा अनुमोदित की जाए। और इस अवधि में विवाहित व्यक्ति अपनी कमजोरियों को समझ सकेंगे और इस दौरान उन्हें एक-दूसरे को समझने का समय भी मिलेगा और इसके बावजूद यदि वे अलग होना चाहते हों, तो यह आवश्यक हो सकता है कि उनके विवाह-बंधन को तोड़ दिया जाए।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आपका मतलब है विवाह परिवीक्षाधीन हो।

श्री एच. सिद्दावीरप्पा : विवाह परिवीक्षाधीन नहीं होगा। परन्तु किसी भी व्यक्ति को तलाक का लाभ या फायदा जो भी आप कहें, देने से पहले एक निश्चित अवधि प्रस्तावित की जानी चाहिए। इसके भीतर किसी भी विवाहित दम्पत्ति को तलाक की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : यह अंग्रेजी कानून में है। उनके लिए तीन वर्ष की अवधि प्रस्तावित है।

श्री एच. सिद्दावीरप्पा : हम पश्चिमी देशों के अनुभव पर विचार करें। उदाहरण के लिए अमेरिका को लें। हमारे सामने तलाक न्यायालय के प्रसिद्ध न्यायाधीश लिडंसे का अनुभव है। जब कभी कोई उनके सामने तलाक के लिए जाता था, तब वह कहा करते थे, आप लोग एक या दो महीने साथ रहें, उसके बाद मेरे पास आएं। यदि इसके बाद आप यह महसूस करें कि आपको तलाक चाहिए, तभी आप आवेदन करें। उनका कहना है कि एक न्यायाधीश के रूप में उनका यह अनुभव है कि जब लोग एक-दूसरे से अलग होने का प्रयत्न करते हैं तो इसका कारण यह है कि उन लोगों ने एक-दूसरे को समझा नहीं है। यदि उनको एक-दूसरे को समझने का समय दिया जाता, तो वे अलग होने की अंतिम सीमा को नहीं अपनाते। इसलिए, मेरा सुझाव है कि तलाक के संबंध में इसी प्रकार की कुछ अवधि प्रस्तावित की जाए।

जहां तक सम्पत्ति के विभाजन के सिद्धांत का संबंध है, हम पाते हैं कि कृषि-भूमि इस विधिकरण द्वारा बिल्कुल भी प्रभावित नहीं है। यह अपने में अच्छी बात है।

चौधरी रणवीर सिंह (पूर्वी पंजाब) : यह केंद्रशासित क्षेत्रों में प्रभावित है।

श्री एच. सिद्दावीरप्पा : नहीं, ऐसा नहीं है। केवल केंद्र शासित क्षेत्र प्रभावित हैं, पर वह बहुत छोटा क्षेत्र है। जहां तक कृषि भूमि का संबंध है, मेरा विचार है कि अब ऐसा समय आ गया है जब भोजन के लिए हमें कृषि और अपने अस्तित्व के हित में कृषि-सुधार करना चाहिए। केवल यही नहीं, अब समय आ गया है कि उत्तराधिकार के संबंध में भी हमको ज्येष्ठता अधिकार के कानून के समान कुछ न कुछ कर लेना चाहिए। इस तथ्य की दृष्टि से इस देश के नब्बे प्रतिशत लोग गांव में रहते हैं और उनकी सम्पत्ति

अधिकांशतया कृषि से संबंधित है और इस तथ्य की दृष्टि से कि नब्बे प्रतिशत लोगों की सम्पत्ति इस अधिनियम के लागू किए जाने की परिधि से बाहर रखी जाएगी, मेरा विश्वास है कि इस भू-सम्पत्ति को टुकड़ों में विभाजित करने का सिद्धांत तर्कसम्मत नहीं है।

जहां तक रिवाज़ का संबंध है इस बारे में मेरे कुछ मित्रों ने निवेदन किया था कि रिवाज कानून से ऊपर हो जाता है अतः कानून की शक्ति से प्रभावित रिवाज़ को स्वीकार किया जाना चाहिए। मेरे विचार में हम में से कई जिन्हें अधिवक्ताओं का अनुभव है, आसानी से यह देख सकते हैं कि कैसे रिवाज़, सुविधानुसार उदार कानून के प्रभाव को समाप्त कर देता है। मैं एक उदाहरण दे सकता हूँ। भारतीय दण्ड संहिता में एक उपबंध है, जिसके अंतर्गत कोई भी लड़की अनैतिक प्रयोजन के लिए समर्पित है तो वह अपराध है। इस समर्पण के चिह्नस्वरूप लड़की के गले में कुछ मोती बांध दिए जाते हैं। अब अधिवक्ता की पटुता इस बात में निहित थी कि वह लड़की के गले में मोतियों की माला पहनाने के रिवाज़ का अविष्कार किया और उस रिवाज़ को ऐसे मामलों में भी लागू कराया जहां अनैतिक प्रयोजनों के लिए समर्पण किया गया था। इसके अलावा, हम यह भी जानते हैं कि रिवाज़ों के कारण मुकदमेबाजी कैसे होती है और इसमें प्रचुर धन व्यय किया जाता है, जैसाकि पिछले शासन के अंतर्गत भी किया जाता था। लोग किसी विशेष बात पर निर्णय पाने के लिए प्रचुर धन व्यय करते थे और दो अलग-अलग निर्णयों के बीच मतभेद कराने के लिए न्यायाधीशों पर अधिक धन व्यय करते थे। आज यह विधेयक इतना सरल है, इतना सुबोध है कि किसी अधिवक्ता की आवश्यकता नहीं होगी और कोई भी व्यक्ति चार आने में ही इस बात को जान सकेगा कि उसकी इस कानून के अंतर्गत क्या स्थिति है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : क्या आपका अभिप्राय यह है कि वह चार आने में ही सब कुछ कर सकता है।

श्री एच. सिद्दावीरप्पा : यह नितांत संभव है और एक दिन ऐसा आएगा। हम इसके लिए भी प्रयत्न करेंगे। वस्तुतः हम यह देख रहे हैं कि यह न्यायिक निर्णय कुछ सम्पत्ति-अधिकारों और अन्य विषयों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। एक न्यायाधीश एक निर्णय देता है और वह निर्णय कुछ समय तक कानून बना रहता है। कल कुछ लोग अन्य कानून देखेंगे, कुछ पाठ्य अथवा स्मृति अथवा कुछ पुराने दस्तावेज होंगे और हमें बताया जाएगा कि यह कानून रद्द कर दिया गया है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि हिंदू कानून में कुछ भी स्थिर नहीं है। वस्तुतः हम ब्रिटिश सत्ता के अधीन गत 150 वर्षों से देख रहे हैं। एक निर्णय के बाद कई दूसरे निर्णय हो चुके हैं और वे कह रहे हैं कि हिंदू कानून में कुछ स्थिर नहीं है। मैं यह पूछना चाहता हूँ कि हम कानून का स्थिर रूप कब पा सकेंगे जिससे साधारण व्यक्ति यह समझ सके कि वास्तव में उसकी स्थिति क्या है। वास्तव में जब कोई ऋणदाता धन उधार देना चाहता है तो वह इस बात से संतुष्ट होना चाहता है कि उसके उत्तराधिकारी कौन हैं, जिनके उसकी सम्पत्ति में

भाग हैं और जिसके फलस्वरूप उसकी कृषि भूमि, जिसके आधार पर उसे एक हजार रुपये का ऋण दिया जा सकता है। वह उसे 500 रुपये या इससे कुछ अधिक ही धन उधार देता है। इसलिए किसी भी दृष्टि से मैं इसे एक स्वस्थ विधिकरण मानता हूँ और मैं इस विधेयक का अपने हृदय से समर्थन करता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : यह बहस कल प्रश्नोत्तर अवधि के बाद जारी रहेगी।

*हिंदू संहिता–जारी

****श्रीमती जी. दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य) :** यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि मैं माननीय विधि मंत्री द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के समर्थन में बोलने के लिए खड़ी हूँ। मैं यह भी महसूस करती हूँ कि मैं श्री बी.एन. राउ और समिति के अन्य सहयोगियों के प्रति गहन आभार व्यक्त करूं जिन्होंने इस रिपोर्ट को तैयार करने में महान परिश्रम किया है और जो इस विधेयक का आधार है।

यह विधेयक हिंदू कानून को संहिताबद्ध करने के लिए है और जब यह एक पुस्तक का रूप लेगा तो यह इस देश के सामाजिक इतिहास में महान सफलता का चिह्न माना जाएगा। इसे पूर्व कि मैं इस विधेयक के मुख्य उपबंधों के बारे में अधिक विस्तार से कुछ कहूँ, मैं एक विषय पर बल देना चाहूँगी। माननीय सदस्य इस तथ्य से अवगत हैं कि इस विधेयक के उपबंध अनुज्ञेय अथवा समर्थनीय प्रकार के हैं। वे हिंदुओं के दकियानूसी वर्गों पर भी किसी भी प्रकार का दायित्व/दबाव आरोपित नहीं करते। उनका प्रभाव केवल यह है कि विकसित और ऊंचा उठने वाले हिंदुओं, पुरुषों और महिलाओं को जीवन जीने के लिए स्वतंत्रता दी जाए और वह स्वतंत्रता उनके पुराने तरीकों को अपनाए रहने की उनकी स्थिति को प्रभावित अथवा विशृंखलित किए बिना जारी रह सके।

मैं अपनी टिप्पणियों को एक या दो मुख्य आपत्तियों तक ही सीमित रखना चाहती हूँ जो इस विधेयक के विरोध में उठाई गई हैं। पहली आपत्ति इसे संहिता-बद्ध किए जाने के विरोध में हैं। उसमें इस बात पर दिया जाता है कि हिंदू कानून के कई सिद्धांत अब सुस्थिर हो चुके हैं, और सुस्थिर नियमों को अस्थिर करने अब इस संहिता (कोड) की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। दूसरी आपत्ति यह है कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंपे गए हिंदू कानून के सिद्धांतों को सुरक्षित रखने की बजाए इसे संहिताबद्ध किए जाने का प्रयत्न ऐसे सिद्धांतों को प्रारम्भ करेगा जो हिंदू समाज के लिए बिल्कुल अपरिचित हैं। यह कहा गया है कि विधानमंडल को स्मृतियों, श्रुतियों और सुप्रसिद्ध ऋषियों के आदेशों को बदलने का कोई अधिकार नहीं है। हिंदू संहिता विधेयक के विरुद्ध अन्य

*सीए, (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 2 मार्च, 1949, पृष्ठ 991–1030
**वही, पृष्ठ 991–95

आरोप यह है कि क्रांतिकारी प्रकार के परिवर्तन प्रारंभ किए गए हैं, अतः स्मृतियों और धर्म द्वारा तैयार किया गया कानून नष्ट हो जाएगा। इन तमाम आपत्तियों के संबंध में मेरा उत्तर है कि यह बात इसलिए है कि हिंदू कानून के कई सिद्धांत अब सुस्थिर हैं। इन सभी सिद्धांतों को विधिवत और आसानी से समझने वाली संहिता में आबद्ध करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

आज हिंदू कानून जिस स्थिति में है वह बिना किसी निश्चितता के कठोर है। उसमें कई न्यायिक निर्णय और पूर्व निर्णय अपनी उपयोगिता खो बैठे हैं। एक अंग्रेजी लेखक ने लिखा है कि इस विषय पर वाद संबंधी कानून एक गहन जंगल हो गया है। जहां वृक्षों की लकड़ी देख पाना भी संभव नहीं है। अलग-अलग उच्च न्यायालयों ने समय-समय पर जो निर्णय किए हैं, वे परस्पर विरोधी निर्णय हैं। यहां तक प्रिवी काउंसिल द्वारा कानून के पेचीदा प्रश्नों पर दिए गए निर्णयों से ऐसा लगता है कि व्यापक रूप से वे निर्णय प्राचीन प्राधिकरण तथा आधुनिक भावना दोनों से मेल नहीं खाते। एकरूपता तथा एकीकृत कानून हिंदू समाज के लिए वरदान सिद्ध होगा, क्योंकि इससे कानून के विद्यार्थियों तथा अधिवक्ता दोनों का काफी समय बचेगा जो अन्यथा इस कार्य में कई वर्ष लगा देते हैं, ताकि वे कानून को पूरी तरह समझ सकें। यहां तक कि साधारण नागरिक इस संहिता को पढ़ने में सक्षम होगा और स्वयं कहेगा-"इस पुस्तक में मेरे अधिकारों, विशेषाधिकारों और दायित्वों के मूल आधार दिए गए हैं।" वह संहिता न्यायाधीशों का समय और श्रम बचाएगी तथा इससे न्याय को शीघ्रता से लागू किया जा सकेगा। मेरी राय में 'संहिता (कोड) के बिना रहना, न्याय के बिना रहना है।'

यह आपत्ति कि इस संहिता ने क्रान्तिकारी परिवर्तन प्रारंभ कर दिए हैं, कुछ स्वार्थी तत्वों ने उठाई है। देश के भावी हितों की सुरक्षा के लिए कुछ वर्तमान हितों के दमन का सदैव स्वागत किया जाना चाहिए। वस्तुत: यह संहिता उस दिशा में काफी दूर नहीं जाती और यही मेरा मत भी है।

अधिकांश कृषि-सम्पत्ति को इस संहिता के अधिकार के बाहर रखा गया है। इसलिए इस बात पर बल दिया गया है कि आपका उद्देश्य कि एकरूपता वाला कानून अपनाया जाए। इसी दिशा में हतोत्साह करने वाली ऐसी संहिता क्यों बनाई जाए जिसका उद्देश्य खत्म हो जाए? इस आपत्ति पर मेरा उत्तर यह है, इस संहिता का उद्देश्य है कि सभी हिंदुओं के लिए एक समान कानून हो परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि सभी प्रकार की सम्पत्ति के लिए एक समान कानून हो। कृषि के हित में भी, यदि कोई अन्य विषय न हो, अलग-अलग कानून तथा विशेष प्रकार के कानून उपयुक्त विधानसभाओं द्वारा पारित किए जाएंगे, जिनमें उत्तराधिकार से संबंधित विशेष कानून भी होगा। वह कानून उत्तराधिकार के कानून से अलग होगा। जो अन्य प्रकार की सम्पत्ति पर लागू होता है।

अब मैं इस बात का उल्लेख करूंगी कि मुख्य आपत्ति क्या है, अर्थात् बेटी को सम्पत्ति में हिस्सेदारी। इसका कई आधारों पर विरोध किया गया कि इससे सम्पत्ति का बिखराव और टुकड़ों–टुकड़ों में बंटना हो जाएगा तथा दामाद के रूप में एक विदेशी तत्त्व का प्रवेश जैसा होगा। इस आपत्ति का एक आधार यह भी है कि बेटी के साथ बेटे का एक जैसा उत्तराधिकार हिंदू समाज को भी तोड़ देगा। यह भी कहा जाता है कि यदि बेटी अपने भाग को ले लेती है, तो उसका भाईयों के प्रति प्रेम समाप्त हो जाता है। यह भी कहा गया है कि कई परिवारों में बेटे, विवाह के व्यय तथा उत्तराधिकार के भाग के दुगने भार से नष्ट हो जाएंगे और बेटी के हिस्से से भी। क्या मैं यह पूछ सकती हूँ कि भाइयों का यह कैसा प्रेम है जिसमें अपने ही हित पर अधिक बल दिया जाए? क्या मैं पूछ सकती हूँ कि यदि बेटी को कोई भी भाग न दिया जाए, तो भाइयों का प्रेम बढ़ जाएगा?

जहां तक विभाजन का संबंध है, मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि यह प्रश्न किस प्रकार उठाया जाए क्योंकि यह पहले ही कहा गया है कि इस विधेयक के क्षेत्र से कृषि–सम्पत्ति को अलग कर दिया गया है। इस सदन के माननीय सदस्यों में से एक सदस्य ने यह बात उठाई थी और हम सभी इस बात से अवगत हैं कि अधिकांश कृषि–सम्पत्ति इस संहिता की परिधि से बाहर निकाल दी गई है। यह संहिता शहरी और चल सम्पत्ति पर ही लागू की जाएगी। तब विभाजन से क्या अभिप्राय है? मैं महसूस करती हूँ कि उस भाग को कम करना है, जो उन्हें प्राप्त होगा, यदि बेटी को भी इसमें भाग दिया जाता है। जब बेटी भी उसी शरीर से उत्पन्न हुई है, तो इतना हंगामा क्यों है? मैं पूछना चाहती हूँ कि उसे भी उसका भाग क्यों नहीं दिया जा सकता?

यदि कोई अजनबी व्यक्ति भी परिवार में सम्मिलित हो जाता है, तो ऐसी स्थिति में मेरा उत्तर यह है कि जिस सम्पत्ति को बेटी अपने पिता से लेती है, यदि आवश्यक हो तो उस अलग सम्पत्ति के लिए भी कानून बनाया जाना चाहिए। कानून उपबंध के बुरे या भले परिणाम भी उस विशेष व्यक्ति अर्थात् संबंधित दामाद पर निर्भर करते हैं। मैं इसके बारे में अधिक नहीं कहना चाहती।

इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि यदि बेटी, बेटों के समान अपना भाग मांगती है, यदि आवश्यकता हो तो वह पिता की मृत्यु के बाद ऐसा कर सकती है। यह प्रश्न ही नहीं है, उसके अपने हिस्से की मांग करने को यदि पिता जीवित है। इसलिए मैं नहीं समझ पा रही कि कुछ माननीय सदस्य उस पर आपत्ति क्यों उठा रहे हैं। चूंकि विधि मंत्री ने पहले ही इस मामले को स्पष्ट कर दिया है और स्मृतियों ने भी बेटी के लिए पिता की सम्पत्ति में भाग लेने को मान्यता दे दी है, इसलिए इसके बारे में कुछ भी क्रान्तिकारी नहीं है। अस्तु, बेटी को इस आधार पर अलग करना अन्याय और अनुचित है कि वह अपने पिता या पुरखों के आध्यात्मिक लाभों के निमित्त कोई अंशदान नहीं करती।

इस बारे में दलील दी जाती है कि बेटी को अपने पति की सम्पत्ति में भाग क्यों नहीं लेना चाहिए और अपने पिता की सम्पत्ति में भाग लेने के लिए क्यों आना चाहिए? यह एक समझौतावादी सूत्र लगता है। मैं कह सकती हूँ कि यह समझौतावादी सूत्र महिलाओं को स्वीकार नहीं है अथवा स्वीकार्य नहीं होगा। हम कहते हैं कि हमें समानता के आधार पर मान्यता दी जानी चाहिए। यह संहिता प्रस्ताव करती है, भेद खत्म करने का जो वर्तमान में है लिंग के आधार पर और जिसे हटा दिया जाना चाहिए। बेटी को उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए और उसे बेटी तथा पिता के उत्तराधिकारी के रूप में अपनी सम्पत्ति का भरपूर लाभ मिलना चाहिए। जहां तक विभाजन का प्रश्न है, मैंने इस विषय का पहले ही समाधान कर दिया है। इस दोष को अलग-अलग तरीकों से दूर किया जा सकता है। विभाजन को रोका जा सकता है तथा विशेष कानून द्वारा चकबंदी की जा सकती है। यदि सम्पत्ति का किसी सीमा तक विघटन हो जाता है, तो वह सम्पत्ति बेची जा सकती है और हिस्से को समयोजित किया जा सकता है। ऐसे अलग-अलग तरीके हैं, जिनसे इस समस्या का समाधान हो सकता है तथा इस संबंध में दलील आगे नहीं बढ़ाई जा सकती कि बेटी को अपना भाग नहीं मिलना चाहिए। इसलिए प्रवर समिति ने यह सिफारिश की है जो समानता के सिद्धांत पर आधारित है कि बेटी को बेटे के समान हिस्सा मिलना चाहिए। मैं सदन के माननीय सदस्यों से यह अपील करना चाहूँगी कि इस संबंध में प्रवर समिति ने व्यावहारिक रूप से एकमत होकर जो सिफारिश की है, उसका समर्थन किया जाए।"

श्री एच.वी. कामथ (सी.पी. और बरार : सामान्य) : डॉ. अम्बेडकर इस बारे में सहानुभूति नहीं रखते।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : इसलिए जब यह कहा जाता है कि बेटी अपने पिता और पति दोनों से ही अपना हिस्सा लेती है तथा पति कुछ भी नहीं लेता, यह कैसे हो जाता है? प्रवर समिति ने यह सिफारिश की है कि पुरुष अपनी पत्नी की सम्पत्ति में उसी प्रकार हिस्सा लेना चाहिए जैसे पत्नी अपने पति की सम्पत्ति में उत्तराधिकारी होती है और बेटे को भी अपनी मां की सम्पत्ति में बराबर का हिस्सा मिलना चाहिए जैसे बेटी को मां की सम्पत्ति में, जैसे बेटी अपने पिता की सम्पत्ति के हिस्से का दावा करती है। इसलिए इस संबंध में उन लोगों को भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए, जो इन आधारों पर इस विधेयक का विरोध करते हैं, उनके लिए उत्तर दे दिया गया है। मैं अन्य बातों को उद्धृत नहीं करना चाहूँगी, क्योंकि समय सीमित है और अन्य सदस्य बोलने के लिए आतुर हैं। (**माननीय सदस्यगण :** बोलते रहिए। अपना समय लीजिए।) श्री वी.वी. श्रीनिवास आयंगर ने इस संबंध में संकेत दिया कि जो लोग धार्मिक आधार पर इस विधेयक का विरोध करते हैं, वे ऐसी गलतफहमी में रह रहे हैं कि हिंदू कानून मनु के समय से ही स्थिर हो चुका है। स्थिति ऐसी नहीं है।

इसी के आधार पर मैं एक अन्य विषय पर विचार रखती हूँ, जो महिलाओं की प्रतिष्ठा से संबंधित है, जिसका संबंध महिलाओं को सम्पत्ति रखने के निरापद अधिकार से है। यह अधिकार उनमें जीवनकाल तक ही सीमित नहीं है। यह विधेयक महिला की सम्पत्ति से सम्बद्ध दोष को दूर करता है और इससे महिला को अधिकार मिल जाता है कि वह अपनी सम्पत्ति को पूर्ण रूप से अपने अधिकार में रखे तथा केवल जीवनपर्यन्त ही अधिकार में न रखे। महिलाओं के संबंध में सम्पत्ति को सीमित करने के पक्ष में मुख्य दलील यह है कि वे उसका प्रबंध किये जाने में अक्षम हैं और वे शोषण अथवा धोखधड़ी किये जाने में आसान हैं। यह भी कहा जाता है कि वे प्रबंध के सिद्धांतों को नहीं जानती और इसलिए वहां प्रबल संभावना होगी पुरुष रिश्तेदारों का उसके अधिकार हड़पने का। इन सभी बातों पर मेरा एक ही उत्तर है। सदन इस बात से अवगत है कि आज बम्बई में बेटी के लिए पूर्ण रूप से सम्पत्ति का अधिकार है। इसलिए उस आधार पर मैं नहीं सोचती कि उन्हें किसी बात का जोखिम है। दूसरी दलील यह है कि ऐसे दर्जनों उदाहरण हैं, जहां पुरुषों की तुलना में महिलाएं अधिक कुशल प्रबंधक सिद्ध हुई हैं। एक अन्य दलील भी है। इसमें सन्देह नहीं मैं इस बात से सहमत हूँ कि महिलाएं निरक्षर हैं, परन्तु क्या मैं यह पूछ सकती हूँ कि क्या पुरुष निरक्षर नहीं होते? आज भी चार पुरुषों में से तीन पुरुष निरक्षर हैं। (**एक माननीय सदस्य :** दस में से नौ।) इस तरह पुरुषों को मिलने वाला लाभ भी चार पुरुषों में से एक तक ही सीमित है। (**एक माननीय सदस्य :** वे अपनी माताओं के बेटे भी हैं।) यह भी याद रखना चाहिए कि महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है, जबकि पुरुषों में ऐसा नहीं है। (**श्री एच.वी. कामथ:** एक प्रश्न?)

जहां तक महिला के हिस्से का संबंध है, मैंने पहले ही प्रवर समिति की स्थिति के बारे में बता दिया है। हमने बेटी के लिए भी समान हिस्सा दिए जाने की सिफारिश की है। मैं आपसे निवेदन करती हूँ कि आपको काफी उदार होना चाहिए। प्रवर समिति द्वारा की गई सिफारिशों का अनुमोदन करने के लिए बिना किसी हिचकिचाहट के। अब मैं दूसरे विषय पर आती हूँ अर्थात् कि पत्नी विवाह। फिर भी इस विषय पर मैं अधिक बोलना चाहती हूँ, वैसा नहीं करूँगी, क्योंकि मेरे पास सीमित समय है। केवल यही नहीं है, बल्कि इस विषय पर विधि मंत्री ने काफी प्रकाश डाला है तथा अन्य कई वक्ताओं ने भी कई दलीलें, आर्थिक, सामाजिक तथा अन्य विषयों पर दी गई हैं। यहां तक कि अपनी दलीलों के समर्थन में धर्म और आध्यात्मवाद के बारे में बताया गया है। परन्तु बहुत हल्के तरीके से भावनाओं को व्यक्त किया गया है। यदि पुरुष स्वस्थ और धनी है तो वह बार-बार हल्के तरीके से भावनाओं को व्यक्त किया गया है। उदाहरणार्थ यदि पुरुष स्वस्थ और धनी है तो वह बार-बार विवाह क्यों नहीं कर सकता? यदि एक और भी पत्नीत्व का नियम लागू किया जाता है, तो कितने हिंदू मुसलमान हो जाएंगे, बहुपत्नीत्व का लाभ उठाने। मुझे इस प्रश्न का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मैंने एक

महिला को साक्ष्य देते हुए देखा है कि वह इस बात का उत्तर देने के लिए कितनी योग्य और प्रभावशील है। उसने कहा कि एक पत्नीत्व का नियम लागू नहीं किया जाता है, तो यह हो सकता है कि महिलाएं ईसाई हो जाएँ, ताकि वे एक पत्नीत्व का लाभ उठा सकें। परन्तु इसमें कोई भी गंभीर नहीं है।

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : क्या आप सोचती हैं कि ईसाई महिलाएँ हिंदू महिलाओं से अधिक प्रसन्न हैं?

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : जैसा कि माननीय विधि मंत्री ने पहले ही कहा है कि विश्व भर में प्रचलित विचारों और प्रथाओं का असर यहां भी है और वे विवाह एक पत्नी के पक्ष में है। अतः मुझे इस मामले में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

न तो मेरे पास समय है और न यह वांछनीय है कि मैं अब इस विधेयक के अन्य पक्षों पर विचार करूं क्योंकि अन्य सदस्य हैं जो विवाह और तलाक जैसे विषयों पर विचार करेंगे। परन्तु मैं केवल सह-समांशिता के बारे में कुछ कहना चाहूँगी। समीक्षकों और उनके भाष्यकारों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न प्रकार के भाष्यों के फलस्वरूप 'मिताक्षर' और 'दायभाग' में विशिष्टता समक्ष आई है। सैद्धांतिक रूप से संयुक्त परिवार का आधार दोनों में ही आया है। 'मिताक्षर' में जन्म द्वारा अधिकार और उतरजीविता के सिद्धांत विशेष लक्षण है। दायभाग पद्धति वास्तविक अनुभव की दृष्टि से अधिक संतोषजनक रही है, इसलिए यह विधेयक उत्तराधिकार की 'मिताक्षर पद्धति' को 'दायभाग पद्धति' में बदलने के लिए है। यह कहा जाता है कि बंगाल में लोगों की अधिक समृद्धि और उनके बढ़ते हुए वाणिज्यिक उद्यम उनके अधिक क्षेत्रों में व्याप्त 'दायभाग पद्धति' के कारण हैं। मुझे बताया गया है कि मद्रास में नट्टूकोट्टाई चेट्टीयार के वाणिज्यिक उद्यम परिवारों के कानूनी संबंधों के कारण अधिक हैं जो ब्राह्मणों के संयुक्त परिवारों की तुलना में सहभागिता के अधिक समीप हैं।

इस विषय पर विशद् चर्चा हो चुकी है, अतः इस पर मैं अधिक परिश्रम नहीं करना चाहती। मैं महसूस करती हूँ कि विरोध ज्यादा है उनके प्राचीन संस्था के प्रति प्रेम के कारण। परन्तु जो लोग इसका विरोध करते हैं, मेरे विचार से वे विरोध करें क्योंकि वे इस तथ्य को भूल गए हैं कि उन मामलों पर हिंदू कानून और धर्म पूर्ववत जड़ हैं और कोई परिवर्तन नहीं किए गए हैं। इस पद्धति में समय-समय पर अलग न्यायिक निर्णयों ने परिवर्तन किए हैं और यह संस्था केवल अपने ही चरित्र से रही है। इस बात का उत्तर महान अधिवक्ता एस. श्रीनिवास आयंगर ने पूरी योग्यता से दिया है। उन्होंने कहा था कि हिंदू कानून जैसे कि प्रिवी कौंसिल ने व्याख्या की है, किसी सदस्य द्वारा किसी भी समय परिवार से अलग होने के अपने इरादे की एक पक्षीय घोषणा से एकता को भंग किया जा सकता है। यह बात सह-समांशिता को भंग करने अथवा 'मिताक्षर' को 'दायभाग' के रूप में बदलने के अभियोग का उत्तर देने के लिए बिल्कुल पर्याप्त है।

मैं सदन का अब और अधिक समय नहीं लेना चाहती। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद कई घटनाएं घट चुकी हैं और भारत अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने लगा है तथा मानव अधिकारों के लिए वकालत कर रहा है। साथ ही विदेशों में भारतीयों के साथ समान व्यवहार करने के लिए भी दलील दे रहा है। यह अत्यधिक दुर्भाग्यपूर्ण होगा यदि इस अवस्था में अपने देश की सीमाओं में ही हम हिंदू संहिता का कानून बनाने में असफल रह जाएं। इससे कोई भेद-भाव नहीं होगा और पुरुषों तथा महिलाओं के लिए समानता होगी, यहां से वहां जाने, विकास करने तथा हमारे भारत के पुनर्निमाण में योगदान देने। हमारा संविधान निर्माणाधीन है, हमने पहले ही सैद्धांतिक अधिकारों के सिद्धांत को स्वीकार कर दिया है तथा कानून के सामने प्रत्येक व्यक्ति की समानता के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है। हमने इस उपबंध को भी पारित कर दिया है जो हमें समान सिविल संहिता तैयार करने में समर्थ करता है। इसलिए मैं आपसे यह अपील करती हूँ। हमें अपने लिए हिंदू कानून-संहिता को स्वीकार करने में कमी या देरी नहीं करनी चाहिए, जो हमारे समाज के लिए उस मार्ग में विशेष वरदान सिद्ध होगी, जिसके बारे में मैंने पहले ही बताया दिया है।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्रेय (पश्चिम बंगाल : सामान्य) :** श्रीमान, मैं आपको धन्यवाद देता हूँ कि आपने कृपापूर्वक कुछ शब्द व्यक्त करने का मुझे अवसर प्रदान किया है कि मैं इस सदन के समक्ष विचारार्थ प्रस्ताव के बारे में क्या महसूस करता हूँ अर्थात् हिंदू संहिता पर क्या विचार रखता हूँ। मैं जानता हूँ कि मैं अधिक लाभकारी स्थिति में नहीं हूँ, क्योंकि मैं प्रथम दो दिन सदन में उपस्थित न हो सका, जब इस प्रस्ताव पर बहस की गई थी, क्योंकि मैं यहाँ से बाहर गया हुआ था।

अब मैं अपने व्यस्त कार्यों से भी कुछ समय निकाल सका, जब मैंने प्रेस की रिपोर्टें देखीं और यह ज्ञात किया कि मेरे माननीय मित्र विधि मंत्री डॉ. अम्बेडकर ने अपने प्रस्ताव के समर्थन में शानदार भाषण दिया है। उतना ही सशक्त भाषण, मैं कोई तुलना नहीं कर रहा, मैं रिपोर्टों के आधार पर कह रहा हूँ, और रिपोर्टरों ने अपने-अपने मतानुसार अलग-अलग विचार व्यक्त किए हैं, पंडित ठाकुर दास भार्गव ने भी सशक्त भाषण दिया है।

मैंने पूरे ध्यान से प्रस्ताव के पक्ष में चार भाषण और विपक्ष में एक भाषण सुना है। जब कल सदन में बहस हो रही थी तब मैंने सदन के सदस्यों की रुचि समझी, कभी-कभी उन्हें प्रसन्न मुद्रा में भी देखा, परन्तु जब कोई सदस्य विधेयक के मुख्य उपबंधों के विरोध में होता तो सभी प्रकार के ताने और उपहासजनक शब्द भी गूंजते रहे। (**माननीय सदस्यगण:** नहीं, नहीं।) मैं प्रसन्न हूँ कि ऐसा नहीं हुआ। मेरा विचार है कि इससे मुझे प्रोत्साहन मिलेगा क्योंकि अधिकांश सदस्य यह जानते हैं, मेरे विचार से प्रत्येक

*सीए. (विधि.) डी., खंड 2, भाग II, 1 मार्च, 1949, पृष्ठ 995-1015

सदस्य जानता है, मुझे किस पक्ष में भाषण देना है। मैं नहीं जानता कि मुझे इस प्रकार की 'कुख्याति' कैसे प्राप्त हुई। मैं इसे प्रसिद्धि नहीं कह सकता। बहरहाल, मैं इस विधेयक के उपबंधों को समर्थन नहीं देता। मैं इस बारे में कोई भी गोपनीयता नहीं रखूंगा (**एक माननीय सदस्य:** आपको ऐसा क्यों करना चाहिए?) क्योंकि मैं अपनी दृढ़ धारणा को व्यक्त करूंगा। मैं जानता हूँ कि इस सदन को संबोधित करना मेरे लिए कितना नाजुक कार्य है। कैसे इसका गठन हुआ और मैं देख रहा हूँ कि इसकी रुचि क्या है। मैं जानता हूँ कि मुझे इस दुस्साहस के लिए पश्चाताप करना पड़ेगा, पर मैंने इस सदन को संबोधित करने का साहस जुटा लिया है, और मैं वही कहूँगा जो मैं महसूस करता हूँ। यह मेरे लिए मददगार होगा कि सम्बोधन से पूर्व मुझे मेरी माननीय बहन श्रीमती दुर्गाबाई को सुनने का अवसर मिला, जिन्होंने बिल के समर्थन में अति तर्कसंगत भाषण दिया है।

मैं अपनी बहन से क्षमा चाहता हूँ कि मैं उनके सिद्धांतों से सहमत नहीं हूँ, यद्यपि उन्होंने विश्वासपूर्वक मान लिया है कि सभी सदस्य उन्हें स्वीकार कर लेंगे। उन्होंने एक निष्कर्ष देकर अपना भाषण समाप्त किया तथा सदन से अपील की कि संविधान के मसौदे में ऐसे सिद्धांतों को प्रभावी बनाया जाए जिससे कानून की दृष्टि से सभी को समानता उपलब्ध हो। जी हां, हमने ऐसा ही किया है। उन्होंने हमें यह भी याद दिलाया कि हमने अपने संविधान में ऐसे निर्देशक सिद्धांत पारित कर दिए हैं, जिनमें से एक निर्देशक सिद्धांत के अनुसार उस देश के लिए एक समान सिविल संहिता होनी चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि उन्होंने आज मुझे भाषण प्रारंभ करने के लिए शुरुआती बिंदु दे दिया है। जब इस विषय पर कुछ महीने पूर्व किसी अन्य स्थान पर बहस की गई थी तथा उसके बारे में अनौपचारिक रूप से विशद् विवेचन किया गया था, मैंने इस उपबंध के विरुद्ध जोरदार ढंग से विरोध दर्ज किया था। जैसा कि मैंने महसूस किया था, मैंने कहा था कि यह कुछ भी नहीं है अपितु दकियानूसी विश्वास और नारेबाजी है। सभी प्रकार के धर्मों या विश्वासों वाले 32 से 34 करोड़ की आबादी वाले देश के लिए समान सिविल संहिता क्यों हो जबकि इस देश में ईसाई धर्म विद्यमान है। मैंने संशोधन प्रस्तुत किया कि व्यक्तिगत कानून सुरक्षित होना चाहिए और विधेयक वैयक्तिक कानूनों में राज्य की ओर से दखलंदाजी है, जिसके लिए देश को कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी (यू.पी. : मुस्लिम) : वाह, वाह!

श्रीमती रेणुका रे (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : यही वह कारण है कि आपको हिंदू संहिता का समर्थन करना चाहिए।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : माननीय बहन मेरे सामने यह कहती हैं कि यही कारण है जिसके फलस्वरूप मुझे हिंदू संहिता का समर्थन करना चाहिए। क्या मैं यह कह सकता हूँ कि यही वह कारण है जिसके फलस्वरूप मैं हिंदू संहिता का विरोध कर

रहा हूँ। यह मुख्य कारणों में से एक कारण है। आपको तार्किक होना चाहिए। मैं अपनी बहनों की भावनाओं को समझ सकता हूँ। यह मत सोचिए कि मैं महिलाओं से नफरत करता हूँ, कि मैं नारी विरोधी हूँ या मेरे हृदय में महिलाओं के लिए भावनाएं नहीं हैं। (**एक माननीय सदस्य:** वह विवाहित पुरुष हैं।) जी हां, मैं विवाहित पुरुष हूँ। मेरी पत्नी नरम स्वभाव की है। मेरा विवाह हिंदू शास्त्र पद्धति से सम्पन्न हुआ था। मेरी हिंदू परिवार के आदर्शों के अनुसार पाल-पोस कर बड़ी हुई सरल और निष्कपट महिला पत्नी है। (**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** कैसी दयनीय स्थिति है) हो सकता है, आपको दयनीय लगे, परन्तु मुझे लैवेंडर, लिपस्टिक और वैनिटी बैग या सेक्स की विविधताओं के लिए प्रेम करना पसन्द नहीं है। मैं प्रसन्न हूँ और मुझे विश्वास है कि प्रति सौ हिंदू घरों में से 98 घरों में इस प्रकार की पत्नियां हैं और वे प्रसन्न हैं (**एक माननीय सदस्य:** 98 ही क्यों? 99.9 प्रतिशत ऐसी ही हैं।) मुझे यह सुनकर प्रसन्नता है कि मेरे एक मित्र का कहना है कि 99.9 प्रतिशत ऐसी ही हैं। यह बात मेरी दलील की पुष्टि करती है। अतः मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर को बता सकता हूँ कि मुझे उन बड़े परिवर्तनों को करने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई है जो उन्होंने इस विधेयक में करने का विचार किया है। (**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने भी ऐसा महसूस नहीं किया है।) मेरे माननीय मित्र कहते हैं कि वे भी इसकी आवश्यकता महसूस नहीं करते। यदि वे भी इन बड़े परिवर्तनों की वास्तव में आवश्यकता महसूस नहीं करते, तो क्या मैं यह मान लूं कि उनकी महत्वाकांक्षा के कारण हमें यह हिंदू संहिता विधेयक मिला है? मैं अपने मित्र डॉ. अम्बेडकर का अत्यंत प्रशंसक हूँ। इस विधानसभा से पूर्व कई वर्षों तक मुझे उनके साथ काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं उनका आदर करता हूँ। मैं जानता हूँ कि संविधान अधिनियम के संबंध में वह प्रतिदिन कितना अधिक परिश्रम कर रहे हैं। (**माननीय सदस्य:** वाह! वाह!!) मैं उनकी प्रशंसा करता हूँ। मैं उनको साधुवाद देता हूँ। परन्तु मैं इस बात की प्रशंसा नहीं करता जो उन्होंने उस सामाजिक विधान के संबंध में किया है और वास्तव में हिंदू समाज को तोड़ देगा, क्योंकि उसमें ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तन किए गए हैं, जिन्हें हममें से कुछ सदस्य अब महसूस कर सकते हैं। (**माननीय सदस्यगण:** क्रान्ति नहीं! बिलकुल नहीं!) जी हां, मैं प्रसन्न हूँ कि नहीं-नहीं की आवाज़ उठी है। यदि यह विधेयक पारित होकर कानून में बदल जाता है, तो...

बाबू रामनारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : नहीं?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : क्या, नहीं।

बाबू रामनारायण सिंह : यह पारित होकर कानून नहीं बनेगा।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं देखूँगा। यदि यह विधेयक पारित होकर यथावत

कानून बन जाता है, तो मैं देखूंगा कि कौन बेहतर भविष्यवक्ता है– मैं, या वे लोग, जो 'नहीं-नहीं' कहते हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : आप प्रतीक्षा कीजिए और देखिए।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : ठीक है, प्रतीक्षा कीजिए और देखिए। भावी पीढ़ियां न्याय करेंगी और मैं नहीं सोचता कि भावी पीढ़ियों तक आपको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। आपको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी आगामी चुनाव सम्पन्न होने तक यह देखने कि आपका देश आपके काम के बारे में क्या कहता है?

मौलाना हसरत मोहानी : वाह! वाह!! बहुत अच्छा कहा।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : श्रीमान, मेरी बहन श्रीमती दुर्गाबाई ने पहली बात यह उठाई थी कि उस निर्देशक सिद्धांत के पारित होने के बाद अब आपको हिंदू संहिता का विरोध नहीं करना चाहिए। जब वह निर्देशक सिद्धांत सदन द्वारा स्वीकार कर लिया गया, तो मैंने सोचा कि सांप, यानी हिंदू संहिता विधेयक को मार डाला गया। परन्तु अब दिखाई देता है कि सांप को केवल घायल किया गया था; उसने फिर अपना सिर उठा लिया है और समय के साथ वह विषभरा फन पसार देगा। यदि आप अपने निर्देशक सिद्धांत के प्रति सच्चे हैं, यदि आपका अभिप्राय उसे लागू करने का है, तो हिंदू संहिता विधेयक लाने की क्या आवश्यकता है? आप एक ऐसी सार्वभौमिक सिविल संहिता लाएं जो हिंदुओं, ईसाइयों, (**श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** : क्या आप उसका समर्थन करेंगे?) पारसियों, सिखों, जैनियों, बौद्ध धर्मानुयायियों और मुसलमानों पर भी लागू हो'' आप में मुसलमानों को छूने का साहस नहीं है, परन्तु आप जानते हैं कि आज हिंदू समाज इतनी बुरी दशा में है कि आप इसके साथ कुछ भी कर सकते हैं। कुछ अति आधुनिक व्यक्ति, जो खुलकर बोलते हैं, परन्तु जिन्हें देश में वास्तविक समर्थन प्राप्त नहीं है, वे ही इस विधेयक में रुचि रखते हैं। (हस्तक्षेप)

माननीय उपाध्यक्ष : उन्हें अपनी बात कहने दें।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : लाखों गूंगे लोग इससे अनभिज्ञ हैं परन्तु वे कम बुद्धिमान अथवा समझदार नहीं हैं। क्योंकि उन्हें कॉलेज में शिक्षा नहीं मिली है अथवा विधानमंडल के सदस्य नहीं हैं। वे सोचते हैं कि उनके वैयक्तिक कानून में ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तन की आवश्यकता अवांछित है। उनकी अवहेलना नहीं की जानी चाहिए।

श्रीमती रेणुका रे : तब तो संविधान भी न बनाएं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : इसीलिए मैं यह महसूस करता हूं कि समस्त देश के

लिए एक समान सिविल संहिता के सिद्धांतों को स्वीकृत करने में आपकी निष्ठा नहीं है। अन्यथा, आप इसे दो महीने के भीतर कैसे तैयार कर सकते हैं? केवल जिसे हिंदुओं, सिखों, जैनियों और बौद्ध धर्मानुयायियों को शासित करना है।

श्रीमती रेणुका रे : हिंदू संहिता काफी पहले से आ चुकी थी।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आपने ईसाई, मुस्लिम, पारसी को क्यों छोड़ दिया है?

मौलाना हसरत मोहानी : मुस्लिम अपने वैयक्तिक कानून में हस्तक्षेप कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आपको मुझे याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है, मैं यह जानता हूँ। मैं पूर्ण रूप से अपने माननीय मित्र मौलाना हसरत मोहानी के प्रस्तावना का आदर करता हूँ। परन्तु सदैव मैं सोचता हूँ कि यह संविधान के स्वीकृत सिद्धांतों से सैद्धान्तिक रूप से अलगाव है।

जब मेरी माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई ने कहा कि संहिताकरण न्यायसंगत है, तो उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि संहिता-बद्ध कार्य के लिए बाधा रहित मामला तैयार कर लिया गया था। अपनी बहन श्रीमती दुर्गाबाई के प्रति आदर व्यक्त करते हुए मैं यह निवेदन करता हूँ कि मैं इससे असहमत हूँ। मैं संहिता बनाने की आवश्यकता समझ सकता हूँ, जब कानून असमंजस की स्थिति में हो अथवा मतों में अधिक विविधता हो या काफी अस्पष्टता या अनिश्चितता हो। ऐसी दशा में संहिता बनाने का कार्य देश के सर्वोत्तम विधि विशेषज्ञों द्वारा किया जाना चाहिए, जो एक साथ बैठकर कानून के उन विभिन्न सिद्धांतों का प्रारुप तैयार कर सकें, जो इस समय भ्रामक अथवा अनिश्चित स्थिति में हैं। क्या हिंदू कानून के संबंध में इस देश में ऐसी स्थिति है?

श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा (यू.पी. : सामान्य) : ऐसा ही है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं आपका वक्तव्य स्वीकार करता हूँ। परन्तु मैं अत्यधिक खेद महसूस करता हूँ कि आपने हिंदू कानून के बारे में विशाल अनभिज्ञता प्रदर्शित की है। यदि मेरे माननीय मित्र अधिवक्ता हैं, और यह उनका विचार है, जो उन्होंने अच्छी वकालत नहीं की है। वह कृपापूर्वक इस मित्रवत प्रत्युत्तर को क्षमा करें। मैं हस्तक्षेप सहन कर सकता हूँ। यदि आप हस्तक्षेप करते हैं, तो आप मेरे भाषण में अदरक का स्वाद मिला देते हैं। इस देश में ब्रिटिशों के आने के बाद, हिंदू कानून को शनैः-शनैः क्रिस्तीकरण हुआ है। पर उन्होंने देश के लोगों के वैयक्तिक कानून को छूने का साहस नहीं किया।

बाबू रामनारायण सिंह : वे महिलाओं के लिए सीमित सम्पत्ति के पक्षधर थे।

पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्रेय : उस पर सीधे ही जा रहा हूँ। यदि मैं उस बात का उत्तर देना भूल जाऊं, तो कृपया मुझे याद दिलाएं। हिंदू कानून इतना विशाल विषय है कि मैं घण्टों इस पर बोल सकता हूँ यदि अध्यक्ष मुझे ऐसा करने की अनुमति प्रदान करें पर मैं आपको आश्वासन देता हूँ, श्रीमान, मैं ऐसा नहीं करने जा रहा हूँ।

सबसे पहले मैं उस तस्करी जैसी प्रक्रिया का विरोध करता हूँ। जिससे यह विधेयक सदन में लाया गया, सदन के द्वारा लाया गया। यह एक असाधारण प्रक्रिया है। माननीय उपाध्यक्ष कृपया ध्यान दें।

श्रीमती रेणुका रे : माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मुझे सदन की इस प्रकार की अवमानना पर आपत्ति है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : यह व्यवस्था का प्रश्न नहीं है।

श्रीमती रेणुका रे : श्रीमान, यह व्यवस्था का प्रश्न है। सदन के विरुद्ध जो टिप्पणियां की गई हैं, उन पर मैं आपत्ति करती हूँ।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : "तस्करी"। मैंने इस शब्द को कभी भी असंसदीय शब्द नहीं समझा है। यदि माननीय सदस्या यह सोचती हैं कि इस शब्द के साथ कोई कलंक जुड़ा है, तो मैं इस शब्द के स्थान पर किसी अन्य शब्द का प्रयोग करूंगा। मैं कहना चाहूँगा कि यदि इस विधेयक को पारित करने में जैसी शीघ्रता की गई, यह बात असाधारण है। क्या यह भी संसद में प्रयोग किए जाने वाला शब्द नहीं है? यदि ऐसा है, तो कृपया उपयुक्त शब्द बता दें। आप इस शब्द के स्थान पर कोई अन्य शब्द नहीं खोज सकते। (**एक माननीय सदस्य :** प्रशंसनीय गति)। यह अत्यधिक असाधारण प्रक्रिया है, जो सदन में अपनाई गई है। मैं इस सदन में संसदीय कार्यकलाप का कुछ अनुभव रखता हूँ। मैं ऐसा कोई भी अवसर नहीं जानता जब इतना महत्वपूर्ण और बड़ा विधेयक ऐसी त्वरित से पारित किया गया हो, जो अब अपनाई गई है।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद (बिहार : सामान्य) : यह बिल कभी भी पारित नहीं होगा। (हस्तक्षेप)।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं हस्तक्षेप पसन्द करता हूँ, परन्तु मैं यह नहीं समझ सका कि उन्होंने क्या कहा। यदि माननीय सदस्य यह सोचते हैं कि इस प्रकार लगातार हस्तक्षेप करने से मेरे भाषण का प्रभाव अवरोधित होगा, तो वे भूल करते हैं।

यह विधेयक पिछले बजट सत्र के अन्तिम दिन प्रस्तुत किया गया था।

बाबू रामनारायण सिंह : अन्तिम घंटे में प्रस्तुत किया गया था।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आप जानते हैं कि यह विधेयक कितना महत्वपूर्ण और

विस्तृत है। जिसमें हिंदू समाज के जीवन और आचार को नियमित करने का प्रावधान पिछले सत्र के अन्तिम दिन प्रस्तुत किया गया था और उस दिन के कार्य के अन्त में हम पांच बजे के बाद दो घंटे तक बैठे रहे तथा माननीय विधि मंत्री को प्रवर समिति को विधेयक सौंपने से पूर्व भाषण देने की अनुमति दी गई, केवल तीन या चार वक्ताओं को सीमित समय दिया गया तथा 7 बजे सत्र के बाद प्रस्ताव पारित कर दिया गया। इसके बाद क्या हुआ? यह विधेयक प्रवर समिति को भेजा गया। प्रवर समिति ने इस पर रिपोर्ट भेजी तथा उस रिपोर्ट के प्रस्ताव पर विचार के लिए इस सदन में व्यवस्था का प्रश्न उठा। मैं व्यवस्था की उन महत्वपूर्ण बातों के बारे में कुछ बोलना नहीं चाहता। उन्हें निपटा दिया गया है। यह अधीरता इतनी अधिक थी कि गत सत्र में माननीय विधि मंत्री केवल यही चाहते थे कि विधेयक को विचार करने के लिए स्वीकार किया जाए और इस संबंध में कोई भाषण नहीं दिया गया। यह किसी तरह कार्य-सूची में सम्मिलित कर लिया गया। यह बहुत अच्छी तरह किया गया। व्यवस्था के प्रश्न निरस्त कर दिए गए और यह पाया गया कि यह सदन की क्षमता के अन्तर्गत था कि इस विधिकरण पर विचार किया जाए, जैसी कि प्रवर समिति ने रिपोर्ट की है। अब इस तरीके को देखिए, जिसके आधार पर इस विधेयक पर विचार किया जा रहा है। रेलवे बजट और आम बजट के बीच लघु अन्तराल में इस विधेयक पर विचार किया जा रहा है। इसके बारे में कोई गंभीरता नहीं है। कोई भी व्यक्ति इसका महत्व नहीं समझता। देश अधिकांशतः इस प्रक्रिया से आश्चर्यचकित है कि सुदूरगामी महत्व के विधान पर जिस प्रकार विचार किया जा रहा है कि आज जिस स्थिति में हैं, यदि आप इसे महत्वपूर्ण मानते हैं, यदि आप इसमें परिश्रमी हैं, यदि आप चाहते हैं कि कुछ किया जाना चाहिए, सुधार के रास्ते हिंदू कानून का निश्चित रूप से यह रास्ता नहीं है। इस विधेयक को विशेष सत्र में रखें। छोटे बैंकिंग विधेयकों और इसी प्रकार के अन्य विधेयकों पर आप कई-कई दिन लगा रहे हैं। ऐसी स्थिति होते हुए, क्या ऐसे विधेयक पर, जो हिंदू समुदाय के जीवन और आचार को नियमित करता है, अव्यवस्थित रूप से विचार किया जाना चाहिए, जैसा कि यहां किया जा रहा है? मैं ऐसे तरीके का घोर विरोध करता हूँ, जिसमें इस महत्वपूर्ण विधेयक पर विचार किया जा रहा है। आप जानते हैं कि कल 3 बजे रेलवे की पूरक मांग प्रस्तुत की गई थी और बाद में, आम बजट प्रस्तुत किया गया था। माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं इस प्रकार के विधेयक के संबंध में इस प्रकार की प्रक्रिया अपनाने का अभ्यस्त नहीं हूँ। मैं विधानमण्डल के पुराने सदस्यों से पूछता हूँ कि वे इस प्रकार का कोई पिछला उदाहरण बताएँ।

बाबू रामनारायण सिंह : ऐसा कोई भी उदाहरण नहीं है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : श्रीमान, प्रश्न यह है कि क्या इस संहिता को बनाने की कोई आवश्यकता है। मुझे बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं लगती, क्योंकि मेरी विद्वान मित्र

श्रीमती दुर्गाबाई ने कहा है, हिंदू कानून सुस्थापित है और इसने लगभग सौ वर्षों से अपने स्वरूप को बनाए रखा है। पुराना हिंदू कानून, जब ब्रिटिश लोग यहां आए थे, भारतीय पंडितों की सहायता से समझाया जाता था। वे अपने को पंडित न्यायाधीश कहते थे, जिन्होंने स्मृतियों और धर्म शास्त्रों का विशद् अध्ययन किया था और वे कानून की व्याख्या करते थे। यह प्रक्रिया उस समय तक जारी रही, जब तक वे शेष स्मृतियों, निबंधनों तथा प्रथाओं से हिंदू कानून को बनाने वाले न्यायिक सिद्धांतों की प्रणाली का प्रादुर्भाव करने में सफल नहीं हो गए और जो अब कानून अपने कार्यक्षेत्र में सक्रिय हैं।

श्रीमान, यह सर्वविदित है कि हिंदू कानून विश्व में सबसे पुराना विहित विधि शास्त्र है।

डॉ. मॉन मोहन दास (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : यह ठीक नहीं है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : हाँ, हिंदू कानून ठीक नहीं है। हिंदू समाज ठीक नहीं है। हिंदू ठीक नहीं हैं। किसी भी व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं है कि हर बार हस्तक्षेप करने पर उत्तर दिया जाए कि हिंदू कानून ठीक नहीं है। इस हस्तक्षेप में केवल तीन शब्दों का प्रयोग किया गया है। मैं नहीं समझता कि क्या तीन शब्दों में लगाए गए झाड़ू लगाते आरोप 'ठीक नहीं हैं' का जवाब देने की मुझमें क्षमता है। कोई प्रणाली अच्छी है या बुरी, यह समाज के निर्णय करने का विषय है। हताश अथवा असुन्तष्ट व्यक्तियों के लिए नहीं है। परन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि इसकी दृढ़ता का सबसे विश्वसनीय प्रमाण यह है कि यह हिंदू कानून शताब्दियों के परीक्षण में स्थिर रहा है। कोई भी ऐसी पद्धति जो आन्तरिक रूप से बुरी, अस्थिर और न्यायविहीन हो, वह अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकती। हिंदू कानून और उससे नियंत्रित हिंदू सामाजिक पद्धति जो उसके द्वारा शासित हुई है, उसके धक्कों तथा क्रान्तियों को सह चुकी हैं जो गत काल-खंडों में देश में वेग से आती रहीं। ऐतिहासिक विभीषिकाओं ने कई देशों यथा मिस्र, रोम, एसीरिया, बेबीलोनिया की प्राचीन सभ्यताओं को नष्ट कर दिया, जबकि हिंदू संस्कृति या समुदाय, जो अपने उद्गम की तारीख नहीं बता सकते, अभी तक अपनी पूरी शक्ति और ऊर्जा के साथ कार्य कर रहे हैं। और मुझे विश्वास है कि ईश्वर उसे तब तक कार्य करते रहने में सहायता करेगा, जब तक हम इन असंगत तथा हल्के तरीकों को अपनाकर इसकी नींव ही न खोद डालें। यदि हिंदुत्व की नींव में वास्तव में कुछ कमजोरी होती तो वह इतने दीर्घ समय तथा अवरोधक इतिहास के काल के विध्वंसों में अपना अस्तित्व बनाए न रख पाता। यह देश हजार वर्षों से अधिक समय तक विदेशी शासन-सत्ता के अधीन रहा है। इतिहास ही बताएगा कि भारत ने कैसी विचित्र अनुकूलता प्रदर्शित की है। प्रतिध्वनि से आपको विदित होगा कि हिंदू कानून में नम्यता और अनुकूलता के अंश हैं जिससे वह बदलती हुई आवश्यकताओं तथा समय की चुनौतियों को पूरा करने के लिए अपने को समायोजित कर लेता है।

श्रीमती जी दुर्गाबाई : वाह! वाह!!

श्रीमती रेणुका रे : अब परिवर्तन होना है, (हस्तक्षेप)।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मुझे प्रसन्नता है कि मेरे भाषण के बीच हुए हस्तक्षेप से मुझे विचार करने का कुछ समय मिल गया। कृपया हस्तक्षेप एक साथ न करें। उपाध्यक्ष महोदय, मैं इतना बड़ा बेवकूफ नहीं हूँ कि अनेक लोग मेरी बातों से आश्वस्त हो जाएंगे, परन्तु मुझे आशा है कि हम में से कई सदस्य इस बारे में कुछ विचार करेंगे कि मुझे क्या कहना है। आशा कर लूँ कि मैं निष्ठापूर्वक हिंदूत्व, हिंदू कानून की वकालत करता हूँ। हिंदू संस्कृति में अविस्मरणीय परम्पराएं हैं, कालान्तर के चिन्तन हैं जो शायद हमारे लिए बुद्धिमत्ता नहीं होगी कि हम कलम से एक बार में ही उन्हें हटा दें। मैं यह अपील अपने दक्षिण पक्ष तथा वाम पक्ष के सभी सदस्यों से करना चाहता हूँ। श्रीमान, मैं आशंकित हूँ कि वर्तमान हिंदू संहिता विधेयक हमारे लिए क्या कर रही है? मैं इसमें हिदू जैसी कोई बात नहीं देखता। इसे अहिंदू कहना शायद अधिक ठीक है अथवा 'हिंदू विरोधी' संहिता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : मुस्लिम संहिता?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : यह चाहे और कुछ भी क्यों न हो, पर हिंदू संहिता नहीं है। यह हिंदूत्व की श्वास नहीं लेता; इसमें हिंदू-विरोधी विचारों का समावेश है। इसमें हिंदू भावना के प्रति तीव्र भर्त्सना है, जो इस विधेयक में प्रारंभ से अन्त तक छायी हुई है।

श्री एच.वी. कामथ : हिंदू भावना क्या है?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : श्रीमान, क्या आप इसे हिंदूत्व कहते हैं? आप कृपया अपनी विवाह और उत्तराधिकार की पद्धति पर विचार करें, जो हिंदू पद्धति अथवा हिंदू समाज का आधार स्तम्भ है। क्या आप इसे कम आंकना चाहते हैं जैसा कि आप कर रहे हैं? यही वह प्रश्न है जिसका उत्तर आपको न सिर्फ हमें, बल्कि इस देश से बाहर के लोगों और भावी पीढ़ियों को भी देना है।

श्रीमान, मैं महसूस करता हूँ कि यदि हम कानून को इसी तरीके से संहिताबद्ध करना चाहते हैं, जैसाकि इस कानून को संहिताबद्ध किया जा रहा है, तो यह केवल बौद्धिक मनोरंजन है। इसमें संहिताबद्ध करना केवल औपचारिक करना है। अतः मैं माननीय सदस्यों से अपील करूंगा कि यह बुद्धिमत्तापूर्ण है। किसी ने भी इसकी आवश्यकता महसूस की है। इस बारे में अलग-अलग उच्च न्यायालयों तथा जिला न्यायालयों से न्यायाधीशों के मन देखे जाएं। यही वे लोग हैं, जिन्हें हिंदू कानून को लागू करना है। क्या सरकार ने न्यायपालिका से उन मांगों के बारे में मत एकत्र किए हैं कि क्यों हिंदू कानून को संहिताबद्ध किया जाना है और उस तरीके के बारे में भी जिसके माध्यम से यह किया जाना है? नहीं। क्या लोगों की ओर से वह आम मांग रही है, जिन्हें स्वयं

मार्गदर्शन करना है, अपने जीवन का मार्गदर्शन करते हैं और इस कानून के उपबंधों द्वारा अधिशासित होते हैं? क्या इस प्रकार की मांग रही है? मेरे मित्र दक्षिण पक्ष कहते हैं: नहीं यह बिल्कुल सही है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : वे आपका समर्थन करते हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मेरे माननीय मित्र कहते हैं, वे मेरा समर्थन करते हैं। वे सच का समर्थन करते हैं। देश को आश्चर्य होगा कि हम कर क्या रहे हैं। हमें अपनी आत्मा पर इस प्रकार की चापलूसी का मरहम नहीं लगाना चाहिए कि हम कोई बुद्धिमानी का कार्य कर रहे हैं। मैं जानता हूं कि मैं अपने को धोखा नहीं दे सकता, जैसाकि आप अपने को धोखा दे रहे हैं। यदि यह बुद्धिसंगत होता तो मैं यह आवश्यक न समझता कि इसे संहिताबद्ध करने का प्रयत्न किया जाए, क्योंकि मैंने इस बारे में कारण बता दिए हैं। आप इसको एकरूपता नहीं दे सकते चाहे कुछ भी क्यों न हो। और यदि हिंदूवाद कुछ भी है तो इसकी विविधता में ही सैद्धांतिक एकता भी है। यही हिंदुत्व का सारतत्व बनाते हैं, हिंदू कानून और हिंदू संस्कृति। इतने बड़े विशाल देश में आप स्वाभाविक भिन्नता की अवहेलना करते हुए किसी प्रकार की मानकीकृत एकता की आशा नहीं कर सकते। यदि आपने आशा की तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि आपको संताप उठाना पड़ेगा। आप इसको अभी महसूस नहीं कर सकते, परन्तु समय आने पर आप इसे महसूस कर सकेंगे। इन सभी के बाद, यहां तक कि इस संहिताकरण के बाद क्या इससे आपके उद्देश्य की पूर्ति हो रही है? मेरा कहना है, नहीं। कल मैसूर के माननीय सदस्य ने अपना भाषण दिया था। उन्होंने कहा था, अब कार्य इतना सरल हो गया है कि चार आने या छः आने का प्रकाशन लेने पर आपको विदित हो जाता है कि हिंदू कानून क्या है। कई मित्रों ने जोर से कहा, बिल्कुल ठीक। बिल्कुल ठीक। परन्तु क्या ये उत्साही सदस्य यह महसूस करते हैं कि इस विधेयक के प्रस्तावक तक यह आशा नहीं करते कि वह हिंदुओं के इस पूरे कानून को संहिताबद्ध कर देंगे। वे अपनी प्रस्तावना में एक शालीन-सा दावा करते हैं, जो असंगत दावा नहीं है: उनका कहना है:

"जहां यह समीचीन है कि भारत के प्रान्तों में वर्तमान में लागू हिंदू कानून की कुछ धाराओं का संशोधन और संहिताबद्ध किया जाए।""

अतएव, क्या किए जाने का प्रस्ताव है? कुछ धाराओं को संहिताबद्ध करने का यथा विवाह का कानून, उत्तराधिकार का कानून और गोद लेने का कानून। मोटे तौर पर कहा जाए तो वे मुख्य बातें यही हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : तो बचा क्या?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मेरे माननीय मित्र पूछते हैं कि हिन्दू कानून में बच क्या गया है। क्या मेरे माननीय मित्र सोचते हैं कि यही सब कुछ है, जिसके लिए हिंदू

कानून खड़ा है? यही तीन धाराएँ हिंदू जीवन के समग्र क्षेत्र और देश के कार्यकलाप को इंगित करती हैं? मैं इस अनभिज्ञता के प्रति केवल सहानुभूति प्रकट कर सकता हूँ। संयुक्त परिवार की संपत्ति, विभाजन, संयुक्त परिवार का व्यवसाय, धार्मिक और धर्मार्थ न्यास, उपहार, और अंतरण और दूसरी चीजें? वे विशाल क्षेत्र का निर्माण करते हैं, जिन्हें छोड़ दिया गया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : उसमें वसीयतों का भी संदर्भ दिया गया है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : वसीयत का केवल संदर्भ दे देने का अभिप्राय यह नहीं है कि इस बारे में संपूर्ण और व्यापक रूप से विचार किया गया है। चाहे कोई भी स्थिति क्यों न हो, मैं डॉ. अम्बेडकर का आभारी हूँ। वे शालीन हैं। वे इस बात का कभी दावा नही करते कि उन्होंने थका देने वाली संहिता को प्रस्तुत किया है। यदि मेरे दक्षिण पक्ष के मित्र यह सोचते हैं कि यही संपूर्ण हिंदू संहिता है, तो वे अम्बेडकर की सोच से बाहर हैं। श्रीमान, यदि इस हिंदू संहिता को उसी रूप में पारित कर दिया जाता है, जिस रूप में हमारे सामने प्रस्तुत है, तो किसी अन्य कारण से भी इसके उद्देश्य की भर्त्सना की जाएगी। मेरी माननीय बहन दुर्गाबाई और मैसूर से आए मेरे माननीय मित्र ने कल कहा था, ठीक है, आप इसके बारे में क्यों चिन्तित हैं: इससे कृषि-सम्पत्ति के टुकड़े-टुकड़े नहीं होंगे। मैं नहीं जानता कि उन्होंने महसूस किया कि वे इस विधेयक को रद्द करने के लिए सबसे सशक्त दलील दी थी। अनभिज्ञतावश मेरी बहन और भाई ने इस विधेयक को देखते ही रद्द करने के लिए सबसे सशक्त दलील दे दी थी। आप सम्पत्ति के निपटारे को नियमित करने जा रहे हैं। अब यह सामान्य तौर पर स्वीकार किया जाता है कि इस देश में 90 प्रतिशत अचल सम्पत्ति गांवों में है, केंद्र शासित क्षेत्रों को छोड़कर प्रांतों में है। अतः वे इस संहिता के दायरे में बाहर होंगे। घर-मकान और अन्य स्थायी सम्पत्ति केंद्र शासित क्षेत्र के अन्तर्गत, सीधे भारत सरकार के अधीन है पर संहिता लागू होगी। इसके बाद यह दावा किस प्रकार है कि यह संहिता सभी प्रांतों के सभी हिंदुओं पर लागू होगी? इस विधेयक को बाहर फैंकने के लिए यह सबसे सशक्त दलील है। बाहर फैंकना इस आधार पर जिनका मैंने उल्लेख किया कि यह विधेयक अपने उद्देश्यों की पूर्ति में असफल है। तीन वर्गों के अलावा जिनका मैंने उल्लेख किया कई अन्य बातें हैं जिनके बारे में अब भी विचार किया जाना है। यह दलील दी जाएगी कि संविधान के अधिनियम के अनुसार प्रांतों की कृषि-भूमि प्रांतों का अपना विषय है। इसी प्रकार धार्मिक और धर्मार्थ न्यास की सम्पत्तियां हैं, इसी प्रकार संयुक्त परिवार की सम्पत्ति है और विभाजन तथा स्वतः अर्जित सम्पत्ति आदि के विषय हैं। जब इन विशाल क्षेत्रों पर विचार नहीं किया जाएगा, मैं सदन से गंभीरपूर्वक पूछता हूँ कि क्या वे उन लोगों के दावों से वास्तव में संतुष्ट हैं जो यह विचार करते हैं कि यह संहिता एक थका देने वाला विषय होने जा रहा अथवा पूर्ण रूप से अलिंगन करने वाली संहिता है तथा यह संहिता सभी सामाजिक और आर्थिक बुराइयों

के लिए रामबाण है, जिनमें हिंदू-रक्त के संबंध को ही उत्तराधिकारी समझा जाता है। क्या वे वास्तव में विश्वास करते हैं कि इस संहिता की 139 धाराएं विटामिन की गोलियां, जो समस्त हिंदू समाज को सशक्त बना देंगी? आप इस विचार को मान सकते हैं, सदन इसे मान सकता है, मैं उस विचार को नहीं मानता। इसके विपरीत मेरा विचार है कि यह संहिता नितांत अपरिपक्व है,अपूर्व है। यदि हिंदू संहिता को कानून बना लिया जाता है, तो भी यह संहिता तब तक लागू नहीं की जा सकती, जब तक प्रान्तीय सरकारें अपने प्रान्त में इसी प्रकार के विधान पारित न कर लें, कृषि-भूमि के हस्तान्तरण के लिए। प्रत्येक प्रान्त को ऐसा करना होगा, ताकि इसके बाद यह अधिनियम सभी प्रांतों में लागू किया जा सके। इस समय मैं राज्यों के बारे में नहीं कह रहा हूँ, मैं प्रान्तों के बारे में बता रहा हूँ। इसके अलावा यह विचारणीय नहीं है कि प्रांत अलग-अलग निर्णय कर सकते हैं। यह बात केन्द्रीय सरकार के लिए नहीं है कि प्रान्तीय सरकारों को बाध्य किया जाए कि वे उत्तराधिकार की श्रेणी विशेष के लिए विधान तैयार करें, उसके निर्देश के अनुसार कृषि-सम्पत्ति के हस्तान्तरण की श्रेणी विशेष में तैयार करें। इसके बाद धरातल पर प्रांतीय स्वायत्तता असफल हो जाएगी और मैं आश्वस्त हूँ कि प्रांतीय मंत्रालय केन्द्र से आए ऐसे किसी भी प्रस्ताव को हाथ नहीं लगाएंगे, चाहे जितनी शक्ति से कहा गया हो यदि यह निर्देश उनके अपने विचारों के विरुद्ध हो।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या मैं सदन की सूचना के लिए यह बताऊं कि अभी 37 सदस्य हैं, जिनके बोलने के लिए अपनी पर्ची या पत्र मुझे प्राप्त हुए हैं जिनमें से अधिकांश सदस्य विधेयक के बारे में अपने विचार व्यक्त करने के लिए आतुर हैं। यदि सभी सदस्यों को अवसर नहीं दिया जा सकता कि वे अपने विचार व्यक्त करें तो मैं यह सुझाव दूंगा कि माननीय सदस्य का भाषण कितना ही रोचक क्यों न हो, फिर भी जो मुद्दे उठाए गए हैं विधेयक के पक्ष में कृपया दसरे सटीक उत्तर दूसरे पक्ष को देने दें। ताकि सभी बिन्दुओं पर विचार हो सके और ये अच्छी बहस के लिए लाभकारी होगा। डॉ. अम्बेडकर ने संहिता के बारे में दलीलों सहित स्पष्ट विश्लेषण दे दिया है। अलबत्ता सदन यह जानना चाहेगा कि ये बातें गलत क्यों हैं और दूसरी ओर उन्हें किस प्रकार पूरा किया जा सकता है। अतः अधिक ध्यान उन्हीं बातों की ओर दिया जाना चाहिए तथा उन वक्ताओं की ओर भी ध्यान देना चाहिए, जो प्रतीक्षा सूची में हैं।

श्री एच.वी. कामथ : श्रीमान, क्या मैं आपसे निवेदन कर सकता हूँ कि इस विधेयक के अत्यधिक महत्व की दृष्टि से दो या तीन दिनों का समय अपर्याप्त होगा और कम से कम एक सप्ताह या दो सप्ताह का समय सामान्य बहस के लिए दिया जाना चाहिए।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : श्रीमान, आपने जो विचार व्यक्त किए हैं, मैं उनका बहुत आदर करता हूँ। यदि मैंने यह छाप छोड़ी है कि मैं अंड़गेबाजी कर रहा था, तो मुझे इस पर खेद है। मैं आपसे निवेदन कर सकता हूँ, श्रीमान, कि यह विधेयक अत्यधिक

महत्व का है और सदन के लिए यह नितांत अनुचित होगा कि आप हमें यह कहें कि इस सामान्य बहस को विराम देते हुए निष्कर्ष पर पहुंचा जाए, क्योंकि प्रथम अवस्था में हमें तनिक भी अवसर नहीं मिला कि हम भाषण दे सकें। अब ऐसी अवस्था है जब हम विधेयक के सिद्धांतों के प्रति प्रतिबद्ध हैं जिस स्थिति में हमें यह देखना है कि कब उत्तम तरीके से हम अपने देश की सेवा कर सकते हैं, सीमित स्थितियों में भी। यदि अभी 36 वक्ता बोलने के लिए प्रतीक्षारत हैं, तो यह स्पष्ट संकेत है कि विधेयक ने गंभीरता से ध्यान आकर्षित किया है और वे इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करना चाहते हैं। इसलिए विधेयक पर चर्चा के लिए प्रस्तावित समय-सीमा की पवित्रता विशेष का कोई महत्व नहीं है।

यदि हम आज चर्चा के निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाते, तो निसंदेह आगे बहस के लिए अधिक दिनों की आवश्यकता होगी। माननीय विधि मंत्री इस बारे में अधिक उत्साही हैं, वह इसके लिए एक अतिरिक्त सत्र दे सकते हैं। यदि ऐसा नहीं हो सकता तो अतिरिक्त चार या पांच दिन इसी सत्र में दिए जा सकते हैं। विषय पर पूर्ण रूप से बहस की जानी चाहिए, मुझे आशा है कि सदन इसकी समाप्ति के लिए स्वीकृति नहीं देगा और न ही मैं विचार करता कि मुख्य सचेतक द्वारा बहस की समाप्ति के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाएगा और इस प्रकार के प्रस्ताव की समाप्ति सचेतक द्वारा तब तक नहीं की जा सकती, जब तक जान लिया नहीं जाता कि विधेयक पर पूर्ण और पर्याप्त बहस हो चुकी है।

श्री एच.वी. कामथ : एक दूसरी बात है, श्रीमान! क्या मैं आपसे निवेदन कर सकता हूँ कि प्रांतीय विधानसभा के सदस्य जो यहां उपस्थित नहीं हैं, को आमंत्रित किया जाए और वे बहस में भाग लें?

माननीय उपाध्यक्ष : अब हम सदन को स्थगित करेंगे''

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : श्रीमान, मैंने अभी तक अपना भाषण समाप्त नहीं किया है। मैं समझता हूँ दोपहर के भोजन के बाद पुनः मुझे भाषण प्रारंभ करने दिया जाए।

माननीय उपाध्यक्ष : जी हां, अब हम दोपहर के भोजन के लिए सदन को स्थगित करेंगे। सदन तब दोपहर के भोजन के लिए ढाई बजे तक स्थगित होती है।

दोपहर के भोजनावकाश के बाद ढाई बजे पुनः सदन की कार्रवाई प्रारंभ की गई। तब श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव (अध्यक्ष के पैनल से एक सदस्य) ने अध्यक्ष का आसन ग्रहण किया।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : भोजनावकाश के लिए सदन के स्थगित होने से पूर्व मैं यह बात स्पष्ट करने का प्रयत्न कर रहा था कि यह संहिता कुछ खास वजह से उद्देश्य में असफल रहेगी। मैंने यह स्पष्ट किया था कि संहिताबद्ध करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि हिंदू कानून सभी दृष्टि से सुस्थापित ही नहीं है, बल्कि उन लोगों को अच्छी

तरह पता भी है, जो उसके द्वारा शासित होते हैं। मैंने यह भी स्पष्ट किया था कि जो व्यक्ति इस अधिनियम को व्यवहार में लाते हैं, मेरा अभिप्राय न्यायाधीशों तथा देश की न्यायपालिका से है, जिसमें उच्चतम न्यायालय भी सम्मिलित है, उन्होंने कभी भी यह मांग नहीं की है कि इस कानून को संहिताबद्ध किया जाए और मैंने यह भी स्पष्ट किया है कि इस विधेयक का कार्यक्षेत्र अत्यंत सीमिति है। इसमें विवाह, गोद लेने और उत्तराधिकार की व्यवस्था किए जाने के अलावा अन्य अनेक क्षेत्रों के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। कृषि–भूमि का उल्लेख करते समय, मैं सदन को यह बता सकता हूँ, कि इस देश में अनेक न्यायिक निर्णयों के अनुसार, भूमि के प्रश्न में अनेक प्रकार के हित और विषय निहित और स्वीकृत हैं, जो सर्वोच्च श्रेणी के जमींदारों से लेकर भूमि जोतने वालों तक हैं, जो हल चलाने वाले हैं और यदि अलग–अलग प्रांतीय सरकारें केन्द्रीय अधिनियम में दिए गए तरीकों से भिन्न तरीकों से सम्पत्ति के वितरण को नियमित करती हैं, इस तरह की उलझन से और भी गड़बड़ी हो सकती है।

श्रीमान, इसके बाद मैं यह कहना चाहूंगा कि इस संहिता ने अपने सीमित क्षेत्र में विद्यमान हिंदू कानूनों को अपने में समाहित करने की कोशिश की है और इस प्रक्रिया में कई ऐसी बातें मिला दी गई हैं; जिनमें विवाह और उत्तराधिकार भी शामिल हैं, जो स्थापित हिंदू विचारों के विरुद्ध हैं। इसलिए यह केवल समाहित करने, ठीक करने और संशोधन प्रस्तुत करने का प्रश्न नहीं है, क्योंकि संशोधन अति सौम्य शब्द है। यह अपेक्षा से कहीं अधिक परिणाम देता है। यह नई खोज करता है, दूरगामी परिवर्तन करता है। केवल विवाह संबंधी कानून में ही, अपितु उत्तराधिकार के कानून में भी ऐसा करता है। श्रीमान, मैं चाहता हूँ कि सदन को उन सभी परिवर्तनों के बारे में स्पष्ट रूप से बता सकूं जो इस विधेयक में निहित हैं। परन्तु मैं पूर्णरूप से यह कार्य सम्पन्न करने में सक्षम नहीं हूँ। मैं शीघ्रता से यह स्पष्ट करने का प्रयत्न करूंगा कि मैं इन परिवर्तनों के बारे में क्या सोचता हूँ।

दो कोटि के परिवर्तन, मेरे मत में और मेरे देश के एक बड़े वर्ग के मत में मूलभूत और अत्यधिक प्रभाव डालने वाले हैं। इन दोनों का संबंध विवाह और उत्तराधिकार से है। श्रीमान, मेरे माननीय मित्र ने निस्संदेह अपनी संहिता में सांस्कारिक विवाह के लिए व्यवस्था की है। मैं नहीं जानता कि यदि इस देश में, उस क्षण तक, जब तक इस विधेयक का मसौदा तैयार किया गया था तथा उसे यह रूप दिया गया जैसा कि वह अब है, क्या वास्तव में लोगों ने इस देश की सरकार से यह मांग की थी कि वह कोई ऐसी प्रक्रिया प्रस्तावित करे, जिससे इस देश में विवाह सम्पन्न किए जाएं। मेरे विचार से यह किसी व्यक्ति का मामला नहीं है कि इस विधेयक से पूर्व लोगों ने अपने विवाह न किए हों या हमारे विवाह करने में काफी कठिनाई रही हो! परन्तु विवाह में किस प्रकार सुधार किया जाएगा, मैं नहीं जानता। इन विवाहों के लिए मेरी सिद्धान्तिक आपत्ति यह

है कि एक ओर इसमें उस प्रकार के विवाह के लक्षण दिखते हैं जैसे सांस्कारिक विवाह के लक्षण होते हैं, किंतु इस सांस्कारिक विवाह के अन्तर्गत ऐसी कई बातें प्रारंभ की गई हैं, जिन्हें विचार की दृष्टि से सांस्कारिक विवाह नहीं कहा जा सकता अथवा पवित्र धर्मानुष्ठान विवाह नहीं कहा जा सकता। प्रतिबंधित कोटियां देखिए। पक्षों के लक्षणों की ओर देखिए। यहाँ अन्तरजातीय विवाह हो सकता है, जाति से बाहर विवाह हो सकता है। सगोत्र विवाह हो सकता है और इसके साथ ही वह सांस्कारिक विवाह भी होगा। श्रीमान, यह भी रोचक बात है कि एक ओर सांस्कारिक विवाह प्रस्तावित किया जा रहा है, इसके साथ ही सिविल मैरिज का भी प्रस्ताव है। मैं नहीं जानता कि इस प्रकार से विवाह को हिंदू संहिता में किस प्रकार सम्मिलित किया गया है। इस तरह उन्होंने नितांत भिन्न स्थिति पैदा की है, परन्तु सबसे आपत्तिजनक स्थिति यह है कि जब सांस्कारिक विवाह के प्रारुप में प्रतिबंधित कोटियों का एक विशेष वर्ग रखा गया है तथा सिविल मैरिज में पूर्णतः भिन्न वर्ग रखा गया है। वहां प्रतिबंधित कोटि की परिधि को कम किया गया है। इतना ही नहीं, बल्कि कई मामलों में यह विशुद्ध कौटुंबिक विवाह हो गया है। श्रीमान, मैं नहीं समझता, यह क्यों आवश्यक था? क्या हम इस विधिकरण द्वारा सभी प्रकार की नैतिक शिथिलता और अवैधता के लिए प्रत्यक्ष प्रोत्साहन देना चाहते हैं? जो दुर्भाग्य वश इस देश के युवा वर्ग पर आक्रमण कर रही है। तो क्या हम अपने अनुमोदन की मुद्रण-अनुमति दे रहे हैं? यह ऐसा प्रश्न है जिस पर मैं अपने माननीय मित्र से अधिक गंभीर रूप से विचार करने और उत्तर देने के लिए कहूँगा और यह हंसी-मजाक अथवा हल्केपन की भावना से नहीं, परन्तु ऐसी गंभीरता से उपजा है, जिसकी मांग, एक कठिन सामाजिक समस्या के कारण भी उठी है।

मैं महसूस करता हूँ कि हिंदू विवाह की आधारभूत संकल्पना में तलाक के विषय को विधेयक में शामिल करके सबसे असंगत प्रहार किया गया है और यह स्थिति विवाह संबंधी हिंदू विचारों से विपरीत है। हिंदू विवाह, जैसा कि उस प्रत्येक व्यक्ति को ज्ञात है। जो स्वयं हिंदू कहलाता है, जो खुद को हिंदू होने का दावा करता है। जो ईमानदारी से अपने को हिंदू कहलाने का गौरव प्राप्त करता है, जैसा कि मैं हूँ, सांस्कारिक विवाह है और वह सिविल कांट्रेक्ट (कोर्ट की शादी) नहीं है। इस प्रकार यह हमारे लिए स्वीकार करना कठिन नहीं होगा कि तलाक की संकल्पना विदेशी है। विवाह के द्वारा मिलन मेल पवित्र है। हिंदू शास्त्रों के अनुसार और नितांत रूप से अविच्छेदनीय है। (हस्तक्षेप)। यदि आप चाहते हैं कि मैं अपना भाषण छोटा कर दूं तो आप केवल महत्वपूर्ण मामलों में ही मेरा हस्तक्षेप करें। मुझे हस्तक्षेपों से भय नहीं है, मैं जानता हूँ कि उनका किस प्रकार उत्तर देना है। मैं उनका अपने ही तरीके से उत्तर दे सकता हूँ। परन्तु यदि आप मुझे इसी प्रकार हस्तक्षेप करते रहेंगे, मेरा भाषण अनायास लम्बा होता जाएगा तथा मैं जो उत्तर दूंगा, उन पर आप भी प्रसन्नता महसूस नहीं कर पाएंगे।

बाबू रामनारायण सिंह : ऐसा ही होना चाहिए।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : इस देश में अथवा अन्य किसी देश में तलाक की संस्था उस समुदाय के कल्याण को प्रोन्नत करने में सक्षम नहीं पाई गई है, जिसके लाभ के लिए यह विद्यमान है। समाज विज्ञान का विनम्र विद्यार्थी होने के नाते मुझे विवाह संबंधी अदालतों की रिपोर्टें पढ़ने का अवसर मिला है। एक माननीय सदस्य ने न्यायाधीश लिंडसे का संदर्भ दिया है और मुझे विश्वास है कि वे भी 'युवाओं का विद्रोह' के बारे में भी विचार करते होंगे। मैं नहीं जानता कि क्या मेरे माननीय मित्र ने यह महसूस किया कि उन्होंने इस प्रकार के विवाह का विरोध करने के लिए अनजाने में ही एक सशक्त दलील दी, जब उन्होंने उस महान न्यायाधीश का संदर्भ दिया। मैं चाहता हूँ कि माननीय सदस्य सावधानीपूर्वक विचार करें, यदि परिवार की परिधि में पुरुष और उनकी मां के भाई की बेटी अथवा पिता की बहन की बेटी के साथ वैवाहिक संबंधों की अनुमति देनी चाहिए, जैसी कि इस हिंदू संहिता में व्यवस्था की गई है।

श्री एच.वी. कामथ : यह आम बात है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : यह दक्षिण भारत के लिए आम हो सकती है, परन्तु दक्षिण भारत ही समस्त भारत नहीं है। मेरी मूल बात यह है कि देश के किसी विशेष भाग में किसी विशेष प्रकार की प्रथा है, तो आपको यह देखने के लिए अपने रास्ते से भटकना नहीं चाहिए, कि वह पूरे देश के लिए लागू हो जाए।

मैं ऐसे प्रांत का हूँ जो दक्षिण में नहीं है। यह पिछड़ा हुआ प्रांत है, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी पिछड़ा हुआ है। आप उसे कुछ भी कह सकते हैं। उसे बंगाल का पिछड़ा प्रांत कह सकते हैं। वहां जो परिवार रह रहे हैं, मैं उनकी घरेलू परिस्थितियों से अवगत हूँ। आप बंगाल के किसी प्रकार में जाएं तो आप देखेंगे कि बेटे, बेटियों और अन्य स्वाभाविक उत्तराधिकारियों के अलावा संबंधियों के सभी रूप, बहन के बेटे, भतीजे, भतीजियां, मामा के बेटे, चाचा की बेटियां आदि, सभी परस्पर संबंधित हैं तथा संयुक्त परिवार पद्धति से जुड़े हुए हैं। वे सभी नैतिक और धार्मिक प्रभावों द्वारा नियमित और संयमित हैं। आप वहां यही स्थिति सभी परिवारों में देखेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : कठिनाई क्या है?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : निःसंदेह, कुछ नहीं है, आप समाज की चिन्ता नहीं करते, आप ऐसे समाज में विश्वास करते हैं, जहां केवल सामाजिक तितलियां हैं, जो इधर-उधर शहद चूस रही हैं तथा आमोद-प्रमोद में लीन हैं। परन्तु मैं ऐसे समाज के लिए हूँ जिसने भारत के लिए ऐसा स्थान प्राप्त कर लिया है अथवा भविष्य में प्राप्त करेगा, जो उसका अपना है। वह स्थिति जिसके लिए विश्व ने इस देश का आदर किया है। यदि आप इन बातों को त्याग देते हैं, यदि आप एक विवरण पत्रिका के रूप में

हिंदू संहिता प्रस्तुत करते हैं, जहां आप सभी प्रकार के विवाहों को पाते हैं अर्थात् प्रथम चचेरे-ममेरे भाई-बहनों और रक्त के संबंधों में विवाह के लिए स्वीकृति देते हैं और यदि इन सभी कौटुंबिक अगम्यागमन के विवाहों को विधिसम्मत ठहराते हैं, तो समाज नैतिक पतन में धंस जाएगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मैं 'अगम्यागमन' शब्द के प्रयोग का विरोध करता हूं। यह बिल्कुल गलत है कि ऐसी पद्धति की तीव्र भर्त्सना की जाए तो देश के एक बड़े भाग में प्रचलित है। यह उस पूरे प्रांत पर आक्षेप है।

माननीय अध्यक्ष : शांत-शांत।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : इसलिए मैं कर नहीं सकता परन्तु ऐसी पद्धति के विरोध में अपना स्वर ऊंचा करता हूँ क्योंकि मैं समझता हूँ कि चचेरे भाई-बहनों के बीच विवाह जैव और संतानोत्पत्ति की दृष्टि से समाज कल्याण के लिए भी उपयुक्त नहीं है तथा हिंदू कानून के उद्देश्य के विरुद्ध है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : नहीं, ऐसा नहीं है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : केवल समाज के दृष्टिकोण से ही नहीं, अपितु पारिवारिक जीवन की शान्ति और शुद्धता के लिए भी यह उचित नहीं है। अतः मैं चाहता हूँ कि इसकी भर्त्सना की जानी चाहिए। यह अनैतिक एवं अत्याचारपूर्ण है।

श्रीमान, मेरी माननीय बहन दुर्गाबाई ने ठीक ही कहा है कि एक पत्नीत्व विवाह का विरोध नहीं किया जाना चाहिए। मैं सदन में किसी माननीय सदस्य को नहीं जानता जो वास्तव में एक पत्नीत्व विवाह को नहीं मानेगा। हम में से प्रत्येक एक पत्नीत्व विवाह चाहता है। यह केवल हमारी पसंद के लिए ही नहीं, अपितु परिस्थितियों ने भी हम पर दबाव डाला है कि एकपत्नीत्व विवाह को स्वीकार किया जाए। यह सत्य है कि हमारे देश में उच्च वर्गों से बहुपत्नीत्व विवाह पूर्णतया समाप्त हो गया है और यह कानून द्वारा नहीं हुई है। यही मेरा मुख्य मंतव्य है कि यदि आप सामाजिक बुराई को समाप्त करना चाहते हैं, तो आपको आन्तरिक ढंग से काम करना चाहिए ऊपर से नहीं। यदि हमारे माननीय सदस्य इस देश के इतिहास का अध्ययन करें, तो वे मेरे कथन को अधिक सही पाएंगे। हम सब विधवाओं के दुःख और कष्टों से भली-भांति अवगत हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जिनमें ऐसी बाल विधवाएं और युवा विधवाएं सम्मिलित हैं, जो हमारे दिल तोड़ देती हैं अथवा किसी न किसी प्रकार हमारे हृदय तोड़ने के लिए है। वास्तव में, गत पीढ़ी के प्रतिष्ठित एवं पंडित विद्यासागर इससे इतने अधिक प्रभावित हुए थे कि उन्होंने हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित करा लिया। परन्तु देश इस अधिनियम को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था और इसका परिणाम क्या हुआ? यह अधिनियम वास्तव में व्यर्थ हो गया और अभी तक ऐसा ही बना हुआ है। ऐसी स्थिति उन सभी सामाजिक विधानों की होनी है, जो समाज के भीतर से उठी माँग के अनुसार नहीं बने हैं।

मैं सदन को बता रहा था कि बहुपत्नीत्व वास्तव में देश से कई ऐसे विभिन्न कारणों से विलुप्त हो गया, जैसे वैवाहिक जीवन के उत्तरदायित्व की बढ़ती हुई समझ, महिला वर्ग में बढ़ती हुई चेतना तथा इसके अलावा सभी प्रकार की शक्तियों की अन्योन्य क्रियाएं जिसमें सबसे अधिक आर्थिक शक्ति है, जो यह असंभव बना देती है कि भोग-विलास एक ही समय में कई पत्नियों के साथ में डूबे रहा जाए। इसलिए मैं कहता हूँ कि इसके लिए विधान की कोई आवश्यकता नहीं है, वह स्वतःमृत हो गई है। यह रिवाज अब अनुपयोगी बन गया है। यह दलील दी जा सकती है कि समाज में कुछ ऐसे स्तर भी हैं जहां इसका चलन है। वहां भी मैं चेतावनी देना चाहता हूँ। आप उसे बल अथवा बाध्य करा कर नहीं रोक सकते। आपको जनमत तैयार करना होगा और जब हमारे अभागे भाई इस पद्धति की बुराई को महसूस कर लेंगे, तो वे उसे त्याग देंगे। दूसरी ओर बिना उनके जीवन-स्तर को ऊंचा उठाए बिना शिक्षा तथा लोकमत द्वारा उनमें चेतनता पैदा किए। यदि आप यह प्रयत्न करते हैं कि किसी विधान को उनके गले में उतार दिया जाए, तो मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप यह महसूस करें कि इसका उस पर क्या प्रभाव होगा। जैसे मेरी माननीय बहन बता रही थीं कि वे यह कहेंगे, यह हमारा समाज है, यह लोहे का ऐसा ढांचा है जो हमें दूसरी पत्नी को रखने की अनुमति नहीं देगा। तब हम समाज के दूसरे रूप में प्रवेश करेंगे, दूसरे धर्म को स्वीकार करेंगे जहां इसकी अनुमति है। कोई भी समाजविज्ञानी, कोई भी आदमी जो सामाजिक सुधार में रुचि रखता है, उसकी ओर भी ध्यान देगा। यह भय बिल्कुल ऐसा नहीं है, जिसका आधार न हो। जो भी हो, मैं यह महसूस करता हूँ कि यदि आपने हिंदू कानून को संहिताबद्ध किया है तो जो किया जाना चाहिए, वह यह कि विवाह की जो आवश्यकताएं हैं, वे प्रस्तावित की जाएं, करार करने वाले पक्षों की आवश्यकताओं को निर्धारित किया जाए, उनकी उम्र उनकी मानसिक और शारीरिक क्षमताएं, प्रतिबंधित रिश्ते और इसी प्रकार की अन्य बातें जो व्यक्ति सामाजिक समारोहों और उत्सवों में विश्वास करते हैं, वे अनुष्ठानिक विवाहों को स्वीकार कर सकते हैं। परन्तु विवाह की आवश्यक शर्तों की दृष्टि से सांस्कारिक विवाह और सिविल विवाह में अन्तर नहीं होना चाहिए। यदि देश में अन्तर्जातीय विवाहों के मांग है तो मैं तो मैं वहां खड़ा नहीं रहूँगा। यदि लोग जातियों से बाहर विवाह करना चाहते हैं तो उन्हें 1874 सिविल विवाह अधिनियम के उपबंधों को प्रत्येक दशा में स्वीकार करना चाहिए। इस समय उन लोगों के मार्ग में कोई अवरोध नहीं है, जो अपनी जातियों के बाहर विवाह करने को उत्सुक हैं। यदि अन्तर्जातीय लड़कों और लड़कियों के बीच विश्वसनीय प्रेम है तो ऐसा नहीं है कि हम उन्हें रोक रहे हैं अथवा उन्हें अलग कर रहे हैं। वर्तमान कानून के अन्तर्गत उन्हें खुली सुविधाएं प्राप्त हैं, कानून जिसका उल्लेख मैंने पहले किया है। आप इस कानून को बदल भी सकते हैं। आप कुछ प्रावधानों को निरस्त अथवा संशोधित भी कर सकते हैं कि उस अधिनियम के अन्तर्गत विवाह करने वाले अपने बच्चों को उत्तराधिकार अधिनियम द्वारा शासित नहीं करेंगे जो वर्तमान में हैं अपितु हिंदू कानून द्वारा

शासित करेंगे। मुझे इस संबंध में कोई आपत्ति नहीं है, पर मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि क्यों हिंदू संहिता में सांस्कारिक विवाह के साथ-साथ सिविल विवाह की अनुमति दे रहे हैं। इसे पूर्णतः संहिता से बाहर किया जाना चाहिए क्योंकि उसका इसके साथ कोई संबंध नहीं है। सभी के लिए सिविल विवाह कानून अलग होना चाहिए।

श्रीमान, मैं व्यक्तिगत रूप से यह महसूस करता हूँ कि यदि आप उसमें तलाक के प्रश्न पर भी जोर देते हैं, तो आपको देश में सर्वत्र कठिनाई का सामना करना पड़ेगा और जब तक आप अपने कानों में रूई नहीं ठूंस लेते, जैसा कि हममें से अधिकांश लोग बतौर जनता सेवक करते हैं, तो आपको बहुत कुछ मूल्य चुकाना होगा। अतः किसी भी दशा में मैं बतौर हिंदू जोरदार ढंग से हिंदू विवाह की पद्धति में तलाक की अपधर्मी संकल्पना के आरंभ किए जाने का विरोध करता हूँ।

अब हमें उत्तराधिकार के प्रश्न पर विचार करना चाहिए। इस बारे में भी अभिनवीकरण हुआ है, यद्यपि मैं इसके विवरण के बारे में अधिक विस्तार से विचार नहीं करना चाहता। परन्तु इस बारे में मैं अपनी माननीय बहन श्रीमती दुर्गाबाई को बताना चाहूँगा कि हम प्राचीन हिंदू कानून पुरोधाओं के निर्णय में दृढ़ विश्वास रखते हैं; हम सभी पुरुष और महिलाओं की समता में विश्वास रखते हैं। यद्यपि उस अर्थ में नही जैसा कि वे अथवा उनके मित्र बात करते हैं। समानता, अवसर की समानता के अर्थ में होनी चाहिए। आप पुरुष तथा स्त्री को शारीरिक दृष्टि से एक समान नहीं बना सकते। इसलिए समानता का कुछ अन्य अर्थ होना चाहिए। महिलाओं के साथ हीनता की भावना नहीं हो, बेटियों की शिक्षा अथवा उनके विवाह के संबंध में किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं हो। हमारे शास्त्रों में व्यवस्था है:

"कन्याप्येवं पलनिय, शिक्षानियतिगातन्त देय भोरय विदुष, दान रत्न समन्विता"

जिसका अर्थ यह है कि बेटी को भी लड़कों के समान शिक्षा दी जानी चाहिए और समय आने पर उसका उचित वर के साथ विवाह कर देना चाहिए तथा उसे प्रचुर मात्रा में दहेज तथा आभूषण भी देने चाहिए। और मेरे समाज अर्थात् हिंदू समाज में बताया गया है:

"यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमंते तत्र देवता"

इसका अर्थ यह है कि ईश्वर परिवारों को आशीर्वाद देता है, जहाँ महिलाओं का सम्मान किया जाता है। महिलाओं को हिंदू समाज में उच्च और प्रतिष्ठित स्थान दिया गया है। मैं इस बात से इनकार नहीं करता कि कुछ ऐसे कठोर मामले भी हो सकते हैं, ऐसे कठोर मामले भी हैं, जहां महिलाओं के साथ वैसा व्यवहार नहीं होता, जैसा कि होना चाहिए। परन्तु यदि आज अपने ऋषियों तथा सन्तों, विधिवेताओं अथवा नेताओं के आदर्शों से हट गए हैं, तो उन्हें दोष ही दिया जा सकता, क्योंकि उन्होंने आपको नीचा

नहीं दिखाया है। यह कलंक हमसे सम्बद्ध है। यदि आप अपने आचरण में महात्मा गांधी के आदर्शों के निकट नहीं हैं, परन्तु उन आदर्शों को आप अवसरानुकूल या उसके बिना भी बताते रहते हैं अथवा प्रत्येक बात में उनका नाम लेते हैं पर उनके चरणचिह्नों पर नहीं चलते तो यह दोष महात्मा जी का नहीं है, यह दोष हमारा है। ठीक उसी प्रकार आप हिंदू शास्त्रों अथवा विधिवेताओं का प्रतिवाद करते हैं, उन्होंने उच्च आदर्श स्थापित किए हैं, यह बात आपके लिए है कि आप उन आदर्शों के अनुकूल चलें। हमारे सर्वोत्तम प्रयत्नों के बावजूद यह संभव नहीं है कि प्रत्येक अन्याय अथवा संकट को समाप्त किया जा सके। मानव संस्थाएं अपूर्ण हैं। कोई भी मानवीय दक्षता कोई प्रक्रिया नहीं बना सकती, कोई मशीन अथवा कोई एजेन्सी जिससे सामाजिक अन्याय की सभी संभावनाओं को पूर्णतया समाप्त किया जा सके। हमें इसके बारे में स्पष्ट होना चाहिए और हमें इसे स्वीकार भी करना चाहिए।

मेरी मित्र ने सम्पत्ति के प्रबंधन के तारतम्य में बताया कि वे ऐसी महिलाओं को जानती हैं, जो सम्पत्ति की कुशल प्रबंधक हैं...

माननीय श्री एन.वी. गाडगिल (निर्माण, खदान व विद्युत मंत्री) : वे पुरुषों के भी हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : हाँ, वे पुरुषों की भी हैं। मैं नहीं सोचता कि इस सदन में कोई भी ऐसा विवाहित सदस्य है, जो इस से विवाद करेगा। पारिवारिक क्षेत्र में महिला शासक है। वही सब कुछ है। हममें उच्चतम है। विधि मंत्री अथवा उनके माननीय साथी उसके सामने झुक जाएंगे, चाहे वे यहाँ जितना ही दहाड़ें। वहां छड़ी द्वारा आप पर शासन नहीं किया जाता, परन्तु ऐसे विविध प्रकार के चाबुकों द्वारा शासन किया जाता है जो प्रेम के कोमल और मुलायम धागों से सज्जित हैं, जो सभी प्रकार की कटुता और कठोरता को वहां ले जाती हैं। अतः पुरुष वर्ग प्रसन्नता से उसके शासन के समक्ष झुक जाता है। वह पारिवारिक कार्यों की रानी है। कई विवाहित लोग मेरे विचार में अधिकांश विवाहित लोग यह बात स्पष्ट रूप से स्वीकार करेंगे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : यही वह तरीका है, जिससे हम महिलाओं को धोखा देते हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : अब हम इस संहिता द्वारा उन्हें धोखा देने जा रहे हैं। क्या आप यह सोचते हैं कि उनके साथ सबसे महान न्याय किया जाएगा, यदि आप उन्हें सम्पत्ति में उचित भाग दे देंगे। अध्यक्ष महोदय, हिंदू विचारों के अनुसार बच्ची की विशेष स्थिति होती है, उसकी भूमिका बेटे की भूमिका से नितांत भिन्न होती है। किसी भी माननीय सदस्य ने जिसने संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया है अथवा उसे उसका ज्ञान है, मैं किसी भी प्रकार से यह अनुमान नहीं लगा सकता कि क्या ज्यादातर लोग इसे जानते हैं अथवा इसे कोई भी नहीं जानता...

एक माननीय सदस्य : विधि मंत्री जानते हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : वे जान सकते हैं, वे विद्वान हैं। हमारे एक अमर कवि ने 'शकुन्तला' में लिखा है कि शकुन्तला के विवाह के उपरान्त अपने पति के घर के लिए प्रस्थान करते समय एक श्लोक है जो अपने में शास्त्रीय है और तथा जो सारांश में यह बताता है कि हिंदू विधिवेत्ता तथा हिंदू समाज उसके कुमारीत्व के बारे में क्या विचार करते हैं। जैसे ही शकुन्तला ने अपने पति के घर जाने के लिए आश्रम छोड़ा, ऋषि कंव ने कहा, "आज मैं मुक्त महसूस कर रहा हूँ।"–

"अर्थो ही कन्या परकिया ऐव तमं अद्ध सम्देश्य प्रतिग्रहिता
जाति मयायंग विशदः प्रकाय प्रत्यार्पित नस्य इवन्तरात्म्"

"यह मेरा हृदय, मेरी अन्तरात्मा, आज भारी भार से मुक्त हो गई है और मैं अन्तरात्मा की मुक्ति के आनन्द से ओत-प्रोत हूँ।" आखिर वह भार क्या था? बेटी एक परिवार में किसी अन्य व्यक्ति के घर की धरोहर या अमानत है और जैसे ही वह धरोहर सही स्वामी को सौंप दी जाती है, तो राहत मिलती है। मैं भी आज महसूस करता कि शकुन्तला को उसके पति को सौंपते हुए इन दिनों नहीं जहां कानून की अपनी सीमा है। अपितु मैं 'न्यास' के उन दिनों का उल्लेख कर रहा हूँ। न्यास का अर्थ जमा अथवा ट्रस्ट है। यदि मेरे माननीय मित्र डॉ. कामथ इससे आगे व्याख्या चाहते हैं, तो मैं सदन के बाहर अपने कक्ष में देने को पूरी तरह सहमत हूँ।

श्री एच.वी. कामथ : परन्तु मैं 'डॉक्टर' नहीं हूँ?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आप डॉक्टर से भी अधिक हैं। आप डॉक्टर, दार्शनिक, वकील और विधायक हैं। मैं आपका बहुत आदर करता हूँ। आप बहुत अच्छे हैं और इन सबसे ऊपर देशभक्त हैं।

श्रीमान, लड़कियों के बारे में यही संकल्पना है। इसलिए यदि हिंदू कानून देने वालों ने परिवार में उन्हें बेटों के समान स्वामित्व का अधिकार नहीं दिया गया तो इसका कारण लड़कियों के प्रति विमुखता या अरुचि नहीं है अपितु इसका एकदम सरल कारण यह है कि लड़की पति के परिवार के लिए बनी है। उसे उस परिवार की अभिन्न अंग नहीं माना जाता जहां उसका जन्म हुआ है। यह पूरी बात है और इसलिए अन्याय अथवा असमानता का प्रश्न नहीं उठता। मैं किसी भी हिंदू कानून के उस स्कूल के बारे में नहीं जानता जो देश के किसी भाग में प्रचलित हो और जहां बेटी को अपने पिता की सम्पत्ति में बेटे के समान भाग दिया गया हो।

श्री ए. करुणाकरण मेनन (मद्रास : सामान्य) : यह प्रचलन मलाबार में विद्यमान है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मुझे प्रसन्नता है कि दक्षिण में इस प्रकार की अनेक बातें प्रचलित हैं।

श्रीमती ऐनी मेसक्रेरीन (ट्रावनकोर राज्य) : ट्रावनकोर में भी बेटों और बेटियों को समान भाग दिया जाता है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं इस सूचना के लिए आभारी हूँ परन्तु इस प्रकार की सूचना दक्षिण से आती है, और यदि दक्षिण के मेरे मित्र...

श्रीमती हंसा मेहता (बम्बई : सामान्य) : क्या दक्षिण में वे हिंदू नही हैं?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : जी हाँ, परन्तु यदि वे गौरवान्वित हैं कि यह सब कुछ दक्षिण में है, तो उन्हें तो वे इससे इंकार न हो कि उत्तर तथा उत्तर-पूर्व के अपने शिष्टाचार तथा रिवाज़ों के प्रति हमें भी गौरवान्वित होने का हक है। यह मेरा उनसे नम्र निवेदन है। मैं इस प्रकार की बहस पसन्द नहीं करता। यदि बम्बई में किसी प्रकार के उत्तराधिकार, किसी प्रकार की विरासत का अधिकार प्रचलित है अथवा देश के किसी अन्य भाग में यह उचित माना जाता है, इसे बंगाल और अन्य भागों में लागू किया जा सकता है। इन सब पर बात किए बगैर कि यह एक ऐसा पौधा है, जो किसी विशेष प्रकार की माटी में पैदा होता है और बढ़ता है। यदि किसी विशेष संस्था को दक्षिण में अधिक सफलता से काम करना पाया जाता है तो उसे वहां कार्य करने दिया जाए। परन्तु यदि वह उत्तर अथवा पूर्व, अथवा पश्चिम की माटी के लिए वह उपयुक्त नहीं है, तो मैं कोई कारण या संगतता नहीं देखता कि उसे बलपूर्वक वहां रोपा जाए।

वास्तव में हिंदू संहिता में सबसे गंभीर आपत्ति यह है कि सैद्धान्तिक समानता की सनक में आप विविधता की पूरी तरह अवहेलना कर देते हैं। आपको कुछ बातें इस भू-भाग में मिलेंगी और कुछ बातें उस भू-भाग में, इससे यह विदित होता है कि हमारे विशाल देश में विशेष स्थानों अथवा क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुसार विशेष प्रकार के शिष्टाचार और रिवाज़ विकसित हो गए हैं। उन्हें निर्बाध छोड़ देना चाहिए। तथापि विधेयक की धारा 7 में अधिक्रमण शक्ति की व्यवस्था की गई है, जिसके द्वारा सभी प्रथाएं और प्राचीन रिवाज़, जिन्हें प्रचलित कानून की शक्ति प्राप्त है, हटा दिए जाने चाहिए। मैं सोचता हूँ कि यही धारा 7 है।

एक माननीय सदस्य : यह धारा 4 है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं अपने मित्र का संशोधन-प्राधिकार स्वीकार करता हूँ। श्रीमान, यह मेरा मत है कि यह स्थिति अत्यंत आपत्तिजनक है, क्योंकि किसी प्रथा का स्पष्ट प्रमाण कानून के पाठ को भी पीछे छोड़ देता है। यह एक सुप्रसिद्ध सुस्थापित कथन है कि प्रथाओं और शिष्टाचार की विभिन्न विविधताएं हैं, क्योंकि लोगों की

अलग-अलग आवश्यकताएँ होती हैं जो इस विशाल महाद्वीप का निर्माण करती हैं। और इसीलिए 'महाजनो येन गतः स पंथः'।

"वेद विभिन्न स्मृत्यः विभिन्न नसउ मुनिर यस्य यातं नाभिन्नं।
धर्मस्य तत्वं निहिते गुह्यं महाजनो येन गतः स पंथ।"

एक माननीय सदस्य : चलिए हम सभी महाजन हों।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : महाजन का अर्थ ऋणदाता नहीं है।

वह सभी के लिए सबसे क्रूर चोट है। इससे किस हद तक गहराई विदित होती है कि समाज का पतन हो गया है। हम रुपए या डालर या शिलिंग या पेंस के सिवाए कुछ नहीं सोच सकते। महाजन की विविध प्रकार से व्याख्या की गई है। महान व्यक्ति या उनमें से अधिकांश जैसे चाहे आप इसे अच्छे अर्थ में स्वीकार कर सकते हैं।

"वेद रिवाज सदाचार स्वरूप च प्रियमंत यन यस्मिन् देश येदाचरा॥"

मैं कई अन्य उदाहरण देकर सदन को थकाना नहीं चाहता। परन्तु यह ऐसा विषय है कि मैं इसको बिल्कुल छोड़ भी नहीं सकता। यदि मैं अपने विचारों की संगतता से न्याय के माननीय सदस्यों को कायल करना चाहता हूँ, हिंदू शास्त्रों पर आधारित विचारों से। मैं सदन के समक्ष अपनी बात स्पष्ट करना चाहता हूँ। सदन इस बात को रद्द कर सकता है जो कुछ मैंने कहा है: इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। परन्तु मैं उस निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधि हूँ, जो विशुद्ध रूप से क्षेत्रीय नहीं है, परन्तु वह ऐसा निर्वाचन-क्षेत्र है, जिसमें अनेक पुरुष और महिलाएं जो हिंदूत्व और हिंदू समाज में विश्वास करते हैं, जो प्राचीनकाल से ऋषियों की ऋचाओं से अधिशासित होते हैं। श्रीमान, फिलहाल मैं उस निर्वाचन-क्षेत्र के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता हूँ। यह सत्य है कि मैं इस संविधान सभा में अप्रत्यक्ष चुनाव पद्धति द्वारा आया हूँ। सिर्फ चार या पांच वोट से, परन्तु मैं सदन को विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने देश के काफी कुछ अधिक महत्व के चुनाव लड़े हैं जो काफी महत्वपूर्ण निर्वाचन-क्षेत्र रहे हैं। इस संविधान सभा में आने के पहले मैंने केन्द्रीय विधानमंडल में कलकत्ता शहर का प्रतिनिधित्व किया है। इसके पूर्व मैंने कई जिलों को बनाकर उस प्रसीडेंसी डिवीजन का प्रतिनिधित्व किया था, जिसमें लाखों लोग हैं और प्रेसीडेंसी डिवीजन को भारत के सबसे सांस्कृतिक डिवीजनों में से एक डिवीजन माना जाता है। मैं लोगों को जानता हूँ, मैं उनकी नाड़ी पहचानता हूँ। मेरा अपना नगर प्राचीन शास्त्रीय विद्याओं के लिए प्रसिद्ध है। बंगाल में मेरा नाडिया जिला है, जिसने स्मृतियों, तंत्र, न्याय, वैष्णव दर्शन आदि की नवीन विचारधाराएं दी हैं। मैं विषयांतर नहीं कर रहा हूँ, परन्तु मैं उस महान संस्कृति के उत्तराधिकारियों के प्रति कर्तव्य निभाने में असफल रह जाऊंगा, यदि मैंने हिंदू संहिता के इन मामलों के संबंध में अपने मत और

विचारों को सदन के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया। मेरा अपने और समुदाय के प्रति कर्तव्य है कि अपने विचारों को व्यक्त करूं, ताकि किसी अन्तर्निहित गलती के कारण निर्णय हमारे विरुद्ध न हो जाए। जो भी हो मुझे शीघ्रता करनी चाहिए।

मैंने आपको और सम्मान बता दिया है, जो शास्त्रों ने हमारी महिलाओं को दिए हैं। जब प्रसिद्ध रानी इन्दुमती का निधन हो गया था तो राजा अजह ने उनके शोक में इस प्रकार विलख उठे थे–

"गृहिणी सचिव मित: सखी प्रिय शब्द ललित कारक विंध
करुणा जिम लेखन मृदना हरत वदे किंग ना या हेतं।"

''ओह, कठोर मृत्यु के देवता! आपने मुझ से क्या नहीं छीन लिया? आपने मेरे साथ क्या अन्याय नहीं किया? एक प्रहार में आपने उसे छीन लिया, जो मेरी गृहिणी थी, घर की रानी अर्थात् मेरी सचिव कौन थी? सचिव अर्थात् मंत्री। वह मेरी मंत्री थी। वह मेरे परिवार की रानी ही नहीं थी, अपितु मेरी मंत्री थी, एकान्त में मेरी अनन्य मित्र थी तथा मेरे प्रेम में समर्पित साथिन थी।''

श्रीमान, यही वह स्थान था, जो हमारे समाज में महिलाओं को मिला था। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि केवल लोभ, लालच, द्वेष अथवा बैर या आप चाहे कुछ भी कहें, के कारण महिलाओं को निचली श्रेणी में गिरा दिया गया था। अगर उसे बेटे के समान उत्तराधिकार के संबंध में विशेष प्रतिष्ठा नहीं दी गई है, तो इसका कारण यह है कि वह अपने पिता के परिवार के अलग किसी अन्य परिवार के लिए है और कि उस परिवार की सम्पत्ति का उन्हीं लोगों में निराकरण होना है, जो उस को परिवार देखते हैं। वे वंश को बनाए रखते हैं तथा पारिवारिक परम्पराओं, आचार-विचारों और रिवाजों की पवित्रता को बनाए रखते हैं तथा जो परिवार की प्रथाओं और समारोहों को बराबर मनाते रहते हैं। जैसे ही एक कन्या का विवाह हो जाता है, वह दूसरे परिवार में घुल-मिल जाती है और हिंदू संकल्पना के अनुसार, पत्नी की स्थिति पति के परिवार में अत्यंत आदरणीय हो जाती है। इस आदर से भी अधिक जो बेटी को पिता के घर मिलता है। मैं पुन: कालीदास कृत 'शकुन्तला' का उदाहरण देना चाहूँगा। जब रानी शकुन्तला को राजा दुष्यन्त पहचान न सके, तो उन्होंने कहा–"मुझे याद नहीं आता कि मैंने आपसे विवाह किया है।" उसके बाद ऋषि द्वारा शकुन्तला को उपदेश दिया जाता है कि उसे अपने पति के घर में दासी के रूप में रहना है। चाहे दासी के रूप में भी क्यों न हो, क्योंकि पिता के घर की तुलना में उसकी यही सम्मानीय स्थिति है।

माननीय श्री एन.वी. गाडगिल : यही वह स्थिति है जिससे आदमी लोग व्यवहार करते हैं?

श्री एम. तिरुमला राव (मद्रास : सामान्य) : वह याददाश्त खोने से पीड़ित थे।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : नहीं, वह विस्मृत होने से पीड़ित नहीं थे। इसका कारण यह था कि राजा दुष्यंत एक श्राप से ग्रसित थे, जिसके कारण उन्हें अपने विवाह से संबंधित सब बातें भूलना था। वे जानबूझकर भूल के नैतिक दोषी नहीं थे। आश्चर्यजनक अज्ञानता है।

श्री बी.एन. मुनावल्ली (बम्बई राज्य) : यह कैसा माफीनामा है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं शकुन्तला काव्य का रचयिता नहीं हूँ। आप इसे बहाना कहें या आप तो चाहे कहें। मुझे उसकी चिन्ता नहीं है। परन्तु मैंने शकुन्तला का उदाहरण इसलिए दिया है कि इसके रचयिता कालीदास विश्व कवि हैं और विश्वभर में उनका सम्मान है और आप के द्वारा शकुन्तला अवज्ञा किए जाने के बावजूद वह कृति सदैव विश्व की अनुपम साहित्यिक कृति के आदर्श के तौर पर मानी जाएगी। हमारी राष्ट्रीय संस्थाओं, संस्कृति और परम्पराओं की अविज्ञा करने की कोई सीमा होनी चाहिए। श्रीमान, अध्यक्ष महोदय मुझे प्लेटो की प्रसिद्ध पंक्ति याद आती है। मैं उसे इस समय ज्यों का त्यों नहीं दोहरा सकता, परन्तु उन्होंने कहा था–'कोई व्यक्ति जो अपने देश की परम्पराओं, उसकी शानदार विरासत और संस्कृति के प्रति अनादर भाव रखता है, वह देशद्रोही है तथा वह ऐसा व्यक्ति है जिसे बड़ा दंड दिया जाना चाहिए।' मैं उन लोगों की देशभक्ति को नहीं समझता, उनकी राष्ट्रभक्ति को जिनके पास अपनी प्राचीन संस्कृति और उत्तराधिकार के प्रति केवल भर्त्सना और उपहास के अलावा और कुछ नहीं है।

श्री एच.वी. कामथ : आपने गलत समझा। हम में से कोई भी अपनी प्राचीन संस्कृतियों का विरोधी नहीं है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : हम इस संहिता के संबंध में किन्हीं मामलों में मतभेद रख सकते हैं, परन्तु इससे किसी के भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। न मेरे, न आपके हमारे महान प्राचीन ऋषियों की प्रतिष्ठा को कम करते हुए यहां माफी भी मांगते नहीं आ रही है। वे आपके रेडिया–प्रचार तथा समाचार–पत्रों के समाचारों की चिन्ता नहीं करते। उन्होंने किया, जो वे समुदाय के हितों के लिए सर्वोत्तम मानते थे। यदि आप आज उत्तराधिकार के मामले में बेटी को भी बेटे के समान मानते हैं, तो मुझे आशंका है कि इसमें अनेक जटिलताएं उत्पन्न हो जाएंगी। जब लड़की को यह पता लगता है कि उसे अपने पिता की सम्पत्ति में भाग मिल रहा है, जब उसके भाइयों को यह पता है कि उनकी बहन सम्पति में सहभागी है तथा इससे सम्पत्ति उसके विवाह के साथ किसी अन्य परिवार में हस्तानान्तरित हो जाएगी, तो इसमें किसकी रुचि होगी कि लड़की का विवाह करा दिया जाए? मैं यह जानना चाहता हूँ।

श्री एच.वी. कामथ : उसकी (लड़की) अपनी रुचि होगी।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मेरे माननीय मित्र ने कहा है कि लड़की की अपनी रुचि होगी कि यथाशीघ्र विवाह हो जाए। श्रीमान, मैं महसूस करता हूँ कि इस प्रकार लड़की को अपने ही मार्ग में अनेक गड्ढे मिलने लगेंगे।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : क्या आप उस (लड़की) पर अविश्वास करते हैं?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : अविश्वास का प्रश्न ही नहीं है। हिंदू ऋषियों ने यह व्यवस्था दी है कि दम्पत्ति के माता-पिता द्वारा दम्पत्ति के सर्वोत्तम हितों को देखते हुए, विवाह के लिए मोल-भाव करना चाहिए।

श्रीमती रेणुका रे : शकुन्तला ने किया किया?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं जानता हूँ कि शकुन्तला ने उस तरीके से विवाह नहीं किया। परन्तु मेरे मित्र और बहन के हस्तक्षेप करने पर मुझे एक कहानी याद आती है। एक व्यक्ति ने छः महीने तक महाभारत और रामायण का पाठ अपने घर में करवाया। इसके बाद उसने अपनी बेटी से पूछा—"तुमने कहानी सुनी। तुम्हें इससे क्या सीख मिली?" बेटी ने उत्तर दिया—"महाभारत से मुझे यह सीख मिली कि मैं भी पांच पति रख सकती हूँ जैसे कि द्रौपदी के पांच पति थे।" पूरी महाभारत के सुनने के बाद यह वह था जो उसने यही सीखा। इसी तरह रामायण की कथा सुनने के बाद उसकी पुत्रवधु ने कहा, यह बिल्कुल स्पष्ट है—"जैसे ही मेरे पति का निधन होगा, वैसे ही मैं अपने पति के भाई के साथ विवाह कर सकती हूँ। "आप जानते हैं कि रावण की मृत्यु के बाद क्या हुआ? उनकी विधवा मन्दोदरी ने उनके भाई विभीषण के साथ विवाह कर लिया।" श्रीमान, हिंदू कानून के अनुसार कई प्रकार के विवाह होते हैं। एक विवाह 'गंधर्व' होता है, जिसके बारे में हमने विधेयक में कोई व्यवस्था नहीं की है, यद्यपि संहिता में इस प्रकार के सभी मामलों के लिए सिविल विवाह की व्यवस्था की गई है। इसलिए, मैं कहता हूँ कि इस संहिताबद्ध हिंदू कानून से साधारण हिंदू परिवारों में आप अलग-अलग सदस्यों के रिश्तों के बीच परिवर्तन ला रहे हैं। क्या यह संबंधों में मधुरता लाने जा रहा है अथवा पारिवारिक जीवन में शांति?

बाबू रामनारायण सिंह : किसी भी प्रकार संभव नहीं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : ऐसा नहीं हो कि भाइयों, बहनों और बहनों के पतियों के मध्य मधुरता बनी रहे जो वर्तमान में है। क्योंकि जब लड़की का विवाह हो जाता है, तो वह ससुर के घर से अपने पति, अपने बेटे या किसी अन्य व्यक्ति को रखने के लिए ले आयेगी, पिता के परिवार की सम्पत्ति पर नियंत्रण रखा जा सके। इसका परिण ाम कटुता, द्वेष, ईर्ष्या और मुकदमेबाजी या न जाने क्या-क्या होगा। अन्ततोगत्वा परिवार

खंडित हो जाएगा। क्या हम ऐसी संहिता बना रहे हैं, जो परिवार को तोड़ने की सभी सुविधाएं जुटा देगा? क्या सामाजिक जीवन का परमार्थ तब हासिल होगा जब प्रत्येक परिवार टूटे और पारिवारिक शांति भंग हो जाए? यह आपके लिए है कि क्या किया जाना चाहिए। मैं यह महसूस करता हूँ कि यह सब घटित तो होना ही है।

श्रीमान, लड़की को शिक्षित किया जाना चाहिए। परन्तु उसके विवाह के बाद जब वह अपने ससुर के घर जाती है तो वह निर्देशित और आपेक्षित की जाती है। सभी मामलों में अपने पति द्वारा अथवा पति के किसी संबंधी द्वारा नहीं होगा। यह उसके हित में है कि उसे विधान द्वारा अपने पिता की सम्पत्ति में भाग मिले। आप यह कहेंगे कि आप एक दूसरा कानून बनाना चाहेंगे आदेशिक किए जाने के विरुद्ध उस सम्पत्ति के संबंध में जो उसे अपने पिता से मिली है। यदि आप हमेशा ऐसे कानून बनाते रहे कि आपको हिंदू संहिता बनाने का बौद्धिक संतोष बना रहे, तो यह बात मैं आप पर छोड़ता हूँ। इसलिए मैं यह महसूस करता हूँ कि यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तन है, और इसे प्रारंभ नहीं किया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं लड़कियों के लिए व्यवस्था के प्रतिकूल हूँ। सभी प्रकार से उनके लिए व्यवस्था की जानी चाहिए। विवाहित लड़कियों के लिए कोई प्रावधान बनाएं। उनकी शिक्षा और विवाह को उनके पिता की सम्पत्ति में पहला दायित्व माना जाना चाहिए। इसे उस सम्पत्ति का पूर्ण दायित्व बनाएं, ताकि उनके विवाह के बाद जब वह अपने पति के घर में घुलमिल जाएंगी, तब वह अपने पिता की सम्पत्ति से वंचित हो जाएगी। परन्तु यह आप नहीं कर रहे हैं। आप लिंग की समानता की बात करते हैं, न्याय और औचित्य की बात करते हैं, परन्तु आप लड़की को अनुमति देते हैं कि वह न केवल अपने पिता की सम्पत्ति को उत्तराधिकार भाई के प्राप्त करें बल्कि वह अपने पति अथवा ससुर की सम्पत्ति में भी भागीदार हो यह समता का अधिकार प्रतिशोध का है। लड़की को दोनों परिवारों से सम्पत्ति नहीं मिलनी चाहिए। इससे सम्पत्ति में ज्यादा टुकड़े हो जाएंगे।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : लड़के को भी अपनी मां की सम्पत्ति में हिस्सा मिलेगा?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : बेटी चाहे वह विवाहित हो, अविवाहित हो अथवा विधवा हो, उसे मां की सम्पत्ति मिलेगी। मेरे माननीय मित्र हिंदू कानून का अध्ययन कर लें। यहां तक कि हिंदू कानून के अन्तर्गत व्यवस्था की गई है, सभी प्रकार की बेटियों को स्त्रीधन सम्पत्ति प्राप्त करने के अधिकारी हैं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : नहीं, नहीं, नहीं, नहीं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं कहता हूँ–हां, हां, हां, हां। इस प्रकार का प्रावधान बेटी के लिए वर्तमान के हिंदू कानून के अनुसार है। मैं दूसरों की आशंकाओं को दूर नहीं कर सकता। ऐसा हिंदू कानून है। कानूनी व्यवस्था से जुड़े सदस्यों को इसकी जानकारी

है। मुझे इस पर परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है, मेरा विश्वास है कि निश्चय ही सम्पत्ति के अधिक टुकड़े हो जाएंगे। इससे अनावश्यक रूप से वसीयत करने की स्थिति पैदा होगी। फलस्वरूप मुकदमेबाजी बढ़ेगी और अन्ततोगत्वा बरबादी होगी।

एक माननीय सदस्य : हाँ, दो गलतियां एक सही नहीं बनातीं। क्योंकि वहां पहले से ही टुकड़े हैं, यह कोई तर्क नहीं है कि अधिक भाग करने के लिए सम्पत्ति के और अधिक टुकड़े किए जाएं, श्रीमान, वसीयत उत्तराधिकार के इस क्षेत्र में एक नवीकरण को सामने रखा गया है, और मैं सोचता हूँ परिवर्तनों में ज्यादा विनाश है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : हाँ।

श्री बी. दास : यह विधेयक का सिद्धान्त नहीं है। आप उसे छोड़ सकते हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : तो बिल का सिद्धांत क्या है?

श्री बी. दास : मैं विभाजन का संदर्भ दे रहा हूँ और यह मुख्य सिद्धान्त नहीं है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : वसीयत उत्तराधिकार का तरीका इस विधेयक की रीढ़ है। इस अधिनियम के अधीन आप मिताक्षर कानून को मिटा रहे हैं। इसके बारे में कोई भूल न करें, क्योंकि जन्म और उत्तरजीविता द्वारा सम्पत्ति पर ऐसा अधिकार समाप्त होने जा रहा है, जो मिताक्षर की नींव है। कानून की मिताक्षर पद्धति सैकड़ों वर्षों से देश को शासित कर रही है, जब तक कि बंगाल में स्वाभाविक न्याय और प्रेम के सिद्धान्त पर आधारित दायभाग पद्धति प्रारंभ नहीं हुई। मेरे कई मित्रों ने, जो इस विधेयक के समर्थक हैं, मुझे बताया है कि मैं अंतिम आदमी होऊँगा इसका विरोध करके जितना संभव हो क्योंकि मरे उत्तराधिकार का सिद्धांत जो दायभाग कानून में निरुपित है, मेरे प्रांत का है। उन्हें मेरा यह उत्तर था कि यह बात मुझे संतोष नहीं देती। मैं तब भी उसे नहीं चाहूंगा यदि भारत में सामाजिक सुधारों के समर्थक चाहते हों कि ऐसा किया जाना चाहिए। चाहने वाले भी इसकी मांग करते हैं। यहां तक कि कोई अतिमानव या तानाशाह आए और मुझसे कहे: इधर देखिये, बंगाल में प्रचलित उत्तराधिकार का कानून समस्त भारत में लागू किया जाना चाहिए। मैं पहला व्यक्ति रहूँगा। इसके विरुद्ध आवाज उठाने। पुरानी पद्धति समय के साथ खरी उतरी है। यह परिवर्तन मेरे प्रांत के अनुकूल हो सकता है, परन्तु संपूर्ण भारत के लिए नहीं। मैं नहीं चाहता कि उत्तराधिकार के इस मिताक्षर कानून को ऐसे कानून के पक्ष में हटा दिया जाना चाहिए, जो न तो उत्तराधिकार का मिताक्षर कानून है और न ही दायभाग का कानून है। यह दोनों का ऐसा संकर मिश्रण है, जो किसी के भी कल्याण के लिए नहीं है और इससे हिंदू समाज के टुकड़े-टुकड़े हो सकते हैं और उसका पतन हो सकता है, क्योंकि यह पूर्णतया सुव्यवस्थित व्यवस्था को अव्यवस्थित कर देगा।

मैं समझता हूँ कि मैंने सदन के धैर्य को थका दिया है और मुझे अपने भाषण

की समाप्ति कर देनी चाहिए (**माननीय सदस्यगण** : नहीं, नहीं)। मैंने विरासत के उत्तराधिकार के बारे में कहा है, मैंने विवाह के बारे में कहा है। मैं महसूस करता हूँ कि हिंदू कानून की यह दो शाखाएं, जिनमें जबरदस्त ढंग से संशोधन किया जाना है को पूरे आयाम के साथ विचार किया जाना चाहिए। परन्तु भारत में हिंदू समाज के लिए दु:खांत स्थिति होगी यदि सुधार के नाम पर हिंदुओं को उनके सुरक्षित और प्राचीन बंधनों से अलग कर दिया जाए जो शताब्दियों के दबावों और झंझावातों से उसे बचाते रहे हैं। मुझे पुनः दोहराने दें कि हमारे शास्त्रों द्वारा सामाजिक जीवन के सभी प्रकार के मामलों के लिए पर्याप्त उपबंधों को बनाने के अलावा स्थानीय रिवाज़ों और प्रथाओं को सुस्थापित करने के लिए व्यापक क्षेत्र छोड़ा गया है। वे अपने प्रभाव में अभिनंदनीय रहे हैं। समाज में स्थिरकारी शक्तियों के रूप में यदि हम उनकी अवहेलना करते हैं तथा संहिताकरण का ताजिब बनाते हैं, तो हम हिंदू कानून को नितांत अनम्य, कठोर और ढलवा लोहे का सांचा के रूप में रूपांतरित करेंगे। हम उसमें अनावश्यक चरित्र का आयात करेंगे जो उसका कभी नहीं रहा। हम इसे किसी ऐसे रूप में बदल देंगे, समय की मांगों के साथ कभी भी समझौता नहीं करेगा जैसा कि यह अतीत में करता था।

श्रीमान, मैं अपने निष्कर्ष पर पहुँचने के पूर्व उस दलील के बारे में कुछ कहना चाहूँगा, जिसे यहां प्रस्तुत किया गया है। परन्तु उन लोगों ने इसे सरल ढंग से बिल्कुल अलग कर दिया है जो इसे पसन्द नहीं करते। यह दलील दी गई है, और मैं समझता हूँ कि यह बिल्कुल ठीक है, कि यह विधानसभा इस बारे में प्राधिकृत नहीं है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : विधि के अनुसार अक्षम?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : जी हां, मैं महसूस करता हूँ कि यह सक्षम नहीं है। किसी भी दशा में यदि आप इसके वैध गठन का सहारा लेते हैं, तो मैं आपको कहूँगा कि नैतिक दृष्टि से इस संहिता को पारित कराने के लिए आपके पास कोई निरापद तर्क नहीं है। मैं जानता हूँ कि यह आपत्ति न केवल हम जैसे लोगों द्वारा नहीं उठाई गई थी, परन्तु उन लोगों द्वारा भी, जो इस देश के राजनीतिक जीवन में बहुत ऊंचा स्थान रखते हैं उच्च राजनैतिक पस्ता के लोगों द्वारा जैसे प्रतिष्ठित और उच्च स्थान प्राप्त माननीय डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद, अध्यक्ष भारतीय संवैधानिक सभा, प्रभु सत्तात्मक निकाय, जिसमें मौसम-बेमौसम हम शपथ लेते रहते हैं। मैं जानना चाहता हूँ, हमारे द्वारा सर्वोत्तम तरीके से विचार किए जाने के लिए उनके दृष्टिकोण का महत्व है या नहीं? व्यक्तिगत रूप से मैं उनका सर्वाधिक सम्मान करता हूँ। वे न केवल बिहार के मुकुटविहीन सम्राट हैं अपितु वे भारत के विवादहीन नेताओं में से एक हैं। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने यथासंभव सबसे ज्यादा स्पष्ट संकेत दिया है। वे केवल बिहार के लोगों का ही नहीं जानते, अपितु बंगाल के साथ-साथ अन्य प्रांतों के लोगों को भी जानते हैं। उन्होंने कलकत्ता में अपनी वकालत प्रारंभ की थी और अपनी आधी आयु बीतने तक वे कलकत्ता में रहे। यह केवल नकारने

के लिए ही नहीं है कि उन्होंने चेतावनी दी, वर्तमान संविधान निर्मात्री सभा जैसे वह आज निर्मित की गई है, में इस प्रकार के विधान पर बहस नहीं की जानी चाहिए। मैं अपने स्वयं के लिए बात कह सकता हूँ। मैं अन्य लोगों की बात नहीं कह सकता। मैं ईमानदारी से महसूस करता हूँ कि किसी भी ऐसे विधिकरण के लिए कानूनी अथवा नैतिक रूप से पक्षधर होने का मुझे कोई अधिकार नहीं है। कोई विधेयक जो दिन-प्रतिदिन के प्रशासन के लिए नितांत आवश्यक नहीं है। मैं केवल चार मतों से संविधानसभा में आया हूं। मैं यहां और अब ईमानदारी से घोषित कर सकता हूँ कि जब मैंने पश्चिम बंगाल विधानसभा के सदस्यों से वे चार मत प्राप्त किए थे, तब मैंने उन्हें कभी यह वचन नहीं दिया था कि मैं उन्हें तलाक का अधिकार दिला दूंगा। न तो उन्होंने इस अधिकार की मांग नहीं की थी। मैं यह भी घोषित करता हूँ कि मैंने उन्हें यह वचन नहीं दिया कि मैं उत्तराधिकार के कानून को समाप्त करने जा रहा हूँ। मैंने उनसे यह भी नहीं कहा कि मैं संविधान सभा में इसलिए जा रहा हूँ कि एक नया विभाग और 'विवाह मंत्रालय' बनवा दूंगा, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि यह केन्द्रीय सरकार में ऐसी संस्था की आवश्यकता होगी, यदि यह विधेयक पारित हो जाता है। उन औपचारिकताओं को देखें, जो यहां प्रदान की गई हैं। अतः व्यक्तिगत रूप से कहा जाए, तो मैं यह महसूस करता हूँ कि इस विधेयक के पक्ष या विपक्ष में मत देने का मुझे कोई अधिकार नहीं है। मैं सदन को सिर्फ यह बतला सकता हूँ कि मैं प्राधिकृत नहीं हूँ, क्योंकि मुझे अपने चुनाव-क्षेत्र से कोई विशिष्ट आदेश प्राप्त नहीं हुआ है। जब मैं आम चुनाव द्वारा यहां आया उस समय देश के सामने स्पष्ट मुद्दे थे यथा देश की स्वतंत्रता की प्राप्ति और उससे सम्बद्ध मामले। और पिछली बार हम यहां आए, हमें केवल भारत के संविधान का निर्माण-कार्य ही करना था। अतः हम अपने दंभ को केवल गौरवन्वित करेंगे कि हम देश के सार्वभौम विधानमंडल के सदस्यों के रूप में सक्षम हैं इस तरह के कानून बनाने के लिए। परन्तु यह दावा कतरा हुआ है सभी तरह की नैतिकता से कुछ भी नुकसान नहीं होगा। यदि हम आगामी आम चुनावों के बाद, किसी अन्य तारीख तक इस विधेयक पर विचार करने के विषय को स्थगित कर दें। अध्यक्ष महोदय, मुझे यह जोरदार शब्दों में कहना है कि इस सदन द्वारा जो समय चुना गया है, वह सबसे हठधर्मी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार को समस्याओं के बाद समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। क्या हम उन समस्याओं का समाधान कर पाए हैं? हमने नहीं किया है। क्या हम अपने देश में अधिक लोकप्रिय हैं हमसे अभिप्राय सभी से है, जिसमें विपक्ष भी सम्मिलित है? बेहिचक, नहीं! क्योंकि हमने आशाएँ जगाई हैं, जिन्हें हम पूरा नहीं कर सके हैं। यह स्थिति कई कारणों से हो सकती है जिन पर हमारा नियंत्रण नहीं है। यह कुछ ताकतों के अंतर्कलह के कारण हो सकती हैं जिन्होंने हमें अनजान और पूर्णतः असन्नद्ध कर दिया है, परन्तु देश भर में असंतोष है। वास्तव में, मैं रुचिकर नहीं लगता। संविधान सभा के सदस्य के रूप में अपनी पहचान बताने का। जब मैं रेलवे के डिब्बे में यात्रा करता हूं, क्योंकि जिस क्षण लोग यह जान जाते हैं, वे

हमारी कटु आलोचना करने लगते हैं।

श्री बी.एल. सौंधी (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : वायुयान से यात्रा किया करें।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैंने वायुयान से यात्रा करना आरंभ कर दिया है। एकदम सत्य है वहां भी मुझे बेहतर नहीं लगता। मैं उपहास नहीं कर रहा हूँ। मैं वास्तव में यह महसूस करता हूँ कि देश हमसे बीमार है, निराश है, क्योंकि यह हमारी विफलता है। आम लोगों की भलाई के लिए वास्तव में कुछ किए जाने के लिए । अभी तक कश्मीर का प्रश्न ज्यों का त्यों है। उपयोग की वस्तुओं की कीमतों का प्रश्न है। कल ही हमने एक शानदार प्रदर्शन का कार्य किया है। दुर्भाग्य से पोस्टकार्ड की दर और कपड़े की कीमत बढ़ाना।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य फिलहाल खुद को विधेयक तक ही सीमित रखें।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं केवल यही कह रहा हूँ कि वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि, श्रमिकों की हड़तालें, साम्यवादियों का डर, शरणार्थी समस्या आदि सरकार के लिए सरदर्द हैं। क्या हमारे लिए यह ऐसा समय है कि हम सामाजिक सुधारों के कानून बनाने की ऐय्याशी को अपनाएं और इतने ज्यादा विवादास्पद कानून को स्वीकार करें? यह निश्चित है कि इसने कड़वाहट उत्पन्न की है, और वास्तव में इसने पहले ही अत्याधिक कटु विवादों को सामने लाया है। मेरा मानना है कि माननीय सदस्यों को इस बारे में पहले ही प्रचुर साहित्य उपलब्ध करा दिया गया है (हस्तक्षेप)। निश्चित ही हिंदू विरोधी समिति और इसी प्रकार की अन्य समितियों तथा कलकत्ता और अन्यत्र के संघों द्वारा। मुझे पूना स्थित महिला संघ से विरोध–पत्र प्राप्त हुए हैं। मुझे बंगाल के महिला संघ से भी विरोध–पत्र प्राप्त हुए हैं। इस संघ के सदस्य देश के उच्चतम वर्ग के हैं। मुझे बंगाल में किसी भी ऐसी बार एसोसिएशन की जानकारी नहीं है, जिसने इसके विरुद्ध विरोध न किया हो। मुझे किसी भी ऐसी बार एसोसिएशन की भी जानकारी नहीं है, जिसने इस विधेयक का समर्थन किया हो। शायद मेरे पास वह सारा साहित्य है, जो अब तक इस विधेयक के संबंध में प्रचारित–प्रसारित किया गया है। मैंने इस साहित्य को वर्गीकृत कर लिया है और ज्यादातर मत गुणवत्ता तथा मात्रा की दृष्टि से इसके विरुद्ध ही हैं। मैं फिर कहता हूं कि यह समय ठीक नहीं है। ऐसे समय जब हमारे प्रधान मंत्री की अपील के अनुसार हमें भेद–भाव को समाप्त कर देना चाहिए, एक हो जाएं, पूर्ण समय और ऊर्जा समर्पित करें। मैत्री और सौहार्द के कार्य करें, ताकि हम अपने देश की समस्याओं को सुलझा सकें। हमें देश में विखंडन के लिए कोई कारण नहीं छोड़ना चाहिए और देश में शत्रुता अथवा शिकायत अथवा असंतोष के लिए दूसरा कारण नहीं देना चाहिए। मैं भी महसूस करता हूँ कि इससे कुछ हानि नहीं हो जाएगी यदि हम इस विधेयक को कुछ समय के लिए आलमारी में रख दें। यदि ऐसा नहीं किया गया तो निःसंदेह मैं यह वचन देता हूँ कि मैं प्रत्येक स्थिति में इस विधेयक का विरोध करूंगा। मैं इस विधेयक का विरोध करता हूँ, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि यह विधेयक पूर्णतया

अवांछित है और इस देश में इस प्रकार के कानून बनाने की कोई मांग नहीं की गई है। मैं इसका विरोध करता हूँ, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि सभी सामाजिक विधान पारित करने की गति मद्धिम होनी चाहिए और कानून बनाने मात्र से सामाजिक सुधार बड़े पैमाने पर नहीं किए जा सकते। ये सुधार लोकमत की शक्ति द्वारा आंतरिक रूप से आने चाहिए। समाज के भीतर पैदा किया जाना है। तीसरे, मैं इस विधेयक का विरोध करता हूँ, क्योंकि इसमें अधिकांशतः अनियमित तरीका अपनाया गया है, विधेयक को इस सदन में पारित किए जाने के लिए। मैं इस विधेयक का विरोध करता हूं, क्योंकि मैं यह महसूस करता हूं कि मैं नैतिक रूप से इस विधेयक पर बहस करने और ऐसे विधानमंडल में इसे पारित करने के लिए सक्षम नहीं हूँ, जो इस समय गठित है। मैं इस विधेयक का विरोध करता हूँ, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि उत्तराधिकार और विरासत के कानून को सम्मिलित करते हुए हिंदू कानून पद्धति के विवाह की संकल्पना में क्रांतिकारी परिवर्तन किए गए हैं। मैं इस विधेयक का विरोध करता हूँ, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि इसमें सिविल विवाह रजिस्टर, सांस्कारिक विवाह रजिस्टर, विवाह नोटिस बुक, विवाहों का महानिदेशक, विवाहों का महापंजीयक, विवाहों का मंत्रालय और इसी प्रकार अन्य चीजों को शामिल करते हुए इस विधेयक से अनेक प्रकार की अनावश्यक जटिलताएं उत्पन्न होंगी। मैं इस विधेयक का इसके आगे इस आधार पर विरोध करता हूँ कि इस विधेयक से हमारे परिवारों में कटुता, विशृंखलता तथा द्वेषभाव बढ़ेगा जो समाज का विखंडन करेगा। मैं इस विधेयक का इस आधार पर भी विरोध करता हूँ, क्योंकि यह विधेयक अलोकतांत्रिक है क्योंकि देश का अधिकांश लोकमत इसके विरुद्ध है। इन सभी कारणों को दृष्टि में रखते हुए, मैं महसूस करता हूँ कि नैतिक दृष्टि के आधार पर मुझमें जितनी भी शक्ति है, उसके आधार पर इस विधेयक का विरोध करूं।

इन कुछ शब्दों के साथ, हाँ ये कुछ शब्द हैं इस महापातक विधान की दृष्टि से। इसमें निहित मुद्दों की गंभीरता की दृष्टि से विरोध स्वरूप मेरे ये कुछ शब्द जो विरोध उभरे हैं और इसकी प्रतिध्वनि समाज पर होगी। कोई भी व्यक्ति जो वास्तव में इस विधानमण्डल की दृष्टि से पैदा हुई इस धमकी से समाज की रक्षा करना चाहता है, वह स्पष्ट और तर्कमूलक हो सकता है। परन्तु उसे इन सभी बातों के लिए विचार करना होगा।

***माननीय श्री एन.वी. गाडगिल** : मैं इस विधेयक पर बहस में भाग लेने के लिए उत्तेजित रहा हूँ, जो निःसंदेह क्रान्तिकारी है। मैंने अपने माननीय मित्र के भाषण को सर्वोच्च आदर के साथ सुना है, जिसके साथ मुझे सम्मान है। इस सदन में दस वर्षों से भी अधिक अवधि तक कार्य करने का, यदि कोई ऐसी बात है जो उन्हें विशिष्टता प्रदान करती हैं, तो वह उनकी निष्ठा है, जिसकी सिर्फ उनकी महान वाक्पटुता से की जाती है। मैं उनके साथ पूर्णतया सहमत हूँ कि समाज-सुधार के मामले में किसी को

*सीए. (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 1 मार्च, 1949, पृष्ठ 1015-20

भी मद्धिम गति से चलना चाहिए। उस बारे में मेरे मन में तनिक भी संदेह नहीं है। परन्तु यह विधेयक इतनी मद्धिम गति से आगे बढ़ा है कि हममें से कुछ सदस्यों ने ठीक ही शिकायत की है कि वह इतना पहले पारित न हो। जहां तक मैं जानता हूँ कि यह विधेयक अथवा इस विधेयक के मुख्य उपबंध इस सदन या उससे पूर्व के सदन और देश के समक्ष साथ ही बार के सदस्यों के समक्ष भी लगभग आठ वर्ष तक विचाराधीन रहे। यह कल्पना से भी नहीं कहा जा सकता कि इस विधेयक को इस सदन अथवा देश द्वारा आश्चर्यजनक ढंग से विचारार्थ स्वीकार किया गया है।

मुझे 1945 का स्मरण अच्छी तरह है, आम चुनाव के समय एक समूह द्वारा मेरा विरोध किया था मुख्यतया क्योंकि मैं सुधार का पक्षधर था क्योंकि हिंदू कानून को संहिताबद्ध करने के प्रति में कटिबद्ध था। यह तथ्य है कि मैं निर्वाचित हुआ था। मैं अब भी यहां है, यह संकेत है कि मैं अपने निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों के विचार व्यक्त करता हूँ।

मेरे माननीय मित्र पंडित मैत्रेय ने एक बात कही है कि यह सदन इस प्रकार के विधेयक को पारित करने के लिए सक्षम नहीं हैं। मेरे विचार से यह आपत्ति गत पन्द्रह वर्ष में कई बार सुनी है और यह बात उसी समय कही गई है, जब इस सदन के समक्ष किसी समाज सुधार के विधेयक पर बहस की गई। इसका परिणाम क्या हुआ, इसे भी प्रत्येक व्यक्ति जानता है। यदि यह सदन स्वतंत्र भारत के लिए संविधान पारित करने के लिए सक्षम है, तो मैं नहीं समझता कि यह सदन इस विधेयक को पारित करने के लिए सक्षम नहीं है। मेरे माननीय मित्र पंडित मैत्रेय ने अपनी वैयक्तिक अपील पर बल देने के स्थान पर, माननीय डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद द्वारा व्यक्त विचारों पर प्रकाश डाला है। वास्तव में मैं और इस सदन का प्रत्येक सदस्य माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का बहुत आदर करते हैं। फिर भी एक हमारा कर्तव्य है जो इस सदन का प्रत्येक सदस्य अपनी अन्तरात्मा, अपने निर्वाचन-क्षेत्र और ऐसे महान देश के प्रति रखता है, जिसमें वह रहता है। जो प्रत्येक वस्तु से ऊपर उठकर है, केवल इसलिए नहीं कि वह विधायक है, अपितु ऐसा व्यक्ति है, जो हिंदू समाज के पुनर्निर्माण की कल्पना करता है और वह अपने कर्तव्य में असफल रहेगा यदि वह किसी प्रसिद्ध व्यक्ति अथवा किसी अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति के वैयक्तिक विचारों पर ही विचार करेगा। जब मैं यह कहता हूँ तो किसी अनादर की भावना से नहीं कहता, अपितु मैं महसूस करता हूँ कि किसी व्यक्ति के प्रति आदर रखने की भावना से कहीं अधिक ऊंचा है।

मुख्य बात है कि क्या हिंदू कानून को संहिताबद्ध करने का समय नहीं आया है? क्या समय नहीं आया है कि विवाह, गोद लेने, उत्तराधिकार और दूसरी बातें जो निर्माण करती हैं, जिसे हिंदू कानून कहा जाता है। हिंदू कानून के स्रोत कई हैं। मैं इसका सविस्तार वर्णन करना नहीं चाहता और मैं इस सदन का अधिक समय भी नहीं लेना चाहता। परन्तु यह एक स्पष्टतः स्थापना का मामला है कि विधि के व्याख्या की परिभाषाओं के बारे

में एकरूपता होनी चाहिए। यदि कानून स्पष्ट नहीं है, यदि कानून में एकरूपता नहीं है, तो समाज के स्थायित्व को हानि उठानी पड़ती है। यदि हम आधे दर्जन उच्च न्यायालयों की किसी विशेष पीठ के संबंध में अलग-अलग व्याख्याएं देखते हैं, तो मैं सोचता हूँ कि समय आ गया है कि इन सभी को विराम दिया जाना चाहिए।

इसके अलावा, मेरे माननीय मित्र ने मत व्यक्त किया है कि हम हिंदू समाज को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं। मेरी अपनी भावना यह है कि इस सदन में लगभग 290 व्यक्ति हैं जो हिंदू समाज के निकट सम्पर्क में हैं। हम यहां एक स्थान पर आ सकते हैं, अपने विचारों को ताजी हवा दे सकते हैं और किसी समझौते या समायोजन पर पहुंच सकते हैं तथा हिंदू समाज की ओर अधिक प्रगति के लिए विधान पारित कर सकते हैं। जब मनु, पाराशर और याज्ञवल्क्य ने अपनी स्मृतियों को लिखा था तो उन्हें इस बात का लाभ नहीं था, मैं कहना चाहूँगा किसी विधान का। निस्संदेह वे महान थे, पर महान् पुरुषों का वंश उन्हीं के साथ समाप्त नहीं हो गया। मेरे बाईं ओर एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो विद्धता और चरित्र में इतने महान् व्यक्ति हैं कि यह गलत नहीं होगा यदि मैं उनकी तुलना प्राचीन ऋषियों और विधिवेत्ताओं से करूं। आज उनकी बुद्धिमत्ता और विद्धता ही है कि वे सभी 290 सदस्यों से सहायता और सहयोग की अपेक्षा करते हैं। मैं सोचता हूँ कि उनके हाथ सशक्त हैं और उनके विचार हमें अभिभूत करते हैं।

मुख्य बात यह थी जैसी कि मैंने कही थी, कि क्या कुछ सुधारों के लिए समय आ गया है और क्या हिंदू कानून को संहिताबद्ध करने का समय आ गया है? यदि समय आ गया है, तो इसमें कोई अंतर नहीं पड़ता कि कोई व्यक्ति संहिता बनाए और देश उसको स्वीकार करे अथवा चाहे वह संहिता लोकतांत्रिक तरीके से बहस की प्रक्रिया द्वारा स्वीकार की जाए और देश उसको स्वीकार करे। मुख्य बात यह है कि इसे परखा जाए। बिना किसी आवेग, किसी पक्षपात और किसी अतिवादी विचारों के वशीभूत हो। हमें इस सदन में इस संहिता को गुणों के आधार पर परखना है न कि किसी भावना के आधार पर।

अंततोगत्वा ऐसा क्या है, जो इस संहिता में प्रस्तुत है? उत्तराधिकार के प्रश्न के सिवाय ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके बारे में, वास्तव में न सुना हो या सहमति प्रकट नहीं की गई हो। मेरा अपना विचार है कि इसमें दो महत्वपूर्ण बातें हैं जिन पर विवाद केंद्रित है। उनमें से एक विवाह है; और दूसरी हिंदू कानून में समांशिता को समाप्त करना है। जहां तक विवाह का संबंध है इसमें कुछ भी क्रांतिकारी नहीं है। आजकल जब प्रत्येक वस्तु राज्य के अधिकाधिक नियंत्रण में आ रही है और हम राष्ट्रीयकरण की बातें कर रहे हैं, तो मेरा विचार कि निजी उद्यम के लिए केवल विवाह ही बचा है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसका भी राष्ट्रीयकरण कर दिया जाए।

माननीय श्री एन.वी. गाडगिल : अब इस विधेयक में एक स्वर्णिम अर्थ उभरने लगा है। इस क्षेत्र में प्रवेश और निकासी इस प्रकार नियमित की गई है कि पश्चिमी दुनिया से आने वाला आधुनिक व्यक्ति निश्चय ही हमारे पिछड़ेपन पर हंसेगा। वह कहेगा कि यदि विवाह ऐसा मामला है जिसमें दोनों को परमानन्द प्राप्त होता है, तो तलाक के आधारों में से एक आधार स्वभाव की विसंगति होनी चाहिए। क्या आप वहां तक पहुंच पाए हैं? इस विधेयक में दिए गए आधार बहुत संकीर्ण हैं। वास्तव में मैं तो कहना चाहता हूँ कि यह अत्यंत संतुलित उपाय है। आप ऐसी पत्नी की आशा नहीं करते जो पागल, कोढ़ी आदि हो और इस विधेयक में ऐसा कुछ भी नहीं है जो स्मृतियों के उपबंधों के विरोध में दौड़ता हो अथवा जो हिंदू समाज और संस्कृति की प्रकृति के प्रतिकूल हो। हम में से अधिकांश स्मृति को जानते हैं:–

'नष्टे मृते प्रव्रजित, क्लीबेच्च पतिते पत्तो।

पतिः अन्यत् तु नारीणाम् विधीयते।'

आधार प्राचीन ग्रंथों में दिए गए हैं, पर यदि इसके कुछ भी समीप है, वह आज हिंदू समाज में प्रचलित नहीं है, क्योंकि हम जड़ हो गए हैं और प्रगति की ये सभी गतिशील प्रथाएं रोक दी गई हैं। आखिरकार, हिंदू समाज में कौन और किसी सीमा तक इसको प्रभावी बनाएगा? यदि मेरे प्रान्त की ही बात की जाए, 90 प्रतिशत लोग किसी न किसी प्रकार से तलाक लिए हुए हैं। कानून के अनुसार नहीं, अपितु प्रथा के अनुसार। यह उच्च वर्ग के उन लोगों में दो या तीन प्रतिशत हैं, जो इस विधेयक का विरोध करते हैं। परन्तु यदि उचित ढंग से ध्यान दिया जाए, तो शिक्षित वर्ग इसके पक्ष में ही है।

एक ओर, मैं इस बात से सहमत हूँ कि तलाक को बहुत आसान या सस्ता नहीं बनाना चाहिए तथा स्वभाव की विसंगति को इसका आधार नहीं होना चाहिए। परन्तु दूसरी ओर, विवाह को उम्र कैद भी नहीं समझना चाहिए, यदि परोक्ष रूप से ऐसा होता है। आखिरकार, जैसे विवाह का वैयक्तिक पक्ष है, वैसे ही इसका सामाजिक पक्ष भी है। यदि पति और पत्नी दोनों ही सहमत नहीं होते तो अनबन और कटुता तथा सामंजस्य का अभाव केवल परिवार के आहते तक ही सीमित नहीं होता, अपितु इसका व्यापक अनुप्रयोग और प्रभाव होता है, जो समाज और उसके चारों ओर वातावरण दूषित करता है। यदि किसी विधिवेत्ता की इच्छा है कि वह जो भी विधान चाहता है, पारित हो जाए, उसे विचारित मुद्दे पर अपेक्षित परिणम देने की क्षमता होनी चाहिए तब हमें यह निर्णय करना चाहिए कि क्या हमारे साथ कुछ ऐसा हुआ है जो वास्तव में हमें वैसे ही परिणाम देता है जिसके लिए हमसे कहा गया है। यह आत्मविश्लेषण का विषय है। यदि आज हम उन लोगों को विवाह-बंधन से अलग होने का कोई मार्ग दे रहे हैं, जो प्रगट रूप से खुश नहीं हैं। इससे उबरने को तो हम केवल वही कर रहे हैं, जो मैं समझता हूँ, हमारा सामाजिक कर्तव्य है।

जहां तक विवाह का संबंध है, मैं नहीं समझता कि हम उन व्यक्तियों के बीच विवाह के लिए आपत्ति कैसे कर सकते हैं, जो अलग-अलग जातियों के हैं। वर्ष 1949 में यह एक दु:खद समीक्षा होगी। हमारे प्रगतिशील चेहरे पर यदि किसी एक व्यक्ति खड़ा हो और कहें कि हाँ, अलग-अलग जातियों के व्यक्तियों के विवाहों को विधि सम्मत नहीं बनाना चाहिए। स्वतंत्र भारत में, मेरे विचार से एक जाति है, स्वतंत्र व्यक्ति की जाति। एक ही धर्म है और वह मानवता का धर्म है। (श्री एच.वी. कामथ: और स्वतंत्र महिलाएं।) देश के सामने सुधार तभी तक रहा है कि वे जो यह महसूस करते हैं कि इसका अर्थ हिंदू समाज को विखंडित करना है, प्रगतिशीलता के दुश्मन हैं। मेरे मत के अनुसार ऐसे हिंदू समाज को विखंडित हो जाना चाहिए। यह क्या बात है कि किसी व्यक्ति को अछूत कहा जाता है क्योंकि उसका जन्म किसी विशेष जाति में हुआ है। मैंने किसी भी लड़के को झाडू के साथ पैदा होते नहीं देखा है, मैंने किसी भी लड़के को ब्राह्मण के परिवार में यतोपनीत के साथ पैदा होते नहीं देखा है न ही किसी लड़के को मारवाड़ी परिवार में तराजू के साथ पैदा होते:

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात द्विजोच्यते वियया याति विप्रत्वं त्रोभिः श्री त्योच्यतो चते।

अर्थात् सभी शूद्र पैदा होते हैं और संस्कारों के बाद व्यक्ति उच्च स्तर प्राप्त करता है तथा जब वह शिक्षा और उपलब्धियों की अलग-अलग अवस्थाओं से गुजरता है तो वह श्रोत्रिय हो जाता है। यही हिंदूत्व की वास्तविक भावना है, न कि वह भावना जो हमारे कुछ प्राचीन सनातन धर्म के अनुयायी मित्रों द्वारा यहां और बाहर की जाती है। यदि इस महान देश का उद्देश्य यह है जैसा कि बताया जाता है, कि वर्गहीन समाज बनाया जाना है, तब हमें इसके बारे में देखना चाहिए कि इसके लिए उपयुक्त संस्थाएँ, सामाजिक और राजनीतिक दोनों प्रकार की पैदा और विकसित की गई हैं। इसलिए मैं समझता हूँ कि इस संहिता में विवाह के संबंध में जो भी सिफारिशें की गई हैं, वे केवल नितांत आवश्यक ही नहीं, वे अपितु ज्यादा दूर भी नहीं होना चाहिए। परन्तु जैसा कि मैं अपने माननीय मित्र पंडित मैत्रेय के साथ सहमत हूँ कि हमें सामाजिक मामलों में धीमी गति से चलना चाहिए, मैं उनकी इस बात से कुछ समय के लिए समहत हूँ।

सबसे विवादास्पद अंश पूरे विषय का सह-समांशिता को हिंदू समाज से अलग कर देना है। इस पर लोक मत के बारे में कुछ कहा गया था। प्रेस और बार के बारे में कुछ कहा गया था। हमारे प्रान्त में भी एक संस्था है जिसका नाम 'धर्म निर्णय मण्डल' है। उस मंडल में महामहोपाध्याय तर्कतीर्थ विद्यावाचस्पति जैसे उच्च शिक्षा तथा विद्वता वाले लोग शामिल हैं। अभी हाल ही में उन्होंने एक प्रस्ताव पारित किया है और प्रस्तावित हिंदू संहिता पर अपने विचार व्यक्त किए हैं:-

"धर्म निर्णय मण्डल इस अवसर पर लाभ उठाता है, जब हिंदू संहिता प्रस्तुत की गई है। सदन के वर्तमान सत्र में अपनी प्रशंसा को व्यक्त करने, जो सामान्य उदारीकरण के प्रभाव को लाया गया है वर्तमान संहिता की संरचना में रखने के लिए मंडल इस प्रभाव को आगे दी गई बातों को हटाने के पक्ष में स्पष्ट देखता है–

(क) संयुक्त पैतृक सम्पत्ति और स्वअर्जित सम्पत्ति के संबंध में अंतर;

(ख) अलग–अलग व्यवहार बेटों और बेटियों के साथ;

(ग) महिलाओं की सम्पत्ति की व्याख्या में तकनीकी कठिनाई;

(घ) उत्तराधिकार के मिताक्षर तथा दायभाग नियमों में अंतर।

मण्डल का विश्वास है कि ऊपर बताए गए सुधार न्यायालयों में मुकद्दमेबाजी को अधिकांशतया कम करेंगे तथा उस हिंदू संहिता को समस्त भारत के हिंदुओं पर लागू किए जाने से एकता की भावना को प्रोत्साहन मिलेगा। मण्डल इस बात पर ध्यान देता है कि इतिहास में इस दिशा में जो कभी किया गया, यह प्रथम प्रयास है।

यही कारण है कि कई छोटे-छोटे मतभेदों के बावजूद मण्डल सहृदयता से वर्तमान विधिकरण को समर्थन करता है जिस स्थिति में वह है।

बाबू रामनारायण सिंह : वे किन लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वे पढ़े–लिखे रुढ़िवादी लोग हैं।

माननीय श्री एन.वी. गाडगिल : परन्तु प्रबुद्ध रुढ़िवादी। अब मैं संयुक्त हिंदू परिवार के प्रश्न पर विचार करता हूँ। यह सदन निसंदेह मुझसे सहमत होगा कि समय के बदलने के साथ प्रगतिशील समाज को भी बदलना चाहिए और ऐसी उपयुक्त संस्थाएं विकसित करनी चाहिए जिनका संबंध सम्पत्ति और कानून से हो।

4.00 बजे सायं

अब समय आ गया है कि संयुक्त पारिवारिक पद्धति के गुणों का निष्पक्ष रूप से मूल्यांकन किया जाना चाहिए, दोनों पारिवारिक सूख प्राप्त करने की दृष्टि से और साथ ही सम्पत्ति की दृष्टि से। आज भी यदि कोई मुझे संयुक्त हिंदू परिवार के लाभों के बारे में विश्वसनीय दलीलें देगा, तो मैं उसे सुनने के लिए तैयार हूँ क्योंकि मैं हठधर्मी नहीं हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि सत्य ही वास्तविकता है, अपने खुद के विचारों के लिए प्रतिष्ठा है।

अब पहली बार पर विचार करते हुए, तो क्या संयुक्त परिवार की पद्धति ने परिवार के वैयक्तिक सदस्यों को खुशी प्रदान की है? मैं यह नहीं पूछ रहा हूँ कि पुत्र–वधुएं

क्या महसूस करती हैं जब उन्हें बड़े परिवार में रहना पड़ता है। मैंने जो कुछ देखा और सुना है, वह निश्चय ही यह प्रदर्शित करता है कि जहां तक प्रसन्नता और समरसता का संबंध है, यह संस्था अब किसी भी उपयोग अथवा महत्व की नहीं रही है। वस्तुतः इसमें कुछ भी नया नहीं बचा है। यदि 32 करोड़ हिंदुओं में से लगभग 5 करोड़ हिंदू पहले ही से दायभाग से अधिशासित हैं और यदि यह ठीक से काम करती हैं। कम से कम यह कोई नहीं कह सकता कि यह पद्धति नितांत खराब है और हमें उस पर सोचना चाहिए। (**एक माननीय सदस्य:** यह नितांत नवीन है)।

यह नवीन पद्धति है, इसमें कोई संदेह नहीं है। परन्तु वह कौन-सा समाज है, जिसके बारे में हम भविष्य के लिए सोच रहे हैं? क्या वह पितृ सतात्मक प्रकार का है? आप जो समाज पुनर्निर्मित करना चाहते हैं, वह वास्तव में किस प्रकार का समाज है? जैसा कि मैं समझता हूँ कि यह वह समाज है जिसमें प्रतिष्ठा की समानता तथा अवसर की समानता होगी, क्योंकि ये दोनों बातें हैं जिन्हें हमने संविधान के प्रारुप की प्रस्तावना में सम्मिलित किया है। मेरे विचार से उस प्रस्तावना के संयुक्त परिवारिक संपत्ति की पद्धति अनुकूल नहीं है।

मुझे लगता है कि वास्तविक कठिनाई यह होगी–अलग-अलग सदस्यों के भाषण सुनने के बाद, कि बेटियों को क्या दिया जाना है। परन्तु संपत्ति की संस्था होने के नाते संयुक्त पारिवारिक पद्धति समाप्त होनी चाहिए, क्योंकि लोग मुझसे पूछना चाहेंगे, क्या कुछ अच्छा किया है अथवा क्या इससे कुछ अच्छा नहीं किया है? मैं तत्काल इस बात से समहृत हूँ कि इससे अच्छा किया है, परन्तु जहाँ तक सम्पत्ति के पक्ष का संबंध है, जहां तक सामाजिक साख का संबंध है, अन्य विकल्प भी पहले से ही विद्यमान हैं, जैसे सहकारी संस्थाएँ और संयुक्त स्टॉक कम्पनियां। इसलिए जहां तक सामाजिक साख का सबंध है इस संस्था की आवश्यकता नहीं है। विकल्प अस्तित्व में आ गए हैं और अनुभव से हम पाते हैं कि व्यवसायों की क्रियाविधि के तहत अन्य कई वे अच्छे परिणाम देते हैं। इसलिए हम किसी भी वस्तु को तब तक नष्ट नहीं कर रहे हैं जब तक इसके स्थान पर कुछ अन्य उपयोगी वस्तु प्राप्त न कर लें। हम पूरे समाज को ऐसी रिक्तता में नहीं छोड़ रहे हैं जैसा कि यह समाज पहले था। जो कोई भी अपनी उपयोगिता खो बैठा है, उसे ही दिवालिया किया जा रहा है ताकि नया भारत तेज़ गति से आगे बढ़े और अधिक प्रगति प्राप्त करे।

अब वास्तविक कठिनाई, जैसा कि मैंने कहा था इस बारे में है कि बेटी को सम्पत्ति का कुछ भाग दिया जा रहा है। चाहे वह भाग आधा होना चाहिए अथवा उससे भी कुछ कम होना चाहिए। जिसके विवरण के बारे में बाद में विचार-विमर्श किया जा सकता है। परन्तु एक बात निश्चित है और वह बात यह है कि बेटी को कुछ भाग प्राप्त अवश्य होना चाहिए। स्वतंत्र भारत में यदि आप यही करने जा रहे हैं–

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'

और उसके बाद यही कहना चाहते हैं कि उसे या तो न्यायालय का द्वार खटखटाना चाहिए अथवा अपने भरण-पोषण की मांग करनी चाहिए तो मैं कहता हूँ कि यह स्थिति उचित नहीं है।

मेरी अपनी भावना यह है कि प्रारंभ में कुछ कठिनाई आ सकती है जब नई संस्थाएं आएंगी, जब नए विचार उत्पन्न होंगे, समाज को कुछ समय अपने को समायोजित करने में भी लगेगा। प्रश्न यह नहीं है कि ये कठिनाइयां बड़ी या छोटी हैं; संगत प्रश्न यह है कि क्या प्रस्तावित नवीन प्रबंध अच्छा है या बुरा है? यदि आप इस बात से आश्वस्त हैं कि वह अच्छा है तो स्वाभाविक रूप से समायोजन में कुछ कठिनाई होगी। पर हमें कठिनाई के बारे में तनिक भी चिंतित नहीं होना चाहिए।

यह बताया गया है कि जैसे ही विवाह सम्पन्न हो जाता है, दुल्हा कुछ दिक्कतें पैदा करना प्रारंभ कर देता है, या कोई अन्य उपाय से, उस हिस्से के लिए जो उसकी पत्नी को उसके माता-पिता से मिली है। यह स्थिति अधिवक्ताओं के लिए स्वागत योग्य होगी। अच्छा! जब आप अधिकाधिक संभव तरीके से राष्ट्रीयकरण की ओर बढ़ रहे हैं तब ऐसा बहुत कम शेष होगा, जिसके बड़े परिणाम होंगे और लोग सम्पत्ति के उस छोटे भाग के लिए भी न्यायालय में जाएंगे, क्योंकि भविष्य में लड़के और लड़की दोनों के लिए सम्पत्ति का बहुत कम भाग बच पाएगा। और यदि इसके कारण मुकदमेबाजी होती भी है, तो इसका अर्थ यह नहीं है कि हमें न्याय नहीं करना चाहिए? क्योंकि कानून द्वारा किसी भली बात को भी बुरा सिद्ध किया जा सकता है, तो क्या इसका यह अर्थ है कि इसका सभी के लिए निषेध करना चाहिए। यह बात सदन के निर्णय के लिए है। अब ऐसा समय आ गया है जब लिंग की समानता की सामान्य बात का, सम्पति के स्वामित्व की समानता द्वारा अनुसरण किया जाना चाहिए। यदि हम ऐसा नहीं करते, तो हमें पाखंड के अभियोग का सामना करना होगा।

मेरे माननीय मित्र पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय ने महान हिंदू समाज के लिए सभी प्रकार की कठिनाइयों की भविष्यवाणी की है। इस प्रकार के भविष्यवक्ता पहले भी हुए हैं, परन्तु वे सभी झूठे सिद्ध हुए हैं। मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि हिंदू समाज की प्रकृति ऐसी लचीली है कि इसने अपने में विभिन्न संस्कृतियों को समाहित किया है। और यदि हिंदू समाज सफलतापूर्वक युग-युग से जीवित है, तो इसका कारण यह है कि जिन व्यक्तियों ने हिंदू समाज के मामलों का मार्गदर्शन किया है उन्होंने समय के साथ परिवर्तन का सुझाव दिया है। यही कारण है कि वह अब तक जीवित है। अब यहां भी इस बात का प्रयत्न है कि कानून को लोकमत के अनुकूल बनाया जाए। कानून यह करता है कि वह लोकमत को सुदृढ़ करता है, किंतु लोकमत अपने स्वभाव से

ही गतिशील होने से वह यदा-कदा आगे बढ़ जाता है। यह ऐसा क्षितिज है, जो उसके लिए घट जाता है, जो उसके पास जाता है। आधुनिक समाज अपनी प्रकृति के अनुसार शीघ्रातिशीघ्र प्रगति करता है, इसलिए हमें लोकमत तथा देश के कानून का समायोजन करना है। कुछ अन्य उपाय भी हैं, जिनके द्वारा यह कार्य सम्पन्न किया जा सकता है, जैसे कानूनी परिकल्पना अथवा साम्यता, परन्तु सर्वोत्तम और ईमानदार उपाय यही है कि इसे विधान द्वारा सम्पन्न किया जाए। इस संबंध में मेरा विचार है कि यह एक ऐसा ही प्रयास है, यद्यपि मैं इस बात से सहमत हूँ कि यह क्रांतिकारी है, पर यह एक नियोजित क्रांति है, इसलिए इसे सफलता प्राप्त करने जा रही है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद :** मेरे पास बहुत कम समय है। (**डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** क्यों? आपके पास अपना समय है)। मेरा मतलब यह है कि तुलनात्मक रूप से ऐसे अपनी बात रखने से विषय के लिए मुझे कम समय मिला है, जिस पर मुझे कहना है और मैं यह आशा करता हूँ कि सदन भी इस विषय पर उतना विचार करेगा और ध्यान देगा, जितना कि मैंने इसके लिए दिया है। (**एक माननीय सदस्य:** आपको इससे क्या करना है?) प्रारम्भ में मुझसे पूछा गया है कि मुझे इससे क्या करना है। मैं कहता हूँ कि मुझे इसके बारे में सब कुछ करना है। इस देश में दो विशाल परिवर्तन हुए हैं। एक हमने अपने साम्प्रदायिक चरित्र को निकाल बाहर करने का निर्णय किया है और दूसरा हमने खुद को संयुक्त निर्वाचन के लिए तैयार किया है। क्या कोई भी माननीय सदस्य किसी मुसलमान के इस अधिकार से इन्कार कर सकता है कि वह भी उसी प्रकार सोचे जैसे कि अधिकांश हिंदू सोचते हैं? आखिरकार हमें हिंदुओं के साथ रहना है। पश्चिम बंगाल में उनकी जनसंख्या 80 प्रतिशत है और हमें उनके साथ रहना और सोचना है। आप मेरे साथ पश्चिम बंगाल को चलिए। पंडित मैत्रेय ने बंगाल के विरोध को अति सरल भाव से प्रस्तुत किया है, जब उन्होंने कहा है कि वहां इस विधेयक का अत्यधिक विरोध है।

श्रीमती रेणुका रे : वहां समान रूप से और गंभीरतापूर्वक समर्थन भी किया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरे साथ पश्चिम बंगाल चलिए। मैं कट्टरवादी लोगों की ओर से नहीं बोल रहा हूँ। जहां तक इस विधान के उस पक्ष का संबंध है मुझे इस बारे में कुछ नहीं कहना है। मुझे इस सदन के समक्ष कुछ ऐसे गंभीर प्रश्न उठाने हैं, जो अभी तक नहीं उठाए गए हैं। बंगाल में वह आपत्ति इतनी गंभीर है कि यदि कोई लोकमत जानने के लिए वहां की यात्रा पर जाता है (व्यवधान)। मेरा मतलब है बुद्धिशील और उन्नत लोकमत-यदि कोई वहां जाता है-यदि कोई यात्रा करता है एक नगर से दूसरे नगर, पश्चिमी बंगाल की यात्रा करता है तो उसे सर्वाधिक बुद्धिमान व्यक्तियों से इस विधेयक के विरोध का सामना करना पड़ेगा। सबसे प्रबुद्ध व्यक्तियों से (**एक माननीय**

---

*सीए. (विधा.) डी., खंड 2, भाग II, 28 फरवरी, 1949, पृष्ठ 1020-30

सदस्य: जो माननीय सदस्य ने स्वयं नहीं किया है।) मेरा विश्वास है कि यह हस्तक्षेप इस विषय के संपूर्ण विचार पर आधारित नहीं है। अत: मैं यह निवेदन करता हूं कि इस बात पर सहमति होगी कि बार के सदस्य अधिक दकियानूसी नहीं हैं...

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : उनमें से अधिकांश व्यक्ति रुढ़िवादी और दकियानूसी ही हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : शायद वे रुढ़िवादी लोगों में से नहीं हैं।

श्रीमती रेणुका रे : श्री अतुल गुप्ता के मत के बारे में आप क्या कहेंगे, जिन्हें सबसे प्रमुख अधिवक्ताओं में से एक माना गया है और कांग्रेस द्वारा उन्हें विभाजन समिति के लिए चुना गया है।

श्री कृष्णाचंद्र शर्मा : क्या एक अधिवक्ता की बात को नज़ीर माना जा सकता है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इन हस्तक्षेपों के बावजूद मैं पुन: निवेदन करता हूँ कि वे रुढ़िवादी नहीं हैं। आप किसी भी पुस्तकालय में चले जाइए तो वहां आपको यह पता लगेगा कि इस विधेयक का आमूल-चूल विरोध किया गया है...

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्योंकि उनके व्यवसाय खत्म हो जाएंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ कि आप इस विधेयक से बार के व्यवसायों को समाप्त कर रहे हैं। आप जटिलताएं पैदा कर रहे हैं, जिनके बारे में आपको भी ज्ञात नहीं है। दूसरी ओर, मैं यह निवेदन करता हूँ कि अलग हैसियत से एक अधिवक्ता के व्यवसायिक हैसियत के इस विवादास्पद विधिकरण को प्रस्तुत करने के लिए इस सदन को धन्यवाद ही देंगे। कलकत्ता उच्च न्यायालय के चार बड़े हिंदू न्यायाधीश, इनमें से एक, जो अब फेडेरल कोर्ट की शोभा बढ़ा रहे हैं, श्री बी.के. मुखर्जी ने कहा है—"यह कानून पहले से ही सुस्थापित है और यह कानून सर्वविदित है। यह कानून यहां कुछ अलग हो सकता है परन्तु वह विभिन्न कारणों से है, जिनके बारे में मुझे व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। पर यह कानून सर्वविदित है।"

श्री ए. करुणाकर मैनन : यदि कानून इतना अधिक स्थापित है तो हर इसकी सप्ताह की रिपोर्टें क्यों होती हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसका कारण यह है कि मैं यह महसूस करता हूँ कि मेरे माननीय मित्र उन बारीकियों को महसूस नहीं करते, जो इस कानून के अंतर्गत छिपी हैं। वास्तव में पूर्व निर्णय आवश्यक हैं। आप विधान पहले ही किसी संभावित मामले पर विचार नहीं कर सकते, इसलिए विधिकरण की आशा में आवश्यक है। वे कठिनाइयों को उजागर करते हैं तथा भविष्य में मामलों के निर्णय में सहायक होते हैं। जिस क्षण

पूर्व निर्णय दिए जाते हैं, विशेषकर कानून के क्षेत्र में, तो वे प्रबुद्ध नहीं रह पाते। यही कारण है कि मैं यह निवेदन करता हूँ कि ऐसे अधिवक्ता जो रुढ़िवादी लोग नहीं हैं, इस विधान के विरोधी हैं। इसका कारण यह नहीं है कि यह उन्हें अपनी रोजी-रोटी से वंचित कर देगा''

श्रीमती रेणुका रे : उस समय क्या होता है जब महिलाओं की सीमित सम्पत्ति, बंगाल की मुकदमेबाजी में समाप्त हो जाती है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं केवल यह आशा करता हूँ कि मेरी माननीया बहन श्रीमतर रेणुका रे ने बंगाल की महिलाओं का प्रतिनिधित्व किया था। (**एक माननीय सदस्य:** उन्होंने प्रतिनिधित्व किया है।) वह सम्पूर्ण बंगाल में एक मात्र सितारा है। मैं विपक्ष के एक दर्जन प्रबुद्ध सितारों को उद्धृत करूंगा। जो श्रीमती रेणुका रे के समान ही सर्वविदित हैं। वही एक मात्र ऐसी मार्गदर्शक हैं, जो हिंदुओं के मामलों का नेतृत्व करती हैं''

श्री आर.के. सिद्धवा (सी.पी. और बरार : सामान्य) : एकमात्र सितारा।

श्रीमती रेणुका रे : ऐसी सैकड़ों महिलाएं हैं, जो नोआखाली और अन्य स्थानों में गई हैं। बंगाल में ऐसी कई मार्गदर्शी महिलाएँ हैं। वे सामाजिक कार्यकर्ता महिलाएं हैं जो मार्गदर्शक नेत्रियां हैं परन्तु वे सभी हिंदू संहिता का समर्थन करती हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं निवेदन करता हूँ कि मेरी माननीय बहन को मुकदमेबाजी का अनुभव नहीं है। उन्होंने कानून से संघर्ष नहीं किया। यदि उन्होंने कानून के क्षेत्र में कार्य किया होता, तो वे पर्याप्त संभावनाओं को देख सकते थे।

माननीय सदस्यगण : उन्हें एक स्त्री के रूप में संबोधित कीजिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : '''अच्छे कार्य के लिए पुरुषोचित और स्त्रीयोचित संबोधन में कोई अंतर नहीं है। नवीनतमक मानकों के अनुसार पुरुषोचित सम्बोधन में महिला भी सम्मिलित है। मैं निवेदन करता हूँ कि भविष्य में अधिक समय तक महिलाओं को स्त्रीयोचित शब्द से संबोधित नहीं किया जाएगा। अपितु पुरुष माना जाना चाहिए।

अधिवक्ता इस विधेयक के विरुद्ध हैं। उनकी पारिवारिक पद्धति गंभीर रूप से विघ्नकारी हो जाएगी। इसलिए वे इस विधेयक के घोर विरोधी हैं। (**एक माननीय सदस्य:** क्या वे अपने व्यवसाय के कारण आशंकित है?) नहीं, उन्हें अधिक मुकदमे मिलने लगेंगे। मैं अधिवक्ताओं की ओर से इस सदन को आश्वस्त करता हूँ, जिस व्यवसाय में मुझे भी काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, कि वे अपने वैयक्तिक हितों के कारण इस विधेयक का स्वागत करेंगे। (**श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** आप भूल कर रहे हैं।) मैं भूल नहीं कर रहा हूँ। मैंने विधि के क्षेत्र में अपने माननीय सदस्य की

अपेक्षा अधिक काम किया है। मैंने मुकदमेबाजी में भी भाग लिया है। तलाक के उपबंध अनंत मुकदमेबाजी पैदा कर देंगे और अनेक परिवारों के लिए अंतहीन जटिलताएं तथा कठिनाइयां होंगी और पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को अधिक दुःख झेलने होंगे। एक अन्य महत्वपूर्ण बात पर सीधे ही ध्यान दिलाने के लिए मैं सदन के समक्ष इस विधेयक से संबंधित एक अधिक गंभीर मामले को प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह विधेयक गत 9 अप्रैल को विधानमंडल के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। तब हमारी बहनों ने कहा था कि इस अवस्था में विधेयक का विरोध न किया जाए। तब यह विधेयक इतना महत्वपूर्ण समझा गया था कि कि उसके संबंध में ब्यौरेवार ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है—उसे पारित किया जाना चाहिए। इसलिए अंतिम दिन के अंतिम घंटे में हम इस पर विचार करने के लिए सहमत हो गए। मैंने हिंदू दृष्टिकोण से एक छोटी अपनी हल्की आपत्ति उठाई। क्या अब मैं मुस्लिम दृष्टिकोण से कोई आपत्ति उठा रहा हूँ। बिल्कुल नहीं अतः मेरी इस घोषणा पर कोई आश्चर्य या मजाक नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह आपत्ति हिंदू-दृष्टिकोण से उठाई गई थी। यह हिंदू दृष्टिकोण ही है कि मैं उसके संबंध में बोल रहा हूँ। मेरी विदुषी बहन ने उस दिन मुझसे पूछा था, आप अपनी हिंदू बहनों को उनके उन अधिकारों से क्यों वंचित कर रहे हैं, जिन्हें आप अपनी खुद की बहनों के लिए दे रहे हैं? यह एक मूलभूत प्रश्न है। क्या मैं इसका उत्तर दे सकता हूँ? मेरा उत्तर है कि आप एक ही प्रकार का भोजन अलग-अलग किस्म के लोगों को नहीं दे सकते। आपको हिंदू महिला की स्थिति परखना है जो हिंदू कानून में कल्पना की गई है। आपको मुस्लिम महिला की स्थिति के बारे में विचार करना है, क्योंकि मुस्लिम कानून में अन्तर्निहित है। हम यहां किसी एक या दूसरी पद्धति की बुद्धिमत्ता के प्रश्न पर विचार नहीं कर रहे हैं। मैं यहां दो प्रकार के सदस्य पाता हूँ: कुछ शाकाहारी और कुछ मांसाहारी। क्या आप मांसाहारी भोजन शाकाहारी को देंगे और यदि कोई किसी शाकाहारी व्यक्ति को शाकाहारी भोजन दें तो क्या आप उसे पक्षपात का दोषी मानेंगे? (**एक माननीय सदस्य**: यह कोई तर्क है? बहुत ही अजीब-सा तर्क?) यह तर्क उतना ही तार्किक है, जैसाकि मेरी बहन श्रीमती रेणुका रे ने प्रश्न उठाया था। वह तार्किक नहीं था। आप दो अलग-अलग किस्म के लोगों को एक ही प्रकार का भोजन नहीं दे सकते; वास्तव में वे अलग-अलग परिवारों में पैदा हुए हैं और उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकार से पाला गया है।

यह विधेयक सदन में 9 अप्रैल को प्रस्तुत किया गया था। माननीय विधि मंत्री ने प्रवर समिति की रिपोर्ट का रहस्योद्घाटन करने वाला भाग सुनाया है। उन्होंने सरल भाव से स्वीकार किया है कि इस विधेयक पर प्रवर समिति को भेजने के पूर्व उसकी गुणवत्ता की दृष्टि से कोई विचार नहीं किया गया। यह अत्यंत विस्मयकारी वक्तव्य था। मूलतः विधेयक का सुव्यवस्थित मसौदा तैयार किया जाना था यानी एक अच्छा विधेयक यह विधेयक 9 अप्रैल को विधानमंडल द्वारा पारित किया और प्रवर समिति को विचारार्थ भेज दिया गया तथा इसके बाद यह महसूस किया गया कि इस विधेयक पर तकनीकी

अथवा विभागीय दृष्टि से विचार नहीं किया गया था। ऐसा क्यों है? क्या मैं पूछ सकता हूँ, यद्यपि इस विधेयक पर विधि मंत्रालय द्वारा तकनीकी अथवा गंभीर विभागीय विचार नहीं किया गया था, इसी अवस्था में उसे शीघ्र प्रस्तुत कर दिया गया? (**एक माननीय सदस्य:** हम पहली अप्रैल को ही उसके बहुत निकट आ चुके थे।) ऐसा हो सकता है कि वह पहली अप्रैल को हमारे काफी निकट था और इस प्रकार की संभावना ने इस विधेयक को शीघ्र ही प्रस्तुत किए जाने के लिए बाध्य किया। शायद कोई गंभीर कार्य सम्पन्न किए जाने का अभिप्राय नहीं था, पर यह ऐसा संवेदनशील मामला था, जिसे हमारी बहनों के संतोष के लिए पारित किया जाना था। यह विधेयक महिला-भावना द्वारा अधिक प्रेरित है अपेक्षातया मामले की आवश्यकताओं की दृष्टि से विचार किए जाने से। अनंतर विभाग ने सबसे अधिक अप्रत्याशित कार्य हाथ में लिया। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस विधेयक का मसौदा उचित रूप से तैयार नहीं किया गया था, इसमें कुछ गलतियां हैं और इस विधेयक को दूसरी बार देखा जाना आवश्यक था। इस विधेयक में अलग-अलग संख्याएं और अलग-अलग परिभाषाएं, जो एक-दूसरे से नितांत भिन्न हैं, के साथ कई अलग-अलग अध्यायों को शामिल किया गया है। विधायी विभाग ने इसे दोषपूर्ण विधेयक समझा है और मत दिया है कि इस विधेयक को समग्र रूप से फिर से तैयार किया जाना चाहिए।

मैं यह निवेदन करता हूँ कि जिस क्षण विधायी विभाग इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया यही वह समय था कि इस विधेयक को वापिस ले लिया जाता और एक नया विधेयक बनाया जाता जिसे मंत्रालय स्वीकार करने की स्थिति में होता तथा उसे नए विधेयक के रूप में प्रस्तुत करता। ऐसा करने की बजाय विभाग ने विधायी मसौदा तैयार करने की ऐसी प्रक्रिया को अपनाया, जिसके बारे में मैं परिचित नहीं हूँ। भारत और विदेश के समग्र संवैधानिक इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलेगा कि विभागीय विधेयक प्रस्तुत किए जाने के बाद और प्रवर समिति को भेजने के बाद उसे विभाग द्वारा फिर से तैयार किया जा रहा है। श्री रामनारायण सिंह ने कल ही यह पूछा था कि मसौदा तैयार करने वाली समिति ने किस प्राधिकार से यह नवीन विधेयक तैयार किया था। (**एक माननीय सदस्य:** यह नया विधेयक नहीं है।) मुझे यह बताने में दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का सामना करना होगा कि इस विधेयक में पर्याप्त महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं। यद्यपि माननीय विधि मंत्री ने कल ही इस प्रश्न का उत्तर देने से बचने का प्रयास किया था, फिर भी उन्हें अंत में यह स्वीकार करना पड़ा था कि उन्होंने कोई परिवर्तन नहीं किए हैं, बल्कि प्रवर समिति ने परिवर्तन किए हैं। मैं सदन के समक्ष यह प्रदर्शित करने की स्थिति में हूँ कि ये परिवर्तन पर्याप्त गंभीर और क्रांतिकारी थे तथा सारहीन परिवर्तन नहीं थे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान, यह व्यवस्था का प्रश्न है। यदि माननीय सदस्य अपनी दलील इस आधार पर देना चाहते हैं कि वास्तव में जो विधेयक प्रवर

समिति को पुनः विचार करने के लिए भेजा गया था, वह कोई अन्य विधेयक था जिस पर विचार किया गया था और वह कोई ऐसा विधेयक नहीं था, जो प्रवर समिति को भेजा गया था। इस संबंध में अध्यक्ष महोदय ने अपना विनिर्णय देकर इस प्रश्न का समाधान किया था। अतः अब उन्हें इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है। हाँ, यदि उनके पास कोई अन्य कारण हैं तो वे ऐसा करने के लिए स्वागत योग्य है। वे इस संशोधन पर बोले रहे हैं कि यह विधेयक पुनः विचार के लिए प्रवर समिति को भेज दिया जाए। परन्तु यदि वे इस दलील पर बल देते हैं कि प्रवर समिति ने भिन्न विधेयक पर विचार किया, तब यह अध्यक्ष के उस विनिर्णय से नियमित हो जाता है, जिसमें उन्होंने कहा था कि यह वही विधेयक है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी (मद्रास : सामान्य) : यह खारिज करने का एक तर्क हो सकता है।

जहां तक सांसारिक प्रयोजनों का सम्बन्ध है, यदि कोई बेटा गोद लिया जाता है तो वह इसलिए कि वह बूढ़े पुरुष अथवा बूढ़ी महिला की सेवा करेगा, मैं समझता हूँ इसमें कोई फायदा नहीं है। इस समय रोगीगृह, अस्पताल और अन्य गृह हैं। यदि आपके पास कोई सम्पत्ति नहीं है, तो किसी बच्चे को गोद लेना बेकार है और कोई व्यक्ति आपकी केवल इसलिए सेवा नहीं करेगा कि आप ने उसे गोद लिया है। यदि आपके पास सम्पत्ति है, तो बुढ़ापे में आप की सहायता करने के लिए काफी संस्थायें हैं। मेरा तर्क यह है कि वर्तमान स्थिति में हमारे समाज में गोद लेने की प्रथा का कोई महत्त्व नहीं रह गया है।

जहां तक नाबालिगों और अभिभावकों का सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि वह वर्तमान हिंदू कानून से किसी तरह भिन्न है। जहां तक उत्तराधिकार का सम्बन्ध है, मुझे खेद है कि उत्तराधिकार के बारे में मुझे कोई विशेष प्रावधान देखने में नहीं आया है और मैं विश्वास के साथ नहीं कह सकता कि वर्तमान उत्तराधिकार पद्धति ठीक है या गलत। मैं एक बात कहूंगा कि सिद्धान्ततः एक लड़की को लड़के के साथ सह-वारिस बनाने में कोई बुराई नहीं है, क्योंकि महिला सम्पत्ति अधिनियम, 1937 की धारा 3 के अन्तर्गत मां को बेटे के साथ हिस्सा मिलता है। यदि एक लड़की भाई के साथ दाय पाती है तो इसमें आपत्ति की क्या बात है? यदि भाई के साथ मां, दाय पा सकती है तो भाई के साथ लड़की दाय क्यों नहीं पा सकती। पंडित भार्गव ने यह आपत्ति की कि दामाद घर में आकर परेशानी पैदा करेगा। यदि दो भाई परेशानी पैदा नहीं करते, तो दामाद क्यों परेशानी पैदा करेगा? आप कनाट प्लेस जायें, तो आपको पता चला जायेगा कि पति की नियति यह है कि वह पत्नी का कोट अपने कन्धे पर उठाता है और बिल का भुगतान करता है। अतः जब पत्नी नहीं चाहेगी, तो पति कैसे परेशानी पैदा कर सकता है?

एक माननीय सदस्य : ऐसा उत्तर भारत में होता है।

श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा : यह तो पुरुष की प्रगति है। मानवता का विकास क्रम यही है। आपकी मूंछे कहां गई। यह एक सामान्य जैविक सिद्धांत है कि मादा कोशाणु विकसित होकर अलग हो जाते हैं और महिला का बेहतर विकास होता है। महिला, पुरुष की अपेक्षा अधिक गोरी, कोमल और सुन्दर होती है। प्रगति का यह सिद्धान्त है कि व्यक्ति अच्छाई और सौन्दर्य की ओर अग्रसर होता है। यदि आपका सुझाव इसके प्रतिकूल है, तो मैं समझता हूँ कि आप मानव नहीं हैं।

अब मैं संयुक्त हिंदू परिवार की ओर आता हूँ। मैंने इस सम्बन्ध में विशेषज्ञों की राय का विश्लेषण किया है। सभी विशेषज्ञ यह मानते हैं कि हिंदू रीति रिवाज उस समय बने जब हमारा समाज ग्राम्य अवस्था में था। उन परिस्थितियों में संयुक्त हिंदू परिवार व्यवस्था का होना आवश्यक था। इस समय कुछ कानून ऐसे हैं जिनके आधार पर हमने संयुक्त हिंदू परिवार सम्पत्ति की धारणा समाप्त कर दी है। संयुक्त हिंदू परिवार प्रथा उस समय बनी जब व्यापार और वाणिज्य अधिक नहीं था। एक किसान एक गाय को एक सौ रुपये की वस्तु के रूप में नहीं देखता, अपितु एक ऐसे जीवन के रूप में देखता है जो उससे जुड़ा हुआ है पवित्र है। अत: वह गाय को उसी रूप में देखता है और यदि लड़का गाय को लेकर परिवार से अलग हो जाता है, तो वह उससे पैसा लेना पसन्द नहीं करेगा, क्योंकि गाय एक पवित्र चीज है। यही कारण है कि हम गाय को गौ माता समझते हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : क्या कोई गौ पिता भी है?

श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा : अब समय बदल गया है, इसलिए संयुक्त हिंदू परिवार का प्रश्न उठाना उचित नहीं है और इसे जरूरी नहीं समझा जाना चाहिये। इसे पवित्र भी नहीं माना जाना चाहिये, क्योंकि यह प्रथा उस समय बनी जब भारत में पहले आर्यों के समाज की स्थापना हुई थी।

दूसरी बात यह है कि यह कानून कृषि के मामले में लागू नहीं होता। जहां तक कृषि भूमि का सम्बन्ध है, नये कानून बन रहे हैं और उनमें उत्तराधिकार उसी आधार पर होगा।

इन शब्दों के साथ मैं इस विधेयक की इस सभा से स्वीकृति के लिए सिफारिश करता हूँ।

***श्री बी.एम. गुप्ता (बम्बई : सामान्य) :** महोदय, मैं सभा के समक्ष विधान को सीमित समर्थन देने के लिए खड़ा हुआ हूँ। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं यहां प्रस्तावित अनेकों सुधारों का विरोध करता हूँ। इसके प्रतिकूल मैं यह कहने के लिए तैयार हूँ कि वे सही दिशा में हैं, किन्तु उनमें कुछ सुधार और संशोधन करने की आवश्यकता है। संशोधन

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 502-504

जरूरी भी हैं। मैं केवल एक उदाहरण दूंगा। परंपरागत तलाक के उन्मूलन से बम्बई प्रांत की ग्रामीण जनता को काफी परेशानी होगी, क्योंकि वहां के लोगों में तलाक की प्रथा काफी प्रचलित है। बम्बई में तलाक कानून है, लेकिन उस कानून में भी प्रथागत तलाक एक अपवाद है। अतः मेरा यह कहना है कि कुछ संशोधन आवश्यक हैं। तलाक, विवाह और गुजारा भत्ता तथा अल्पसंख्यक सम्बन्धी प्रावधान अधिनियमित किये जायें। मुझे उनके बारे में कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु मैं भाग 5, 6 और 7 में अन्तर्विष्ट प्रावधानों का समर्थन करने के लिए तैयार नहीं हूँ। उनसे मूलभूत परिवर्तन होते हैं। वास्तव में उनसे हिंदू समुदाय के सभी दाय कानून बिखर जाते हैं। अतः प्रश्न यह उठता है कि क्या ऐसे बिखराव के लिए यह समय उपयुक्त है। हम ऐसी राजनैतिक और आर्थिक स्थिति की मंझधार में हैं, जिसमें अशांति, विक्षोभ, दुर्गति और विघटन व्याप्त है। अतः प्रश्न यह है कि क्या हमें ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन करके स्थिति को और अधिक जटिल बनाना चाहिये, जो देश के समूचे सामाजिक ढांचे को प्रभावित करता है। हमारे प्रधान मंत्री प्रायः कहते हैं और उनका कहना ठीक है कि इस आपातकालीन स्थिति में पहली चीजें पहले आनी चाहिये और यह समय ऐसी चीज़ों के लिए नहीं हैं जिससे विघटन होता हो। यदि आप इस कसौटी के आधार पर इस कानून को परखते हैं तो परिणाम क्या होगा? मैं पूछता हूँ कि क्या ये प्रावधान इतने जरूरी हैं कि हमें पहले से मुश्किल स्थिति को और मुश्किल बनाने का जोखिम ले लेना चाहिये? उत्तर स्पष्ट है। हिंदू कानून कई वर्षों से प्रचलन में है और इसे बदला जाना है या इसे संहिताबद्ध किया जाना है, तो इस समय इसकी आवश्यकता नहीं है। विद्यमान कानून को इस प्रकार बिखेरने के लिए यह सही अवसर नहीं है।

यह हमारा अनुभव है कि जो विधान जनमत से पूर्व बनाया जाता है वह असफल रहता है। मैं इसमें न केवल मुखर शहरी लोगों को अपितु देहातों के करोड़ों लोगों को भी शामिल करता हूँ। हमें यह देखना है कि क्या यह विधान, जनमत से पहले बनाया जा रहा है। हमें शारदा कानून का अनुभव है। उसके प्रावधान कठोर होने के बावजूद उसे लागू नहीं किया जा सकार। उसी तरह के मामलों में तो यह कानून निष्फल ही नहीं होगा, अपितु इसके भाग पांच, छः और सात में अन्तर्निहित प्रावधानों के परिणाम बहुत ही घातक रहेंगे।

देहातों में ऐसे गुंडे हैं, जो अपनी कानून की विस्तृत जानकारी के बल पर ग्रामीणों के अज्ञान का अनुचित लाभ उठाने का प्रयास करते हैं और उन्हें धोखा देकर लम्बी मुकदमेबाजी में डाल देते हैं। यह बुराई पहले से ही व्याप्त है। विरासत अथवा उत्तरजीविका का प्रयोग काफी समय से होने और लोगों को इसकी जानकारी होने के कारण गांवों के लोग पहले ही से इसके बारे में जानते हैं। अब परिणाम यह होगा कि गांवों के गुंडों को ग्रामीणों के अज्ञान का अनुचित लाभ उठाने का एक और अवसर मिल जायेगा। अतः मैं यह आग्रह करना चाहता हूँ कि यद्यपि मैं सुधार का विरोधनी नहीं हूं, इस प्रकार का विधान स्थापित करने के लिए यह उचित अवसर नहीं हैं।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि इस समय आम लोग अनपढ़ हैं, यहां या प्रांतीय राजधानियों में हम जो भी निश्चय करें इस प्रकार के विधानों को गांवों में लागू करना कठिन है। हमें पहले ही 'अधिक अनाज उपजाओ' अभियान का अनुभव हो चुका है। मेरे प्रांत में सरकार कई रियायतें और सुविधायें दे रही हैं, लेकिन ग्रामीणों को इसकी कोई जानकारी नहीं है। तब इस कानून का क्या परिणाम होगा? गांवों के गुंडे इस मामले में ग्रामीणों के अज्ञान का अनुचित लाभ उठा सकेंगे।

एक दृष्टि से शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा गांवों में स्थिति अधिक खराब होगी। वर्तमान संवैधानिक स्थिति के अनुसार इस कानून से कृषि भूमि प्रभावित नहीं होगी। इसका अर्थ यह होगा कि मृत कृषक की सम्पत्ति के दो प्रकार के वारिस होंगे। उसकी कृषि भूमि एक प्रकार के वारिसों को जायेगी और शेष सम्पत्ति दूसरे प्रकार के वारिसों को जायेगी। इससे दुविधा और बढ़ जायेगी। हम यह विधान एकरूपता लाने के लिए बना रहे हैं, लेकिन एकरूपता और सरलता का स्थान जटिलता और भ्रांति ले लेगी। इस दुविधा से बचने के लिए बेहतर यह होगा कि हम नया संविधान लागू होने तक प्रतीक्षा करें। हमें कोई जल्दीबाजी नहीं करनी चाहिये। मैं व्यक्तिगत रूप से अनुभव करता हूँ कि यह कानून पेश तो कर दिया जाये, लेकिन इसे लागू एक या दो आम चुनाव होने के बाद किया जाये। उन आम चुनावों से ग्रामीणों की राजनैतिक चेतना तेज़ी से जागृत होगी और वे विधानमंडल की कार्य–प्रणाली के बारे में अच्छी तरह जान पायेंगे। उस स्थिति में ग्रामीण, विधान को बेहतर ढंग से प्रभावित कर सकेंगे जिसका उनके हितों पर काफी प्रभाव पड़ता है। अतः मेरा अनुरोध है कि जब तक लोगों में राजनैतिक चेतना नहीं आती, तब तक हमें उन पर यह विधान नहीं थोपना चाहिए।

अन्त में मैं अपने उत्साही मित्रों से, जो इस विधान के प्रबल समर्थक हैं, अनुरोध करता हूँ कि वे इतने उत्तेजित न हों कि वे अपने उद्देश्य को पूरा करने में ही असफल हो जायें।

***श्री ए. करूणाकर मेनन (मद्रास : सामान्य) :** महोदय, मैं इस विधेयक का हृदय से समर्थन करने के लिए खड़ा हुआ हूँ। इससे हिंदू समाज को मजबूत करने में काफी सहायता मिलेगी। हिंदू कानून अपने वर्तमान रूप में कई कानूनी पद्धतियों का मिश्रण है। हमने अपने संविधान में घोषणा की है कि हम एक ऐसी समान सिविल संहिता बनायेंगे जो समूचे भारत पर लागू होगी। ऐसी एक समान संहिता विकसित करने में इस हिंदू संहिता से काफी सहायता मिलेगी। मैं चाहता हूँ कि मुसलमान मित्र भी मुस्लिम कानून को संहिताबद्ध करने के लिए विधेयक लायें। ईसाइयों का पहले ही एक संहिताबद्ध कानून है। इन तीन संहिताबद्ध कानूनों के अस्तित्व में आने के बाद इन तीन संहिताओं के एक से प्रावधान चुनना और संविधान के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति करना सरल हो जायेगा। इस विधेयक का इसलिए भी स्वागत है कि इस से महिलाओं को और अधिक अधिकार मिलेंगे।

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 504–506

लेकिन मेरी कुछ शिकायतें हैं। यह कानून उतना प्रगतिशील नहीं है जितना कि इसे होना चाहिये और यह जनता की अपेक्षाओं के भी अनुकूल नहीं है। यह कई पहलुओं में मरूमाकट्टायम कानून से, जो इस समय देश के उस भाग में जहां हम रहते हैं, विद्यमान है, काफी पीछे हैं। जिस स्थिति में हम इस समय हैं, उससे नीचे हमें नहीं गिरना चाहिये। यदि विधेयक में संशोधन लाये जा सकें और विधेयक का प्रयोग करना हमारे लिए भी संभव हो सके, तो हमें सबसे अधिक खुशी होगी।

इस समय विधेयक के जो प्रावधान हैं वे पैतृक दृष्टि से सोचे गये हैं। मातृ विधि पद्धति के प्रावधान, जहां कहीं वे प्रगतिशील हैं, इस विधेयक में शामिल किये जा सकते हैं पर उस दृष्टिकोण का कोई ध्यान नहीं रखा गया है। यह कहा जा सकता है कि 1947 में मसौदा तैयार किये गये मूल विधेयक में मरूमाकट्टायम और ऐलिया संथानम को विधियों की उन सभी महत्वपूर्ण शाखाओं के संचालन से बाहर रखा गया था, जो इसमें शामिल की गई हैं। मैं यह बताना चाहता हूँ कि यह विधेयक पर्याप्त प्रगतिशील क्यों नहीं है और इसे अधिक प्रगतिशील क्यों बनाया जाये।

मरूमाकट्टायम विधि के अन्तर्गत विवाह एक नितान्त सांसारिक मसला है। इसमें धर्म की कोई बात नहीं है। इसमें अलंघनीयता या पवित्रता की भी कोई बात नहीं है। हिंदू संहिता विधेयक में दो प्रकार के विवाहों को मान्यता दी गई है–सांस्कारिक विवाह और कानूनी विवाह। कानूनी विवाह आम है और हमें इस पर कोई आपत्ति नहीं है। हम इससे सम्बन्धित प्रावधानों का पालन करने के लिए तैयार हैं।

संहिता के लेखकों को यह गलतफहमी थी कि मरूमाकट्टायम विवाह भी सांस्कारिक थे, यह बात विधेयक के खंड 51 के एक पाठ से स्पष्ट हो जाती है, जिसमें उन्होंने कहा है कि मालाबर विवाह भी सांस्कारिक है। इसी आधार पर उन्होंने इस खंड का प्रारूप तैयार किया है। मालाबर में विवाह का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। खंड 51 का पाठ इस प्रकार है:–

"इस भाग में अन्तर्विष्ट किसी बात का अर्थ यह नहीं होगा कि वह एक सांस्कारिक विवाह, चाहे वह इस संहिता से पूर्व किया गया हो अथवा बाद में, के विघटन के प्रयोजनार्थ मद्रास मरूमाकट्टायम अधिनियम, 1932 (1932 का मद्रास अधिनियम 22) द्वारा प्रदत्त किसी अधिकार को प्रभावित करती है।"

जहां तक हमारा सम्बन्ध है, एक और ऐसी दशा है जिसमें हम इस विधेयक में संशोधन करवाना चाहेंगे। हमारा कानून हमें अपने पिता की भतीजी या अपने मामा की लड़की से विवाह करने की इजाज़त देता है। वास्तव में हममें से बहुत से लोग अपने मामा/चाचा की लड़की या अपने बाप की भतीजी से विवाह करना गौरव की बात समझते हैं। किन्तु ऐसा करना पवित्र तथा निषिद्ध सम्बन्धों के संबंधित प्रावधानों के अन्तर्गत

निषिद्ध है। इस देश के हमारे क्षेत्र के लोग हमारे अधिकार पर इस प्रकार के अतिक्रमण को पसन्द नहीं करेंगे।

न्यायिक पृथक्करण अथवा दाम्पत्य अधिकारों की पुनःस्थापना के बारे में भी हमारे कानून में कोई प्रावधान नहीं है। या तो विवाह बना रहता है या तलाक के माध्यम से इससे छुटकारा पा लिया जाता है। बीच का कोई रास्ता नहीं है। तलाक का, प्रावधान बड़ा सरल है। कोई भी दुःखी पक्ष निकटतम न्यायालय में जाता है और अपनी याचिका पर बारह आना कि स्टाम्प लगाकर यह प्रार्थना करता है कि "फलां फलां कारणों से हम एक साथ नहीं रह सकते और इसलिए तलाक दिया जाये।" वह याचिका छः महीने तक लम्बित रखी जाती है। संभवतया कानून निर्माताओं की ऐसा प्रावधान करने के पीछे यह मंशा थी कि क्या इस छः महीने की अवधि के बीच समझौता हो सकता है। छः महीने की इस अवधि के बाद कुछ नहीं होता तो तलाक स्वतः हो जाता है। यह प्रावधान सरल है और विधेयक के खंड 51 से यह स्पष्ट है कि विधेयक के निर्माताओं का ध्यान इस ओर गया है, क्योंकि तलाक का यह प्रावधान विधेयक में भी बनाये रखा गया है। किन्तु मुझे यह समझ में नहीं आता कि इस प्रावधान का लाभ अन्य सभी हिन्दुओं को क्यों नहीं लेने दिया जाता।

विवाह के विघटन के प्रावधान से इस सभा के कुछ सदस्य नाराज़ हो गये हैं। यद्यपि तलाक का प्रावधान मालाबार में 1932 से है, पर मैं समझता हूँ कि वास्तव में वहाँ एक दर्जन तलाक भी नहीं हुए हैं। इससे एक विद्वान लेखक बर्टरैन्ड रसेल का यह कथन सही सिद्ध होता है कि "तलाक के कानून अत्यन्त सरल होने से तलाक कदाचित अधिकतम नहीं होते। जहां कहीं तलाक होता है, वहाँ भी जारकर्म कम और नैतिकता अधिक होती है।"

जहाँ तक गोद लेने का सम्बन्ध है, देश के हमारे क्षेत्र में जो प्रथा व्याप्त है, उसकी तुलना में इस विधेयक के प्रावधान असंतोषजनक हैं।

इस विधेयक के अनुसार दत्तक ग्रहण एक धार्मिक मामला है किन्तु मरूमाकट्टायम लोगों में यह एक शुद्ध धर्मनिर्पेक्ष मामला है। हिंदू संहिता के अन्तर्गत केवल एक पुरुष अथवा उसकी विधवा किसी व्यक्ति को गोद ले सकते हैं, किन्तु हमारे कानून के अनुसार कोई भी व्यक्ति, पुरुष अथवा महिला, किसी व्यक्ति को गोद ले सकते हैं। जबकि हिंदू कानून के अन्तर्गत किसी पुरुष को ही गोद लिया जा सकता है, हमारे कानून के अन्तर्गत पुरुषों अथवा महिलाओं को गोद लिया जा सकता है। जबकि हिंदू कानून के अंतर्गत केवल एक व्यक्ति को गोद लिया जा सकता है, हम अपनी सम्पत्ति के वारिस के रूप में अथवा परिवार समाप्त होने के समय एक व्यक्ति, दो व्यक्तियों अथवा एक पूरे परिवार को गोद ले सकते हैं। अतः इस मामले में हमारे कानून और मरूमाकट्टायम कानून में काफी अन्तर हैं। विधेयक तैयार करते समय इन चीज़ों का ध्यान न रखने का मेरे अनुसार कारण यह है कि पूरा परिवेश पूर्णतया पितृ सत्तात्मक न कि मातृ सत्तात्मक

भी रहा है। यदि इस दृष्टिकोण को भी ध्यान में रखा गया होता, तो इनमें से अनेक मतभेद दूर अथवा कम हो गये होते।

संयुक्त परिवारिक सम्पत्ति के सम्बन्ध में संयुक्त अभिधारणा (ज्वॉइन्ट टेनेन्सी) के स्थान पर सामान्यिक अभिधारणा (टेनेन्सी–इन–कॉमन) का प्रावधान इस विधेयक का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है। मैं इसका स्वागत करता हूँ किन्तु यह विधि भी पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण से ही बनाई गई है। भाग पांच का कोई खंड पढ़िये–मैं सभा को कष्ट नहीं दूंगा किन्तु मैं इसे केवल माननीय विधि मंत्री के ध्यान में लाना चाहता हूँ–भाग पांच का कोई खंड पढ़ें तो आपको पता चलेगा कि यह मरूमाकट्टायम लोगों पर लागू नहीं होता, यद्यपि हिंदू संहिता विधेयक उन पर भी लागू होने का प्रावधान है।

खंड 86, 87 और 88 खंडों से पता चलेगा कि उनमें से कोई भी खंड सामान्यिक अभिधारणा (टेनेन्सी–इन–कॉमन) के मामले में लागू नहीं किया जा सकता जिसे मालाबार में विद्यमान संयुक्त परिवारों के मामले में लागू किया जा रहा है।

विरासत के मामले में, मैं नहीं समझता कि बेटे और बेटी के साथ माँ को भी वारिस क्यों न बनाया जाये। मान लें कि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है–मान लें मेरी मृत्यु हो जाती है। तो मेरा प्राकृतिक प्यार और स्नेह मुझे मेरी मां को देखने के लिए प्रेरित करते हैं जिसने मेरा पालन–पोषण किया है और जिसने मेरे पूरे जीवन में मुझमें दिलचस्पी ली है और मैं चाहता हूँ कि मैं अपनी माँ को अपनी सम्पत्ति का वारिस बनाऊं। यहां मुझे पता चलता है कि खंड एक में माँ का उल्लेख नहीं किया गया है।

मेरी दूसरी शिकायत यह है कि एक पूर्वमृत बेटे या एक पूर्वमृत बेटे के बेटे के बेटे को वर्ग एक में सम्मिलित किया जाये। उसे वर्ग दो में सम्मिलित किया जाना चाहिये। हमारे लिए यह आपत्ति की बात है कि उन्हें वर्ग एक में अधिमान्य वारिसों के रूप में रखा जाये। यदि आप मालाबार में किसी से पूछें कि क्या वह चाहेगा कि उसकी सम्पत्ति उसके बेटे के पूर्वमृत बेटे के बेटे या उसके बेटे के बेटे या उसकी बहन या बहन के बच्चों को दी जाये, तो वह निश्चित रूप से कहेगा कि उसकी सम्पत्ति भाई के बजाय उसकी बहन और बहन के बच्चों को दी जाये। अत: मेरा कहना यह है कि सातवीं अनुसूची के वर्ग दो में बहन और उसके बच्चों को जो स्थान दिया गया है, उसे ऊपर उठाया जाना चाहिये। बहन और बहन के बच्चे बहुत नीचे आते हैं; सातवीं अनुसूची में वे बेटे की बेटी के बेटे, बेटे के बेटे की बेटी, बेटे की बेटी की बेटी के बाद आते हैं। अन्तत: हम इन व्यक्तियों को ही पाते हैं और भाई तथा बहन को भी वारिस के रूप में पाते हैं। मेरी समझ में यह नहीं आता कि उस भाई और बहन को ऊंचा स्थान क्यों न दिया जाये जो उसी मां से पैदा हुए हैं। निश्चित रूप से प्राकृतिक प्यार और स्नेह से प्रेरित होकर हमें भाई और बहन को उससे ऊंचा स्थान देना चाहिये, जो विरासत सम्बन्धी वर्तमान प्रावधानों के अन्तर्गत उन्हें दिया गया है।

(इस समय उपाध्यक्ष महोदय ने कुर्सी खाली की, जिस पर तत्पश्चात् श्रीमती जी. दुर्गाबाई (सभापति तालिका में से एक) आसीन हुईं)

इन सभी पहलुओं से इस प्रश्न पर विचार करने से पता चलेगा कि पूरा विधेयक मालाबर को छोड़कर देश के अन्य भागों में विद्यमान कानून पर आधारित है, जो निस्संदेह निश्चित रूप से अधिकतम लोगों द्वारा अमल में लाया जाता है। किन्तु यह विधेयक तैयार करते समय मातृ सत्तात्मक विधि पद्धति का कोई ध्यान नहीं रखा गया है। अतः मैं महसूस करता हूं कि यह विधेयक महिलाओं के अधिकारों के मामले में, जो हम सभी को उन्हें देने की बड़ी आकांक्षा है तथा सामान्य दृष्टिकोण से भी, पर्याप्त प्रगतिशील नहीं है।

इस विधेयक के क्षेत्राधिकार में लाये जाने की हमारी बड़ी आकांक्षा है। हम निश्चित रूप से एकरूपता चाहते हैं। मैं तथा देश के हमारे क्षेत्र के लोग भी चाहते हैं कि देश में सभी हिंदुओं के लिए एक समान कानून हो। किन्तु हम यह भी चाहते हैं कि कानून इतना भी क्रांतिकारी अथवा ऐसा न हो कि लोग उसका पालन भी न कर सकें या उसका पालन करने में उन्हें कोई आनाकानी हो। इसे आकर्षक बनाया जाना चाहिये। मेरा अनुरोध है कि कानून बनाते समय मातृ-सत्तात्मक विधि पद्धति का भी ध्यान रखा जाये। मेरा यह निवेदन है कि विधेयक में समीचीन संशोधन किये जायें, जिससे हम भी विधेयक के क्षेत्राधिकार में आ जायें। यदि किसी कारण से दो पद्धतियां इतनी भिन्न हों कि हमें विधेयक के क्षेत्राधिकार में लाने के लिए विधेयक में संशोधन करना असंभव हो, तो मैं सभा से अनुरोध करूंगा तो कि हमें अकेले रहने दिया जाये। हमें अपने कानून का पालन करने की इजाज़त दी जाये, जिसमें इस सभा में पेश किये गये हिंदू संहिता विधेयक की अपेक्षा प्यार और स्नेह का उच्च स्थान है। मैं तो यह कहूँगा कि यह हिंदू संहिता विधेयक धर्मनिरपेक्ष विधान नहीं है, यह युक्तियुक्त उपाय नहीं है; अभी भी विधेयक में धर्म की झलक है। यह विधेयक पूर्णतया युक्तियुक्त होना चाहिये। मुझे कोई आपत्ति नहीं होती यदि पूरा विधेयक प्राकृतिक दृष्टिकोण से लाया गया होता, जिससे धर्म को पूरी तरह दूर रखा गया होता। यदि ऐसा कोई विधेयक पेश किया जाता है, तो हमारे लोगों को इसका पालन करने में बहुत खुशी होगी। हमें यह दिखाई देता है कि वर्तमान रूप में विधेयक पर धर्म की काफी छाप है; यद्यपि इस पर धर्म का प्रभाव कम करने का प्रयास किया गया है, तो भी यह पर्याप्त धर्मनिरपेक्ष नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि विवाह, दत्तक ग्रहण और विरासत में धर्म का हस्तक्षेप क्यों हो, उनसे सम्बन्धित प्रावधानों को देश के हमारे क्षेत्र में इस समय लागू कानून के प्रावधानों की तरह अधिक धर्मनिरपेक्ष क्यों न बनाया जाये? इसका कोई कारण नहीं है कि हम जो ऐसी पद्धति का पालन करते हैं जिस का इन सांसारिक मामलों में धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं है, ऐसे विधेयक के क्षेत्राधिकार में क्यों आयें, जिसमें धर्म की विशेष भूमिका है।

***माननीय अध्यक्ष :** केवल दस मिनट रह गये हैं। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या कोई सदस्य दस मिनट में अपना भाषण समाप्त करेगा।

कुछ माननीय सदस्य : खड़े हो गए।

श्री सीताराम एस. जाजू (मध्य प्रदेश) : महोदय, मैं दस मिनट में अपना भाषण समाप्त कर दूँगा।

आरम्भ में मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि मैं प्रस्तुत हिंदू संहिता विधेयक का हार्दिक स्वागत करता हूँ। मुझे यहां खड़ा होने में हिचकिचाहट हो रही है, क्योंकि मैं महसूस करता हूं कि पुरानी पीढ़ी के लगभग सभी सदस्यों ने हिंदू संहिता विधेयक का विरोध किया। मैं उनके दिलों को चुनौती नहीं देता, लेकिन जहां तक हिंदू संहिता विधेयक का सम्बन्ध है, उनके दिल बूढ़े या बासी प्रतीत होते हैं।

श्री एम. तिरुमला राव : क्या मैं यह कह सकता हूँ कि पुरानी पीढ़ी की महिलायें भी आपका समर्थन कर रही हैं?

श्री सीताराम एस. जाजू : हाँ, क्योंकि वे प्रगतिशील है, क्योंकि वे प्रगति करना चाहती हैं। मेरे मित्र श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा के शब्दों में वे अधिक प्रगतिशील हैं और आगे बढ़ रही हैं, जबकि पुरुष पीछे की ओर जा रहे है। बहरहाल, मेरा सम्बन्ध वर्तमान रूप में हिंदू संहिता विधेयक से है।

महोदया, मैं नहीं बोलता लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए मैं बोल रहा हूँ कि मैं यहाँ युवा पीढ़ी के विचार रख सकता हूँ और मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि देश की युवा पीढ़ी हिंदू संहिता के पक्ष में है। इस तथ्य को बहुत उछाला गया है कि इस विधेयक को भारतीय प्रांतों में लोकमत जानने के लिए परिचालित नहीं किया गया है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि इस सभा में कई विधेयक पारित किये गये हैं, लेकिन उस समय किसी ने कोई उंगली नहीं उठाई और अब यह कहा गया कि उन विधेयकों को भारतीय प्रांतों में लोकमत जानने के लिए पारिचालित नहीं किया गया।

कुछ माननीय सदस्य : किन्तु यह इतना विवादास्पद विधेयक है।

श्री सीताराम एस. जाजू : कई विवादास्पद विधेयक आये हैं। सिरोही का प्रश्न अत्यन्त विवादास्पद था, लेकिन प्रांतों के लोगों से इस बारे में परामर्श नहीं किया गया।

श्री गोकुल भाई दौलत राम भट्ट (बम्बई प्रांत) : महोदया, सिरोही के बारे में कोई विधेयक नहीं था।

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 506-508

माननीय उपाध्यक्ष : मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करती हूं कि वक्ता को अबाध बोलने दें।

सरदार हुकुम सिंह : युवा पीढ़ी यदि भटक जाये तो क्या उसे ठीक मार्ग पर लाना, बड़े लोगों को कर्तव्य नहीं है?

श्री सीताराम एस. जाजू : युवा पीढ़ी को काबू में लाना और उनका मार्गदर्शन करना निश्चित रूप से उनका अधिकार है, किन्तु उन्हें प्रगति की ओर ले जाया जाना चाहिये न कि अधोगति की ओर।

एक माननीय सदस्य : हमारा 80 वर्ष तक का अनुभव है।

श्री सीताराम एस. जाजू : 80 वर्ष का अनुभव हो सकता है। किन्तु राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का भी अनुभव है। ऐसी कई पुस्तकें हैं जिनमें उनके द्वारा समय-समय पर प्रकाशित लेख अन्तर्विष्ट किये गये हैं। जो हिंदू महिलाओं के उत्थान के बारे में थे। और जहां तक हिंदू संहिता का सम्बन्ध है, मैंने कई कट्टर विरोधियों को सुना है कि विरासत और बहनों तथा बेटियों के साथ बंटवारे सम्बन्धी प्रावधान को छोड़कर शेष पूरी संहिता पारित कर दी जाये, तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी। इसका विरोध मुख्य रूप से मारवाड़ी समुदाय, जिससे मैं सम्बन्धित हूँ, ने किया है। किन्तु मैं यह कहूँगा कि मारवाड़ी युवक हिंदू संहिता विधेयक के पक्ष में हैं। यदि हम कहते हैं कि पुराने लोग हैं और उनका अनुभव है, तो महात्मा गाँधी ने अपनी जीवनी में लिखा है कि हिंदू पत्नी को देखने से आंखों के सामने एक अत्यन्त दयनीय दृश्य आता है।

पण्डित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : आप महात्मा गांधी के नाम का दुरुपयोग नहीं कर सकते।

श्री सीताराम एस. जाजू : शायद उनके नाम का जितना दुरुपयोग मैंने किया है, उससे अधिक आपने किया होगा। मैंने अभी अपना जीवन आरम्भ ही किया है और मुझे महात्मा के नाम की शपथ लेने का अभी कोई अवसर नहीं मिला है, जबकि बूढ़े लोगों ने, उन लोगों में से कुछ लोगों ने, जिनके बाल सफेद हैं, उनके नाम का सैकड़ों बार दुरुपयोग किया होगा।

महोदय, महात्मा गांधी लिखते हैं कि जहां तक हिंदू महिलाओं की स्थिति का सम्बन्ध है, यह बहुत ही दयनीय है। उनका कहना है कि यदि मालिक किसी नौकर से नाराज़ हो जाये तो नौकर अपने मालिक को छोड़ सकता है, लेकिन यदि कोई अपने बाप से नाराज हो जाये तो वह विभाजन की मांग नहीं कर सकता। यदि कोई आप अपने बेटे से नाराज़ हो जाये तो वह उसे घर से बाहर जाने के लिए कह सकता है, लेकिन जहां तक हिंदू पत्नियों का सम्बन्ध है, वे कहीं नहीं जा सकतीं। यदि महात्मा के हाथों में कस्तूरबा की यह स्थिति थी, तो हमारे जैसे साधारण मानवों के हाथों में महिलाओं की क्या स्थिति होगी?

जहाँ तक संविधान का सम्बन्ध है, हमने महिलाओं और पुरुषों में समानता स्वीकार की है, लेकिन यहां हम अपनी महिलाओं, अपनी बहनों और बेटियों को वह समानता देने में आनाकानी कर रहे हैं। आप किसी परिवार के एक लड़के को केवल इसलिए गोद ले सकते हैं कि उसका वही गौत्र या वही उपनाम है, लेकिन आप अपनी बेटी या अपनी रिश्ते की बहन को सहन करने के लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि वह एक महिला है। यही स्थिति है।

यह कहकर विधेयक के बारे में काफी तूफान खड़ा किया गया है कि यह हिंदू धर्म पर एक कलंक है। मैं अपने मित्रों से यह कहना चाहता हूँ कि हिंदू धर्म काफी सहनशील और समन्वय स्थापित करने वाला है। इसने प्राचीन काल से बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप अपने आप को ढाला है। इस का सबसे बड़ा सबूत 137 या 138 स्मृतियां हैं, जो इस बात का प्रमाण है। यदि कोई एक कानून होता और हिंदू कानून में किसी परिवर्तन का सुझाव न दिया गया होता अथवा आशा नहीं की गई होती, तो 138 स्मृतियां क्यों होतीं और हम एक और स्मृति क्यों नहीं बना सकते, संहिताबद्ध कर सकते और नया कानून बना सकते? हम इसमें उन स्मृतियों की सभी अच्छी चीजों का समावेश कर सकते हैं, जो आधुनिक समय और वैज्ञानिक घटनाओं तथा सामाजिक प्रगति की मांग है। यदि हम इन सभी को एक कानून में संहिताबद्ध करते हैं तो उसमें क्या बुराई है। स्मृति शब्द का अर्थ है कि जो कुछ स्मृति के आधार पर लिखा जाये, श्रुति शब्द का अर्थ है कि जो कुछ सुन कर लिखा जाये। यह कहीं नहीं लिखा है कि उन्हें किसी एक विशेष ऋषि या एक विशेष मुनि ने लिखा था। अतः मैं नहीं समझता कि ऐसी संहिता बनाने में कोई हिचकिचाहट होनी चाहिये और न ही किसी को यह महसूस करना चाहिये कि उसकी हत्या की जायेगी यदि ऐसी हिंदू संहिता बनाई जाती है। हम हमेशा राजनैतिक मंच से स्वाधीनता की बात करते रहे हैं। राजनैतिक स्वतंत्रता मिल गई है। लेकिन हमें यह भी देखना है कि देश का सामाजिक विकास भी हो। यदि हम चाहते हैं कि सामाजिक व्यवस्था बदले, तो मैं कहूंगा कि इसे बदलने का यही समय है। हमें अपने कर्मों द्वारा न कि अपनी कथनी द्वारा इसे सिद्ध करना होगा। हमें यह देखना होगा कि पूरी सामाजिक व्यवस्था बदले। जहां तक सुधार का सम्बन्ध है, मैं यह कह सकता हूं कि स्वर्गीय राजा राम मोहन राय को भी विरोध का सामना करना पड़ा, कई अन्य सुधारकों को विरोध का सामना करना पड़ा, उनमें से कुछ की अपने विरोधियों के हाथों ही, जिनकी वे सहायता करना चाहते थे, जिनकी स्थिति वे सुधार लाना चाहते थे और जिन्हें वे मुक्ति दिलाना चाहते थे अस्वाभाविक मृत्यु होगई। यहां हमें नेता मिल गए हैं, जो निश्चित रूप से हमारे साथ हैं। अधिवेशन के पहले दिन प्रधानमंत्री के भाषण के बाद मैं नहीं समझता कि इस मामले में यहां तर्क देने के लिये कोई चीज़ रह गई है या झगड़ने के लिए कोई मुद्दा है जब उन्होंने यह कह दिया कि वह सभी की राय से कानून बनाना चाहेंगे यदि यह राय कायम हो सकी। यदि

हम दूसरों के साथ समझौता करने के लिए तैयार हैं, तो मैं महसूस करता हूँ कि यह प्रगतिशील विधान नहीं रहेगा, इसका आकर्षण समाप्त हो जायेगा। किन्तु फिर भी मुझे अपने प्रधानमंत्री के विवेक में अधिक विश्वास है। मैं समझता हूँ कि मैं या मेरे युवा मित्र जितने बुद्धिमान हो सकते हैं उससे वह काफी अधिक बुद्धिमान हैं। मुझे उनमें आस्था है। यदि वह समझौता करना चाहते हैं या यदि सरकार समझौता करना चाहती है तो समझौता किया जा सकता है। किन्तु जहां तक युवा लोगों का सम्बन्ध है, हम समझौते के पक्ष में नहीं हैं। हमें निश्चित रूप से अपने नेताओं में आस्था है और हम उनके आदेशों का पालन करेंगे।

पण्डित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : लेकिन उनमें से कोई भी तो यहां नहीं है।

श्री सीताराम एस. जाजू : यदि वे यहां नहीं हैं तो माननीय डॉ. अम्बेडकर यहां हैं। वह विधेयक के प्रायोजक हैं और वह ऐसा सरकार की ओर से कर रहे हैं। इस सरकार को कोसना बेकार है। अन्तत: यदि हम इस विधेयक के इतिहास में जायें तो हमें पता चलेगा कि इसे हमारी पूर्ववर्ती सरकार द्वारा लाया गया था'''(व्यवधान)

महोदया, मैं करीब दस मिनट और बोलना चाहूंगा क्योंकि मेरे भाषण में व्यवधान हुआ है। यदि आप चाहें तो मैं कल अपना भाषण जारी रख सकता हूँ। मैं दस मिनट से अधिक नहीं लूंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य से अनुरोध है कि वह अपना भाषण समाप्त करें क्योंकि उन्होंने मुझे आश्वासन दिया है कि वह केवल दस मिनट लेंगे।

श्री सीताराम एस. जाजू : लेकिन आप मेरी कठिनाई को समझें। महोदया मेरे भाषण में काफी व्यवधान डाला गया है। यदि आप को आपत्ति न हो तो मैं कल दस मिनट और बोलना चाहूंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या मैं जान सकती हूँ कि क्या माननीय सदस्य अगले तीन मिनटों में अपना भाषण समाप्त कर सकते हैं? मैं उन्हें अब केवल तीन मिनट और दूंगी।

श्री सीताराम एस. जाजू : महोदया, मैं जानता हूँ, मैंने आश्वासन दिया है। यदि आप चाहें तो मैं अभी बैठ जाता हूँ। तथापि मुझे तीन मिनट और देने के लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ।

अब, मैं कह रहा था कि डॉ. अम्बेडकर यहां है। वह निश्चित रूप से हमारे विचार सरकार तक पहुंचा देंगे। वह विधेयक प्रभारी हैं। वर्तमान सरकार को कोसना या उस पर आरोप लगाने में कोई फायदा नहीं है। आखिरकार, हम इस विधेयक के इतिहास की ओर ध्यान दें तो हमें पता चलेगा कि यह विधेयक हमारी पूर्ववर्ती सरकार यानी विदेशी

सरकार लाई थी। उस समय इसका विरोध करने की हमारे पास हिम्मत नहीं थी। जब कभी विदेशी सरकार द्वारा सामाजिक विधान लाये गये··

एक माननीय सदस्य : इतिहास की चिन्ता न करें।

श्री सीताराम एस. जाजू : मुझे निश्चित रूप से इतिहास की ओर देखना है, लेकिन अभी मुझे अपना भाषण देने दें। जब अंग्रेज सरकार कुछ विधान लाई जो हिंदू कानून को प्रभावित करते थे। तो उस समय हमने उन्हें स्वीकार कर लिया क्योंकि उनसे धनी लोगों-पूंजीपतियों पर कोई आर्थिक प्रभाव नहीं पड़ा। हमें यहां, तकलीफ हो रही है क्योंकि इससे हमारी जेब पर प्रभाव पड़ता है। हम इस सभा के पुरुष सदस्य काफी अधिक बहुमत में हैं। मैं नहीं चाहता कि बहुमत का प्रकोप इस सभा की अल्पमत महिला सदस्यों पर पड़े। देश की महिलायें समान्यतया अनपढ़ हैं। अतः हमें उनका शोषण नहीं करना चाहिये। एक बड़ा प्रचार किया जा रहा है कि इस विधेयक का उद्देश्य केवल एक चीज है और वह चीज तलाक है। सभी महिलाओं को यह बताया जा रहा है, प्रचारित किया जा रहा है, प्रभावित किया जा रहा है कि हिंदू संहिता पारित होने के बाद उनके पति उनका तलाक कर देंगे। हिंदू संहिता के प्रावधानों का इस प्रकार गलत अर्थ निकाला जा रहा है। मैं इन सभी लोगों को बताना चाहता हूं कि ऐसा एक भी आदमी नहीं होगा जो अनावश्यक रूप से तलाक देना चाहेगा। इसी प्रकार ऐसी एक भी महिला नहीं होगी जो अनावश्यक रूप से तलाक देना चाहेगी। न्यायालयों में काफी विवेक है और वे इस चीज को समझते हैं। न्यायापालिका निश्चित रूप से पूरे मामलों की जांच करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि न्याय हो। मुझे बस इतना की कहना है।

तत्पश्चात्, सभा की बैठक मंगलवार, 13 दिसम्बर, 1949 के पौने ग्यारह बजे तक के लिए स्थगित कर दी गई।

हिंदू संहिता–जारी

***माननीय उपाध्यक्ष :** अब सभा हिंदू विधि के कतिपय प्रावधानों का संशोधन करने तथा उन्हें संहिताबद्ध करने वाले विधेयक पर आगे विचार करेगी।

श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर (मद्रास : सामान्य) : महोदय, प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित विधेयक के विभिन्न पहलुओं पर विचार करने से पूर्व मैं आपकी अनुमति से कुछ सामान्य टिप्पणियां करना चाहूंगा। मैं एकदम यह कह सकता हूँ कि मैं उन लोगों के साथ नहीं हूँ, जो हिंदू विधि के मामलों में विधायी हस्तक्षेप या परिवर्तन के विरुद्ध हैं। कानून अपने स्वभाव सें गतिहीन नहीं हो सकता; इसे सभा की प्रगतिशील प्रवृत्तियों के साथ कदम मिलाकर चलना चाहिये, यदि उसे सामाजिक प्रगति का एक साधन तथा उपाय बनाना है। समाज में विधि के इस कृत्य के प्रति हमारे पूर्वज काफी सजग थे। स्मृतियां तथा स्मृतियों पर की गई महान टीकायें समाज में कानून के इस कृत्य और समय-समय पर परिवर्तनों की आवश्यकता का स्पष्ट प्रमाण हैं। ये टीकायें, जिन्हें देश के विभिन्न भागों में कानून की प्राधिकृत व्याख्या समझा जाता है मुश्किल से ही प्रमाण देती हैं, उस समय की सामाजिक प्रवृत्तियों के कार्य का किन्तु आधुनिक समय में, जब कि विधिवत गठित विधानांग कार्यरत हैं। केवल व्याख्या के आधार पर कोई विधिवेत्ता कानून में परिवर्तन नहीं कर सकता। यह कार्य कुछ हद तक किन्तु सीमित क्षेत्र में पिछले करीब एक सौ वर्षों में न्यायालयों, भारत के उच्चतम न्यायाधिकरणों तथा प्रिवी परिषद की न्यायिक समिति द्वारा किया गया है। तथापि कानून में परिवर्तन लाना सामान्य रूप से न्यायालयों का काम नहीं है। न्यायालयों का काम तो कानून की व्याख्या करना है यद्यपि व्याख्या की प्रक्रिया में न्यायालयों द्वारा पूर्ववर्ती निर्णयों अथवा हिंदू विधि पाठों में विभेद करके अथवा सिद्धान्त स्थापित करके दृश्य परिवर्तन किये जा सकते हैं।

तथापि अपने स्वभाव से न्यायालय का काम सीमित है। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि न्यायाधीश जाने अथवा अनजाने में एक विधायक की भूमिका ग्रहण कर सकता है। एक विशेष न्यायाधीश या न्यायपीठ एक प्रश्न पर दकियानूसी अथवा रूढ़िवादी दृष्टिकोण से विचार कर सकती है, दूसरा न्यायाधीश अपने न्यायिक कृत्य का प्रयोग किसी प्रिय सामाजिक सुधार के लिये कर सकता है। इस देश में उच्चतम न्यायाधिकरण के निर्णय तथा भारत के साथ अपने लम्बे साहचर्य के दौरान प्रिवी परिषद की न्यायिक समिति के निर्णय उपरोक्त उक्ति का प्रमाण हैं। इसके साथ-साथ इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि न्यायालयों के निर्णयों ने काफी हद तक विधायी हस्तक्षेप के लिए भूमि तैयार की है। यद्यपि विधायी हस्तक्षेप की आवश्यकता स्पष्ट है,

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 13 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 510-19

यह सभा इस प्रकार का विधान बनाते समय विवाह, पारिवारिक विधि और उत्तराधिकार के अधिकारों के बारे में व्याप्त कतिपय धारणाओं की अनदेखी नहीं कर सकती। परिवर्तन अवश्यंभावी है और समाज की मूलभूत विधि का अंग हैं, किंतु परिवर्तन का अर्थ समाज की जड़ों अथवा नींव पर कुठाराघात करना नहीं है।

कानून में सुधार के इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए मैं इस सभा से इस विधेयक पर विचार करने का अनुरोध करता हूँ। ऐसा कोई अन्य विषय नहीं है जिसमें इस देश के सभी पुरुषों और महिलाओं की इस समय सभा के विचाराधीन विधेयक से अधिक दिलचस्पी हो। इस दृष्टि से हमारे लिये और भी जरूरी हो जाता है कि जो भी हो, हम मतभेदों को सहन करें और इस देश के लोगों की खुशहाली के हित में शांत और निष्पक्ष होकर निर्णय लें। उस भाव से और उस हद तक इसे एक पार्टी का विषय या एक आस्था का विषय नहीं माना जा सकता।

महोदय, सर्वप्रथम मैं आपकी अनुमति से विवाह और तलाक सम्बन्धी अध्याय को लेता हूँ। इस अध्याय पर विचार करते समय यह याद रखना जरूरी है कि भारतीय विधानमंडल के विभिन्न अधिनियमों द्वारा विवाह सम्बन्धी कानून में पहले ही काफी संशोधन किए जा चुके हैं। ऐसा एक अधिनियम हिंदू विवाह (निर्योग्ता निराकरण) अधिनियम, 1946 (1946 का अधिनियम 28) था, जिसके द्वारा यह कानून बनाया गया है कि कोई विवाह केवल इस तथ्य के आधार पर अमान्य नहीं हो जायेगा कि उसके पक्षकार उसी गोत्र या परिवार के हैं या विभिन्न जातियों अथवा उपजातियों के हैं। हाल ही में मद्रास विधानमंडल ने एक पत्नी विवाह प्रथा अनिवार्य कर दी है और कुछ प्रांतीय विधानमंडलों ने पहले ही तलाक के लिए प्रावधान कर दिये हैं। विवाह के लिए सहमति की आयु सम्बन्धी विधि के सम्बन्ध में भी परिवर्तन किया गया है। यदि हम इस दृष्टिकोण से विधेयक पर विचार करते हैं, तो विधेयक में किये गये परिवर्तन किसी प्रकार भी इतने क्रांतिकारी नहीं हैं, जितने वे, पहली दृष्टि में दिखाई देते हैं। जैसा कि प्रवर समिति के कुछ सदस्यों ने कहा है, मूल विधेयक के प्रावधानों में किये जा रहे पर्याप्त परिवर्तन दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यवस्थापन न्यायिक पृथक्करण, निर्वाह भत्ता, बच्चों की अभिरक्षा, न्यायालयों के क्षेत्राधिकार और प्रक्रिया सम्बन्धी कुछ प्रावधान शामिल किये जाने के बारे में हैं।

जहां तक विधेयक के प्रावधानों का सम्बन्ध है, मैं एक महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहता हूँ। सांस्कारिक विवाह और कानूनी विवाह में जो अन्तर किया जा रहा है वे वास्तविकता से अधिक स्पष्ट लगते हैं। इस सम्बन्ध में विधेयक के प्रावधानों का अनुसरण कठिन है, क्योंकि मुझे प्रतीत होता है कि तलाक के सम्बन्ध में, दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यावस्थापन के सम्बन्ध में दोनों के अन्तर्गत कानूनी विवाह के मामलों में और सांस्कारित विवाह के मामलों में एक से प्रावधान हैं। इस विधेयक के अनुसार 'निषिद्ध अवस्थाओं,' और

सांस्कारित विवाह के बारे में अन्य प्रकार की निर्योग्यताओं में अन्तर है। सांस्कारिक विवाह के बारे में यह प्रावधान किया गया है कि सपिंड सम्बन्ध, विधेयक के अनुसार निर्योग्यता का एक आधार होगा, जबकि सिविल विवाह के मामले में केवल निषिद्ध अवस्थाओं को ही विवाह के प्रभावशाली लागू न होने का एक आधार माना गया है। साथ ही विधेयक में रूपान्तरण किया गया यह परिवर्तन मेरी समझ में नहीं आया कि पक्षकार सांस्कारिक विवाह करते हैं तो भी पति या पत्नी इसे विधेयक के प्रावधानों के अन्तर्गत कानूनी विवाह में बदल सकते हैं। इस परिवर्तन से वास्तव में कोई प्रयोजन सिद्ध होता है या नहीं, यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर माननीय विधि मंत्री इस विधेयक को अन्ततः पारित करने से पूर्व विचार कर सकते हैं।

सन्तान के अधिकारों, विरासत के अधिकारों, पति-पत्नी के बीच के दायित्वों और प्रत्येक अन्य मामले में कोई भिन्नता नहीं है। अदालती विवाह और सांस्कारिक विवाह के मामलों में भी, पूरी तरह एक-सी स्थिति है। संभवतया, सांस्कारिक विवाह के कुछ प्रावधान कुछ पक्षकारों की भावनाओं को शान्त करने के लिए हैं। यदि वास्तव में यही उद्देश्य है, तो आप को बाद में सांस्कारिक विवाह को सरलता से अदालती विवाह में बदलने का प्रावधान नहीं करना चाहिये। या तो आप यह कीजिए या वह उदाहरण के तौर पर यदि आप सांस्कारिक विवाह और अदालती विवाह में भेद करना चाहते हैं तो कीजिये; यह बात बिल्कुल स्पष्ट और निश्चित होनी चाहिये। सामान्य तौर पर सांस्कारिक विवाह के मामले में कुछ समारोह होते हैं। अदालती विवाह के मामले में कुछ औपचारिकताओं की आवश्यकता परमावश्यक नहीं होनी चाहिये। एक वकील के नाते मुझे इस विधायक के प्रावधानों के अन्तर्गत एक अदालती विवाह और सांस्कारिक विवाह में कोई वास्तविक भिन्नता दिखाई नही देती। मैं विधेयक के मूल उद्देश्यों में नहीं जाता, लेकिन मैं इसे केवल माननीय विधि मंत्री के विचारार्थ रखता हूँ।

जहां तक निषिद्ध रिश्तों में विवाह करने का सम्बन्ध है, आधुनिक प्रजनन-विज्ञान रिश्तेदारों में विवाह करने के हक में नहीं है। जो भी हो, काफी लोग इस सिद्धांत के पक्ष में हैं। उन परिस्थितियों में, जहां तक इस प्रावधान का सम्बन्ध है, क्या हम प्रगति कर रहे हैं या पीछे की ओर जा रहे हैं? कम से कम जहां तक इस भाग का सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि हमारे पूर्वजों ने आधुनिक विचारों की प्रत्याशा में ही कुछ रिश्तों में विवाह करने पर पाबन्दी लगाई थी। मैं आप से पूछता हूँ: प्रगति के नाम पर और उन्नत विचारों तथा सभ्यता के नाम पर अधोगामी कदम क्यों उठाया जाये? मैं निश्चित रूप से महसूस करता हूँ कि दूरवर्ती सपिंड के लोगों में या एक ही परिवार अथवा एक ही गोत्र के लोगों में विवाह करने पर कोई रोक नहीं होनी चाहिये। जहां तक नजदीकी रिश्तेदारी का सम्बन्ध है, नियमों में ढील देने की क्या आवश्यकता है? नजदीकी रिश्तेदारों में आपस में विवाह के औचित्य पर चर्चा के बारे में समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं में मुझे बहुत कुछ पढ़ने को

मिला है। यह एक ऐसा पहलू है, जिस पर मैं जानता हूँ माननीय विधि मंत्री विज्ञान और इतिहास का एक छात्र होने के नाते निश्चित रूप से विचार करेंगे। यह लोगों की धार्मिक भावनाओं के प्रतिकूल है। वैज्ञानिक विचारों, धार्मिक मान्यताओं और लोगों की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए उस नियम में ढील देने की कोई आवश्यकता नहीं है। निस्संदेह, यह समाज के कल्याण से मेल नहीं खाता। यदि भावी पीढ़ियों के हित में, लोगों के कल्याण के हित में, लोगों के वंश की प्रगति के हित में आप नजदीकी रिश्तेदारों में विवाहों को बढ़ावा देना चाहते हैं, तो ऐसा जरूर कीजिये। हमें कोई निर्भीक और स्पष्ट दृष्टिकोण अपनाना चाहिये। हमें इस मामले में एक निश्चित और ठोस रवैया अपनाना चाहिये। हमें मूलभूत सिद्धांतों के मामलों में कोई ढुलमुल रवैया नहीं अपनाना चाहिये। या तो प्राचीन सिद्धांत अपनायें या एक अधिक तार्किक और आधुनिक सिद्धांत। आप अपने विचारों के अनुसार अपनायें। किन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं चाहता हूँ कि पुराने नियम को बनाये रखा जाये। मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि कुछ सम्प्रदायों के मामलों में उदाहरण के तौर पर भारत के कुछ भागों में कतिपय रीति-रिवाज प्रचलित रहे हैं, उनके मामलों में एक अन्य खंड में आपने पहले ही प्रावधान कर दिया है। किन्तु सामान्य नियम सपिंडों में विवाह न करने का होना चाहिये। इस सम्बन्ध में हमारा कदम सही दिशा में नहीं है।

जहां तक तलाक के कानून का सम्बन्ध है, जैसा कि महाशय टेक चन्द ने अपने ज्ञापन में कहा है कानून में एकरूपता लाने के उद्देश्य से उन वर्गों और समुदायों के लोगों पर विशेष प्रतिबंध लगाने में जिन पर इस समय कोई प्रतिबंध नहीं है, कोई औचित्य नहीं है। मैं जानता हूँ कि दक्षिण भारत के कुछ भागों में गांव के मुखिया अथवा पंचायत की उपस्थिति में आपसी सहमति के आधार पर तलाक देने की परम्परा अभी भी प्रचलित है जैसे कि उत्तर भारत के दूसरे भागों में प्रचलित है। अन्ततः ऐसा प्रतीत होता है कि तलाक एक वर्ग के अनुसार विवाह कानून का मूलतत्व है। किन्तु क्या आपको विवाह से पूर्व तलाक की बात सोचनी चाहिये? यदि ऐसी धारणा है और यदि आप तलाक को बढ़ावा देना चाहते हैं या हर हालत में सरल तलाक के प्रावधान करना चाहते हैं, तो विधि न्यायालयों, तलाक न्यायालयों, तीन न्यायाधीशों वाले अपीलीय न्यायालय आदि का प्रावधान आप क्यों करते हैं, जब कि प्रभावित समुदायों के पास खाने तक के लिए पर्याप्त नहीं है? मैं समझता हूं कि यह कदम सही दिशा में नहीं है। जहां तक विशेष जातियों के समुदाय में रीति-रिवाजों के अनुसार तलाक की इजाजत का सम्बन्ध है, उसे जारी रखा जाना चाहिये, किन्तु एकरूपता के हित में आप तलाक को और महंगा न बनायें। इससे निश्चित रूप से मेरे पेशे को लाभ होगा और मैं इसका कोई विरोध नहीं करता। किन्तु मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर को बड़ी अच्छी तरह जानता हूँ और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह इस विशेष प्रश्न पर कोई निष्कर्ष निकालने से पूर्व प्रश्न के सभी पहलुओं पर विचार करेंगे।

जहां तक न्यायिक पृथक्करण का सम्बन्ध है, मुझे कुछ वर्ष पूर्व हाउस ऑफ लॉर्ड (इंग्लैण्ड के उपरिसदन) में हुई बड़ी दिलचस्प बहस अच्छी तरह याद है। उस बहस में लार्ड बिरकेनहैड ने भाग लिया था। बहुत ही प्रसिद्ध वकीलों तथा कुछ बड़े न्यायविदों ने भी उस समय बहस में भाग लिया था। कुछ लोग ऐसे थे जिनका यह दृढ़ मत था कि न्यायिक पृथक्करण दूसरी पत्नीत्व को कानूनी रूप देने का दूसरा नाम है। मैं चाहूंगा कि इस न्यायिक पृथक्करण को जारी रखने के बजाय स्पष्ट तलाक का प्रावधान किया जाये। यदि यह भरण-पोषण का प्रश्न है, यदि यह सुनिश्चित करने का प्रश्न हो कि पत्नी को भूखा न रखने के दायित्व का निर्वहन किया जाये या पति तथा पत्नी बने रहते हुए आप अपने वैवाहित दायित्वों का निर्वहन नहीं करते तो इस सम्बन्ध में विधेयक में प्रावधान किया जाना चाहिये।

भरण-पोषण के सम्बन्ध में, न्यायिक पृथक्करण के सम्बन्ध में, तलाक के सम्बन्ध में और दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यवस्थापना के सम्बन्ध में अंग्रेजी कानून के जटिल प्रावधान यहाँ क्यों रखे जा रहे हैं? अत: विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या इतने विस्तृत और जटिल प्रावधान करना आवश्यक है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : देश की प्रगति के हित में ऐसे प्रावधान करना आवश्यक है।

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर : मैं इस सम्बन्ध में कोई राय नहीं दे रहा हूँ। आप इस सम्बन्ध में अपने निर्णीत विचारों का अनुसरण कर सकते हैं। किन्तु इस विषय में मेरा कोई निर्णीत मत नहीं है।

अत: मैं समझता हूँ कि हमें आधुनिक प्रावृत्तियों का ध्यान रखना होगा और इंग्लैण्ड में प्रचलित मात्र पुराने विचारों का अनुसरण नहीं करना होगा। इंग्लैण्ड में ही हाल के वर्षों में विवाह के कानून के सम्बन्ध में जनमत में काफी परिवर्तन आया है, यद्यपि इसके प्रत्येक पहलू ने इंग्लैण्ड की संविधि पुस्तिका में स्थान नहीं पाया है। अत: इंग्लैण्ड के कानूनों की केवल नकल करने के बजाय, हमें यह देखना होगा कि क्या हम कोई परिवर्तन कर सकते हैं।

जहां तक हमारे सामान्य सिद्धांत का सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि तलाक या अन्य किसी मामले में यह विधेयक कठोर है। जो भी कठिनाइयाँ या जटिलतायें सामने आई हैं वे दो अलग-अलग विचारधाराओं में संगति स्थापित करने के ईमानदारी के प्रयास के कारण आई हैं। एक ओर यह प्राचीन विचारधारा है कि विवाह आसानी से नहीं तोड़ा जा सकता, और दूसरी ओर यह आधुनिक विचारधारा है कि कतिपय परिस्थितियों में अलग होने का प्रावधान होना चाहिये। अब समस्या यह है कि इन दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं के बीच सामंजस्य कैसे स्थापित किया जाये। हमें इस समस्या पर ठंडे दिमाग से विचार करना चाहिये और एक-दूसरे को समझने का प्रयास करना चाहिये। हमारे विचार जो भी हों, हम

प्रवाह को नहीं रोक सकते। मेरा एक बहुत ही दकियानूसी और रूढ़िवादी परिवार से संबंध है। मैं उन लोगों में से हूँ, जिनकी अभी भी श्रद्धों में आस्था है। मैं अपने कौटुंबिक घर को काफी महत्व देता हूँ और कुछ हद तक जीवन के प्राचीन दृष्टिकोण में विश्वास रखता हूँ। लेकिन साथ ही मैं वर्तमान रुझान की अनदेखी नहीं कर सकता। मेरे बेटे मेरे जैसे नहीं हो सकते और मेरे पोते तो और भी भिन्न होंगे। इन परिस्थितियों में यदि मेरा जीवन भूत से जुड़ा हुआ है, मैं काफी हद तक आधुनिक रुझान को भी समझता हूँ। अत: इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए हमें इस विधेयक पर विचार करना चाहिए। यदि आप वास्तव में सांस्कारिक विवाह में विश्वास रखते हैं, तो मुझे सांस्कारिक विवाह के सुगमता से अदालती विवाह में बदलने का यह तरीका किसी तरह पसन्द नहीं है। मेरा यह विचार है कि या तो सांस्कारिक विवाह होने चाहिये या बिल्कुल नहीं होने चाहिये। सांस्कारिक विवाह के मामले में तलाक के विशेष आधार होने चाहिये और अदालती विवाह के मामले में भी तलाक के विशेष आधार होने चाहिए। मैं दोनों को मिलाने के पक्ष में नहीं हूँ।

अब मैं दत्तक ग्रहण के अध्याय पर आता हूँ। दत्तक ग्रहण सम्बन्धी अध्याय पर विस्तार से विचार करने की आवश्यकता नहीं है, जबकि दत्तक ग्रहण विधि के मामले में न्यायिक निर्णय को ध्यान में रखा गया है। विधि में परिवर्तनों के आलोक में विभिन्न जातियों के व्यक्तियों में विवाह के मामले में विधि में आवश्यक परिवर्तन किये गये हैं। ऐसे विवाहों से हुई संतान को विरासत का अधिकार देने और विवाह विधि के आधार पर गोद लेने के लिए एक लड़के की पात्रता के प्राचीन नियमों को विशेष जातियों और विशेष परिस्थितियों में दत्तक ग्रहण की विधिमान्यता के लिए एक पूर्व शर्त के रूप में बनाये रखने में कोई औचित्य नहीं है। तदनुसार विधेयक में वैध दत्तक ग्रहण देने और लेने का सरल नियम बनाया गया है। गोद लेने वाली मां और गोद लिये जाने वाले लड़के के बीच मुकदमेबाजी न हो, यह सुनिश्चित करने के लिए सम्पत्ति अधिकार विनियमित किये गये हैं। सम्पत्ति से वंचित करने को रोकने के लिए एक प्रावधान किया गया है, जिससे वैसी लम्बी मुकदमेबाजी को रोका जा सकेगा, जो भुवन मोई के मामले के बाद, गोद लेने सम्बन्धी विधि का एक विशेष अंग बन गई है। मयूख विधि के मुख्य सिद्धांतों के पश्चात् दत्तक ग्रहण की मान्यता के लिए एक शर्त के रूप में अपनाने के लिए किसी प्राधिकार की आवश्यकता के सम्बन्ध में विधि को सरल भी बनाया गया है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि दत्तक ग्रहण सम्बन्धी अध्याय के प्रावधानों को देखते हुए सभा से इस पर विचार करने की सिफारिश की जा सकती है। दत्तक ग्रहण की वैधता के लिए पति के स्पष्ट प्राधिकार की आवश्यकता, पति द्वारा प्रदत्त प्राधिकार के क्षेत्र और निबन्धन की सीमा, दत्तक ग्रहण पर विवाद करने में सबसे अधिक रुचि रखने वाले निकटतम सपिंडों की अबाध सहमति और पति के प्राधिकार के लिए स्थानापन्न होने और वरिष्ठ तथा कनिष्ठ विधवा के परस्पर दावे, गोद लेने के लिए शक्ति के प्रयोग पर रखी जाने वाली सीमायें, अंग्रेजों के समय में भारत में न्यायालयों में मुकदमेबाजी

का लाभप्रद स्रोत रही हैं। इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है कि इस विधेयक से दत्तक ग्रहण विधि और गोद में लिये गये बेटे के अधिकार की विधि काफी सरल हो गई है। कुल मिलाकर, मैं समझता हूँ कि विभिन्न समुदायों के बीच विवाह हो सकता है, यह दत्तकग्रहण अध्याय का एक अंग बन गया है, और लड़के के गोद लिये जाने की पात्रता सम्बन्धी सभी प्रतिबन्ध अनिवार्य रूप से समाप्त हो जाते हैं। जब गोत्र ही नहीं रहा तो गोद लेने के लिए सगोत्र कैसे एक शर्त हो सकती है? अत: सरलता और औचित्य के हित में हमें अनिवार्य रूप से यह देखना है कि दत्तक का लेन-देन ही काफी है; और हमें इसी स्थिति से समझौता करना होगा। पहला कदम लेने के बाद आप दूसरा कदम लेने से नहीं रुक सकते। यहां विधानमंडल ने पहला कदम ले लिया है। अतः अगला कदम उठाने में आनाकानी करने का कोई लाभ नहीं है। इन परिस्थितियों में मैं सभा से दत्तकग्रहण अध्याय पर विचार करके अनुकूल निर्णय लेने की सिफारिश करता हूँ।

अब मैं विधेयक के अन्य भागों की ओर आता हूँ जिन के ऊपर चयन समिति के सदस्यों से मेरा मतभेद है। संयुक्त परिवार प्रथा पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि भारतीय कृषि की समस्यायें और इसका भविष्य, मुख्य व्यवसाय के रूप में व्यापार या धन्धा करने वाले समुदायों की अनेक व्यापार सुविधाओं की स्थिति का अनिवार्य रूप से काफी महत्व है। भारत में ग्रामीण जीवन की स्थिति से भिज्ञ कोई व्यक्ति यह जानता है कि विशेष परिवारों का विशेष भूमि पर पीढ़ियों से कब्ज़ा रहा है। काश्तकार परिवारों को, जो काफी समय से भूमि जोतते रहे हैं, भोगाधिकार देने का मुख्य कारण यही है। इस सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूँ कि मेरे सम्मानीय मित्र श्री संथानम ने भारत में ग्रामीण जीवन के बारे में जो कुछ कहा है उसके सम्बन्ध में मेरा उनसे काफी मतभेद है। यह कहना सही नहीं है कि संयुक्त परिवार टूट रहा है। मैं भी यह कह सकता हूँ कि मैं भारत के ग्रामण जीवन से जुड़ा हुआ हूँ। मैं स्वयं एक ग्रामीण हूँ यद्यपि मैंने मद्रास शहर में करीब 40 वर्ष बिताये हैं। इन चालीस वर्षों में ऐसा कोई वर्ष नहीं रहा जब मैंने कम से कम एक महीना किसी गांव में न बिताया हो। मैं बड़े दिनों तथा गर्मी की काफी छुट्टियां गांवों में तथा गांवों के लोगों के साथ बिताता हूँ। अत: मेरा दावा है कि मैं भारत में कम से कम मद्रास में ग्रामीण जीवन के बारे में कुछ जानता हूँ और उनके बारे में मुझे जो कुछ जानकारी है वह पुस्तकों या ग्रामीण पुस्तिकाओं के माध्यम से है। अतः मैं इस कथन से पूर्णतया असहमत हूँ कि जहाँ तक भारत के गांवों का सम्बन्ध है, संयुक्त परिवार टूट रहे हैं। साथ ही मैं निश्चित रूप से अपने मित्र श्री संथानम की इस बात से सहमत हूँ कि जहां तक सगोत्र शाखाओं का सम्बन्ध है, पहली पीढ़ी के बाद संयुक्त परिवार में टूटने की प्रवृत्ति पाई जाती है। पहली पीढ़ी में विशेष रूप से पिता के जीवनकाल के दौरान संयुक्त परिवार नहीं टूटता है। यदि कोई परिवार टूटता है तो सामान्यतया तब टूटता है जब पिता के पुत्र मर जाते हैं और बच्चों के बच्चे बड़े हो जाते हैं। अतः आपको केवल सिद्धान्त के आधार

पर आगे बढ़ने के बजाय, तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिये। अभी हाल तक मैं भी एक संयुक्त परिवार का सदस्य रहा हूं और मैं अभी भी संयुक्त परिवार के जीवन के आदर्शों में विश्वास रखता हूँ। मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि जीवन के कुछ पहलुओं में उदाहरण के तौर पर शिक्षा के मामले में संयुक्त परिवार पद्धति से काफी लाभ हुआ है। कई गरीब भाइयों ने खुद भूखा रहकर अपने भाइयों को शिक्षा दिलाई; कई चाचाओं ने भूखा रहकर अपने भतीजों को शिक्षा दिलाई। संयुक्त परिवार जीवन में एक तरह का सीमित समाजवाद विद्यमान रहा है। साथ ही मैं यह मानता हूँ कि कोई प्रथा अधिक देर नहीं चल सकती। किसी प्रथा को सामाजिक प्रगति के रास्ते में बाधक नहीं बनने देना चाहिये किन्तु प्रश्न यह है कि क्या इस पर विचार करने का समय आ गया है? मैं यह बात मानने के लिए तैयार नहीं हूं कि गांवों में संयुक्त परिवार पद्धति टूट रही है और कोई सुधार करते समय हमें यह याद रखना चाहिये कि भारत गांवों का देश है। ग्रामीण लोग अभी भी काफी हद तक संयुक्त परिवार पद्धति का अनुसरण करते हैं। विधवाओं और पुत्र-वधुओं को अधिकार देकर संयुक्त परिवार पद्धति में हाल ही में किये गये हस्तक्षेपों में स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है। गैर कृषि सम्पत्ति के मामले में भी जिन समुदायों का मुख्य व्यवसाय व्यापार है, वे व्यापार या कारोबार एक पारिवारिक उद्यम या व्यापार के रूप में चला रहे हैं। देश के मेरे क्षेत्र में यही स्थिति है। पिछले चालीस वर्षों में नतुकोट्टई के चेट्टियरों से मेरे काफी सम्बन्ध रहे हैं। वे पिछले पांच या दस वर्षों से ही अलग कम्पनियां बनाने लगे हैं, लेकिन इस का उद्देश्य संयुक्त परिवारों को तोड़ना नहीं अपितु आयकर विनियमों से बचना है। अतः यह कहना सही नहीं है कि संयुक्त परिवार का जीवन वैश्यों या नतुकोट्टई चेट्टियरों या मारवाड़ियों में टूट रहा है। अब इस विधानसभा या संसद में बैठकर यह सोचना बेकार है कि हमें भारत के हर कोने के बारे में सभी तथ्यों की जानकारी है और यह सोचने का भी कोई फायदा नहीं है कि हम इस आधार पर विधान बना सकते हैं। हमें केवल इस बात पर विचार करना है कि क्या ऐसा आधुनिक स्थितियों के अनुकूल नहीं है और क्या इससे आगे प्रगति के रास्ते में बाधा आयेगी? आप को उन परिवर्तनों का भी ध्यान रखना होगा जो संयुक्त परिवार कानून में पहले ही किये जा चुके हैं। हाल के वर्षों में संयुक्त परिवार कानून को काफी ढीला किया गया है। अब यह स्थापित कानून है कि संयुक्त परिवार का कोई सदस्य किसी न्यायालय में हवाला किये बिना शेष परिवार से सम्बन्ध विच्छेद कर सकता है। संयुक्त परिवार के किसी स्दसय की ओर से इच्छा या इरादे की अभिव्यक्ति ही नाता तोड़ने के लिए काफी है, फिर भी अनेक लोग संयुक्त परिवारों के सदस्य बने हुए हैं क्योंकि वे अभी भी संयुक्त परिवार प्रथा को पसंद करते हैं। संयुक्त परिवार को कोई सदस्य पारिवारिक सम्पत्तियों में अपना हिस्सा दूसरे को दे सकता है। बाप और बेटे के मामले में पूरी सम्पत्ति बाप के ऋणों के लिए चुकाने के लिए खर्च की जा सकती है। बेटा बाप के ऋण के लिए उत्तरदायी है। वह यह कहकर अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता कि ऋण राशि बाप द्वारा अनैतिक प्रयोजनों के लिए खर्च की गई। मेरा पक्का विश्वास है कि इस

प्रकार की मुकदमेबाजी खत्म हो रही है। अब यह कहकर नहीं बचा जा सकता कि बाप ने अनैतिक प्रयोजनों के लिए ऋण राशि खर्च की थी। स्वर्जित सम्पत्ति सम्बन्धी कानून को भी काफी सरल बनाया गया है। प्रिवी परिषद् के निर्णयों से यह पूरी तरह स्पष्ट हो गया है कि यदि कोई व्यक्ति सम्पत्ति अर्जित करता है तो वह उसे खुद के लिए अपने पास रख सकता है। अतः मैं अपने मित्र माननीय विधि मंत्री से यह अनुरोध करता हूँ कि यह प्रथा अभी भी प्रचलित है। यह प्रथा अगले पंद्रह, तीस या पचास वर्षों में टूट सकती है। विवाह विधि में परिवर्तन तथा अन्य चीजों के कारण यह पद्धति टूट सकती है। किन्तु मेरा प्रश्न इतना ही है कि लोगों की इच्छा, उनकी सहमति, लोगों की सामान्य चेतना को ध्यान में रखे बिना ऐसा विधान क्यों बनाया जाये? आप सोच सकते हैं कि मैं एक ऐसा प्राचीन व्यक्ति हूँ जिसे इन चीजों की समझ नहीं है। मैं जरूर चाहता हूँ कि यह देश समय के अनुसार अग्रसर हो, लेकिन मेरा अनुरोध है कि पहले आपको लोगों की इच्छा जानने का प्रयास करना चाहिये। यह तर्क दिया जा सकता है "ठीक है, जहां तक कृषि सम्पत्ति का सम्बन्ध है, हम इसे नहीं छुएंगे, लेकिन हम गैर-कृषि सम्पत्ति के सम्बन्ध में एक परिवर्तन करेंगे।" इस प्रकार के मामलों में एक प्रकार की सम्पत्ति और दूसरी भूमि या सम्पत्ति के बीज विभेद करना सरल नहीं है। एक बार आप गैर-कृषि सम्पत्ति सम्बन्धी कानून में परिवर्तन करते हैं तो आपको अनिवार्य रूप से कृषि सम्पत्ति सम्बन्धी कानून में भी परिवर्तन करना पड़ेगा। करों के प्रयोजनार्थ केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी शक्ति के वितरण के मामले मे कृषि और गैर-कृषि सम्पत्ति में विभेद किया जाता है। यह केवल प्रयोग की बात ही है कि कतिपय शक्ति प्रांतों को दी गई है और कतिपय शक्ति केन्द्र को दी गई है और इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हिंदू उत्तराधिकार विधि एकल और सम्पूर्ण है। उत्तराधिकार विकृत कार्य नहीं है। उत्तराधिकार बांटा नहीं जा सकता। अतः जब आप इस प्रश्न पर विचार करते हैं तो आपको कृषि सम्पत्ति के सम्बन्ध में तथा गैर-कृषि सम्पत्ति के सम्बन्ध में इन सभी पहलुओं पर विचार करना चाहिये और आपको यह सोचना चाहिये कि क्या समाज के बृहतर हित में पारिवारिक पद्धति में क्रांतिकारी परिवर्तन करने का समय आ गया है। मैं अपने मित्र माननीय विधि मंत्री से इस प्रश्न पर विचार करने का अनुरोध करता हूँ कि इस विधेयक में कुछ अध्याय स्थगित क्यों न कर दिये जायें।

महादेय, मैं इस प्रश्न के एक और पहलू को उठाना चाहता हूँ अर्थात् उत्तराधिकारी के सम्बन्ध में बेटों और बेटियों के उत्तराधिकार। मुझे इस पर बोलने का विशेषाधिकार है क्योंकि मैं बेटियों और बेटों दोनों का पिता हूँ और मैं इसे दोहराता हूँ। वास्तव में बहुमत महिला के पक्ष में है, चार बेटियां और तीन लड़के। अतः मुझे इस विषय पर बोलने का विशेष अधिकार है। (सुनिये, सुनिये) एक वकील के नाते मैं जो थोड़ा-बहुत जानता हूँ उसके अलावा मुझे बेटियों और बेटों का पिता होने के नाते विशेष अधिकार भी हैं। अब मैं चाहता हूँ कि आप इस समस्या पर विचार करते समय हिंदू परिवार में सामान्य ढांचे पर

विचार करें। आपका कहना है कि यदि तीन बेटे मिल कर रहना और साझी सम्पत्ति रखना कठिन महसूस करते हों, तो विभिन्न जातियों या समुदाय के लोगों से विवाहित बेटियों से आप गांवों में मिलाकर खेती करने की आशा कैसे कर सकते हैं? इन परिस्थितियों में क्या यह देश के बृहत्तर हित में है कि पिता और बेटे की यह सम्पत्ति बिना किसी मतभेद के बेटों और बेटियों में बराबर बांटी जाये? यदि यह न्याय का प्रश्न है, यदि यह समानता का प्रश्न है, यदि यह सैद्धान्तिक समानता का प्रश्न है तो मुझे इसके विरुद्ध कुछ नहीं कहना है, किन्तु कानूनन तर्कसंगत नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह सदैव असंगत होता है, किन्तु इसे समाज के सामाजिक स्तर, समाज की चेतना, पारिवारिक जीवन पर इसके प्रभाव और अन्य तथ्यों को ध्यान में रखना होगा। अत: स्थिति स्पष्ट नहीं है। हमें यह देखना होगा कि एक हिंदू परिवार में क्या होता है। संधानम दिल्ली से महाशय को देखते हैं। यदि एक भाई के घर में विवाह होता है तो वहां बहन और बेटी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसे बाप का घर समझा जाता है, बेटा पारिवारिक घर को उसके घर के रूप में देखता है। हम सभी जानते हैं कि बहन और बेटी का एक घर में कितना महत्वपूर्ण स्थान है। (जय हो, जय हो)। यदि मां और बाप आरती के लिए बैठते हैं तो बेटी या बहन इसे लाती है और आप उस अवसर पर बेटियों और बहनों को उपहार देते हैं। आखिरकार हम सभी हिंदू हैं; आप यह नहीं भूल सकते। सर्वप्रथम जो व्यक्ति उपहार प्राप्त करता है वह घर में बहन या बेटी होती है। दूसरी बात यह है कि किसी हिंदू परिसर में तब तक कोई विवाह नहीं हो सकता जब तक कि बेटियों और बहनों को उपहार देने का प्रावधान नहीं किया जाता। पुनः इसके अतिरिक्त, यद्यपि ऐसे महिलायें जो बच्चे पैदा करना पसन्द नहीं करतीं यह स्वीकार न करें परिवार की बेटियां, निश्चित रूप से पहले गर्भधारण और दूसरे गर्भधारण जैसे हर अवसर पर संभाल ली जाती हैं। एक लड़की मायके जाती है और वह दो या तीन बच्चे होने के बाद ही बाप के या भाई के घर नहीं जाती और इस समय यही हिंदू जीवन शैली है। इन मामलों में हमें दिल्ली की जीवनशैली या कलकत्ता की जीवनशैली या मद्रास की जीवनशैली के आधार पर दिशा-निर्देश तय नहीं करने चाहिये। हमें प्रत्येक गांव में; समूचे भारत में सामान्य जीवनशैली के आधार पर दिशा-निर्देश निर्धारित करने चाहिये। (जय हो, जय हो) अतः मैं इस सभा के माननीय सदस्यों से आदरपूर्वक अनुरोध करता हूँ, यद्यपि मैं उपाध्यक्ष को संबोधित कर रहा हूँ, कि वे इन चीजों को ध्यान में रखें। बाइबल में कुछ ऐसा कहा गया है–'मैं बाप को बाप, बेटे को बेटे और भाई को भाई के विरुद्ध कर सकता हूँ' अथवा कुछ ऐसा ही, किन्तु इस विधान के परिणामस्वरूप परिवार के सदस्यों में झगड़ा नहीं होना चाहिये, परिवार के सदस्यों में मध्य कोई अनावश्यक झगड़ा नहीं होना चाहिये। जहां तक सम्पत्ति का सम्बन्ध है, कुछ सीमा तक कलह, और कुछ सीमा तक झगड़ा अवश्यंभावी है।

शंकर ने कहा था कि हमारे देश में सम्पत्ति झगड़े की जड़ है और यह अवश्यंभावी है, लेकिन हमें वह कह कर इसे बढ़ावा नहीं देना चाहिये कि मैं भाई को भाई के विरुद्ध,

बहन को भाई के विरुद्ध, भाई को बहन के विरुद्ध कर दूंगा और इस प्रकार भारत के पारिवारिक जीवन को बदल दूँगा। ऐसा समय आ सकता है जब प्रत्येक बेटी व्यस्क होने पर अपने विवाह का इंतजाम कर सकेगी। बहुत-सी लड़कियां अपने विवाह के लिए अपने भाइयों पर आश्रित रहती है। ऐसा एक सप्ताह भी नहीं गुजरता, जब कोई भाई या बाप आकर एक विवाह के लिए कुछ सहायता न मांगता हो। यह कहा जा सकता है कि मैं दकियानूसी हूँ जो ऐसे अनुरोधों पर विचार करता हूँ किन्तु यह हिंदूजीवन पद्धति है। मेरे बारे में सोचा जा सकता है कि मैंने अंग्रेजी जीवन पद्धति में शिक्षा पाई है, किन्तु आप उन लोगों बारे में क्या सोचेंगे जो मेरी तरह शिक्षित नहीं हैं? आप अधिक प्रगतिशील हो सकते हैं, मैं कम प्रगतिशील हो सकता हूँ किन्तु मैं फिर भी कहूँगा कि मैं भारत की मिट्टी में पैदा हुआ हूँ और मेरे विचार भारत की मिट्टी से जुड़े हुए है और इसलिए मैं अनुरोध करता हूँ कि इन महान मूल्यों को बचाये रखा जाये जो हमारे भारतीय जीवन का चित्रण करते हैं (जय हो, जय हो)। मैं आधुनिक रुझानों या प्रगति के आधुनिक विचारों का विरोध नहीं करना चाहता, किन्तु जहां राष्ट्रीय जीवन की धाराओं का वर्तमान सामाजिक धाराओं के साथ सम्पर्क बनाये रखना हमारा कर्त्तव्य है, हमें इस सोच से कोई लाभ नहीं होगा, कि हम समूचे भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि शिक्षित महिलाओं में भी सभी की सोच एक-सी नहीं है और जो महिलायें विधानमंडलों में हैं उनकी सोच भी कुछ अन्य शिक्षित महिलाओं जैसी नहीं है और जो सम्माननीय घरानों की सदस्य है; वे कुछ बातों में मतभेद रखती हैं।

श्रीमती रेणुका रे (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : क्या हमारे घराने सम्मानीय नहीं हैं?

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर : वे बहुत सम्मानीय हैं। मुझे खुशी है कि आपने हस्तक्षेप किया है। मैं अभ्यस्त हूँ और मैं आपको बता सकता हूँ कि वे काफी सम्मानीय हैं, यद्यपि वे कुछ दकियानूसी हो सकते हैं, जैसे कुछ लोग हैं जो बहुत सम्मानीय हैं और जिनके इन मामलों में विचार काफी प्रगतिशील हैं। मैंने अपने विचार प्रकट कर दिये हैं और मैं निश्चित रूप से यह नहीं मानता कि मैं एक सम्मानीय पुरुष नहीं हूँ; मैं भी अन्य लोगों की तरह सम्मानीय हूँ। परन्तु मेरी जीवनपद्धति, मेरा सोचने का तरीका, इन मामलों में मेरा दृष्टिकोण उन समान रूप से आदरणीय, पुरुषों से अलग है क्योंकि मैं एक अलग ढांचे से ढला हूँ। उदाहरण के तौर पर मैं अपने प्रधानमंत्री का काफी आदर करता हूँ और कुछ मामलों में मैं उनकी बात मानता हूँ लेकिन साथ ही मैं इन चीजों को उन्हीं चश्मों से नहीं देखता जिनसे मेरे मित्र, मेरे आदरणीय मित्र देखते हैं, यदि मैं प्रधानमंत्री का अपना बहुत ही प्रिय मित्र पुकार सकता हूँ। यह केवल सोचने के तरीके की बात है।

माननीय श्री के. संथानम (परिवहन और रेल मंत्रालय के राज्य मंत्री) : आपका वास्तविक प्रस्ताव क्या है?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : वह अपने प्रस्ताव उत्कृष्ट तरीके से प्रकट कर रहे हैं।

श्री अल्लादी कृष्णा स्वामी अय्यर : मुझे इसमें संकोच नहीं है। मैंने अविवाहित बेटियों के बारे में प्रश्न पूछा है कि क्या कोई विशेष प्रावधान विवाह के बारे में किया जा सकता है अथवा कोई विशेष हिस्सा लड़कियों के विवाह के लिए अलग रखा जा सकता है। कानून में यह प्रावधान किया जा सकता है कि लड़कियां माताओं की वारिस होंगी और बेटे पिताओं के वारिस होंगे। जहां तक बेटियों का सम्बन्ध है, मैं चाहता हूँ और मेरी बड़ी आकांक्षा है कि लड़कियों के लिए, जो अविवाहित हैं, उदार और बाध्यकारी प्रावधान किया जाये। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। मेरा यही प्रस्ताव है। अच्छा हो या बुरा, मेरा यही प्रस्ताव है।

एक माननीय सदस्य : मां से धन के बारे में आपका क्या कहना है?

श्री अल्लादी कृष्णा स्वामी अय्यर : इसके बारे में बोलने का कोई लाभ नहीं है। आप उन लोगों की जनगणना कीजिये जो इस देश में आयकर देते हैं? ऐसे लोगों की संख्या अधिक नहीं है। यह गरीब देश है। अतः यह कहने का कोई लाभ नहीं है कि मां के पास कोई सम्पत्ति नहीं होती। बहुत से लोग गरीब हैं। हो सकता है कि उनके पास कोई सम्पत्ति न हो। किन्तु वे सामाजिक दायित्वों से नहीं बच सकते। जिन के पास सम्पत्ति है, वे उसे बांट सकते हैं किन्तु उन लोगों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा जिनके पास कोई सम्पत्ति नहीं है या बहुत कम सम्पत्ति है किन्तु साथ ही जो सामाजिक और पारिवारिक दायित्वों के प्रति बड़े संवेदनशील है। अतः आप जो भी कदम उठाते हैं, आपको यह देखना होगा कि सामाजिक दायित्व न पिछड़ जाये। इस सम्बन्ध में मेरा यही अनुरोध है। संयुक्त परिवार सम्पत्ति की प्रथा के बारे में मेरा डॉ. अम्बेडकर से मतभेद है। मेरा उनसे प्रायः मतभेद नहीं होता और मैं प्रायः उनसे प्रभावित होता हूँ और कभी-कभी उन्हें प्रभावित करता भी हूँ। अतः मुझे कोई सन्देह नहीं है कि मैंने अपने भाषण मे जो आलोचना की है- उसकी ओर वे ध्यान देंगे। वह अड़ियल दिखाई दे सकते हैं किन्तु ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर से अधिक विवकशील हो। मैं उन्हें भली-भाँति जानता हूँ और वह मेरे लिए एक महान सम्पदा हैं। मेरे कहने का अर्थ यह है कि इन तीन वर्षों में मेरा उनसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है।

अस्तु, संयुक्त परिवार प्रथा और बेटों तथा बेटियों के समान उत्तराधिकारों के बारे में मेरा यही दृष्टिकोण है।

अगला पहलू स्त्रीधन सम्पत्ति के बारे में है और इसमें जहां तक परकीयकरण के अधिकार पर सभी प्रतिबंध हटाने के संबंध में मैं सभा के साथ हूँ, सभा के अन्य सदस्यों के साथ हूँ। क्योंकि इसने अनावश्यक मुकदमेबाजी को ही बढ़ावा दिया है। विरोधियों ने इस घोषणा के लिए मुकदमे दायर किये हैं कि विधवा द्वारा परकीयकरण अवैध है,

एक न्यायालय से दूसरे में जा रहे हैं और हर प्रकार की गवाही देने दी जा रही है। यदि अनावश्यक मुकदमेबाजी से ही बचाया जा रहा है तो मैं चाहता हूँ कि विधवा को अपने जीवनकाल में अपनी सम्पत्ति का वितरण करने का निरापद अधिकार दिया जाये। लेकिन इसका अर्थ अनिवार्य रूप से यह नहीं है कि हर प्रकार की स्त्रीधन सम्पत्ति के मामले में हस्तान्तरण का तरीका एक-सा हो। आप इसे स्त्रीधन कह दें और फिर उत्तराधिकार के मामलों में कुछ अलग परिणाम निकालने लगें। एक बार आप इसे निरापद सम्पत्ति बना देते हैं, तो फिर इसे वारिसों को क्यों न दिया जाये? यही प्रश्न है। मैं 99 हिंदुओं से जिनसे मिलता हूँ यह पूछने का इच्छुक हूँ, "एक विधवा को उसके पति से कोई सम्पत्ति मिली है। यह सम्पत्ति निरापद है और उस विधवा की मृत्यु के बाद वह उसके पिता और माता को जानी है न कि उस व्यक्ति के बाप और मां को जिसकी सम्पत्ति उस विधवा को मिली है।" मैं यह प्रश्न पूछता हूँ। आप देश के किसी भाग में जनमत संग्रह करवा सकते हैं और मुझे मालूम है कि उस जनमत संग्रह का क्या परिणाम होगा। और मैं किसी सदस्य को इस सभा में यह कहने के लिए चुनौती देता हूँ कि मैं जो अनुभव करता हूँ जनमतसंग्रह उससे भिन्न होगा। अत: एक वकील के नाते यदि आप मुझ से यह पूछते हैं कि क्या आप दो प्रकार की निरापद सम्पत्तियाँ, जिसमें से एक प्रकार का विस्तार एक प्रकार से हो और दूसरी का दूसरी प्रकार से, रख सकते हैं और मुझसे पूछते हैं कि एकरूपता के हित में एक प्रकार की सम्पत्ति और दूसरी प्रकार की सम्पत्ति के मामले में उत्तराधिकार का एक ही नियम क्यों न लागू किया जाये? तो मैं कहता हूँ कि आपको तर्कसंगति की वेदी पर सामाजिक भावनाओं का त्याग करने की आवश्यकता नहीं है। कानून सदैव तर्कसंगत हो, यह आवश्यक नहीं है। कानून का अनिवार्य रूप तर्कसंगत होना आवश्यक नहीं है। तर्क कानून का सार नहीं है।

माननीय श्री के. संथानम : क्या कानून सामान्यतया असंगत होना चाहिये?

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर : मेरे मित्र श्री संथानम के प्रश्न पर मेरा उत्तर यह है कि कानून अनिवार्यत: तर्कसंगत नहीं होना चाहिये। इसका कारण यह है कि कानून सामाजिक विकास और सामाजिक सामंजस्य की उपज है और इसलिए यह सदैव तर्कसंगत कैसे हो सकता है? समाज का विकास एक विशेश मापदण्ड अथवा योजना के अनुसार नही होता। दुर्भाग्यवश, समाज, एक साम्यवादी समाज को छोड़कर, किसी विशेष मार्ग पर अग्रसर नहीं होता। अत: इन परिस्थितियों में आप हिंदुओं की सामान्य भावनाओं का ध्यान रखें। यह कहना व्यर्थ है कि एक प्रकार के और दूसरी प्रकार के स्त्रीधन में भेद करना तर्कसंगत नहीं है। स्त्रीधन पति के रिश्तेदारों को पुन: क्यों जाने दिया जाये? यह पत्नी के वारिसों को क्यों न जाये? विधेयक में यही प्रावधान किया गया है। अत: जहां तक महिला की सम्पत्ति का सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि यह एक ऐसा मुद्दा है जिस पर माननीय विधि मंत्री को इस विधेयक को कानून में परिवर्तन करने से पूर्व विचार

करना चाहिये, ताकि ऐसा कानून बने जो लोगों की भावनाओं तथा सामान्य धारणाओं के अनुरूप हो। अभी हाल तक विधवा को वितरण का अधिकार नहीं था। प्रश्न यह है कि क्या वह सिद्धान्त कि उत्तराधिकार से प्राप्त सम्पत्ति का प्रत्येक व्यक्ति को वारिस बन जाना चाहिये और विरासत में मिली हर प्रकार की सम्पत्ति एक-सी समझी जानी चाहिये। महिलाओं की सम्पत्ति की सम्बन्ध में मेरा यही निवेदन है। इस पूरे विषय में मैंने तर्क का सहारा कभी नहीं लिया है।

अन्त में, महोदय यदि अनुमति हो तो मैं कुछ शब्द दूरवर्ती वारिसों के बारे में कहना चाहता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि इस समय जो प्रावधान किये गये हैं वे पूर्ववर्ती विधेयक की अपेक्षा काफी अच्छे हैं। प्रस्तुत विधान में दायभाग के कुछ सिद्धांतों का ध्यान रखा गया है और इसमें अन्य पद्धतियों का भी प्रावधान है। और मैं समझता हूँ, जहां तक दूरवर्ती वारिसों का सम्बन्ध है, प्रस्तुत विधेयक मूल विधेयक की अपेक्षा का काफी अच्छा है और इसमें आदि कोई छोटी-मोटी त्रुटि है, तो उसे आसानी से दूर किया जा सकता है।

संरक्षण, भरण-पोषण सम्बन्धी अध्याय और अन्य अध्यायों के पीछे उदार और प्रगतिशील भावना रही है और मेरा विचार है कि सभा को उनका हृदय से समर्थन करना चाहिये। यद्यपि छोटे-मोटे परिवर्तन की आवश्यकता से इंकार नहीं किया जा सकता। किन्तु ऐसा परिवर्तन, विधेयक पारित करने के अन्तिम चरण में किया जा सकता है। अत: इस विश्वास के साथ कि माननीय विधि मंत्री तथा प्रधानमंत्री जनता द्वारा की गई आलोचना का ध्यान रखेंगे और समय की प्रगतिशील प्रवृत्तियों की भी अनदेखी नहीं करेंगे, मैं विधेयक के दूसरे पठन का प्रस्ताव करता हूँ और मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।

***डॉ. पी.के. सेन (बिहार : सामान्य) :** महोदय, मैं जानता हूँ कि मुझे अधिक समय नहीं लेना चाहिये क्योंकि सभा पर समय के संबंध में काफी दाबव है। साथ ही मेरे प्रिय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर तथा अन्य लोगों द्वारा कुछ ऐसे पहलू उठाये गये हैं, जिन पर कुछ टिप्पणी करना आवश्यक है। उन्होंने विधेयक के प्रावधानों पर क्रमवार विचार करते हुए सबसे पहले विवाह कानून का मुद्दा लिया। मैं मानता हूँ कि मैं यह नहीं समझ सका कि उन्होंने इसका पक्ष लिया है या विरोध किया है। वास्तव में उन्होंने अपने भाषण के उस हिस्से में जिसमें उन्होंने यह मुद्दा उठाया है, यह कहा है कि इस विषय में उनकी कोई निश्चित राय नहीं है। जहां तक विवाह और तलाक विधि का सम्बन्ध है, मैं महसूस करता हूँ, कि हमें कोई निश्चित राय देनी चाहिये। विवाह कानून के मामले में तो निश्चित राय देना और भी जरूरी है क्योंकि इससे न केवल विवाह करने वाले पक्षकार ही प्रभावित होते हैं...

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 13 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 519-27

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर : महोदय, मैं नहीं जानता कि मैं अपनी बात स्पष्ट कर सका। मैंने यह कहा था कि यदि हमारी तख्ती बिल्कुल साफ होती तो हम कुछ अन्यथा करते किन्तु इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह सभा पहले ही कदम उठा चुकी है और विधान बना चुकी है, विवाह से सम्बन्धित खंड पर कोई गंभीर आपत्ति नहीं हो सकती सिवाय एक-दो मामलों के, जिनका मैंने अपने भाषण में उल्लेख कर दिया है।

डॉ. पी.के. सेन : मेरे विचार से सांस्कारिक विवाद के सिवाय।

जैसा कि मैं कह रहा था, हमें यह देखना है कि हर दृष्टि से विवाह कानून पूरी तरह निश्चित और स्पष्ट हो और इसमें कोई अस्पष्टता नहीं होनी चाहिये। और यही कारण है कि मैं मानता हूँ कि विधेयक में यह प्रावधान है कि विवाह सांस्कारिक पद्धति से हुआ हो तो भी इसके सम्बन्ध में आपत्तियाँ उठाई जा सकती हैं। यह कहा जा सकता है कि कुछ अनियमितता हुई, कुछ भूल-चूक हो गई, या कोई विशेष औपचारिकता पूरी नहीं की गई। उदाहरण के लिए सप्तपदी को ही लीजिये। सभी जानते हैं कि सप्तपदी एक आवश्यक औपचारिकता है। जब तक सात कदम पूरे नहीं किये जाते, तब तक विवाह वैध नहीं माना जा सकता। वास्तव में विवाह के मामले में किसी भी तरह की अनियमितता को आपत्ति माना जा सकता है। यही कारण है कि विधेयक में यह प्रावधान किया गया है कि विवाह कतिपय सांस्कारिक पद्धति से हो, तो भी कोई पक्ष विवाह पंजीकृत करवा सकता है, ताकि इसकी वैधता के बारे में बाद में कोई आपत्ति न उठाई जा सके। मैं समझता हूँ कि यह जरूरी है क्योंकि इससे केवल दो पक्ष ही आपस में विवाह नहीं करते जो प्रभावित हैं अपितु इससे अगली पीढ़ी और बाद की पीढ़ियां वास्तव में, वे पीढ़ियां जो अभी पैदा नहीं हुई हैं, भी प्रभावित होती हैं। वैधता का समग्र प्रश्न इस पर निर्भर है। अतः मेरा अनुरोध है कि कोई भी अनियमितता हो, कोई ऐसा तरीका होना चाहिये जिससे बच्चों की वैधता और उनके विरासत के अधिकारों की रक्षा की जा सके और उनमें अनिश्चितता न बनी रहे। इसमें कोई कठिनाई नहीं हो इसके लिए यह पता लगाया जा सकता है कि कौन-सी औपचारिकतायें आवश्यक हैं जिनका सांस्कारिक विवाह को वैध बनाने के लिए पालन किया जाना चाहिये। विधेयक में इसका भी प्रावधान किया गया है। यथा विधेयक में यह पता लगाने का प्रावधान है कि विवाह को वैध बनाने के लिए किसी क्षेत्र विशेष में कौन-सी विशेष औपचारिकतायें पूरी की जानी चाहिये। उस स्थिति में विवाह को वैध बनाने के लिए उन औपचारिकताओं का पालन करना आवश्यक समझा जायेगा। बहरहाल, यह हो सकता है कि कुछ मामलों में ऐसी औपचारिकतायें पूरी की गई हों या हो सकता है औपचारिकतायें विहित ढंग से पूरी न की गई हों, उस स्थिति में क्या होगा? क्या विवाहित दम्पत्ति ऐसी स्थिति में रहेंगे कि कानून की नजरों में उनके बच्चों को अवैध समझा जाये? इसी कारण संबंधित पक्षों को यह छूट दी गई है कि वे विवाह को वैध बनाने की दृष्टि से अपना विवाह पंजीकृत करवा सकते हैं।

अब मैं लोकमत के संबंधित अगले प्रश्न पर आता हूँ कि जनता का एक बड़ा हिस्सा होने के कारण, उन्हें इस विधेयक के प्रावधानों के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं है। यह प्रश्न यहां बार-बार उठाया गया है कि जल्दबाजी क्यों की जाए और एक, दो या तीन वर्षों के लिए प्रतीक्षा क्यों न की जाये? हमने पहले ही काफी प्रतीक्षा कर ली है। हम एक और अवधि के लिए प्रतीक्षा क्यों न करें? प्रश्न यह नहीं है कि हिंदू संहिता ने 11 वर्ष ले लिये हैं। प्रश्न यह भी नहीं है कि इसे प्रस्तुत किये गये दो वर्ष हो गये हैं। वस्तुत: यह प्रस्ताव पिछली शताब्दी में रखा गया था।

मैं सभा को 1872 के अधिनियम III की याद दिलाता हूँ। विशेष विवाह अधिनियम सर्वप्रथम 1869 में सर हेनरी मै द्वारा केशव चन्द्र सेन, बंगाल के एक महान समाज सुधारक, के परामर्श पर विधानसभा के समक्ष रखा गया था। वास्तव में और पीछे जायें, तो पिछली शताब्दी के पांचवें दशक में विधवा पुनर्विवाह विधेयक विधानमंडल के समक्ष रखा गया था। महान् ईश्वर चन्द्र विद्यासागर हिंदू विधवा पुनर्विवाह के पक्ष में जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए उनके मत को काफी प्रभावित कर रहे थे। उसी समय विधानसभा में समक्ष चार सौ लोगों द्वारा हस्ताक्षरित एक विशेष याचिका लाई गई जिस में कहा गया कि यद्यपि हिंदू रूढ़िवादी हैं, पर विवाह विशेष जाति तक सीमित रखने में उनका विश्वास नहीं है, वे अंतर्जातीय विवाह में विश्वास रखते हैं। वे एक पत्नी विवाह में विश्वास रखते हैं, और उनका विश्वास है कि शुद्ध हिंदू प्रथाओं का पालन करने के लिए कुछ अनुष्ठानों का पालन किया जाना अनिवार्य है। किन्तु वे अन्य अनुष्ठानों से बचना चाहते हैं और इसलिए वे चाहते हैं कि विधानमंडल एक व्यापक विधेयक पारित करे, न केवल हिंदू विधवा पुनर्विवाह विधेयक, अपितु 'हिंदू विवाह विधेयक', जिसमें अर्न्तजातीय विवाह का, वयस्क विवाह का और ऐसे अनुष्ठानों के साथ विवाह का प्रावधान किया जाये, जिन पर उनको कोई आपत्ति न हो, न कि ऐसा हर अनुष्ठान जो उस समय अनिवार्य समझा जाता था। यह कोई 1856 की बात है और वह एक अत्यन्त प्रतिनिधि संस्था थी, जिसने ऐसी याचिका दी थी। याचिका पर हस्ताक्षर करने वाले महत्वपूर्ण सार्वजनिक व्यक्तियों में पीरी चन्द्र मित्तर, राधानाथ सिकदार, अभय चरण मलिक और रसिक कृष्ण मलिक जैसे लोग थे। उनका ब्रह्म समाज से कोई सम्बन्ध नहीं था; वे रूढ़िवादी हिंदू थे। इस संगठन के साथ-साथ ब्रह्म समाज की सभी गतिविधियां भी चल रही थीं। ब्रह्म समाज के अनुयायी पहले ही अन्तर्जातीय विवाह करते थे क्योंकि उनका विश्वास था कि सत्य, सत्य है और सत्य का अनुसरण करते समय परिणाम का ध्यान नहीं रखा जाता। वे इस बात की परवाह नहीं करते थे कि कानून क्या है। उनका कहना था कि वे इस तथ्य के बावजूद जाति को तोड़ देंगे कि कानूनी वैधता के सम्बन्ध में कठिनाइयां हो सकती हैं। बाद में उन्होंने सोचा कि भावी पीढ़ियों के हित में, बच्चों के हित में यह स्थिति खराब हो सकती है और यही कारण था कि सर हेनरी मैने ने एक विधेयक पेश किया जो अन्तत: विशेष विवाह अधिनियम, 1872 के रूप में सामने

आया। इस अधिनियम से न केवल ब्रह्म समाज की, अपितु अन्य लोगों की आवश्यकतायें भी पूरी हुई हैं। यह बात इस तथ्य से सिद्ध हो जाती है कि इस अधिनियम के पारित होने के बाद इसे अन्य वर्गों पर लागू करने तथा अधिनियम के विशेष खंडों के प्रति कुछ आपत्तियों को दूर करने के लिए इसमें कई संशोधन किये गये हैं। ऐसा करते समय उन लोगों ने समय-समय पर समाज की अन्तरात्मा के प्रतिनिधि या अल्पसंख्यक अन्तरात्मा के प्रतिनिधि के रूप में काम किया। चूँकि अल्पसंख्यकों की अन्तरात्मा होती है, और अल्पसंख्यकों की सामाजिक अन्तरात्मा का भी आदर किया जाना चाहिये। हर देश में हम पाते हैं कि अल्पसंख्यकों की अन्तर्रात्मा ही अपने दृष्टिकोण को सही सिद्ध करने के लिए कानून की सहायक बनी है। महोदय, जो भी है, आज हम यह नहीं जानते कि कौन-सा वर्ग अल्पसंख्यक है और कौन-सा बहुसंख्यक है। किन्तु यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि एक लोकतांत्रिक सरकार में सभी वर्गों के लोगों को अनिवार्य रूप से अपनी अन्तरात्माओं को सही सिद्ध करना चाहिये, अपनी जीवनपद्धति तथा विचारधारा को सही सिद्ध करना चाहिये और कम से कम जहां तक मूलभूत मुद्दों का सम्बन्ध है, उनका आदर किया जाना चाहिये। इस दृष्टि से हमें वास्तव में जिस प्रश्न का समाधान करना है, वह यह है : क्या यह विधेयक किसी विशेष दृष्टि से किसी विशेष वर्ग की अन्तरात्मा पर लागू होता है? (**बाबू राम नारायण सिंह :** हाँ।) और क्या इसी से इसकी उत्कृष्टता अथवा अन्य स्थिति का परीक्षण होगा?

अब हम विधेयक के पहले भाग की ओर आयें तो जहां तक विवाह, तलाक, न्यायिक पृथक्करण, संरक्षण, भरण-पोषण, बच्चों की अभिरक्षा आदि का सम्बन्ध है, जहां तक मैं समझ सकता हूँ, यह तर्क संभवतया नहीं दिया जा सता कि इसे किसी पर थोपा जा रहा है। अन्ततः इस प्रावधान का उपयोग केवल उन मामलों में किया जायेगा, जिनमें आपको लगेगा कि तलाक नितान्त अपरिहार्य हो गया है। और ऐसे मामले होते ही हैं, इसके बारे में कोई प्रश्न नहीं उठता। ऐसे मामले भी होते हैं, जिन में विवाह सम्बन्ध बना रहे, तो दोनों पक्षकारों का जीवन दूभर हो सकता है और परिवार टूट सकता है। और केवल ऐसे मामलों में ही तलाक की नौबत आ सकती है।

सारजेन्ट रोहिनी कुमार चौधरी (असम : सामान्य) : मैं पूछ सकता हूँ कि क्या इसके बाद के विवाह मंगलमय होंगे? वे बदतर हो सकते हैं?

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप कैसी महिला से विवाह करते हैं।

डॉ. पी.के. सेन : मैं इस प्रश्न में नहीं जा रहा, क्योंकि उस स्थिति में यह आंकड़ों का मामला बन जायेगा कि कितने लोग वास्तव में सुखी हैं या कितने लोग वास्तव में दु:खी हैं। यह कसौटी नहीं है। कसौटी तो अपरिहार्यता है। क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो

संभवतया यह कह सके कि किसी भी परिस्थिति में पृथक्करण नहीं होना चाहिये। ऐसी काल्पनिक परिस्थितियां हो सकती हैं, जहां पृथक्करण की आवश्यकता न हो हमें चाहिए कि सद्भावना और आपसी सूझबूझ के साथ बैठ कर इन सभी मुद्दों पर विचार करें और यह पता लगायें कि क्या ऐसा किसी विशेष पक्ष के लिये अनिवार्य होगा अथवा नहीं। इसमें किसी प्रकार की विवशता नहीं है। यह पूर्णतया ऐच्छिक है। यदि आप महसूस करते हैं कि निर्वाह करना कठिन हो गया है तो आप न्यायालय में जा सकते हैं। न्यायालय मामले की जांच करेगा और यह पता लगायेगा कि क्या तलाक या विवाह के टूटने के सभी कारण मौजूद हैं औ उसके बाद प्रारम्भिक डिक्री अथवा जो भी हो, जारी करेगा। लेकिन इसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ नहीं है कि तलाक की घटनायें दिन प्रतिदिन बढ़ती जायेंगी। यह पूर्णतया लोगों के स्वभाव पर निर्भर करता है। और मैं यह कहना आवश्यक समझता हूँ चूंकि अमेरिका या इंग्लैण्ड में अथवा अन्य देशों में इसने एक विशेष मार्ग अपनाया है, भारत में भी यह वही मार्ग अपनायेगा, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। (**पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय** : यह वही संस्था है।) मैं यह मानने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं हूँ कि भारत में भी वहीं परिणाम सामने आयेंगे।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : बदतर आएँगे।

एक माननीय सदस्य : क्या अब मध्याह्न भोजन का समय नहीं हो गया है?

माननीय उपाध्यक्ष महोदय : मैं समझता हूँ माननीय सदस्य शीघ्र अपना भाषण पूरा करने वाले हैं।

डॉ. पी.के. सेन : मैं अपना भाषण शीघ्र समाप्त करने का पूरा प्रयास कर रहा हूँ, किन्तु मैंने अभी अपना भाषण आरम्भ किया है।

तत्पश्चात्, सभा मध्याह्न भोजन के ढाई बजे तक के लिए स्थगित हुई।

सभा मध्याह्न भोजन के पश्चात् ढाई बजे पुनः एकत्र हुई।

माननीय उपाध्यक्ष (श्री एम. अनंथसयनम आयंगर) : पीठासीन हुए।

डॉ. पी.के. सेन : महोदय, जब यह सभा मध्याह्न अवकाश के लिए स्थगित हुई, तो मैं तलाक तथा अन्य सम्बद्ध मामलों सम्बन्धी प्रावधानों की अनुज्ञात्मक प्रकृति की बात कर रहा था। बहस के दौरान मुझ से जो प्रश्न पूछा गया वह यह था कि अन्य देशों में इतने अधिक तलाक क्यों हुए हैं।

श्री महावीर त्यागी (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : मेरा व्यवस्था का प्रश्न है। मैं देख रहा हूँ कि केवल माननीय परिवहन और रेल राज्य मंत्री सरकारी सीटों पर बैठे हैं। विचाराधीन विधयेक का सम्बन्ध न तो रेलवे से है और न ही परिवहन से। अतः महोदय,

क्या आप माननीय विधि मंत्री को बुलाने की कृपा करेंगे?

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे यकीन है कि विधि मंत्री शीघ्र यहां होंगे। तब तक, जो अन्य मंत्री यहां हैं ध्यान देंगे।

श्री अजित प्रसाद जैन (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : यह तो सभा की अवमानना जैसी है।

माननीय उपाध्यक्ष : अभी तक मुझे कम से कम 36 सदस्यों द्वारा भेजी गयी पर्चियां मिल चुकी हैं।

श्री एम. तिरुमला राव (मद्रास : सामान्य) : कुछ ने हमारे नाम नहीं भेजे हैं। हमारी पर्चियों यहां पड़ी हैं।

श्री महावीर त्यागी : और बहुत से लोग आपके ध्यान देने की प्रतीक्षा में थे। उन्होंने पर्चियां नहीं भेजी हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : अतः स्थिति यह है कि इन 36 के अलावा अन्य लोग भी हैं जो मेरे ध्यान देने की कोशिश में थे। इस समय स्थिति यह है कि सरकार ने कल और आज का दिन इस विधेयक के लिए रखा था। मुझे सरकारी काम की स्थिति की जानकारी नहीं है। मैं चर्चा को दबाना भी नहीं चाहता किन्तु मैं नहीं समझता कि हम इस गति से चल सकते हैं। अतः माननीय सदस्यों से मेरा सुझाव है कि वे अपने भाषणों को यथासंभव सीमित करें और उनका भाषण 15 मिनट से अधिक नहीं होना चाहिये।

एक माननीय सदस्य : असंभव। आप सरकार को समय बढ़ाने की सलाह दें।

श्री आर.के. सिधवा (सी.पी. एवं बेरार : सामान्य) : ऐसे सदस्यों को तरजीह दी जानी चाहिये जिन्हें उम्मीद है कि वे पांच या दस मिनटों में अपना भाषण पूरा कर लेंगे। मैं जानता हूँ कि ऐसे बहुत से सदस्य हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : लेकिन क्या वे अपने आश्वासन को निभायेंगे? मुद्दा यही है।

श्री आर.के. सिधवा : मैं अपना पक्का आश्वासन देता हूँ।

श्री विश्वनाथ दास (उड़ीसा : सामान्य) : उपाध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपकी जानकारी में ला सकता हूँ कि माननीय अध्यक्ष ने इस सभा को आश्वासन दिया था कि वह इस प्रस्ताव पर चर्चा के लिए पूरा समय देंगे। और यदि आप एक सदस्य को केवल दस या पन्द्रह मिनट बोलने की अनुमति देते हैं, तो यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा। यह विधेयक एक सामान्य विधेयक से नितान्त भिन्न है। इसका सम्बन्ध करोड़ों लोगों के जीवन, उनके

आर्थिक और सामाजिक अस्तित्व से है। इन परिस्थितियों में मैं आप से अनुरोध करता हूँ कि मानवीय अध्यक्ष द्वारा दिये गये आश्वासन का निर्वाहन करें।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती : वह अध्यक्ष है। वह निर्णय ले सकते हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : यह दुर्भाग्य की बात है कि अध्यक्ष महोदय अपनी पीठ पर विराजमान नहीं हैं। मैं चर्चा को दबाना नहीं चाहता किन्तु मैं एक समय-सीमा का सुझाव दे रहा हूँ ताकि उन सभी सदस्यों को, जो चर्चा में भाग लेना चाहते हैं अवसर मिल सके। मैं इसे माननीय सदस्यों के विवेक पर छोड़ता हूँ। पंद्रह मिनट की सीमा अलंघनीय नहीं है। एक मिनट अधिक या एक मिनट कम हो तो कोई बुरी बात नहीं है। लेकिन मुझे डर है कि इस से अधिक की अनुमति नहीं दी जा सकती—चाहे सरकार चर्चा एक दिन के लिए बढ़ाने के लिए तैयार हो भी जाये। मैं नहीं जानता कि सरकार समय बढ़ाने के लिए तैयार है अथवा नहीं, क्योंकि बोलने वाले सदस्यों की संख्या काफी है और प्रत्येक सदस्य चाहेगा कि उसे अवसर दिया जाये।

पंडित बालकृष्ण शर्मा (यू.पी. : सामान्य) : यदि ऐसा है तो हम अगले सत्र में विचार कर सकते हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : यह मेरे अधिकार की बात नहीं है।

श्री एस. नागप्पा (मद्रास : सामान्य) : हम एक या दो घंटे अधिक के लिए क्यों नहीं बैठ सकते?

माननीय उपाध्यक्ष : फिलहाल जो सदस्य पन्द्रह मिनटों में अपना भाषण पूरा कर सकते हैं, वे बोल सकते हैं। किन्तु वे सदस्य, जो समझते हैं कि उन्हें अधिक समय मिलना चाहिये, वे अधिक समय ले सकते हैं।

श्री एम. तिरुमला राव : आप भाषण की खूबियों पर ध्यान दे सकते हैं और यदि कोई तर्क बार-बार दोहराये जाते हैं, तो आप बोलने वाले सदस्य को अपने तर्कों की पुनरावृत्ति न करने के लिए कह सकते हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : बहुत अच्छा, अब डॉ. सेन।

श्री एच.वी. खाण्डेकर (सी.पी. एवं बेरार : सामान्य) : केवल ढाई घंटे और हैं। यदि प्रत्येक पन्द्रह मिनट के लिए बोले, तो कुल दस सदस्य बोल सकते हैं। अन्य सदस्यों का क्या होगा जो इस विधेयक पर बोलना चाहते हैं? मेरा आप से अनुरोध है कि आप चर्चा एक या दो दिन बढ़ाने के लिए सरकार से कहें। यह इतना महत्वपूर्ण विधेयक है कि पूरे राष्ट्र की आंखें इस पर टिकी हुई हैं। हमें इस पर पूरी चर्चा करनी चाहिये और तभी जिस रूप में भी सहमति बने इसे पारित करना चाहिये।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे विश्वास है कि सभा की कार्यवाही और माननीय सदस्यों द्वारा दिये गये सुझाव सरकार को भेजे जायेंगे और सरकार उन पर विचार करेगी। डॉ. सेन अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

डॉ. पी.के. सेन : महोदय, मैं महसूस करता हूँ कि भाषण छोटा होना ही बेहतर है किन्तु कई बार संक्षिप्तता से अविवेक की झलक आती है। मैं संक्षेप में बोलने से स्थिति बिल्कुल स्पष्ट नहीं कर पाऊंगा और मेरी बात अधूरी और अस्पष्ट होगी तो किसी को भी कोई लाभ नहीं होगा। अत: मैं मोटे तौर पर मूलभूत मुद्दे ही उठाऊंगा और उनके ब्यौरों में नहीं जाऊंगा।

पिछली बार मैं सभा में जिस प्रश्न को सम्बोधित कर रहा था कि क्या देश में तलाक की अनुमति देने से अन्य देशों की भांति इस देश में भी तलाक अधिक नहीं होने लगेंगे। इस प्रश्न का मेरा उत्तर यह था और है कि तलाक के मामले किसी देश के नैतिक मूल्यों की गुणवत्ता पर निर्भर करेंगे। एक समाज की रचना ऐसी हो सकती है कि केवल अपरिहार्य और आवश्यक मामलों में संबंधित पक्ष तलाक की मांग करेंगे और एक अंतर्निहित घृणा होगी, अस्वाद होगा, लोग तलाक से घृणा करेंगे यदि तलाक के लिए कोई अवसर नहीं है और यह सिद्ध करने के लिए मनगढ़ंत सबूत जुटाया जाता है कि तलाक के कारण हैं। इस देश में यह प्रयोग बड़ौदा में और दक्षिण भारत के कुछ भागों में किया गया है, जहां तलाक काफी पहले से होते रहे हैं और आज भी होते हैं। किन्तु मुझे बताया गया है कि अभी तक बड़ौदा में ऐसे तीन मामले हुए हैं और ये तीन मामले पिछले 20 वर्षों में हुए हैं। मैं दोहराना चाहता हूँ कि समाज विशेष में व्याप्त सामाजिक वातावरण और नैतिक मूल्य ही तलाक के मामलों की संख्या निर्धारित करते हैं। अत: यह कोई कानून नहीं है, जो समाज को बनाता है। कानून केवल कुछ मामलों में तलाक की मंजूरी देता है जिनमें ऐसा करना आवश्यक होता है। विधेयक के इस भाग की, जो विवाह कानून के बारे में है, चार विशेषताएं हैं। पहली विशेषता यह है कि अन्तर्जातीय विवाह की स्वीकृति दी गई है। दूसरी विशेषता यह है कि तलाक के लिए प्रावधान है। तीसरे एक पत्नी विवाह का प्रावधान है। ये सभी प्रावधान 1872 के अधिनियम III में मौजूद हैं और इसलिए ऐसा नहीं है कि ये मुद्दे पहली बार हिंदू संहिता में उठाये गये हैं। जैसा कि मैंने कहा है, पिछली शताब्दी के पांचवे दशक में आन्दोलन खड़ा हुआ था और वह तब से चल रहा है। निस्संदेह जाति के विरुद्ध संघर्ष सर्वप्रथम ब्रह्म समाज ने केशव चन्द्र सेन के नेतृत्व में छेड़ा था। उस समय ब्रह्म समाज के अनुयायियों पर अत्याचार किये गये। उनका समाज से बहिष्कार किया गया और उनके साथ घृणित व्यवहार किया गया। आज हम मानते हैं कि जाति प्रथा समाप्त हो जायेगी और इसलिए अन्तर्जातीय विवाह के सम्बन्ध में इस विधेयक में जो प्रावधान किये गये हैं उनका किसी को विरोध नहीं करना चाहिये। इस में कोई संदेह नहीं है कि एक बहुत बड़ा लोकमत जातिप्रथा

को समाप्त करने के पक्ष में है। अन्यथा संविधान में इस प्रकार के सभी प्रावधान करने का क्या प्रयोजन है? जातिप्रथा समाप्त हो जायेगी। यदि हम यह रूख अपनाते हैं तो अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्धी प्रावधानों में कुछ भी आपत्तिजनक नहीं है।

यही बात एक पत्नी विवाह प्रथा पर लागू होती है। मैं नहीं समझता कि अभी भी कोई लोकमत द्वि पत्नी विवाह के पक्ष में है या बहुविवाह के पक्ष में हैं। ऐसे एकाध मामले हो सकते हैं लेकिन वह दूसरी बात है। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि पूरा लोकमत प्रथा के पक्ष में हैं। अतः जहां तक इसका सम्बन्ध है, प्रस्तुत विधेयक में कोई आपत्तिजनक बात नहीं है और जैसा कि मैंने कहा है, तलाक की इजाजत से संभवतया कोई कठिनाई पैदा नहीं हो सकती क्योंकि अन्ततः उन आभागे लोगों के लिए अनिवार्य रूप से अनुज्ञात्मक प्रावधान होना चाहिये जिनके मामलों में तलाक आवश्यक है।

महोदय, इस मुद्दे पर आते हुए कि कोई परिवर्तन क्यों किया जाये (मैं इसी मुद्दे पर था) यह कहा गया है कि शास्त्रीय कानून का सख्ती से पालन होना चाहिये और उससे पीछे नहीं हटना चाहिए। यह चर्चा इस सभा में घंटों तक चली है। यह कहा गया है कि शास्त्रीय विधि अन्तिम, अखण्ड और अलंघनीय है। आप इसे बदल नहीं सकते। मैं जानना चाहता हूँ कि शास्त्रीय विधि का क्या अर्थ है।

वास्तव में हमारे शास्त्रों में परिवर्तन के लिए सदा प्रावधान रहा है और उनमें परिवर्तन सदैव हुआ है। अन्यथा इन अनेक स्मृतियों का क्या अर्थ है। मनु में यह सुप्रसिद्ध समादेश है कि आचरण के चार आधार, चार मापदण्ड निर्धारित किये गये हैं :

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्थ च प्रियमात्मन।
एतश्चतुर्विध प्राहः सक्षाद्धमस्य लक्षण॥

जिसका अनुवाद करने पर अर्थ निकलता है श्रुति, स्मृति, धर्मपरायण व्यक्तियों द्वारा स्थापित प्रथायें और अपनी निजी अन्तरात्मा की संतुष्टि, यही आचरण के चार मानदण्ड या मापदण्ड प्रस्तुत करते हैं। आचरण के इन चार मापदण्डों में आत्मा की आत्म-संतुष्टि, यानी अन्तरात्मा, जिसका अर्थ, मैं समझता हूँ मात्र व्यक्तिगत अन्तरात्मा न होकर, सामाजिक अन्तरात्मा भी है। हम जिस युग में रहते हैं उसकी सामाजिक अन्तरात्मा का भी सम्मान करना होगा और यह एक मानक है जिसके आधार पर हमकें अपने आचरण और धर्म को जानना होगा। यह ऐसा मापदण्ड है जिसके आधार पर कानून बनाया जाना चाहिये और इसी सिद्धांत के आधार पर ही विधि, तथाकथित शास्त्रीय विधि में परिवर्तन, और परिवर्तन होता रहा है। मेरे माननीय मित्र विधि मंत्री ने अपने प्रारम्भिक भाषण में कहा कि आप पाराशर स्मृति या नारद स्मृति का अवलोकन करें तो आपको पता चलेगा कि उसमें विधवा पुनर्विवाह और कई ऐसी चीजों का प्रावधान है जिन्हें क्रांतिकारी कहा जा सकता है। वे वहाँ तक कैसे पहुंचे? उन्होंने बाधाओं को कैसे तोड़ा और ऐसा काम कैसे

किया, जिसे हम क्रांतिकारी कहते हैं? इसका कारण यह था कि उच्चतम समादेशों के अनुसार, श्रुति और स्मृति ही आधार नहीं रहे हैं अपितु, अन्य आधार भी रहे हैं। आपको धर्मपरायण और धर्मनिष्ट व्यक्तियों के आचरण का अनुकरण करना होगा और ऐसे पुरुषों का अनुकरण करना होगा जो ऐसी जीवनपद्धति की जानकारी रखते हैं जो आत्मानुभूति की ओर ले जाती है। और आचरण के सिद्धान्त भी इन्हीं लोगों ने निर्धारित किये हैं। आपको इन पर अमल करना होगा। ये शास्त्रीय नहीं हैं, क्योंकि इन्हें अनिवार्य रूप से किसी श्रुति या स्मृति से नहीं जोड़ा जा सकता। किन्तु ये ही सही जीवनयापन के तरीके हैं जो निश्चित रूप से हमारे व्यक्तिगत तथा सामाजिक आचरण को विनियमित करने के लिए निर्धारित किये गये हैं। यदि ऐसा है, यदि विधि का विकास इस प्रकार होता है तो अनिवार्य रूप से हमें यह दिखाई देता है कि लोकमत जोरदार है, समाज या समाज के एक विशेष वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग की अन्तरात्मा यह कहती है कि विधि द्वारा एक विशेष जीवनयापन पद्धति की स्वीकृति दी जानी चाहिये। और जैसी अपेक्षा की जाती है वैसा ही प्रावधान करती है। यदि हमारा यह मापदण्ड हो तो इस समय हम संभवतया कह सकते हैं कि कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए। लेकिन क्या हम यह कह सकते हैं कि हमारा कानून, हमारा शास्त्रीय कानून स्थिर रहा है? यदि यह अनुल्लंघनीय और अखंड हैं, यदि यह अपरिवर्तनीय और अटल है तो कोई प्रगति नहीं होगी और यह कहना हमारे विधि निर्माताओं के प्रति प्रतिकूल टिप्पणी होगी कि कानून में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इसके प्रतिकूल अब दृढ़ता से यह कहने का अवसर है कि किसी विशेष वर्ग के विचारों को, चाहे वे अल्प- संरण्यक हों या बहुसंख्यक, दबाया नहीं जाना चाहिए। यदि किसी विशेष मुद्दे के सम्बन्ध में जोरदार मत हो, तो विधि को उसकी अनुमति देनी चाहिये।

महोदय, अब मैं अन्य मूलभूत मुद्दों की ओर आता हूँ। इस विधेयक के सम्बन्ध में कौन-सी अन्य मुख्य आपत्तियों उठाई गई हैं? वे सम्पत्ति पर मिताक्षर और दायभाग के बारे में है। हमें अपने आप से पूछना चाहिये कि क्या इस समय यह प्रश्न उठाना संगत है? संयुक्त परिवार प्रथा की अपनी खूबियां थी; भूतकाल में इसकी अपनी महिमा थी, इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता। लेकिन मेरी यह धारणा कि हाल में संयुक्त परिवार प्रथा ही बड़ी संख्या में लोगों के लिए घिनौनी सिद्ध हुई है। वे महसूस करते हैं कि परिवार के आलसी लोग ही परिवार के कमाने वाले लोगों को चूसते हैं। ऐसे लोग भी हैं, जो कमाने का नाम तक नहीं लेना चाहते, क्योंकि उनके पीछे परिवार होता है और वे सोचते हैं, "जब हमारा भरण-पोषण करने के लिए परिवार है तो हम कमाई के लिए कोई कष्ट क्यों उठायें?" और परिवार के वे लोग जो अपने खून-पसीने से कुछ कमाते हैं, उनकी कमाई उन अन्य लोगों द्वारा झड़प ली जाती है जो आलसी होते हैं और हर तरीके से फिजूलखर्ची करते हैं।

डॉ. पी. देशमुख (सी.पी. एवं बरार : सामान्य) : महोदय, क्या उन्होंने कभी शिकायत की है?

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : हां, वे करते हैं। ऐसी स्थिति में शिकायतें होना स्वाभाविक हैं।

डॉ. पी.के. सेन : यदि उनकी शिकायत की सुनवाई हो तो निस्संदेह यह एक अलग बात होगी किन्तु परिवार में सभी कमाने वाले लोग होंगे तो शिकायत करने का कभी कोई अवसर नहीं आयेगा। अब वे केवल एक तरीके से शिकायत कर सकते हैं अर्थात् पृथक होने के इरादे की अभिव्यक्ति द्वारा। इस समय वास्तव में क्या स्थिति हैं? पारिवारिक एकता कितनी ही मजबूत क्यों न हो, कोई व्यक्ति आकर यह कह सकता है कि मैं अलग होना चाहता हूँ और इरादे की इस अभिव्यक्ति से कानून की नजरों में वह फौरन अलग हो जायेगा। तब परिवार के आखण्डता कहां रहेगी? तब मिताक्षर परिवार क्या करेगा? इस समय न्यायिक नियमों के अनुसार स्थिति यह है कि पृथक होने के जरा से इरादे और उस इरादे की अभिव्यक्ति से प्रस्तावित पृथक्करण हो जायेगा। ऐसी स्थिति में मेरा अनुरोध यह है कि अब यह नहीं कहा जा सकता कि संयुक्त परिवार एक बड़ी संख्या में हैं, जो ज्यों की त्यों बने हुए हैं। यह प्रथा भरभरा कर गिर रही है और इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी के प्रयास से इसे अब संभवतया बचाया नहीं जा सकता। लोग अब व्यक्तिगत आजादी चाहते हैं। हर व्यक्ति जो कमाता है या कामना चाहता है, वह अपने तरीके से जीवनयापन करना चाहता है। वह नहीं चाहता कि परिवार के अन्य सदस्य उसके काम में कोई दखल दें। अब व्यक्तिगत स्वतंत्रता उनका लक्ष्य और उद्देश्य है। यह मांग आदिकाल से की जाती रही है। "व्यक्ति का ह्रास होता जा रहा है और राज्य का विकास होता जा रहा है।" पिछले कुछ समय से यह शिकायत सुनाई दे रही है और आज भी हम महसूस करते हैं कि हमारे समाज में बहुमत का नियम, समाज का नियम लागू होता है, किन्तु कोई नहीं चाहता कि ये नियम आगे भी लागू हों। अब व्यक्ति परिवर्तन चाहता है। उसका कहना है कि ''मैं नहीं चाहता कि परिवार के नियम मुझ पर लागू हों। मैं आजादी चाहता हूँ और मैं अपने तरीके से जीवनयापन करना चाहता हूँ। मैं इस सभा के हर सदस्य से अनुरोध करता हूँ कि वह अपनी अन्तरात्मा से पूछे कि क्या आधुनिक समय की यही भावना नहीं है और यदि यही भावना है तो हम कहां है? ऐसा भवन खड़ा करने का प्रयास करने का क्या लाभ है, जो आगे बनाये रखना अब कठिन है। अत: मिताक्षर और दयाभाग के बीच जो एक बड़ा अन्तर किया जा रहा है, वह वास्तव में दूर चला गया है। इस संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि जब हम सौंदर्य और सद्भावनाओं से तथा पूरी सूझबूझ के साथ विचार करेंगे, तो हम इन मतभेदों को दूर कर सकेंगे और हम किसी विशेष वर्ग की भावनाओं को ठेस पहुंचाये बिना कोई संतोषजनक समाधान ढूंढ सकेंगे। और मुझे पूरी आशा है कि ऐसा होगा। मैं ब्यौरे में नही जाना चाहता, किन्तु मैं बताना चाहता हूँ कि हमें आगे इस दिशा मे आगे अपनी चर्चा को बढ़ाना चाहिये।

महोदय, अब मैं एक अन्य ब्यौरे को लेता हूँ। वास्तव में विरासत अथवा उत्तराधिकार के मामले में किसी बात पर कोई विवाद नहीं है और यदि कोई विवाद है तो वह बेटी के हिस्से के बारे में है। शेष सभी बातें अब प्रायः बीते युग की बातें हैं। विधान बना है और कई न्यायिक निर्णय आये हैं जिन के द्वारा परिवार के उन सभी सदस्यों को अधिकार दिये गये हैं जिन्होंने इसकी मांग की। अब यदि कोई विवाद है तो वह केवल लड़की के हिस्से के बारे में हैं। लड़के की तुलना में लड़की को आधा हिस्सा दिया जा सकता है, लड़के के बराबर लड़की को हिस्सा दिया जा सकता है, यह कोई दूसरा हिस्सा भी हो सकता है, जिस का फैसला आपस में बातचीत के द्वारा किया जा सकता है। मुझे पूरा विश्वास है कि सद्भावना और आपसी सूझबूझ से इस समस्या का कोई संतोषजनक समाधार ढूंढा जा सकता है। ऐसा नहीं हैं कि प्रवर समिति का हर सदस्य अपने निर्णयों से बाध्य है। हम सभी को अपने विचार व्यक्त करने की आजादी है। मैं निस्संकोच यह मानता हूँ कि कुछ चीजें ऐसी हैं जो मुझे पसन्द नहीं हैं। ऐसे सदस्य भी हैं जिनका यह कहना है कि उन्हें विधेयक के कुछ पहलू पसन्द नहीं है। अतः इन मतभेदों को कुछ हद तक आपसी बातचीत के द्वारा दूर करना होगा। लेकिन इसके अलावा मूलभूत प्रश्न यह है कि क्या लड़की को कोई हिस्सा मिलना चाहिये। अब जब यह कहा जाता है कि लड़की को कोई हिस्सा नहीं मिल सकता तो मैं यह जरूर सोचता हूँ और मुझे अपने विचार निःसंकोच और अबाध रूप से व्यक्त करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है, कि परिवार के महिला सदस्यों के प्रति पुराने भेदभाव के कारण ही यह आपत्ति की जा रही है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : बिल्कुल ठीक। असली मुद्दा यही है।

डॉ. पी.के. सेन : हम अपने महिला सदस्यों का आदर करते हैं। निस्संदेह प्रायः यह कहा जाता है कि प्रत्येक परिवार की महिलायें शिष्टाचार की मूर्तियां और सेवारत देवियाँ हैं। यह बिल्कुल सही है किन्तु क्या हमें उनके प्रति जो कुछ करना चाहिये वह करते हैं? क्या हम अपने परिवारों में महिलाओं के प्रति वह सब करते हैं जो पुरुषों को महिलाओं के प्रति करना चाहिये। हमें इन चीजों में पूरी तरह ईमानदार और निस्संकोच होना चाहिये। हमारी महिलाओं के लिए बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है। आज महिलायें समाज में अपना स्थान चाहती हैं। परिवार के प्रति अपना कर्त्तव्य निभाते रहने और सेवा की मूर्ति बने रहने के साथ-साथ उन्हें कुछ और काम भी करना है। उन्हें सार्वजनिक कार्यों में रुचि लेनी है। उन्हें सामाजिक संगठनों में रुचि लेनी है। आज जो बहुत-सी समस्याएं सामने आ रही हैं, उनमें उनकी उपस्थिति अपरिहार्य रूप से आवश्यक है। अतः हम ऐसे सामाजिक ढांचे की संभवतया रचना नहीं कर सकते जिनमें महिलाओं का अस्तित्व ही न हो। महिलाओं को हमेशा पुरुषों की सेवा में लगे रहना चाहिये, अर्थात् उन्हें पुरुषों के आराम और कल्याण का ध्यान रखना चाहिये पर अपनी उच्च इच्छाओं और आकांक्षाओं के बारे में क्या कुछ नहीं करना चाहिये? समाज में उनको भी अपना

दायित्व निभाना है, क्योंकि स्वतंत्र भारत में हर संगठन में, हर आन्दोलन में, महिलाओं का एक बहुत बड़ा स्थान है जो उन्हें भरना है। ऐसी स्थिति में हमें उन्हें आजाद करना चाहिये और सबसे अधिक जरूरत उन्हें आर्थिक की जरूरत है। (शाबाश, शाबाश) अनेक मामलों में महिलाओं का जीवन इसलिए तबाह कर दिया जाता है कि उन्हें अपने अस्तित्व के लिए परिवार के किसी पुरुष सदस्य पर निर्भर रहना पड़ता है। अतः वर्तमान परिस्थितियों में उनकी आर्थिक आजादी का प्रश्न काफी महत्वपूर्ण है।

हमें इस तथ्य को अनदेखा नहीं करना चाहिये। यदि हम आर्थिक आजादी देना चाहते हैं तो कोई कारण नहीं है कि हम अपना मुँह मोड़ लें और यह कहें : "ओह यह लड़की, उसे हिस्सा नहीं मिल सकता, उसे परिवार में एक मूर्ति बन कर रहना होगा," जिसका अर्थ यह है कि वह सदैव निर्भर रहेगी और यदि वह विधवा है तो उसे अन्य लोगों के आराम का ध्यान रखने के लिए होगी और वह परिवार के प्रति या समाज के प्रति या राष्ट्र के प्रति कोई अन्य सेवा नहीं कर सकेगी। महोदय, मैं आगे नहीं जाना चाहता क्योंकि इसमें काफी समय लगेगा और मैं जानता हूँ कि मैं ऐसा करता हूँ तो अन्य सदस्यों का समय कम हो जायेगा। किन्तु इन मूलभूत बातों के बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है। इसके बारे में काफी चर्चा भी हो चुकी है। अब तक जो चर्चा हुई है उस पर जब मैं विचार करता हूँ तो मैं पूरी तरह कायल हो जाता हूँ कि इस वाद-विवाद के बाद हम एक मेज के गिर्द बैठकर चर्चा कर सकते हैं, और पूरी सद्भावना तथा सूझबूझ के साथ इस ब्यौरे पर विचार कर सकते हैं। तभी हम समाधान भी ढूंढ पायेंगे। ऐसी छोटी-छोटी बहुत-सी बातें हो सकती हैं जो हमें परेशान कर रही हैं, लेकिन उनका समाधान ज्यादा कठिन नहीं है। हमें मूलभूत बातों पर अपना ध्यान केन्द्रित करना होगा और हम ऐसा करते हैं तो हमारा मार्ग स्पष्ट हो जाएगा।

***श्रीमती कमला चौधरी (यू.पी. : सामान्य)** : माननीय उपाध्यक्ष महोदय, इस हिंदू संहिता विधेयक के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहने से पूर्व मैं माननीय मंत्री अम्बेडकर साहब को इस विधेयक को पेश करने के लिये बधाई देना चाहती हूँ। मेरा ऐसा विचार है कि यह विधेयक अपने समय के अनुकूल इस सदन के सामने आया है। आज जमाने की जो रफ्तार है, जो समय की मांग है, यह उसके बिल्कुल अनुकूल है। हालांकि इसका विरोध धर्म, संस्कृति और तरह-तरह के नाम लेकर किया जा रहा है और विरोध के प्रचार में भी हर तरह की बातें इसके विरोध में सुनते हैं। लेकिन मेरा अपना यह विचार है कि महिला समाज के लिये, हमारे भारतीय समाज की प्रगति के लिये, यह बिल एक रामबाण की तरह साबित होगा और इससे हमारे भारतीय महिला समाज का, जो आज शताब्दियों से अधःपतन को प्राप्त हो रहा है, कल्याण होगा और इससे अधिक

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 13 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 535-40

आगे आनेवाला भारतीय महिला समाज भी इस विधेयक के लिये, अगर यह इस संसद में पारित हो जाता है, तो हमारे मंत्री महोदय का और इस सदन के सदस्यों का आभार मानता रहेगा।

जो लोग इसके विरोध में है उनका कहना है कि इस विधेयक से हमारे धर्म की हानि है, और हिंदू संस्कृति की हानि है। यह बात मुझे किसी तरह से दिखलाई नहीं देती। यह दूसरी बात है कि हमारे देशवासियों का दिमाग, हमारा दिल, कुछ इस तरह का बना हुआ है कि धर्म के नाम पर कोई भी बात कही जाये तो वह यहां के लोगों को बहुत अपील करती है। इसी धर्म के नाम पर किस प्रकार हमारे यहां साम्प्रदायिक भावना को प्रोत्साहन दिया गया। इसी धर्म के नाम पर हमने अपने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का खून होते तक देखा है।

इसी प्रकार मैं देखती हूँ कि इस विधेयक के विरोध में भी, धर्म की दुहाई देकर, भारतीय संस्कृति की दुहाई देकर, उन व्यक्तियों, हमारी उन बहनों को, जो अभी यह भी नहीं समझ सकतीं कि कानून क्या चीज है, यह सभा किस प्रकार बनी हुई है, हमारे संविधान में उनको दिया गया जो मताधिकार है वे उसको भी नहीं समझ सकतीं, उनको यह कह कर बरगलाया जाता है और इस तरह की पुकार मचाई जाती है कि इस देश की बहुत बड़ी संख्या इस विधेयक का विरोध करती है। लेकिन जहां तक मेरी तुच्छ बुद्धि पहुंच सकी है, मुझे इस विधेयक में कोई भी बात किसी भी प्रकार ऐसी नहीं मालूम होती जो कि हमारे धर्म के या हमारी भारतीय संस्कृति के विरुद्ध हो।

इस विधेयक के एक भाग में ऐसा प्रावधान किया गया है कि आज जो हिंदू धार्मिक मानसिकता वाले पुरुषों को एक पत्नी के होते हुए, एक दो या कई विवाह करने का अधिकार है, इसका विरोध किया गया है। इसकी अनुमति नहीं दी गई है, यानी बहुविवाह की और उस पर प्रतिबंध लगाया गया है। मैं बहुत नम्रतापूर्वक कहना चाहूंगी कि मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि कहीं ऐसा तो नहीं कि बड़ी संख्या में आज हमारे भाई जो इस विधेयक का विरोध करते हैं, वह शायद इसी लिये करते हों कि उनके ऊपर यह एक प्रतिबंध लगाया जा रहा है कि एक पत्नी के होते हुए वह अनेक विवाह नहीं कर सकेंगे। लेकिन धर्म के विरुद्ध इसमें मुझे कोई बात नहीं मालूम होती, क्योंकि हमारे धार्मिक ग्रन्थ और हमारे प्राचीन साहित्य को देखने से मुझे ऐसा ही मालूम होता है कि किसी भी जमाने में, प्राचीनकाल में भी, हमारे यहां बहुविवाह की प्रथा कोई अच्छी नहीं जानी जाती थी। प्राचीन इतिहास उलटने से ऐसे उदाहरण तो हमको मिलते हैं, कि जो राजा होता था उसको कई विवाह करने की अनुमति थी। हमारे समाज का जो ढांचा था उसमें जो रीति-रिवाज थे, जो पद्धति थीं, जो परम्परा थी और जो उच्च आदर्श थे, और जिन आदर्शों को उच्च कोटि का माना जाता था, उनकी अवहेलना करते राजाओं को तो देखा जाता है, लेकिन जो मर्यादा पुरुषोत्तम हुए हैं, जिन्होंने हमारे सामने एक आदर्श

रखा है, उनका एक उदाहरण मैं आपके सामने देना चाहती हूँ। हमारे बाल्मीकि द्वारा लिखे महाकाव्य को देखने से, जिस महाकाव्य ने हमारी भारतीय संस्कृति की रक्षा की है और जिस पर शताब्दियों से हमारी संस्कृति अवलम्बित है, मालूम होता है कि जब राजा रामचन्द्र अपनी धर्मपत्नी सीता का परित्याग करने के बाद जब अश्वमेघ यज्ञ करने बैठे हैं और जब पुरोहितगण और गुरुजनों ने उनको बतलाया कि बिना पत्नी के यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होता, उस समय भी वह सीता की स्वर्ण प्रतिमा बनवाकर ही यज्ञ करते हैं, दूसरा विवाह नहीं करते। यह आदर्श हमारे सामने हैं, और अगर हम अपने उस महाकाव्य को पढ़ें तो जगह-जगह हमको यह दिखाई देगा जिस समय रामचन्द्र जी वन में रह रहे थे और शूर्पनखा ने उनसे विवाह करने की प्रार्थना की थी तो लक्ष्मण ने उसको जवाब दिया था कि रामचन्द्र अयोध्या के राजकुमार हैं और अयोध्या के राजा होने वाले हैं, वह विवाह कर भी सकते हैं, लेकिन मैं तो विवाहित व्यक्ति हूँ, मैं और विवाह नहीं कर सकता। उस समय तो रामचन्द्र जी के मुख से जो हमारे महाकवि ने कहलाया है वह उसी आदर्श का प्रतिपादन करने वाला है कि बहुविवाह की प्रथा अच्छी नहीं माना गई थी।

इस विधेयक में बहुविवाह पर जो प्रतिबंध लगाया गया है, मेरी समझ में नहीं आता कि किस तरह से इससे धर्म का विरोध होता है। बल्कि, मैं समझती हूँ कि यदि ऐसे कृत्यों को प्रोत्साहित किया गया तो इससे निःसंदेह जो ऊंचा आदर्श हमारे भारतीय समाज, हमारी संस्कृति में है। इससे छिन्न-भिन्न होगा, मैं समझती हूँ कि किसी भी हिंदू धर्मावलम्बी या किसी भी भारतीय संस्कृति पर विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिये एक यही आदर्श है। यह तो स्त्री के लिए बड़ा भारी अन्याय है कि उसका पति अपनी धर्मपत्नी के होते हुये भी एक, दो, तीन और चार विवाह कर सकता है। यह स्त्री के लिये समवेदना का विषय है और सबसे भयानक दुःख की वस्तु है। यह एक दूसरी बात है कि शताब्दियों से हमारे यहां स्त्री समाज पर प्रतिबंध रहे हैं और यहां की नारियां एक प्रकार से घर की चारदीवारी के अन्दर बंद रहती हैं। उनके सामाजिक अधिकार, उनके मानसिक अधिकार और आर्थिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगाया गया है। उनकी आंखों के आंसू आंखों में सूख जाते हैं और उन्हें टपकने तक नहीं किया जाता। लेकिन हमारे कवियों ने, हमारे लेखकों ने, हमारे साहित्यकारों ने इस महान दुख का जो नारी के ऊपर होता है, अच्छी तरह से चित्रण किया है। एक सौत से बड़ा दुःख, जो नारी के लिये होता है उससे महान् दुःख उसके लिये कोई और नहीं है।

आज जबकि पुनर्जागरण युग आरम्भ हो चुका है, और हमारे देश के महापुरुषों ने नारियों की कठिनाइयों का अनुभव किया है और इन लोगों की कृपा से नारियों की समस्याओं पर भली प्रकार से विचार किया गया है और समय-समय पर कई क्रांतिकारी विधेयक भी इस सदन में पारित हुए हैं। उस वक्त जब देश में आन्दोलन हो रहे थे, और विशेषकर महात्मा गांधी हमारे समाज के सामाजिक ढांचे में आकर खड़े हुए थे और उन्होंने नारी को इस स्थिति में पहुंचा दिया था कि वह अपने आप खड़ी हो सके।

अतः आज अपने अधिकारों के लिये स्वयं उसके अन्दर भावना जागी है। भविष्य में जो नारी समाज होगा वह इस तरह के अन्याय को सहन न कर सकेगा और अन्तर्निहित तानाशाही को जिस तरह से आज तक नारी जाति सहन करती आई है। वह इस तरह की अवहेलना और अनादर कभी बर्दाशत नहीं करेगी। इसलिये मैं समझती हूँ कि यह समय हमारे अनुकूल है जो यह विधेयक हमारे सामने आया है। इसको इस असेम्बली में करतल ध्वनि से पारित हो जाना चाहिये।

इस विधेयक का कई प्रकार से विरोध किया जाता है। मुझे यहां पर इस तरह की बातों का सुनने का अवसर मिला है। नारी जाति के विरुद्ध अश्लील और गंदी बातें कही जाती हैं। स्त्रियों पर लांछन किया जाता है। इस तरह से नारी जाति के विरुद्ध कलंकित और बदनामी की बातें कह कर एक तरह से यहां दुष्प्रचार किया जाता है। यहां पर इस तरह का ख्याल बन गया है कि तलाक का जो अधिकार इस विधेयक में रखा गया है, उसका परिणाम यह होगा कि हमारा समाज नष्ट हो जाएगा, हमारी संस्कृति लक्ष्य भ्रष्ट हो जायेगी। मेरी समझ में नहीं आता कि किस तरह के लोग इस तरह की आशंका करते हैं और किस तरह से लोग इस तरह की बतें करते हैं। लेकिन जहां तक मैंने इस विधेयक का अध्ययन किया है, मुझे ऐसी बात नहीं मिली विवाह-विच्छेद के सबंध में जो नई हो या जैसी कि हमारे धर्म शास्त्रों में हमारे धार्मिक ग्रंथों में इजाजत न दी गई हो। जितने भी कारण सम्बन्ध-विच्छेद के इसमें रखे गये हैं अथवा कि सम्बन्ध विच्छेदकिस प्रकार हो सकता है या किन कारणों से तलाक हो सकता है। मैं समझती हूँ वे सभी कारण हमारे धर्म ग्रंथों में मौजूद हैं। मैं खुद हिंदू धर्म और भारतीय संस्कृति में विश्वास करने वाली हूँ। मैं एक हिंदू नारी हूँ। नारी की महिमा और महत्ता किस वस्तु में हैं, वह मैं जानती हूँ। हमारे ऋषि और गुरु-आचार्यों, हमारे कवियों और लेखकों ने बहुत दिनों से, शताब्दियों से भारतीय नारी की महिमा गाई है और उसका बहुत सुन्दर बखान किया है। मैं जानती हूँ कि नारी रूप की महिमा नहीं हैं, वह उसके महान त्याग की महिमा है। मैं समझती हूँ कि वह ऊंचे आदर्श हमारे लिये बहुत अच्छे हैं। आज से नहीं, युगों से भारतीय नारी उन आदर्शों पर चलती रही है और उसके त्याग को यह गौरवमय इतिहास और आदर्श भारतीय संस्कृति और मानव इतिहास में हमेशा कायम रहेगा।

लेकिन समाज के सभी व्यक्ति चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, हर एक ऊंचे आदर्श का पालन कर सकेगा यह असम्भव बात है। महात्मा गाँधी जी संसार में महा पुरुष माने गये हैं। उन्होंने हमारे सामने आदर्श रखे हैं। लेकिन अनुयायी होते हुये भी हम स्वयं उन पर न चल सकें। इसी तरह समाज की व्यवस्था है और इसी तरह संसार की व्यवस्था है। अगर यह संसार और यह हमारा भारतीय समाज विशेषतः अपने आदर्शों का पालन करने लगे, तो मैं समझती हूँ कि यह संसार, संसार न रह कर स्वर्ग बन जाये।

जब कोई उच्च आदर्श लोगों के सामने रखा जाता है तो उसके उचित वातावरण बनाने के लिए बहुत तरह के उपाय करने होते हैं। जिस तरह से हमारे यहां हिंदुओं की विवाह

पद्धति है, जिस समय विवाह होता है उस समय पंडित इस तरह परिभाषित करते हैं कि यह साहश्चर्य सम्बन्ध इतना टिकाऊ है, ऐसा अमर है कि जन्म जन्मान्तर तक यह सम्बन्ध अटूट रहेगा। मेरा इसमें विश्वास नहीं है। क्योंकि, मैं जानती हूँ कि यह साहश्चर्य जो एक हिंदू पुरुष और सभी के बीच होता है, जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध है वही दूसरी तरफ हमारे यहां धर्म ग्रन्थों में बताया गया है कि कर्म के दर्शन अनुसार यह साहश्चर्य निरन्तर तब भी चलता रहेगा यदि पूर्व जन्म में उसका पति मानव होगा या एक दानव होगा या एक पशु होगा। किन्तु इस तरह की चीजों में मेरा विश्वास नहीं है। मेरा यह विचार है कि विवाह एक है जो कि जीवन भर के लिये समझौता होता है। अगर हमारे दामपत्य-युग्म का दिमाग विवाह-विच्छेद के कानूनी पहलुओं की तरफ रहे तो मैं समझती हूँ कि जीवन निरर्थक हो जाएगा। ऐसी शर्तों का परिणाम तो यह होगा कि लोग कभी भी उठने के योग्य और सुखी गृहस्थी नहीं रख सकेंगे। अगर कहीं पर इस तरह की समस्या है तो ऐसी अवस्था में न तो धर्म का ही विकास हो सकता है और न संस्कृति का ही विकास हो सकता है। अगर कहीं पर किसी कारणवश सम्बन्ध-विच्छेद आवश्यक है तो मैं समझती हूँ कि उसका कानूनी अधिकार औरत को होना चाहिये। आज हमारे समाज में बहुत-सी कठिनाइयां आ गई हैं। मैं समझती हूँ कि ऐसे दृश्य मेरी ही आंखों के सामने नहीं हैं, बल्कि यहां पर जो महानुभाव बैठे हैं उन सब के सामने हैं। एक पति दूसरी शादी कर सकता है जबकि उसकी पत्नी की उम्र थोड़ी ही हो और दूसरी तरफ वह स्त्री जिस की उम्र 16, 17 और 18 वर्ष की ही हो, वह दूसरी शादी नहीं कर सकती; उसको इस बात का अधिकार नहीं है कि वह विवाह का विघटन कर ले। इसका परिणाम क्या होता है? मैं इसके विस्तार में नहीं जाना चाहती। मैं तो सिर्फ नम्रतापूर्वक इतना ही कहना चाहती हूँ कि इसका परिणाम भयंकर होता है, खराब होता है। वह स्त्री कानून के कारण दूसरा विवाह नहीं कर सकती है। हमारे कानून में जो उसका पति है उसका उससे कोई सम्बन्ध नहीं है। क्या वह इस समाज में अधोगति में पड़ी रहे और अति कष्ट-दुःख भोगती रहे और फिर भी समाज उसको सम्मानपूर्वक दूसरा विवाह करने की इजाजत, किस तरह वह अपने बच्चों का पालन-पोषण कर सके, घर-गृहस्थी जमा सके, और अपना शेष जीवन सुखमय तरीके से बीता सके।

ऐसी परिस्थितियों में मैं चाहती हूँ कि स्त्री के पास यह अधिकार होना चाहिए। मैं चाहती हूं कि स्त्री के पास अधिकार होना चाहिए। मैं नहीं चाहती कि इस अधिकार का आम तौर से प्रयोग हो कि इसकी प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाये और हर एक स्त्री अथवा पुरुष इस तरह सोचने लगे कि वह जब चाहें तब उनका सम्बन्ध-विच्छेद हो सकता है जहां तक मैं समझती हूँ इस विधेयक में इतनी सहूलियत भी नहीं है कि जितना लोगों ने कह रखा है। सबसे बड़ी खूबी जो मुझे इसमें नजर आती है वह यह है कि हमारे यहां 80 फीसदी समुदाय, मैंने यह देखा है कि पंचायत बैठ गयी और एक मिनट में सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। कहीं-कहीं और कुछ समुदायों में तो पंचायत बैठ कर भी फैसला नहीं करती। स्त्री-पुरुष बिल्कुल आज़ाद हैं और एक-दूसरे को छोड़कर, वे जिसको भी

पसन्द करते हैं, उसके साथ शादी कर सकते हैं। ज्यादा से ज्यादा अगर बिरादरी में उन पर कुछ किया गया तो यह हुआ कि कुछ दण्ड दे दिया या जाति से अलग कर दिया और एक जाति-भोज देने के बाद वह फिर जाति में सम्मिलित हो जाते हैं। इस विधेयक के पास होने से उन जातियों को बहुत लाभ होगा, जिनमें सम्बन्ध-विच्छेद और तलाक को इतना हलका बना दिया गया है। उनके ऊपर भी यह विधेयक प्रतिबन्ध लगा देगा और इससे बहुत बड़ा लाभ यह होने वाला है कि जो हमारी पिछड़ी हुई जातियां हैं, जिनमें सांस्कृतिक पृष्ठभूमि नहीं है, वह सुसंस्कृत हो जायेंगी और नैतिक मापदंडों का विकास होगा। यह बहुत बड़ी खूबी मुझको इस विधेयक में मालूम होती है।

सबसे अधिक विरोध जो इस हिंदू संहिता विधेयक का किया जा रहा है, वह मैं समझती हूँ सम्पति के कारण किया जा रहा है कि इस हिंदू संहिता विधेयक में पिता की सम्पत्ति में एक लड़की को भी लड़के के बराबर उत्तराधिकार दिया जा रहा है। इस विरोध में तरह-तरह की बातें कही जा रही हैं। कुछ वक्ताओं का कहना है कि इसमें भाई-बहन का जो एक सरल स्नेह है, एक स्वाभाविक स्नेह है, वह नष्ट हो जायेगा और हमारी परम्परा, हमारे परिवार की सारी व्यवस्था इससे नष्ट हो जाने वाली है। यह बात मेरी समझ में नहीं आती, क्योंकि आज देखा यह जाता है कि किसी पिता के अगर दो पुत्र हैं या चार पुत्र हैं तो सब जगह यह जरूरी नहीं है कि भाइयों में परस्पर लड़ाइयां हों, झगड़ें हों। लेकिन साथ ही ऐसे भी किस्से सुनने में आते हैं कि वह एक दूसरे की जान के दुश्मन हो जाते हैं। तो इस तरह मैं यह समझती हूँ कि कल को यह मान लिया जाये कि सम्पत्ति का अधिकार होने के बाद भाई बहन में इस तरह का झगड़ा होने लगेगा और चुंकि इस तरह के झगड़े भाई-भाई में भी होते हैं और इस पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता। उस समय कोई भी संस्कृति की दुहाई देने वाले ने क्या कभी इसका प्रचार किया है कि इस विरासत की सम्पत्ति से भाई-भाई में झगड़े होते हैं और यह जाना चाहिए? क्या यह झगड़े हमारी सांस्कृति के अनुकूल हैं? हमारे धर्म की जो महत्ता है वह है परस्पर के सरल स्नेह में, प्रेम में और आपस के अच्छे सम्बन्ध बनाने में। यह हमारे धर्म के अनुसार हमारी संस्कृति है। मुझे और ऐसे दृष्टान्त दिखाई देते हैं कि जहां एक बहन है वह अपने भाई को बहुत अधिक प्रेम करती है। प्रेम बहुत प्रकार के होते हैं लेकिन यह प्रेम जो एक बहन अपने भाई के प्रति रखती है वह मैं समझती हूँ कि इतना सरल, इतना स्वच्छ होता है कि ऐसा प्रेम और नहीं हो सकता। इस प्रकार का प्रेम, भाई के प्रति उसके मन में होता है। हमारे वर्तमान कानून में प्रावधान है कि माँ का जो धन होता था, 'स्त्री-धन' और जो आभूषण माँ को मिलते थे, उसकी अधिकारिणी लड़की होती थी। लेकिन हर जगह यह देखा गया है कि बहन ने बैठ कर भाइयों के साथ उन अपने आभूषणों को बांटा है और किसी ने उसे कहीं लड़ते-झगड़ते नहीं देखा। यदि हमारी स्त्री का ऊंचा आदर्श कायम रहा है तो बहन भाई के लिये अपना सब कुछ त्याग करने को सदा प्रस्तुत रहेगी। ऐसी बहुत कम अवसर होंगे, जहां आपस में लड़ाइयां हुई हों। अगर थोड़ी देर के लिए यह भी माना

जाये कि ऐसा भी होने वाला है तो मैं कहूंगी कि आज कितना बड़ा अन्याय है। वह दृश्य मेरे सामने आ रहे हैं कि जो हमारे बड़े-बड़े ताल्लुकेदार हैं उनके यहां यह देखा जाता है कि पिता की सम्पत्ति पर भाई जश्न मना रहे हैं। वे खुद के लिये तीज आदि त्यौहारों में इतना खर्च कर देते हैं जो बहन के सारे जीवन के लिये काफी होता। यदि उसी घर में, अगर बहन विधवा हो कर जाती है और रहने लगती है तो उसका स्थान वहां सिर्फ रसोई की नौकरानी से ज्यादा अच्छा नहीं रह जाता। उसी घर में जहां कि आज पिता की संपत्ति पर, पिता के वैभव पर, भाई बहुत मजे करते हैं, उसी जगह मैंने बहन को अपनी आंखों से देखा है कि जो अपने छोटे बच्चों के लिये दूध के वास्ते भी तरसती है। उसके मन में भी इच्छा होती है कि मेरे भतीजे जिस तरह अच्छे कपड़े पहनते हैं, जिस तरह उनकी अच्छी शिक्षा होती है, उसी तरह मेरे बच्चों को भी खाने को मिले, पहनने को मिले, और अच्छी शिक्षा मिले। लेकिन कानून ने उसकी जबान पर ताला डाल रखा है। और इसलिये उसके आंसू उसकी आंखों में ही सूख कर रह जाते हैं। मैं बड़े अदब से पूछना चाहूंगी, उन लोगों से जो आज इसका विरोध कर रहे हैं, कि क्या यह हिंदू धर्म के अनुकूल है और यदि ऐसा है तो जो आज यह अन्याय नारी के ऊपर किया जाता है, उसकी अनुमति हमारे धर्म का कौन-सा सिद्धांत देता है? इसलिये मैं समझती हूँ कि जो इस विधेयक में यह पिता की सम्पत्ति में लड़की के अधिकार की बात रखी गयी है,वह समय के अनुसार बहुत उपयोगी है और हमारी संस्कृति और धर्म के अनुकूल है। और मैं उम्मीद करूंगी कि यहाँ बहुत उदारतापूर्वक इस पर विचार किया जायेगा।

इस प्रावधान के विरोध में बहुत लोगों ने यह भी कहा है कि यह विचार कि पैतृक सम्पत्ति में नारी का कोई हिस्सा होना चाहिये यह लोगों के मस्तिष्क की उपज है जिन पर विदेशी संस्कृति की छाप है और जिन्होंने भारतीय साहित्य नहीं पढ़ा है। मैं आपका बहुत समय न ले कर थोड़े ही समय में बताना चाहूंगी कि जिन्होंने लोक-संगीत सुना है, उसमें यह भावना आज से नहीं बल्कि सैकड़ों वर्षों से भरी हुई है। यह भावना हमारे लोक गीतों में हमारी मां-बहन के समय से नहीं, हमारी दादी परदादियों के समय से चली आ रही है कि जब कहीं पर भी विदेशी संस्कृति का नाम निशान तक नहीं था, जिस समय हमारी संस्कृति पर उसकी कोई छाप नहीं थी। शादी के समय हमारे प्रान्त में जो गीत गाये जाते हैं उनमें यह भावना भरी है और मैं समझती हूँ कि सभी प्रांतों में शादी के वक्त ऐसे गाने गाये जाते हैं। उन गीतों की पंक्तियों को मैं यहां दुहराना नहीं चाहती लेकिन संक्षेप में यह बताना चाहूंगी कि हमारे यहां विवाह पर जो गाने गाये जाते हैं, कम से कम हमारे प्रांत में, जहां से मैं परिचित हूँ। कुछ दूसरे प्रांतों का भी ग्रामीण साहित्य मैंने देखा है और वहां भी इस तरह की पद्धति है और गानों में बड़ी अच्छी भावना हमको मिलती है जहां लड़की यह विचार जाहिर करती है कि मेरे पिता का जो राज्य है उसमें मैं आधा हिस्सा चाहती हूँ। भाई उसको तरह-तरह के प्रलोभन देकर कहता है कि मैं तुझको थाल भर के जेवर दूंगा, घोड़े दूंगा, हाथी दूंगा और दहेज में इतना

सारा सामान दूंगा। लड़की कहती है कि अगर मेरे भाग्य में यह वैभव लिखा है तो यह तो मुझको अपने ससुर अपने पति के यहां भी जा कर मिल सकता है। लेकिन मैं तो अपने यहां आधा हिस्सा चाहती हूँ। मैं तो इसी घर में पली हूँ और यहां जो फुलवाड़ी है उसका हिस्सा चाहती हूँ, तालाब चाहती हूँ। तो इस तरह की भावना के लिये जो लोग कहते हैं कि यह विदेशी साहित्य का असर है या विदेशी शिक्षा का असर है या विदेशी संस्कृति का असर है, या विदेशी शिक्षा में पढ़े हुए लोगों के दिमाग की उपज है, यह बात बिल्कुल निराधार है। यह भावना पुराने साहित्य में भरी पड़ी है और जो पुराने ग्राम गीत हैं उनमें तरह-तरह के ऐसे दृष्टान्त मिल जायेंगे, जिनमें यह भावना होती है।

और कुदरत ने लड़के-लड़की को माता-पिता के लिये बिल्कुल एक-सा बनाया है। आज क्या कारण है कि पिता की सम्पत्ति में भाई का हक होता है, लड़की का कोई अधिकार नहीं है? मैं समझती हूँ कि यह भी एक अन्याय है। यह दूसरी चीज है कि आज हमारे समाज की जिस तरीके की व्यवस्था है, उनके अनुसार शायद कुछ लोगों को इस विधेयक को अमल में लाने में सन्देह और मुश्किल मालूम हो, क्योंकि हमारे समाज में हमारी सोसायटी में 'दामाद' की जो प्रतिष्ठा है, विशेष किस्म की जो है। जिन्दगी भर उसको 'जमाई बाबू' या 'पाहुना' कह कर पुकारा जाता है और कभी भी वह उस परिवार का सदस्य नहीं बन पाता। मैं समझती हूँ कि अगर यह अधिकार लड़की को मिल जाता है, तो उससे जो दूसरे घर का लड़का अपने घर में दामाद बन कर आयेगा, वह भी उसी तरीके से जिस तरह से एक पिता के दो लड़के हों। कन्या परिवार के सदस्य के तौर पर एक तीसरे लड़के की तरह रह सकता है और इस तरह से आपस में मोहब्बत बढ़ सकती है। यह दलील मुझे अपील नहीं कर पाती कि इससे भाई बहिन का जो आपस का सम्बन्ध है, वह खराब हो जायेगा, यह वह नष्ट हो जाएगा। मैं ऐसा नहीं समझती कि अगर यह कानून पारित हो जायेगा तो हमारी सामाजिक मर्यादा, हमारी सांस्कृतिक मर्यादा, हमारी धार्मिक मर्यादा सारी छिन्न भिन्न हो जाएगी। मैं इस तर्क से सहमत नहीं हूँ। इन शब्दों के साथ मैं यह आशा करती हूँ कि जिन लोगों ने हमारा नया सं. विधान पारित किया है, जो सामने आए हैं हमारे सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन करने और जिन्होंने संविधान में स्त्री को समानाधिकार देने की बातें कही गयी हैं, एक ठण्डे दिमाग से महिलाओं की वर्तमान स्थिति पर विचार करेंगे। उन्हें ध्यान से सुनने दें कि आज समय की क्या मांग है। समय की क्या पुकार है, किस अधिकार को हमको तुरन्त दे देना चाहिये। विद्वानों, साहित्यकारों और इतिहासकारों का मत है कि कोई भी समाज जब तरक्की के मैदान में आगे होता है, तो जो परिवर्तन उसको तुरन्त कर डालने चाहिए, अगर वह परिवर्तन तुरन्त नहीं कर डालता, तो वह समाज तरक्की में शताब्दियों पीछे पिछड़ जाता है। दूसरी तरफ, अगर वह समय की मांग का और समय की आवश्यकता का अनुभव करके जो परिवर्तन उसे तुरन्त कर डालने चाहिये, अगर वह

उसे तुरन्त कर डालता है तो हमारी तरक्की होती है। मैं यह आशा करती हूँ कि यह विधेयक वर्तमान सदन द्वारा ही यहां पारित होगा, क्योंकि यहां वे व्यक्ति इस असेम्बली में अधिक संख्या में मौजूद हैं जो कि महात्मा गांधी के अनुयायी कहे जाते हैं। महात्मा गांधी वह महापुरुष थे, जिन्होंने हमारी भारतीय नारी-समाज की समस्याओं और हमारे व्यवधानों को बहुत अच्छी तरह से समझा और राजनीतिक क्रांति के साथ-साथ उन्होंने हमारी जो पुरानी सामाजिक रूढ़ियां थीं, उनको बहुत जल्द तोड़-फोड़ कर फेंक दिया। मैं समझती हूँ कि उस महात्मा गांधी के अनुयायी इस विधेयक पर सहानुभूति और उदारतापूर्वक हमारे धर्म और संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में विचार करेंगे। अन्त में मैं फिर एक बार अपने माननीय मंत्री महोदय को नारी समाज की तरफ से यह विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि इस देश की वे सब नारियां जो इसको समझ सकी हैं, वे इसका हृदय से स्वागत करने जा रही है। और वे नारियां जो आने वाली पीढ़ी की हैं वह भी इस विधेयक के पारित करने के लिये उनका आभार मानेंगी।

***श्री कामेश्वर सिंह, दरभंगा (बिहार : सामान्य) :** महोदय, इस सत्र के पहले दिन हमारे समक्ष इस सभा में विधेयक के बारे में प्रधान मंत्री ने जो कुछ कहा उसके बाद हमारे लिए, जो सरकार की ओर से पेश किये गये प्रस्ताव का विरोध करते हैं, इस वाद-विवाद में भाग लेना कठिन हो गया है। जब उन्होंने अपना वक्तव्य दिया उस समय मैं सभा में उपस्थित नहीं था लेकिन समाचार-पत्रों में प्रकाशित खबरें सही हों, तो उन्होंने विधेयक को पारित करने के प्रश्न को अपनी सरकार में विश्वास का एक प्रश्न बना लिया है। मैं इस विधेयक का पुरजोर विरोध करता हूँ। (व्यवधान)

माननीय उपाध्यक्ष : शांति, शांति। यदि इस प्रकार व्यवधान डाला जायेगा तो कुछ नहीं होगा। व्यवधानों से केवल सदस्यों द्वारा लिये जाने वाले समय में वृद्धि होगी।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : स्पष्टतया माननीय सदस्य एक बहुत अच्छा भाषण दे रहे हैं।

श्री कामेश्वर सिंह, दरभंगा : लेकिन मेरा यह दृष्टिकोण भी उतना ही स्पष्ट है कि इस समय हमारे देश की जो स्थिति है उसे देखते हुए हमारे प्रधानमंत्री की सरकार सर्वोत्तम है। इसमें जितनी भी खामियां हों, वर्तमान सरकार का बेहतर विकल्प उपलब्ध नहीं है। मैं समझता हूँ जिन लोगों का किसी राजनैतिक दल से सम्बन्ध नहीं है उनमें से अधिकांश की यही राय है। अत: हमारे प्रधानमंत्री द्वारा अपनाया गया रुख, मेरे जैसी विचारधारा वाले लोगों के लिए 'अवपीड़न' नहीं तो 'अनुचित प्रभाव' की शक्ल ले लेता है। अत: मैं ईमानदारी से प्रधानमंत्री से इस मामले पर पुनर्विचार करने और इस विधेयक

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 13 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 541-43

को पारित किये जाने के प्रश्न को अपनी सरकार में विश्वास के प्रश्न से न जोड़ने का अनुरोध करता हूँ।

मैं चाहता हूँ कि सभा तथा सरकार इस विधेयक पर आगे विचार तब तक के लिए स्थगित कर दें जब तक जैसे कि पिछले वर्ष हमारे प्रधानमंत्री को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद द्वारा भेजे गये नोट में दिये गये कारणों से एक, आगामी आम चुनावों में मतदाताओं की आकांक्षाओं का पता नहीं लग जाता।

इस सभा के माननीय सदस्य जानते हैं कि इस विधेयक पर जिसे यदि मैं कहूँ क्रांतिकारी चरित्र का विधेयक के सम्बन्ध में अलग-अलग राय हैं। इससे काफी लोगों की व्यक्तिपरक विधि पर प्रभाव पड़ता है। इससे उनके सामाजिक और आर्थिक जीवन तथा रीति-रिवाजों पर भी प्रभाव पड़ता है जिनका विकास पिछली कई शताब्दियों में हिंदू विधि की विभिन्न विचारधाराओं के साथ हुआ है। एकरूपता और संहिताकरण के नाम पर इससे, मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों और यहूदियों को छोड़कर, पूरे हिंदू समुदाय के मूलभूत सामाजिक और धार्मिक ढांचे को मनमाने ढंग से तोड़ने का खतरा हो गया है। महोदय, मैं इस विधेयक सम्बन्धी प्रवर समिति के प्रतिवेदन में दिये गये आपके तथा श्री राम नारायण सिंह के द्वारा असहमति में दी गई टिप्पणियों से पूरी तरह सहमत हूँ। वर्तमान विधानमंडल के सदस्यों को इस विधेयक के मुख्य मुद्दों के बारे में भी जनता का जनादेश प्राप्त नहीं है। आखिरकार, आगामी चुनाव ज्यादा दूर नहीं है और इस मामले को तब तक के लिए स्थगित कर दिया जाता है, तो भी कुछ नहीं बिगड़ेगा।

मेरा यह निश्चित मत है कि इस विधेयक में जिस प्रकार के महत्वपूर्ण परिवर्तनों का प्रस्ताव किया गया है, इस ढंग से नहीं किये जाने चाहिए। हिंदू विधि समिति के समक्ष रखे गये विचारों की समीक्षा करें तो हमें पता चलेगा कि इस विधेयक का पुरजोर विरोध किया गया है। मैं उस वर्ग का व्यक्ति हूँ जो स्मृति और उसकी व्याख्या को परम पावन समझता है; और मैं जिस वर्ग का हूँ उसमें देश की कुल आबादी के अधिकांश लोग आते हैं। हम विवाह, उत्तराधिकार आदि जैसे विषयों को अपने धार्मिक कर्त्तव्य और दायित्व का अंग समझते हैं। हमारे लिए ये चीजें धर्मनिरपेक्ष अथवा सामाजिक तथ्यों से अधिक महत्व रखती हैं।

यह सही है कि सामाजिक ढांचे में धीरे-धीरे परिवर्तन आया है और परिस्थितियों के दबाव में इसमें परिवर्तन आ रहा है। किन्तु ऐसे परिवर्तन अपने आप विकसित हुए हैं और उन्हें ऊपर से थोपा नहीं गया है। इसके अलावा इन परिवर्तनों से आमतौर पर उन सिद्धांतों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, जिस पर विभिन्न हिंदू समाजों पर लागू विधियां आधारित हैं। अब प्रश्न यह है कि क्या विधेयक में प्रस्तावित परिवर्तन ऐसे हैं जो आम जनता ने स्वीकार कर लिये हैं और अब उनके लिए केवल कानूनी मंजूरी की

आवश्यकता है। इसके उत्तर में मैं जोर देकर कहूंगा "नहीं"। निस्संदेह स्मृति के लेखक और उनके व्याख्याता समय-समय पर परिवर्तन करते रहे हैं किन्तु वे ऐसा तब करते थे जब वे उन्हें लोकमत के आधार पर लागू करने की स्थिति में होते थे। अधिकांश लोगों को उनके पाण्डित्य, उनकी दूरदर्शिता, उनकी प्रयोजन शुचिता और सबसे अधिक उनके आचरण में विपुल आस्था होती थी। इस प्रस्तावित बीसवीं शताब्दी के स्मृति-प्रवर्तकों की ऐसी कोई पृष्ठभूमि नहीं है। जनता के दिलों में उनका वह स्थान नहीं है, जो उन प्राचीन स्मृतिकारों के लिए था जिनके समादेश आज भी बहुत से लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं। देश के विभिन्न भागों में जो विभिन्नता दिखाई देती है वह इस तथ्य का एक बड़ा प्रमाण है कि हिंदू व्यक्तिपरक विधि को लोगों ने स्वतः स्वीकार किया है और उसे किसी केन्द्रीय राजनैतिक प्रधिकरण द्वारा थोपा नहीं गया है। अनेकता में एकता हिंदू जीवन और धर्म का एक मुख्य लक्ष्ण है और हमें प्रतीयमान अनेकता को कोई ऐसी बुराई नहीं समझना चाहिये जिसे तुरन्त दूर करना आवश्यक है।

प्राचीन विधिवेताओं और वर्तमान विधिवेताओ के दृष्टिकोण में मूलभूत अन्तर यह है कि जबकि पूर्ववर्ती के विचार का आधार शुद्ध रूप से आध्यात्मिक होता था, उत्तरवर्ती के विचार का आधार पूर्णतया वस्तुपरक है और इसे स्वीकार करने का अर्थ हमारे जीवन दर्शन, हमारी परम्परा की अविच्छिन्नता और हमारी संस्कृति की नींव को तिलांजलि देना है। अतः मैं अपनी ओर से ऐसा करने के लिए तैयार नहीं हूँ।

इसके अलावा मुझे अशंका है कि इस विधेयक के प्रावधानों को कार्यान्वित करने में व्यवहारिक कठिनाइयां होंगी। कल्पना कीजिये कि सरकार को लोगों को यह शिक्षा देने में कितना समय लगेगा कि उन्हें अपने विवाहों का पंजीकरण करवाने के लिए न्यायालय जाना चाहिये। कल्पना कीजिये कि अमान्य और शून्यकृत विवाहों के प्रावधान कितनी उलझनें और विभ्रांतियां पैदा करेंगे। कल्पना कीजिये कि विवाह विघटन और तलाक के प्रावधान से उन लोगों का घरेलू जीवन कितना तबाह होगा, जिनकी समाज के बारे में धारणा उस धारणा से बिल्कुल अलग रही है, जिस पर वे प्रावधान आधारित हैं। मैं इस विचार से सहमत नहीं हूँ कि केवल दुसाध्य मामले ही उपचार के लिए आयेंगे। मुझे आशंका है कि रुचि रखने वाले बहुत से लोग अपने निजी स्वार्थ की पूर्ति के लिये अपने पड़ोसियों, सम्बन्धियों का घरेलू जीवन तबाह करने के लिए सामने आयेंगे। इसी प्रकार उत्तराधिकार सम्बन्धी प्रावधानों से सम्पत्ति का प्रबन्धन कठिन हो जायेगा और समाज में चालाक लोगों द्वारा षडयंत्र का एक बड़ा स्रोत बन जायेगा। वकील और अदालतें तो फल-फूल सकती हैं, किन्तु परिवार टूट जायेंगे और घरेलू शान्ति खत्म हो जायेगी।

हिंदू विधि समिति के एक सदस्य डॉ. द्वारकानाथ मित्तर के प्रतिवेदन में काफी सारे हिंदुओं के विचार दिये गये हैं। उन्होंने जिन तथ्यों के आधार पर अपने निष्कर्ष निकाले हैं, उनका खण्डन नहीं किया जा सकता। समिति के अन्य सदस्यों का प्रतिवेदन

डॉ. मित्तर द्वारा अपने तर्क के समर्थन में दिये गये अखण्डनीय तथ्यों को स्पष्ट करने का मात्र एक प्रयास है। ऐसा प्रतीत होता है कि समिति के अधिकांश सदस्यों ने प्रमुख मुद्दों के बारे में अपना मन पहले ही बना लिया था और उन्होंने उनके समक्ष विभिन्न तरीकों से व्यक्त लोकमत की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। मुझे आश्चर्य होता है कि आज की भारत सरकार से, जो लोकमत के प्रति इतनी संवेदनशील है, इस सभा के समक्ष इस प्रकार का विधान लाना उचित समझा है। हिंदू समुदाय में कुछ तथाकथित 'प्रगतिशील' तत्वों की भावनाओं को तृप्त करने के लिए सरकार को ऐसा विधान नहीं लाना चाहिये था, जिसका अधिकांश हिंदू विरोध करते हैं। यदि वे लोग जो इस विधान को स्वीकार करने की बात करते हैं, गांवों का भ्रमण करें और इस विधेयक के प्रावधानों के बारे में हिंदुओं की प्रतिक्रिया एकत्र करें, तो मुझे विश्वास है कि उन्हें संतोषजनक समर्थन नहीं मिलेगा। कम से कम मेरे प्रांत में लोकमत निश्चित रूप से इस विधेयक के विरुद्ध हैं।

***डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया (मद्रास : सामान्य) :** महोदय, मैं जब से आप के समक्ष खड़ा हुआ हूँ मुझे मित्रों से कुछ आवाजें सुनाई दी हैं। कुछ कहते हैं "समर्थन करो", अन्य कहते हैं "विरोध करो।"

श्री बी.एल. सौंधी (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : आप दोनों करिए।

डॉ. बी. पट्टाभी सीता रमैया : संभवतया मैं दोनों कर रहा हूँ, क्योंकि ऐसे मामले में हमारा कर्तव्य है कि हम हठधर्मी न बनें। महान् लोग और बेवकूफ ही हठधर्मी होते हैं और मैं दोनों में से किसी का दावा नहीं करता। अधिक अच्छा यह होगा कि हम अपने विचारों और दूसरों में तारतम्य स्थापित करें और कोई बीच का रास्ता निकालने का प्रयास करें जो हमने आरम्भ में गणित से सीखा है। समाज के ढांचे और कार्यप्रणाली पर पहुंचना आवश्यक है, क्योंकि समाज एक जीवन संगठन है न कि एक प्राणहीन संयुक्त स्टाक कम्पनी, जिसका एक अपना ज्ञान और अनुच्छेद होते हैं जो पंजीयक को तीन रुपये देकर किसी भी दिन बदले जा सकते हैं। यह हमारा यह समाज, जो हमें विरासत में मिला है और जिसका सदस्य कहलाने में हमें गर्व हैं, संभवतया हजारों वर्षों से अस्तित्व में है।

बाबू राम नारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : सृष्टि के आरंभ से।

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : यह कोई नहीं जानता कि यह कब अस्तित्व में आया। कम से कम मैं कौटिल्य के अर्थशास्त्र से मिले प्रमाण के आधार पर यह कह सकता हूँ कि इसने 2300 वर्ष पूर्व पूर्णता प्राप्त कर ली थी। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 13 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 543-52

में जिन विवाह, अपराध, दण्ड सम्बन्धी समस्याओं तथा मनोवैज्ञानिक उलझनों, राजनैतिक समस्याओं का उल्लेख किया है वे आज भी बिना किसी अन्तर के हमारे सामने हैं। मेरे जिन मित्रों ने वह पुस्तक नहीं पढ़ी है, उनसे मैं वह पुस्तक पढ़ने का अनुरोध करूंगा। सूकर नीति सार पढ़िये हमारी प्राचीन हिंदू विधि की अन्य राजनैतिक रचनायें पढ़िये।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती : दुर्भाग्यवश कौटिल्य का अर्थशास्त्र यहाँ उपलब्ध नहीं है।

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : यह उन लोगों को अवश्य उपलब्ध है, जो इसे प्राप्त करने का इरादा रखते हैं।

श्री एल. कृष्ण स्वामी भारती : किंतु मैंने भरसक प्रयास किया है।

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : अत: मैं सदन से उन पूर्व उदाहरणों और प्रगति की परिस्थितियों तथा विकास की परिस्थितियों पर गौर करने का अनुरोध करता हूँ जो 'हिंदू समाज' में परिवर्तन के प्रतीक हैं। मैं यह नहीं कहता कि हमें हिंदू समाज और हिंदू संस्कृति पर गर्व होना चाहिये। किन्तु जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं। वह बहुधा हिंदू संस्कृति है और जिसे भारतीय कहा जाता है, अधिकांशत: हिंदू समाज है। और यदि अन्य लोग यहां आये हैं और हमसे मिल गये हैं जैसे जाट, मुगल, तुर्क, अंग्रेज और अन्य, तो उन्होंने शायद हमारी बहुत-सी अच्छी बातों को आत्मसात किया है और उन्होंने हमें अपनी बहुत-सी अच्छी बातों को आत्मसात करने का अवसर दिया है और इसलिए हजारों वर्षों के इन संस्कृतियों के संगम से हमारी अपनी संस्कृति, विषय-वस्तु और मात्रा की दृष्टि से समृद्ध भी हुई है। अब हम इस वैभवशाली विरासत के उत्तराधिकारी हैं। हम इससे कैसे निपटेंगे? क्या इसके पीछे कोई दर्शन है या यह मात्र बेतरतीब विकास है? परिस्थितियों का संवर्धन, एक बेढंगी रचना जिसमें समानान्तर शक्तियां एक दूसरे से मूलभूत रूप से मिले बिना एक-दूसरे के समीप हैं या क्या यह एक ऐसा विलयन तथा सभी विभिन्न शक्तियों का समीकरण है जिस की खूबियां लुप्त हो गई हैं और दोष सामने आ गये हैं? हमें इन मुद्दों पर विचार करना है। क्या हमने यह बड़ा सुधार करने से पूर्व इन मुद्दों पर विचार किया है? इस सुधार का सूत्रपात किसने किया है? इसका सूत्रपात कब हुआ? किसके समय में इसका सूत्रपात हुआ? क्या इसे राष्ट्रीय सरकार के अस्तित्व में आने के बाद हाथ में लिया गया है या क्या यह पिछली सरकार की मात्र विरासत है, जो हमें सचिवालय के माध्यम से मिली है? इसमें हमने क्या किया है? इससे निपटने में हमारी क्या भूमिका है? मैंने आपको बताया है कि समाज, एक जीवन्त रचना है। इसके पीछे कुछ दार्शनिक तथ्य हैं। इसके समक्ष आर्थिक प्रस्ताव हैं। हिंदूस्तान को ही लीजिये। क्या आप ने विश्व में कोई ऐसा समाज देखा है, जो हिंदू समाज से जन्मजात और आन्तरिक दृष्टि से अधिक समाजवादी हो?

मेरे पास पचास एकड़ भूमि है। मेरे दो बेटे हैं। मेरे दो बेटे 25-25 एकड़ भूमि के वारिस हैं। मेरे पहले बेटे के चार बेटे हैं। प्रत्येक लड़के के हिस्से में केवल छह एकड़ भूमि आती है। क्या हमारी विरासत की प्रणाली में भूमि संचित हो सकती है? बिल्कुल नहीं। यह सर्वोत्तम किस्म का समाजवादी ढांचा है। आप इस समाजवादी ढांचे को तबाह करना चाहते हैं और इसके स्थान पर एक व्यक्तिपरक सभ्यता लाना चाहते हैं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की अपनी सम्पत्ति होती है, जिसमें सम्पत्ति पर जन्म से नहीं, अपितु उत्तरजीविता से उत्तराधिकार मिलता है। तब क्या होता है?

व्यक्तिपरक सम्पत्ति अस्तित्व में आती है। संभवतया अगला कदम डॉ. अम्बेडकर का सामान्य जन के लिए प्रजनन विधि के बारे में विधेयक होगा। तब आप एक अभिजात तंत्र का सृजन तथा रखरखाव करेंगे। आप वर्गों में बंटे एक समाज का निर्माण कर रहे हैं न कि वर्गविहीन समाज का। एक वर्गविहीन समाज का स्थान, जिस में विद्या और सम्पत्ति, विद्या और धन संतुलित होते हैं, एक ऐसा समाज ले लेगा जिसमें सम्पत्ति का बोलबाला होगा। पश्चिमी देशों में ऐसा ही होता है। यह ऐसी चीज है जो पूर्व में नहीं हो सकती। यहां हमने एक सामाजिक संगठन प्रणाली के माध्यम से धन और संस्कृति को संतुलित कर दिया है और उन्हें अस्तित्व में लाने के बाद हमने धन की अपेक्षा संस्कृति को अधिक महत्व दिया है। धन का यहाँ गौण स्थान है। अब आप क्या करने जा रहे हैं? आप एक वकील को दस लाख रुपये संचित करने की अनुमति देते हैं। वह सर्वोच्च मालिक है। उसे वह पूरा धन मिल गया है जो उसके भाई उसे इंग्लैण्ड भेजने और विधिवेत्ता (बेरिस्टर-एट-लॉ)) बनाने के लिए देते। लेकिन उसने जो शिक्षा ग्रहण की है वह विधि के अनुसार उसकी अपनी सम्पत्ति है। यह कानून अंग्रेजों ने बनाया है, हमें उनके इन आदर्शों के लिए उनका धन्यवाद करना चाहिये। अब, जबकि अन्य लोगों को, अन्य भाइयों को, कृषकों तथा व्यापारियों को, जिन्होंने उसी प्रकार धर्मपरायण होकर परिश्रम किया है, शिक्षित विधिवेत्ता के साथ अपनी सम्पत्ति बांटनी होगी, विधिवेत्ता को अपनी सम्पत्ति उनके दो भाइयों के साथ बांटने से छूट है। क्या यह न्याय है? हमारे समाज ने जो नेक मानक अपनाये हैं उनकी तुलना में यह अन्यायपूर्ण मूर्खता है।

अब हम यहां एक क्षण के लिए रुकते हैं और एक प्रश्न पूछते हैं: 'क्या आपने इस समाज के ढांचे और कृत्यों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक पहलुओं पर विचार करने के लिए कोई आयोग नियुक्त किया है? क्या आपने इस ढांचे के पीछे मनोविज्ञान के अध्ययन पर आधारित प्रतिवेदन प्राप्त किया है, जिसने निस्संदेह कम से कम पांच हजार वर्षों की अवधि के लिए समय के थपेड़ों को सहन किया है। यह अवधि तेरह हजार वर्ष भी हो सकती है तथा तीस हजार वर्ष भी हो सकती है क्योंकि महाभारत और वैदिक युग के बारे में, हमारे समाज के बारे में और प्राचीन सभ्यता के बारे में ये तीन वृतांत मिलते हैं। यह कैसी विडम्बना है कि आप ऐसा नहीं करते। यदि

आप आयातित किये जा रहे लोहे की अल्प मात्रा के शुल्क में छूट देना चाहते हैं, तो 3000 रुपये प्रति व्यक्ति पाने वाले तीन व्यक्तियों की आप नियुक्ति करते हैं, उनका एक टेरिफ बोर्ड बनाते हैं, देश के सभी पूंजीपतियों से प्राप्त सबूत के आधार पर उनसे एक प्रतिवेदन प्राप्त करते हैं, तत्पश्चात् आप उस पर वित्त विभाग में विचार करते हैं, आप उसे विधानसभा के समक्ष रखते हैं। और उसके बाद शुल्क में राहत देते हैं। आपने हमारे समाज के बारे में क्या किया है? आप इस पर इस प्राचीन समाज, इस प्राचीन वर्बरता के स्मृति चिन्ह पर, इस पुराने रद्दी माल पर, झपट्टा मारते हैं। नहीं; आप कहते हैं "हमें पूरा समर्थन करना चाहिये।"

हमने लंदन की शैली के अनुरूप अपने विश्वविद्यालय बनाये हैं; हमने लंदन के उच्च न्यायालयों के अनुरूप अपनी कानूनी पद्धति अपनाई है और हमने पश्चिमी देशों की संसद की तरह अपनी विधान परिषदों तथा विधानमंडलों का गठन किया है और अब हमारे लिए पश्चिमी समाज, पश्चिमी रिवाजों, पश्चिमी सामाजिक संस्थाओं और पश्चिमी नागरिक कानूनों की नकल करना शेष रह गया है। कृपया मुझे गलत न समझें। मुझे काफी समय से तलाक से हमदर्दी हो रही है। मैं अपनी पत्नी को तलाक देने की बात सोचता रहा हूँ और मैंने यह भी सुना है कि वह भी तलाक लेना चाहती है। मुद्दा यह नहीं है। मैं आपको बता दूं कि मुझे इस विधेयक के कई प्रावधानों से हमदर्दी है। किन्तु मैं आपको बताना चाहता हूँ कि आप स्वराज प्राप्त करने के पश्चात् भारत की संस्थाओं के प्रति किस प्रकार का दृष्टिकोण और रुख अपना रहे हैं। यह सरलीकरण, इस प्रश्न से निपटने का यह नितान्त तात्कालिक तरीका, मेरी समझ तो क्या मेरी कल्पना को भी पसन्द नहीं आता। लेकिन मैं जानता हूँ कि आप मुझे कहेंगे: "ओह, यह विधेयक तब से अधर में लटका हुआ है, जब से कांग्रेस ने विधानमंडल को छोड़ा है।" मैं मानता हूं कि यह अधर में लटका हुआ है। तथापि आप याद करें कि जुलाई, 1938 में कांग्रेस ने यह संकल्प पारित किया था कि इसे विधानमंडल का बहिष्कार करना चाहिये, क्योंकि मिश्र और सिंगापुर में फौजें भेजी गई थीं जिन्हें उस समय भारत की सीमायें समझा जाता था। अत: उस कार्यवाही के प्रति विरोध के रूप में और सरकार के आश्वासन भंग के विरोध के रूप में, विशेष अनुज्ञा के बिना विदेशों में कोई सेनायें नहीं भेजी जाएंगी, हमने विधानमंडल का बहिष्कार किया था और उसके बाद हमने 1946 तक विधानमंडल में प्रवेश नहीं किया। इस अवधि के दौरान उन लोगों को जो देश भक्त नहीं थे, जो पश्चिमी सभ्यता के आश्रित थे, जिन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी इंग्लैण्ड या अन्य देशों में बिताई, एक समिति में शामिल कर लिया गया और उन्होंने हमारे लिए यह नियम बनाया। अक्तूबर, 1944 में, जब हम अहमदाबाद जेल में थे, हमें हिंदू विधि सुधार समिति का पहला प्रतिवेदन प्राप्त हुआ। अब इस विधान के मुख्य प्रेरक तथा एजेन्ट श्री बी.एन. राउ हैं, जिनके कारण हमें वह सब कुछ मिला है जो नये संविधान में है। वह एक वकील हैं

और संवैधानिक विधि जाति विधि, संहिताबद्ध विधि तथा परम्परागत विधि में माहिर होने के लिए जाने जाते हैं। वह एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने हमारी काफी सहायता की। वह बंगाल में, जहां दायभाग प्रथा प्रचलित है, कलकत्ता उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश थे। मैं समझता हूँ, आप जानते हैं कि मिताक्षर मद्रास तथा एक या दो अन्य प्रांतों में प्रचलित है जबकि बम्बई में मायूख एक विधि है। इन महानुभाव ने जिन्हें मिताक्षर का कोई अनुभव नहीं था और जो कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे। अतः जिनके विधि के ज्ञान को चुनौती नहीं दी जा सकती, इसका सूत्रपात किया है। बाद में कांग्रेस दल या लोकप्रिय दल को केन्द्रीय विधानमंडल में इस प्रश्न पर विचार करने का कभी कोई अवसर नहीं मिला। जब श्री अशोक राय विधि मंत्री बने तो उन्होंने कहा कि वह इस विधेयक को बार्ज पोल से भी नहीं छुएंगे (**श्री महावीर त्यागी** : बार्ज पोल क्या होता है) 'बार्ज पोल' ऐसा खम्भा होता है, जिसका प्रयोग जलाशय में नौका चलाने के लिए किया जाता है। अन्ततः यह मामला सभा के समक्ष आया है; और हमने अपने चुनाव घोषणापत्र में इसका कोई उल्लेख किये बिना भी इसे इस प्रकार उठाया है मानो हम इसकी बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। क्या आप ने कभी कोई ऐसा दल देखा है जो एक व्यापक घोषणा-पत्र तैयार करता हो और उसमें चीन से पेरू तक सभी प्रश्न शामिल करता हो, महत्वपूर्ण उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करने, मद्यनिषेध और जमींदारों तथा कई अन्य चीजों का उन्मूलन करने का विचार तो रखता हो किन्तु सामाजिक सुधार के बारे में एक शब्द भी न कहे, यही भारत के मामले में केन्द्र बिन्दू है?

यह केवल सामाजिक सुधार का मामला ही नहीं है। भारत में समाज धर्म से काफी जुड़ा हुआ है। धर्म ही सभी चीजों की स्वीकृति देता है। अब मैं अत्यन्त अधार्मिक व्यक्ति हूं किन्तु मैं अपने पड़ोसी की भावनाओं का सबसे अधिक ध्यान रखता हूँ। अन्यथा मैं एक असभ्य पशु हूँ। यदि मैं अन्य लोगों की धारणाओं को चोट पहुंचाता हूँ, तो मैं जो नमक खाता हूँ उसके योग्य नहीं हूँ। अब न केवल धर्म, अपितु आर्थिक, सामाजिक और अन्य चीजें, भी आपस में जुड़ी हुई हैं। संयुक्त परिवार पद्धति युगों की देन है। यह संयुक्त परिवार पद्धति क्या है? यह एक बीमा न्यास है; यह एक सहकारी संघ है; यह एक श्रमिक संघ है।

यह एक ऐसी श्रमिक संस्था है जिसके सभी सदस्य परिश्रम करते हैं, यह एक ऐसी सहकारी संस्था है जिसमें सभी मिल-जुलकर रहते हैं। यहाँ प्रत्येक सभी के लिए और सभी प्रत्येक के लिए हैं और यह एक ऐसा बीमा संघ है जिसमें मृत भाई की विधवा की देखभाल जीवित भाई करते हैं। महात्मा गांधी ने बीमा का विरोध करते समय यही कहा था। किन्तु मैं जानता हूँ सभी महात्मा जी नहीं हैं। संयुक्त हिंदू परिवार इन तीन विशेषताओं का संगम है जो धार्मिक पृष्ठभूमि पर आधारित है और सामाजिक बंधन से बंधा हुआ है। क्या आप कठिन परिश्रम करके, हर प्रकार का कानून बनाकर और

इंग्लैण्ड के कानूनों की नकल करके इसके समानान्तर व्यवस्था खड़ी कर सकते हैं? आप इससे अधिक कुछ नहीं कर सकते जितना कि हाथ की कताई की अर्थव्यवस्था ने किया है जो राष्ट्रपिता गांधी ने पुन: खोजा है। माफ करें मैं धृष्टता के साथ यह कह रहा हूँ कि मैंने 1938 में एक पुस्तक लिखी थी जिसको 'हिंदू होम रीडिस्कर्वड' कहा जाता है। चूंकि मैंने एक अधर्मी की तरह जीवन में प्रवेश किया, ईसाई परम्पराओं और पश्चिमी धर्म के अनुसार मेरा पालन-पोषण हुआ, मैं हिंदू समाज के हर त्यौहारों में, हर समारोह में और हर धार्मिक अनुष्ठान में काफी कुछ धार्मिक, उत्साहपूर्ण, प्रेरणादायक और परिष्करणकारी अनुभव करने लगा। तब मैं अपनी बहनों अपने भाइयों के साथ रहने लगा तो मुझे ऐसा लगा जैसे मुझे कोई नया घर मिल गया है और पच्चीस वर्ष बाद मैंने यह छोटी-सी पुस्तक लिखने का साहस किया जिसमें मैंने इन चीजों को आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। मैं यह नहीं कहूँगा कि जीवन में ऐसे आदर्श विद्यमान नहीं हैं किन्तु जब आप किसी संस्था पर विचार करते हैं तो आपको इसके शुद्ध स्वरूप पर विचार करना चाहिये न कि इसके विकृत स्वरूप पर। यदि आप किसी धारणा को आदर्श रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं, किसी संस्था को लोकप्रिय बनाना चाहते हैं और इसे पुनर्जीवित करना चाहते हैं तो इसे बीज रूप में राष्ट्र के समक्ष रखें और उस पर राष्ट्र की सहमति प्राप्त करें। मैं आपको आश्वासन दे सकता हूँ कि मैं जहां कहीं जाता हूँ तो मैं इस विधेयक के सभी पहलुओं की अच्छाइयों और बुराइयों को लोगों के सामने रखता हूँ। पार्सन के अंडों की तरह इस विधेयक के कुछ अंश अच्छे हो सकते हैं और इसके कुछ अंश खराब हो सकते हैं। यदि आप कहते हैं कि आपको महिलाओं के लिए यह करना चाहिये महिलायें अपने आपको पहचानने लगी हैं तो मैं कहूंगा कि ऐसा जरूर कीजिये। लेकिन इसमें इतनी जल्दबाजी क्यों? मैं चाहता हूँ कि वे अपने को पहचानें, वे अपने को पहचान गई हैं और अगली विधानसभा में मुझे पूरा विश्वास है, हमारी बहनें आधे स्थान भर सकती हैं। कुल संख्या पाँच सौ में से अढ़ाई सौ महिलायें हो सकती हैं, यदि वे ऐसा ठान लें तो!

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्या आप उनको अनुमति देंगे?

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : जब राजकुमारी जी ने प्रांतीय आदर्श संविधान समिति के समक्ष यह कहा कि महिलाओं को किसी आरक्षण की आवश्यकता नहीं है तो मैंने उनकी प्रशंसा की थी। मैंने सोचा कि ऐसा वक्तव्य देना उनके लिए एक साहस का काम है और एक बड़ी जिम्मेदारी लेने का काम है। किन्तु अब मुझे मालूम हो गया है कि वे अपने हितों का ध्यान रख सकती हैं। यदि इस सभा की आधा दर्जन महिला सदस्य हमें पंजों के बल से खींच सकती हैं और हमें इस विधेयक पर विचार करने के लिए विवश कर सकती हैं, तो मैं हैरान हूँ कि तब हमारी स्थिति क्या होगी जब इस सभा में उनकी संख्या अढ़ाई सौ हो जायेगी। मैं मज़ाक नहीं कर रहा हूँ। यदि उनके

चयन के समय भी मेरी बात सुनी जाती है, तो मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि मैं ऐसा ही करूंगा, यद्यपि श्री रोहिणी कुमार चौधरी चाहे जो कहें।

(इस समय उपाध्यक्ष महोदय ने कुर्सी खाली की, जिस पर बाद में श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव (सभापति तालिका में से एक) आसीन हुए।)

इस सम्बन्ध में मैं एक छोटा-सा विवरण पढ़ने का प्रयास कर रहा हूँ जो मैंने 12 मार्च, 1949 के 'पिक्चर पोस्ट' से लिया है:-

"महिला की ओर से समानता के लिए एक अनवरत मांग आती है। समानता से उसका क्या अर्थ है? कम से कम भौतिक दृष्टि से उसके पास काफी बड़ा हिस्सा है। संभवतया नब्बे प्रतिशत विज्ञापन पूर्णतया उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। फिल्म निर्माताओं का कहना है कि वे 80 प्रतिशत फिल्में महिलाओं के लिए बनाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि उपन्यास के प्रकाशक पूर्णतया महिलाओं के बारे में सोचते हैं। जहां तक कपड़ों का सम्बन्ध है, महिलाओं को तरह-तरह के वस्त्र उचित मूल्यों पर मिल जाते हैं, जबकि गरीब फटीचर आदमी किसी मलिन दुकान की खिड़की से कुछ अप्राप्य सूटों को देर तक टकटकी लगाकर देखता है और भारी मूल्य वसूल किये जाने के बारे में सोचता है। अब हमें दूरदृष्टा आंखों से भविष्य में झांकना चाहिये। महिला को समानता से अधिक मिला है और पुरुष किसी अविवाहित महिला का चाटुकार बन गया है जो उसी के टुकड़ों पर निर्भर है और हर चीज सुन्दर मानकर स्वीकार लेता है।"

मैं अपनी बहनों को आश्वासन देता हूँ कि धीरज रखने से कोई नुकसान नहीं होगा। कुछ दिन पूर्व बनारस के एक स्वामी के साथ एक परंपरावादी मंच पर उपस्थित होने पर मुझसे पूछताछ की गई और जब मैंने वहां प्रभावती राजे को भी देखा, जो एक आश्चर्यजनक महिला कार्यकर्ता थी और वहाँ प्राचीन जोन आफ आर्क की तरह उपस्थित जनों का नेतृत्व कर रही थी, तो मुझे लगा कि ऐसा वह वहाँ की रूढ़िवादिता के कारण कर रही है। मैं भी बुलाये जाने पर वहाँ गया और मैं एक घंटे बोला। तब मुझे विरोधी के मंच पर उपस्थित होने के लिए बुरा भी कहा गया। इस पर मैंने कहा, "उनसे बोलने का क्या लाभ है जिन्होंने अपना धर्म बदल लिया है? मुझे उन्हें बदलना चाहिये जिन्होंने अपना धर्म नहीं बदला है।" मैं इस नये हिंदू संहिता विधेयक के बारे में लोगों को शिक्षित करने में पूरा विश्वास रखता हूँ। आप को जल्दी नहीं मचानी चाहिए और यह मामला बहुमत के आधार पर तय करना चाहिये। अत: जब कभी ऐसा होता है, तो लोगों को शिक्षित करना हमारा कर्त्तव्य है। हमें जनता में शिक्षा का प्रचार करके नतीजा दिखाना चाहिये। आखिरकार आपने महत्त्वपूर्ण उद्योगों का राष्ट्रीयकरण नहीं किया है। यह मद कहां चली गयी? पूंजीपतियों ने सफलता प्राप्त की और हमारे पास कोई धनराशि नहीं थी, इसलिए हमें मुंह की खानी पड़ी। मेरा विश्वास धीरज में है। किसी दिन स्थिति ठीक

हो जायेगी। अभी हम कोई भी राष्ट्रीयकरण करने से डरते हैं। हम जमींदारी समाप्त करने में आनाकानी कर रहे हैं। हम नदी परियोजनाओं को हाथ में लेने में आनाकानी कर रहे हैं। हम कुटीर उद्योगों का विकास करने में आनाकानी कर रहे हैं। हम यह सब इसलिए नहीं कर रहे हैं कि मुद्रास्फीति की आंखें हम पर लगी हुई हैं और हम यह सभी सुधार करने की स्थिति में नहीं हैं। हमारे सामने उलझनें और विसंगतियां हैं। जीवन, रेल यात्रा की तरह सुगम पथ नहीं है। यह भीड़-भाड़ में खराब सड़कों पर मोटर कार यात्रा की तरह है। मैं आप से पूछता हूँ कि क्या इस भव्य सभा के सदस्यों का यह कर्त्तव्य नहीं है कि वे अपने मतदाताओं को शिक्षित करने का उपयोगी और लाभप्रद कार्य करें। वर्ष 1878 में क्या हुआ, जब मताधिकार के विस्तार के पश्चात् राबर्ट लो ने कहा था, "आओ हम जायें और अपने मालिकों को शिक्षित करें।" हमारे मालिक बाहरी हैं। हम मालिक नहीं हैं। मंत्री हमारे मालिक नहीं हैं। हम जैसा चाहें उनके साथ वैसा व्यवहार कर सकते हैं। हम उन्हें नहीं चाहते तो कल हम उनसे छुटकारा पा सकते हैं। यह हमारा अधिकार है और यह हमारा विशेषाधिकार भी है और हमारी सुरक्षा भी। अतः मैं कहता हूँ कि यह एक ऐसा मामला है जिसमें हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये। सामाजिक सुधारों के मामलों में मैं किसी से पीछे नहीं हूँ। मैं वर्ष 1898 में भी एक समाज सुधारक था, जब मैं बी.ए. कक्षा में पढ़ता था। यह बात 51 वर्ष पहले की है जब यहाँ उपस्थित जनों में से आधों का जन्म भी नहीं हुआ था। तब से समाज सुधार में मेरी रुचि बनी हुई है। मैं युवावस्था में ही ब्रह्म समाज के सुधारकों के प्रभाव में आ गया था और मैंने ईसाई धर्मप्रचारकों से भी सुधारवादी भावना ग्रहण की है, जिनके आधीन मैंने चौथी कक्षा से बी.ए. कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की।

अतः महत्वपूर्ण बात यह नहीं है कि इस विषय में क्या किया जाये, अपितु महत्वपूर्ण बात यह है क हम इसे कैसे करने जा रहे हैं। हमें राजनैतिक पहलुओं को भी याद रखना होगा। कल आप मतदाता के समक्ष भी उपस्थित होने वाले हैं। लेकिन कल हमारी दशा यहाँ कितनी दयनीय थी। मैं कल यहां नहीं था; अन्यथा मैंने नजारा अपनी आंखों से देखा होता। मैं अलवर गया हुआ था और पिछली रात को ही ग्यारह बजे वापस लौटा और सबसे पहले मेरी पत्नी ने मुझे यह बताया कि लाठीचार्ज हुआ था जिसमें कुछ लोग बुरी तरह जख्मी हुए। यों खबरों को एक से दूसरे को बढ़ा-चढ़ा कर बताया और सुनाया जाना स्वाभाविक है। पर मैंने आज अपने सामने जो नजारा देखा वह भी अत्यन्त कारूणिक है। आमतौर पर मैं आवेग या उत्साह में बोलता हूँ किन्तु आज मैं गैलरी में अपने सामने तीन महिला पुलिसकर्मियों को बैठे देख कर क्षोभ से बोला। क्या स्थिति इतनी खराब हो गई है कि गैलरी में और नीचे बैठी महिलाओं पर विश्वास नहीं किया जा सकता और यह सभा महिला पुलिस के डंडे के इशारे पर ही चल सकती है? क्या आपको वास्तव में इस बात पर गर्व है कि ये महिला पुलिस कर्मी हमारी बहनों पर संदेह करें? हमने काफी पुलिस कर्मी देखें हैं। आप जानते हैं कि यह इस विधेयक की सबसे बड़ी दुःखद घटना है। डाक्टर साहब इस को ओर ध्यान दें

यदि आप पुलिस के संरक्षण के बिना इस सभा में नहीं आ सकते, महिलायें, महिला-पुलिस कर्मियों और पुरुष, पुरुष-पुलिस कर्मियों के संरक्षण के बिना सभा में नहीं आ सकते, तो हमारी प्रगति, हमारा विधान और हमारी विधान-सभा संकट में पड़ जायेंगे। मुझे वास्तव में बड़ा खेद है। अब मैं सामान्य टिप्पणियों को छोड़ता हूँ और एक या दो मुख्य मुद्दों पर आता हूँ जिनके साथ आज यहां हमारा सम्बन्ध है और उससे पूर्व मैं इस विधान के प्रजनकों के बारे में कुछ कहूंगा। मुझे अत्यंत खेद है कि इस विधेयक का पंथ-प्रदर्शन करने की जिम्मेदारी डॉ. अम्बेडकर पर डाली गई है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : मुझे कोई खेद नहीं है।

डॉ. वी. पट्टाभी सीतारमैया : मैं जानता हूँ; अन्यथा आप अपने स्थान पर इतने गर्व से न बैठे होते। डाक्टर साहब जानते हैं कि मैंने उनके बारे में क्या कहा है। मैंने अच्छाई या बुराई के लिए चाहे जो भी हो, उनकी दुर्दमनीय, अत्यन्त सम्मोहक, अविजेय भावना का उल्लेख किया है। हम सदैव यह कहना चाहते हैं कि उनमें सद्भावना तो है और इसलिए हम उनकी सराहना करते हैं किन्तु इसके साथ ही, उनका समाज के साथ तारतम्य नहीं हो पाया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : उनका तारतम्य पूरा है। परिपूर्ण तारतम्य!

डॉ. वी. पट्टाभी सीतारमैया : मैं उन्हें मानवद्वैषी नहीं मानता, किन्तु वह सामान्य मानव नहीं है, मैं इतना ही कह सकता हूँ। प्रशिक्षण, परिवेश, वातावरण, संस्कृति इन सभी के फलस्वरूप उनका राष्ट्र की भावना के साथ तारतम्य स्थापित नहीं हो पाता। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह हमारे एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी हैं और मैं चिरकाल तक उनके स्वास्थ्य और खुशहाली की कामना करता हूँ। किन्तु इस सबका अर्थ यह नहीं है कि हम उनके दृष्टिकोण से सहमत हैं। हमने समान नागरिक कानून पारित किया, तो भी हमारा उनसे मतभेद रहा। हममें से कुछ ने निरर्थक अपनी पूरी शक्ति से उसका विरोध किया। अब मैं आपको एक ऐसी बात याद दिलाता हूँ जो मैंने पहले दिन कहा, जब यह विधेयक इस सभा में प्रस्तुत किया गया। मुझे आशा है बहुत से लोग उसे भूल गये हैं, इसलिए मैं जो कुछ कह रहा हूँ उसकी पुनरावृत्ति के लिए उन्हें मुझे दोष नहीं देना चाहिये। वास्तव में मैं स्वयं मुख्य बिन्दू भूल गया हूँ। वह मुद्दा यह था कि इस देश में समाज सुधार का कार्य मध्यस्थता के माध्यम से, परामर्श के माध्यम से और एक सामाजिक परिषद जिसका हमें गठन करना चाहिये, की प्रेरणा के माध्यम से किया जाना चाहिये। उस समय मैंने इंग्लैण्ड की "चर्च परिषद" का उदाहरण दिया था, जिसमें गिरजाधर की महान् विभूतियां शक्ति का मुख्य तत्व होती हैं और जीवन या विधि में परिवर्तनों के द्वारा वे जो कुछ भी लाती हैं हाउस आफ कामन्स उन्हें विराम या अर्ध-विराम बदले बिना स्वीकार कर लेता है और धार्मिक या सामाजिक मामलों में ऐसा ही होना चाहिये। हमें भी यही रास्ता अपनाना

चाहिये। जर्मनी में एक आर्थिक परिषद् हुआ करती थी, जो ऐसे अधिकांश मामलों से निपटती थी जिनके लिए विशेष जानकारी की आवश्यकता होती है। "रेच टैग" उस संस्था की सिफारिशों को स्वीकार किया करता था। अत: हमें इस मामले में धीरे-धीरे और सोच-समझकर अग्रसर होना चाहिये ताकि हम जान सकें कि हम कहां खड़े हैं।

अब मैं विधेयक के कुछ मुद्दों पर आता हूँ और मैं आपका अधिक समय नहीं लूंगा। विधेयक के कुछ प्रावधान काफी अच्छे हैं। मैं चाहता हूँ कि अदालती विवाह सांस्कारिक विवाह के ऊपर हो। अदालती विवाह दो व्यक्तियों के बीच एक लेनदेन को पंजीकृत करने का केवल दस्तावेज है। यह एक संविदा है। ज्यों ही एक दस्तावेज लिखा जाता है, झगड़ा खड़ा हो जाता है चाहे इरादा सही हो, चाहे विधि के अनुसार यह मान्य हो किन्तु जब विवाह सांस्कारिक ढंग से होता है तो इसके विरुद्ध कोई अपील नहीं होती। वृद्ध पुरोहित को कभी अपने जीवन में न्यायालय में खड़े होने और विवाह की वास्तविकता के बारे में गवाही देने के लिए नहीं बुलाया जाता। विवाह हो जाता है और इसे कोई चुनौती नहीं देता; यह बोले गये शब्द की गरिमा की तरह है। जब राष्ट्र ने बोले गये शब्द की गरिमा को बनाये रखा है जो अंग्रेजी शासनकाल में और न्यायालयों के प्रभाव में समाप्त हो गई है, तो मैं कहूंगा कि हमें एक बार फिर अपने चरित्र का निर्माण करना चाहिये। किन्तु कुछ ऐसी परिस्थितियां हैं, जैसे कि मेरे एक मित्र के मामले में, विवाह की वेदी पर आकस्मात् यह पता चला है कि उसकी लड़की और उसके होने वाले दामाद का गोत्र एक ही था। वे आर्थिक कारणों से भी संभवतया विवाह को तोड़ नहीं सकते थे, धार्मिक कारण तो दूर की बात है। अत: उन्होंने तुरन्त संस्कार किया और फिर उसके बाद विवाह पंजीयक के पास गये और इसका पंजीकरण करवा लिया। हमें अपने विवाह पंजीकृत करवाने की छूट होनी चाहिये। यह एक बड़ा विशेषाधिकार है और मैं यह भी चाहता हूँ कि सम्पत्ति में लड़की के हिस्से का प्रश्न एक बार हमेशा के लिए हल कर लिया जाये। मैं काफी समय से यह महसूस कर रहा हूँ कि बाप की सम्पत्ति में बेटों के साथ बेटी को भी बराबर का उत्तराधिकार होना चाहिये। अब मुझे दिखाई देता है कि इससे हमारे सामाजिक और आर्थिक ढांचे में अनन्त उलझनें पैदा होंगी। मेरे एक मित्र की छ: बेटियां हैं और एक बेटा है। मैंने लड़कियों से एक-एक करके पूछा कि क्या वे अपने बाप की सम्पत्ति का हिस्सा लेना चाहेंगी। उन्होंने कहा, "नहीं, इससे हमारे भाइयों के साथ झगड़ा होगा हम यह नहीं चाहतीं। हमारे पास हमारे पति की सम्पत्ति है और वह सदैव हमारे पास रहती है।" तथापि यह उन्हें उस प्रकार उपलब्ध नहीं है जिस प्रकार स्त्रीधन उन्हें उपलब्ध होता है। स्त्री धन एक अत्यन्त उत्तम चीज है और मैं यह जानना चाहता हूँ कि विश्व में इसके अन्यत्र समानान्तर कोई स्त्रीधन है? स्त्री धन एक ऐसा उपाय है जिसके माध्यम से विवाह के समय लड़की को दिया गया स्त्रीधन पूरी तरह लड़की की सम्पत्ति बन जाता है जिसे पति या बाप या कोई व्यक्ति नहीं छू सकता। यह परिवार की आरक्षित निधि है और जिस पर उसका पूरा स्वामित्व है और जब उसका

पति काफी बीमार हो जाता है तो डाक्टर की फीस आदि का भुगतान करने के लिए वह अपने जेवर बेचने के लिए बाज़ार जाती है। यदि पति स्वस्थ और खुशहाल रहता है और यदि पति की मृत्यु हो जाती है, तो यह उसकी अपने स्वामी के प्रति अन्तिम सेवा होती है। ऐसी आरक्षित निधि समाप्त हो जाने पर श्री टी.वी. सेषागिरी अय्यर के विधेयक के अन्तर्गत, जो 15 वर्ष पहले कानून बन गया, अब पति की सम्पत्ति में पत्नी के हिस्से को मान्यता दी जाने लगी है। किन्तु पति की मृत्यु के पश्चात् ही उसे पति की सम्पत्ति में बेटों के बराबर हिस्सा मिलता है और उसे तब तक मिलता है जब तक वह जीवित रहती है। इसी आशंका को ध्यान में रखते हुए कि उनकी राजनैतिक स्थिरता डांवाडोल हो सकती है, अंग्रेज लोग इस देश की धार्मिक संस्थाओं में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते थे। फिर भी हमारे कानून में अब मामूली परिवर्तन किया गया है और जैसा कि पहले एक माननीय सदस्य ने बताया है कि इसमें कोई भारी परिवर्तन नहीं किया गया है। दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि अंग्रेज लोगों ने राजनैतिक कारणों से इस देश के सामाजिक रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा और इसलिए कानून जड़ीभूत हो गया। हर देश में रीति-रिवाज बदलते रहते हैं और जब राजा सामाजिक रीति-रिवाजों में किसी परिवर्तन को अंगीकार कर लेता है तो तुरन्त ही वह कानून बन जाता है और इससे पूरे समाज को एक दिशा मिलती है। किन्तु दुर्भाग्य से हमारे देश में हजारों वर्ष तक कोई देशी राजा नहीं हुए और अंग्रेजों के आने के बाद उन्होंने सामाजिक ढांचे में सामाजिक परिवर्तन लाने के सभी प्रयासों का विरोध किया। अतः रीति-रिवाज गतिहीन हो गये, अतः हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम उन गतिहीन रीति-रिवाजों को लचीला, संवेदनशील और परिवर्तनशील बनायें।

ऐसा करने की बजाय यदि हम अकस्मात रीति-रिवाज को एक-दूसरे के विरुद्ध फैंकते हैं तो दोनों पत्थर टूटेंगे। अतः परिवर्तन लाने का यह तरीका सही नहीं है, क्योंकि परम्परागत विधि में परिवर्तन लाने का उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन लाना होना चाहिये।

अब जहां तक लड़की को हिस्सा देने की प्रथा का सम्बन्ध है, मैं इस बात से सहमत हूँ कि उसे हिस्सा मिलना चाहिये। किन्तु मैं एक फेरबदल करना चाहता हूँ और वह यह है कि ज्यों ही उसका विवाह होता है वह पति की सम्पत्ति में हिस्सेदार बन जाती है और इसे पति को दुर्व्यवहार करने का अवसर नहीं मिलता जैसा कि दुर्भाग्यवश कभी-कभी होता है। इसके बाद हम तलाक के प्रश्न पर आते हैं। मैंने कई महिलाओं से बात की है। आज सुबह चार महिलाएं मेरे पास आईं। वे अच्छी महिलाएँ हैं, काफी सुसभ्य हैं और उनमें से एक ऐसी भी थी जिसका मुझसे परिचय करवाया गया और जिसको उसके पति ने त्याग दिया था। उन्होंने कहा कि केवल ऐसी महिलायें ही इस विधान को अपना समर्थन देने से इन्कार नहीं कर रही हैं जो खुश हैं अपितु ऐसी महिलायें भी इसको समर्थन देने के लिए तैयार नहीं हैं जो नाखुश हैं, पुरुष की नाराजगी

और अत्याचार का शिकार हैं। मैंने उनसे कहा, प्रश्न यह नहीं है। प्रश्न यह है : नब्बे प्रतिशत हमारे विवाह बहुत ही बढ़िया होते हैं किन्तु शेष दस प्रतिशत के बारे में आपका क्या कहना है? वे राहत चाहती हैं? भारत में हम विवाह करते हैं और फिर प्यार करते हैं, अंग्रेज लोग पहले प्यार करते हैं, फिर विवाह करते हैं। उसके बाद अपने प्यार को ठुकरा भी देते हैं, क्योंकि अतिसंवेदनशील आयु में प्यार कल्पना की उड़ान होता है। उस समय कोई यह नहीं जानता कि यह क्या है। हिंदू समाज में एक कानून या नियम है कि विवाह के मामलों में 'श्री, कुलामू, रूपामू, बंधु श्रेणी और सम्प्रदायम'-ऐसी सभी चीजों पर विचार किया जाना चाहिये। विवाह तय करने से पूर्व इन सभी बातों पर विचार किया जाना चाहिये। श्री से सम्पत्ति या खुशहाली अभिप्रेत है, इसके बाद कुलम या जाति तथा स्थिति का स्थान है और उसके बाद रुपामृ अर्थात शक्ल-सूरत, सौंदर्य या सुन्दरता; तत्पश्चात् बन्धु श्रेणी अर्थात् सम्बन्धी आते हैं और फिर सम्प्रदाय या परिवार की परम्परा आती है। इन सभी पांच बातों पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाना चाहिये। क्या अठारह वर्ष की एक लड़की, जो आयु की दृष्टि से विवाह योग्य है, इन सभी चीजों का ध्यान रखते हुए चयन कर सकती है? क्या वह इन चीजों में एक-दूसरे के बीच अन्तर कर सकती है? नहीं। एक दिन मैंने अपनी पत्नी की बहन के पति की बहन से पूछा नहीं, यह दूर का रिश्ता नहीं है, आप जानते हैं कि मेरी पत्नी की बहन का पति मेरा साढ़ू होता है। उसकी बहन का विवाह हुआ। मुझे पता चला कि उसने अपने विवाह से पूर्व अपने पिता को कुछ कहा था। मैं उसके पति के घर गया, उसका पति मेरे साथ अन्दर के कमरों में गया और वहां मैंने उससे कहा, "क्या आप जानते हैं कि इस लड़की के आपसे विवाह नहीं किया है?" वह चकित रह गया, कुछ नाराज और कुछ आश्चर्यचकित। उसने कहा, "आपका क्या अभिप्राय है?" मैंने कहा, "मेरा वही अर्थ है जो मैंने कहा है, उसने आप से कभी विवाह नहीं किया है", "क्यों? उसने इस बिजली, इस मोटर कार से विवाह किया है जो इस घर में हैं।" बात यह है कि लड़की ने अपने पिता से कहा था, "मुझे इस बात की कोई परवाह नहीं कि आप मेरा किससे विवाह करते हैं, लेकिन उनके घर में बिजली और मोटर कार होनी चाहिये।" सोलह या अठारह वर्ष की गरीब लड़की चीजों और हालात को कैसे भांप सकती थी? वह केवल यह सोचती है, "मुझे इस घर में मेरा पिता द्वारा पाला-पोसा गया है, उसे हर वर्ष बीस हजार रुपये मिलते हैं और उसके यहां बिजली है, मोटरकार है और आलीशान मकान है। मुझे वहां भी ये चीजें उपलब्ध होनी चाहिये।" बस इतनी-सी बात है। लेकिन अंग्रेज मां की शिकायत हमेशा यह रहती है कि उसकी लड़की, "अच्छे मित्र नहीं बना सकती।" वह कहती है, "मेरी बेटी अच्छे मित्र नहीं बना सकती।" इसका अर्थ यह है "मेरी लड़की अपने इर्द-गिर्द ऐसे युवकों की टोली नहीं रख सकती जो उसके इशारे पर नाचें, रेस्तरां, सिनेमा, आदि में उसके बिलों का भुगतान करें।" वहाँ माँ यही चाहती है। कृपया इस प्रकार सर न हिलायें। मैं जो कह रहा हूँ वह सही है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : मैं आपका समर्थन कर रहा हूँ।

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : मैं आपसे नहीं, आपके पीछे बैठे मित्र से कह रहा हूँ।

श्री आर.के. सिधवा : क्या आप मेरे बारे में कुछ कह रहे हैं?

डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमैया : नहीं, आपके पड़ोसी के बारे में कह रहा हूँ।

इंग्लैण्ड में क्या होता है? माँ की सदैव यह आकांक्षा रहती है कि उसकी लड़की इस स्थिति में होनी चाहिये कि वह आधा दर्जन प्रेमियों का ध्यान आकर्षित कर सके और फिर मां-बाप उनमें से एक का चयन करें जो उनका दामाद बन सकने का पात्र हो। किन्तु माँ सदैव अपनी नौकरानी से ईर्ष्या करती है क्योंकि नौकरानी अच्छे मित्र बना सकती है जबकि उसकी लड़की अच्छे मित्र बनाने की स्थिति में नहीं है। यह दुर्भाग्य की बात है। नौकरानी क्या करती है? शाम को आठ बजे वह अपना एपरान बदलती हैं, साफ-सुथरा चुस्त गाउन पहनती है और बाहर चली जाती है। "तुम कहां जा रही हो?" "मेरा प्रेमी बाहर मेरी प्रतीक्षा कर रहा है इसलिए मुझे जाना चाहिए।" "नहीं, नहीं, अब मेरा दामाद आ रहा है।" "तुम स्वयं अपने दामाद के साथ निकटवर्ती पेड़ के साथ लटक जाओ। मेरा प्रेमी प्रतीक्षा कर रहा है और मैं जा रही हूँ।"

श्रीमती रेणुका रे : भारतीय महिलाएं हों या विदेशी, उनके बारे में आपकी राय काफी खराब है।

है कि कैसर आप को बोलने का हुक्म देता है और तब जनरल लुडेनड्राफ बोलता है। तब कैसर आदेश देता है कि यदि जो नहीं बोलेगा तो उसे गोली मार दी जायेगी। इसी तरह रानी विक्टोरिया राजकुमार एलबर्ट को दरवाजा खोलने के लिए कहती है। वह कहती है, "प्रिय, दरवाजा खोलो।" किन्तु दरवाजा नहीं खुलता। तब वह कहती है "इंग्लैण्ड की रानी तुम्हें दरवाजा खोलने का हुक्म देती है" और तब वह गरीब जाकर दरवाजा खोल देता है। कैसर के साथ ऐसा हुआ और लुडेनड्राफ ने कहा, "महामहिम, हालैण्ड से बच निकलने के लिए आपके पास केवल चौबीस घंटे हैं।" तब कैसर पूछता है, "क्यों?" "क्यों? क्योंकि सेना युद्ध नहीं करेगी" कैसर कहता है, "मैं स्वयं सेना का नेतृत्व करूंगा।" किन्तु सेना ने युद्ध नहीं किया और चौबीस घंटों में इस व्यक्ति का तबादला हो गया। इसलिए जब कोई कटुसत्य कहा जाता है जो इसे ध्यान से सुनना चाहिए, क्योंकि उसमें सम्पन्नता और सफलता की शुभकामनाओं के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। इसलिए यदि सिद्धांत के आधार पर नहीं, यदि ठोस नैतिकता के आधार पर नहीं, तो कम से कम औचित्य के आधार पर स्थिति पर पुनः विचार करें और यह सुनिश्चित करें कि लोग आपके साथ चल सकें।

आचार्य जे.बी. कृपलानी (यू.पी. : सामान्य) : महोदय, सभा के कुछ सदस्यों को आशंका है कि मैं सरकार की नीति के विरुद्ध बोलूंगा। यद्यपि मैंने इस सभा में केवल एक बार भाषण दिया है, फिर भी कुछ लोगों को आशंका है और मैं उस आशंका को दूर करना चाहता हूँ। मैं इस विधेयक के मुख्य सिद्धांतों का समर्थन करता हूँ। मेरे ऐसा करने का कारण यह है कि मैं नहीं चाहता कि यह सरकार एक गौण मसले पर, एक सामाजिक मसले पर त्यागपत्र दे। मैं चाहता हूँ कि अन्य महत्वपूर्ण राजनैतिक और आर्थिक मसलों पर त्याग-पत्र दे। उदाहरण के तौर पर मैं चाहूंगा कि यह चीनी घोटाले के प्रश्न पर त्याग-पत्र दे, जिसके कारण गरीबों के बच्चे को चीनी नहीं मिल सकी लेकिन ऐसे लोग टनों चीनी ले सकते थे जो उच्च मूल्य देने को तैयार थे। एक लोकतांत्रिक देश में किसी अन्य सरकार ने ऐसे प्रश्न पर त्याग-पत्र दे दिया होता। यह सरकार ऐसे मामलों को लेकर जाती है तो मुझे कोई खेद नहीं होगा, किन्तु मैं नही चाहता कि यह एक गौण सामाजिक मुद्दे पर त्याग-पत्र दें...

एक माननीय सदस्य : चीनी इस विधेयक से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है।

आचार्य जे.बी. कृपलानी : फिर भी यह उतनी मीठी नहीं है।

फिर भी यदि मेरे ऊपर ऐसे लोगों का दबाव नहीं होता जिनका मैं विरोध नहीं कर सकता तो, मैं इस विधेयक का समर्थन नहीं करता। मुझे घर पर बताया गया है कि मुझे इस विधेयक का समर्थन करना है। मैंने कहा कि मुझे हिंदू विधि के बारे में कोई जानकारी नहीं है कि हिंदू विधि कई ग्रंथों में फैली हुई है और इस पर टीका के रूप में कई अन्य ग्रंथ लिखे गये हैं और जिसे मैं समझा ही नहीं हूँ, उसका समर्थन या विरोध कैसे कर सकता हूँ? इस पर मुझे फौरन बताया गया–"मैं तुम्हें इसे समझा दूंगा"।

एक माननीय सदस्य : आपके शिक्षक कौन थे?

आचार्य जे.बी. कृपलानी : इस प्रकार मुझे परदे के पीछे कुछ भाषण सुनने पड़े। मुझे आश्वासन दिया गया कि मेरे शिक्षक को इस सभा के सबसे बड़े अधिकारी स्वयं सम्मानीय डॉ. अम्बेडकर द्वार हिदायत दी गई है। परदे के पीछे भाषण समाप्त होने के बाद मैं उतना ही बुद्धिमान या बेवकूफ था, जितना कि विद्यालय या कॉलेज में अपने अध्यापकों के भाषण के बाद हुआ करता था। मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मेरे अध्यापक मेरे से अधिक बेवकूफ थे।

जब मैं प्राध्यापक था तो मैं सोचता था कि छात्र मेरे बारे में यही कहेंगे। यह जानते हुए जब मैं कक्षा में प्रवेश करता था तो मैं सदैव कहता था "सज्जनों, आप की हाजिरी पक्की है और मैं हाजिरी लगा देता हूँ तो आप उसके बाद जा सकते हैं क्योंकि मैं जानता हूँ आप मुझे अपनी विद्वता के लिए उससे अधिक श्रेय देंगे जितना मैं अपने अध्यापकों को देता था।"

महोदय, मैंने इस विधेयक का समर्थन करने की शपथ ली है और मुझे इसका अवश्य समर्थन करना चाहिये, क्योंकि मैं जानता हूँ कि यद्यपि मेरी पत्नी यहाँ उपस्थित नहीं है, लेकिन वह वापस आएगी, तो वह मुझसे न केवल वित्तीय अपितु नैतिक और बौद्धिक ब्यौरा भी लेगी।

महोदय, मेरे लिए यह धर्म संकट का प्रश्न नहीं है मेरे लिये यह मेरा घर संकट में हैं, का प्रश्न है। बहुत कहा गया है कि हिंदू धर्म संकट में है। मुझे यह बात समझ में नहीं आई। हिंदू धर्म तब संकट में नहीं होता, जब हिंदू, बदमाश, व्यभिचारी, चोर बाजारी करने वाले और रिश्वतखोर होते हैं। हिंदू धर्म को इन लोगों से खतरा नहीं है किन्तु हिंदू धर्म को उन लोगों से खतरा है जो एक कानून विशेष में सुधार लाना चाहते हैं। वे जरूरत से ज्यादा जोशीले हो सकते हैं, किंतु भौतिक पदार्थों में भ्रष्ट होने की अपेक्षा आदर्शवादी चीजों में अधिक जोशीला होना बेहतर है। हमारी इस मानसिकता के कारण राष्ट्रपिता की हत्या हुई। यह माना जाता है कि हत्यारा उस व्यक्ति से बेहतर हिंदू था जो गीता और उपनिषदों के उच्चतम आदर्शों के अनुसार जीवनयापन करता था और जो हमारे धर्म ग्रंथों के उपदेशों को ध्यान में रखते हुए अपना जीवन बिताता था। मैं चाहता हूँ कि हिंदू समाज अपने धर्म के बारे में ऐसी गलत धारणाओं को तिलांजलि दे। हमारा धर्म हत्यारों और चोरों से नहीं बनता; यह साधुओं, सन्यासियों और महात्माओं से बनता है।

इसका दूसरा पहलू भी है। यहाँ काफी उलझन पैदा की गई है। एक पक्ष का कहना है कि धर्म संकट में है और दूसरे पक्ष का कहना है कि प्रगति का आधुनिक धर्म खतरे में है। यदि आप विधेयक का समर्थन नहीं करते, तो आप प्रतिक्रियावादी हैं।

मैं आपको बताऊंगा कि मैंने इस विधेयक का समर्थन करने का मन कैसे बनाया है। मैंने एक कारण आपको पहले ही बता दिया है। दूसरा कारण मैं आपको अब बताऊंगा।

एक महिला थी और उसने दूसरी महिला से कानाफूसी की "कृपलानी विधेयक का समर्थन नहीं करेगा; वह प्रतिक्रियावादी है।"

श्री बी.एल. सोंधी : क्या वे दोनों इस सभा की सदस्या थीं।

आचार्य जे.बी. कृपलानी : वे माननीय सदस्य थीं, मात्र सदस्य नहीं थीं। उन्हीं में से एक ने मुझे विश्वास में लेते हुए बताया, "मैंने विरोध किया और कहा कि कृपलानी प्रगतिवादी है।" अतः यह मेरी इज्जत का प्रश्न था। आप देखिये कितना प्रखर प्रचार किया जाता है। एक महिला दूसरी महिला को विश्वास में लेकर कुछ बताती है और वह कथा मुझे बता देती है। अब मैं क्या करूंगा? मैं अपने आपको प्रतिक्रियावादी नहीं समझ सकता और न ही प्रगतिशील : मुझे गैर-हिंदू पुकारा जा सकता है। किन्तु एक आधुनिक व्यक्ति का आधुनिक न होना उसके धर्मविहीन होने से बड़ा कलंक है। हो

सकता है मुझे भगवान में आस्था न हो, किन्तु यह कैसे हो सकता है कि मैं प्रगति के भगवान में आस्था न रखूं जैसा कि पश्चिम में होता है?

मैं आपको यह भी बताऊंगा कि पहली महिला-वक्ता ने यह क्यों कहा कि मैं एक प्रगतिक्रियावादी हूँ। यह एक बड़ी दिलचस्प कहानी है। किन्तु आपको मुझे आश्वासन देना होगा कि आप हँसकर मेरी बात में व्यवधान नहीं डालेंगे। मैं मूलभूत अधिकार समिति का अध्यक्ष था। मूलभूत अधिकार समिति में यह प्रस्ताव लाया गया कि परदा न करना महिलाओं का मूलभूत आधार होना चाहिये। निस्संदेह, मैं इस पक्ष में हूँ क सब महिला परदा न करें, अन्य पुरुष क्या इसका पक्ष नहीं लेंगे? मैं उन लोगों की प्रशंसा करता हूँ जो इसका पक्ष नहीं लेते, किन्तु मैं उन प्रशंसनीय लोगों में नहीं हूँ। मैंने कहा मुझे इस खंड को मूलभूत अधिकारों में शामिल करने पर कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते सभी तरह के परदे खत्म हो जाएँ। प्राचीन परदे और आधुनिक परदे। आप दिल्ली शहर की एक परक्रिया कीजिये। यहाँ एक महिला का चेहरा देख पाना कठिन है। उसके चेहरे पर हमेशा परदा लगा रहा है। (**एक माननीय सदस्य :** पाउडर।) यदि प्राचीन परदे को समाप्त किया जाना है तो आधुनिक परदे को भी हटाना होगा क्योंकि आधुनिक नकाब, परदे की अपेक्षा ज्यादा पूर्ण होता है। आप अपनी इच्छानुसार परदा हटा सकते हैं, किन्तु नकाब को घर पर ही हटाया जा सकता है और उसे हटाने के लिए कुछ रासायनिक प्रक्रियाओं का प्रयोग करना पड़ता है।

आप मुझे गलत न समझ लें, इसलिए मैं आपको बताता हूँ कि मैं इंसानों की समानता में विश्वास रखता हूँ। और मानवता में महिलायें भी आती हैं। मैं चाहता हूँ कि यह विधेयक पारित हो, क्योंकि यह हमें पुरुषों और महिलाओं में समानता लाता है। मैं समझता हूँ कि यह विधेयक हमारी समानता के हित में है। मैं हमेशा यह समझता रहा हूँ कि महिलाओं की तुलना में हम बहुत ज्यादा घाटे में हैं। सर्वप्रथम प्रकृति ने हमें घाटे में डाला है। क्योंकि आप जरा भी सोचें तो आप स्वीकार करेंगे कि हर वह चीज, जो पुरुष कर सकता है, एक महिला भी कर सकती है। किन्तु कुछ चीजें ऐसी हैं जो महिलायें कर सकती हैं किन्तु पुरुष नहीं कर सकते। पुरुष वे चीजें करने की कल्पना भी नहीं कर सकते, स्वप्न में भी नहीं। मैं तो सोच भी नहीं सकता।

कुछ माननीय सदस्य : बेशक, आप नहीं सोच सकते।

आचार्य जे.बी. कृपलानी : मैं बौद्धिक अर्थ में सोचने की बात कर रहा था। चूंकि आप मेरा अर्थ जान चुके हैं, मुझे इसके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है (**एक माननीय सदस्य :** ओह, नहीं;) किन्तु मेरी जिज्ञासा रही है महिलाओं से यह पूछा भी है "यह मर्मांतक पीड़ा क्या होती है और गर्भधारण में आपको कौन-सा बड़ा आनन्द मिलता है?" इस पर वे मेरी अज्ञानता पर मुस्कुरा देती हैं और कोई उत्तर नहीं देतीं। मैंने उनसे यह भी पूछा कि छाती से लगाकर बच्चे का पालन करने में उन्हें क्या आनन्द मिलता

है। इस पर वे मेरी अज्ञानता पर मुस्कुरा देती है और कोई उत्तर नहीं देती। इन मामलों में मैं समझत हूँ हम बहुत घाटे में हैं। वे महान जीवनदाता हैं। कलाकार निर्जीव वस्तुओं का सृजन करता है। पर महिलायें भगवान की मूर्तियां बनाती हैं, जो कई बार विकृत होकर शैतान की मूर्तियां भी बन जाती हैं। निस्संदेह इन चीजों के मामलों में प्रकृति ने हमारे रास्ते में एक तरह का अवरोध खड़ा किया है, हम महिलाओं के समान नहीं हो सकते। किन्तु कई अन्य चीजों में हम महिलाओं के साथ समानता का दर्जा भी प्राप्त कर सकते हैं।

जहां तक महिलाओं का पुरुषों के साथ समानता प्राप्त करने का प्रश्न का सम्बन्ध है, भारत में उन्हें यह समानता पहले ही प्राप्त है। आप जानते हैं कि स्वराज प्राप्त होने के पश्चात् तुरन्त ही हमने राज्यपाल के रूप में एक महिला की नियुक्ति की। संयुक्त राज्य अमेरिका को आजादी प्राप्त किये दो सौ वर्ष हो गये हैं और वहां पर 48 राज्य हैं किन्तु मैं नहीं समझता कि उन्होंने एक बार भी किसी महिला को राज्यपाल नियुक्त किया है। निस्संदेह मेरा इतिहास का ज्ञान पुराना हो सकता है और यदि मैं कोई गलत चीज कहता हूँ तो उसमें शुद्धि की जा सकती है, परन्तु मेरा विश्वास है कि कभी किसी महिला को संघ में मंत्री नियुक्त नहीं किया गया है। मैं यह भी कह सकता हूँ कि इंग्लैण्ड जैसे देश में जहां महिला-शिक्षा व्यापक है, मैं नहीं समझता कि अभी तक किसी महिला को मंत्री परिषद का सदस्य बनाया गया है। मैं अनेक सह-मंत्रियों की बात नहीं कर रहा हूँ-ऐसे कई मंत्री तो हमने यहां भी बनाये हैं। किन्तु मैं कैबनेट मंत्रियों की बात कर रहा हूँ। जहां तक मैं जानता हूँ इंग्लैण्ड में अभी तक कोई महिला कैबिनेट मंत्री नहीं बनी है। मैं यह भी नहीं जानता कि कभी इंग्लैण्ड या अमेरिका में कोई महिला राजदूत या राजनयिक बनाई गई या नहीं। फिर भी आपको याद रखना होगा कि हमारी एक प्रमुख राजदूत महिला है।

श्री आर.के. सिधवा : महोदय, हमें अपनी महिलाओं पर गर्व है।

आचार्य जे.बी. कृपलानी : शायद, श्री सिधवा सोचते हैं, कि मुझे गर्व नहीं है। मुझे इस पर बड़ा गर्व है। किन्तु मैं यहाँ समानता, न कि गर्व के बारे में सोच रहा हूँ। मैं कहा हूँ, "हमने महिलाओं को समानता दी है और क्या अब हमें महिलाओं के साथ समानता का अधिकार मिलेगा। मैं बहुत उत्पीड़ित हूँ क्योंकि मैं एक बूढ़ा व्यक्ति ही तो हूँ। मुझे ज्ञात हुआ है कि बूढ़ों का आदर होना चाहिये। किन्तु जब मेरी बैठक में कोई लड़की झांकती आती है तो मुझे डिब्बे में बन्द एक जैक की तरह फटफटाना पड़ता है।

(इसी समय उपाध्यक्ष श्री एम. अनंथसयनम अयंगर पीठासीन हुए।)

पहले मैं ऐसा नहीं करता था। इतना ही नहीं, महोदय, मैं आपको बताना चाहता हूँ। कि जब मेरी पत्नी भी बैठक में आती है तो मैं खड़ा हो जाता हूँ। क्या आप जानते हैं क्यों? क्योंकि कोई गंवार युवक वहां बैठा हो तो उसे आधुनिक शिष्टाचार की जानकारी नहीं होगी और वह खड़ा नहीं होगा। मैं उसे उदाहरण देने के लिए ही खड़ा होता हूँ। मैं

चाहता हूँ कि समानता आये, क्योंकि आप देखिये एक पुरुष होने के नाते मेरा कर्त्तव्य बनता है कि जब कोई महिला आये तो मैं खड़ा हो जाऊं, जबकि मैं जानता हूँ कि जब हमारे प्रधानमंत्री या कांग्रेस के अध्यक्ष कमरे मे प्रवेश करते हैं तो मैंने देखा है कि वहाँ जवान महिलाएं अपने स्थानों पर बैठी रहती हैं। पुरुषों के प्रति यह एक बहुत बड़ा अन्याय है। मेरा अनुभव रहा है कि जब बाजार में एक पुरुष और एक महिला के बीच झगड़ा होता है, गुप्त झगड़ों के बारे में मुझे कोई जानकारी नहीं है, यहां क्लब में कोई झगड़ा होता है और वहाँ कोई पुरुष महिला को चोट पहुंचाता है तो क्या आप जानते हैं कि क्या होता है? वहाँ प्राय: विद्रोह हो जायेगा और हर व्यक्ति पुरुष को कायर कहेगा और यह ठीक भी है। किन्तु मान लो कि पुरुष की पिटाई कोई महिला करती है तो आप जानते हैं कि क्या होगा? मैं समझता हूँ कि वह बहुत हास्यास्पद दिखाई देगा और इसके बजाय कि कोई व्यक्ति उससे सहानुभूति जताये वह उसका मजाक उड़ाएगा और यह ठीक भी है। हम चाहे पीटे जायें, हमारी दोनों तरह से हार होती है। मैं चाहता हूँ कि यह संतुलन बहाल किया जाये और पुरुष को बचाने के लिए भी कुछ समानता होनी चाहिये।

एक और चीज़ भी है। न केवल समाज में हम घाटे में रहते हैं अपितु कानून भी हमारे विरुद्ध है जैसा कि हमारे विधि मंत्री भी स्वीकार करेंगे। मान लो कि एक पुरुष एक महिला के साथ भाग जाता है तो कानून की दृष्टि में पुरुष जिम्मेदार है। मान लो एक महिला एक पुरुष के साथ भाग जाती है तो भी पुरुष ही जिम्मेदार है। मुझे एक विशेषज्ञ, बहुत आधुनिक विशेषज्ञ से पता चला है कि प्राय: महिला ही इसके पीछे होती है। हम आक्रामक हों या वे आक्रामक हों, पर कानून की मार हम पर ही पड़ती है। हम दोनों ओर से पीड़ित हैं। अत: मैं इस सभा से अनुरोध करता हूँ कि कुछ समानता लाई जाये ताकि हम पुरुष लोग भी अधिक आजादी से सांस ले सकें और यदि हमें पीटा जाता है, तो हम भी समान रूप से पीट सकें तब हमारा मजाक न बने और कानून, अधिक बलशाली पक्ष अर्थात् महिलाओं के समर्थन में न आयें। अब आप समझ गए होंगे कि मैं क्यों इस विधेयक का समर्थन कर रहा हूँ।

अब हम ब्यौरे में जायेंगे। सब से पहले सम्पत्ति का प्रश्न आता है। मुझे वास्तव में यह समझ में नहीं आता कि हम कांग्रेसजन, जिन्होंने निजी सम्पत्ति का उन्मूलन करने की शपथ ली है, क्यों सोचते हैं कि एक को हिस्सा मिलना चाहिये और दूसरे को हिस्सा नहीं मिलना चाहिये। इस देश में यह एक विचित्र बात है जो मुझे दूसरे देशों में देखने में नहीं आई।

श्री लक्ष्मी नारायण साहू (उड़ीसा : सामान्य) : मैं एक चीज़ जानना चाहता हूँ। क्या कांग्रेस ने निजी सम्पत्ति का उन्मूलन करने की शपथ ली है?

माननीय उपाध्यक्ष : यह माननीय सदस्य का मत है।

आचार्य जे. बी. कृपलानी : मैं समझता हूँ यदि काँग्रेस के संकल्प ध्यान से पढ़े जायें

तो स्पष्ट हो जायेगा कि कांग्रेस संचित निजी सम्पत्ति, न कि निजी सम्पत्ति जो कि प्रयोग में हैं के उन्मूलन के पक्ष में है। किन्तु जैसाकि उपाध्यक्ष महोदय ने ठीक ही कहा है यह अभिमत का प्रश्न है। मैं महसूस कर रहा हूँ कि यहां सभी लोगों द्वारा विद्यमान सम्पत्ति के वितरण पर विचार किया जा रहा है और नई संपत्ति का सृजन करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। यहां तक कि हमारे समाजवादी मित्र भी नई सम्पत्ति के सृजन की नहीं अपितु हमारे पास इस समय जो थोड़ी-सी सम्पत्ति है उसका पुन: वितरण करने के बारे में सोचते हैं। जहां तक थोड़ी बहुत विद्यमान सम्पत्ति का सम्बन्ध है, यदि यह देश में रहती है तो मुझे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि यह महिला को जाती है या पुरुष को। पर राष्ट्र की सम्पत्ति कम नहीं होनी चाहिये। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि यदि लोग रिश्वत लेते हैं या काला बाजारी करते हैं तो मुझे परवाह नहीं है, क्योंकि सम्पत्ति भारत से बाहर तो नहीं जाती। यह कहीं न कहीं भारत में ही रहती है। मैं केवल इसकी नैतिकता के बारे में सोचता हूँ जो हमारे सार्वजनिक जीवन और हमारे निजी आचरण को नष्ट कर रही है। जहां तक सम्पत्ति का सम्बन्ध है, यह अधिक चिन्ता का विषय नहीं है। ये रिश्वतखोर ये काला बाजारी करने वाले लोग, धन को किसी दूसरे देश में तो नही ले जा रहे हैं। कहावत है, यदि वह मेरा बहनोई नहीं है तो वह किसी दूसरे का बहनोई है। सम्पत्ति तो यहीं रहती है। अत: मैं किंचित मात्र भी यह संकीर्ण दृष्टिकोण नहीं अपनाता कि विद्यमान सम्पत्ति कहां जाती है। मैं राष्ट्र की सोचता हूँ। इंग्लैण्ड में तथा अन्य स्वतंत्र देशों में पहले ही विद्यमान अल्प सम्पत्ति को विभाजित करने की बजाय नई सम्पत्ति का सृजन करने की ओर पूरा ध्यान दिया जाता है। अत: मैं इस बात का हृदय से समर्थन करता हूँ कि पैतृक सम्पत्ति में महिलाओं का भी हिस्सा होना चाहिये। उनका अपना हिस्सा होगा तो वे अपने धन के बारे में और अधिक सावधानी बरतेंगी। मेरा यह अनुभव रहा है कि महिला का व्यय पुरुष के व्यय से काफी अधिक होता है। मैंने देखा है कि जब लड़कियां कालेज तथा स्कूल जाती हैं तो माँ को लड़कों के कपड़ों की अपेक्षा लड़कियों के कपड़ों की अधिक चिन्ता होती है। युवा लड़के पूरा रास्ता पैदल चलकर स्कूल जा सकते हैं किन्तु युवा लड़कियों को या तो तांगे में या बस में बैठकर स्कूल जाना चाहिये, चाहे बस का खर्च प्रति महीना 15 रुपये ही क्यों न आये। अत: कपड़ों और परिवहन तथा अन्य चीजों के मामले में महिला की शिक्षा पर अधिक खर्च आता है। यह तो तब होता है जब वह विवाहित नहीं होती। जब महिलायें विवाहित होती हैं, तो आप उनके कपड़े और हमारे कपड़े देख सकते हैं। मैंने विवाहों में प्राय: देखा है कि लड़का मूर्ख दिखाई देता है और लड़की रानी दिखाई देती है। मैंने ऐसा देखा है और सभी व्यक्ति जो आलोचनात्मक दृष्टि से इसे देखते हैं, प्रमाणित करेंगे कि ऐसा ही होता है। मैंने आधुनिक महिलाओं और आधुनिक पुरुषों को एक साथ सड़क पर चलते भी देखा है। आधुनिक पुरुष सामान्यतया अंग्रेजी पोशाक पहनता है और हर व्यक्ति को अंग्रेजी पोशाक फबे यह जरूरी नहीं है। कुछ अपवाद हैं। हम में से अधिकांश को यह बड़ी बेढंगी लगती है। किन्तु महिला देसी साड़ी पहने हुए होती है जो रंग-बिरंगी होती है और उसने जेवर न पहने हुए हों तो भी

उसके साथ जो पुरुष चल रहा होता है, आजकल वह उसके कुछ पीछे चलता है, उससे अच्छी दिखाई देती हैं। जो लोग आज के भारतीय मध्यम वर्गीय समाज से परिचित नहीं हैं या विदेशी हैं, उन्हें लग सकता है कि शायद कोई चपरासी पीछे आ रहा है। अतः महोदय, मेरा कहना है कि उनकी अपनी सम्पत्ति हो, हमें इन चीजों से कोई परेशानी नहीं होगी। वे अपनी इच्छानुसार इसे खर्च कर सकेंगी और मुझे विश्वास है कि उनके द्वारा चीजें खरीदने का बिल हमें आता है। तब वे किफायत से खर्च करेंगी, क्योंकि अभी अतः मैं इस प्रबल पक्ष में हूँ कि महिलाओं का सम्पत्ति में हिस्सा होना चाहिये।

एक और मुद्दा भी है जो मैं विशेष रूप से उठाना चाहता हूँ। मुझे बताया गया है कि आप एक लड़की को गोद नहीं ले सकते। मैं दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में हूँ कि मेरा कोई बच्चा नहीं है।

श्री बी.एल. सोंधी : कितनी खेद की बात है?

आचार्य जे.बी. कृपलानी : यह बड़ा खेद का विषय है। मैंने सोचा कि एक हिंदू के नाते मैं एक बच्चे को गोद ले सकता हूँ। किन्तु मेरी सदैव यह प्राथमिकता रही कि मैं किसी कन्या को गोद लूँ। मैंने कुछ कन्याओं को गोद लिया, किन्तु वे अपने पतियों के साथ चली गईं। फिर भी मैं एक लड़की को गोद लेना चाहता हूँ।मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा प्रावधान क्यों है कि आप किसी लड़की को गोद नहीं ले सकते। जहां तक पिता का सम्बन्ध है, उसे लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक प्रिय लगती हैं और लड़की जितनी अधिक ढीठ और अक्खड़ होगी पिता उसे उतना अधिक प्यार करेगा। अतः मैं अनुरोध करता हूँ कि यदि इस विधेयक में कोई त्रुटि है, तो उसे सुधार लिया जाये और कन्याओं को गोद लेने की भी अनुमति दी जाये।

महोदय, जहां तक तलाक का सम्बन्ध है, मैं आपको बताना चाहता हूँ, कि व्यक्तिगत रूप में मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि मेरा विवाह आपराधिक नहीं अपितु वैधानिक था। अतः मैं स्वयं नहीं मेरी पत्नी निश्चित रूप से किसी समय मुझे तलाक दे सकती है, यदि वह महसूस करती है कि मैं उसके साथ उचित व्यवहार नहीं कर रहा। किन्तु मैंने देखा कि जहां तक तलाक सम्बन्धी प्रावधानों का सम्बन्ध है, यह विधेयक पुरानी प्रथा से अधिक अधोगामी है। जैसा कि हमें श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर तथा एक महिला वक्ता ने बताया है, गांवों के लोगों में तलाक की बड़ी साधारण प्रथा प्रचलित है। वहां कोई महंगी कार्यवाही नहीं होती, कोई कांड नहीं होता, कोई समाचार-पत्रों में लेख नहीं छपते। इन सभी चीजों से वे दूर रहते हैं। महोदय, मैं सुझाव दूंगा कि तलाक के मामले में अधिक न्यायसंगत, अधिक वैज्ञानिक और अधिक आधुनिक रवैया अपनाया जाये।

महोदय, मैं एक सुझाव और देना चाहता हूँ जिस पर विधि मंत्री को विचार करना चाहिये। इस सुझाव से न तो कोई व्यय होगा और न ही इसका सम्बन्ध मुकद्मेबाजी, कांड

या समाचार-पत्रों में छपने वाले लेखों से है। सभी विवाह पांच वर्षों के लिए होने चाहिये और पांच वर्ष पूरे होने पर हर विवाह की अवधि बढ़ाने पर विचार किया जाना चाहिए। किसी गांव में ग्राम अधिकारी अथवा शहर या नगर में उसके सामान्तर अधिकारी के समक्ष किसी घोषणा द्वारा विवाह की अवधि बढ़ाई जा सकती है, अतः पांच वर्ष बाद आप जाकर यह कह सकते हैं कि आप अलग नहीं होना चाहते और विवाह जारी रहेगा।

इससे तलाक आसान और वैज्ञानिक हो जायेगा, कोई कांड या मुकदमेबाजी नहीं होगी और मैं आप को बता दूं कि यह अति आधुनिक होगा। मैं यह सुझाव दे रहा हूँ जिसके योग्य यह विधयेक है और मैं आपको बता दूं कि यह प्रगति और उन्नति के नये धर्म की सभी अपेक्षाओं को पूरा करता है।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती : महोदय, क्या मैं आपसे अनुरोध कर सकता हूँ कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कई माननीय सदस्य इस विधेयक पर बोलना चाहते हैं, इस पर चर्चा के लिये एक दिन और रखा जाये। माननीय प्रधानमंत्री यहां बैठे हैं और वह हमें बता सकेंगे कि सरकार चर्चा के लिए कल का दिन भी देने के लिए तैयार है या नहीं।

माननीय श्री जवाहर लाल नेहरू (प्रधानमंत्री) : महोदय, संसद जानती है कि उसके लिए हर दिन और हर घंटे से अधिक कीमती कोई चीज नहीं है। इस सत्र में विचार के लिए हमारे पास बहुत-सा अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है और अब ज्यादा दिन नहीं बचे हैं। बहरहाल, जैसा कि मैंने पहले स्पष्ट किया है, हम इस चर्चा को चलाने के लिए पूरा अवसर देना चाहते हैं और यह भी चाहते हैं कि यथासंभव अधिक से अधिक सदस्य इस चर्चा में भाग लें। स्वाभाविक है कि अन्य सरकारी काम को नुकसान पहुंचाकर अनिश्चित समय तक यह या कोई अन्य चर्चा जारी नहीं रखी जा सकती। अतः सरकार ने कहा है कि वह यथासंभव अधिक से अधिक समय देना चाहती है लेकिन यह चर्चा समाप्त होनी चाहिये। मैं दो शर्तों पर सरकार की ओर से एक और दिन अर्थात् कल का दिन इस चर्चा के लिए देने के लिए पूरी तरह तैयार हूँ : एक शर्त यह है कि चर्चा कल समाप्त हो जायेगी, दूसरे हम सदन का अन्य काम करने के लिए शनिवार को भी बैठेंगे।

श्री महावीर त्यागी : महोदय, क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूँ कि शनिवार को बैठना हमारे लिए बहुत कठिन है। माननीय प्रधानमंत्री तो समय निकाल लेंगे, क्योंकि उन्हें संसद में अधिक समय नहीं देना होता। किन्तु हमें सुबह से शाम तक बैठना होता है और शाम को अपने अन्य कार्यों को निपटाने के अलावा प्रवर समितियों की बैठकों में भाग लेना होता है। हमें जो विभिन्न दस्तावेज प्राप्त होते हैं उनको भी देखना होता है, संशोधन तैयार करने होते हैं और उन्हें भेजना होता है। शनिवार और रविवार ही दो ऐसे दिन होते हैं, जब हम यह कार्य कर सकते हैं। महोदय, मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि शनिवार को सभा की बैठक न बुलाई जाये।

पंडित गोविन्द मालवीय (यू.पी : सामान्य) : महोदय, मैं यह कहना चाहता हूँ कि

यह एक ऐसा विधेयक है जिसमें पूरे देश की किसी अन्य विधेयक की अपेक्षा अधिक रुचि प्रतीत होती है। इस सदन के सदस्यों को इसके बारे में अपनी राय व्यक्त करने का पूरा अवसर दिया जाना चाहिए। इस सदन के सभी सदस्यों को, वे चाहे इस प्रस्ताव के पक्ष में हो या इसके विरोध में हों, जो जनता के प्रतिनिधि के रूप में इस विधेयक पर अपने विचार व्यक्त करना चाहते हैं, हमें उन्हें समय देना चाहिये। यदि हम कल समय नहीं दे सकते तो सरकार को विधेयक पर चर्चा के लिए अन्य दिन देने चाहिये। मेरा निवेदन है कि यह इस देश की जनता के प्रति अथवा यहां उपस्थित सदस्यों के प्रति न्याय नहीं होगा कि किसी व्यक्ति को जो इस विधेयक पर विचार व्यक्त करना चाहता है, अपने विचार व्यक्त करने का अवसर न दिया जाये।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय प्रधानमंत्री पहले कह चुके हैं कि वह इस विधेयक पर चर्चा के लिए और सरकारी दिन आवंटित करेंगे। बहुत-से अन्य विधेयक ऐसे हैं जो प्रवर समितियों को सौंपे गये हैं और कुछ ऐसे हैं जिनके बारे में प्रवर समिति के प्रतिवेदन सभा में पेश कर दिये गये हैं जिन के बारे में प्रवर समिति के प्रतिवेदन सभा में पेश कर दिये गये हैं। इन सब किये जाने वाले कार्य को ध्यान में रखते हुए माननीय प्रधानमंत्री का स्पष्ट विचार है कि हिंदू संहिता विधेयक के लिए एक दिन से अधिक समय नहीं दिया जा सकता। अतः जहां तक इस मामले का सम्बन्ध है, यह एक सरकारी दिन है और मैं पूरी तरह सरकार के हाथों में हूँ। यह सभा पर निर्भर है कि वह सहमत होती है अथवा नहीं। मुझे इस मामले में और कुछ नहीं कहना है। अभी तक करीब सत्ताईस सदस्य बोले चुके हैं और हमने सात दिन से अधिक और उन्नीस जमा पांच यानी चौबीस घंटे ले लिये हैं।

डॉ. पी.एस. देशमुख : कितने बोलने की प्रतीक्षा कर रहे हैं?

मौलाना हसरत मोहानी (यू.पी. : मुसलमान) : इस बात की क्या गारंटी है कि हम कल चर्चा खत्म कर लेंगे?

माननीय उपाध्यक्ष : अभी भी मेरे पास करीब चौंतीस नाम हैं जो बोलना चाहते हैं। यही स्थिति है और केवल कल का दिन इस काम के लिए सरकारी दिन के रूप में आवंटित किया गया है। यह अब सभा के लिए है कि वह कल इस पर विचार करे। अब, जहां तक शनिवार का सम्बन्ध है यह सरकारी दिन के रूप में रखा जायेगा क्योंकि कल का दिन इस पर लगेगा। आप प्रवर समिति की बैठक किसी अन्य दिन बुलाने की व्यवस्था कर सकते हैं।

अब सभा कल सुबह 10:45 बजे तक के लिए स्थगित होगी।

तत्पश्चात् सभा बुधवार, 14 दिसम्बर, 1949 के पौने ग्यारह बजे तक के लिए स्थगित हुई।

---

*हिंदू संहिता–जारी

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे श्री कृपलानी से एक पत्र मिला है कि वह एक गलतफहमी होने पर बैठे गये थे। मैंने सोचा कि उन्होंने अपना भाषण समाप्त कर दिया है। उनका कहना है कि ज्यों ही मैं खड़ा हुआ पीठ की इच्छा को ध्यान में रखते हुए वह बैठ गए। यदि ऐसी बात है तो मैं उनका अपना भाषण जारी रखने का एक अवसर देना चाहूंगा। किन्तु मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वह थोड़े समय में ही अपना भाषण समाप्त कर दें।

****आचार्य जे.बी. कृपलानी (संयुक्त प्रांत : सामान्य) :** महोदय, आपने मुझे अपने भाषण के निष्कर्ष के लिए जो अवसर दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं इसे अधिक गंभीर ढंग से पूरा करना चाहता हूँ। मुझे प्रतीत होता है कि एक राष्ट्र के रूप में हमारे पास हास्य का अभाव है इसीलिए हम हास्य के पीछे के गम्भीर उद्देश्य की गहराई तक नहीं जा पाते।

मैं विधेयक का हृदय से समर्थन करता हूँ और इसके ठोस आधार हैं। इसका आधार भारत की महिलाओं के चरित्र और परम्परा की नींव है। पूरे इतिहास में हमारे जीवन और हमारी संस्कृति में उनका काफी उत्कृष्ट स्थान रहा है। प्राचीन नामों में हमारे पास कुछ प्रसिद्ध नाम हैं जिन्होंने समयानुसार कई विधाओं में योगदान किया है। उनमें से बहुत-सी महान लेखक, दार्शनिक और कवियत्री थीं। मध्यकालीन युग में जब हम पराजित और निष्कासित हो चुके थे, जब एक के बाद एक विदेशी आक्रमण हुआ, हमारी महिलाओं ने घर संभाला तब भी उनके प्राचीन सद्‌गुणों में कोई कमी नहीं आई। और जब जख्मी और निराश होकर हम घर पहुंचे तो उन्होंने हमारे जख्मों को कम किया और घर का चूल्हा जलाये रखा। उन्होंने हमें सांत्वना दी। इतना ही नहीं, उन्होंने हमारे धर्म को जीवित रखा। उन्होंने हमारी परम्पराओं को जीवित रखा; उन्होंने हमारी सांस्कृति को जीवित रखा। हिंदू घरों में हिंदू महिलायें होने के कारण ही हम आज देखते हैं कि हमारी संस्कृति और हमारा धर्म अपने चरमोष्कर्ष पर है। आज भी जब पुरुष अपनी पोशाकें बदलते हैं, हमारी महिलाएं अपनी पोशाकें नहीं बदलतीं। भारत की महिलाओं की इसी विशेषता को ही राष्ट्रपिता ने पहचाना था और उन्होंने इसका बड़ी कुशलता से उपयोग किया था।

हमारे स्वाधीनता संग्राम में वे हमारे साथ कंधे से कंधा मिला कर खड़ी हुई। मैं जानता हूँ कि कई बार उन्हें हम से अधिक कष्ट उठाना पड़ता था। जब उनमें से कुछ को लाठी चार्ज का सामना नहीं करना पड़ा और जेल नहीं जाना पड़ा, तो भी मैं जानता हूँ कि उन्हें किन दिककतों का सामना करना पड़ा और उन्होंने उनका भी खुशी से सामना किया। उन्होंने हमेशा हर तरह से हमारी सहायता की है और मैं समझता हूँ हमें यह सोचना शोभा नहीं

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 560–62

**वही, पृष्ठ 560–62

देता कि उन्हें अपनी ही चिन्ता होती है। यह तो पहनने वाला ही जानता है कि जूता कहां काटता है। वे जानती हैं कि उन्हें किन अड़चनों का सामना करना पड़ता है। मुझे खेद है कि बंगाल का एक सदस्य इस विधेयक का विरोध कर रहा है और वह यह नहीं जानते कि बंगाल में विधवाओं की क्या दशा है। मैंने उन्हें अपनी आंखों से देखा है।

श्री सुरेश चन्द्र मजूमदार (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : पश्चिम बंगाल के सभी सदस्य नहीं।

आचार्य जे.बी. कृपलानी : मैं केवल एक सदस्य की बात कर रहा था जो बड़े जोश से विधेयक का विरोध कर रहे हैं। मैं कह रहा था कि पहनने वाला ही जानता है कि जूता कहां काटता है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि महिलाओं को जो वह चाहतीं हैं मिल जाता है, तो भी घर के प्रति अपने घर के पुरुषों के प्रति उनका परम्परागत लगाव कम नहीं होगा और मुझे इसमें पूरा विश्वास है। महोदय, मैं ऐसी महिलाओं से जुड़ा हुआ हूँ जिनको आधुनिक समझा जा सकता है कि आप मुझे माफ करेंगे यदि मैं आपको अपने घरेलू जीवन की झलक देता हूँ। श्रीमती कृपलानी को आप जानते हैं और सभा भी जानते है लेकिन आप उनकी सार्वजनिक गतिविधियों के बारे में ही जानते हैं।

सारजेन्ट रोहिनी कुमार चौधरी (असम : सामान्य) : मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। महोदय, क्या आप श्रीमती कृपलानी के बारे में चर्चा कर सकते हैं, जो यहां इस सभा में उपस्थित नहीं हैं?

आचार्य जे.बी. कृपलानी : निस्संदेह, यदि कोई अन्य सदस्य उनके बारे में चर्चा करते हैं तो मुझे बड़ी आपत्ति होगी लेकिन मैंने सोचा कि मुझे उनके बारे में चर्चा करने का थोड़ा सा अधिकार है। जैसा कि मैं कह रहा था, वह सार्वजनिक जीवन में अपना पूरा हिस्सा लेती हैं किन्तु घर पहुंचने पर वह एक प्राचीन महिला की तरह एक अच्छी गृहिणी बन जाती है।

यद्यपि मैं नहीं चाहता कि कोई व्यक्ति मेरे लिए शारीरिक काम करे, मैं आपको बता सकता हूँ कि जब मैं देख नहीं रहा होता वह मेरी चप्पल साफ करने और मेरे कपड़े धोने जैसे सभी काम करती है। मुझे अन्य महिलाओं को भी, जो आधुनिक समझी जाती हैं, देखने का अवसर मिला है। मैं उन सदस्यों से भली-भांति परिचित हूँ जिनको आप केवल सभा में देखते हैं और मैंने उन्हें अपने घर के वातावरण में बच्चों के साथ देखा है, उनके पतियों के साथ उनके भाइयों के साथ देखा है और मैं बिना किसी हिचकिचाहट के कह सकता हूँ कि उनमें वे सभी सद्गुण हैं जो प्राचीन काल में महिलाओं में होते थे बल्कि अब उन्होंने अपने जीवन को समृद्ध बनाने के लिए सार्वजनिक कार्य करने का एक और सद्गुण प्राप्त कर लिया है। महादेय, मैं सिंध के एक समुदाय से सम्बन्ध रखता हूँ, जहां अधिकांश महिलायें शिक्षित हैं और आधुनिक विचारों के अनुसार उन्हें

फैशनेबिल भी समझा जा सकता है किन्तु जब मैं उनके घर जाता हूँ तो मैं देखता हूँ कि वे ममता के साथ अपने पतियों, अपने बच्चों और अपने भाइयों से प्यार करती हैं।

एक माननीय सदस्य : इतनी ममता क्यों?

आचार्य जे.बी. कृपलानी : मैंने जानबूझ कर इस शब्द का प्रयोग किया है क्योंकि आप नहीं जानते कि उनका यह प्यार हम पुरुषों के लिए बहुत असुविधाजनक भी है। हम घर पर भी चाहे जितना अपना प्रभुत्व जमाने की कोशिश करें और अपनी बात मनवाने का प्रयास करें; वे हमारे इर्द-गिर्द इस प्रकार घूमती हैं और इतनी लगन, निष्ठा, दृढ़ता तथा धीरज से सेवा करती हैं कि भारतीय पति इस कदर जोरू के गुलाम हो जाते हैं और मैंने देखा है कि विश्व में कहीं भी पति अपनी पत्नियों के इस कदर गुलाम नहीं होते। वे सदैव उनको वश में करने का प्रयास करती हैं। मैंने देखा है कि ये आधुनिक महिलायें हमारी तरह काफी शिक्षित हैं और मैंने देखा है कि मूलरूप में वे उतनी ही प्राचीन हैं, जितनी कि उनकी प्राचीन बहनें थी। मैं उन लोगों की सोचता हूँ जिनका विवाह पुरानी रूढ़िवादी महिलाओं से हुआ है और जिन्होंने उनकी लगन को देखा है, यदि वे नई महिलाओं की भक्ति को देखें तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है; और ये महिलायें चाहती हैं कि उनकी कुछ अयोग्यतायें दूर हों। कहा जाता है कि महिलाओं को उत्तराधिकार दिया जाये तो भाइयों और बहनों का प्यार कम हो जायेगा। मैं नहीं समझता कि हमारी बहनों का प्यार इतना थोथा है। इसके पीछे शताब्दियों की परम्परा है। मैंने बहनों को इसलिए गुलाम बनते देखा है कि उनके भाई शिक्षा पा सकें और अपने पैरों पर खड़े हो सकें। मैंने उन्हें परिवार के लिए त्याग करते देखा है। मेरा सम्बन्ध ऐसे समुदाय से है जहां संयुक्त परिवार प्रथा नहीं है, जहां बेटा विवाह होते ही वह अलग हो जाता है और अलग रहने लगता है किन्तु मैं जानता हूँ कि संयुक्त परिवार न होने पर भी परिवार के सदस्यों में काफी प्यार है। (बहुत अच्छे!) और इसका प्रमाण हमें तब मिला जब सिंधियों को सिंध छोड़कर भारत आना पड़ा। मैंने तीन या चार परिवारों को एक घर में एक साथ रहते देखा है। यदि किसी का घर बाहर था, यदि कोई सिंध से बाहर बस गया था और वह भारत में रहता था तो उसके घर में उसके भाई-भतीजे और ससुराल के लोग समान रूप से मिलजुल कर रहते थे और इस भीड़-भाड़ से होने वाले कष्ट को वे बड़ी खुशी सहन करते थे। तब कई लोगों को काफी धनराशि भी खर्च करनी पड़ी। अतः यह पारिवारिक स्नेह जो शताब्दियों से चल रहा है, समाप्त नहीं होगा क्योंकि हिंदू विधि में केवल मामूली परिवर्तन किया जा रहा है।

जैसा कि श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर ने हमें बताया है, इस कानून में सदा परिवर्तन होता रहा है। हिंदू धर्म के लिए यह गर्व की बात है कि इसने बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढाला है। यह प्राचीन होते हुए भी इतना नवीन है जितना कि इसे समाज के स्वस्थ जीवन के लिए होना चाहिये। समय बदल गया है।

यदि यहां विदेशी शासन न होता तो हमारे शास्त्र बदल गये होते, हमारा कानून बदल गया होता। विदेशी शासन ने इन नियमों को काफी कठोर बना दिया, और अब समय आ गया है कि हम उनमें कुछ नया जीवन लायें और नई रोशनी लायें और इस विधेयक का भी यही उद्देश्य है। मुझे आशा है कि विधेयक को समिति में एक विशेष रूप दिया जायेगा और कोई शिकायत नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि हमारे घरेलू जीवन में कोई गड़बड़ नहीं होगी और हमारी महिलाओं के प्रेम और भक्ति में कोई कमी नहीं आयेगी। पुरुषों के प्रति उनकी अनुरक्ति में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आयेगी और भारत की भावी महिला अपने घर तथा देश दोनों के ही प्रति समर्पित रहेगी। महोदय, मैंने वक्तव्य पूरा कर दिया है।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट (बम्बई प्रांत) :** माननीय महोदय, हिंदू कोड बिल जब से पेश हुआ है तब से हिंदुस्तान में एक हलचल पैदा हो गई है। डाक्टर सेन ने कहा है कि यह विधेयक 50 या 60 वर्ष पहले से ही हमारे सामने है। किन्तु मैंने जो किताबें पढ़ी हैं उनसे यह पता नहीं चलता कि यह संहिता पहले कभी आई थी। यद्यपि हिंदू कानून था और उसमें जब तक परिवर्तन होते रहे हैं जिससे हिंदू समाज का ध्यान खिंचा है। इसमें कोई संदेह नहीं है। लेकिन जिस शक्ल में यह हिंदू संहिता विधेयक है वह हमारे सामने सन् 1939 के बाद आया है। और उसके पहले डॉक्टर देशमुख ने जब 1938 में विवाह-विधेयक इसी सदन में पेश किया था, तो उस समय कुछ चर्चा चली थी।

डॉ. पी.के. सेन (बिहार : सामान्य) : क्या मैं स्पष्ट कर सकता हूं? मैंने कहा था कि यह 60 वर्षों से अधिक अर्थात् 1856 या 1855 से विधानसभा के समक्ष रहा है। किन्तु वह विवाह विधि के संबध में था, न कि किन्हीं अन्य पहलुओं के संदर्भ में था।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मैं भी यही कहता हूं कि इसमें से कुछ-कुछ विषय सामने थे, हिंदू समाज के सामने थे, और ऐसे विषय सिर्फ हिंदू समाज ही के सामने नहीं थे, लेकिन पारसियों के सामने थे और मुसलमानों के भी सामने थे। मेरा कहना यह है कि यह हिंदू संहिता विधेयक जिस रीति से लाया गया है और जिस तरह से एक समिति, जिसे राउ समिति कहते हैं, बनी उसका थोड़ा-सा इतिहास आप देख लीजिये और मैं आपको यह भी दिखाना चाहता हूं कि हिंदू समाज, जिसकी आबादी करीब तीस करोड़ है, उसकी व्यवस्था के लिए जो कायदे-कानून बनाये जाते हैं, उसके लिये कैसे समय निश्चित होता है, उसका प्रचार तरीका क्या होता है, लोकमत कैसे जाना जाता है और प्रतिक्रिया जानने के लिये कौन-से तरीके अपनाए जाते हैं। हिंदू संहिता विधेयक आना चाहिये या नहीं आना चाहिये, हिंदूसमाज सुदृढ़िकृत होना चाहिये या नहीं होना

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 576-85

चाहिए, हिंदू कानून के अलग-अलग हो हिस्से हैं उनको एक में लाकर गुंथनी चाहिये या नहीं चाहिये यह सवाल नहीं है। मैं आपका ध्यान इस बात पर दिलाना चाहता हूँ कि राउ समिति 20 जनवरी, सन् 1944 को वह समिति बनी और उसने अपना काम शुरू किया और विधेयक का मसौदा बनवाया। वह विधेयक लोगों के सामने 5 अगस्त, 1944 को आया और उसके बाद दो महीने की अवधि दी गई कि 5 अगस्त, 1944 तक, लोग अपनी जो राय हो, उसको भेज दें। और महाशय, मैं यह ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि तीस करोड़ की आबादी के लिये भारत सरकार ने एक हजार प्रतियाँ छपवाई थीं। उसके बाद जब कुछ जोर दिया गया तो तीन हजार और प्रतियाँ छपवाई गयीं।

श्री महावीर सिंह त्यागी (यू.पी. : सामान्य) : वे अंग्रेजी में थीं या हिन्दी में?

श्री गोकुलभाई दौलत राम भट्ट : वह सभी चार हजार प्रतियाँ अंग्रेजी में थीं। उसके बाद राउ साहब ने प्रांतीय सरकारों से कहा कि उसका अनुवाद छपवा कर बटवायें। वह अनुवाद भी छपा। फिर भी मैं समझता हूँ कि तीस करोड़ की आबादी में 50 से 60 हजार से ज्यादा प्रतियाँ नहीं बंटवाई गई।

अब इस प्रकार का यह विधेयक जो कि इतने महत्व का विधेयक है, जो कि हिंदू समाज को सुदृढ़ करने वाला है जो कि एक प्रकार से नयी हवा को लाने वाली चीज हैं, जो कि एक सुधार करने वाली चीज है, इस सुधार करने वाली चीज के विषय में अभिप्राय जानने के लिये कितने लोगों के पास यह विधेयक पहुंचा और कहां तक इसका प्रचार किया गया, यही मैं बताता हूँ। दो महीने की इसके लिये अवधि रखी गयी और इसके बाद कमेटी ने दौरा किया। उनका दौरा मात्र 36 दिन का था। वे सभी शहरों में नहीं गये, उन्होंने गांवों और कस्बों को छोड़ दिया। वह दौरा करने लोगों के बीच यानी जनता में नहीं गये न ही वह किसी विधवा के पास गये, उससे पूछने के लिए कि "बहन, आपको तो बंगाल में दायभाग की प्रथा के अनुसार सम्पत्ति में हिस्सा मिलता रहता है, फिर भी आप दुखी क्यों हो?" वह मद्रास में नहीं गये जो पूछते कि वहां तो मातृसत्तात्मक समाज के नियमों के तहत सम्पत्ति मिलती है फिर बहनों और लड़कियों को दु:ख कैसे हैं? उन्होंने यह पता नहीं लगाया कि क्यों विधवायें बंगाल में ही दुखी हैं या मद्रास में दुखी हैं या कहीं और जगह भी दुखी हैं और अगर किसी और जगह भी दुखी हैं, तो उनके दुखी होने का कारण क्या है? उनका सम्पत्ति में भाग नहीं है इसलिये वह दुखी हैं, मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। स्त्री सम्पत्ति न होने से ही दु:खी होती हैं ऐसा नहीं है। एक अड़चन जो थी वह यह थी कि छोटी उम्र में विधवा हो जाती थीं और वे संसार का सुख नहीं भोग पाती थीं। ऐसी विधवाओं को दुबारा शादी करने का मौका क्यों न दिया जाये? इसके लिये ईश्वरचन्द विद्यासागर तथा मलबारी साहब ने कोशिश की और मैं समझता कि सन् 1856 ई. में या पता नहीं कौन-सा साल है, मुझे याद नहीं है, एक विधवा पुनर्विवाह कानून उस वक्त आया और अभी तक चल रहा है। लेकिन मुझे

यह भी बताइये कि उसके मुताबिक कितने लोगों ने फायदा उठाया और उसके कारण उनके घरों में क्या सुख आ गया और क्या समृद्धि आ गयी? मेरा अर्ज करने का मतलब यह है कि सिर्फ कानून से ही समाज नहीं बदलेगा, कोई चीज आप ऊपर से थोप दें तो उससे कुछ बनने वाला नहीं है। इसके बारे में मैं एक मिसाल देना चाहता हूँ और वह है पारसी मैरिज इण्ड डाइवोर्स विधेयक की। यह विधेयक पहले-पहल सन् 1865 ई. में बना था और उसका संशोधन करने के लिये सन् 1936 ई. में इस विधेयक को को सर कावसजी जहांगीर ने इसी सदन में रखा था। मैं उसका इतिहास बताना चाहता हूँ। वह इतिहास यह है कि पारसी समाज के कुछ मित्रों ने यह सोचा, जैसा कि आज हम लोग सोच रहे हैं, कि संशोधन होना चाहिये। कृपलानी जी अपने घर को खतरे में नहीं डालना चाहते, इसलिये वह जरूर इस विधेयक का समर्थन करेंगे। मैं भी मेरे घर को खतरे में नहीं डालना चाहता, तो क्या इसीलिये मैं इसका समर्थन करूं?

श्री कृष्णाचन्द्र शर्मा (यू.पी. : सामान्य) : सब बुड्ढे आदमी एक जैसे ही हैं।

श्री गोकुलभाई दौलत राम भट्ट : ठीक है, मैं अभी शर्मा जी को जवाब नहीं दे रहा हूँ। वह तो बीवी का कोट लेकर उसके पीछे-पीछे चलते रह सकते हैं।

श्री कृष्णाचन्द्र शर्मा : लेकिन वह कोट नहीं पहनती है।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मेरा अर्ज करने का मतलब यह है कि यह पारसी मैरिज इण्ड डाइवोर्स विधेयक जो था उसके बारे में जब कुछ पारसी मित्रों ने सुझाया कि अब आपने सन् 1865 ई. बिल का सुधार करना है, उसे संशोधित करना है, तब उन्होंने क्या किया? उन्होंने यह किया कि अपनी पारसी पंचायत की एक ला-कमेटी बिठाई। इस कमेटी में क्या हुआ? इस कमेटी ने ऐसा नहीं किया कि एक संशोधन विधेयक बना दिया और दो महीने की गुंजाइश दे दी, दो महीने में अपनी राय भेज दीजिये फिर हम अपना निर्णय करेंगे। बल्कि इस कमेटी ने चार साल तक प्रश्नावली भेजी। पारसियों की संख्या कितनी है? एक लाख सन् 1921 की जनगणना के आधार पर, यह ज्यादा से ज्यादा डेढ़ लाख हो सकती है। चार साल तक उस कमेटी की रिपोर्ट उनके सामने रही, बाद में फिर उन्होंने उसे मंजूर किया। यह रिपोर्ट फिर पारसी समाज में परिचालित हुई थी और उस रिपोर्ट पर भी उन्होंने राय मांगी थी, सिर्फ बम्बई वालों की नहीं, सिर्फ अहमदबाद वालों की नहीं, मद्रास में रहने वालों की नहीं, बल्कि परशिया में, चीन में जहां एक-दो पारसी ही कुटुम्ब रहते थे, वहां के लोगों को भी इस रिपोर्ट पर पहले राय मांगी कि आप क्या चाहते हो। पढ़े-लिखे या वकील लोग जो होते हैं, वह एक बात को अपनी वाक्पटुता किसी तरह उल्टा, सीधा भी समझा देते हैं, लेकिन वैसी वाक् शक्ति जिनके पास नहीं है, उनके पास भी यह रिपोर्ट भेजी गई। क्या बहुमत, क्या अल्पमत सबकी राय मांगी गई। और इस तरह सबकी राय लेने के बाद सन् 1936 में यह विधेयक संशोधित

करके भेजा गया और इस तरह उस विधेयक का विषय 1923 से लेकर सन् 1936 तक सबके सामने रहने के बाद आखिरकार संशोधित रूप में पारित किया गया।

मेरे मन में राउ साहिब के लिये आदर है; उन्होंने बहुत काम किया है—उन्होंने विधान बनाने में भी बहुत मदद की है। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि इस रिपोर्ट में उन्होंने यह बतलाया है कि उसमें थोड़े से ही व्यक्ति हैं जिनसे राय ली गई है, पर उन्होंने यह भी कबूल किया है कि इसमें समाज विभाजित है। रेणुका बहन तो अभी यहां है नहीं, लेकिन उनके बारे में भी कोई दूसरी बात मैं नहीं कह रहा हूँ। जब वे 1943-44 के विवाह-बिल पर वह बोल रही थीं, तब उन्होंने यह कहा था कि अगर जनमत लिया जाये, तो जो जोशीले जवान हैं, 'जोशीले जवान' शब्द उन्होंने नहीं प्रयोग किया, उन्होंने 'यूथ' कहा, यह 'जोशीले जवान' शब्द मैं कहा रहा हूँ, उसकी व्याख्या कर रहा हूँ, कि सभी जोशील जवान उनके साथ होंगे, यानी इस विधेयक के पक्ष में होंगे। मैं अपनी इस बहन से कहना चाहता हूँ कि आज इस सदन में जो छः या आठ बहने हैं, यदि वे और उनके बारे में कहा कि हिंदुस्तान में ऐसा सुसंस्कृत आदमी मिलने वाला नहीं है, जो परंपरावादी भी थे और उसके साथ समाज सुधार के काम में और अधिकारों के बारे में भी आगे आने वाले थे। इस क्षेत्र में उनसे ज्यादा काम करने वाला कौन था? लेकिन उन्हीं पूज्य मालवीय जी ने कहा था कि मैं यह ठीक नहीं मानता हूँ कि इस रीति से हिंदू संहिता विधेयक बनाया जाये। अच्छा, उनकी बात छोड़ दीजिये। आप सर तेज बहादुर सप्रू को तो जानते ही होंगे, वह भी अक्ल और होशियारी में किसी से कम नहीं थे, उन्होंने भी कहा था मैं इसके हक में हूँ, लेकिन मैं मानता हूँ, कि अभी यह अवसर नहीं है कि इस तरह का विधेयक बनाया जाये। मैं इससे आगे भी बताता हूँ। सर चिमनलाल सीतलवाड़ जिनकी हैसियत किसी से कम नहीं थी और जो समाज सुधार में सबसे आगे थे, उन्होंने कहा था कि मैं संहिताकरण नहीं मानता हूँ, मगर विधवाओं और बेटियों को हिस्सा देने के पक्ष में हूँ। यह समझना कि सिर्फ अपनी-सी बात कहने वाले समझदार हैं और विरोधी बात जो कहते हैं वे सरासर मूर्ख हैं, यह ठीक नहीं है। मैं बहनों और भाइयों को इस सदन की मार्फत और अध्यक्ष महोदय आपकी मार्फत कहना चाहता हूँ, कि इस विधेयक पर इस तरह विचार न किया जाये और मैं अपने माननीय नेता प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से जो अभी यहां विराजमान नहीं हैं। कहना चाहता हूँ, कि हिंदूसमाज रिवाज़ों को मिलाकर एक संहिता बनाना चाहते हैं, उसमें मैं भी जरूर शामिल हूँ, लेकिन क्या जनता को इस बारे में अपनी राय जाहिर करने का मौका दिया गया है? एक छोटे से पारसी समाज इसने अपने सारे अंगों को अपने साथ रखा, सबकी अलग-अलग राय जानी, अपने विधेयक को आगे बढ़ाया और तभी उनका काम चला, नहीं तो नहीं चल सकता। सन् 1921 में सिविल मैरिज एक्ट का संशोधन करने के लिये एक विधेयक पेश किया गया था। उसकी मंशा भी यह थी, जैसा कि आज है। तब हिंदू संहिता क्यों बनाते हो, भारतीय संहिता बना लीजिये। सब लोग एक ही देश-भारत में रहते हैं, उन सबके रीति-रिवाज भी एक होने चाहिये। जब उनकी भाषा एक हो गई, तो संहिता भी सारे भारत के लोगों की एक ही होनी

चाहिये, जिससे आपस में एकता फैलेगी और भारत एक हो जायेगा। मैं उस समय की एक बात बतलाना चाहता हूँ। ईसाइयों और मुसलमानों का तब इतना विरोध था कि डाक्टर गौड़ को ऐसा कहना पड़ाः इसने एक दबाव पैदा किया था। मुस्लिम और पारसी समुदाय की ओर से कि मुझे इसे छोड़कर नया विधेयक सन् 1923 में लाना पड़ा। और उनको करना भी पड़ा। हिंदू समाज की कोई कद्र नहीं है। जिसमें इतने लोग हैं, उसकी कोई कद्र नहीं है। यहाँ मालवीय जी की बात की कोई कद्र नहीं, तब पट्टाभि साहेब को तो जाने दीजिये, सर अल्लादी और लक्ष्मीकांत मैत्रेय को भी जाने दीजिये, क्योंकि उनके कहने का कोई महत्व नहीं और उनके बारे में क्या कहा जाये यानी राजेन्द्रबाबू, जिनको अजातशत्रु कहा जाता है। वह तो बुद्धि और दिमाग के भण्डार हैं और देश के हीरा हैं। जिसने गांधी जी के विचारों का पालन किया है, और जो आज देश को तो क्या, दुनिया तक को समझा सकते हैं। वह आदमी कहता है कि मेहरबानी करके, आज मौका नहीं है, इसमें कई ऐसी चीजें हैं, जो विवादस्पद हैं, उनको अलग कर दीजिये, उन पर न जाइये। लेकिन क्या करें, हमारे कुछ नेता यह कहते हैं कि नहीं, इसको जल्दी लाना चाहिये। तो जल्दी कर लें। लेकिन इतना तो ध्यान रखें कि इसमें सब लोगों की राय व मंजूरी मिल जाये। इसका एक खास फायदा डाक्टर अम्बेडकर साहब ने उठाया है। क्या उठाया, मैं बता रहा हूँ, वह क्या फायदा था। 1948 में जब यह विधेयक पेश किया गया, तब हमने आपस में बैठ कर यह तय किया कि अभी कोई साहब इस पर बोलेंगे नहीं। तब न तो अम्बेडकर साहब ने विशेष कहा न किसी और ने। उस समय यह सोचा गया था कि अभी इस विधेयक को सिर्फ पेश करने से बहनों को और दूसरों को जो सुधारक हैं, जो एकता चाहते हैं, संहिताकरण चाहते हैं, विवेकी हैं, उनको संतोष हो जाएगा। तो उन्हें संतोष होने दिया गया। इसका फायदा उठाते हुए डॉ. अम्बेडकर साहब ने कहा कि इसे लोगों ने आम तौर से मान लिया है, इसलिए यह विधेयक ठीक है। नहीं साहब, इसके अन्दर जो कई धारायें हैं, कई चीजें हैं उनको हमने नहीं देखा ही नहीं है। लेकिन क्योंकि हमारे कुछ नेताओं ने कहा कि इसको जरा आगे बढ़ने तो दीजिये। हमने कहा अच्छा! ओ ले जाइये। बाजार में लाइये। इस प्रकार यह बाजार में आया, इसका जुलुस निकाला गया है और अब हम यहां इसे देख रहे हैं। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि अगर इसके प्रवर समिति में जाने से पहले हमारी यह सब बहस हो जाती, तो डॉ. अम्बेडकर साहब और प्रवर समिति के हमारे मित्रों को बहुत फायदा पहुंचता। उनको यह मालूम होता कि इसकी शक्ल कैसी होनी चाहिये अब हम एक प्रकार से उलझन में पड़े गये हैं। उलझन यह आई है कि अगर हम कहते हैं कि इसे फिर से प्रवर समिति में भेजा जाय तो मालूम नहीं कायदे कानून के कैसे चंगुल में हम फंस जाएँ। अगर हम कहते हैं कि इसको अभी बन्द कर दिया जाय तो हमारे ऊपर एक तलवार खड़ी है। अब हम क्या करें? हम बहुत से पेचों में फंस गये हैं। उसमें से हमें निकालना, हमारे नेताओं का और भगवान का काम है।

मैं यह कहा रहा था कि इस विधेयक को आज इस मौके पर लाने की इसलिये जरूरत नहीं है कि हमने हिंदू समाज की राय नहीं जानी है। हिंदू समाज और वह भी

शहरों का, जिसकी राय ली गई है, उसमें कितने लोग थे? इसमें केवल 121 व्यक्तियों ने तथा 102 संस्थाओं ने लिखित ब्यान दिये और उन्हीं की गवाही हुई है। अब क्या यह कहें कि यह हिंदू समाज की राय है? महाशय मित्तर ने जो राय दी है और वह भी प्रत्येक भाग की अलग-अलग हिस्सों में, मद्रास को छोड़ कर, सब जगह इसका विरोध किया गया है। जो दायभाग वाले हैं, उन्होंने बंगाल से विरोध किया। बम्बई वालों का विरोध आया है। क्योंकि विरोध स्वभावी है और कई कारण भी हैं, इसलिये इसका विरोध हुआ है। इस विरोध के होते हुये भी हम यह कहें कि नहीं अल्पमत वाले जो कहते हैं, वही सही बात है और वह आपको मानना पड़ेगी, तो यह बहुत मुश्किल चीज है। हिंदू समाज का जो एकीकरण किया जाये, वह कायदे से होना चाहिये। मैं यह कैसे कर सकता हूँ कि स्त्रियों को, बहनों को कोई हिस्सा नहीं देना चाहिये। उन्हें दिया जाये, लेकिन बहनों से खुद पूछ लीजिये कि हिस्सा मिल जाने के बाद क्या आपको पीहर से कोई प्यार रहेगा, कितनी मुहब्बत बाकी रहेगी? यह पूछिये तो सही सुधारों का पक्ष लेने वाली हमारी बहने हैं, उनसे कि उनका पिता कहां रहता है, भाई कहां रहता है? वे सब अपनी-अपनी काटेज में, अपने-अपने घर में, महल में बैठे रहते हैं और संबंधी के तौर पूछते भी नहीं। ऐसे आज के सुधरे हुये आदमी हैं, इसलिए अगर हिस्सा हो गया तो बाद में हम क्या करेंगे? लेकिन मैं बताना चाहता था कि इन सबके होते हुए भी अल्पमत की बातें हमारे सामने आती हैं, यद्यपि सबकी राय नहीं ली गई है, तब भी हमारे ऊपर इसका दबाव डाला जा रहा है। दबाव डाल कर कहा जा रहा है कि इस चीज को अपना लो। वे नहीं देखते कि बाद में इससे कितनी उलझनें पैदा हो जायेंगी।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि मेहरबानी करके आप इसमें कोई बीच का रास्ता निकालिये। बीच का रास्ता निकालने से ही हमें सन्तोष होगा, समाज को सन्तोष होगा और जो हलचल है वह बैठ जायेगी। आज जैसा हमारे पाटस्कर ने कहा है, इस वक्त कई उलझने हैं। इस संधी में एक और बड़ी उलझन क्यों पैदा करते हो? एक और दूसरी कांटे की बाड़ी क्यों बोते हो जिससे रास्ता खराब हो जाए और उसे साफ करने के लिये हमें और खास मेहनत करनी पड़े। ऐसा क्यों करते हो? मेहरबानी करके कुछ दूसरा काम कीजिये और इसको एक-दो साल के लिये स्थगित रखिये। मैं अपनी बहनों से कहना चाहता हूँ, जो बहनें इसका आदर करती हैं, अपनी उन बहनों से जो देवियां हैं कि देश की भलाई के लिये आपको भी कहना चाहिये, हमारे जवाहरलाल जी से जाकर कहना चाहिये, कि मेहरबानी करके इस चीज को एक साल या दो साल के लिये रोक दीजिये। इस तरह से इसके अन्दर बहुत-सी चीजें समाविष्ट हो जायेंगी। लेकिन वे तो यह सोचती हैं कि आज सन् 1950 की अवधि में यदि यह संहिता पारित नहीं हुई तो कभी नहीं होगी, क्योंकि आगे जो लोग आयेंगे वे विधेयक पारित नहीं होने देंगे। लेकिन मैं चाहता हूँ कि अगर आज अपनी संहिता आपने पारित भी कर दी तो आइन्दा क्या होगा? यहां बैठने वाले लोग ऐसे आयेंगे जो यह कहेंगे कि पहला काम हमारा यह होगा कि यह जो

हिंदू संहिता बनती है उसमें सुधार कर दें। इसलिये मैं अर्ज करना चाहता हूँ कि मेहरबानी करके अगर इस चीज को रोक सकते हैं तो जरूर रोकिये। और अगर नहीं रोक सकते हैं तब मेरी सलाह है जिस बायीं ओर जायें न दायीं ओर जायें, बीच का रास्ता अपनाईये। स्वर्ग अवसर तलाश करें, इससे ही समाज को संतोष जो सकता है।

दूसरी बात यह कि डॉ. अम्बेडकर साहब ने मिस्टर सर्वटे के 'प्वाइंट आफ आर्डर' का जवाब देते हुये कहा था और उपाध्यक्ष महोदय, आपने भी उसका समर्थन किया था कि विधेयक सिर्फ प्रांतों में जो कि आज हमारे प्रांत हैं उन्हीं पर ही लागू होने वाला है। और अगर उसे रिसायतों पर लागू करेंगे तो वह रियासतों के पास विधेयक भेजा जाएगा, वहाँ इस विधेयक को परिचालित किया जायेगा और उसके बाद हम देखेंगे कि इसमें क्या हो सकता है। डॉ. अम्बेडकर साबह ने तब यह कहा था:–

"जब इस विधेयक की सीमा को भारतीय रियासतों तब बढ़ाने का अवसर आएगा और उस उद्देश्य का उचित प्रस्ताव इस सभा के समक्ष रखा जाएगा, तो उस दिन सरकार उनकी इच्छाओं तथा उद्देश्यों पर ध्यान देगी और इसमें कोई संदेह नहीं कि तब हम सभी भारतीय संघ में शामिल होने वाली रियासतों से भी सलाह करेंगे।"

यदि यही स्थिति है, तो जिसे आज पारित किया गया है, छः महीनों के बाद फिर रियासतों के पास भेजा जाएगा और रियासत वाले चाहेंगे तो आप और आगे चले जायेंगे। रियासत वाले तो वैसे ही कुछ पीछे हैं, वह इससे और भी पीछे हो जाएंगे। तो मेहरबानी करके आप इस चीज को भी अपनी निगाह में रखिये कि क्या हो सकता है।

मुझे यह कहने की अनुमति दीजिये कि इसमें लोकमत जानने का तरीका सही नहीं था। यह मैंने पहले बता दिया है। लेकिन हमारा विधान जो हमने ढाई–तीन साल में बनाया, उसमें हमने कितनी सावधानी बरती थी, तो भी हमारे बहुत सारे भाई कहते हैं कि वह ठीक नहीं बना। हमने प्रांतों की सरकारों को पूछा, उनके पास विधान का मसौदा भेजा, और वहां विधान सभाओं में, मंत्रिमंडल में उस पर चर्चा हुई और उन्होंने अपनी राय भेजी। पर यह भी आप जानते हैं कि राउ कमेटी ने अपनी रिपोर्ट का मसौदा किसी प्रान्तीय सरकार के पास राय के लिये भेजा ही नहीं, इस तरीके से यह संहिता प्रस्तुत है। इसीलिये मैं कहना चाहता हूँ कि लोगों की राय पूरी और सही तौर से नहीं ली गई है। जिस आधार पर आपका यह दावा है वह भी ठोस नहीं है। इसमें मुझे कोई शक नहीं कि रेणुका बहन ने कहा था कि आधा देश इसके साथ है। लेकिन राउ कमेटी की रिपोर्ट ने कहा है कि समाज इस पर विभाजित है। यह देखते हुए मैं किसकी बात मानूं। जिन्होंने जांच करके 1947 में रिपोर्ट दी है उनकी मानूं या रेणुका बहन की 1944 की बात मानूं?

माननीय उपाध्यक्ष : अभी कई सदस्य बोलने वाले हैं, मेहरबानी करके खत्म कीजये।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मैं पांच या सात मिनट में खत्म करता हूँ। अगर आपकी इजाजत हो तो कुछ बातें और कह दूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : आपकी इच्छा है। पर तीस मिनट खत्म हो गये।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : दो बातें करके मैं बहुत जल्दी से खत्म करता हूँ। मैं यह कहता हूँ, यह अकेला हिंदू समाज है कि आप जैसा भी घूसा मारो, वह चुपचाप सह लेगा। मुस्लिम समुदाय की ओर देखो। क्या किसी के पास हिम्मत है कि वह उनके लिए संहिता बनाये? शिया और सुन्नी विचारधाराओं को क्यों नहीं मिलाया जाता? क्या आप इसाइयों के कानून में हस्तक्षेप कर सकते हो? पारसियों के बारे में जरा हिम्मत कीजिये। यह बेचारा हिंदू समाज है जो सब कुछ सहन करता है, क्योंकि आप सोचते हैं यह मरा हुआ समाज है? अम्बेडकर साहब कहते हैं वे शूद्र जाति से संबंध रखते हैं। मैं कहता हूँ कि वे बहुत ऊंचे हैं। आपको कोई मुनि बता रहा है, कोई ऋषि बता रहा है, जबकि वे स्वयं कहते हैं कि वे शूद्र हैं, तो विश्वामित्र बन जाइये। आप जो कुछ हैं वह तो हैं ही, और बुद्धिमान भी हैं। तब निम्नता के भाव से क्यों देखते हैं? उन्होंने कहा कि स्मृतियां बदलती रहीं। ब्राह्मण लिखते रहे। वे कर भी क्या सकते थे? आपका विभाग क्या काम करता है? वही काम स्मृतिकारों का था। वह एक विभाग था जो समय-समय पर कायदे कानूनों को संशोधित करता रहा था। जिस तरह आप कानूनों में संशोधन कर पेश करते हैं, उसी तरह वह भी करते थे। पर इस प्रश्न में मैं ज्यादा नहीं जाना चाहता और न मैं दूसरी बातों में जाना चाहता हूँ। हमारी बहनें चाहती हैं कि यह मौलिक अधिकारों में आना चाहिए और जो लोग इसका विरोध करते हैं वे मौलिक अधिकारों पर विचार नहीं कर सकते। वे कहते हैं आप मौलिक अधिकारों को नहीं समझते? यह मौलिक अधिकार की शक्ल ले रहा है या राज्य का कानून? क्या हिंदू संहिता, राज्य कानून बनने जा रहा है या व्यक्तिगत या निजी कानून? अगर आप भारतीय संहिता का विधेयक लाते तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि कोई भी इसका विरोध नहीं करता लेकिन आप हिंदू संहिता विधेयक बना रहे हो और हिंदू लॉ में तबदीली कर रहे हो। परन्तु वैयक्ति कानून राज्य कानून नहीं है और इसलिए यह लागू नहीं होता। श्री गौड़ ने कहा था कि जब कोई "अवतार" होगा तब इस संहिता को लायेगा। गौड़ साहब शायद नागपुर में बैठे होंगे और अब उनको यह सुन कर तसल्ली हुई होगी कि "अवतार" का प्रादुर्भाव हो गया है और हिंदू संहिता विधेयक आ गया है।

श्री महावीर त्यागी : घृणित व्यक्ति!

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मैं दो चार मिनटों में और अपनी बात कह कर खत्म करना चाहता हूँ। कहा जाता है कि बहनों और भाइयों के साथ बर्ताव एक-सा करना चाहिये। कृपलानी जी तो चले गये, दूसरे क्या कहते हैं उन्हें क्यों सुनना चाहिए?

तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि बहनों को यह दुगने अधिकार क्यों देने चाहिए। वह अपने पीहर से स्त्रीधन ले जायगी, दहेज में और दूसरी चीजें जो पिता देगा वह ले जायेगी और फिर अपना हिस्सा भी ले जायेगी और पति के घर में तो उसका हिस्सा है ही। तो यह बहनें इतनी स्वार्थी कैसे बन गईं? महिलाएं स्वत: समृद्धि की अवतार हैं। वे संसारिक माया और अधिक क्यों चाहती है? श्रीमती कमला चौधरी ने कहा है कि नि:संदेह धन और समृद्धि स्वभावत: धनी और समृद्धि की ओर वापिस जाएगी। महिलाएं स्वत: धन और समृद्धि की अवतार हैं। वे इस में और वृद्धि क्यों करना चाहती है? जो थोड़ा-सा मोह और माया अब तक इनके पास है, उससे तो यह संसार को वशीभूत कर सकी हैं। अब और ज्यादा मोह और माया बढ़ जायेगी तो कोई नहीं कह सकता कि क्या हो जाएगा? अगर माया नि:संदेह माया के पास जायेगी, तो प्रकृति और प्रकृति रहेगी। संसार में और पुरुषों को निकाल दीजिये। अगर पुरुष के बिना माया को चलना हो तो ऐसा ही कीजिये।

हमारे ट्रावनकोर और कोचीन के मित्र बहुत आगे हैं लेकिन उनको भी ध्यान रखना चाहिये कि उनके अकेले आगे-जाने से काम नहीं चलेगा। उन्हें गांव वालों को भी अपने साथ रखना चाहिये और अगर उनको भी साथ लेना है तो मेहरबानी करके और ज्यादा प्रचार कीजिये और उनको इसके निहितार्थ समझाइये, तो इसी तरह इसका उद्देश्य पूरा हो जाएगा, इसमें सन्देह नहीं है। कई जगह यह कहा जा रहा है कि यह उलटी गंगा बहाई जा रही है और यह कुछ अंश में ठीक भी है। पानी को ढाल में स्वाभाविक रूप में बहने दीजिये और अगर आप अल्पमत के मुद्दों को उठा कर उल्टी गंगा बहायेंगे तो अभी आप ऐसा कर सकते हैं। लेकिन आइन्दा इस किस्म का जमाना आयेगा कि इसमें ऐसे किए गए उग्र संशोधन आपको अचम्भित, अवाक कर देंगे। जो होना है उसे होना देना चाहिए। मैं इसके विस्तार में नहीं पड़ना चाहता।

मैं एक बात और कहना चाहता हूँ कि हमारे स्मृतिकार (कानूनदान) याज्ञवल्क्य, मनुस्मृति से भी जरा आगे गये हैं। मैं इस झगड़े में नहीं पड़ना चाहता कि यह मनुस्मृति कौन से मनु की बनाई हुई हैं क्योंकि मनु बहुत से हुये हैं। परन्तु याज्ञवल्क्य स्मृति के भाष्यकार श्री विज्ञानेश्वर ने, जो मिताक्षर ने भाष्य लिखा है और वे जो दायभाग और मयूख-भाष्य के लिखने वाले हैं, उन्होंने अलग और विशिष्ट राय रखी है। मैं सारे उदाहरण तो नहीं देना चाहता। पर उन्होंने कहा है कि यदि स्त्री को स्त्रीधन न दिया गया हो तो जितना अंश पुत्र को मिले उतना ही स्त्री को भी मिलना चाहिये। यह स्पष्ट रूप से कहा गया है। मैं दावे के साथ कहना चाहता हूँ कि स्त्रीधन का जिक्र हमारी स्मृतियों में है। इंग्लैण्ड के लोगों ने अपनी तक अपने कानून को संहिताबद्ध नहीं किया। मैं यह बताना चाहता हूँ कि अंग्रेजी की 'बुक आफ प्रेयर्स' में शादी के लिये जो निषिद्ध कोटियाँ दी गई हैं, वह 1565 ईस्वीं में तय की गई थीं। वह 1915 ईस्वी तक उसी तरह प्रभावशील

रही फिर सन् 1915 में सिर्फ एक कोटि में परिवर्तन किया है कि साली से शादी नहीं हो सकती थी। तो मैं कहना चाहता हूँ कि हम इससे तो बहुत आगे गये हैं। उनको एक कोटि बदलने में कितने वर्ष लगे और यहां, सिविल विवाह कानून में दूसरे क्रम की भतीजी को भी विवाह करने की अनुमति दे दी है। जो बहुत चाहते हैं, वे सिविल विवाह कानून को माध्यम बना लें, लेकिन वही शर्त सब पर क्यों लगाते हैं? सिविल विवाह कानून में दूसरे क्रम की भतीजी का प्रावधान सेकिंड है। जो उसके अनुसार चलना चाहे चलें। इस संहिता को बनाने में हमको सुजनन विज्ञान के सिद्धांतों का भी ध्यान रखना चाहिये। ऐसी बात नहीं है कि स्मृतिकारों ने जो मन में आया वहीं लिख दिया। हमारे स्मृतिकार सुजनन विज्ञान के ज्ञाता थे। वे मामूली आदमी नहीं थे। वह काफी बड़े जानकार थे। जो कुछ वे सिद्धांतों का प्रतिपादन करते थे, वे सभी तरह से पूर्ण और परिपक्वता के साथ प्रस्तुत किए जाते थे। उनकी कोटियां इतनी पूर्ण होती थीं कि उनमें 6, 8, 10 या 12 महीनों के बाद ही परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं होती थी। हमारे स्मृतिकार बड़े बुद्धिमान थे। जो कुछ उन्होंने लिखा है उसमें संशोधन करने के लिये सैकड़ों साल तक विचार करने की आवश्यकता है। बेशक, आप उसमें संशोधन अवश्य कीजिये क्योंकि कालांतर में स्मृतियों में संशोधन होते रहे हैं। लेकिन हमको यह पूरी तरह विचार कर लेना चाहिये कि ऐसा करने से समाज का फायदा है या नुकसान है।

श्री एच.वी. कामत (मध्यप्रांत और बरार : सामान्य) : क्या सदन सम्मानीय के सदस्य बुद्धिमान नहीं हैं?

माननीय उपाध्यक्ष : आप आगे बोलिए।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मैं इतना बुद्धिमान और पंडित नहीं हूँ जितने श्री कामत हैं। मैं यह नहीं कहता कि यहां के सदस्यों में बुद्धि नहीं है। हर एक आदमी में अपनी बुद्धि होती है, हर एक आदमी सोच भी सकता है। लेकिन मैं यह कहता हूँ कि मैं डाक्टर अम्बेडकर की हर बात नहीं मानूंगा कि महान लोगों के महान विचार होते हैं। इसी तरह अगर कोई पंडित (विज्ञान) आकर कहे कि जो अस्पृश्यों के साथ किया गया है, वह ठीक नहीं है, तो मैं उसको भी नहीं मानूँगा, क्योंकि मैं महान लोगों के महान विचार होते हैं, का मानने वाला नहीं हूँ। लेकिन मैं अर्ज़ यह कर रहा था कि जो स्मृतिकारों ने किया है वह समाज के भविष्य को अपने सामने रख कर किया है। यह ठीक है कि उस समय का समाज किस तरह का था उसी के अनुसार स्मृतियां बनीं। आज हमारे समाज में अनेक जातियां हैं और उप-जातियां हैं। अलग-अलग समुदाय हैं, अलग-अलग सिद्धांतों को मानने वाले हैं। सिख हैं, जैन हैं, बौद्ध हैं और अनेक मतों को मानने वाले हैं। वह धार्मिक-समुदायों में बंटे हुये हैं। उन सबको सम्मिलित करना कोई मामूली चीज नहीं है।

महोदय, मैं अब थोड़ा ही समय और लूंगा। मैं अर्ज़ कर रहा था कि डॉ. अम्बेडकर साहब ने कहा है: "रीति-रिवाज संहिता को नष्ट कर देंगे, इसलिए उन्हें शामिल न किया जाए।"

दूसरी तरफ वे कहते हैं कि कानून जो राजाओं और जागीरदारों के उत्तराधिकार को अधिशासित करते हैं जिन्हें नहीं होना चाहिए, होनी चाहिए। और जब रीति-रिवाजों के अधिकारों का प्रश्न आता है; वे कहते हैं कि वह नहीं होना चाहिए।

एक ओर उत्तराधिकार की बात आती है और दूसरी ओर दत्तकग्रहण वे कहते हैं कि ये रूढ़िगत रिवाज जारी नहीं रहने चाहिये। यह दोनों बातें नहीं चलनी चाहिए। आप दोनों को खत्म कर दीजिये, एक-सा मैदान कर दीजिये, अथवा एकदम सफाचट कर दीजिये। महोदय, मैं फिर आपसे कहता हूँ कि यहाँ कई जगहों पर छोटी-मोटी टोका-टाकी भी हो रही है, जिसकी वजह से मुझे बोलने में दिक्कत हो रही है।

एक माननीय सदस्य : वह एक जैसे तर्क दोहरा रहे हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (कानून मंत्री) : महानुभाव को बोलते एक घंटा हो गया है।

माननीय उपाध्यक्ष : शांति, शांति। उन्हें ज्यादा देर न बोलने के लिए कहने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि आप शोर न मचायें, बल्कि उन्हें अकेला छोड़ दें ताकि मैं उन्हें अपना भाषण जल्दी पूरा करने के लिए कह सकूं। आदरणीय सदस्य जानते हैं कि कई अन्य सदस्य बोलने को उत्सुक हैं। वह पहले ही 45 मिनट से अधिक समय ले चुके हैं।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : मैं आपका आभारी हूँ। तो मैं आपसे यह अर्ज़ कर रहा था कि एक जगह आप कहते हैं कि परंपरा से कोई दिक्कत नहीं है, यह रीति-रिवाज चलने चाहिये। दूसरी ओर अगर यह जारी रहे तो इससे हिंदू संहिता की हत्या हो जायेगी। यह दोनों बातें मैं नहीं चाहता। आप हम से कहते हैं कि ज्यादा अनाज उगाओ। हमारे पास जितनी भी जमीन है, चाहे उसमें बाग लगे क्यों न हों, चाहे अच्छे-अच्छे लॉन क्यों न हों, अगर हमको अनाज उगाना ही है तो हमको इन सब जमीनों पर भी अनाज उगाना चाहिये। एक तरफ तो आप यह चाहते हैं कि आपके लॉन यथावत रहें और दूसरी तरफ आप चाहते हैं कि अनाज भी ज्यादा उगाया जाये। ऐसा रास्ता मुझे पसन्द नहीं है।

आप जानते हैं कि परंपरा क्या है? हमें कूल की परम्परा, ग्राम की परंपरा और राष्ट्र की परंपरा को समझना चाहिये। शास्त्र के अनुसार परंपरा प्रबल है। शास्त्र के माने क्या हैं? शास्त्र का बार-बार हवाला देने से आप लोग समझते होंगे कि मैं पागलपन की बात कर रहा हूँ। शास्त्र एक विज्ञान है। एक प्रबन्ध है, एक कानून है। वह एक स्मृति है।

इसके बाद, आप किसी ऐसी चीज की कद्र करना नहीं चाहेंगे। वह इस तरह के विवाद में नहीं जाना चाहेंगे जैसे कि तलाक की समस्या ने पैदा की है। एक पुरुष और एक स्त्री पंचायत में बैठकर यह कहते हैं कि हम एक दूसरे से छुटकारा पाना चाहते हैं। वह कहते हैं कि हमने संसार का सुख भोग लिया है और अब दूसरी जगह जाना चाहते हैं। वह इस झमेले में नहीं पड़ेंगे कि वह जिला न्यायालय या उच्च न्यायालय में इसके लिये जायें। अगर वह इस तरह से करेंगे तो मामला उल्टा हो जायेगा।

जब मैं गांव में जाऊंगा तो मैं लोगों से कहूंगा कि हिंदू संहिता विधेयक इस तरह से तैयार किया है और उसमें इस तरह के प्रावधान हैं तब वे लोग कहेंगे कि हम ऐसा नहीं चाहते हैं। हमारे गांवों में जो पंचायतें हैं, वे ठीक और उन्हें अनुमति होनी चाहिए कि वह जिस तरह से वर्तमान में चल रही है, वैसी ही चलती रहें। वे खुद को इस तरह के कायदे-कानूनों के झमेलो में नहीं पड़ने देना चाहते, जिससे वकीलों की बन आए और गरीब ज्यादा गरीब हो जाए। आपकी मेहरबानी से यह सब बातें पर्याप्त रूप से हिंदू कानून में हैं।

महोदय, मैं अर्ज़ कर रहा था कि इन सब बातों का निचोड़ क्या होने वाला है। हर एक विषय पर मैं यहां बात नहीं कह सकता, क्योंकि मेरे पास इतना समय पर्याप्त नहीं है कि मैं इन सब बातों को बतलाऊं क्योंकि और भी मेरे बहुत से भाई इस पर बोलने वाले हैं।

तो महोदय, मैं यह कहने जा रहा था कि यह एक बड़े महत्त्व का सवाल है। यहां पर जिन भाइयों ने इसके बारे में अपना मत दिया है कि यह पारित किया जाना चाहिये तो मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि वह इस बात को अच्छी तरह पर सोच-विचार लें। यह जल्दबाजी से काम करने का समय नहीं है। जनता के सामने आप लोगों को जवाब देना होगा। मैं बहुत अदब से अपने माननीय नेता पण्डित जवाहरलाल जी से भी प्रार्थना करना चाहता हूँ कि यह प्रश्न जो हमारे सामने आया है, वह इतने महत्व का है, इतना मौलिक महत्त्व का है कि उस पर अच्छी तरह गौर करना बहुत आवश्यक है। इस पर सब लोगों की राय ली जानी भी बहुत आवश्यक है। श्रीमती रेणुका रे मेरी आदरणीय बहन ने जनमत के बारे में कहा था। इस तारतम्य में मैं यह कहना चाहता हूँ कि जल्द ही चुनाव होने वाले हैं, उस समय आप इस पर जनता के सामने यह रख सकते हैं कि हम इस तरह का हिंदू संहिता विधेयक ला रहे हैं वह आपको पसंद है या नहीं। आप उस समय जनता का मत प्रकाश में ला सकते हैं कि क्या वे संहिता चाहते हैं अथवा नहीं। अगर इस पर आपको मत मिल जाये तो आप खुशी के साथ इसको यहां पर पारित कर सकते हैं। यह जनमत के आधार पर स्वीकार किया जाना चाहिए। मैं अखबारों की बातों पर जानेवाला आदमी नहीं हूँ। अखबार वाले तो अपने अखबार को चलाने के लिये, बढ़ा-चढ़ा कर लिखा करते हैं। मुझे अखबार वालों से कोई द्वेष नहीं है। मैं उनके साथ सहानुभूति रखता हूँ और मेरी उनसे हमदर्दी है। लेकिन जहां तक जनमत लेने का सवाल है, मैं अपनी बहन श्रीमती रेणुका रे से जो इस समय यहाँ पर मौजूद नहीं हैं तथा दूसरी बहनों से भी यह

कहना चाहता हूँ कि चन्द महीनों के बाद चुनाव होने वाला है, उस समय वे जनता के सामने अपना प्रश्न रख सकती हैं। आप जनता से यह कह सकती हैं कि हमने इस तरह से हिंदू संहिता विधेयक रखा है और पास कराना चाहते हैं। अगर जनता ने आपको इस बारे में मत दे दिया, तो हम अवश्य इसको यहां पर पास कर सकते हैं।

तो मैं सरकार से प्रार्थना करना चाहता हूँ कि वह इस बात पर विचार करे और इस समय इसको पारित न करे। अन्त में मैं यही कहूंगा : "न बायीं तरफ जाएं, न दायीं तरफ जाएं, निष्कर्ष निकालने के लिए, बीच का रास्ता अपनाएं।"

श्री आर.के. सिधवा (मध्य प्रांत और बरार : सामान्य) : महोदय, मेरे मित्र ने पारसी विवाह अधिनियम का उल्लेख किया है। क्या आप मुझे स्थिति स्पष्ट करने के लिए पांच मिनट का समय देंगे?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं कोई समय नहीं दे रहा हूँ, क्योंकि उन्होंने किसी तरह इसकी आलोचना नहीं की है। उन्होंने कहा कि पारसी विवाह विधेयक विश्व के सभी लोगों को भेजा गया था। उन्होंने इसका प्रयोग इस विधेयक के मामले में एक तर्क के रूप में किया था जिसका सम्बन्ध 40 करोड़ लोगों से है। अतः इस आधार पर माननीय सदस्य बोलने के अधिकार की मांग नहीं कर सकते।

श्री आर.के. सिधवा : नहीं, महोदय, उन्होंने गलत बयान दिया है।

माननीय उपाध्यक्ष : तो माननीय सदस्य को यह बात मेरी जानकारी में लानी चाहिये थी। हम हर मामले में तर्क दुबारा शुरू नहीं कर सकते।

श्री आर.के. सिधवा : क्या मुझे इस विधेयक पर बोलने का कोई अधिकार नहीं है?

माननीय उपाध्यक्ष : प्रत्येक सदस्य को बोलने का अधिकार है, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है। पर समय इजाजत नहीं देता है।

***डॉ. बख्शी टेक चन्द (पूर्वी पंजाब : सामान्य) :** महोदय, इस विधेयक पर कई दिन चर्चा चली है। प्रश्न के दोनों पहलू आपके समक्ष रखे गये हैं। एक पक्ष ने या दूसरे पक्ष ने जो तर्क दिये हैं मैं उनकी पुनरावृत्ति नहीं करना चाहता। मैं केवल दो बातें कहना चाहता हूँ, एक विधेयक के समर्थकों से और एक विधेयक का विरोध करने वालों से और उसके बाद मैं ऐसे परिवर्तनों के लिए सभा के विचारार्थ एक सुझाव दूंगा, जो मैं समझता हूँ विधेयक को सभी को या सभा तथा देश के अधिकांश लोगों को स्वीकार्य बनाने के लिए विधेयक में रखा जाना चाहिए। अतः मैं इस सभा से अनुरोध करूंगा कि मुझे सभा के समक्ष अपने विचार रखने के लिए कुछ मिनट देने की कृपा करें।

---

*संविधान सभा (विधायी) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 585-99

विधेयक का विरोध करने वालों को जो मैं पहला सुझाव देना चाहता हूँ वह यह है। उनका कहना है कि यह सभा हिंदू विधि के प्रावधानों को छूने के लिए सक्षम नहीं है क्योंकि यह समय पर खरे उतरे धर्म का मामला है जो शताब्दियों से गुजर कर हमारे पास आया है और इसमें 'पंडित परिषद्' ही कोई परिवर्तन कर सकती है। मैं बड़ी विनम्रता से अनुरोध करता हूँ कि यह स्थिति एक मिनट के लिए भी स्वीकार नहीं की जा सकती। जैसा कि श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर तथा अन्य ने कहा है, हिंदू विधि कभी गतिहीन नहीं रही। इसमें समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। हर बार जब समाज के ढांचे में परिवर्तन आया तो एक स्मृतिकार, एक मनीषी, एक ऋषि, एक मुनि पैदा हुआ और उसने ऐसे सुधार किये जो समय के अनुकूल थे। यह प्रक्रिया शताब्दियों तक चलती रही जब तक कि देश अंग्रेज शासन के अधीन नहीं आया। इस अवधि के दौरान कानून में केवल ऐसे परिवर्तन किये जा सके जो या तो न्यायाधीशों ने किये जिनका काम कानून की व्याख्या करना था या विधानमंडल ने किये। मनु या याज्ञवल्क्य या विश्वमित्र जैसे किसी नये मनीषी ने अवतार नहीं लिया। न्यायाधीश, जिसका काम स्मृतियों या पुस्तकों में उपलब्ध विधि की व्याख्या करना था, इसकी व्याख्या कर सकते थे या विधानमंडल हस्तक्षेप कर सकते थे, अतः वर्ष 1949 में यह तर्क देना व्यर्थ है कि विधानमंडल सक्षम नहीं है, क्योंकि इस में हर तरह के ऐसे लोग हैं जिनको स्मृतियों का ज्ञान नहीं है। मैं समझता हूँ, यह तर्क एकदम ठुकरा दिया जाना चाहिये। यदि आप उस घटनाक्रम को देखें जिसका इस देश के विधानमंडलों ने एक शताब्दी से अधिक के लिए अनुसरण किया है तो आपको पता चलेगा कि जब कभी यह देखा गया है कि हिंदू विधि या इसकी कोई शाखा दोषपूर्ण है तो विधान पेश किया गया। यह काम स्वर्गीय राम मोहन राय के मार्गदर्शन में 1829 में सती प्रथा निवारण अधिनियम से आरम्भ हुआ। सती प्रथा को, जो हिंदू धर्म का एक अंग समझी जाती थी, किन्तु जो वास्तव में इसका अंग नहीं थी और जो, मैं कहूंगा, धर्म के सिद्धांतों का दुरुपयोग थी, खत्म किया जाना था और इस प्रयोजनार्थ 1829 में विधान प्रस्तुत कया गया।

माननीय उपाध्यक्ष : कानाफूसी बहुत हो रही है। रिपोर्टर नोट करने में असमर्थ है। मैं भी सुन नहीं पा रहा।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : अध्यक्ष की आवाज भी अस्पष्ट है। उनके पास दो माईक हैं जो एक दूसरे से काफी करीब है। हम भी उनको ठीक तरह नहीं सुन पा रहे।

माननीय उपाध्यक्ष : वह फोन के आगे बोल रहे हैं। हर स्थान को एक छोटे फोन में बदल दिया गया है। मैं क्या करूं?

अतः माननीय सदस्य मध्याह्न भोजन के पश्चात् अपना भाषण जारी रखेंगे। सभा 2.30 अपराह्न तक के लिए स्थगित की जाती है।

श्री ए. थानू पिल्लेय (ट्रावनकोर और कोचीन संयुक्त प्रांत) : क्या मैं एक सुझाव दे सकता हूँ? (व्यवधान) मेरा प्रश्न यह है।

कुछ माननीय सदस्य : सभी स्थगित कर दी गई है।

माननीय उपाध्यक्ष : आपने विलम्ब कर दिया है, अब सभा स्थगित हो चुकी है।

श्री ए. थानू पिल्लेय : मुझे खेद है। मुझे मालूम नहीं था।

तत्पश्चात् सभा मध्याह्न भोजन के लिए 2.30 बजे तक के लिए स्थगित हुई।

सभा मध्याह्न भोजन के पश्चात् 2.30 बजे पुनः एकत्र हुई।

(माननीय उपाध्यक्ष (श्री एम. अनंथसयनम आयंगर) पीठासीन हुए)

डॉ. बख्शी टेक चन्द : महोदय, जब सभा उठी थी, तो मैं सती के उन्मूलन के लिए श्री राम मोहन राय के मार्गदर्शन में 1829 में पारित अधिनियम का उल्लेख कर रहा था। अब जैसा कि हम सभी जानते हैं उस समय यह तर्क दिया गया कि सती हिंदू धर्म का एक अंग है। यह कहा गया कि सती हमारे धर्म का एक आवश्यक अंग है और इसमें कोई हस्तक्षेप हिंदू धर्म पर प्रहार समझा जायेगा। किन्तु समुदाय के विवेक की जीत हुई। कानून बना और सती प्रथा बन्द हो गई। यह प्रथा, जैसा कि मैं कह रहा था, हिंदू विधि का अंग नहीं थी। यह एक नया परिवर्तन था जो अंधकार युग या मध्यकालीन युग के दौरान शुरू हुआ। सौभाग्य से उसे विधानमंडल द्वारा कानून बना कर समाप्त कर दिया गया।

उसके बाद, जहां तक विरासत के अधिकार का सम्बन्ध है, वर्ग निर्योग्यताओं को हटाने के लिए 1850 का कानून बना। यदि कोई व्यक्ति या वारिस अपना धर्म बदलता था, तो उत्तराधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। यह दूसरा बड़ा परिवर्तन था, जो हिंदू विधि में किया गया। उसके बाद एक बहुत बड़ा सुधार 1856 में आया जब विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित हुआ। शताब्दियों तक यह विश्वास किया जाता रहा कि हिंदू धर्म विधवाओं के पुनः विवाह की इजाज़त नहीं देता।

श्री महावीर त्यागी : महोदय, क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या यहां सरकार का कोई प्रतिनिधि है।

माननीय श्री के.सी. नियोगी (वाणिज्य मंत्री) : सरकार एकीकृत एवं अविभाज्य है और जब तक एक भी मंत्री उपस्थित है, मैं समझता हूँ वह पूरी सरकार का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं समझता हूँ दूसरे पक्ष के सदस्यों को सदैव इस पक्ष में आकर बैठने की आकांक्षा रहती है।

डॉ. बख्शी टेकचन्द : जैसा कि मैं कह रहा था, विधवा पुनर्विवाह को हिंदू धर्म का एक आवश्यक अंग समझा जाता था और उस कानून को रद्द करने के किसी सुझाव अथवा विधवा पुनर्विवाह की अनुमति देने वाला कोई कानून बनाने के प्रस्ताव पर जोरदार विरोध किया जाता था। किन्तु श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा उस समय के अन्य नेताओं के नेतृत्व में जनमत उमड़ा और यह बड़ी निर्योग्यता, जिससे हिंदू महिला पीड़ित थी, एक और विधान बनाकर हटा दी गई। और यह विधान बनाने से हिंदू धर्म समाप्त नहीं हुआ।

उसके बाद कई अधिनियम बनाकर हिंदू विधि में संसद या तत्कालीन विधानमंडल द्वारा संशोधन किये गये। आपमें से अधिकांश को 1890 और 1891 का महान आन्दोलन याद होगा जब सहमति की आयु विधेयक पेश किया गया। उस समय यह आवाज उठाई गई थी कि हिंदुओं, मुसलमानों, ईसाइयों से बने विधानमंडल ने, जिसमें नौकरशाहों का प्रभुत्व है, उस प्रथा के बारे में कानून बनाया, जो बारह वर्ष से कम आयु की बालिका वधू से भी समागत को अनुमति देती थी तो यह हिंदू धर्म में घोर हस्तक्षेप था। उस समय समाचार-पत्रों में, अमृत बाजार पत्रिका जैसे अच्छे समाचार-पत्रों में भी जो कुछ प्रकाशित हुआ, आपके पास यदि उसका संग्रह है तो आप देखेंगे कि उस समय हिंदू समाज किस प्रकार की खलबली में था। किन्तु पुनः विधायिका सफल हुई और वह विधेयक पारित हुआ, जो अन्ततः पिछले सत्र में सभा की लगभग सर्वसम्मति से संशोधनकारी विधेयक के रूप में पारित हुआ और जिसे हमारे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने पेश किया और जो यदि मुझे ठीक याद है तो सभी पक्षों द्वारा सर्वसम्पति से पारित किया गया। उस समय हमारे किसी मित्र ने यह नहीं सोचा कि यह सभा ऐसे विषय के बारे में विधान बनाने में सक्षम नहीं है जो हिंदू धर्म का अनिवार्य अंग माना जाता था। जहां तक अभी हाल की बात है, आप देखेंगे कि 1916 में भारतीय विधानमंडल ने सम्पत्ति प्रबन्ध अधिनियम नामक अधिनियम पारित किया है। यह एक ऐसा अधिनियम है जिसके अन्तर्गत **टैगोर बनाम टैगोर** नामक मामले में प्रिवी परिषद् द्वारा बनाये गये कानून को रद्द किया गया। उस मामले में स्मृतियों के कुछ पाठों के अनुसरण में प्रिवी परिषद् ने निर्णय दिया था कि एक वर्ग के व्यक्तियों के पक्ष में जो उपहार की तिथि तक पैदा नहीं हुए हैं, दिये गये आदेश या उपहार हिंदू विधि के अनुसार अमान्य या शून्य हैं। करीब साठ या सत्तरह वर्षों तक यह कानून बना रहा। तब यह सुझाव दिया गया कि पाठों की यह व्याख्या गलत है। इस मामले पर विचार किया गया और यह पाया गया कि कुछ पाठों से उनके शाब्दिक अर्थों के अनुसार केवल वही निष्कर्ष निकाला जा सकता है जो प्रिवी परिषद ने निकाला। इसे एक बड़ी बाधा और एक बड़ा अन्याय पाया गया। अतः विधानमंडल ने पुनः हस्तक्षेप किया और सर्वसम्पत्ति से संसद ने 1916 में वह विधेयक पारित किया।

उसके बाद निर्योग्यता निवारण विधेयक आया। कुछ स्मृतियों द्वारा प्रतिपादित हिंदू विधि के कुछ पाठों के अन्तर्गत यदि किसी व्यक्ति में शारीरिक निर्योग्यता है, यदि वह अंधा है, यदि वह बहरा और गूंगा है तो वह उत्तराधिकार का अधिकारी नहीं है। अनेक लोगों ने सोचा कि पाठों का अर्थ जो भी हो, यह बड़ी मुसीबत है। यदि पांच बेटों में से एक बहरा या अंधा हो या किसी अन्य निर्योग्यता से पीड़ित हो तो उसके मामले में यह और भी आवश्यक हो जाता है कि उसे पिता की पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा मिले, बजाय इसके कि शारीरिक रूप से योग्य और कमाई करने के योग्य व्यक्तियों को हिस्सा मिले। खैर, वह पाठ उस समय कुछ मान्य या उपयोगी रहा होगा। जब प्राचीन काल में समाज का ढांचा ऐसा था कि परिवार की सम्पत्ति को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक था कि सभी काम करें। यह अप्रचलित हो गया और हिंदू समुदाय ने इसके विरुद्ध विद्रोह किया और यह विद्रोह ऐसा था कि भारतीय विधानमंडल को 1928 में यह कानून पारित करना पड़ा जिसके बाद शारीरिक दोषों से पीड़ित व्यक्तियों को भी उसी प्रकार उत्तराधिकार दिया गया जिस प्रकार शारीरिक रूप से योग्य व्यक्तियों को। हिंदू विधि में यह एक और हस्तक्षेप था।

तत्पश्चात् एक और अत्यन्त महत्वपूर्ण अधिनियम, 1929 का अधिनियम-II आया, जिसके अन्तर्गत कुछ ऐसे वर्गों के लोगों को उत्तराधिकार दिया गया जो तब तक न्यायालयों के निर्णयों के अनुसार सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बनने के हकदार नहीं थे।

मिताक्षर मत के पाठ के अनुसार, भारत में न्यायालयों ने और अन्ततः प्रिवी परिषद ने यह निर्णय दिया था कि ऐसी केवल पांच वर्गों की ही महिलायें हैं जो उत्तराधिकारी हो सकती हैं क्योंकि इन पांच का मिताक्षर में उल्लेख है। पर बम्बई मत का यह विचार था कि यह सूची पूरी नहीं है, अपितु, निर्देशी मात्र है और महान टीकाकार नीलकांत तथा उसके अनुयाइयों का यह विचार था कि उत्तरी भारत में मिताक्षर की गलत व्याख्या के कारण यह प्रथा प्रचलित है। खैर, विधानसभा में वह विधेयक पेश किया गया और काफी विचार-विमर्श के बाद विधेयक पारित हुआ और वारिसों की सूची में बेटी, बहन, बहन के बेटे आदि सभी को शामिल किया गया। इससे भी विशेषरूप से उत्तरी भारत, में हिंदू विधि के ढांचे में बड़ा परिवर्तन आया।

आप सभी शारदा अधिनियम के बारे में जानते हैं। मैं उसे नहीं दोहराऊंगा। उस समय इस सभा में यह तर्क दिया गया था और गम्भीर रूप से तर्क दिया गया था कि विवाह की न्यूनतम सीमा निर्धारित करना हिंदू धर्म में हस्तक्षेप है। खैर, विरोधी पक्ष सफल नहीं हुआ और विधानमंडल अड़ा रहा तथा विधेयक अन्ततः पारित भी हुआ।

उसके बाद देशमुख विधेयक नामक विधान हमारे सामने आया। सन् 1937 के उस विधेयक का बड़ा असर हुआ। इससे हिंदू उत्तराधिकार विधि में बहुत बड़ा परिवर्तन

आया। उन क्षेत्रों में, जहां मिताक्षर सिद्धांत लागू होता था, एक संयुक्त हिंदू परिवार में एक सह-हिस्सेदार की मृत्यु के पश्चात् यदि उसका कोई बेटा नहीं होता था तो विधवा को कोई हिस्सा नहीं मिलता था। वह पति के भाई या पति के पिता तथा अन्य सहभागियों पर अपने भरण-पोषण के लिए पूर्णतया उनकी दया पर निर्भर रहती थी। उसे केवल अनाज और कपड़े मिलते थे और कुछ नहीं। इस कानून में यह प्रावधान किया गया कि जिन विधवाओं के बच्चे नहीं होंगे उनको भी सम्पत्ति में वही हिस्सा मिलेगा जिसका उसका पति हकदार होता था और यदि वह चाहेगी तो वह सम्पत्ति के विभाजन के लिए भी कह सकेगी। उस समय यह निर्णय दिया गया कि एक संयुक्त परिवार में हिंदू महिला को बंटवारे के लिए मुकदमा करने का अधिकार दिया जाना हिंदू विधि के मूलभूत सिद्धांतों के प्रतिकूल है। किन्तु विधानमंडल ने पुनः यह परिवर्तन कर दिया जो बदलते हुए समय न केवल महिलाओं में अपितु, इस देश के पुरुषों में, हिंदुओं में बढ़ती हुई चेतना को देखते हुए आवश्यक था, क्योंकि वे चाहते थे कि उनकी बहनों और माताओं को भी यह अधिकार मिले। तब उस समय भी देश में काफी हलचल थी किन्तु अन्ततः वह हलचल शांत हो गई। बारह वर्ष बीत गये हैं और हम नहीं कह सकते कि हिंदू समाज किसी तरह टूटा है या हिंदू धर्म पर कोई इतना बड़ा प्रहार हुआ हो कि यह टूटने वाला है।

अब मैं अभी हाल के समय की ओर आता हूँ। 1946 ई. में, इस विधानसभा के अस्तित्व में आने से कुछ पूर्व, सगोत्रों के बीच विाह की इजाजत देने वाला विधेयक इस विधानमंडल द्वारा पारित किया गया। वह विधेयक निषिद्ध हद तक हस्तक्षेप नहीं करता था। जो लोग देश के विभिन्न भागों में रहते थे और एक ही जाति के नहीं होते थे फिर भी पाठों के कुछ तकनीकी अर्थ के अनुसार एक ही गोत्र के होने के कारण उनमें विवाहों को अमान्य ठहराया जा सकता था। यद्यपि ऐसे विवाह देश के विभिन्न भागों में होते भी थे, पर उनकी वैधता संदेहास्पद थी। अतः यह भी एक समर्थकारी विधान था, जो 1946 में पारित हुआ और जिस पर कोई गम्भीर आपत्ति नहीं की गई।

अब मैं माननीय सदस्यों का ध्यान, इस सभा के पिछल अप्रैल सत्र में हमने जो कुछ किया, उसकी ओर दिलाना चाहता हूँ। मेरे प्रतिष्ठित मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव केवल एक धारा वाला एक विधेयक लाये जो सरल था किन्तु काफी महत्वपूर्ण और दूरदृष्टि था। इस विधेयक द्वारा यह कानून बनाया गया कि हिंदू विधि के किसी पाठ या किसी प्रथा या किसी व्यवहार के प्रतिकूल विधि की मान्यता रखने के बावजूद भी हिंदुओं की विभिन्न जातियों के बीच विवाद विधिमान्य समझा जायेगा। यह एक बड़ा कदम था, एक ऐसा कदम जिससे अन्तर्जातीय विवाह संभव हो गये और ऐसे प्रतिबंध हट गये कि एक व्यक्ति को अपनी उप-जाति या अपनी जाति में ही विवाह करना चाहिये। यह कानून इस सभा द्वारा सर्वसम्मति से पारित किया गया और जहां तक मुझे याद है, विचारण के

चरण में केवल एक व्यक्ति डॉ. अम्बेडकर ने इसके विरुद्ध आवाज उठाई थी। सभी अन्य सदस्यों ने, रूढ़िवादी अथवा गैर-रूढ़िवादी, दायभाग, मिताक्षर को मानने वाले या मायूख को मानने वाले या आदिवासी जाति की प्रथाओं में विश्वास रखने वाले तथा अन्य सभी लोगों ने इस विधेयक का समर्थन किया। डॉ. अम्बेडकर: निःसंदेह उन्होंने एक संकीर्ण आधार पर इसे स्वीकार किया। वह पूर्णतया विधेयक के सिद्धांत के पक्ष में थे किन्तु उनका विचार था कि चूँकि यह हिंदू संहिता, जो काफी व्यापक उपाय है, विधानसभा के समक्ष है, इसलिए हमें एक व्यापक उपाय करना चाहिये। उनकी यही आपत्ति थी जो कि तकनीकी किस्म की है। अन्यथा सभी ने सर्वसम्मति से इस विधेयक का समर्थन किया और यह अप्रैल के अन्त में किसी समय आया। अब मैं उन रूढ़िवादी मित्रों से पूछता हूँ जो कहते हैं कि हिंदू धर्म खतरे में है, उसका क्या हुआ है। जिस समय संविधान विचाराधीन था उस समय हमारा कहना था कि हम एक वर्गविहीन ओर जाति-विहीन समाज की रचना करना चाहते हैं। यह हिंदू विधि के कुछ पाठों के प्रतिकूल है जो शताब्दियों से देश के विभिन्न भागों में लागू रहे हैं किन्तु फिर भी विधेयक पारित हुआ और यही भाव देश के कानून का एक अंग है। उस समय, मैं कहना चाहूंगा कि किसी ने यह नहीं कहा कि यह सभा इस पर विचार नहीं कर सकती, क्योंकि इसका निर्वाचन संविधान बनाने के प्रयोजनार्थ या दैनंदिन प्रशासन चलाने के प्रयोजनार्थ किया गया है। विवाहों के मामले में जातिप्रथा का उन्मूलन निश्चित रूप से देश के दैनंदिन प्रशासन का अंग नहीं था। यह हिंदू विवाह विधि में एक बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण परिवर्तन था, जो कश्मीर से कन्याकुमारी और बंगाल से गुजरात तक सभी मतों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है। किन्तु हम सभी ने ऐसा सोच-विचार कर किया। जब विधेयक पारित हुआ तो श्री मुंशी जी यहां थे। उन्होंने कहा कि यद्यपि यह छोटा सा विधेयक है, इसके प्रभाव दूरगामी होंगे; यह एक बहुत बड़ा परिवर्तन और काफी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। पूरी सभा ने उस समय उनीक प्रशंसा की। मैं अपने रूढ़िवादी मित्रों से, इस विधेयक का विरोध करने वालों से पूछता हूँ कि उस समय हिंदू विधि या हिंदू धर्म के लिए उनका आदर, उनका उत्साह कहां गया था? अतः मैं अपने रूढ़िवादी मित्रों से बड़े सम्मान के साथ कहूँगा कि अब जो यह कहा जा रहा है कि यह विधेयक जो अब सभा के समक्ष है, हिंदू धर्म पर एक प्रहार है और इससे हिंदू धर्म की नींव डांवाडोल हो जायेगी, हिंदू समाज और हिंदू संस्कृति का पूरा ढांचा चरमरा जायेगा या यह सभा इस प्रकार का कानून केवल इसलिए नहीं बना सकती कि इसमें विद्वान पंडित अधिक नहीं हैं या इसके जो सदस्य हैं उनका निर्वाचन किसी विशिष्ट प्रयोजनार्थ नहीं हुआ था, उनके इन तर्कों में कोई दम नहीं है। मैं अपने रूढ़िवादी मित्रों से सादर कहना चाहता हूँ कि वे उस विधान के इतिहास पर विचार करें, जो मैंने उनके समक्ष रखा है, हाल ही में हमने जो विधान पारित किये हैं उन पर विचार करें और इस बात पर विचार करें कि वे अन्य बातों के आधार पर विधेयक पर प्रहार कर सकते हैं, किन्तु यह कहना कि यह सभा विधान सभा होने के कारण इस पर

विचार करने के लिए सक्षम नहीं या इस विधान पर विचार करने और इसे पारित करने का जनादेश देश में हमें नहीं दिया है, तो मैं बड़े आदर के साथ कहना चाहूंगा कि यह तर्क सही नहीं है। मैं उनसे अनुरोध करता हूँ कि वे विधेयक पर इसके गुण-दोषों के आधार पर विचार करें और तभी इसे स्वीकार या अस्वीकार करें। यह कहना एक चीज़ है कि विधेयक पर पर्याप्त रूप से विचार नहीं किया गया है और यह कहना दूसरी बात है कि विधेयक के कुछ प्रावधान ऐसे हैं, जिन पर आगे चर्चा और विचार करने की आवश्यकता है। इसी तरह यह कहना अलग बात है कि कुछ मामलों में विधेयक का प्रारूप पुन: तैयार करने की आवश्यकता है। जैसा कि मैंने आज सुझाव दिया है और जैसा कि श्री बी.एन. राउ ने समिति के अपने मूल प्रतिवेदन में कहा है कि संभवतया हिंदू विधि में यह सुधार अंशों में करना उचित होगा। मैं यह समझ सकता हूँ, किंतु जब हर सुबह, मुझे आशा है मुझे यह कहने के लिए क्षमा कर दिया जायेगा, हर डाक में इन महीनों में ऐसे पत्र और व्यक्तियों के भाषणों, धर्मसंघ, इस समाज और उस समाज द्वारा पारित प्रस्तावों की प्रतियां प्राप्त होती हैं और किसी न किसी महान व्यक्ति की राय देते हुए कहा जाता है कि यह सभा इस विधेयक पर विचार करने के लिए सक्षम नहीं है, तो मैं पूरे आदर और नम्रता के साथ कहूंगा कि यह न तो सही और न ही न्यायसंगत और न ही उचित है और इसलिए मैं अपने मित्रों से और इस विधेयक का विरोध करने वालों से भी यह अनुरोध करूंगा कि वे उन तर्कों पर जोर न देकर विधेयक पर उचित युक्तियुक्त और सही ढंग से विचार करें। रूढ़िवादी मित्रों से मेरा यही कहना है। अब मैं अपने मित्रों से, यानी विधेयक के समर्थकों से कुछ कहूंगा।

श्री एच.वी. कामत : वे रूढ़ि विरुद्ध हैं या रूढ़िवादी हैं?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : अच्छा, हर व्यक्ति को इस बारे में स्वयं निर्णय लेना चाहिये। अब स्थिति यह है कि यह विधेयक पेश हो गया है। जैसा कि हम जानते हैं, इस पर प्रथम चरण में थोड़ी चर्चा हुई जब प्रवर समिति में हम एकत्र हुए तो हमें इस महत्वपूर्ण विधेयक पर विचार करने के लिये केवल छ: दिन दिये गये। और अब समिति के कुछ सदस्यों ने विधेयक के कुछ भागों पर कुछ आपत्तियां उठाईं, तो हमें बताया गया कि इस प्रस्ताव का सिद्धांत विधेयक के उन मूलभूत सिद्धांतों के प्रतिकूल है, जो प्रथम पाठन के समय सभा द्वारा स्वीकार किये गये हैं और इसलिए हम, प्रवर समिति के सदस्य, जो उन महत्वपूर्ण मामलों में संशोधन रखना चाहते हैं, अब कुछ नहीं कर सकते। हमने निर्णय माना और जुलाई की गर्मी में इस विधेयक पर चर्चा करने के लिए हमारे पास केवल छ: दिन थे और इस अल्प अवधि के भीतर विद्यमान परिस्थितियों में हम जो कुछ कर सकते थे किया और उस समय माननीय विधि मंत्री द्वारा तय की गई सीमित सीमाओं में किया। न केवल विधि मंत्री अपितु प्रवर समिति के कुछ उत्साही सदस्यों ने यह सोचा : "खैर, अब यह विधेयक हमारे समक्ष आया है; हम सभी इस

सत्र में इसे पारित कर देंगे और अक्तूबर या नवम्बर का महीना आने तक यह संविधि पुस्तिका का अंग बन जायेगा? तब नई आपत्तियां उठाई गईं और कई तर्क दिये गये कि हमें कुछ महीने प्रतीक्षा करनी चाहिये। अन्ततः दो सदस्यों के बहुमत से प्रवर समिति ने इस पर आगे विचार करने का निर्णय ले लिया।"

यह काम कुछ इस ढंग से हुआ है कि एक महीने के भीतर इस विधेयक को संविधि पुस्तिका में नहीं डाला जा सकता। परिस्थितियों के कारण, जो हमारे बस की नहीं थी, प्रवर समिति के बहुमत के बस की नहीं थी, कार्य में विलम्ब हुआ है। मुद्दा जिसे मैंने प्रवर समिति में उठाया था और जिस पर मैंने अपनी विरोध टिप्पणी में भी विस्तार से प्रकाश डाला था और जिसकी पुनरावृत्ति करने की मैं सभा से अनुमति मांगता हूँ वह यह था कि यह विधेयक अनमने ढंग से लाया गया था और यदि मुझे कहने की अनुमति हो तो मैं कहूँगा कि यह एक बहुत की खंडित विधान है। मैं इस बात का पूरा समर्थन करता हूँ और मुझे पुनः कहने में कोई संकोच नहीं है कि अब समय आ गया है जबकि हमें अपनी बहनों और अपनी बेटियों को पूरे अधिकार देने चाहिये। कहने का अर्थ यह है कि अब समय आ गया है जब हम पुराने पाठों को जारी रखने की अनुमति नहीं दे सकते, अथवा इंग्लैण्ड के न्यायालयों द्वारा दी गई उनकी इन व्याख्याओं को जारी नहीं रख सकते कि एक महिला को पूरी सम्पत्ति नहीं मिली है, कि एक महिला इस प्रकार की सम्पत्ति या उस प्रकार की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनने की हकदार नहीं है। आदि, आदि ये सब अब जाना चाहिए। सर्वप्रथम मैं यह कहूंगा और मैंने सदा कहा है कि यह सब हमारी मूल हिंदू विधि के प्रतिकूल है। मेरा दावा है और माननीय उपाध्यक्ष महोदय मुझे कुछ और मिनट का समय दें तो मैं सिद्ध कर सकता हूँ कि यह सिद्धांत कि एक महिला की सम्पत्ति सीमित है, यह ब्रिटिशकालीन भारतीय न्यायालयों की देन है। इसका मिताक्षर विधि, या मायूख या स्मृतियों में से किसी ने भी समर्थन नहीं किया है। इसे समाप्त किया जाना चाहिये। किन्तु ऐसा करने के लिए हमें क्या करना होगा? मैंने सुझाव दिया है कि विधेयक में कुछ परिवर्तन किये जायें, कि हमें इस पर एक और दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये जिससे महिलाओं को इस विधेयक में दिये गये स्थान से भी उच्च स्थान मिलेगा। इस पर उन्होंनें कहा है–"नहीं, इस विधेयक का श्री बी.एन. राउ और डॉ. अम्बेडकर ने अनुमोदन कर दिया है और अब इसमें कोई बड़ा परिवर्तन नहीं किया जा सकता।" इस विधेयक के समर्थकों का यही रूख है। आप माफ करें तो मैं कह सकता हूँ कि प्रवर समिति में और बाद में भी, विधेयक के समर्थक विधेयक का विरोध करने वालों से कम हठधर्मी नहीं रहे। उनका कहना है–"जो भी हो, विधेयक आ गया है। इसे स्वीकार करो या छोड़ो या अस्वीकार करो, यदि कर सकते हो। कुछ दिन पूर्व प्रधानमंत्री द्वारा की गई घोषणा के पश्चात् अब यह बात दोहराई जा रही है, जब कि मैं जानता हूँ सभा के अधिकांश सदस्य स्वाभाविक रूप से अपना मत देने के लिए बाध्य हैं।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

डॉ. बख्शी टेकचन्द : खैर, यदि प्रत्येक को अपनी इच्छानुसार मत देने की इजाजत दे दी जाती है तो भी इसका अनभिप्रेत प्रभाव पड़ेगा। खैर, मैं इस विधेयक के समर्थकों से पूछता हूँ, मैं अपनी बहनों से पूछता हूँ "क्या इस विधेयक से आपके साथ पूरा न्याय होता है? क्या आप यही चाहते हैं? क्या यह आपको वे अधिकार देता है जो आप चाहते हैं?" इस पर मैं कहता हूँ, 'नहीं'। मैं पुरज़ोर शब्दों में कहता हूँ, 'नहीं, यह नहीं देता।' यह अत्यन्त विकृत और बेमन का विधान है और मैं तो कहूँगा कि इससे हिंदू समाज का अधिकतम अनिष्ट और महिला सदस्यों का न्यूनतम भला होगा।

एक माननीय सदस्य : क्या वे आपके समाधान को मानने के लिए तैयार हैं?

डॉ. बखशी टेकचन्द : मैं नहीं जानता। अब मैं विधेयक के कुछ प्रावधानों की बात करूंगा। विधेयक का एक प्रावधान यह है कि उत्तराधिकार, आदि से सम्बन्धित अध्याय कृषि भूमि के उत्तराधिकार पर लागू नहीं होंगे। क्यों? क्योंकि उस समय जब विधेयक पेश किया गया था, स्थिति यह थी कि 1935 के भारत सरकार अधिनियम की सातवीं सूची की प्रविष्टि के अन्तर्गत यह विधानमंडल यानी भारतीय विधानमंडल, कृषि भूमि के सम्बन्ध में कोई कानून पारित नहीं कर सकता था, क्योंकि यह एक प्रांतीय विषय था। खैर, यह स्थिति उस समय थी। सन् 1938 में डॉ. देशमुख के विधेयक का विस्तार करके उसके अन्तर्गत कृषि भूमि को भी लाया गया। तत्पश्चात् यह मामला संघीय न्यायालय के समक्ष गया और संघीय न्यायालय सहमत हो गया कि यह भारतीय विधानमंडल के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता। यह था न्यायालय का निर्णय और यह था भारत सरकार अधिनियम के उक्त खंड का प्रावधान। अतः श्री बी.एन. राउ और उनकी समिति डॉ. अम्बेडकर तथा उनके विधि विभाग द्वारा इसका लोप स्वाभाविक ही था। उनका कहना था कि वह मामला प्रत्येक प्रांतीय विधानमंडल पर छोड़ना पड़ेगा और वे ही इसे निपटायेंगे। लेकिन सौभाग्य से उस समय संविधान सभा की प्रारूप समिति ने अपने प्रारूप-संविधान का प्रकाशन किया। प्रारुप संवधिान में कहा गया है कि सातवीं अनुसूची की उस प्रविष्टि में संशोधन किया जाये ताकि इसे समवर्ती सूची में सम्मिलित किया जा सके अथवा इसे एक समवर्ती विषय बनाया जा सके। अर्थात् चल अथवा अचल सम्पत्ति पर उत्तराधिकार के विषय में कृषि भूमि भी शामिल हो। तब यही प्रावधान था। मैंने उस समय अपनी विरोधी टिप्पणी और प्रसार समिति में भी यह सुझाव दिया था कि हमें कुछ महीने प्रतीक्षा करनी चाहिये ताकि हम महिलाओं को अपने पिता या पति की सम्पत्ति में हिस्सा देने के लिए जो भी उपाय करें, वे सभी प्रकार की सम्पत्तियों पर लागू होने चाहिये। आप विधि में एकरूपता लाना चाहते हैं। और मैं यह बताना चाहता हूँ कि एकरूपता के बजाय आपको विविधता मिलेगी और एकता के बजाय आपको गड़बड़ी हाथ लगेगी। यदि यह प्रावधान पारित कर दिया गया होता तो स्थिति यह होती कि यदि

एक व्यक्ति की अचल सम्पत्ति किसी नगर में होती, तो उसकी उस शहरी सम्पत्ति चल सम्पत्ति पर एक कानून अर्थात् डॉ. अम्बेडकर के न्यायालय का कानून लागू होता, किंतु कोई तीन मील दूर स्थित कृषि भूमि पर पुराना कानून लागू होता। बेटों को उनके जन्म के समय से ही सभी अधिकार प्राप्त होते और उत्तरजीविता का नियम बना रहता और किसी को यह जानकारी नहीं होती कि सम्पत्ति के बारे में क्या स्थिति है। देखिये, आप कितने बचाव के रास्ते छोड़ रहे हैं? यदि आप अपनी बेटी को सम्पत्ति नहीं देना चाहते, तो आप उसका हिस्सा पूना में बेच सकते हैं और पांच मील पीछे कृषि भूमि खरीद सकते हैं और इस प्रकार अपनी बेटी को अपने हिस्से से वंचित कर सकते हैं और इस तरह विधेयक के प्रावधान निष्प्रभावी कर सकते हैं। किन्तु अभी सौभाग्य से क्या हुआ है? आज जब हम इस विधेयक के दूसरे पाठन के इस प्रथम भाग के अन्त में हैं, स्थिति यह है कि डॉ. अम्बेडकर और प्रारूप समिति का सुझाव संविधान सभा ने सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया है और ईश्वर ने चाहा तो यह 26 जनवरी को लागू हो जाएगा जो इस विधेयक के तीसरे पाठन से काफी पहले आ जाएगी। मैंने एक दिन उनसे पूछा भी कि क्या वह अब यह परिवर्तन करेंगे ताकि विधेयक का यह विशेष खंड, जिसमें कृषि भूमि शामिल नहीं की गई है, हटाया जा सके, जिससे हम एक चौथाई या आधा या पूरा हिस्सा दे सकें या कोई हिस्सा न दें, तो उन्होंने कहा–"नहीं।"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्य को किसी बातचीत का ब्यौरा देने का अधिकार है। मैंने केवल यह कहा था कि इस समय मेरा यह विचार है, बाद में हम स्थिति पर पुनर्विचार भी कर सकते हैं। अब चूंकि हमारे पास सत्ता है, हमारे रास्ते की एक बाधा दूर हो गई है।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे विद्वान मित्र ने मेरी भूल में सुधार कर दिया है। इस भूल-सुधार के लिए मैं उनका बड़ा आभारी हूँ कि इस समय उनका इरादा इस खंड को रद्द करने का नहीं है। अपितु अभी वह इसे बनाये रखना चाहते हैं, लेकिन बाद में⋯

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैंने ऐसी कोई बात बिल्कुल नहीं कही है। मैं नहीं समझता कि मेरे मित्र को मेरी बातचीत का प्रयोग करने का अधिकार है।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : वह बातचीत नहीं, किन्तु आपने अब इस सभा में जो कहा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ये ऐसे मामले हैं, जिनके बारे में मैं अकेला निर्णय नहीं ले सकता। मुझे अपने सहयोगियों की मंजूरी लेनी होगी।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य प्रस्तुत विधेयक पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कह सकते हैं कि विद्यमान रूप में विधेयक में कृषि भूमि के बारे में कोई प्रावधान नहीं है। उन्हें निजी बातचीत का हवाला देने की आवश्यकता नहीं है।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : विधेयक को वर्तमान रूप में लीजिये। परिवर्तन अब किया जायेगा या बाद में मंत्रिमंडल अथवा अन्य दलों की सहमति से किया जायेगा, यह एक अलग मामला है। लेकिन अब क्या स्थिति है? कृषि भूमि शामिल नहीं की जा रही है। देश के किसी भाग में हिंदुओं की 80 प्रतिशत से अधिक सम्पत्ति भूमि के रूप में है। इस प्रकार इस विधेयक के अन्तर्गत हमारी बहन, बेटियों और अन्य महिला सम्बन्धियों की सम्पत्ति के बहुत बड़े भाग पर उत्तराधिकार से वंचित रखा जा रहा है। इस कारण यह भी आवश्यक है कि विधेयक पर पुनः विचार किया जाये और वर्तमान रूप में इस पर आगे विचार न किया जाये। आप जो भी कानून बनायें आप को उसे सभी सम्पत्ति कृषि, शहरी, चल अथवा अचल पर लागू करना चाहिये।

पंडित बालकृष्ण शर्मा (संयुक्त प्रांत : सामान्य) : यदि मेरे माननीय मित्र मुझे एक मिनट के लिए अवसर दें तो मैं जानना चाहूंगा कि यह कानून कृषि भूमि पर लागू किया जाये तो क्या इससे भूमि का विभाजन नहीं होगा। (व्यवधान)

माननीय उपाध्यक्ष : कोई व्यवधान नहीं होना चाहिये। चर्चा किसी समय भी बन्द हो सकती है और मैं सभा को पहले ही चेतावनी दे चुका हूँ। व्यवधान जितना कम होगा, उतने ही अधिक सदस्यों को वाद-विवाद में भाग लेने का अवसर मिलेगा।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : जहां तक भूमि के विभाजन का सम्बन्ध है, मुझे इससे कोई डर नहीं है। वासियों की संख्या अधिक होगी तो यह होना स्वाभाविक है। यदि किसी व्यक्ति के पांच बेटे हैं तो भूमि का विभाजन जरूर होगा और यदि उसकी तीन बेटियां भी हैं तो भूमि का और अधिक विभाजन होगा। अचल सम्पत्ति हो या शहरी सम्पत्ति हो, मुझे सम्पत्ति के विभाजन से कोई डर नहीं है। यदि आपके एक या दो मकान हैं और दो बेटे तथा पांच बेटियां हैं और वे सम्पत्ति का विभाजन करने का निर्णय लेते हैं, जो सम्पत्ति का विभाजन अवश्यभावी है। अतः दोनों पक्षों के लिए यह तर्क असंगत है और इसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाना चाहिये।

इस विधेयक के अन्तर्गत 80 प्रतिशत से अधिक सम्पत्ति को इसके उपबन्धों के प्रभाव से मुक्त रखा गया है। सुधार की दृष्टि से यह एक बड़ी कमी है।

इस विधेयक के सम्बन्ध में एक आपत्ति यह भी उठायी गयी है। किसी व्यक्ति के पास एक मकान और थोड़ी-बहुत जमीन भी हो सकती है। कुछ ग्रामीण लोगों के पास कोई कच्ची दुकान भी हो सकती है। उसमें अनेक विभाजन होंगे और परिवार में दामाद का भी प्रवेश होगा। इस विधेयक के कुछ समर्थकों का कहना है कि यह उचित आपत्ति है और इसलिये हमें तीसरे वाचन में इस आशयका एक खंड इसमें जोड़ देना चाहिए जिससे परिवार के रिहायशी मकान को उत्तराधिकार के उपबंधों से अलग रखा जायेगा। कहने का अभिप्राय यह है कि यद्यपि लड़की भी उत्तराधिकारी रहेगी पर रिहायशी मकान

में उसको हिस्सा नहीं मिलेगा। यह बात हुई तो शहरी सम्पत्ति तो और भी कम हो जायेगी। कुछ धनवान लोगों को छोड़कर, 30 करोड़ हिंदुओं में से कितने व्यक्तियों के पास एक रिहायशी मकान से अधिक सम्पत्ति है जिसमें पूरा परिवार रहता हो? सामान्य तौर पर देहातों में एक छोटा-सा मकान होता है और थोड़ी-सी जमीन होती है और यदि कोई व्यक्ति व्यापारी हो, तो उसके पास एक छोटी-सी कच्ची दुकान भी हो सकती है। यदि आप रिहायशी मकान को लड़की के उत्तराधिकार के मामले को लेकर अलग कर देते हैं तो आप उसकी सम्पत्ति से एक और टुकड़ा निकाल लेते हैं।

एक अन्य आपत्ति यह है कि यदि दामाद को परिवार में शामिल करने की व्यवस्था की जायेगी और आमतौर पर होता यह है कि वे अनेक समस्याएं खड़ी कर देते हैं और चूंकि वे एक अन्य ग्राम में सम्पत्ति का रखरखाव नहीं कर पाएँगे, इसलिए वे किसी स्थानीय व्यक्ति को वह सम्पत्ति बेचने की व्यवस्था कर देंगे। इसके परिणामस्वरूप परिवार की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जायेगी। ऐसी स्थिति से निपटने के लिये सुझाव दिये जा रहे हैं कि निःसंदेह बेटी को हिस्सा मिलेगा परन्तु वह सम्पत्ति के मूल्य के रूप में होगा। फिर आपको विवाह के एक या दो वर्ष के भीतर सम्पत्ति खरीदने का पहला अधिकार भाइयों को देना होगा। इस प्रकार भाई अपनी बहन को या उसके पति को उसके हिस्से की कीमत दे सकेगा और सम्पत्ति को अपने पास रख सकेगा। इस व्यवस्था में भी काफी कठिनाई पैदा हो सकती है। सम्पत्ति का बाजार के अनुसार मूल्य सुनिश्चित करना बहुत मुश्किल होगा और इसके परिणामस्वरूप लम्बी मुकदमेबाजी होगी और वह लम्बी मुकदमेबाजी चलती रहेगी फलतः बेटी को कुछ हासिल नहीं होगा। कृषि भूमि और रिहायशी मकान को अलग कर दिया जायेगा और अनेक अन्य चीजें इसमें जुड़ जायेंगी। यह कहा जा सकता है कि पूरा हिस्सा बहुत अधिक है, उसको आधा दे दो, या चौथाई दे दो तो मैं पूछना चाहता हूँ कि उसको पूरा हिस्सा क्यों न दिया जाये?

यदि आप विधेयक का शान्तिपूर्वक और धैर्यपूर्वक विश्लेषण करें और स्मृति को आधार न मानें, जिसको ईश्वरीय देन माना जाता है, तो पता चलेगा कि इससे महिला उत्तराधिकारियों को न्यूनतम लाभ भी नहीं प्राप्त होगा।

यह विधेयक संयुक्त हिंदू परिवार का सर्वनाश कर देगा, चाहे वह व्यवस्था अच्छी है या बुरी, लोग इसको उचित ही मानते हैं। हमारे सम्मान योग्य भाई श्री अल्लादी कृष्णामूर्ति अय्यर ने कल बताया था कि मद्रास में, देहातों में यह व्यवस्था अब भी प्रचलित है। हमारे मित्र श्री संथानम अपना भिन्न विचार रख सकते हैं। परन्तु यह व्यवस्था प्रचलित है और कुछ लोग इसको अच्छा समझते हैं। ऐसे लोगों का अनुपात न्यूनाधिक हो सकता है। हिंदू विधान के सभी अन्य सिद्धांतों को जैसे कि उत्तरजीविता, उत्तराधिकार, बेटे का हिस्सा, आप इन सबको समाप्त करने जा रहे हैं। इसकी क्या आवश्यकता है? आवश्यकता इस बात की है कि बेटी को हिस्सा मिलना चाहिए। अतः मेरा निवेदन यह है कि विधेयक

के भाग 5, 6 और 7 में हिंदू परिवार व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन करने की व्यवस्था है। अतः विधेयक के प्रस्तुत रूप से महिलाओं को न्यूनतम लाभ मिलेगा।

अतः मैं विधेयक का समर्थक करने वालों से पूछना चाहूँगा कि क्या इस विधेयक पर इसी अवस्था में कल अथवा आगामी सत्र में अन्तिम मतदान करवाना आवश्यक है? क्या इस पर गहराई से और विचार करना वांछनीय नहीं होगा जिससे किसी ऐसे अन्य तरीके का पता लगाया जा सके, जिससे संयुक्त हिंदू परिवार जो मिताक्षर अथवा दायभाग के नियमों के अधीन आते हैं कि महिला सदस्यों के लिये पूरा लाभ सुनिश्चित किया जा सके, साथ ही देश के विभिन्न भागों में प्रचलित प्रणालियों में कम से कम फेर-बदल करना पड़े।

मैंने परंपरावादी और सुधार के इच्छुक, दोनों पक्षों से अनुरोध किया है। मैं सिर्फ एक सुझाव देना चाहता हूँ। मैंने अपने मन में कोई निश्चित योजना नहीं बनायी है, इसमें काफी समय लगेगा। परन्तु मैं उसकी मोटी रूपरेखा आपके समक्ष रखूंगा। और फिर डॉ. अम्बेडकर, विधि के जानकार अन्य सदस्यों, सुधारों का पक्ष लेने वालों और परंपरावादी सदस्यों से पूछना चाहूँगा कि क्या यह विकल्प विचार करने योग्य है या नहीं? वास्तव में, आज सुबह तक मैं इस विषय पर बोलने से संकोच कर रहा था और मैं उस समिति के समक्ष अपने विचार रखना चाहता था जिसके शीघ्र ही गठन किये जाने का आश्वासन दिया गया था और मेरा विचार था कि यदि मुझे उस समिति का सदस्य बनाया गया, तो मैं अपने विचार उसके समक्ष रखूंगा। परन्तु आज जब मेरा नाम बोलने के लिए पुकारा गया, तो मैंने सोचा कि सभा के समक्ष ही अपना विचार रखना बेहतर होगा। मेरा सुझाव निम्नलिखित है।

हमारा उद्देश्य क्या है? हमारा उद्देश्य यह है कि परिवार के महिला सदस्यों को सम्पत्ति का पूरा अधिकार मिलना चाहिए। इस संबंध में हमें क्या करना चाहिए? संयुक्त परिवार में कोई उथल-पुथल करने की आवश्यकता नहीं, उत्तराजीविता की विधि को बरकरार रहने दीजिए। इस व्यवस्था को चलने दीजिए जब तक वह चलती है या चलायी जा सकती है। परन्तु जैसे ही किसी महिला का विवाह हो जाये, मिताक्षर परिवार में उसको सम्पत्ति में सहभागी बना देना चाहिए। इस समय वह संयुक्त परिवार की सदस्या है। परन्तु सम्पत्ति में उसकी साझेदारी नहीं है। मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूँ, कि मुझे उनके समक्ष अपना प्रस्ताव रखने हेतु केवल तीन मिनट का समय दिया जाए, फिर आप उस पर विचार करें। इसमें व्यवधान डालने से कोई बात नहीं बनेगी। यह आपके और समिति के विचारार्थ प्रस्ताव मात्र हैं, माननीय विधि मंत्री, प्रधानमंत्री तथा अन्य सदस्य, जिनकी इस विषय में रुचि हो, वे इस पर विचार करें। अब तक, प्रत्येक महिला विवाह के बाद अपने पति का गोत्र ग्रहण कर लेती है और वह संयुक्त परिवार की सदस्य बन जाती है। परन्तु उसके अधिकार बहुत सीमित होते हैं। वर्ष 1937 तक,

ब्रिटिश काल के विधि न्यायालय द्वारा प्रदत्त अधिकार जो उसको मिलते थे, भरण-पोषण तक सीमित थे। उसका सम्पत्ति में कोई कानूनी अधिकार नहीं था। वह उस सम्पत्ति में केवल रहने का लाभ उठा सकती थी।

यही स्थिति थी। वर्ष 1937 में देशमुख अधिनियम बना, उसमें लिखा था कि पति की मृत्यु हो जाने पर वह उतने ही हिस्से की हकदार रहेगी जितना उसके पति का था और यदि वह परिवार में देवर, ज्येष्ठ अथवा अन्य सदस्यों के साथ नहीं रहना चाहेगी, तो वह अपना हिस्सा अलग भी करवा सकेगी। मैं कहना चाहता हूँ कि उसमें केवल एक बात और जोड़ दीजिए कि वह उस सम्पत्ति में पूरी सहभागिनी होगी। जैसा कि मिताक्षर परिवार में होता है कि जैसे ही एक पुत्र का जन्म होता है वह पिता की पैतृक सम्पत्ति का अधिकारी बन जाता है और जन्म लेते ही सहभागी हो जाता है। इसी प्रकार विवाह होते ही महिला को भी पूरे अधिकारों के साथ सहभागिनी बन जाना चाहिए। परिवार में उसके अपने बेटे भी हो सकते हैं और अन्य लोग भी। वे सब बिना अलग हुए इकट्ठे मिलकर रह सकते हैं, परन्तु यदि वह सोचती है कि उनके साथ मिलकर इकट्ठे रहना सम्भव नहीं है, तो वह अपना हिस्सा अलग करवा सकती है जैसा कि 1937 अधिनियम के अधीन उस महिला के पति की मृत्यु के बाद करवाया जा सकता है। एक तो यह परिवर्तन है। यदि आप ऐसा कर देते हैं तो पिता की सम्पत्ति अस्त-व्यस्त नहीं होगी और संयुक्त परिवार भी छिन्न-भिन्न नहीं होगा। संयुक्त परिवार चलता रहेगा, जब तक वह चल सकता है। किसी ने कहा था कि यह व्यवस्था समाप्त होती जा रही है। किसी अन्य ने कहा था कि यह आयकर प्रयोजन के लिये समाप्त हो रही है। किसी अन्य ने यह पूछा था कि कितने लोग आयकर देते हैं और कहा कि संयुक्त परिवार व्यवस्था में रहते हुए भी 99.5 प्रतिशत हिंदू लोग आयकर नहीं देते। ये तर्क निरर्थक हैं। यदि इन परिस्थितियों में सयुक्त परिवार व्यवस्था समाप्त होती जा रही है, तो होने दीजिये। परन्तु जब तक यह व्यवस्था चलती है, चलने दीजिए।

मैं जो सुझाव दे रहा हूं वह न तो नया है और न ही हिंदू विधान की भावना के विरुद्ध है। मेरे विचार में यह मूल विधान, अर्थात् वेदों का विधान अथवा जैमिनी तथा अन्य विद्वानों द्वारों प्रतिपादित शास्त्रों में उल्लिखित विधान के अनुरूप है। मैं अपने भाषण को लम्बा नहीं करना चाहता। परन्तु मैं कहना चाहता हूँ, कि वैदिक काल में तथा उसके बाद स्थिति क्या थी। आप कृपया वर्ष 1913 में द्वारका नाथ मित्तर की हिंदू विधान में महिलाओं की स्थिति (द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू लॉ) पर प्रकाशित पुस्तक के कुछ भागों को पढ़ें। आप कृपया इलाहाबाद के स्व. डॉ. सतीशचन्द्र बनर्जी, जो इस देश के सुप्रसिद्ध और बेहद होनहार वकील हुए हैं, परन्तु दुर्भाग्य से जिनकी अल्प-आयु में ही मृत्यु हो गयी, के इलाहाबाद लॉ जर्नल के खंड ग्यारह में विद्वतापूर्ण लेख को पढ़ें। यह बहुत ही विस्तृत लेख है। आप पटना के डॉ. बिस्वास, की पुस्तक को भी पढ़ें। इन सब

में वेदों से उद्धरण दिये गये हैं और उन्होंने उन अन्य विद्वानों के विचारों का भी उल्लेख किया है, जो मनु से पहले हुए हैं और जिन्होंने बताया है कि उस काल में महिलाओं की स्थिति क्या थी। वह अपने पति की सम्पत्ति की पूरी मालिक मानी जाती थी। महर्षि जैमिनी का कहना है, वेदों पर भाष्य लिखते हुए वह कहते हैं–"विवाह हो जाते ही पत्नी धन की अधिकारिणी बन जाती है और उसका पति जो भी अर्जित करता है, वह उसका हो जाता है।" इसका अभिप्राय यह है कि वह पूरी सहभागिनी बन जाती है। फिर, एक अन्य पाठ के सम्बन्ध में अपने विचार रखते हुए वह कहते हैं कि महिला को न केवल पुरुषों की तरह ही धार्मिक और सिविल अधिकार मिल जाते हैं, बल्कि वह अपने पति द्वारा अर्जित सम्पत्ति का उपयोग भी कर सकती है। वह अपने पति द्वारा अर्जित सम्पत्ति पर नियंत्रण और उसका विन्यास भी कर सकती है। हमारे यहां सहभागी की यह संकल्पना थी। जैसे पुत्र जन्म लेते ही पिता की सम्पत्ति का भागीदार बन जाता है और उसे अन्तरण का अधिकार भी प्राप्त हो जाता है, बशर्ते कि वह परिवार की आवश्यकताओं अथवा उचित प्रयोजन के लिये हो, वही अधिकार महिला को उसके विवाह हो जाने के समय से ही मिल जाने चाहिए। मेरा निवेदन है कि हमें वेदों के प्राचीन पाठ का और प्राचीन हिंदू विधान का अध्ययन करना चाहिए और जानना चाहिए कि अवनति का काल वह कौन-सा था, जब उसके अधिकार कम कर दिये गये। उससे पूर्व महिला का कितना सम्मान था, अतः हम उसको सहभागिनी बनायें। मेरे सुझाव का एक भाग यह है।

मेरे सुझाव का दूसरा भाग यह है, जैसा कि सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने कहा कहा था कि किसी महिला को अपनी सम्पत्ति को अलग करवाने का पूरा अधिकार होना चाहिए, अतः हिंदू विधवा की उस काल्पनिक प्रस्थिति को समाप्त कर देना चाहिए। इस सम्बन्ध में, मैं सभा से निवेदन करना चाहता हूँ कि वे इस विषय पर दो मिनट विचार करें। जो मेरे मित्र इस विधेयक का विरोध कर रहे हैं, उनका कहना है कि हम शास्त्रों में उल्लिखित बातों पर ध्यान दे।। हम भी उनसे और परे नहीं जाना चाहते, विशेषकर, मिताक्षर से जिसका पालन इस देश में होता है। बंगाल को छोड़कर सारा देश इसका पालन करता है। इस मुद्दे के संबंध में मिताक्षर का विधान क्या कहता है? मैं चाहता हूँ कि आप विज्ञानेश्वर के याज्ञवल्क्य पर भाष्य के अध्याय 2, भाग 11 के छंद 2 और 4 को पढ़ें और देखें कि महिला के 'स्त्रीधन' के बारे में उसमें क्या कहा गया है। कुछ बातों को उद्धृत करने के पश्चात्, जैसे विवाह के समय महिला को उपहार स्वरूप जो कुछ दिया जाता है, जो अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, उसमें कहा गया है कि "और उसके अतिरिक्त स्त्रीधन में, उत्तराधिकार, विभाजन, अभिग्रहण (प्रतिकूल कब्जे द्वारा) आदि-आदि से प्राप्त धन भी शामिल है।'' कहने का अभिप्राय यह है कि किसी महिला का अपने पति अथवा पिता या किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सम्पत्ति पर पूरा स्वामित्व होना चाहिए, उस पर किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सम्पत्ति पर पूरा स्वामित्व होना चाहिए, उस पर किसी और का कोई नियन्त्रण नहीं होना चाहिए। 11वीं शताब्दी में विज्ञानेश्वर द्वारा इसी विधि

का उल्लेख किया गया था। अंग्रेजों के शासनकाल के आरम्भ से पूर्व तक यही विधान प्रचलित भी था। बनारस विचारधारा के एक भाष्यकार एन.एस. विरामतधीर ने भी इसी बात को दोहराया है। मयूख के लेखक नीलकंठ, जिसको बम्बई प्रान्त विशेषकर गुजरात और बम्बई द्वीप का प्रमुख प्रमाणिक व्यक्ति माना जाता है, भी इसी बात को दोहराते हैं। ब्रिटिश शासन के प्रारंभ से पूर्व बंगाल को छोड़कर, लगभग सभी प्रांतों में यही कानून था। जब अंग्रेज आये, उन्होंने कहा, "ठीक है, हम 'मिताक्षर' के मूलपाठ का अध्ययन करेंगे। उन्होंने कहा कि यह याज्ञवल्क्य के लेखन पर भाष्य है। याज्ञवल्क्य ने कुछ शब्दों का उपयोग किया है और विज्ञानेश्वर ने याज्ञवल्क्य द्वारा प्रयुक्त 'आदि' शब्द की व्याख्या की है। स्थिति यह है कि इस सम्बन्ध में काफी खींचतान चलती रही। निःसंदेह कुछ न्यायालयों में भी, विशेषकर, मद्रास में, अनेक वर्षों तक मामला चलता रहा। परन्तु अन्त में प्रिवी कौंसिल ने कहा "ठीक है, हमें इसको लागू करना चाहिए," यद्यपि यह प्रिवी कौंसिल द्वारा स्वयं उल्लिखित नियम के बिल्कुल विपरीत था कि यदि स्मृतिकार और भाष्य में अन्तर हो, तो हम भाष्यकार के कथन को ही स्वीकार करेंगे। उन्होंने स्वयं यह नियम निधारित किया था, परन्तु, बाद में, वे ही इस नियम से हट गये।

इसलिये मेरे विचार में हमें पुत्री के और पति के परिवार के सम्बन्ध में उसी स्थिति को अपनाना चाहिए जो वैदिक काल में थी और मिताक्षर व्यवस्था के अनुसार उसका पालन करना चाहिए। हमें उस विशाल न्यायिक साहित्य को अधिक महत्व नहीं देना चाहिए जो इस अवधि के दौरान इस देश में रचा गया है। हमें 18वीं शताब्दी तक प्रचलित विधि को अपनाना चाहिए। यदि आप इन दो बातों को स्वीकार कर लें तो मैं अपने मित्रों, इस विधेयक के समर्थकों, सुधार में पक्षधरों को बताना चाहता हूँ कि इससे बहुत अधिक लाभ होगा कि महिला पति के परिवार में सहभागिनी बनीं जाती है। आप संयुक्त परिवार को छोड़ दें। बेटे अपने परिवार में चलते रहें। इस व्यवस्था में कुछ अच्छाइयों और कुछ बुराइयों हो सकती हैं, परन्तु आप इसे अपने आप टूटने दीजिए और स्वतः समाप्त होने दीजिए। परन्तु महिला को अपने पति के परिवार में सम्पत्ति का हक दीजिए, बिल्कुल वही हक जो बेटे या पति को प्राप्त होता है। इसके बाद कुछ और बातें भी उठ सकती हैं कि उस महिला की मृत्यु के बाद उसकी सम्पत्ति की स्थिति क्या होगी, आदि आदि, परन्तु मैं अभी इनके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहता। मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें और फिर तय करें कि क्या यह योजना बेहतर नहीं है।

जहां तक अविवाहित बेटी का सम्बन्ध है, मैं इसका कोई कारण नहीं समझता कि उसको पिता की सम्पत्ति में भाइयों के बराबर पूरा अधिकार क्यों न मिले, क्योंकि उसको दहेज आदि कुछ नहीं मिला है और उसको किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। हमारे कुछ मित्रों ने भाई-बहन के प्रेम की सुन्दर तस्वीर खींची है जो भाई बहिन से करता है और भाई किस प्रकार उत्साहपूर्वक बहिन के विवाह की व्यवस्था करते हैं। निश्चय ही

कुछ भाई ऐसा करते हैं। परन्तु हम अनेक मामले जानते हैं, जिनमें भाई और विशेषकर उसकी धर्मपत्नी सब कुछ खींच लेती है और वे बहिन के दहेज के लिये बहुत कम छोड़ते हैं। विशेषरूप से यह स्थिति तब पैदा होती है, जब वह किसी ऐसे परिवार में जाती है जो अधिक समृद्ध नहीं होता और गांव में उसका अधिक प्रभाव भी नहीं होता। अतः हमें इसके लिये व्यवस्था करनी चाहिए। मैं कहना चाहूंगा कि इसके लिये शास्त्रों में भी सशक्त व्यवस्था है। कुछ में लिखा है कि उसका हिस्सा एक-चौथाई होना चाहिए और कुछ का कहना है कि वह बराबर का होना चाहिए और कुछ आधे के पक्ष में हैं। मैं आधे हिस्से के पक्ष में नहीं हूँ। मुसलमानों के कानून के हिसाब से उसको पूरा हिस्सा मिलना चाहिए।

श्री बी.एल. सोंधी (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : अविवाहित बेटी का सम्पत्ति पर अधिकार कब तक बना रहेगा?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : एक बार जब सम्पति का अधिकार दे दिया जाता है तो उसको निरस्त करने का प्रश्न ही नहीं होता। आखिरकार इससे परिवार में समस्याएं भी पैदा नहीं होंगी। हमें कुछ ऐसी व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए; पर हम सुनिश्चित करेंगे कि बाद में कुछ समायोजन भी हो जायें।

मैं अब विवाह सम्बन्धी अध्याय और तलाक सम्बन्धी अध्याय के बारे में भी कुछ कहना चाहूंगा। विधेयक के इस भाग के बारे में मेरी एक साधारण-सी आपत्ति है। पहला अध्याय एक पत्नी विवाह के बारे में है, मैं इस व्यवस्था का तहेदिल से समर्थक हूँ कि प्रत्येक हिंदू को केवल एक बार, न कि अधिक बार विवाह करना चाहिए। हम में से अधिकांश लोग एकसा ही करते हैं।

श्री एच.वी. कामत : केवल एक बार या बिल्कुल नहीं।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : बेटा पैदा न होने संबंधी सभी तर्क निरर्थक हैं। इस बात की क्या गारंटी है कि आप, एक के बाद एक, तीन पत्नियों से विवाह करें, तो उनमें से किसी से बेटा ही पैदा होगा? यह तो संयोग की बात होती है। इसलिये कम से कम मैं इस तर्क से सहमत नहीं हूँ। वास्तव में, और व्यवहार में भी अधिकांश हिंदुओं की एक ही पत्नी होती है और इस उपबन्ध को इस विधेयक में शामिल न करने का मैं कोई कारण नहीं समझता।

श्री लक्ष्मी नारायण साहू : उत्कल में तीन लाख महिलाएं पुरुषों से अधिक हैं। यदि आप एक के लिये केवल एक की बात करेंगे तो आप 3 लाख अतिरिक्त महिलाओं के लिये कैसे व्यवस्था करेंगे?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : इस में भी फिर धर्म आड़े आने लगा है। बड़ौदा में, वर्ष

1931 में 'मोनोगेमी एण्ड डाइवोर्स बिल' है। (एक पत्नी का विवाह और विवाह-विच्छेद विधेयक) एक ऐसे विधानमंडल द्वारा पारित किया गया था, जिसके 95 प्रतिशत सदस्य हिंदू थे। यह कार्रवाई एक महाराजा के संरक्षण में हुई जो एक रूढ़िवादी हिंदू थे। उपर्युक्त विधेयक उन्नीस वर्षों तक लागू रहा। क्या हम कह सकते हैं कि इस विधेयक के कारण बड़ौदा में हिंदू धर्म समाप्त हो गया है? बम्बई में श्रीमती मुंशी का विधेयक 1946 में पारित किया गया और वहाँ के विधान का अंग बना। गत वर्ष मद्रास में मद्रास विधानमंडल ने इसी प्रकार का विधेयक पारित किया था। इस प्रकार हम देखते हैं कि लगभग समस्त दक्षिण भारत में एक पत्नीत्व विधि प्रचलित है। वहां हिंदू धर्म नष्ट नहीं हुआ है। हमारे मद्रासी मित्र हमेशा मजबूत रहे हैं। इसलिये मैं समझता हूँ कि यह उपलबंध बहुत उपयोगी है और इसे बनाये रखना चाहिए।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : महोदय, यदि आप अनुमति दें तो जानकारी के लिये मैं एक या दो प्रश्न पूछना चाहूंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : वह नहीं मानेंगे।

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट : आपने एक-पत्नी विवाह के बारे में जो कुछ कहा है, वह बिल्कुल ठीक है, परन्तु मैं यह पूछना चाहता हूँ कि क्या कोई व्यक्ति अपनी पहली पत्नी के जीवित रहते उसकी रजामंदी के साथ, दुबारा विवाह कर सकता है?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : मुझे बहुत प्रसन्नता है कि हमारे माननीय भाई गोकुलभाई जी ने यह प्रश्न पूछा है। इस बारे में मुझे यह कहना है कि आप जैसे चाहो, महिला की अनुमति प्राप्त कर सकते हो। मुझे ऐसे बहुत से मामलों की जानकारी है। एक मामले में एक वृद्ध पुरुष था और एक वृद्धा महिला थी। एक बहुत विद्वान पंडित, ज्योतिषी को बुलाया गया और सब प्रकार की पूजा आदि करवा लेने के बाद, उसने महिला से कहा "आपके पति का आगामी तीन महीनों में देहान्त होने वाला है, और इस समस्या का समाधान एक ही है कि उसका दूसरा विवाह हो जाये और यदि उसका विवाह हो जाता है तो उसका पुत्र पैदा होगा।" और कुछ ऐसी ही बातें कहीं। उस महिला ने, यह सोचकर कि अब भारी विपत्ति आने वाली है, अपनी रजामंदी दे दी। अब निःसंदेह उस घर में एक नहीं बल्कि पांच महिलाएं हैं। (व्यवधान)

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया शान्ति बनाये रखें। माननीय सदस्य पिछले आधे घंटे से बैठने का प्रयत्न कर रहे हैं, परन्तु बार-बार प्रश्न पूछे जाने के कारण वे बोलते जा रहे हैं।

डॉ. बख्शी टेक चन्द : मैं अन्तिम बात पर आता हूँ, जो तलाक के बारे में है। इस विधेयक में जो सबसे बड़ी गलती की गयी है वह यह है कि सांस्कारिक विधि से किये गये विवाह के विघटन सम्बन्धी उपबंधों के समाज ही सिविल विवाहों के विघटन संबंधी उपबंध रखे गए हैं। इस सम्बन्ध में प्रवर समिति द्वारा अब प्रस्तुत विधेयक,

सर बी.एन. राउ द्वारा 1944 में तैयार किये गये मूल विधेयक और 1945 में उन्हीं द्वारा पुनरीक्षित विधेयक में अन्तर है। मैं कहना चाहता हूँ कि सिविल विवाह के सम्बन्ध में आपने वर्तमान विधि को बनाये रखा है जो वही अधिकार प्रदान करता है जो यह विधेयक प्रदान करता है। परन्तु सांस्कारिक रीति से सम्पन्न विवाह को सिविल विवाह के रूप में बदलने के लिये प्रावधान करने का प्रयास न करें। सांस्कारिक को सांस्कारिक ही रहने दें। जो बातें मूलतः कही गयी थीं और जिनकी अनुमति प्राचीन स्मृतिकारों ने भी दी है। तलाक में नियमों की परिधि बहुत सीमित रहनी चाहिए। इस बारे में मैं बी. एन. राउ का विचार यह था :

विवाह के समय नपुसंकता, जो तलाक के समय तक विद्यमान हो। यह एक ऐसी शर्त है जिस पर कोई भी समझदार व्यक्ति आपत्ति नहीं कर सकता।

इसी तरह कोई व्यक्ति पागल हो और इस तथ्य का बाद में पता चला हो। यह दूसरा प्राकृतिक पहलू है जिसके सम्बन्ध में कोई झगड़ा नहीं किया जा सकता।

इन दो शर्तों के अतिरिक्त आप तलाक की अनुमति तब दे सकते हैं, जब कोई व्यक्ति अपना धर्म बदल ले। कोई हिंदू, मुसलमान बन जाये और शादी कर ले। हमारे हिंदू विधान में विवाह की संकल्पना के अनुसार, विवाह हो जाने के बाद विवाह-विच्छेद नहीं हो सकता और धार्मिक रीति का अस्तित्व बना रहेगा, पत्नी कुछ नहीं कर सकती। अतः आप किस सिद्धान्त के अनुसार वैसा कर सकते हैं जब पति ने अपना धर्म बदल लिया हो और दूसरे धर्म को अपना लिया हो और उसी धर्म के अनुसार अन्य स्त्रियों से विवाह कर लिया हो?

श्री महावीर त्यागी : क्या इसका परिणाम यह नहीं होगा कि जब कभी किसी को तलाक की आवश्यकता पड़ेगी, तो वह नियमित कानूनी प्रणाली का रास्ता न अपनाकर अपना धर्म ही बदल लेगा?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : नहीं, ऐसे व्यक्ति अपना धर्म परिवर्तन नहीं करेंगे। उपर्युक्त शर्तों के अतिरिक्त आप उसमें, कुछ अवधि के लिये उदाहरणार्थ 5 वर्ष, 6 वर्ष अथवा 7 वर्ष के लिये महिला का परित्याग, जोड़ सकते हैं। ये शर्तें कोई नहीं नहीं हैं। प्राचीन स्मृतिकारों को भी इनकी जानकारी थी। इन तीन या चार परिस्थितियों में ही तलाक की अनुमति दी जानी चाहिए। क्या हमने ऐसे मामले देखे नहीं हैं, जिनमें पति विवाह करने के पश्चात् अपनी पत्नी को छोड़ देता है? क्या ऐसी दुर्भाग्यवान महिलाओं की समस्या का कोई समाधान नहीं होना चाहिए? उनका समाधान अवश्य होना चाहिए। परन्तु इसमें मुकदमेबाजी को नहीं जोड़ा जाना चाहिए। यदि कोई मामला परस्त्री गमन का हो, तो साक्ष्य जाली भी हो सकता है। कोई सांठ-गांठ वाला साक्ष्य पेश किया जा सकता है और आरोप को सिद्ध किया जा सकता है। परन्तु मेरे विचार में यह बात धार्मिक

रीति अनुसार किये गये विवाहों के सम्बन्ध में ही लागू की जानी चाहिए। मेरा निवेदन यह है कि जैसा कि मैंने अपनी असहमति वाली टिप्पणी में कहा है कि विवाह और तलाक सम्बन्धी अध्याय को फिर से लिखा जाना चाहिए। हिंदू दो ढंग से विवाह करते हैं—सिविल और सांस्कृतिक। एक के मामले में आपको पता होता है कि किन शर्तों के अन्तर्गत उसका विघटन किया जा सकता है। दूसरे मामले में भी आपके नये आधुनिक विचार हो सकते हैं। मैं इस विधेयक के समर्थक सदस्यों से कहना चाहता हूँ कि वे इस मामले पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें कि क्या इससे महिलाओं की स्थिति में सुधार होगा। यदि मेरे सुझाव को स्वीकार कर लिया जाता है तो प्रस्तुत विधेयक बहुत अच्छा बन जायेगा और महिलाओं के अस्तित्व को पूरा सम्मान मिलेगा। उनको सम्पत्ति का पूरा अधिकार मिलेगा, आर्थिक दृष्टि से भी वे आत्मनिर्भर महसूस करेंगी। नये संविधान के अन्तर्गत वयस्क मताधिकार की व्यवस्था है। हमारे यहाँ, प्रशासन के विभिन्न विभागों का प्रभार कई महिला मंत्रियों के अधीन है। हम महिला के अधिकार को सीमित नहीं कर सकते, उसको गृहिणी मात्र नहीं रहने दे सकते और इस प्रकार उसको अन्य अधिकारों से वंचित नहीं रख सकते। यह उसके साथ घोर अन्याय होगा। ऐसा करना हमारे प्राचीन विधान के विपरीत होगा। इस बीच कुछ समय के लिए जो जोर-जबरदस्ती हुई, वह किसी परिस्थिति विशेष में उचित समझी गयी होगी, शायद उस युग की परिस्थितियां कुछ ऐसी रही होंगी। परन्तु अब वे सब निरर्थक हो चुकी हैं। वे हिंदू धर्म से सम्बन्धित नहीं है और उनको समाप्त कर देना चाहिए। हमें उन निरर्थक बातों का परित्याग कर वैदिक संकल्पनाओं को अपनाना चाहिए।

संक्षेप में मेरा इतना ही निवेदन है और मैं चाहता हूं प्रत्येक माननीय सदस्य को मेरे सुझावों पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

माननीय श्री के. संथानम (परिवहन एवं रेल राज्य मंत्री) : स्पष्टीकरण की खातिर क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूँ? कल्पना कीजिए की कोई महिला अपने पति की सम्पत्ति के सहसमांशी बन जाती है, तो क्या उसका हिस्सा उसके पति के हिस्से का ही भाग होगा या वह अलग होगा?

डॉ. बख्शी टेक चन्द : जब तक वे संयुक्त परिवार के रूप में साथ रहते हैं। पूरे परिवार का संयुक्त स्वामित्व रहेगा जैसा कि आप और आपके बेटे सम्पत्ति में सहसमांशी हैं। परन्तु यदि विभाजन हो जाता है, तब वह स्वतंत्र हो जायेगी। यह सीधी-सी बात है कि सम्पत्ति में तब उसका भी हिस्सा होगा जैसे कि बेटे का होता है।

एक माननीय सदस्य : महोदय, अब प्रश्न के मतदान के लिये रखा जाये।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

मौलाना हसरत मोहानी (यू.पी. मुस्लिम) : मैं केवल पांच मिनट लूंगा।

कुछ माननीय सदस्य : उठ खड़े हुए।

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया शान्ति बनाए रखें। क्या सभी सदस्य अपने-अपने स्थान पर बैठ जायेंगे? मैं देख रहा हूँ कि काफी बड़ी संख्या में सदस्य इस विषय पर बोलना चाहते हैं, परन्तु जैसा कि मैंने कल कहा था, यदि हम इस हिसाब से चलते रहे तो हमारे एक महीने या दो महीने तक बैठे रहने पर भी समय का अभाव ही रहेगा। माननीय सदस्य अपने भाषणों को संक्षिप्त नहीं करना चाहते। हिंदू संहिता केवल हिंदुओं पर ही लागू नहीं होती, बल्कि विवाह के ये नियम और रस्में, जैनियों और सिक्खों पर भी लागू होती हैं। यह मुसलमानों, ईसाईयों और पारसियों पर लागू नहीं होती। (व्यवधान)

एक माननीय सदस्य : इस विधेयक के कुछ खंड अन्य समुदायों पर भी लागू होते हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य भली-भाँति जानते हैं कि जब अध्यक्ष महोदय खड़े हों, तो किसी अन्य सदस्य को उठना नहीं चाहिए। यह बात माननीय सदस्यों को स्मरण कराने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। इसलिये अब मैं जैन समुदाय के एक सदस्य को और सिख समुदाय के एक सदस्य को बुलाऊँगा और फिर अन्य सदस्यों को। प्रो. के.टी. शाह।

श्री एच.के. खांडेकर (सी.पी. एण्ड बिरार : सामान्य) : हरिजनों को क्यों नहीं।

मौलाना हसरत मोहानी : उठ खड़े हुए।

माननीय उपाध्यक्ष : अभी मैं इस माननीय सदस्य को अनुमति नहीं दे रहा, पहले अन्य माननीय सदस्यों से चर्चा आरम्भ कराता हूँ।

माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा (संसदीय कार्य मंत्रालय के राज्य मंत्री) : मैं एक सुझाव देना चाहता हूँ। यदि सभा सहमत हो तो हम आज 7 बजे तक या इससे भी अधिक समय तक बैठ सकते हैं। यदि सदस्यगण इससे संतुष्ट नहीं है और अन्य सदस्य भी बोलने के इच्छुक हैं तो हम शनिवार को भी बैठने को तैयार हैं। सरकार इस कार्य के लिये शनिवार का आधा समय दे देगी। शनिवार को प्रश्नकाल नहीं होगा और भोजनावकाश से पूर्व हमारे पास ढाई घंटे से अधिक समय होगा। यदि इससे काम चल जाता है और सभा इस बात से सहमत हो, तो इससे सब कठिनाइयां दूर हो जायेंगी।

माननीय उपाध्यक्ष : मेरे विचार से यह बहुत ही उचित प्रस्ताव है। मैं पहले ही कह चुका हूं कि सभी की बैठक शनिवार को भी होगी। मैं इस पर कायम हूँ। यदि सरकारी कार्य की आकस्मिकता के कारण शनिवार को बैठना आवश्यक हो जाता है तो कोई आफत नहीं आ जायेगी। हम समिति की बैठकों के लिये शनिवार को बैठते ही हैं। मैंने

सरकार से अनुरोध किया है कि उस दिन प्रवर समिति की बैठक रद्द कर दें। मैं इस बात को सुनिश्चित करूंगा कि प्रवर समिति की कोई बैठक शनिवार के लिये निर्धारित न की जाये। माननीय सदस्यों को अन्य कोई संसदीय कार्य नहीं करना पड़ेगा, ताकि वे हिंदू संहिता पर चर्चा में भाग ले सकें।

संसदीय कार्य मंत्री महोदय ने अभी-अभी सरकार की ओर से सुझाव दिया है कि वे शनिवार का समय, जो पहले अन्य सरकारी कार्य के लिये निर्धारित था, हिंदू संहिता पर चर्चा के लिये देने पर सहमत है। यह बात जान लेने पर कि इस विषय पर अधिक माननीय सदस्य बोलना चाहते हैं, वे शनिवार का समय देने के लिये तैयार हैं जिसका मध्याह्नपूर्व का समय गैर-सरकारी सदस्यों के लिये निर्धारित होगा और मध्याह्न पश्चात् का समय माननीय विधि मंत्री द्वारा उत्तर दिये जाने के लिये निश्चित किया गया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने सभा की स्वीकृति के लिए एक अन्य सुझाव भी दिया है। उसको स्वीकार करना या अस्वीकार करना सदस्यों की इच्छा पर निर्भर करता है। इस बात को देखते हुए कि बहुत से सदस्य बोलने के इच्छुक हैं, आज हम 7 बजे तक बैठेंगे। आज मैं 5 बजे यहां से जाऊंगा और पता लगाऊंगा कि माननीय सदस्य थकावट महसूस कर रहे हैं या वे सक्रियता से चर्चा में भाग ले रहे हैं। निजी रूप से मैं और अध्यक्ष-तालिका (पैनल आफ चेयर मैन) के मेरे मित्र 7 बजे तक बैठने के लिये तैयार हैं। इस मामले में मैं सभा के साथ हूँ।

माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा : महोदय, मैंने सरकार की ओर से कहा था कि वे हिंदू संहिता विधेयक पर चर्चा के लिये शनिवार का आधा समय देने के लिये तैयार हैं। परन्तु जैसा कि आप ने पहले ही कह दिया है कि इस प्रयोजन के लिये शनिवार का पूरा समय दिया जायेगा, तो सरकार इस पर भी सहमत है।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे आशा है कि सरकार मेरे सुझाव पर सहमत होगी।

पंडित गोविंद मालवीय (यू.पी. : सामान्य) : महोदय, मैं आपके विनिर्णय की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। आपने यह सोचकर अपना निर्णय दिया कि शनिवार छुट्टी का दिन है, परन्तु हम में से कुछ लोगों ने अपने आवश्यक और अपरिहार्य कार्यक्रम बनाये हुए हैं। मैं अपने बारे में कहना चाहता हूँ कि मैंने उस दिन बहुत ही आवश्यक और अनिवार्य कार्यक्रम बनाया हुआ है। महोदय, मैं चाहता हूँ कि आप कृपया इस बात का भी ध्यान रखें। यदि हमें पहले से पता होगा कि शनिवार को सदन में आना है तो हम और कोई कार्यक्रम न बनाते। अब हमारे सारे कार्य अस्त-व्यस्त हो जाएंगे। इसलिये मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि इस महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा करने के लिये शनिवार के स्थान पर कोई और दिन सुनिश्चित कर दें। सरकार आसानी से ऐसा कर सकती है। वे शनिवार को सरकारी कार्य निपटा सकते हैं। और इस विषय पर चर्चा के लिये कोई और दिन निश्चित कर सकते हैं। हमें इस पर कोई आपत्ति नहीं

होगी। मुझे आशा है कि सभा इस बात को महसूस करेगी कि कुछ अन्य लोग जो इस चर्चा में भाग लेना चाहते हैं, परन्तु वे उस दिन नहीं आ सकेंगे, उनके बारे में भी विचार करना चाहिए।

माननीय श्री सत्यनारायण सिंह : यदि माननीय सदस्य सोमवार को बैठना चाहते हैं तो मेरे विचार से सरकार को इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी। शनिवार को हम अन्य सरकारी कार्य निपटा लेंगे।

श्री अजीत प्रसाद यादव : इस चर्चा को कल भी जारी रख कर, इस विधेयक की चर्चा को समाप्त क्यों न कर लिया जाये?

माननीय सत्यनारायण सिन्हा : शनिवार को सरकारी कार्य के लिये सभा की बैठक होगी। सरकार इस विधेयक पर चर्चा करने के लिए सोमवार का दिन निश्चित करने के लिये तैयार है। परन्तु शनिवार सरकारी काम-काज का दिन होगा।

माननीय श्री के. संथानम : सदस्यों को शनिवार की अपेक्षा सोमवार को कम समय मिलेगा। परन्तु यदि माननीय सदस्य सोमवार को चर्चा समाप्त कर देना चाहते हैं तो हमें उसमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु यदि देरी करने के लिये ही स्थगित किया जा रहा है...

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे खेद है कि माननीय सदस्य सहयोग नहीं कर रहे हैं। पंडित गोविंद मालवीय ने एक सुझाव दिया था और अन्य के साथ वह एक महत्वपूर्ण सदस्य है। वे विधेयक पर चर्चा में गम्भीर रुचि ले रहे हैं, इस पक्ष की हो या दूसरे पक्ष की, वे शनिवार को छोड़कर किसी भी अन्य दिन इस विषय पर चर्चा को तरजीह देंगे और उनकी इच्छा को ध्यान में रखते हुए सरकार इस विषय पर सोमवार को चर्चा करने को तैयार है। सरकार क प्रवक्ता ने ऐसा कह दिया है। माननीय सदस्यों को पता है कि सोमवार को प्रश्नकाल भी होगा। इस बात की पूरी जानकारी होते हुए भी उन्होंने सोमवार को ऐसा करना स्वीकार किया है।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : महोदय, मैं आपका पूरा सम्मान करते हुए कहना चाहता हूँ कि शनिवार छुट्टी का दिन है और इस दिन हमको कुछ विशिष्ट कार्य करने होते हैं। मैं उस छुट्टी की उपेक्षा कर सकता हूँ, बशर्ते की उसका कोई महत्वपूर्ण कारण हो। अब मैं सभा से पूछना चाहता हूँ कि क्या यह तय है, क्या वे इस बात से सहमत हैं कि इस विधेयक पर चर्चा यथाशीघ्र समाप्त कर दी जाये? इस विधयेक पर चर्चा को समाप्त करने की क्या जल्दी है? सरकार के पास अन्य अनेक अधिक महत्वपूर्ण विधेयक हैं। हमारे पास बीमा सम्बन्धी विधेयक पड़ा है जिसको आप इसी सत्र में पास करके कानून बनाना चाहते हैं। यदि यह विधेयक...

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य अपना स्थान ग्रहण करें। हमने पहले भी सुना है, कुछ माननीय सदस्य इस प्रकार की आपत्ति कर रहे हैं कि इस विधेयक को शीघ्र

निपटाने की कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे इस बात की आशंका है कि इस सभा में इस विषय के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है। यदि मतैक्य होता तो हम समय को लेकर इतनी खींचतान नहीं करते। यह सर्वविदित है कि इस बारे में सदस्यों के भिन्न-भिन्न विचार हैं। केवल एक माननीय सदस्य के सुझाव पर मैं सभा की राय नहीं जानना चाहता।

अब इतना तो स्पष्ट है कि शनिवार सरकारी काम-काज का दिन होगा जब हिंदू संहिता विधेयक को छोड़कर अन्य सरकारी कार्य निपटाया जायेगा। मेरा विचार है कि सोमवार को मैं आधे दिन तक गैर-सरकारी सदस्यों को बोलने की अनुमति दूंगा और मध्याह्न पश्चात् मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर को बुलाऊंगा।

श्री महावीर त्यागी : हममें से अनेक सदस्य काफी समय से आपका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास कर रहे हैं। क्या मैं इस बात पर अब आपका विनिर्णय समझूं कि अब हिन्दू संहिता विधेयक पर किसी और हिंदू को बोलने की अनुमति नहीं दी जायेगी?

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने ऐसा तो नहीं कहा और न ही मैं ऐसा कहूंगा। माननीय सदस्य ने यद्यपि वह काफी जागरूक सदस्य हैं, दुर्भाग्य से मुझे गलत समझा है। मैंने केवल इतना कहा था कि एक भी जैन या सिक्ख सदस्य इस विधेयक पर नहीं बोला, जबकि यह उन पर भी समान रूप से लागू होता है।

श्री एच.जे. खांडेकर : हरिजनों के बारे में क्या स्थिति है?

माननीय उपाध्यक्ष : इस विधेयक के प्रवर्तक तो हरिजनों के नेता ही हैं। यह कहना उचित नहीं कि हरिजन हिंदू समुदाय से सम्बन्धित नहीं। मेरे विचार में हरिजन भी उतने ही हिंदू हैं, जितने कोई अन्य हिंदू है। जाति सम्बन्धी जागरूकता को लेकर बात को अधिक बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है।

मैंने केवल इतना कहा था कि अन्य सदस्यों की अपेक्षा जैन और सिक्ख सदस्यों को तरजीह दी जायेगी। किसी अन्य सदस्य को बोलने से रोकने का मेरा कोई इरादा नहीं है।

इस समय जो स्थिति है, मैं समझता हूँ कि सरकार का सुझाव बहुत वाजिब है। इस विधेयक पर चर्चा में काफी दिन लग गये हैं और अब एक दिन और दे दिया गया है। यदि सोमवार को भी, सभा की आम राय यह होगी कि अभी चर्चा और चलनी चाहिए तो मैं सभा के साथ हूँ। जहां तक अध्यक्षपीठ का सम्बन्ध है, वह संतुष्ट है कि इस विषय पर काफी चर्चा हो चुकी है।

श्री महावीर त्यागी : मैं इस प्रवृत्ति के विरुद्ध रोष व्यक्त करता हूँ। मैं समझता हूँ कि अध्यक्षपीठ की कृपा दृष्टि, जाति, वर्ग अथवा सम्प्रदाय के बीच कोई विभेद किये बिना, सब पर समान रूप से होनी चाहिए। बहुसंख्यक अथवा अल्पसंख्यक के बीच कोई

अन्तर किये बिना आपको सभा में सब पर और समान रूप से ध्यान देना चाहिए।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य ने मुझे पूरी तरह गलत समझा है। जब कभी कोई ऐसा विधेयक सभा में चर्चा के लिये आता है जो कुछ समुदायों को प्रभावित करता है, दुर्भाग्य से इस देश में अनेक समुदाय हैं, तो सभी समुदायों के प्रतिनिधियों को अपने विचार व्यक्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए। यदि माननीय सदस्य इस विधेयक को पढ़ें तो उनको पता चलेगा कि यह विधेयक जैन और सिक्ख समुदायों को भी प्रभावित करता है। इस विषय पर अनेक हिंदू अपने विचार व्यक्त कर चुके हैं और अब मुझे कुछ जैन और सिक्ख सदस्यों को बोलने का अवसर देना चाहिए। मदवार चर्चा करने से पूर्व हमें उनके विचार भी जान लेने चाहिए।

श्री महावीर त्यागी : मैं विरोध व्यक्त करता हूँ...

माननीय उपाध्यक्ष : मैं यह सहन नहीं कर सकता। माननीय सदस्य को यह ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करना उचित नहीं है।

***प्रो. के.टी. शाह (बिहार : सामान्य) :** महोदय, आरम्भ में, जब यह विधेयक प्रस्तुत किया गया था और सभा में प्रस्ताव रखा गया था, तो इस वाद-विवाद में भाग लेने का मेरा कोई इरादा नहीं था। परन्तु अब चूंकि इस विषय पर काफी चर्चा हो चुकी है और सभा में भिन्न-भिन्न विचार रखे जो चुके हैं, और पार्टी की ओर से अपना मत व्यक्त करने की स्वतंत्रता है तो मैं समझता हूँ कि इस प्रस्ताव तथा इस विधेयक के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करने ही चाहिए। और मुझे विश्वास है कि विधि मंत्री और उनके सहयोगी उन पर विचार करेंगे।

महोदय आपने कृपा करके मुझे एक जैन के रूप में अपने विचार व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया है। यहां पर मैं सभा के एक सदस्य के रूप में खड़ा हूँ और मैं किसी समुदाय विशेष के सदस्य के रूप में किसी विशेषधिकार का दावा नहीं करता। मैं अपने आपको एक भारतीय नागरिक स्वीकार करता हूँ और इस प्रकार की चर्चा में भाग लेने के लिये किसी धर्म में अपने विश्वास को कोई योग्यता या अयोग्यता नहीं समझता। मैं केवल इस सभा के सदस्य के रूप में बोलता हूँ।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। महोदय, आपने प्रो. शाह को जैन समुदाय की ओर से बोलने के लिये आमंत्रित किया है, परन्तु उनका कहना है कि वह जैन समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करते।

माननीय उपाध्यक्ष : यह व्यवस्था का प्रश्न नहीं है।

---

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 602-607

प्रो. के.टी. शाह : इसके साथ मुझे यह भी कहना है कि मैं इस विधेयक में निहित उपबंधों का आमतौर पर समर्थन करना चाहूंगा, यद्यपि मैंने विरोधी पक्ष बनाने का प्रयास किया है जिसे अभी तक मान्यता नहीं मिली है। अब जैसी भी स्थिति है विरोधी पक्ष का सदस्य होते हुए और संविधान के प्रत्येक उपबंध का निरन्तर विरोध करने वाला व्यक्ति होते हुए भी इस सरकार द्वारा संरचना के सम्बन्ध में अथवा सुधार लाने के लिये विधान के स्तर पर किये गये प्रत्येक प्रयास का विरोधी होते हुए भी अब मैं इस विधेयक के सम्बन्ध में बिना शर्त समर्थन दे रहा हूँ। अत: मेरा ऐसा विश्वास है कि उसकी उचित सराहना की जायेगी। यदि सरकार इस पुरातन कथन पर विश्वास न करे कि शैतान भी उपदेश दे सकता है और मुझ से प्राप्त प्रत्येक समर्थन को संदेहास्पद समझा जाये, तो भी इसका स्वागत किया जाना चाहिए। यदि उनका विचार यह नहीं है तो इस विधेयक का विरोध जितना कि मैं चाहता हूँ कम से कम उससे अधिक ही प्रभावी होगा।

महोदय, इस प्रकार के विचार रखते हुए और इस रूप में अपना सहयोग प्रदान करते हुए मैं विनम्रतापूर्व इस सभा का पूरा सम्मान करते हुए कहना चाहूंगा कि हमारे बीच में परिहास को उचित संदर्भ में नहीं समझा जाता। अत: मैं किसी ऐसे शब्द या दृष्टान्त का उल्लेख नहीं करूंगा जिससे इस चर्चा में कोई हल्कापन आये। मैं इस विषय को हमारे देश के अस्तित्व के लिये बहुत महत्वपूर्ण समझता हूँ। इस विधेयक के दूरगामी परिणाम निकलेंगे और इसलिये मैं अपने भाषण में किसी ऐसे शब्द या दृष्टान्त का सहारा नहीं लूंगा, जिससे किसी पर्यवेक्षक, बाहर के व्यक्ति या किसी छात्र पर कोई ऐसा प्रभाव पड़े कि हम इस मामले को गंभीरता से नहीं ले रहे।

ये टिप्पणियां कर चुकने के बाद मैं कुछ आपत्तियों पर विचार करना चाहूंगा, जो इस विषय पर हैं या विधेयक के मूल सिद्धांतों के सम्बन्ध में की गई हैं। महोदय, इस बात की चुनौती भी दी गयी है कि क्या यह संस्था इस प्रकार के विषय से निपटने में सक्षम है, क्या इस विधेयक में निहित विषय पर विचार करने के लिये इस सभा को समादेश मिला है? क्या इस विषय की तत्कालिकता पर्याप्त है, ताकि इस प्रस्ताव से शीघ्र निपटा जा सके। कम से कम मुझे इस संस्था की क्षमता के बारे में कोई संशय नहीं है कि वह इस प्रकार के मामलों से निपट सकती है। मुझसे ठीक पहले बोलने वाले सदस्य ने भी अनेक दृष्टांत दिये हैं जिनमें इस सभा में विधायी उपायों के माध्यम से प्रस्ताव रख कर संविधान सहित अनेक मूल ढांचे सम्बन्धी परिवर्तन के बारे में प्रस्ताव लाये गये और पारित भी किये गये हैं। इससे पहले विधान मंडल ने, जो इतना प्रभुसत्ता सम्पन्न नहीं था, जितना कि यह अब है, बहुत महत्वपूर्ण सुधार किये थे और इस लिये इस प्रकार के मामलों से निपटने के लिये इस विधानमंडल के सक्षम होने का प्रश्न मुझे अशोभनीय एवं अप्रासंगिक लगता है और कहना होगा कि वह इस सभा के लिये सम्मानजनक भी नहीं है, यद्यपि यह भी बिल्कुल सच है कि इस विषय को निर्वाचक-मंडल के समक्ष नहीं

रखा गया था। यदि हम लोग याद करें कि किस तरह और किस रूप में हम इस सभा के लिये निर्वाचित हुए हैं, तो हम महसूस करेंगे कि इस सभा के सदस्य किसी अन्य मुद्दे को लेकर नहीं, बल्कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये और इस देश का संविधान बनाने हेतु निर्वाचित हुए थे। यदि इन तर्कों पर अधिक जोर दिया गया तो मुझे इस बात की आशंका है कि इस सभा द्वारा निपटाये गये अनेक मामले अवैध या नियम विरुद्ध बता दिये जायेंगे। इसलिये मैं नही चाहता कि इस आशय का कोई सुझाव दिया जाये जिससे इस सभा की ऐसे मामलों से निपटने सम्बन्धी सक्षमता, प्राधिकार और यथातथ्यता के बारे में किसी संदेह का आभास हो।

महोदय, आम चुनावों के दौरान भी यह सम्भव नहीं होता कि प्रत्येक मामले पर अलग से विचार किया जा सके। जिन लोगों को लोकप्रिय आम चुनावों का अनुभव है वे महसूस करेंगे कि आम चुनावों के दौरान भी अनेक मामले सामने लाये जाते हैं। अत: किसी एक जटिल मामले पर, जिस तरह के मामले पर हम आज विचार कर रहे हैं, बहुसंख्यकों के समर्थन का कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता। जब तक संविधान में ही जनमत जैसे किसी तरीके का उल्लेख न किया जाये, जब तक कोई संवैधानिक तरीका न हो जैसे कि श्री गोकुलभाई भट्ट ने सुझाया है, इस प्रकार के मामलों पर जनता का स्पष्ट निर्णय जानना, यदि असम्भव नहीं तो बहुत कठिन अवश्य है। वास्तव में जनमत जानने का कोई तरीका है ही नहीं। फिर भी कुछ लोग कह सकते हैं कि इस देश में सार्वजनिक शिक्षा की स्थिति को देखते हुए या इस बात को ध्यान में रखते हुए कि देश के समाचार-पत्रों (प्रेस) पर किस प्रकार कुछ व्यक्तियों ने एकाधिकार बना रखा है और इस प्रकार के मामलों के सम्बन्ध में मतदाता को अनुभव का कितना अभाव है जनता का निर्णय, यद्यपि वह ऐसा करने में सक्षम है, संतोष -जनक नहीं माना जा सकता। इसलिये मेरा सुझाव यह है कि इस प्रकार के तर्क का इस सभा के निर्णय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए और हमें अपने आपको प्रस्ताव की चर्चा तक सीमित रखना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि कुछ माननीय सदस्यों का यही विचार है।

कुछ ऐसे लोगों ने विधेयक के विरोध का नेतृत्व किया है, जिनका मैं निजी रूप से बहुत सम्मान करता हूँ। इसलिए मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि इस विरोध का कारण निहित स्वार्थ है या यह विरोध किसी प्रच्छन्न प्रेरणा से प्रेरित है या किन्हीं अन्य कारणों से किया गया है। मैंने पूरी तरह समझा है कि विरोध करने वाले सदस्यों ने अपने विचारों के पक्ष में काफी ठोस कारण दिये हैं, मैं भले ही उनके विचारों से सहमत नहीं हूँ। मेरा मत उनसे भिन्न होते हुए भी मैं यह नहीं कह सकता कि उनके मत पर गम्भीरता से विचार न किया जाये या उनका मत विचार करने योग्य नहीं है। इसलिये मैं समझता हूँ कि जिन माननीय सदस्यों ने इस विषय की तात्कालिकता पर प्रश्नचिह्न लगाया है, उनमें से कुछ ने अपने विचार के समर्थन में जोरदार तर्क दिये हैं और काफी लम्बी चर्चा की है। परन्तु

जब मैं यह कहता हूं तो यह नहीं समझना चाहिए कि इस मामले को अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर दिया जाए। मैं तो चाहता हूँ कि यह संस्था, जिसकी प्रभुसत्ता के बारे में मुझे कोई संदेह नहीं है, वह इस विषय पर निश्चित रूप से और आखिरी तौर पर निर्णय ले। यद्यपि मैं एक माननीय सदस्य द्वारा दिये गये तर्क को पूरी तरह समझता हूँ कि इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि दूसरा सदन हमारे निर्णय को, यदि हम अपना निर्णय दे भी देते हैं, स्वीकार कर लेगा। मेरा विचार यह है क जब कोई जगह तैयार कर ली जाती है, एक बार चिन्ह संकेतक लगा दिया जाता है, एक बार कोई सड़क बन जाती है तब इंजन को उलटा चलाना और पीछे ले जाना कठिन हो जाता है। तथापि यह बात विश्वास की है, तर्क की नहीं। इस मामले में बौद्धिक विचार की अपेक्षा, सामान्य विश्वास का अधिक महत्व है और इसलिये मैं इस विषय पर खुले दिल से विचार करता हूँ। फिर भी मुख्य बातों को ध्यान में रखते हुए, जो इस विधेयक में उल्लिखित गुण-दोष के संबंध में कही गयी हैं मैं विधेयक की अनेक धाराओं, अनेक अध्यायों या अनेक उपबंधों का विरोध करने वालों का समर्थन नहीं कर सकता। जहां तक मैं समझ पाया हूँ, इस विषय में मुख्य समस्या महिला की स्थिति को लेकर है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा है कि मैं इस चर्चा में किसी प्रकार का छिछलापन लाने के पक्ष में नहीं हूँ। इसलिये इस वाद-विवाद के दौरान अब तक जो तर्क दिये गये हैं या मुद्दे उठाये गये हैं, मैं उससे कोई विशेष प्रभावित नहीं हुआ हूँ। हम धर्म, लिंग, जाति या सम्प्रदाय का कोई विचार किये बिना एक ऐसा राष्ट्र बना बना रहे हैं, जिसमें सभी नागरिक समान समझे जायेंगे। यदि यही सिद्धान्त है जिसे हम बुनियाद बनाना चाहते हैं, यदि हमारे संविधान का यही आमुख है और जीवन का दिशानिर्देश है, जिस पर हमें देश का निर्माण करना है, तो मेरा विचार यह है कि इस विधेयक के उपबंध संविधान के आमुख में उज्ज्वल आदर्शों के अनुरूप हैं और इसलिये अब हम जो भी प्रस्ताव करते हैं, यदि वह उन उपबंधों से भिन्न हैं या विपरीत हैं, तो उसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। इस विधेयक में परिवारिक सम्बन्धों में, उत्तराधिकार, सम्पत्ति, विवाह या विवाह-विच्छेद के सम्बन्ध में महिला को समानता का दर्जा दिलाने का जो प्रयास किया गया है, वह अब पूरे विश्व में व्यापक परिस्थितियों के अनुरूप ही नहीं, बल्कि हमारे समाज में अपनायी जा रही प्रवृत्तियों के भी अनुरूप हैं। मेरे विचार में ऐसा करते हुए वास्तविक स्थिति को पूरी तरह समझ लिया गया है और सब ओर घट रही घटनाओं का भी ख्याल रखा गया है। यह सच है कि युगों से विवाह को एक पवित्र व्रत समझा जाता रहा है परन्तु, जहां तक मैं समझता हूँ, विधेयक में ऐसी कोई बात नहीं है यदि कोई व्यक्ति आज भी विवाह को पवित्र व्रत समझता है तो उसको इस विधेयक से कोई रुकावट पड़ती हो। मैं समझता हूँ कि किसी बात को पवित्र मानना हमारे दिल का मामला है, इसमें किसी दूसरे का हाथ नहीं हो सकता। कितने पवित्र कार्य या वचन हैं जो पवित्र होते हुए भी प्रतिदिन तोड़े जाते हैं, बुरी तरह जोड़े जाते हैं, जिससे अपमान भी होता है। ऐसा करने में पवित्र वचन को तोड़ने वालों से सम्बन्धित अन्य व्यक्तियों का भी

हाथ होता है। यदि कानून बनाकर पति और पत्नी के सम्बन्ध को कोई विशेष रूप दिया जाता है, जैसा कि इस विधेयक में प्रयास किया गया है तो केवल उसी से पवित्र बन्धन में कोई परिवर्तन नहीं होता। कानून बन जाने से किसी पवित्र बंधन की पवित्रता समाप्त नहीं हो जाती और कानून पत्नी और पति के मिलन को सिविल विवाह या वचनबद्धता की मान्यता दे या न दे, जो इस मिलन में शामिल हैं, और जो इस मिलन के स्वरूप, कृत्यों और उद्देश्यों को बहुत ऊँचे आदर्श के रूप में मानते हैं, वे ऐसा मानते ही रहेंगे। फिर भी यदि कोई ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाएं, जिनके कारण उनका एक साथ रहना असम्भव हो जाये, यदि उस स्थिति में ऊँचे आदर्शों का पालन भी असम्भव हो जाये, तब मैं सोचता हूँ कि उस सम्बन्ध को किसी विधि या वाजिब तरीके से समाप्त कर देना बेहतर होगा। यह तरीका निकाला जा सकता है, बजाय इसके परस्पर विवाद चलता रहे और सम्बन्धित व्यक्तियों या उनके बच्चों की दुर्दशा होती रहे। महोदय, इस प्रकार का कोई सुझाव देना कोई अच्छी बात नहीं है कि तलाक देने की आजादी दी जानी चाहिए, बशर्ते कि ये मिलन आदर्श रूप से बने रहें, उसी भावना से ओतप्रोत रहे जिनसे उस मिलन का कार्यान्वयन होता है। परन्तु हम लौकिक सृष्टि में रहते हैं, जिसमें अनेक दुनियावी बातें होती हैं जिनमें मानवीय कमजोरियां भी सम्मिलित हैं और इसलिये यह आशा करना कुछ अधिक ही होगा कि केवल धार्मिक संस्कार, केवल अग्नि के सामने प्रतिज्ञा करने मात्र से हम उस पवित्र मिलन को आदर्श रूप में बनाये रख सकेंगे, जिसमें हमारा विश्वास है।

ऐसे दम्पत्ति को, जहां उत्पीड़न है और बच्चों की दुर्दशा होती है और आपस में भी वर्बरता पूर्ण व्यवहार चलता है, मेरे विचार में कानून ढंग से या किसी अन्य वाजिब तरीके से विवाह–विच्छेद की अनुमति दे दी जानी चाहिए। हमें वास्तविक परिस्थितियों को समझना चाहिए, और वास्तविकता से मुँह मोड़ना उचित नहीं है, अतः ऐसे मामलों में यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि ऐसे विवाह–सम्बन्ध को जारी रखने के बजाय, उसका विघटन श्रेयस्कर होगा। जहाँ सम्बन्धित पक्षों की दुर्दशा होती रहे, उसके बजाय विवाह–विच्छेद हो जाना बेहतर होगा।

इस प्रकार के जो विवाह एकपत्नीक प्रथा के अन्तर्गत होते हैं, मेरे विचार में वे निरन्तर प्रसन्न ही रहना चाहते हैं और ऐसे विवाह सफल भी होते हैं। फिर भी ऐसे अवसर आते हैं जब इसप्रकार के मिलन में कुछ ऐसी बातें हो जाती हैं, जो परिस्थिति विशेष में बर्दाश्त नहीं की जा सकती। कोई भी पक्ष ऐसी परिस्थिति का अनुमान पहले से नहीं लगा सकता। परन्तु ऐसी स्थिति में बिना कोई और काम किये, जिसमें हंगामा हो, आम लोगों के सामने एक–दूसरे को भला–बुरा कहा जाए या अनादर पूर्ण बातें कही जाएँ, उत्तेजना पैदा करके एक–दूसरे को नीचा दिखाया जाये, हमें अपने कानून में कोई ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे ऐसे विवाह को आसानी से विघटन हो सके और जिसमें किसी पक्ष के साथ भी अनावश्यक पक्षपात न हो। इसलिये मेरे विचार में हमें

उन कारणों, शर्तों या बहानों पर अधिक जोर नहीं देना चाहिए जो किसी अन्य कानूनी व्यवस्था में विवाह-विच्छेद करने के लिये उल्लिखित हैं। मेरे विचार में बेहतर यह होगा कि विवाह-विच्छेद के लिये ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जो आसान हो, सत्य हो और उसके लिये अधिक खर्च न करना पड़े। इस संबंध में पश्चिमी देशों में अपनायी जा रही प्रक्रिया हमारे सामने है। मैं नहीं समझता कि उत्तराधिकार, पैतृक संपत्ति में हिस्से का लाभ उठाने सम्बन्धी मामले इस सभा में इतनी अधिक उत्तेजना पैदा करने के उचित कारण हैं। आखिरकार, हमारे देश में ऐसे लोगों की संख्या कितनी होगी जिनके पास सम्पत्ति है और जो अपने जीवनकाल के बाद ऐसी सम्पत्ति छोड़ जाएंगे? यदि आप किसी मापदंड पर ध्यान दें, जैसे कि आय-कर संबंधी आंकड़े, तो आपको पता चलेगा कि देश में दस लाख से कम लोग ऐसे होंगे जिनकी आय 250 रुपये प्रति मास से अधिक है और इसमें सब लोग आ जाते हैं। केवल वही नहीं, जो आयकर देते हैं बल्कि वे भी जो आयकर से बचने का प्रयास करते हैं या किसी तरह बच जाते हैं।

30 करोड़ जनसंख्या में आय-कर देने वालों की संख्या लगभग 10 लाख होगी या उन पर निर्भर लोगों की संख्या 30 से 40 लाख होगी और इस हिसाब से कुल जनसंख्या के एक प्रतिशत लोग कुछ सम्पत्ति बना सकते हैं। उसका विभाजन हो सकता है या वह साझे माता-पिता के उत्तराधिकारियों के बीच अधिकारों की असमानता या मनमुटाव का करण बन सकती है। वास्तव में, मैं समझ नहीं पाया कि पैतृक सम्पत्ति के विभाजन के मामले में पुत्रियों और पुत्रों को समान अधिकारों की मान्यता के सम्बन्ध में इतनी उत्तेजना पैदा करने की क्या आवश्यकता है? जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं कहना चाहूँगा, मैं सम्पत्ति बनाने में विश्वास नहीं रखता। मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब सम्पत्ति किसी की नहीं रहेगी। समाज द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के लिये व्यवस्था की जानी चाहिए। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार मिले ताकि अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरी करे। ऐसा दिन जितनी जल्दी आयेगा, समाज के लिये उतना ही बेहतर होगा। मेरे विचार में सम्पत्ति बुराई का स्रोत है जितनी जल्दी इसको समाप्त कर दिया जायेगा, बेहतर होगा। एक वकील ने सम्पत्ति को झगड़े की जड़ माना है। इस प्रकार के विधान की दृष्टि में भी सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त किया जाना बेहतर होगा। यदि प्रस्तुत विधेयक में, इस अवस्था में, कोई संशोधन पेश किया जा सकता हो, तो मैं सुझाव दूंगा कि सम्पत्ति से सम्बन्धित सभी खंड समाप्त कर दिये जायें या निकाल दिये जाएं और एक सीधा-सा प्रस्ताव जोड़ दिया जाये कि किसी प्रकार की सम्पत्ति को चाहे जमीन हो या निजी सम्पत्ति हो, सबको समान रूप से बांट दिया जायेगा। इस समय इतना ही काफी होगा और हमें प्रयत्न करना चाहिए कि ऐसा दिन शीघ्र आये, जब सम्पत्ति का अधिकार समाप्त कर दिया जाये और प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार का समान अधिकार उपलब्ध हो, जीवन के एक निश्चित स्तर तक पहुंचने का अधिकार मिले। यह स्तर वैसा ही होगा जो पैतृक सम्पत्ति पाने वालों को प्राप्त है।

इन दो महत्वपूर्ण मामलों अर्थात् विवाह और उत्तराधिकार के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि विधेयक में उतनी ही व्यवस्था है जितनी विद्यमान परिस्थितियों में अपेक्षित है। यदि और जब आप व्यक्तिपरक समाज बनाए रखना चाहते हो, यदि और जब तक आप सम्पत्ति को सामाजिक व्यवस्था की बुनियाद समझते रहोगे, यदि और जब सामाजिक व्यवस्था में अंकुश के लिये लाभ ही उद्देश्य रखोगे, तब तक असमानता न रहने का कोई कारण नहीं दिखता। समानता नाम मात्र की नहीं होनी चाहिए। इस देश में जब तक प्रत्येक व्यक्ति अथवा नागरिक के लिये आर्थिक समानता सुनिश्चित नहीं की जाती, तब तक राजनीतिक समानता, मताधिकार के उपयोग का कोई अर्थ नहीं रह जाता। हमने स्त्रीत्व को सम्मान दिये जाने के बारे में बहुत कुछ सुना है, मुझे भारतीय सभ्यता के सार रूप में और सामाजिक व्यवस्था के सार रूप में इस आशय की बात सुन कर बहुत प्रसन्नता हुई है। यदि यह बात ठीक है, और मैं उसमें संदेह नहीं कर रहा, तो उसको सम्पत्ति के मामले में दी जाने वाली समानता का विरोध क्यों नहीं किया जाना चाहिए? यदि आप स्त्रीत्व के इतने ही पुजारी हो, यदि आप स्त्रीत्व का इतना अधिक सम्मान करते हो, तो आप समान अधिकार देने में क्यों संकोच करते हो? आखिरकार यह सम्पत्ति रह जाने वाली वस्तु नहीं है और प्रत्येक व्यक्ति को उसे यहीं छोड़ जाना है। हम इसके साथ जितने अधिक चिपके रहें, इसको जितना अधिक बढ़ाते जाएं, मैं सम्मानपूर्वक और अत्यन्त विनम्र भाव से कहना चाहता हूँ कि मेरे विचार में विकास की प्रक्रिया में पुरुष की अपेक्षा महिला की भागीदारी में अधिक जीवंतता है। फिर भी इसमें किसी लिंग के तिरस्कार की बात नहीं है। मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि प्रकृति की ओर से महिला को जो कृत्य सौंपे गये हैं और सामाजिक व्यवस्था में स्त्रीत्व को जिन कार्यों से जूझना पड़ता है और जो उद्देश्य पूरे करने पड़ते हैं, हम उसका अधिक सम्मान नहीं कर पाते और इसलिये मैं उसके सम्बन्ध में किसी प्रकार की असमानता को उचित नहीं समझता। एक ही माता-पिता के पुत्र और पुत्री के बीच और पुरुष तथा महिला के बीच भेदभाव या द्वेषपूर्ण अन्तर नहीं किया जाना चाहिए।

दत्तकग्रहण अथवा अभिभावकत्व आदि के बारे में मुझे कोई इतनी रुचि नहीं है, जितनी कि इस सभा में कुछ माननीय सदस्यों ने प्रदर्शित की है। दत्तकग्रहण अथवा वसीयत की शक्तियां मुझे मरणोपरांत मानव व्यक्तित्व का कृत्रिम विस्तार प्रतीत होती है। जब तक हम जीवित हैं, सम्पत्ति रखना और उस पर नियंत्रण बुरी बातें हैं और लाभ के उद्देश्य से सम्पत्ति रखना और भी बुरी बात है। हम अपने व्यक्तित्व को लम्बे समय तक क्यों बनाए रखना चाहते हैं, हम क्यों चाहते हैं कि मरने के बाद भी हमारे आदेश माने जाने चाहिए। दत्तकग्रहण जैसे साधन के द्वारा व्यक्ति के कृत्रिम विस्तार की क्या आवश्यकता है? यह जानते हुए भी कि यह एक प्राचीन व्यवस्था है, यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसको वे अपनी मुक्ति का साधन मानते हैं, मैं अभी यह कहने को तैयार नहीं कि इस व्यवस्था को तो तत्काल समाप्त कर दिया जाये। मैं कहना चाहता हूँ कि

यदि आप इसको मुक्ति का साधन स्वीकार करते हैं, अपने व्यक्तित्व को शाश्वत् बनाना चाहते हैं, अपनी सभ्यता, संस्कृति और जीवन के कार्य को चिरकालीन बनाये रखना चाहते हैं, फिर तो ऐसा करना आवश्यक है। परन्तु उस स्थिति में आपको महिला और पुरुष के बीच कोई असमानता नहीं रखनी चाहिए। महिला और पुरुष के बीच कोई भेद-भाव या कानूनी पाबन्दी नहीं होनी चाहिए। समाज में सबको एक जैसा अधिकार मिलना चाहिए। मैं इस विधेयक का सामाजिक न्याय, आर्थिक समानता और राजनीतिक औचित्य के आधार पर समर्थन करता हूँ। मेरे विचार से हमने जिस संविधान को अंगीकृत किया है, योजनाबद्ध और प्रगतिशील समाज की स्थापना का जो आदर्श अपने सामने रखा है, जिन आशाओं को संजोया है, इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए, हमें इस विधेयक को सही दिशा में पहला कदम समझना चाहिए। हमारे लिये यही बेहतर होगा कि इस विधेयक में सम्मिलित उपबंधों को, जिनमें पुरुष और महिला के बीच असमानताओं को दूर करने का प्रावधान किया गया है, स्वीकार कर लें। प्रत्येक पांच वर्ष बाद या प्रत्येक तीन वर्ष बाद केवल मतदान कर देने से बात नहीं बनती। यह मामला जीवन के कार्यों से, जीवन के शिक्षा स्तर और स्वास्थ्य तथा रोटी, कपड़ा और मकान के बारे में मनुष्य की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित है। ये सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिये और यदि वे नहीं है तो पूरे समाज के संयुक्त प्रयास के माध्यम से उपलब्ध करायी जानी चाहिए। समाज को अपने इस कर्तव्य को समझना चाहिए, इसको केवल कागजी कार्यवाही नहीं समझना चाहिए कि हमने संविधान में इसकी व्यवस्था कर दी है। बल्कि यह हमारा पवित्र कर्तव्य है कि हम कम से कम समय में इन सब वस्तुओं की व्यवस्था करें। इस देश के प्रत्येक नागरिक को यह सब कुछ उपलब्ध होना चाहिए, जिससे उनकी वे सभी आशाएं और आकांक्षाएं जिनको उसने इस देश की स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर संजोया है, पूरी हो सकें। एक महान् अमरीकी राष्ट्रपति लिंकन ने कहा कि कोई देश आधा गुलाम और आधा आजाद नहीं रह सकता। इस अर्थ में गुलाम न सही परन्तु इस देश अथवा समाज की आधी जनता अपने आपको अक्षम और कमजोर समझती है और उनमें भेदभाव किया जाता है, जिसे वे नहीं चाहते कि वह लम्बे समय तक चलता रहे। क्या इस सम्बन्ध में, मैं आंकड़ों पर आधारित कुछ तथ्य बता सकता हूँ, जिसे, शायद, इस सभा के सभी सदस्य ठीक से अनुभव नहीं करते? यह तथ्य इस प्रकार है। जबकि जन्म लेने पर महिलाओं की संख्या अधिक होती है परन्तु कुल मिला कर बाद की जनसंख्या में उनकी संख्या बहुत कम रह जाती है। उत्कल जैसे प्रान्त में जो भी स्थिति रही हो, पूरे भारत में महिलाओं की संख्या बहुत कम है। यदि विवाह योग्य आयु से आरम्भ करें, लगभग 15 वर्ष की आयु से, उनकी संख्या कम होती चली जाती है और इस प्रकार महिलाओं की कुल संख्या बहुत कम हो जाती है और वे अब भी अल्पसंख्या में हैं। इसकी क्या सार्थकता है?

(इस समय उपाध्यक्ष महोदय अध्यक्षपीठ से उठे और श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव (आयक्षीय तालिका के एक सदस्य) पीठ पर बैठे।)

इस बारे में मेरी निजी राय यह है कि महिलाओं के साथ, जैसे लड़के और लड़की या पुत्र और पुत्री के बीच असमान व्यवहार हो इसका कारण है। इसी लिये जन्म के समय बहुसंख्या में होते हुए भी बाद में वे अल्पसंख्या में रह जाती हैं। इसीलिए हमें असमान व्यवहार के आरोप का सामना करना पड़ता है। इस विधेयक में इस असमानता को दूर करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत विधेयक में अनेक उपबंध है और प्रत्येक व्यक्ति उनसे संतुष्ट नहीं हो सकता यहां तक कि वे भी जो उसको सिद्धांत रूप में उचित स्वीकार करते हैं। वे लोग भी जो यह मानते हैं कि इससे समाज का सुधार होगा, हमारे विधान में सरलता आएगी और हमारी सामाजिक प्रणाली का एक निश्चित सीमा तक सुविन्यास होगा। परन्तु हम अभी इस विषय पर विस्तृत चर्चा नहीं कर रहे हैं। किसी उपबंध विशेष की चर्चा न करते हुए, इस विधेयक की रचना का मूल सिद्धान्त, इस पूरी व्यवस्था का उद्देश्य सभा के समक्ष है, और मुझे विश्वास है कि इसको सभा स्वीकार करेगी।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा : सामान्य) : महोदय, मैं कहना चाहता हूँ कि मैंने यह बात मजाक में नहीं कही थी कि उत्कल में महिलाओं की संख्या अधिक है। उत्कल में महिलाओं की संख्या 3–4 लाख अधिक है और जब उनके विवाह के लिये कोई अच्छा वर नहीं मिलता, तब वे उनका विवाह सहादा वृक्ष के साथ कर दिया जाता है।

प्रो. के.टी. शाह : मैं पूरे देश की बात कर रहा हूँ, किसी प्रान्त विशेष की नहीं। इसलिये इस प्रश्न विशेष का उत्तर देना मैं आवश्यक नहीं समझता।

***सरदार हुक्म सिंह (पूर्वी पंजाब : सिक्ख) :** महोदय, इतनी लम्बी चर्चा के बाद मैं इस विषय पर कुछ नये तर्क प्रस्तुत करना आसान नहीं समझता, विशेषकर जब इस सम्बन्ध में सुप्रतिष्ठित वकील और सुप्रसिद्ध विद्वान इतने दिनों से अपने विचार व्यक्त करते रहे हैं। परन्तु जब मुझे एक समुदाय विशेष के प्रतिनिधि के रूप में जिस पर यह विधेयक लागू होता है, बुलाया गया है, तो मुझे उस समुदाय की भावनाओं को, जहां तक इस संहिता का सम्बन्ध है, सभा के समक्ष रखना ही चाहिए।

मैं अपने विद्वान मित्र प्रो. के.टी. शाह की इस बात से सहमत नहीं हूँ, कि वह एक भारतीय के रूप में बोलना चाहते हैं। मैं भी वही वाक्य बड़ी प्रसन्नता से दोहरा देता, यदि यह संहिता भारत के प्रत्येक नागरिक पर लागू होती। परन्तु यह जिस रूप में है,

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 607–10

यह केवल कुछ समुदायों पर ही लागू होती है। इसलिए मैं अपने समुदाय की ओर से ही इस पर बोलना अपना अधिकार और कर्तव्य समझता हूँ।

यद्यपि मेरे लिये एक अच्छी बात हुई है कि मुझे इतने विद्वानों के विचारों को सुनने का अवसर मिला है, परन्तु इसके साथ ही एक खराब बात यह है कि अधिकतर बातें कही जा चुकी हैं। और यदि मैं उनको दोहराता हूँ तो वे नीरस लगेंगी। इसलिये मैंने निर्णय किया है कि अपने आपको उन्हीं बातों तक सीमित रखूंगा, जो मेरे समुदाय से सम्बन्धित हैं और जिन पर मैं अपने विचार व्यक्त करना उचित समझता हूँ।

आरम्भ में, मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं यह नहीं चाहता कि समाज की प्रगति रुक जाये। मैं उन व्यक्तियों में से नहीं हूँ जो यह सोचते हैं कि सामाजिक कानून जैसे हैं, वैसे ही रहने चाहिए। मैं चाहता हूँ कि बदलते समय के साथ उनमें भी बदलाव आना चाहिए। मैं रूढ़िवादी नहीं हूँ। मैं यह नहीं कहता कि हमें बदलते समय के साथ आगे बढ़ने का अधिकार नहीं है, न ही मैं यह समझता हूँ कि यह सभा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होने के कारण या इस विधेयक के सम्बन्ध में जनता के विशेष समादेश के अभाव के कारण, अथवा किसी अन्य कारण से इस प्रकार का विधान बनाने के लिये सक्षम नहीं है। मैं समझता हूं कि यह सभा कोई भी कानून बनाने के लिये सक्षम है और इस प्रकार यह विधेयक पारित करने के लिये भी सक्षम है। इस सब के बावजूद मैं समझता हूँ कि मैं इस विधेयक का, जिस रूप में यह प्रस्तुत किया गया, पूरी तरह समर्थन नहीं कर सकता।

यदि राउ समिति द्वारा प्रस्ताविक मूल योजना का स्वीकार कर लिया जाता तो शायद, संहिता के कुछ भाग बिना किसी विरोध के पारित हो जाते। इस संहिता के कुछ पहलुओं पर मतैक्य होना चाहिए। परन्तु मैं अपने आपको कुछ मुद्दों तक ही सीमित रखूंगा। और इसलिये मैं इस विधान के सामान्य सिद्धान्तों के सभी पहलुओं पर अपने विचार व्यक्त नहीं करना चाहता।

प्रस्तावना में कहा गया है कि इस विधेयक का आशय हिंदू विधान जिस रूप में इस समय प्रवर्तन में है, की कुछ शाखाओं में संशोधन करने और संहिताबद्ध करने का है। परन्तु जब मैं इस विधेयक को पढ़ता हूँ, तो पाता हूँ कि हिंदू विधान की ऐसी कोई बात नहीं है, जिसे संहिताबद्ध करने का प्रस्ताव है। तलाक की बात ईसाई देशों से और उत्तराधिकार की बात मुसलमानी कानून से ली जा रही है। मुझे तो हिंदू विधान का संहिताकरण नाम ही गलत प्रतीत होता है।

डॉ. मनमोहन दास (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : हमारे देश में ऐसी अनेक जातियां और जनजातियां हैं, जिनमें तलाक की प्रथा प्रचलित है। क्या वे हिंदू नहीं है? क्या माननीय सदस्य उनसे छुटकारा पाना चाहते हैं?

सरदार हुक्म सिंह : यदि आप मुझे अनुमति देंगे, तो मैं इस विषय पर बाद में अपने विचार व्यक्त करूंगा। मुझे आशा है कि आप मेरी बात को धैर्यपूर्वक सुनेंगे।

जैसा कि मैंने कहा था, कि मैं अपने आपको अपने समुदाय से सम्बन्धित मुद्दों तक ही सीमित रखूंगा और अधिक विस्तार नहीं करूंगा। प्रस्तावना में कहा गया है कि विधेयक का आशय हिंदू विधान में संशोधन करने और उसे संहिताबद्ध करने का है और मैं दोबारा कहता हूँ कि इस संहिता में वह बात नहीं है। यदि जैसा कि प्रस्तावक ने आरम्भ में हमें बताया था कि 90 प्रतिशत लोगों के मामले में तलाक की व्यवस्था विद्यमान है, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है और वे जैसे है, वैसे ही रहें। आप उसे हिंदू विधान कह सकते हैं, परन्तु उसमें यह व्यवस्था नहीं है जिसे इस संहिता में लागू किया जा रहा है।

खंड 2 में उल्लिखित है कि यह विधेयक सिखों पर भी लागू होता है। हमें बहुत प्रसन्नता होती अथवा गर्व महसूस होता यदि कुछ अधिकार दिये जाने के मामले में भी हमें हिंदुओं में सम्मिलित किया जाता। परन्तु मैं यह देखता हूँ कि जहां एक ओर खंड 2 में हमें साथ मिलाया गया है, दूसरी ओर खंड 4 द्वारा हमारे, रीति-रिवाजों को गहरा धक्का पहुंचाया गया है। सभी रीति-रिवाजों, यहाँ खंड 3 में रीति-रिवाज की परिभाषा इस प्रकार की गयी है "जिसका निरन्तर और समरूप में पालन किया गया हो" और जो "निश्चित और लोक नीति के सम्बन्ध में अनुचित न हो और न ही उसके विरुद्ध।" इस प्रकार आचरण के पवित्र नियम को कुचल देना, उसको सदा के लिये मिटा देना कहां तक उचित है? मुझे इस पर घोर आपत्ति है। मेरी आपत्ति विशेष रूप से इस बात पर आधारित है कि मेरा प्रान्त अर्थात् पंजाब ऐसा प्रान्त है जहां के रीति-रिवाज विधि का पहला नियम है। तलाक, शादी, उत्तराधिकार, वसीयत आदि जैसे सभी मामलों में पंजाब लॉ एक्ट में रीति-रिवाज का, प्रथम नियम के रूप में उल्लेख है। वे अपने रीति-रिवाजों का लम्बे अर्से से पालन करते आ रहे हैं और गांव में प्रत्येक व्यक्ति इस बात को समझता है कि उसे किस नियम का पालन करना है। इन रीति-रिवाजों पर न्यायिक निर्णयों की भी घोषणा की जाती है और सामान्य रूप से प्रत्येक ग्रामीण उनको समझता है, इसलिये मेरे विचार में इस परिवर्तन से साधारण किसानों के लिये मुश्किलें पैदा होंगी जो अपने कानून को लम्बे समय से भली-भांति समझते आ रहे हैं।

मेरी दूसरी आपत्ति विवाह के विषय में है। मैं यहां एक बात कह देना चाहता हूँ कि अब तक सिखों पर हिंदू विधान ही लागू होता रहा है और मेरी आपत्ति उसमें किये जा रहे परिवर्तन मे बारे में है। मुझे इसमें बिल्कुल कोई आपत्ति नहीं है यदि हिंदू विधान अपने पिछले रूप में लागू रहे। अब चूंकि ये परिवर्तन बाहर से थोपे जा रहे हैं, इसलिये सिखों को भी इस बारे में शिकायत है और वे महसूस करते हैं या रीति-रिवाज जैसे चल रहे हैं, उन्हें चलने दीजिए अथवा यह आवश्यक नहीं होना चाहिए कि वे पहिए के साथ-साथ घूमते रहें। मैं विवाह के सम्बन्ध में कुछ कहने जा रहा था। इसमें कोई

संदेह नहीं कि हिंदू विधान में या हिंदू संस्कृति में पत्नी को अपने पति की इच्छानुसार चलने की सलाह दी जाती रही है। वह त्याग की मूर्ति रही है। यही उसकी महानता और श्रेष्ठता रही है। यदि अब हमारा स्त्री वर्ग महसूस करता है कि वह लम्बे समय से पराधीन रहा है, उनको कष्ट सहने पड़े हैं और अब वे कष्ट सहने को तैयार नहीं हैं, तो मैं अपने मित्रों को सलाह दूंगा कि वे अधीनता की स्थिति स्वीकार कर लें। परन्तु मैं महसूस करता हूँ कि हर मामले में समानता पर जोर देने से और गृहस्थी से इस तरह के रवैये से परिवार में प्रसन्नता और शान्ति का वातावरण नहीं रहेगा।

इसके बाद मुझे यह शिकायत है कि इस विधेयक में केवल दो प्रकार से किये गये विवाहों को मान्यता दी गयी है। एक सांस्कारिक रीति अनुसार किया गया विवाह और दूसरा सिविल विवाह। मैं सभा को बताना चाहता हूँ यद्यपि मैं यह मान कर चलता हूँ कि अधिकांश इस बात को पहले से जानते होंगे, सिख एक अन्य विधि से विवाह करते हैं जिसका वे गत 100 वर्षों से पालन करते आ रहे हैं। उसे आनन्द विवाह कहते हैं। यह सरल है। दम्पत्ति को गुरु ग्रन्थ साहिब के पास लाया जाता है, वे एक शपथ लेते हैं, ग्रन्थ साहिब के चार फेरे लेते हैं, अरदास करते हैं और विवाह की कार्यवाही पूरी हो जाती है। अब, यह सिविल विवाह नहीं है क्योंकि इसका कहीं पंजीकरण नहीं होता। इसे सांस्कारिक रीति अनुसार विवाह भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इसमें सपिंड सम्बन्ध या सम्बन्ध निषेध की पाबन्दी आदि का सख्ती से पालन नहीं किया जाता। इसलिये मुझे आशंका है कि इसप्रकार किया गया विवाह, जिसका पालन हम वर्षों से कर रहे हैं, इस विधेयक के अनुसार मान्य नहीं रहेगा। इस शताब्दी के आरम्भ में कुछ संदेह पैदा हुए थे। तब वर्ष 1909 में आनन्द विवाह मान्यता कानून पारित करना पड़ा था। तब यह स्वीकृत हो गया कि इस प्रकार से किये गये सभी विवाह वैध माने जायेंगे। परन्तु जब मैंने इस विधेयक को पढ़ा तो मुझे संदेह हुआ कि क्या इस हिंदू संहिता के अधीन इस प्रकार के विवाह को मान्यता दी जायेगी? इसलिये मैं समझता हूँ कि इस संबंध में सिखों को बहुत चिन्ता है और भारी आशंका भी है। मैं यह बात प्रस्तावक के ध्यान में लाना चाहता हूँ कि यदि सिखों पर इस बात को छोड़ा जाये तो वे इस प्रकार के विवाह को खत्म नहीं करना चाहेंगे और प्रस्तावक को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : इस विधेयक के अनुसार इस प्रकार का विवाह अवैध माना जायेगा।

सरदार हुक्म सिंह : मैं भी यही समझता हूँ कि इस विधेयक के अनुसार वह अवैध ही माना जायेगा और इसीलिये मैंने सभा का, और विशेष रूप से प्रस्तावक का ध्यान इस ओर दिलाया है।

तलाक के बारे में भी मुझे एक बात कहनी है। यह बताया गया है कि काफी बड़ी जनसंख्या में तलाक की व्यवस्था पहले से है। यह संभव है। मेरा अनुरोध है कि यदि

ऐसी स्थिति है तो उसे चलने दीजिए। उसके ऊपर कुछ ऐसी शर्तें मत लगाइए जिनसे लोगों को उसके लिये अधिक खर्च करना पड़ जाए। एक साधारण व्यक्ति को इस तरह का परिवर्तन पहले से बेहतर होने के बजाय और बुरा लगेगा। यदि तलाक देने का वे अब कोई सरल तरीका अपनाते हैं और यदि भविष्य में उसको कोई पेचीदा तरीका अपनाने के लिये मजबूर किया जाता है, तो निश्चय ही वे उसका स्वागत नहीं करेंगे। यह तर्क दिया गया है कि पुरानी व्यवस्था में बुराइयां आने लगी हैं। विधेयक अनुज्ञापक है। अर्थात् किसी के लिये कोई बाध्यता नहीं है। परन्तु हमें इस बात को सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रस्तावित उपचार वर्तमान रोग से अधिक भयंकर न सिद्ध हो। इसमें कोई संदेह नहीं कि इसमें कुछ बुराइयां हैं। परन्तु यदि हम बन्धनों को ढीला कर देंगे तो जनसंख्या का बहुत कम प्रतिशत इस बन्धन से मुक्त होकर और अपने ही पैदा किए हुए दुःखों से छुटकारा पा कर प्रसन्न हो पायेगा। परन्तु अन्य अल्प- संख्यकों के बड़े जनसमूह का क्या होगा? क्या आप ऐसे लोगों के लिये एक जाल तैयार नहीं कर देंगे और वे लोग खुलेआम बिना किसी भय के गलत रास्ते अपनाने लगेंगे। और अपना भविष्य आजमाने लगेंगे क्योंकि उनको छुटकारा पाने का तरीका नजर आने लगेगा?

इसके बाद मैं दूसरे मुख्य मुद्दे पर आता हूँ। यह दत्तकग्रहण के बारे में है। मेरे प्रांत अर्थात् पंजाब में, दत्तकग्रहण एक विशेष प्रथा है। इसको अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करने की प्रथा कहा जाता है। इसका धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह व्यावहारिक प्रयोजन के लिये एक सरल-सी घोषणा कर देना है, जिसमें भूमि का स्वामी किसी व्यक्ति का नामांकन कर देता है, कि वह उसके जीवनकाल में खेती के काम में उसका सहायक होगा और उसकी मृत्यु के बाद वह उसकी खेती का उत्तराधिकारी होगा। जैसे कि मैंने बताया, इस व्यवस्था का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसमें आयु या सम्बन्ध का कोई ख्याल नहीं रखा जाता। इस संहिता में आपने प्रस्ताव किया है कि वह पुत्री का पुत्र हो या बहन का पुत्र हो। परन्तु मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि पहले से प्रचलित प्रथा के अनुसार जो नियुक्ति की जाती है उसमें साधारण तौर पर उत्तराधिकारी के रूप में पुत्री के बेटे को ही नियुक्त किया जाता है। साथ ही बहन के बेटे को भी नियुक्त किया जाता है। इस सम्बन्ध में कोई रोक बिल्कुल नहीं है। कोई युवक अपने पिता की आयु के व्यक्ति का भी दत्तकग्रहण कर सकता है। किसी ऐसे व्यक्ति को भी उत्तराधिकारी नियुक्त किया जा सकता है, जिसके अनेक पुत्र हों। यहां बैठे कुछ व्यक्तियों को यह बात विचित्र लगती होगी परन्तु यह सच्चाई है। एक विवाहित व्यक्ति, बच्चों वाले व्यक्ति को भी उत्तराधिकारी नियुक्त किया जा सकता है। इस प्रथा में धर्म का कोई लेना-देना नहीं है। इस प्रथा को कायम रखने के लिये आप क्या कर रहे हैं? क्या आप इसको समाप्त कर रहे हैं? निश्चय ही यह व्यवस्था युगों से चली आ रही है और यह मान्यता प्राप्त है। यह प्रथा देश के हमारे भाग में इतनी लोकप्रिय है कि उसको इतनी आसानी से समाप्त नहीं किया जा सकता। लोग इस बात को इतनी आसानी से स्वीकार नहीं करेंगे

और जहां तक कानून के इस भाग का सम्बन्ध है, वह यदि पारित कर हमारे लोगों पर थोपा गया, तो वह केवल कागज पर ही रहेगा।

एक और महत्वपूर्ण बात उत्तराधिकार की भी है। मैं अपने मित्रों से सहमत हूं कि हमारी महिलाओं, बहनों, पुत्रियों को सम्पत्ति का हिस्सा मिलना चाहिए। परन्तु इस बारे में मुझे यह कहना है कि मैं इस विषय में अपने विद्वान भाई बख्शी टेक चन्द के इस विचार से सहमत हूँ, जिसमें उन्होंने कुछ समय पहले कहा था कि विवाह के पश्चात् उनको अपने ससुर की सम्पत्ति से हिस्सा मिलना चाहिए न कि पिता की सम्पत्ति से। इसके विशिष्ट कारण हैं। जैसा कि मैंने बताया है, मेरे प्रान्त की परिस्थितियां कुछ विचित्र हैं। पंजाब प्रान्त में छोटे-छोटे किसान रहते हैं। सामान्य तौर पर उनके पास तीन या चार एकड़ की जोत होती है। ऐसे व्यक्ति के पास दो बैल से अधिक नहीं हो सकते जो उसने कहीं से ऋण लेकर प्राप्त किये होते हैं। इसके अतिरिक्त उसके पास एक हल और एक पंजाली तथा एक गधा होता है जो खेत में खाद ले जाने और खेत से घर तक चारा लाने के काम आता है। यह संहिता कृषि पर लागू नहीं होगी परन्तु चल सम्पत्ति का क्या होगा, उसके बैलों का क्या होगा? उदाहरण के लिए एक परिवार, जिसमें एक पुत्र है और एक पुत्री है, के बारे में विचार कीजिए। पिता की मृत्यु हो जाती है, इस चल सम्पत्ति का इन दो में विभाजन होगा। (**एक माननीय सदस्य** : क्यों नहीं?) मैंने यह नहीं कहा, और मैं कहता हूँ कि विभाजन होना चाहिए। आमतौर पर घर में एक गाय भी होती है और मैं चाहता हूँ कि प्रस्तावक हम को बताये कि गाय, हल और पंजाली का विभाजन कैसे होगा। दामाद, जो दूर रहता है, उदाहरणार्थ 50 मील दूर रहता है, देश के उस भाग में रहना चाहता है। वह अपनी पत्नी के भाई के साथ नहीं रह सकता, क्योंकि चार एकड़ भूमि से उसको कुछ हासिल नहीं होगा। उसका हित कहीं और है और इसलिये वह सम्पत्ति का विभाजन करके चला जाना चाहता है। बहन अपना हिस्सा मांगेगी, निश्चय ही वह एक बैल लेगी, आधा छकड़ा, आधी पंजाली लेगी और दूर चली जायेगी। और फिर कभी वापस नहीं आयेगी। वह इस संहिता के निर्माताओं का धन्यवाद करेगी, और निःसंदेह उसका पुनः स्वागत नहीं किया जायेगा। (**एक माननीय सदस्य** : भाई का अपना बहनोई उसका धन्यवाद करेगा।) यह प्रश्न बहुत सरल है परन्तु इस बारे में भी सोचना चाहिए जब पूर्वी पंजाब में एक परिवार में एक-दो से अधिक तीन-चार भाई होते हैं वे सेना में नियुक्त हो जाते हैं, वे साहसी योद्धा होते हैं, वे विश्व के दूरस्थ क्षेत्रों, अरजेंटाइना, ब्राज़ील और दक्षिणी अमेरिका तक जाते हैं। वे वहां से धन कमा कर लाते हैं, और अधिक जमीन खरीदते हैं। वे संयुक्त परिवार में रहते हैं, उनका खाना भी एक ही रसोई में पकता है।

महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि इस व्यवस्था से कठिनाइयां पैदा होंगी। मैं अपने विद्वान मित्र डॉ. बक्शी टेक चन्द से सहमत हूँ कि जब तक पुत्री का विवाह नहीं होता, उसको अपने पिता की सम्पत्ति में हिस्सा मिलना चाहिए। परन्तु जैसे ही उसका

विवाह हो जाता है, उसको अपने ससुर की सम्पत्ति से बराबर का हिस्सा मिलना चाहिए और साथ ही उसे विभाजन आदि का भी अधिकार मिलना चाहिए। मैं महिला वर्ग को सम्पत्ति का हिस्सा दिये जाने के विरुद्ध नहीं हूँ, मुझे इस सम्बन्ध में गलत नहीं समझा जाना चाहिए।

मुझे आशंका है कि हमारी शिक्षित लड़कियों के पास काफी समय होता है। एक साधारण लड़की शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद घर के काम-काज में रुचि नहीं लेती, इसलिये घर में व्यस्त रखने के लिये उसके पास काफी काम नहीं होता।

(इस समय उपाध्यक्ष महोदय श्री एम. अनंतसयनम आयंगर पीठासीन हुए)

सरकार को इस खाली समय के लिये उनको कुछ रोजगार दिलाने की व्यवस्था करनी चाहिए। उनको कुछ उपयोगी रचनात्मक काम दिया जाना चाहिए। इस प्रकार के कानून बनाने से और तलाक दिये जाने से बुराइयां समाप्त नहीं होंगी। संयुक्त परिवार व्यवस्था समाप्त करने से पूर्व सरकार को वृद्धावस्था गुजारा भत्ता, बीमारी भत्ता आदि अनेक चीजों की व्यवस्था करनी चाहिए। यदि पवित्र कर्तव्य का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा, तो केवल सम्पत्ति की व्यवस्था से कोई समस्या हल नहीं होगी। जहां तक मैं समझता हूँ, इस विधान के परिणाम स्वरूप परिवार अलग-अलग हो जायेंगे, प्यार और सहानुभूति समाप्त हो जायेगी, न्यायालयों में तलाक और विभाजन के मामलों की संख्या बढ़ जायेगी, बचपन में ही लड़की को मार देने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा और बच्चों की देख-रेख की उपेक्षा होगी।

श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले : उठे।

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : महोदय, क्या हम 7 बजे सायं तक बैठेंगे।

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे 7 बजे सायंकाल तक बैठने में कोई आपत्ति नहीं है, सभा की आम राय क्या है?

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं?

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : महोदय, जब तक सभा में कोरम रहेगा, हम बैठने को तैयार हैं।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने भली-भाँति सुन लिया है। एक ही आवाज को कई गुना नहीं बढ़ाया जा सकता। माननीय सदस्य और कितना समय लेना चाहते हैं?

श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले (मद्रास : सामान्य) : लगभग 15 मिनट।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : महोदय, अभिप्राय यह है कि अधिक से अधिक वक्ताओं को बोलने का अवसर मिल सके। यह तो हैरानी की बात है कि लोग अपने विचार व्यक्त नहीं करना चाहते। मेरा सुझाव है कि जब तक लोग बोलने को तैयार हों, हम बैठे रहें। हम यहां सुनने के लिये बैठेते हैं और जब कोरम नहीं होगा, हम स्वतः ही बन्द कर देंगे।

श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी (यू.पी. : सामान्य) : माननीय सदस्यों का कहना है कि हिंदू संहिता जैसे महत्वपूर्ण विषय पर अनेक सदस्य अपने विचार व्यक्त करना चाहते हैं। जब, हम में से अधिकांश सदस्य बोलना चाहते हैं और उनको समय दिया जा सकता है तो 7 बजे तक बैठने में क्या आपत्ति है?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इससे पूरी तरह सहमत हूँ। यदि अधिकांश सदस्य बैठना चाहते हैं और बोलना चाहते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

कुछ माननीय सदस्य : जी, हां, हम इससे सहमत हैं।

माननीय अध्यक्ष : ठीक है, श्री मुनिस्वामी पिल्ले समाप्त कर लें, फिर देखेंगे।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले :** मेरा सम्बन्ध ऐसे समुदाय से है जो शताब्दियों तक हिंदू समाज से बहिष्कृत रहा है। मैं इस सामाजिक और धार्मिक सुधार करने वाली व्यवस्था का स्वागत करता हूँ। हम जो भारत की जनसंख्या का छठा भाग हैं। महात्मा गांधी के आगमन का स्वागत करते हैं, जिन्होंने हिंदू समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये, ताकि सवर्ण हिंदुओं को ही नहीं, बल्कि हिंदू समाज के अन्य वर्गों को भी बराबरी का दर्जा मिल सके। मुझसे पहले बोलने वाले कुछ सदस्यों ने कहा है कि धर्म खतरे में है। मुझे समझ में नहीं आया कि उनके दिमाग में ऐसे विचार कहां से और कैसे उत्पन्न हुए? इस देश को अपने अनेक अवतारों पर गर्व है–भगवान बुद्ध, शंकर, रामानुज समाज सुधारक जैसे राजा राम मोहन राय और वर्तमान शताब्दी में महात्मा गांधी जैसे महापुरुष हुए, जिन्होंने पाया कि अस्पृश्यता हमारे राष्ट्र के अस्तित्व के लिये घातक है और स्वयं अन्तरजातीय विवाह का मार्ग प्रशस्त किया। इन सभी सुधारों से पता चलता है कि हम भी युग परिवर्तन के साथ-साथ प्रगति कर रहे हैं। जब कभी विधानमंडल के समक्ष सामाजिक सुधार का मामला रखा गया है, रुकावटें पैदा की गयी हैं, ताकि सुधार क्रियान्वित न होने पाये। मेरा सम्बन्ध मद्रास क्षेत्र से है, मैं सभा को बताना चाहता हूँ कि जब मद्रास विधानमंडल में 'मन्दिर प्रवेश' पर विचार किया जा रहा था तो हमें किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। यहां तक कि असपृश्यों की सामाजिक अक्षमताओं को दूर करने के मामले में भी जनता को समझाने के लिए जो मंत्रीगण उनके बीच गये तो उनके मुँह

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 611-614

पर पिसी हुई लाल मिर्चें फैंकी गयी। इस देश में जब सामाजिक सुधार किये जाते हैं, तो ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। जब महान शंकर हमारे देश में अद्वैतवाद लाये और जब उनके गुरु ने उनसे पूछा "आप कौन हो?" उन्होंने उत्तर दिया:

न मैं मृत्युडा न मैं जाति भेद:।
पिता नैव मे व माता न जन्म:॥
न बंधुर्न मित्रों न गुरुर्न शिष्य:।
चिनावदरूप: शिवोऽहं शिवोऽहः॥

शंकर महान ने यही शब्द बोले थे। उन्होंने मनुष्य, मनुष्य में अथवा महिला, महिला में भेद नहीं किया। उनके विचार में सब लोग एक समान हैं। इस विधेयक का विरोध किये जाने का मैं कोई कारण नहीं समझता। दक्षिण में एक महान् दार्शनिक तिरुवल्लुवर हुए हैं, उन्होंने विश्व को बताया है कि पुरुष और महिला को किस प्रकार रहना चाहिए; उनको किन परिस्थितियों में रहना चाहिए। महिलाएं मोती के समान बहुमूल्य हैं, अत: उनकी सभी प्रकार की सुविधाओं में, जो भगवान ने मानवमात्र को दी हैं, मैं बराबर का हिस्सा दिये जाने पर आपत्ति करने का मैं कोई कारण नहीं समझता।

मुझ से पहले बोलने वाले कुछ सदस्यों ने कहा कि अभी समय ठीक नहीं है। 20 जनवरी, 1944 को जब संविधान सभा का संकल्प पारित हुआ था, तब से यह व्यवस्था देश के विचाराधीन है। हिंदू संहिता पर देश के कोने-कोने में चर्चा होती रही है। शिक्षित वर्ग ही नहीं अपितु आम जनता ने भी इस विधान की विषय-वस्तु को समझ लिया है। मैं नहीं समझता कि जो सदस्य इस सभा को विधेयक को निपटाने के मामले में सक्षम नहीं समझते, वे देश के प्रति अपने दायित्व ठीक से निभा रहे हैं। इस सभा के सदस्य जिनको 30 करोड़ जनता के लिये संविधान तैयार करने का गर्व प्राप्त हुआ है, जिसका भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी स्वागत हुआ है, क्या वे इस देश की महिलाओं के उत्थान हेतु इस विधेयक को निपटाने के लिये सक्षम नहीं हैं। हमने संविधान के मूल अधिकारों में स्पष्ट रूप से लिखा है कि सरकार "धर्म, जाति, लिंग" के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगी। अनुच्छेद 15(3) में फिर कहा है कि "इस अनुच्छेद का कोई भी उपबंध महिलाओं और बच्चों के लिये विशेष प्रावधान करने में बाधक नहीं होगा। पुन: अनुच्छेद 46 में फिर कहा गया है—"राज्य जनता के कमजोर वर्गों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देगी..." क्या महिलाएं इस वर्ग में नहीं आतीं और क्या उनका संरक्षण नहीं होना चाहिए? फिर यह विधान तो अनुज्ञात्मक है, और सभी को इसका स्वागत करना चाहिए।

यदि सभी प्रान्तों में हिंदुओं के विवाह, उत्तराधिकार, दत्तकग्रहण और इन्हीं सब बातों के नियमों का अध्ययन करेंगे तो पता चलेगा कि वे एक समान नहीं हैं। अनेक स्थानों

पर वे भिन्न–भिन्न हैं। संविधान में लिखा है कि हमें एक समान सिविल संहिता बनानी चाहिए। मेरे राय में यह विधेयक उस दिशा में पथ प्रदर्शक का काम करेगा। मेरा सम्बन्ध उस जिले से है, जहां अनेक पहाड़ी जनजातियां हैं। यद्यपि वे अपने आपको हिंदू कहती हैं, तथापि उनके विवाह सम्बन्धी रीति–रिवाज, उत्तराधिकार के नियम आदि हिंदुओं से बहुत भिन्न हैं। प्राकृतिक 'टोडा' आदिवासी समुदाय में बहुविवाह की प्रथा प्रचलित है और इस समुदाय की इस सामाजिक बुराई के कारण उनकी जनसंख्या घटती जा रही है। एक अन्य आदिवासी समुदाय 'वाडागास' के रीति–रिवाज भी हिंदुओं से काफी भिन्न हैं, यद्यपि वे अपने–आप को हिंदू कहते हैं। उनमें यह रिवाज है कि जब कोई व्यक्ति किसी लड़की से विवाह करना चाहता है तो वह उसको दहेज देता है–जिसको वे थिरायपनम कहते हैं। तत्पश्चात् यदि वह महिला अपने पति का परित्याग करना चाहती है, और यदि कोई अन्य व्यक्ति उतना ही दहेज अर्थात् थिरायपनम देता है, तो वह महिला दूसरा व्यक्ति चुनने के लिए स्वतंत्र है।

इस देश में जिसमें इतने महान ऋषि व संत हुए हैं। क्या वे सब बातें होती रहनी चाहिए। इस नये संविधान के अधीन, सभी की, चाहे वे जनजातियां ही हों अथवा पहाड़ी जनजातियां हों, रक्षा की जायेगी।

महोदय, मद्रास प्रान्त में, जैसा कि मेरे कुछ मित्रों ने पहले बताया है बहुविवाह की प्रथा सांविधिक रूप से समाप्त कर दी गयी है। अब जब तक समूचे देश के लिये किसी विधि को संहिताबद्ध न किया जाये, तब तक कोई व्यक्ति मद्रास से अन्यत्र जाकर और विवाह करके मद्रास में रहने के लिये वापस आ सकता है। जब तक कोई ऐसा कानून न बन जाये, जो सभी प्रान्तों में समान रूप से लागू हों, मद्रास में अलग से इस कानून को लागू करना सम्भव नहीं है।

इस सभा में प्रस्तुत हिंदू संहिता विधेयक के अन्य मुख्य मुद्दे विवाह और विवाह–विच्छेद से सम्बंधित अध्याय हैं। यह पहले बताया जा चुका है, सांस्कारिक विवाह और सिविल विवाह, दोनों प्रकार के विवाह चलते रहने चाहिए। इसके अनुसार, अनुसूचित जातियां पाती है कि 'योगम' होना चाहिए। और तभी सच्चे मायनों में विवाह माना जाता है। अब सिविल विवाह अधिनियम लागू होने के बाद भी सभी लोग इस प्रथा को निभाते हैं। मुझे इस बात का कोई कारण नजर नहीं आता कि अब सभी हिंदू, रूढ़िवादी और अन्य, इसी विधि को क्यों नहीं अपना लेते।

खंड 33 (एफ) में 'परगमन' का उल्लेख है। मैं चाहता हूँ क 'परगमन' शब्द का प्रयोग इस संहिता में बिल्कुल न किया जाये क्योंकि जैसा कि स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि जब हम हमारे देश में तीन महिलाएं हैं, तब तक भारत की पवित्रता बनी रहेगी। महोदय, मेरे विचार से हिंदू समाज में किसी भी वर्ग में बड़े पैमाने पर 'परगमन' नहीं

होता निःसंदेह कहीं कुछ विरले मामले हो सकते हैं। परन्तु मेरे विचार में उसके लिये किसी सांविधिक उपबंध की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

खंड 9 के उपखंड 2 और खंड 16 में कानून का उल्लंघन करने वाले लोगों को दंड देने की व्यवस्था है। उसमें विहित धनराशि बहुत अधिक है, विशेष रूप से समाज के निर्धन वर्ग के लिये। मेरे विचार में यह राशि नाम मात्र होनी चाहिए। न्यायालीय सम्बन्ध-विच्छेद के मामले में, धनवान लोगों के मामले में, जो सम्बन्ध-विच्छेद के लिये न्यायालयों में जा सकते हैं यह ठीक है। परन्तु ग्रामीणों का क्या होगा, जिनकी संख्या भारत में बहुत अधिक है, जहां सामुदायिक पंचायतें हैं और जिनमें कुछ लोगों द्वारा निर्वाचित सदस्य होते हैं और वे ही ऐसे मामलों को निपटाते हैं। अतः मेरे विचार में यह प्रक्रिया ठीक नहीं है। कोई ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे पंचायतों में लोगों के चुने हुए प्रतिनिधि हों और वे ही विवाह-विच्छेद के मामलों का निपटारा करें।

अब मैं स्त्रीधन का उल्लेख करना चाहता हूँ। पिता व भाई जो कुछ लड़की को देते हैं, वही स्त्रीधन कहलाता है। यदि लड़की का पति उसका उचित उपयोग नहीं करता, तो उसका क्या होगा। महोदय, मेरे विचार में, इसमें कोई ऐसा खंड जोड़ा जाना चाहिए, जिससे स्त्रीजन सदा के लिये उस महिला की सम्पत्ति बनी रहे।

खंड 72 में दत्तकग्रहण का उल्लेख है, उसमें लिखा है कि दत्तकग्रहण करने वाले पिता या माता वैध तरीके से किये गये दत्तकग्रहण को रद्द नहीं कर सकते और न ही दत्तक ग्रहण किया गया बेटा अपनी परिस्थिति का परित्याग कर सकता है और अपने जन्मदाता परिवार में जा सकता है। महोदय, मेरे विचार में, यदि वह बेटा या दत्तकग्रहण किया गया कोई व्यक्ति दुर्व्यवहार करता है अथवा परिवार के धन को नष्ट-भ्रष्ट करता है तो उस स्थिति को रोकने के लिये कोई व्यवस्था की जानी चाहिए।

धारा 93 पत्नी के लिये धरोहर के रूप में रखे जाने वाले दहेज से सम्बन्धित है औ उसमें लिखा है कि इस संहिता के प्रवर्तन के बाद यह धारा लागू होगी। मैं महसूस करता हूँ, महोदय, यह इस संहिता के प्रवर्तन के पूर्व के प्रत्येक मामलों में भी लागू हो। जो इस संहिता के प्रवर्तन से पहले के हैं।

महोदय, अन्त में मैं यही कहना चाहता हूँ कि पुरुषों की सख्ती की शिकार सभी महिलाओं को हिंदू संहिता विधेयक लागू होने से बहुत राहत मिलेगी। अनेक लोग कहते हैं कि महिलाओं को बराबर के विशेषाधिकार और सुविधाएं प्राप्त हैं। परन्तु वास्तव में ऐसी स्थिति नहीं है। कुछ मामलों में ऐसी बात हो सकती है। परन्तु 90 प्रतिशत महिलाओं को अब भी अनेक सामाजिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। चार युगों, सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलि के बाद अब हम 'लौह युग' में हैं और सुधार लाने में सक्षम हैं। हमें इस बात को सुनिश्चित करना चाहिए कि महिलाओं को वे सभी

सुविधाएं प्राप्त हों, जो पुरुषों को प्राप्त हैं। यह कहा जाता है कि जो हाथ झूला झुलाता है वही विश्व में विजयी होता है। इसके पूर्व कि वे ये सुविधाएं हम से छीन लें, हमें उनको शान्तिपूर्वक उपलब्ध करा देनी चाहिए। इसलिए मैं इस प्रकार द्वारा लाये गये इस हिंदू संहिता विधेयक का, समर्थन करता हूँ। और अभीष्ट फल प्राप्त हो जाने पर मैं यही कहूंगा कि डॉ. अम्बेडकर, जिन्होंने इसका प्रारूप तैयार करने में कठिन परिश्रम किया है, के लिये यह बड़े गौरव की बात होगी।

***श्री ओ.वी. अलगेसन (मद्रास : सामान्य) :** महोदय, कल डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि उनको इस बात की प्रसन्नता है कि इस विधेयक को प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी उन को सौंपी गयी थी। महोदय, निश्चय ही उनका नाम इतिहास में स्वतंत्र भारत के संविधान के पैदा होने में सहायक योग्य दाई के रूप में लिखा जायेगा। महोदय, वह महत्वकांक्षी है। वह गौरव प्राप्त करना चाहते हैं और उनकी सोच युक्ति-युक्त है। वह प्राचीन ऋषियों, मनु, याज्ञवल्क्य और विधि के अन्य प्राचीन निर्माताओं से भी आगे निकलना चाहते हैं।

पूर्व वक्ताओं में से एक, शायद श्री पातस्कर ने, नये संविधान की धारा 44 का हवाला दिया था। यह धारा समूचे देश के लिये एक समान सिविल संहिता से सम्बन्धित है। उन्होंने पूछा था कि इस हिंदू संहिता को वापस लेकर क्यों न एक सिविल संहिता तैयार की जाये? इस से पता चलता है कि किसी शरारत के कारण इसे स्थगित करने का तर्क दिया जा रहा है। परन्तु सरकार इस सम्बन्ध में एक नीतिगत बयान क्यों नही देती? क्या यह विधेयक उस दिशा में पहला कदम है? क्या सरकार, इसके पश्चात् संविधान की धारा 44 को क्रियान्वित करने के लिये और उपाय करेगी? मैं सरकार को परेशान नहीं करना चाहता, परन्तु यदि सरकार इस बारे में अपनी नीति स्पष्ट करने वाला बयान दे, तो मैं उसकी सराहना करूंगा।

महोदय, जब श्री संथानम ने, उस दिन, एक सकल विवाह का तर्क दिया था, उसकी प्रत्येक सदस्य ने दिल से स्वागत किया था। उन्होंने इस संस्था के विरुद्ध आपत्ति उठाने की सब को चुनौती दी थी, संत त्यागराज ने अद्वितीय ढंग से राम के चरित्र को संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त किया :

ओका मतः, ओका वाणम्, ओका पत्नी
अर्थात् एक शब्द, एक तीर, और एक पत्नी।

हमें प्रसन्नता है कि ऐसा आदर्श हमारे सामने रखा गया है। मैं पूछना चाहता हूँ कि क्या यह व्यवस्था केवल हिंदुओं के लिये अच्छी है? क्या सरकार सभी लोगों पर लागू होने वाला यह विधेयक प्रस्तुत करेगी और भारत के सभी नागरिकों पर एकपत्नीक व्यवस्था

---

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 6, भाग II, 14 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 614-21

लागू करेगी? मैं यह बात सरकार को परेशान करने के लिये नहीं कह रहा। मैं इस बात को दोहराना चाहता हूँ। जब इसे ऐसे प्रस्तुत किया गया है, तब आपको इस समस्या को समुचित ढंग से प्रस्तुत करना होगा। आपको पता है कि भारत में एक समुदाय है, जो धर्म के आधार पर आपत्ति करेगा और आपको स्मरण होगा कि इस देश के विभाजन के बाद कैसी अवांछनीय घटनाएं हुई थीं। आपको कहा जा रहा है कि ऐसा करना धर्म में हस्तक्षेप है कि यह बात राज्य के धर्मनिपेक्ष स्वरूप के विरुद्ध होगी। अब प्रधानमंत्री ने इस आशय की घोषणा कर दी है कि हमारा देश धर्मनिरपेक्ष रहेगा। हमको देश के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप के बारे में जनता को शिक्षित करना चाहिए। सीमा के दूसरी ओर बहुत कुछ हो रहा है और उसकी प्रतिक्रिया इस ओर भी हो सकती है। वह देश मजहबी राज्य बन चुका है और वे निहितार्थ नीति पर पूरी तरह चलने के लिये प्रस्तावित है और यह सम्भव नहीं है कि उस तरह की नीति की इस ओर कोई प्रतिक्रिया न हो। इसलिये जनता हमारे देश के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप के बारे में भी शंकाएं कर सकती है। वे इस बात को इस रूप में लेते हैं और इसका निश्चित कारण भी है कि धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह है कि हिंदू धर्म में हर प्रकार के फेरबदल किये जा सकते हैं और दूसरे समूह के मामले में सरकार संकोच करती रहेगी। इस देश की आम जनता की इस प्रकार के उपायों के बारे में इस तरह की प्रतिक्रिया होगी। अतः इस देश में हम जो धर्मनिरपेक्ष राज्य स्थापित करना चाहते हैं, उसके लिये हमें जनता को अपने विश्वास में लेकर आगे बढ़ने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि केवल सरकार कहती रहे कि वह धर्मनिरपेक्ष राज्य है और देश में जनता न उसको ठीक ढंग से समझे और न ही सराहना करे, तो उस दावे का कोई अर्थ नहीं रह जाता और राज्य धर्मनिरपेक्ष भी नहीं बना रह सकता। हम उस आदर्श को खो देंगे, जिसे हम इस देश में पाना चाहते हैं और हमें अपने लक्ष्य प्राप्ति की तारीख आगे बढ़ानी पड़ेगी। महोदय, इसीलिये मैं कहता हूँ कि इस समय जनता मानसिक रूप से इस परिवर्तन के लिये तैयार नहीं है। वह अभी उदास हैं। वह चिढ़े हुए हैं। जिस प्रकार जब कोई बालक नाराज होता है तो वह मीठी वस्तु भी खाने से मना कर देता है। लोग इस सुधार को भी अच्छा मानने को तैयार नहीं है, हालांकि इस विधेयक में कुछ अच्छी बातें हो सकती हैं। अतः अच्छी बात यह होगी कि यदि जनता अभी इसको स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं, तो उसके साथ जबरदस्ती न की जाये। पिछली बार डॉ. अम्बेडकर ने बुर्के को उद्धृत किया था। उन्होंने हमारे समक्ष एक धुंधली तस्वीर खींची थी और हमें चेतावनी दी थी जैसी कि उन्होंने संविधान के तीसरे वाचन में अपने भाषण के अन्त में कहा था:–

"जो व्यक्ति किसी वस्तु को बनाये रखना चाहता है, उसको उसकी मरम्मत के लिये तैयार रहना चाहिए।"

महोदय, यह बहुत बड़ी बात है, हमें मरम्मत के लिये तैयार रहना चाहिए। परन्तु क्या इस विधेयक का प्रयोजन केवल मरम्मत तक सीमित है। मेरे विचार में इस व्यवस्था

से वह मकान ही गिर जायेगा, जिसमें हम रहते रहे हैं। इस का प्रयोजन तो नया ढांचा तैयार करने की योजना बनाना है। वह मूलभूत ढांचे फेर-बदल करना चाहते हैं। यह मामला जहां-तहां मरम्मत करने तक सीमित नहीं है। यह मूलभूत ढांचे की मरम्मत है। मैं तो यहां तक कहना चाहता हूँ कि इस का प्रयोजन पुराने ढांचे के स्थान पर नया ढांचा बनाने का है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सारी मरम्मत ढांचे की मरम्मत होती है।

श्री ओ.वी. अलगेसन : ढांचे की मरम्मत किये जाने पर भी मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु ऐसी मरम्मत किये जाने से पूर्व इस सभा के ढांचे में भी मरम्मत करने की आवश्यकता है। मैं यही बात कहना चाहता हूँ। यह कहते हुए मैं इस सभा के प्रतिनिधि स्वरूप और सभा के सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वरूप में जरा-सी भी कमी नहीं कर रहा। महोदय, जब हम अन्य विधान पर चर्चा पूरी कर रहे थे, तब प्रो. शाह इस मुद्दे पर काफी गम्भीरता से बोल रहे थे और किसी को कोई हैरानी भी नहीं हुई थी। यह नैमित्तिक मामला है परन्तु इसका आधार भिन्न है। इसको संदेह और क्रोध की दृष्टि से देखा जाता है। इसलिये मैं कहता हूँ कि हमें अन्तर रखना चाहिए और सभा को ढांचागत मरम्मत कर लेनी चाहिए ताकि वह अधिक विश्वास के साथ यह सुधार कर सके और तब तक कुछ सफलता भी प्राप्त हो जायेगी।

महोदय, एक दूसरी बात वातावरण की है जिसमें इस विधेयक को पारित करवाने का प्रयास किया जा रहा है। महोदय, इस देश में एक महान विभूति है जो हमारे विचार और कार्यवाही दोनों का नेतृत्व करती है। हालांकि हम गुलाम थे, उसने हमें सिखाया कि हमें स्वतंत्र व्यक्ति की तरह सोचना चाहिए और कार्य करना चाहिए और हम ने उस विभूति का अनुसरण किया। इस देश के तनकीकी दृष्टि से स्वतंत्रता होने से बहुत पहले, वह स्वतंत्र विचार और कार्य के वातावरण में हमारे बीच आये थे। परन्तु दुर्भाग्य से आज वह हमारे बीच हमारा मार्गदर्शन करने के लिये नहीं रहे परन्तु उनका अनुसरण करने के लिये उनका उदाहरण हमारे सामने है। अस्पृश्यता उन्मूलन, मन्दिर प्रवेश और इस प्रकार के अन्य सम्बद्ध मामलों के बारे में भी उनकी सलाह यही थी कि हमें कानून बनाकर उन उपयुक्त उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करनी चाहिए। उन्होंने ऐसा उपाय करने की आवश्यकता के बारे में लोगों का मानस तैयार करने का प्रचार किया था। उन्होंने ऐसे उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अपने आप को कष्ट दिया। यही वह है कि उन्होंने इसी प्रकार सुधार किये थे और आज यह सुस्थापित तथ्य है। हमें इस प्रकार उनका अनुसरण करना चाहिए, अत: असहमत लोगों पर सुधारों को जबरदस्ती थोपना उचित नहीं है।

श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले : उनको शिक्षित करना आप का काम है।

श्री ओ.वी. अलगेसन : हमें देश का भ्रमण करना चाहिए और जनता को इस बारे में शिक्षित करना चाहिए। आम चुनाव बहुत जल्दी आ रहे हैं, अत: जनता को शिक्षित करने का सर्वोत्तम समय भी मिलेगा।

श्रीमती श्री दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य) : पूरी आशंका तो यही है।

श्री ओ.वी. अलगेशन : इस विधेयक में उल्लिखित विभिन्न उपबंधों के बारे में जनता को जानकारी देने का यह बहुत अच्छा अवसर होगा। कांग्रेस अध्यक्ष ने कल जो कुछ कहा, वह काफी हद तक ठीक बात है। ब्रिटेन में लेबर पार्टी की सरकार किस प्रकार काम करती है? उन्होंने एक महत्त्वपूर्ण विधेयक, जिस पर उन्होंने मतदाताओं की अनुमति प्राप्त कर ली थी, को स्थगित कर दिया। उन्होंने मतदाताओं की अनुमति प्राप्त कर ली थी, फिर भी देश की स्थिति को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने आम चुनावों तक के लिये उसको स्थगित कर दिया। वे नये सिरे से जनता का निर्णय आ जाने के बाद उस विधेयक को कार्यान्वित करेंगे। जब मतदाताओं को अनुमति प्राप्त कर लेने के बाद भी वहां यह स्थिति है, तो मेरे विचार में हमारे इस मामले में भी ऐसा करना आवश्यक है, क्योंकि हमने तो अपने आशय के बारे में मतदाताओं को, कुछ भी जानकारी नहीं दी है। महोदय, हमने देखा है कि प्रत्येक सत्र में दो दिनों के लिये इस विषय पर बहस चलती रही है। यह तो अगली दीपावली पर सोने की चूड़ियाँ देने का वचन दोहराये जाने की तरह है। हम इस प्रकार चलते रहे हैं और सम्भवतः यही मार्ग ठीक है। क्योंकि कौन जाने, हमारी बहनें भी, जिन्होंने इस विधेयक को अपना भरपूर समर्थन दिया है, कल को अपना मन बदल लें और इसमें अपने हिसाब से सुधार करने का प्रयास करें। आखिरकार कोई भी व्यक्ति स्थिर नहीं रहता और विशेषकर महिलाएं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : ऐसे पुरुष भी होते हैं, जो अपनी राय बदल लेते हैं।

श्री ओ.वी. अलगेशन : यह बात महाकवि वाल्मीकि ने कही थी, जिनको हमारे देश में आदिकवि भी कहा जाता है। यह संदर्भ महिलाओं की आम विशेषताओं तक सीमित है। किसी व्यक्ति विशेष पर यह बात लागू नहीं होती। वाल्मीकि ने कहा था–

साथायद्‌धनम लोलाथरम।

अर्थात् 'स्त्रियाँ बिजली की तरह चंचल होती हैं।'

यह है, उन्होंने जो कहा।

इस प्रकार वे अपना मन बदल सकती है और इसमें सुधार करने का प्रयास कर करती है। मैं आपसे और सभा से पूछना चाहूंगा कि क्या अब तक प्रतीक्षा करने से उनको लाभ हुआ है या नहीं। राउ समिति की सिफारिशों से उनको लाभ हुआ है, पहले पुत्री आधे हिस्से की हकदार थी और अब डॉ. अम्बेडकर के विधेयक के अनुसार पुत्री को पुत्र के बराबर हिस्सा मिलेगा।

पुनः महोदय, यदि वे और प्रतीक्षा करें तो शायद उनको कुछ और अधिक मिल जाना सम्भव है। पुत्री को दुगुना हिस्सा मिल सकता है। हमने पहले दिन श्री ए.के. मेनन के विचार सुने थे और दूसरे दिन एक अन्य स्थान पर श्री थानू पिल्लै के विचार सुने थे। वे

इस बारे में बहुत चिंतित हैं और वे महसूस करते हैं कि बजाय उनका समर्थन करने के, उनका विरोध किया जा रहा है। जब शेष भारत आगे बढ़ रहा है, मालाबार के लोग महसूस करते हैं कि इस विधेयक के संदर्भ में उनके साथ न्याय नहीं किया जा रहा। महोदय, वे अन्य लोगों को अपने साथ सहमत कर सकते हैं और पूरा देश मारूमाक्काट्टयम व्यवस्था को स्वीकार कर सकता है, यद्यपि मातृप्रधान व्यवस्था अन्य स्थानों पर समाप्त होती जा रही है। सम्भव है कि मालाबार के मेरे मित्र इन सभा के अन्य माननीय सदस्यों को, अपने साथ सहमत कर सकें और फिर मारूमाक्कटट्यम व्यवस्था अपना ली जाये और उससे स्थिति बेहतर हो जाये। प्रतीक्षा करने से उनको कोई हानि नहीं पहुंचेगी, क्योंकि उनमें राजी कर लेने की क्षमता विद्यमान है, वे दूसरे को मना सकती हैं, वे फुसला सकती हैं, वे यह सब कुछ कर सकती हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य को ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

श्री ओ.वी. अलगेशन : मुझे खेद है और मैं इन शब्दों को वापस लेता हूँ।

हमने इस सभा में एक भाषण का विचित्र तमाशा भी देखा है, जो बहुत बढ़िया व्यंग्य के साथ आरम्भ हुआ और बड़े गम्भीर उपदेश के साथ समाप्त मन से अपनी भारतीय परंपराओं पर विचार करने का अवसर ही नहीं मिला। पश्चिमी विचारधारा और पश्चिम धाराणाएं सदा हमारे दिमाग में छायी रही हैं। यद्यपि हमारी राजनीतिक गुलामी समाप्त हो गयी है तथापि पश्चिमी सभ्यता और विचारों का जादू अभी भी छाया हुआ है। अतः यदि कुछ समय और बीत जाए, तो बेहतर होगा, ताकि हम नये सिरे से, निष्पक्ष रूप से अपनी संस्थाओं के अच्छे और बुरे पहलुओं पर विचार कर सकें और इससे इस विधेयक में संशोधन करने और आगे सुधार करने का भी अवसर मिलेगा।

महोदय, इस विधेयक की पृष्ठभूमि में पुरुष द्वारा महिला के प्रति किये गये अन्याय की भावना भी निहित है। मैं उन सब बातों को दोहराना नहीं चाहता जो परिहास में या गम्भीरतापूर्वक कही जा चुकी हैं। परन्तु महोदय, मैं इस बात का दावा कर सकता हूँ कि केवल मानसिक उद्विग्नता और आवेश की हालत में, जब व्यक्ति अपने आपे में नहीं होता, सामान्य जीवन बिताने के स्थान पर कोई और हरकत कर बैठता है। मैं इसे, ऐसा कहूंगा हमारे देश में महिला को हानि पहुँचाने के लिये पुरुष कोई कार्यवाही नहीं करता। मैं दूसरे पक्ष द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर भी विचार करना चाहता हूँ। सरकारी पक्ष में एक मनोवृत्ति बढ़ रही है कि जब किसी विधेयक पर चर्चा होती है, वे कहते हैं कि कुछ सदस्यों ने इसका विरोध किया है और कुछ अन्य ने समर्थन किया है और इस प्रकार विधेयक पर काफी हद तक सहमति हो गयी है। निपटान का यह बहुत अच्छा तरीका है। मेरे विचार में हमारे विद्व ान मंत्री इस विधेयक के सम्बन्ध में ऐसा नहीं करेंगे, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है। मैं तो यह कहूंगा कि इस विषय पर कम लोगों की सहमति है, अधिक की नहीं।

महोदय, यह भी कहा गया है कि इस विधेयक का विरोध तर्क पर आधारित नहीं, बल्कि पक्षपात और भावना पर आधारित है। इस बारे में मैं कहना चाहूँगा कि इस विधेयक का समर्थन भी अंधाधुंध और उसी प्रकार पक्षपातपूर्ण तरीके से किया गया है, वह भी तर्क पर आधारित नहीं हैं। ऐसा नहीं है कि विरोध करने वाले अनजान लोग हैं और समर्थन करने वाले बहुत प्रबुद्ध हैं।

महोदय, इस विधेयक के समर्थन में यह कहा गया है कि यह व्यवस्था समर्थकारी और अनुज्ञापक है। एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि रूढ़िवादी लोग बिना किसी हस्तक्षेप के पुराने तरीके पर चल सकते हैं और सुधारक भी अपने तरीके से चल सकते हैं अथवा जो लोग विधेयक के उपबंधों का लाभ उठाना चाहते हैं, वे अपना मार्ग चुन सकते हैं और अन्य लोग अपना मार्ग चुन सकते हैं। शायद, डॉ. अम्बेडकर ने यह बात कही थी। महादेय, यह लाइसेंस की सामान्य विधि के बारे में कानून पारित करने की तरह है और यह कहना कि जो इसका लाभ उठाना चाहते हैं, उठा सकते हैं, मेरे विचार में समर्थकारी और अनुज्ञापक उपाय वाला तर्क यहां नहीं चल सकता। फिर यह कहा गया कि शारदा अधिनियम जैसे इसी प्रकार के विधेयकों का भी पहले विरोध किया जाता रहा है। इस विधेयक का आधार बिल्कुल भिन्न है। उस अधिनियम और इस विधेयक में बहुत अन्तर है।

डॉ. टेक चन्द ने कहा था कि यह विधेयक काफी समय से देश में विचाराधीन है और हमें इस सम्बन्ध में और प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है। यह बात ठीक है कि यह विधेयक कई वर्षों से देश के विचाराधीन है। परन्तु उस समय कांग्रेस सत्ता में नहीं थी और किसी ने भी इसको गंभीरता से नहीं लिया था। जैसे ही कांग्रेस ने सत्ता की डोर संभाली और डॉ. अम्बेडकर ने कांग्रेस पार्टी के मंत्री के रूप में इस विधेयक को प्रस्तुत किया, तब प्रत्येक व्यक्ति ने इस को गंभीरतापूर्वक लिया क्योंकि तब उन्हें पता चल गया कि अब यह लागू हो जायेगा। मैं इसी लिये कहता हूँ कि लोगों को इस विधेयक पर विचार करने का अवसर दिया जाना चाहिए। इस विधेयक की अब तक जो स्थिति थी और जो अब है, उस में अन्तर है।

महोदय, यह भी कहा जाता है कि अनेक महिलाएं, जो इस विधेयक का विरोध करती हैं, वे अपने पुरुषों के प्रभाव में आकर ऐसा करती हैं। मेरे विचार में यह आरोप निराधार है। क्या मैं पूछ सकता हूँ कि जो महिलाएं इस विधेयक का समर्थन करती हैं, वे अपने पतियों से नाखुश हैं? या, वे पुरुष जो इस विधेयक का समर्थन करते हैं, वे अपनी महिलाओं के प्रभाव में आकर ऐसा करते हैं। ऐसे निरर्थक तर्क देने का कोई लाभ नहीं है।

श्री बी. दास : इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये यहां कोई उपस्थित नहीं है।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : क्या आप यह कहते हो कि वे अपने पतियों से, जो बार-बार विवाह करते हैं, प्रसन्न रहती हैं?

श्री ओ.वी. अलगेसन : श्रीमती जी, मैं उसी बात पर आ रहा हूँ, धैर्य रखिये।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : आप पहले इस प्रश्न का उत्तर दीजिए।

श्री ओ.वी. अलगेसन : हाँ, मैं यथा समय अपने ढंग से इसका उत्तर दूंगा।

पंडित गोविंद मालवीय : क्या मैं पूछ सकता हूँ कि हमें किस समय तक बैठना है?

कुछ माननीय सदस्य : 6.00 बजे तक।

कुछ माननीय सदस्य : 7.00 बजे तक।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं देख रहा हूँ कि सभा में सदस्यों की संख्या कम होती जा रही है और जब बहुत कम हो जायेगी, मैं खड़ा हो जाऊंगा।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : महोदय, हमें अब चाय पीने तक के लिये उठ जाना चाहिए।

माननीय उपाध्याय : नहीं, माननीय सदस्य अब शीघ्र समाप्त कर देंगे।

श्री ओ.वी. अलगेसन : महोदय, इस प्रकार के उपाय का दोहरा औचित्य हो सकता है। जनता से पुरजोर मांग आनी चाहिए कि इस प्रकार का उपाय किया जाए अथवा कुछ लोग जो इस सुधारात्मक उपाय के समर्थक हैं और सोचते हैं कि यह व्यवस्था पूरे समाज के लिये लाभप्रद है जबकि हो सकता है जनता इसके लिए तैयार न हो। तब उन्हें, जो सोचते हैं कि इस तरह के उपाय पूरे समाज के लिए लाभकारी हैं। जनता के पास जाना चाहिए और अपने दृष्टिकोण का आधार स्पष्ट करना चाहिए। मेरा केवल इतना अनुरोध है कि जो लोग इस उपाय को लाने के लिये जिम्मेदार हैं और जो सोचते हैं कि यह हिंदू समाज के लिये लाभप्रद होना चाहिए। मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि उन्होंने हाल ही में संविधान और इसके अनेक प्रावधान पारित किए हैं और आप जानते हैं इसके विभिन्न उपबंधों के साथ अनेक परन्तुक और अपवाद जुड़े हुए हैं, क्या इस कारण हम अपवादों को मुख्य अनुच्छेदों में रखेंगे? यदि विधेयक का समर्थन करने वालों के तर्कों पर विचार करें, तो ऐसा प्रतीत होता है कि हमें अपवादों को मुख्य विधि में रखना होगा।

महोदय, फिर यह विधेयक जिसके बारे में हमारी बहनें उत्सुकता दिखा रही हैं···

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : भाई भी।

श्री ओ.वी. अलगेसन : मेरे विचार में इस विधेयक में ऐसी कोई बात नहीं। एकपत्नीक व्यवस्था की सभी ने प्रशंसा की है। यह ऐसी कोई नई संस्था नहीं है। हमारे देश में एकपत्नीक व्यवस्था चिरकाल से चली आ रही है, परन्तु क्या विवाह–विच्छेद की भी कोई व्यवस्था थी? जैसे ही पुरुषों को कानून के दायरे में एक पत्नीक व्यवस्था के अन्तर्गत लाया

गया, विवाह-विच्छेद के उपबंध की भी मांग होने लगी। इस देश में जब तक महिलाएं एकपत्नीक व्यवस्था के अन्तर्गत थीं, विवाह-विच्छेद की कोई व्यवस्था नहीं थी, परन्तु अब वे कहते हैं कि विवाह-विच्छेद एकपत्नीक व्यवस्था का सहज परिणाम है। इस सम्बन्ध में मेरी बहनें इतनी अधिक उत्सुक क्यों हैं? इसका अर्थ क्या है? यदि एक पत्नीक व्यवस्था का विवाह-विच्छेद सहज परिणाम है तो इसका अस्तित्व अब तक सामने क्यों नहीं आया?

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य और कितने समय तक बोलेंगे?

श्री ओ.वी. अलगेसन : केवल 10 मिनट और। परन्तु इससे पहले भी समाप्त करने का प्रयास करूंगा। अतः मेरा कहना यह है कि विवाह-विच्छेद का अधिकार दिया जाना कोई अच्छी बात नहीं है। मैं उद्धरण पढ़ना नहीं चाहता, परन्तु अनेक महिलाओं ने अपना मत व्यक्त किया है कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को विवाह-विच्छेद व्यवस्था से कहीं अधिक मुसीबतें झेलनी पड़ेंगी।

श्री ए. थानु पिल्ले : क्या माननीय सदस्य विवाह-विच्छेद की व्यवस्था के बिना एकपत्नीक व्यवस्था के पक्ष में हैं?

श्री ओ.वी. अलगेसन : मैं एक पत्नीक व्यवस्था चाहता हूँ और उसमें विवाह-विच्छेद का स्थान नहीं होना चाहिए।

महोदय, यह विधेयक एक हाथ से जो कुछ देता है वह दूसरे हाथ से छीन लेता है।

डॉ. अम्बेडकर ने विवाह-विच्छेद के उपबंध को उचित ठहराते हुए उन महिलाओं की अनेक कठिनाइयों का उल्लेख किया है जिनको वर्तमान में पति छोड़ देते हैं। तलाक पाने वाली महिलाओं का भविष्य भी उतना ही खराब है, जितना उन महिलाओं को, जिनको पतियों ने छोड़ दिया है? तलाक पाने वाले पुरुष के लिये पुनः विवाह कर लेना सरल है, परन्तु तलाक पाने वाली महिला के लिये इतना सरल नहीं है।

डॉ. पी. सुब्बरायण (मद्रास : सामान्य) : तो आप दोहरे मापदंड अपनाना चाहते हैं।

श्री ओ.वी. अलगेसन : मैं चाहता हूँ कि मेरी बहनें इस ओर ध्यान दें और उस गड्ढे के प्रति सचेत रहें, जहां यह विधेयक उनको ले जाना चाहता है।

विवाह-विच्छेद के उपखंड पर मुझे घोर आपत्ति है और इसके अनेक अन्य कारण भी हैं। दूसरे देशों का क्या अनुभव है? कुछ अन्य वक्ताओं ने भी इस विषय पर अपने विचार व्यक्त किये हैं और मैं इस पर विस्तार से बात नहीं करना चाहता। हाल में हमें बताया गया था कि केवल पैरिस में ही विवाह-विच्छेद के मामलों की संख्या 600 से बढ़कर 1200 हो गयी है, जो केवल 100 प्रतिशत वृद्धि है।

एक माननीय सदस्य : भारत में कोई पैरिस नहीं है।

श्री ओ.वी. अलगेसन : मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि वर्तमान में भारत में कोई पैरिस नहीं है, परन्तु मुझे इस बात की आशंका है कि इस विधेयक के लागू हो जाने पर भारत में भी पैरिस जैसी स्थिति बन जायेगी।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : यहां बड़ौदा है, मालाबार है।

श्री ओ.वी. अलगेसन : विश्व में अत्यन्त समुन्नत देशों में से एक सोवियत रूस में संस्था के रूप में परिवार टूटता जा रहा है। वहां पहले तलाक की प्रक्रिया सरल बना दी गयी थी। अब परिवार को संस्था के रूप में पुनर्जीवित करने के लिये सोवियत रूस कड़ी मेहनत कर रहा है। अब वह संस्था के रूप में परिवार की पवित्रता पर जोर देते हैं और सब को शिक्षित करना चाहते हैं और अपने नागरिकों में साम्यवादी नैतिकता भर देना चाहते हैं। वे इस संस्था को बचाने के लिये अथक प्रयत्न कर रहे हैं जिसको उन्होंने देश में तलाक व्यवस्था लागू करके खो दिया था। वहां पर रजिस्ट्रार को मात्र एक पोस्ट कार्ड लिखना होता था कि वह अपनी पत्नी को तलाक देता है और उसे तलाक मिल जाता था। मैं समझता हूँ कि अब तलाक सम्बन्धी अपने नियमों को उन्होंने बहुत कठोर बना दिया है। हमारे सामने यह एक उदाहरण है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मालाबार में क्या विचार है? रूस और पैरिस जाने की क्यों आवश्यकता हुई?

श्री ओ.वी. अलगेसन : वहां उन्होंने यह प्रयोग करके देख लिया है और उनको पता चल गया है कि यह उपाय हानिकारक है। अत: उस बुराई को अपनाकर और फिर उसे दूर करने के लिये प्रयास करने की क्या आवश्यकता है। भारत में हमारे गरीब भाई रहते हैं, वे अबोध हैं, अस्वस्थ हैं परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे परिवार बिखरे हुए हैं। दूसरे देश में वे धनवान और स्वस्थ हो सकते हैं और प्रबद्ध भी हो सकते हैं, परन्तु यह देखकर दुख होता है कि उन देशों में अनेक परिवार बिखरे पड़े हैं और इस स्थिति का एकमात्र कारण तलाक देने का लाइसेंस दिया जाना है। मेरी यही राय है।

डॉ. टेक चन्द जैसे सुप्रसिद्ध व्यक्ति की भी यही राय है कि संयुक्त हिंदू परिवार व्यवस्था बनी रहनी चाहिए और पत्नी को सहसमांशी बना देना चाहिए। मैं कहना चाहूंगा कि महिलाओं की वास्तविकता आर्थिक स्वाधीनता, पुत्री को हिस्सा देने से नहीं, जिस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि पति की सम्पत्ति में हिस्सा देने से प्राप्त होगी। इसी तरीके से वह आर्थिक रूप से स्वाधीन होगी, पिता की सम्पत्ति से हिस्सा लेने से ऐसा नहीं होगा। आखिरकार पुत्री न्यास की तरह है जो दामाद को सौंपा जाता है। पिता, पुत्री को न्यास की तरह रखता है और इसलिये यह बेहतर और उचित होगा कि उसको पिता की सम्पत्ति में हिस्से का दावेदार बनाने के बजाय, पति की सम्पत्ति में संयुक्त मालिक अथवा बराबर का हिस्सेदार बनाया जाये। यदि वह अविवाहित रहे तो पिता की सम्पत्ति में हिस्सा ले सकती है।

मैं और विस्तार नहीं करना चाहता, परन्तु अन्त में यह कह कर समाप्त करना चाहता हूँ कि मूल व्यक्ति, जिसको संहिता की बात सूझी (यद्यपि एक सज्जन पुरुष, जिनको कल तक सहमत नहीं किया जा सका) श्री बी.एन. राउ को हम यह मानते हैं, इस विधेयक की बहुत चिन्ता है। वह चाहेंगे कि उनके सभी प्रस्ताव, भले ही कुछ परिवर्तित रूप में, शीघ्र से शीघ्र क्रियान्वित हो। अतः मैं उनकी राय भी जानना चाहता हूँ, जो हिंदू विधि समिति की भी राय रही है।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : वह अकेले नहीं थे, उन प्रस्तावों पर विचार करने के लिए प्रवर समिति थी।

श्री ओ.वी. अलगेसन : हिंदू विधि समिति ने निम्न बात कही थी:–

"यथासम्भव सहमति से समाधान करने का उद्देश्य होना चाहिए और वाद-विवाद में तीक्ष्णता नहीं आनी चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि सुधार की गति धीमी हो जाये, क्योंकि सच्चा सुधार सहमति से ही किया जा सकता है, विवश करके नहीं।"

महोदय, मेरी बात पूरी हो गयी है।

तत्पश्चात् सभा गुरुवार, 15 दिसम्बर, 1949 के 10.45 बजे तक के लिये स्थगित कर दी गई।

*हिंदू संहिता–जारी

माननीय उपाध्यक्ष : प्रस्ताव, जिस पर सभा विचार कर रही थी:–

"कि हिंदू विधान की कुछ शाखाओं में संशोधन और उनको संहिताबद्ध करने वाले विधेयक, जो प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में है, पर विचार किया जाये।"

***माननीय श्री जवाहर लाल नेहरू (प्रधानमंत्री)** : महोदय, मैं हिंदू संहिता विधेयक के सम्बन्ध में एक वक्तव्य देने के लिये आपकी अनुमति और सभा की कृपा चाहता हूँ, और मुझे विश्वास है कि मैं जो वक्तव्य दूंगा, सभा उसका अनुमोदन करेगी।

इस सत्र के आरम्भ में, मैंने हिंदू संहिता विधेयक पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि सरकार इस विधेयक को बहुत अधिक महत्व देती है और उनको आशा है कि इस सत्र के दौरान इस पर विचार का कार्य पूरा हो जायेगा। इसके साथ ही सरकार को इस बात की भी जानकारी थी कि इस विषय पर लोगों की अलग–अलग राय होगी और विधेयक के उपबंधों में अनेक लोगों की रुचि होगी। इसलिये मैंने उस समय सुझाव दिया था कि हमारा विचार एक ऐसा रास्ता अपनाने का है जिससे हमें आशा है विधेयक में अनेक विवादास्पद खंडों के बारे में मोटे तौर पर कोई समझौता हो जायेगा। इस विषय के बारे में सरकार की नीति को स्पष्ट करने के लिये मैं अपने इस वक्तव्य को विस्तृत रूप से रखना चाहता हूँ। हमने इस विषय पर काफी लम्बी बहस कर ली है। इस सत्र में ही नहीं बल्कि पिछले सत्रों में भी। इस अवसर पर हमने दो दिन अलग से रखे थे और सभा को जानकारी है कि उन दिनों में दो अवसरों पर देर तक बैठ कर बहस को जारी रखा गया। इस प्रकार के महत्वपूर्ण विधेयक पर वाद–विवाद को सीमित करने की सरकार की कोई इच्छा नहीं है। इसके बावजूद कि समय की बहुत तंगी थी और सत्र के दौरान अनेक विधायी मदों को निपटाया जाना था, हमने दो अवसरों पर चर्चा को अधिक समय तक जारी रखा और निश्चय ही आज का दिन भी इसी प्रयोजन के लिये निर्धारित किया गया।

यद्यपि इस वाद–विवाद को सीमित करने की हमारी कोई इच्छा नहीं है, सरकार को प्रतिदिन समय बढ़ाने में दिक्कत का सामना करना पड़ता है। फिर भी हम अधिक समय देने के लिये तैयार हैं, क्योंकि सभा के कुछ सदस्यों की ऐसी ही इच्छा है और यह विधेयक भी महत्वपूर्ण है। परन्तु इस मामले का एक और भी पहलू है और वह यह है कि क्या हम विवादस्पद खंडों के बारे में यथा सम्भव किसी सहमति का रास्ता निकालने के लिये कोशिश की भावना से विचार करने वाले हैं, यदि जैसा कि मैंने कहा, हम उसी दिशा में आगे बढ़ रहे हैं जिनका संकेत मैंने आरम्भ में दिया था, तब तो इस चर्चा को जारी रखना वांछनीय है और यदि हम एक ऐसा वातावरण तैयार करते हैं अथवा वातावरण तैयार करने

---

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 7, भाग II, 19 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 783–85

में सहायक हैं। जिससे उस तरह का समाधान आसानी से हो जाए, सरकार के मत में यह एक महत्वपूर्ण बात थी। मैंने आरंभ में ही सभा में निवेदन किया था कि हमारे मन में यह विचार है। सरकार का ऐसा कोई इरादा नहीं था कि बहुमत के आधार पर इस दिशा में आगे बढ़ा जाये और इस विधेयक के प्रत्येक खंड को पारित करवा लिया जाये, यद्यपि इस बारे में काफी लोगों की राय भिन्न-भिन्न हो सकती है। जहां तक इस विधेयक का सम्बन्ध है, सरकार का दृष्टिकोण यही है। हम इस विधेयक के प्रति व्यापक रुख अपनाने के लिए वचनबद्ध है। यद्यपि हम सब लोगों के दृष्टिकोण को समझ कर प्रत्येक खंड पर विचार करने को तैयार हैं। सरकार ने इस विधेयक को सभा के समक्ष प्रस्तुत किया है, क्योंकि उसको इसी में विश्वास है, परन्तु हम चाहते हैं कि ऐसे मामलों में हमें अधिक से अधिक समर्थन मिले। अब उसमें और इस आम चर्चा में, जो अब चल रही है, अन्तर है और हम सोचते हैं कि इस विषय पर विस्तृत चर्चा हो चुकी है और इस वाद-विवाद में बड़ी संख्या में सभा के सदस्यों ने भाग लिया है। हम चाहते हैं कि अब इस चर्चा को समाप्त कर दिया जाये ताकि यथाशीघ्र दूसरे चरण की चर्चा आरम्भ की जा सके अर्थात् अनौपचारिक चर्चा। पर जब तक चर्चा का यह चरण समाप्त नहीं होगा, तब तक वह चर्चा प्रभावी ढंग से नहीं की जा सकती। अन्यथा गतिरोध पैदा हो जायेगा और हम आगामी चरण की ओर बढ़ नहीं सकते। इसलिए अब हमारा प्रस्ताव यह है और मैं इसको सभा के समक्ष रखने का साहस करता हूँ कि इस विचारार्थ प्रस्ताव पर चर्चा को यथाशीघ्र समाप्त कर दिया जाये। मुझे इस पर आपत्ति नहीं है कि सरकार अन्य विधायी कार्य की उपेक्षा करके भी इस विधेयक के लिये अधिक समय दे, परन्तु मैं सभा से यह कहना चाहता हूँ कि यदि सभा को अनौपचारिक चर्चा का यह सामान्य प्रस्ताव स्वीकार्य है, तो अगले चरण पर जाना वांछनीय है और विद्यमान चरण पर वाद-विवाद में तीक्षणता कर वातावरण खराब करना उचित नहीं है।

जब मैं अनौपचारिक विचार-विमर्श की बात करता हूँ तब स्पष्ट कर देना चाहिए कि इसके क्या मायने हैं। मैंने अनौपचारिक कहा है, इसका यह अर्थ नहीं कि मैं इसको कोई महत्व नहीं देता, बल्कि मैं उस चर्चा में थोड़ा लचीलापन लाना चाहता हूँ जिससे मेरे माननीय सहयोगी विधि मंत्री, जिन्होंने इस विधेयक की जिम्मेदारी अपने कंधों के ऊपर ली है और मुझे विश्वास है कि वह उन प्रस्तावों को, जिन्हें मैंने प्रस्तुत किया है, प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करेंगे और कार्यरूप देंगे ताकि न केवल वे प्रवर समिति के सदस्यों से ही नहीं बल्कि इस सदन के अन्य सदस्यों से, जिन्होंने इस विषय में रुचि ली है, और इस सभा से बाहर भी लोगों के साथ परामर्श कर सकेंगे। यदि हम कोई कठोर प्रक्रिया अपनाएँ तो अब ऐसा करना कठिन होगा और जब आप औपचारिक तथा कठोर प्रक्रिया अपनाते हैं तो निष्पक्ष और सरल चर्चा करना मुश्किल हो जाता है और यदि प्रक्रिया अधिक लचीली और अनौपचारिक हो, तो विचारों के आदान-प्रदान में आसानी होती है। इसलिये मैं यह प्रस्ताव सभा के समक्ष रखता हूँ और निवेदन करता हूँ इस विषय में, अब तक की गयी सभी चर्चा और वाद-विवाद पर विचार करने के बाद यह वाजिब प्रस्ताव रखा गया है जिसे सभा के सभी पक्षों से स्वीकृति

मिलनी चाहिए, क्योंकि यह सरकार का इस सभा के माध्यम से एक प्रयास है। देश के माध्यम से अधिकतम समर्थन पाकर, कुछ करने का वास्तविक प्रयास है। इसका अर्थ यह नहीं है कि किसी मामले में जिसमें बिल्कुल भी सहमति न हो, उसकी राय का परित्याग कर दें अथवा किसी अन्य के निर्णय के आगे घुटने टेक दें। यदि उसका किसी बात में विश्वास है, तो कोई भी व्यक्ति इस सभा के किसी सदस्य से ऐसी अपेक्षा नहीं रखता।

परन्तु लोकतांत्रिक प्रक्रिया का यह सार है कि हम किसी विषय पर वाद-विवाद करें और विचार करें तथा एक-दूसरे के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए परस्पर सहमति पैदा करें। परन्तु किसी निर्णय पर पहुंचने के लिए कभी-कभी किसी बात को छोड़ना पड़ सकता है, जिससे अधिक लोगों की सहमति के साथ उस निर्णय को लागू किया जा सके। यही प्रक्रिया है। मैं सभा से अनुरोध करता हूँ कि इस महत्वपूर्ण मामले में भी हमको यही प्रक्रिया अपनानी चाहिए।

मैं नहीं चाहता कि सभा को जरा सा भी संदेह हो कि हम ऐसा सोचते हैं कि हिंदू संहिता विधेयक अधिक महत्व का नहीं है, क्योंकि हम इसको बहुत अधिक महत्व देते हैं जैसे कि मैंने कहा, इसका कारण कोई खंड विशेष या कोई अन्य बात नहीं है, बल्कि इस देश में व्याप्त इस व्यापक समस्या के प्रति आधारभूत दृष्टिकोण के कारण है, जो आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से सम्बद्ध है। हमने इस देश में राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त की है। यह यात्रा का पहला पड़ाव है और इस यात्रा के अन्य पड़ाव भी हैं, जैसे आर्थिक, सामाजिक तथा अन्य। और यदि समाज को प्रगति करनी है तो सर्वांगीण विकास होना चाहिए। यदि एक दिशा में प्रगति हुई तो और अन्य दिशाओं में हम पिछड़े रहे, तो उसका अर्थ होगा कि हम ठीक से काम नहीं कर रहे और इसका यह भी अर्थ है कि एक दशा में हुई प्रगति खतरे में है। इसलिये हमको इस मामले पर इसी दृष्टि से विचार करना चाहिए कि हम किस प्रकार सभी दिशाओं में प्रगति कर सकते हैं। इस बात को सदा ध्यान में रखते हुए, निःसंदेह कि प्रगति से तालमेल स्थापित किया गया है और बड़ी संख्या में जनता का अनुमोदन मिलता है। मैं ऐसा इसलिये कहता हूँ, क्योंकि अन्ततः हम एक लोकतंत्रीय सभा के रूप में काम करते हैं और हम भारत की जनता के प्रति जवाब-देह हैं और हमें उनको लेकर चलना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखते हुए हमारे लिये और इस सभा के लिये यह उचित नहीं होगा कि मात्र हम नेतृत्व करें। हमें नेतृत्व करना है और हमें नेतृत्व प्रदान करना है और ऐसा करते हुए हमें अन्य लोगों का विश्वास प्राप्त करना है और हम इस मामले में तथा अन्य मामलों में नेतृत्व प्रदान करने का प्रस्ताव करते हैं और हम यह कार्य लोगों को विश्वास में लेकर उनके सहयोग से करेंगे।

अतः यह प्रक्रिया है, जिसको मैंने विस्तारपूर्वक बताया है। अब हमें इस विचारार्थ प्रस्ताव को स्वीकार करके चर्चा के इस चरण को समाप्त करना होगा और फिर सभा सरकार को अनौपचारिक कदम उठाने की अनुमति देगी, जिसका मैंने विभिन्न भागों और खंडों के बारे में विचार-विमर्श का संकेत दिया है। यह काम आरम्भ हो जाना चाहिए ताकि जब यह

मामला दोबारा विचारार्थ आये, जैसे मैं आशा करता हूँ, अगले सत्र में, तब इस सभा में और बाहर से बड़ी संख्या में लोगों का इस विधेयक के प्रति समर्थन प्राप्त हो।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा (संसदीय कार्य राज्य मंत्री) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:-

"कि प्रस्ताव को मतदान के लिये रखा जाये।"

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : क्या मैं एक स्पष्टीकरण के लिये पूछ सकता हूँ?

माननीय अध्यक्ष : मेरे विचार में अब हमें और समय नहीं लेना चाहिए, विशेष कर तब, जब सभा के नेता ने बहुत ही स्पष्ट वक्तव्य दे दिया है। मैं माननीय सदस्यों को स्मरण दिलाना चाहता हूँ कि विचार के इस चरण पर पूरे 9 दिन तक चर्चा हुई है और आज 10वां दिन है। 33 वक्ताओं ने इस चर्चा में भाग लिया है और हमने 30 घंटे और 28 मिनट का समय इसमें लगाया है। मेरे विचार में काफी समय दिया गया है और...

एक माननीय सदस्य : क्या मैं जान सकता हूँ...

माननीय अध्यक्ष : जब मैं बहस को विराम देने को स्वीकार करता हूँ, तो मैं उसके कारण बताने के लिए बाध्य नहीं हूँ। परन्तु मैं जो महसूस करता हूँ, उसको स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मैं माननीय प्रधानमंत्री द्वारा हाल ही में दिये गये वक्तव्य से सहमत हूँ कि इसके सभा के भीतर और बाहर–सब को विधेयक के विभिन्न उपबंधों के बारे में अपनी राय बताने का पूरा अवसर मिलेगा। विद्यमान चरण आम चर्चा का चरण है और हम किसी मद विशेष के खंड विशेष पर चर्चा नहीं कर रहे हैं। यह सम्भव है कि ब्यौरे के बारे में लोगों की राय भिन्न-भिन्न हो और जहां तक विधेयक की सामान्यता का सम्बन्ध है, काफी हद तक सहमति हो सकती है। यदि हम इसी अवस्था में चर्चा को जारी रखते हैं, मुझे आशंका है कि हमारी चर्चा अत्यन्त अस्पष्ट असामान्य और असम्बद्ध होगी; सम्भवतः उसमें अनेक बातों की आवृत्ति भी होगी। अतः इसका महत्वपूर्ण चरण विधेयक पर खंडवार विचार का होना और वह अवस्था आने से पूर्व माननीय सदस्यों को सरकार के साथ और सभा के बाहर अन्य लोगों के साथ सभी पहलुओं पर विचारों का आदान-प्रदान करने का अवसर मिलेगा। इसलिये मेरे विचार में विधेयक पर आगे चर्चा करना समय बर्बाद करने के बराबर होगा। इसलिये मैं बहस को विराम देने को स्वीकार करना चाहता हूँ और उसके बाद मैं विधि मंत्री को बोलने के लिये आमंत्रित करूंगा।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी (असम : सामान्य) : मैं एक वक्तव्य देना चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य क्या वक्तव्य देना चाहते हैं? यदि मैं आपको

---

*सी.ए. (विधि) डी. खंड 7, भाग II, 19 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 785–87

वक्तव्य देने की अनुमति देता हूँ तो प्रत्येक व्यक्ति को अपना वक्तव्य देने का अधिकार मिल जायेगा। आप कृपया बैठ जाइए।

श्री महावीर त्यागी (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : महोदय मैं आपसे एक स्पष्टीकरण चाहता हूँ कि क्या, इस अवस्था में प्रस्ताव की स्वीकृति के बाद इसका अर्थ यह होगा कि विधेयक के सभी खंडों के सिद्धांतों के प्रति सभा प्रतिबद्ध मानी जायेगी?

माननीय अध्यक्ष : मैं स्थिति को और स्पष्ट करता हूँ। वास्तव में जब सभा ने प्रस्ताव को प्रवर समिति को भेजने की स्वीकृति दी थी, तभी सभा ने विधेयक के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया था। अब इस प्रकार के विधेयक में इस बात का निर्णय करना बहुत कठिन है कि सिद्धांत क्या है, क्योंकि प्रत्येक खंड को सिद्धांत का रूप दिया जा सकता है। मैं स्थिति को स्पष्ट करता हूँ। इस विधेयक के उपबंधों की संख्या को देखते हुए इसका व्यापक स्वरूप स्पष्ट है कि सभा द्वारा एक ही सिद्धांत स्वीकार किया गया है कि हिंदू विधान को संहिताबद्ध करना वांछनीय है और विधेयक के प्रत्येक उपबंध पर चर्चा की जा सकती है, उसमें फेरबदल, परिवर्तन तथा उस प्रकार की सब बातें की जा सकती हैं।

श्री महावीर त्यागी : महोदय, फिर हमको कोई आपत्ति नहीं है।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : मैं इस विधेयक के सम्बन्ध में सभा को एक सुझाव देना चाहता हूँ। बहस को विराम देने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाये और स्वीकार कर लिया जाये। मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। मैं इस विषय पर आगे चर्चा भी नहीं चाहता। वास्तव में समझौते का वातावरण बनाने के लिए मैंने स्वयं इसके विरोध में कुछ नहीं बोला। मेरा सुझाव यह है कि इस प्रस्ताव को अभी मतदान के लिए न रखा जाये। हम इस सभा के बाहर इस विधेयक का विरोध करने वालों को राजी करना चाहते हैं कि माननीय प्रधानमंत्री की घोषणा से व्यावहारिक लाभ हुआ है।

माननीय अध्यक्ष : मेरे विचार में प्रक्रिया के सम्बन्ध में सभा के माननीय नेता द्वारा दिये गये वक्तव्य के बाद और मैंने जो स्पष्ट किया है कि क्या बाध्यकारी है और क्या नहीं, अब इस विचारार्थ प्रस्ताव के पारित हो जाने के प्रस्ताव के बारे में कोई संदेह नहीं रह जाता। वास्तव में यह वांछनीय नहीं है कि इस बात को अब खुला रखा जाये ताकि जब इस पर पुनः विचार आरम्भ हो तो और चर्चा की जाये और भाषणों को प्रोत्साहन मिले इसलिये मैं प्रस्ताव को सभा के मतदान के लिये रखता हूँ।

डॉ. पी.एस. देशमुख (सी.पी. एवं बिरार : सामान्य) : महोदय, मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। हम सब ने माननीय प्रधानमंत्री द्वारा दिये गये सुझाव को सुना है और इसमें कोई संदेह नहीं है कि सभा उसको स्वीकार कर लेगी। मेरा व्यवस्था का प्रश्न यह है कि सभा के समक्ष जो प्रश्न है वह विचारार्थ प्रस्ताव है। अब दिये गये सुझाव का वास्तविक अर्थ यह है कि विधेयक को वापस प्रवर समिति को भेज दिया जाये।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

डॉ. पी.एस. देशमुख : महोदय, मैं स्पष्ट करता हूँ कि ऐसा करना संसदीय प्रक्रिया की अवहेलना करना है। सही प्रक्रिया यही होगी कि इसे प्रवर समिति, उसी समिति को या उससे बड़ी समिति को विधेयक भेजा जाये। उपर्युक्त सुझाव संसदीय प्रक्रिया के विरुद्ध है और उसको स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। यदि वह सुझाव सभा को स्वीकार्य है तो मुझे उस पर जरा सी भी आपत्ति नहीं है। परन्तु नियमित प्रक्रिया यही है कि विधेयक को उसी प्रवर समिति के पास भेजा जाये या उससे बड़ी प्रवर समिति के पास भेजा जाये।

माननीय अध्यक्ष : प्रक्रिया की दृष्टि से मैं माननीय सदस्य की आपत्ति को समझता हूँ, परन्तु सभा के माननीय नेता ने सभा में किसी प्रस्ताव को अग्रेतर विचार के लिये नहीं रखा है। उन्होंने केवल अपनी स्थिति स्पष्ट की है। उन्होंने बताया है कि सरकार किस प्रकार कार्य करेगी और विधेयक के खंडों पर विचार के समक्ष क्या दृष्टिकोण अपनायेगी? उन्होंने इस सभा की किसी औपचारिक समिति को भेजने का कोई हवाला नहीं दिया। यदि ऐसा कोई प्रस्ताव रखा होता है, तो मैं निःसंदेह व्यवस्था के, इस प्रश्न को स्वीकार कर लेता। इस समय सभा के समक्ष ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं है। मेरे विचार में यह संसदीय प्रक्रिया के विरुद्ध भी नहीं है। बल्कि यदि साधारण प्रक्रिया से कुछ हट कर भी है, तो मेरी राय में, समझौते और तादात्म्य की भावना से हमें नयी प्रक्रिया भी बना लेनी चाहिए। अब मैं प्रस्ताव को मतदान के लिये रखता हूँ।

प्रश्न यह है:–

"कि इस प्रस्ताव को सभा के मतदान के लिये रखा जाए।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) :** महोदय, कुल मिलाकर सभा के समक्ष तीन प्रस्ताव हैं। उनमें से दो के प्रवर्तक श्री नजीरुद्दीन अहमद हैं। उनमें से एक विधेयक को प्रवर समिति को विचार करने के लिये अग्रेषित करने के बारे में है। दूसरे प्रस्ताव में विधेयक को जनमत हासिल करने के लिये परिचालित करने का सुझाव दिया गया है। इनके अतिरिक्त सभा के समक्ष मेरा प्रस्ताव है जिस में प्रवर समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने का सुझाव दिया गया है। मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के बारे में कुछ शब्द कहना चाहता हूँ। नौ दिन तक चली चर्चा के दौरान मैंने एक बात महसूस की कि विधेयक का विरोध करने वाले सदस्यों का भी, उनको समर्थन प्राप्त नहीं था। तैंतीस सदस्यों में से अधिक से अधिक दो ने, जिन्होंने इस पर चर्चा में भाग लिया है, उनके प्रस्ताव का पक्ष लिया है। शेष ने उनका समर्थन बिल्कुल नहीं किया। दूसरे, उनके

---

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 7, भाग II, 19 दिसम्बर, 1949, पृष्ठ 787-92

भाषण को जो 6 घंटे से अधिक समय तक चला, जिन लोगों ने समझा है, उनको स्पष्ट हो गया है कि इस बात के होते हुए भी कि उनके भाषण के दौरान उनसे अनेक बार पूछा गया कि कि इस विधेयक को प्रवर समिति को क्यों भेजा जाये या जनमत के लिये क्यों परिचलित किया जाये, मेरे निष्कर्ष के अनुसार वे अपने प्रस्तावों के समर्थन में कोई ठोस कारण प्रस्तुत करने में सफल नहीं हुए। इसलिये मैं इन दो प्रस्तावों के बारे में कुछ कहना अनावश्यक रूप से अपना और सभा का समय बर्बाद करना समझता हूँ।

महोदय, अब मैं अपने प्रस्ताव की बात करता हूँ। जैसा कि आपने कहा कि कुल मिला कर तैंतीस वक्ताओं ने इस चर्चा में भाग लिया है। मैं सभा को इस प्रस्ताव को कितना समर्थन प्राप्त हुआ, यह बताना चाहता हूँ और यह भी बताना चाहता हूँ कि सभा के सदस्यों ने किस हद तक उसका विरोध किया है। तैंतीय सदस्यों, जिन्होंने इस वाद-विवाद में भाग लिया है, में से लगभग 23 सदस्य इस प्रस्ताव के पक्ष में बोले हैं। इन 23 सदस्यों में से केवल दो सदस्य ऐसे थे जिन्होंने इस विधेयक को सशर्त समर्थन देने की बात कही है। तीन सदस्य तटस्थ रहे; तीन परिचालन के पक्ष में थे और चार विधेयक पर विचार को स्थगित करने के पक्ष में थे। इस प्रकार यह बिल्कुल स्पष्ट है कि बड़ी संख्या में सदस्य इस विधेयक के पक्ष में हैं, जैसा कि मैंन कहा–23 सदस्य से अधिक।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : क्या उनको इस बात की जानकारी है कि उन व्यक्तियों ने, जो विधेयक का विरोध करना चाहते थे, जिनके नाम दिये गये थे, परन्तु उनको बोलने का अवसर नहीं मिला।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं केवल उनके भाषणों का विश्लेषण कर रहा हूँ, जो बोले थे।

माननीय अध्यक्ष : शांति। शांति।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस विषय पर आगे विचार करते हुए और इस बात का पता लगाने के लिये कि इस विधेयक का किस प्रकार विरोध किया गया है और यह भी पता चल सके कि विधेयक के किस भाग की आलोचना की गयी है, मैंने पाया कि यह विधेयक जिस में हिंदू विधान को संहिताबद्ध करने की व्यवस्था की गयी है, उसमें 8 मामले शामिल हैं, उनमें से पांच मामलों के सम्बन्ध में बिल्कुल कोई विरोध नहीं किया गया।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : क्योंकि आपने हमें बोलने का अवसर ही नहीं दिया।

माननीय अध्यक्ष : शांति शांति।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं आशा करता हूँ कि मेरे मित्र व्यवधान नहीं डालेंगे।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य ने अभी-अभी वचन दिया था कि वह समझौते का वातावरण खराब नहीं करेंगे।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : समझौते की शर्त यह थी कि अब वह नहीं बोलेंगे।

माननीय अध्यक्ष : शांति, शांति। अब बार-बार टीका-टिप्पणी नहीं होनी चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, जैसा कि मैंने बताया, इस विधेयक में विवाह, दत्तकग्रहण, अभिभावकत्व, संयुक्त परिवार सम्पत्ति, महिला सम्पत्ति, इच्छापत्र हीन उत्तराधिकार, इच्छापत्रीय उत्तराधिकार और अनुरक्षण के बारे में हिंदू विधि में परिवर्तन और संहिताबद्ध करने की व्यवस्था है। जहां तक दत्तकग्रहण की बात है इस विधेयक के इस भाग का कोई विरोध नहीं किया गया है। अभिभावकरण सम्बन्धी भाग का भी विरोध नहीं किया गया कि···

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैंने दत्तकग्रहण सम्बन्धी कुछ उपबंधों का और उत्तराधिकार नियुक्ति के प्रावधान के न होने का विरोध किया था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : न ही महिला सम्पत्ति, इच्छापत्रहीन उत्तराधिकार और अनुरक्षण सम्बन्धी उपबंधों का विरोध किया गया। विधेयक के जिन उपबंधों का कुछ विरोध किया गया है, वे विवाह, संयुक्त परिवार सम्पत्ति और इच्छापत्रहीन उत्तराधिकार सम्बन्धी हैं। विधेयक के इन भागों के सम्बन्ध में भी एक या दो मुद्दों का ही अधिक विरोध किया गया है।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : महोदय, मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। आपने स्वयं विनिर्णय दिया था कि जब हम संशोधनों पर विचार करेंगे, उस समय इन सभी विषयों पर चर्चा की जा सकती है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य कृपया बैठ जायें। मेरे विचार में सदस्यों को थोड़ा धैर्य रखना चाहिए और जब अन्य सदस्य अपना विचार प्रस्तुत कर रहे हों, तो उनको हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। मंत्री महोदय को निर्बाध रूप से बोलने दिया जाना चाहिए और यदि माननीय सदस्य को कुछ कहना है, तो जब यहां पर विधेयक पर चर्चा होगी, तब उनको भी बोलने का अवसर दिया जायेगा।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : परन्तु महोदय, यदि आप हमें अनुमति न दें···

माननीय अध्यक्ष : मैं इस प्रकार हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं दे सकता।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : स्थिति को स्पष्ट करने के लिये··

माननीय अध्यक्ष : स्थिति स्पष्ट करने की अनुमति देने के बाद प्रत्येक वाक्य का उत्तर आरम्भ हो जाता है। मैं इस प्रकार की अनुमति नहीं दे सकता। (व्यवधान) अब माननीय सदस्य बिल्कुल हस्तक्षेप नहीं करेंगे जिससे मुझे इस प्रकार के व्यवधान या व्यवस्था के प्रश्न अथवा सुझाव को गंभीरता से लेने के लिये मजबूर न होना पड़े। परन्तु जब मैं प्रस्ताव को मतदान के लिए रखूं··

श्री एच.वी. कामत (सी.पी. एवं बिरार) : महोदय, क्या आपका यह कहना है कि विधेयक पर पुनः चर्चा होगी।

माननीय अध्यक्ष : खंडवार चर्चा होगी।

पट्टाभि सीतारमैया (मद्रास : सामान्य) : क्या मैं सम्मानपूर्वक एक सुझाव दे सकता हूं? यह विचारार्थ हो या नहीं—यह विचार किये जाने का प्रश्न स्वीकार किया जा रहा है। इसलिये विधेयक के प्रभारी मंत्री महोदय द्वारा जो भी वक्तव्य दिये जायें, वे निर्विरोध ही रहेंगे। और जब तक वे निर्विरोध रहेंगे, उन पर उचित मत प्राप्त नहीं किया जा सकता। माननीय प्रस्तावक कई घंटों तक अनुपस्थित रहे हैं और उनको माननीय सदस्यों द्वारा कही गयी बातों की पूरी जानकारी नहीं दी गयी है। उदाहरणार्थ वह कहते हैं कि दत्तकग्रहण के सम्बन्ध में कोई विरोध नहीं हुआ और यहां पर बैठे हुए एक सज्जन कहते हैं कि उन्होंने उन उपबंधों का विरोध किया था। इसलिये मैं मंत्री महोदय से कहना चाहूंगा कि वह अपने उत्तर को विवादास्पद न बनाएं।

माननीय अध्यक्ष : जहां तक मैंने मंत्री महोदय की बात को समझा है, वह अपनी बात को संक्षिप्त करने का प्रयास कर रहे हैं।

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया : नहीं।

माननीय अध्यक्ष : शांति, शांति। माननीय सदस्य हस्तक्षेप न करें। मैं इस बात को मानता हूँ कि उनको सभा में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का पूरा अधिकार है। वह ठीक हो सकता है, वह ठीक नहीं भी हो सकता है। इसलिये जब वह उत्तर दे रहे हैं, उनका उत्तर सुना जाना चाहिए। माननीय सदस्यों को तत्काल उठकर यह नहीं कहना चाहिए कि "यह वक्तव्य गलत है" या "वह वक्तव्य गलत है", क्योंकि फिर हम विवाद में फंस जायेंगे। उनको सुन लीजिए। लोकतंत्र का सर्वोत्तम तरीका विरोधी की बात को धैर्यपूर्व सुनना है।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : क्या हम दिये जा रहे गलत वक्तव्य का उत्तर नहीं दे सकते?

माननीय अध्यक्ष : इस समय कोई उत्तर नहीं देना है, क्योंकि विरोधी पक्ष को खंडवार वाचन के दौरान ऐसा करने का अवसर मिलेगा।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : वह अवसर तो उनको भी मिलेगा।

माननीय अध्यक्ष : यदि माननीय सदस्य ने अब हस्तक्षेप किया, तो मुझे उसको गंभीरता से लेना होगा। किसी प्रकार का कोई व्यवधान, हस्तक्षेप और टिप्पणी नहीं होनी चाहिए। विधि मंत्री को अपनी बात कहने, तथ्यों की अपनी व्याख्या करने, जैसा वह ठीक समझते हैं, का अधिकार है। सम्भव है कि हम सब उससे सहमत न हो (व्यवधान) शांति, शांति। अब कोई उत्तर और तर्क नहीं दिये जायेंगे। मैं किसी प्रकार के व्यवधान डालने की अनुमति नहीं दूंगा। माननीय विधि मंत्री अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं यह कह रहा था कि विधेयक के पांच भागों का लगभग कोई विरोध नहीं किया गया। मैंने विवाह, संयुक्त परिवार सम्पत्ति और इच्छापत्रहीन उत्तराधिकार से सम्बन्धित तीन भागों के सम्बन्ध में, इस व्यवस्था का विरोध करने वाले सदस्यों के दृष्टिकोण को जितना मैंने समझ पाया है मैंने देखा है कि उनका विरोध उन पूरे भागों का नहीं, बल्कि कुछ मुद्दों पर केंद्रित था। विवाह के सम्बन्ध में, मैंने पाया कि उनका विरोध विवाह-विच्छेद को लेकर है। संयुक्त परिवार के सम्बन्ध में यह विरोध उत्तराजीविता के नियम पर केंद्रित है और इच्छापत्रहीन उत्तराधिकार के सम्बन्धों में उनका विरोध पुत्री के हिस्से पर संकेन्द्रित है। इसलिये यदि मुझे चर्चा का पूरा उत्तर देना है और इस विधेयक का विरोध करने वालों के तर्कों का उत्तर देना है, तो मैं अपने आपको इन तीन मामलों अर्थात् विवाह-विच्छेद, उत्तरजीविता के नियम और पुत्री के हिस्से तक सीमित रखूंगा। मैं कह सकता हूँ कि मैंने विधेयक के लिये पूरी तैयारी की हुई है। परन्तु माननीय प्रधानमंत्री द्वारा दिये गये वक्तव्य को देखते हुए, मैं अब किसी विवाद में पड़ना अनावश्यक समझता हूँ। मैं माननीय प्रधानमंत्री द्वारा दिये गये सुझाव का स्वागत करता हूँ और मैं उनके द्वारा दिये गये सुझाव को उसकी पूरी सीमा तक पहुँचाने का वचन देता हूँ। परिणामस्वरूप मैं इस स्थिति में इन सभी बातों का विस्तृत उत्तर नहीं दे रहा। महोदय, जैसा कि आपने सुझाव दिया है, मैं भी अपने उत्तर को बाद में ही देने के लिये सुरक्षित रखता हूँ।

यहाँ केवल एक ही मुद्दा है, जिसके विषय में कुछ कहना आवश्यक समझता हूँ, जिससे सभा को देश में व्याप्त स्थिति की जानकारी मिल सके। इस बात को ध्यान में रखना होगा कि भारत को एक राज्य और एक गणतंत्र का रूप दिये जाने के परिणामस्वरूप इसके राज्य क्षेत्र में हिंदू विधान से सम्बन्धित अनेक संहिताएं आ गयी हैं। एक बड़ौदा राज्य है, जिसकी अपनी हिंदू संहिता है जो भारत के प्रांतों में प्रचलित हिंदू विधान से भिन्न है। अब वह राज्य बम्बई प्रांत का अंग बन गया है। इसी प्रकार ट्रावनकोर और कोचीन, जो भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अधीन भारत की राज्यक्षेत्र सीमा तथा प्रभुत्व के बाहर थे, अब भारत के अंग बन गये हैं। मैसूर में सम्पत्ति पर महिलाओं के अधिकार के विषय पर अपनी हिंदू संहिता है, जो अंग्रेजों के भारत के प्रांतों में प्रचलित विधि से बिल्कुल भिन्न है, वह भी भारत का अंग बन गया है। इसलिये 26 जनवरी, 1950 को जब गणतंत्र में प्रवेश करेंगे हिंदू विधान की अनेक भिन्न-भिन्न प्रणालियां हमारे सामने होंगी जिनका बेहतरीन तरीके से समन्वय करना बहुत ही आवश्यक होगा। यह कैसे सम्भव होगा? उदाहरणार्थ बम्बई प्रांत में प्रशासन चलाने के लिये हिंदू विधान की दो प्रणालियां होंगी, एक जो बड़ौदा की सीमा के अन्दर प्रचलित होगी और एक शेष प्रान्त में प्रचलित होगी जबकि दोनों राज्य क्षेत्र एक ही देश के एक राज्य के अंग बन चुके हैं। यही स्थिति अन्य राज्य क्षेत्रों के बारे में भी होगी। उदाहरण के लिये कल्पना कीजिए, भारत के कुछ भाग, पुर्तगाल या फ्रांस के प्रभुत्व में हैं, और जिनके बारे में हमें आशा है कि हम उनको अपने अधीन ले आयेंगे। पर वहां भी हिंदू विधान की प्रणालियां भिन्न-भिन्न हैं, लेकिन जब वे भाग हमारे पास आ जाएंगे तो भी वही समस्याएँ हमारे सामने

आएँगी। पर उस कानून का क्या होगा जो गोआ के हिंदू अपने साथ लाएंगे? क्या हम उनको अपना कानून जारी रखने की अनुमति देंगे? क्या हम वही कानून लागू करेंगे जो उन पर उस समय लागू होता है? अथवा हम कानून की एक ऐसी प्रणाली विकसित कर रहे हैं जो दोनों को स्वीकार्य हो? इसलिये भारत की अखंडता के हित में, हमें हिंदू विधान में परिवर्तन और संहिताकरण की समस्या से शीघ्रातिशीघ्र निपटना होगा और मैं सभा को सुझाव देना चाहता हूँ कि यह एक ऐसी समस्या है जिसको यदि हम चाहते हैं कि विभिन्न प्रकार के लोगों में, जो आयेंगे और आकर भारतीय गणतंत्र के नागरिक बनेंगे, समरसता बनी रहे तो न इसे स्थगित किया जा सकता है और न ही इससे बचा जा सकता है।

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया : संहिताकरण स्वीकार कर लिया गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं सभा का ध्यान एक और मुद्दे की ओर दिलाना चाहता हूँ जो मुझे बहुत महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। सभा, विशेषकर वे लोग जो इस विधेयक का विरोध करने में जुटे हैं, भारत के संविधान जिसको हमने हाल ही में पारित किया है के अनुच्छेद 15 में उल्लिखित उपबंधों को बिल्कुल भूल गये प्रतीत होते हैं, जिसमें मूल अधिकारों के अंतर्गत निश्चित और स्पष्ट शब्दों में लिखा है:–

"राज्य किसी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या उनमें से किसी एक आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।"

जिस किसी व्यक्ति ने हिंदू विधान को ध्यानपूर्वक पढ़ा है, वह स्वीकार करेगा कि हिंदू विधान में अनेक दोषों के अतिरिक्त कुछ ऐसे सिद्धांत हैं जो स्वर्ण जातियों और शूद्र जातियों में भेदभाव करते हैं। वे पुरुष हिंदू और महिला हिंदू के बीच भी भेदभाव करते हैं।

श्री महावीर त्यागी : हिंदू और मुसलमान में भी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अतः यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हिंदू विधान के कुछ भागों और संविधान के उपबंधों का परस्पर विरोध रहेगा। परन्तु यह तो बहुत कम कहना है। इससे आगे भी विचार करना है। ऐसा नहीं है कि अनुच्छेद 15 में लगाई गई पाबन्दियां आगामी विधियों, जो संसद तथा विधान परिषदों द्वारा बनायी जायेंगी, पर भी लागू होंगी। संविधान में इसे आगे और भी लिखा है और अनुच्छेद 13 में जिसे मैं सभा को पढ़कर सुनाना चाहता हूँ, लिखा है "भारत के राज्य क्षेत्र में इस संविधान के प्रारम्भ से तत्काल पूर्व प्रवर्तन में सभी विधियां, जहां तक वे इस भाग में उपबंधों से असंगत है, असंगति होने की सीमा तक रद्द हो जायेंगी।"

इसलिये एक वकील की दृष्टि से देखते हुए, मुझे इस बात में बिल्कुल संदेह नहीं है कि जब तक हिंदू विधान को संहिताबद्ध नहीं किया जायेगा, बल्कि उसको अनुच्छेद 15 के उपबंधों के अनुरूप बदला नहीं जायेगा, अनुच्छेद 13 की दृष्टि से न्यायपालिका हिंदू

विधान के कुछ भागों को रद्द घोषित कर देगी। क्या सभा चाहती है कि संविधान के अनुच्छेद 13 के उपबंधों के अनुरूप न्यायपालिका हिंदू विधान का संवीक्षण करे और जब मामले न्यायालय में जायें तो हिंदू विधान के नियमों को एक-एक करके रद्द कर दिया जाये या सभा स्वयं हिंदू विधान में इस प्रकार सुधार लाना चाहेगी कि वह अनुच्छेद 15 के साथ संगत बैठे और अनुच्छेद 13 के अधीन रद्द घोषित किये जाने के खतरे से बच जाये? यदि सभा यह नहीं चाहती कि न्यायपालिका हिंदू विधान के नियमों को एक-एक करके रद्द घोषित करे, बल्कि वह हमारे संविधान के प्रावधानों के अनुसार एक समेकित प्रणाली बन जाये तो मेरा निवेदन यह है कि इस मामले के विचार को स्थगित करना सभा की बहुत बड़ी गलती होगी।

महोदय, मेरे विचार में ये अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण हैं और इसलिये सभा को इस मामले पर विचार को न स्थगित करना चाहिए और न ही उसमें विलम्ब करना चाहिए। इसलिये मुझे आशा है कि सभा मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करेगी और इस विधेयक पर विचार के चरण को पूरा कर लेगी।

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया : क्या मैं स्पष्टीकरण के लिए एक बात पूछ सकता हूँ? डॉ. अम्बेडकर ने कहा है कि ऐसे सभी उपबंध जो संविधान के किसी अनुच्छेद जिसको उन्होंने उद्धृत किया है, के साथ मेल नहीं खाते, रद्द कर दिया जायेगा। क्या उनका विचार यह है कि 26 जनवरी को, जब नया संविधान लागू हो जायेगा और उनके द्वारा उद्धृत अनुच्छेद भी, निश्चित रूप से प्रवर्तन में आ जाएगा, उस दिन हिंदू विधान का यह सारा भाग रद्द हो जायेगा और वह स्थान रिक्त हो जायेगा? क्या इससे अधिक अनुचित कल्पना की जा सकती है?

माननीय अध्यक्ष : शांति, शांति! माननीय सदस्य की यह अपनी राय हो सकती है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैंने, अपने मित्र डॉ. पट्टाभि सीतारमैया के सम्बन्ध में बहुत आत्म संयम से काम लिया है। वह मुझसे भी कुछ सुन लेते, यदि मैंने वह सब कुछ कह दिया होता, जो मैं कहना चाहता था।

माननीय अध्यक्ष : मूल प्रस्ताव के सम्बन्ध में दो संशोधन हैं: हिंदू विधान की कुछ शाखाओं में संशोधन करने और संहिताबद्ध करने के लिये, जैसे कि प्रवर समिति ने अपने प्रतिवेदन में कहा है। विधेयक पर विचार किया जाये। मैं पहले संशोधनों को सभा के मतदान के लिये रखूंगा। पहला संशोधन श्री नजीरुद्दीन अहमद का है जिसमें विधेयक को वर्ष 1949 के अन्त तक अभिमत प्राप्त करने के लिये परिचालित करने का सुझाव दिया गया है। तिथि बढ़ाने की बात में बहुत विलम्ब हो चुका है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय, क्या मैं स्थिति स्पष्ट कर सकता हूँ?

माननीय अध्यक्ष : नहीं! प्रश्न यह है:

"कि विधेयक को, वर्ष 1949 के अन्त तक, उस पर अभिमत प्राप्त करने के लिये, परिचालित किया जाये।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

माननीय अध्यक्ष : दूसरा संशोधन। प्रश्न यह है : "कि मूल विधेयक के संदर्भ में और आगे विचार करने के लिये विधेयक को पुनः उसी प्रवर समिति के पास भेजा जाये जिस प्रकार वह अप्रैल 1948 को भेजा गया था।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं मतविभाजन चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : बहुत अच्छा। मैंने देखा है कि पक्ष में पांच और विपक्ष में शेष सभा सदस्य हैं। प्रस्ताव बहुमत से गिर गया। अब मैं मूल प्रस्ताव को मतदान के लिये रखूंगा।

प्रश्न यह है:–

"कि हिंदू विधान की कुछ शाखाओं में संशोधन करने और उसको संहिताबद्ध करने के लिये, जैसे कि प्रवर समिति के प्रतिवेदन में है, विधेयक पर विचार किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : महोदय कुछ ने विपक्ष में मतदान किया है।

माननीय अध्यक्ष : मैं देख रहा हूँ कि उनकी संख्या 6 या 7 है। अधिकांश सदस्य प्रस्ताव के पक्ष में हैं।

---

*हिंदू विवाह वैधता
(संशोधन विधेयक)
(धारा 2 का संशोधन)

श्री हिमातसिंगका (पश्चिम बंगाल) : मैं प्रस्तावित करता हूँ कि हिंदू विवाह वैधता अधिनियम, 1949 (धारा 2 का संशोधन) में संशोधन करने के लिये विधेयक को प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाये।

माननीय अध्यक्ष : प्रश्न यह है:–

"कि हिंदू विवाह वैधता अधिनियम, 1949 (धारा 2 का संशोधन) में संशोधन करने के लिये विधेयक को प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

श्री हिमातसिंगका : मैं विधेयक पेश करता हूँ।

**हिंदू संहिता–जारी

माननीय अध्यक्ष : इस कार्य-सूची की आगामी मद है, डॉ. अम्बेडकर का प्रसतव: हिंदू विधान की कुछ शाखाओं में संशोधन और संहिताकरण के लिये विधेयक जैसे कि प्रवर समिति के प्रतिवेदन में है, पर आगे विचार किया जाए।

अब, इस संदर्भ में अनेक संशोधन हैं। मैं एक-एक सदस्य को आमंत्रिक करूँगा।

श्री त्यागी (उत्तर प्रदेश) : इस मामले की सभा को कोई जानकारी नहीं थी। मेरे विचार में सदस्यों को कुछ समय दिया जाना चाहिये।

माननीय अध्यक्ष : शांति, शांति! एक समय पर एक व्यक्ति बोले। क्या माननीय विधि मंत्री को कुछ कहना है?

डॉ. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : इस पर विचार किया जाये।

माननीय अध्यक्ष : एक सुझाव है कि यह बात सदस्यों को अचानक पता चली है।

डॉ. अम्बेडकर : यह तो नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह विधेयक गत 15 दिन से कार्यसूची में प्रकाशित होता रहा है।

---

*सी.ए. (विधि) डी., खंड 7, भाग II, 12 दिसम्बर, 1950, पृष्ठ 1551

**सी.ए. (विधि) डी. 4, खंड 7, भाग II, 14 दिसम्बर, 1950, पृष्ठ 1780-93

श्री जे.आर. कपूर (उत्तर प्रदेश) : परन्तु जो सदस्य विधेयक में बहुत रुचि ले रहे हैं, उनकी शिकायत हो सकती है। श्रीमती रेणुका रे उपस्थित नहीं हैं और बहुत से अन्य सदस्य भी हैं, जो इस पर बोलने के इच्छुक हैं।

माननीय अध्यक्ष : मैं यह विचार कर रहा हूँ कि विभिन्न संशोधनों या स्थगत प्रस्तावों का चाहे जो भी परिणाम निकले, परन्तु जिन सदस्यों ने उन्हें भेजा है और वे अपनी सीटों पर नहीं हैं, और चूंकि अब अप्रत्याशित ढंग से इस पर विचार किया जाने लगा है, तो क्या ऐसी स्थिति में हमारे लिये उनको बुलाना उचित होगा। मुझे इसी बात की चिन्ता है। श्री रोहिणी कुमार चौधरी उपस्थित हैं। श्री नजीरुद्दीन भी यहां पर मौजूद हैं।

श्री आर.के. चौधरी (असम) : मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप हमें आधे घण्टे का समय दें, ताकि अन्य सदस्य भी उपस्थित हो जायें।

माननीय अध्यक्ष : चलो, आरम्भ करते हैं, मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद को बुलाऊंगा।

पंडित कुंजरू (उत्तर प्रदेश) : मेरा सुझाव यह है कि विधि मंत्री, जिन्होंने भिन्न-भिन्न वर्गों के साथ बातचीत की है, के वक्तव्य के द्वारा इस पर चर्चा आरंभ की जानी चाहिए। उन्होंने सम्मेलन में हुई चर्चा की संक्षिप्त रिपोर्ट भी परिचालित की है। परन्तु मेरा विचार है कि सभा के सभी सदस्य उनसे पूरी बात और उनके द्वारा प्रस्तावित संशोधन का संक्षिप्त ब्यौरा सुनना पसंद करेंगे। मेरे विचार मैं यह रास्ता ज्यादा बेहतर होगा और इससे सदस्यों को समय भी मिल जायेगा।

डॉ. अम्बेडकर : मेरे पास कहने को और कुछ नहीं है। मैंने एक वक्तव्य ध्यानपूर्वक तैयार किया था ताकि वह सत्र के आरम्भ में ही सदस्यों में परिचालित कर दिया जाये, जिससे सदस्यों को पूरी जानकारी मिल सके कि क्या-क्या बातें हुईं। बल्कि मुझे इस बात का खेद है कि हम सम्मेलन की कार्यवाही का शब्दशः रिकार्ड नहीं रख सके, क्योंकि अनेक सदस्य भिन्न-भिन्न भाषाओं में बोले थे। कुछ सदस्य हिंदी में बोले, कुछ अंग्रेजी में, कुछ गुजराती, कुछ मराठी और कुछ संस्कृत में भी बोले थे। इसलिये शब्दशः रिकार्ड रखना, बिल्कुल असम्भव था और मेरे विचार में कुछ तमिल में भी बोले थे। इसलिये यह बिल्कुल असम्भव था कि किसी आशुलिपिक को कहते कि वह कार्यवाही को शब्दशः रिकार्ड करे। अन्यथा, यदि मैं ऐसा कर सकता तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। परिणामस्वरूप, मैंने स्वयं अपनी स्मरणशक्ति के अनुसार संक्षिप्त रूप से कुछ मुद्दे चर्चा के लिये सम्मेलन में प्रस्तुत किये थे। मैंने ये मुद्दे इस सभा में हुई चर्चा के आधार पर तैयार किये थे जिनमें सभा में प्रस्तुत भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण सम्मिलित थे। वे सम्मेलन में रखे गये थे। और उन पर बोलने के लिये सम्मेलन में किन मुद्दों पर अधिकांश वक्ताओं की सहमति थी और उसी के अनुसार मैंने मूल विधेयक में कुछ संशोधनों का सुझाव दिया है।

महोदय, आपको स्मरण होगा कि मैंने सभा की सहायता के लिये हिंदू संहिता के दो पाठ तैयार किये थे। एक में क्रमानुसार मूल धारा और नये संशोधनों का उल्लेख है, जिनको मैंने उसमें सम्मिलित करने का प्रस्ताव किया है ताकि उनको पूरा ब्यौरा मिल सके। मैंने एक अन्य तथ्य पुस्तिका भी तैयार की है, जिसमें दायीं ओर प्रवर समिति के भाग का मूल पाठ दिया गया है और बायीं ओर संशोधनों सहित नयी संहिता का पाठ है, ताकि जब कभी संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तुत हो, सदस्यों को पहले खंड के साथ-साथ नये खंड को भी पढ़ने का अवसर मिले और वे उनके अन्तर को समझ सकें। मेरा विचार है कि मैंने भरसक प्रयत्न किया है कि सभा के सदस्य अनौपचारिक समिति में चर्चा के परिणामस्वरूप परिवर्तित रूप में हिंदू संहिता के उपबंधों को ठीक से समझ सकें। यदि किसी माननीय सदस्य को कोई प्रश्न पूछना हो तो मैं विवरण में दी गयी जानकारी के अतिरिक्त जो भी सम्भव होगा बताऊंगा।

श्री ज्ञानी राम (बिहार) : माननीय विधि मंत्री ने बताया है कि इस विधेयक पर या दो दिन तक चर्चा होगी, फिर यह स्थगित हो जायेगा।

माननीय अध्यक्ष : पार्टी की बैठक में हुई चर्चा से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है।

श्री आर.के. चौधरी : क्या पार्टी की बैठक में हुई बातचीत के सम्बन्ध में मंत्री महोदय एक वक्तव्य देंगे।

माननीय अध्यक्ष : शांति! शांति। पार्टी की बैठक में हुई कार्यवाही पर यहां चर्चा नहीं की जा सकती।

श्री शिवन पिल्ले (ट्रावनकोर-कोचीन) : क्या मैं पूछ सकता हूँ कि क्या अब खंडवार चर्चा होगी और विधेयक के सिद्धांतों पर आम चर्चा समाप्त हो गयी है?

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य ने सम्भवतः विधेयक की प्रगति पर ध्यान नहीं दिया। विचारार्थ प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका है और अब विधेयक पर खंडवार चर्चा करना शेष है। मैं खंड 2 को सभा के मतदान के लिये रखूंगा परन्तु उससे पूर्व कुछ संशोधन हैं, अथवा चर्चा स्थगित करने के लिये, कुछ प्रस्ताव भेजे गये हैं। वह क्योंकि स्थगित प्रस्ताव हैं, इसलिये उनको पहले लेना होगा और लिये मैं श्री नजीरुद्दीन को बुला रहा हूँ कि यदि वह चाहे तो वह अपना प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकते हैं।

प्रधानमंत्री और विदेशी मंत्री (श्री जवाहर लाल नेहरू) : एक माननीय सदस्य ने मुझसे कोई प्रश्न पूछा था और सभा के लिये यह उचित ही होगा कि मैं उसका उत्तर दे दूँ, यद्यपि आपने उसको अनावश्यक करार दिया था। यह विधेयक इस प्रकार का है कि यदि हम इस पर खंडवार चर्चा करते हैं तो सामान्य तौर पर सभा का इसमें काफी समय लगेगा। यह विवादास्पद मामला है जिसमें लोगों की राय भिन्न-भिन्न है। फिर भी सरकार इसको बहुत महत्व देती है और चाहती है अब इस पर चर्चा की जाये। परन्तु हम महसूस करते

हैं कि परिस्थितियां कुछ ऐसी हैं कि चाहे हम प्रतिदिन इस पर चर्चा करते रहें, तो भी इस सत्र में इसको पारित करवाना संभव नहीं होगा। इसलिये सरकार का विचार है, बशर्ते कि आप इसका अनुमोदन करें तो हम आरंभिक अवस्था में उठाई गयी आपत्तियों का निपटान कर लें। एक ओर या दूसरी ओर, ताकि रास्ता साफ हो जाए। अन्यथा सत्र के दौरान इस पर सभा का और समय खर्च न करें।

माननीय अध्यक्ष : क्या मैंने स्थिति को ठीक से समझा है कि संशोधन अथवा प्रस्तावों को और काम स्थगित करके, पहले निपटाया जाना चाहिए और उसके बाद खंडवार चर्चा आरम्भ की जानी चाहिए।

संसदीय कार्य राज्य मंत्री (श्री सत्य नारायण सिन्हा) : जी, हाँ, यही बात है।

माननीय अध्यक्ष : अब इस बात को ध्यान में रखते हुए क्या स्थगन प्रस्ताव किया जाना आवश्यक है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल) : नहीं।

माननीय अध्यक्ष : यह बिना कोई भाषण दिये उसको औपचारिक रूप में प्रस्तुत कर दें जिससे हम अन्य कार्य कर सकें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं प्रस्ताव करता हूँ "कि हिंदू संहिता विधेयक पर चर्चा को इस प्रयोजन के लिये बुलाये जाने वाले संसद के विशेष सत्र के लिये स्थगित कर दिया जाये, जिससे सदस्य, विधेयक पर तथा उससे सम्बन्धित अनेक सरकारी संशोधनों पर सम्पूर्ण तरीके से विचार कर सकें।"

मैं अन्य विकल्प प्रस्तुत नहीं करना चाहता।

माननीय अध्यक्ष : क्या वह अनिवार्य रूप से विशेष सत्र ही चाहते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अपने कुछ विचार सभा के समक्ष रखना चाहता हूँ और शेष मामला सरकार पर छोड़ देना चाहता हूँ। इसका विरोध या बाधा डालने से कोई सम्बन्ध नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : मेरा अभिप्राय यह है कि प्रस्ताव का क्या रूप होना चाहिए। क्या वह अगले सत्र तक स्थगित करना चाहते हैं। इतनी-सी बात है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उस स्थिति में, मैं आपकी अनुमति से विकल्प भी प्रस्तुत करना चाहूंगा। मैं प्रस्ताव करता हूँ:–

"कि हिंदू संहिता विधेयक पर चर्चा को आगामी बजट सत्र के दौरान किसी तारीख तक के लिये स्थगित किया जाये।"

और

"कि हिंदू संहिता विधेयक पर चर्चा को बजट सत्र समाप्त होने के बाद किसी तारीख तक के लिये स्थगित किया जाये।"

मैं इस बात को पूरी तरह सरकार पर छोड़ता हूँ कि प्रस्ताव किस रूप में लिया जाये। माननीय प्रधानमंत्री ने स्थिति को स्पष्ट कर दिया है कि हम कुछ आपत्तियों पर विचार कर लें और बाद में किसी उपयुक्त समय पर खंडवार चर्चा आरम्भ कर लेंगे। इस विचार से मैं पूरी तरह संतुष्ट हूँ। इस सम्बन्ध में विचार करना और उपयुक्त तिथि निर्धारित करना सरकार का काम है।

निःसंदेह हमने विधेयक के सिद्धांतों को तकनीकी रूप में स्वीकार किया था, परन्तु एक समझौते के साथ ऐसा किया था, यद्यपि कार्रवाई वृतान्त में इस बात को सम्मिलित नहीं किया गया। माननीय विधि मंत्री ने वचन दिया था कि वह हिंदू विधान की जानकारी रखने वाले जन प्रतिनिधियों से राय लेंगे और विधेयक में संशोधनों का सुझाव देंगे। जैसा कि मैंने पहले अनुरोध किया था, यद्यपि प्रथम पाठ पारित हो गया है, परन्तु इसके साथ शर्त रखी गई थी कि सरकार उपयुक्त संशोधन सूत्रों का पता लगायेगी और सभा के सामने रखेगी और वे सूत्र दोनों पक्षों को स्वीकार्य होंगे। फिर भी मैंने देखा है कि माननीय विधि मंत्री ने बहुत महत्वपूर्ण और बड़ी संख्या में संशोधन सभा-पटल पर रखे हैं। मैंने यह भी देखा है कि सदस्यों ने भी बड़ी संख्या में संशोधन सभा-पटल पर रखे हैं। पहले से ही 17 सूचियां इकट्ठी हो गयी हैं और समाचार पत्रों में प्रकाशित रिपोर्टस से पता चलता है कि सरकार ने खंडवार चर्चा के लिये एक अन्य अन्तिम सत्र बुलाने का निर्णय किया है। इस बात की कल्पना करने के ठोस कारण मौजूद हैं कि यदि यही हाल रहा तो बहुत से और संशोधन आयेंगे और इस स्थिति पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

मैं कहना चाहता हूँ कि ये मामले बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। खंडवार चर्चा के दौरान हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि सभा में विस्तृत मामले को लेकर काफी मतभेद हैं। इन परिस्थितियों में अच्छी बात यह होगी कि सरकार संशोधनों पर विचार करने के लिए सभा को काफी समय दे और समझौते के मुद्दों पर पहुंचे। माननीय विधि मंत्री ने बताया है कि उन्होंने अनेक लोगों के साथ परामर्श किया है परन्तु उन्होंने, जहां तक मुझे जानकारी है, सभा के विभिन्न समूहों जो विधेयक के सिद्धांतों के विरुद्ध है, के साथ विचार-विमर्श नहीं किया है। अनेक सदस्यों ने प्रथम वाचन के समय विरोध किया था, पर उसके साथ परामर्श नहीं किया गया है।

श्री त्यागी : उनमें सब हिंदू नहीं हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उनमें से कम से कम एक सदस्य हिंदू नहीं है और वह मैं हूँ। बात यह है कि इन सभी मामलों पर सभा में उपयुक्त तरीके से न चर्चा की जा

सकती है और न निर्णय लिया जा सकता है। वे विधेयक की तह तक जाते हैं। प्रत्येक खंड लगभग नया और महत्वपूर्ण विषय है। प्रत्येक खंड पर विस्तृत रूप से विचार करने की आवश्यकता है। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि सरकार को हमें समय देना चाहिए और गोल मेज सम्मेलन में बैठने के लिये तैयार होना चाहिए, जिससे सभी मतभेदों का समाधान निकाला जा सके और एक ऐसा विधेयक तैयार किया जा सके, जो सभा को काफी हद तक स्वीकार्य हो। इन विषयों पर सभा में जल्दबाजी में निर्णय नहीं लिया जा सकता।

इस बीच बड़ी-बड़ी घटनाएं हो चुकी हैं। कई भारतीय राज्य शामिल हो गये हैं। उनकी राय नहीं ली गयी। मेरे विचार में कृषि भूमि इस विधेयक के अधीन आ गयी है। इससे एक नयी स्थिति हो गयी है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि सरकार की ओर से अनेक संशोधन आ रहे हैं, भौगोलिक दृष्टि से क्षेत्र का भी विस्तार हो गया है और विषय भी बढ़ गये हैं, मेरे विचार में पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए जिससे माननीय सदस्य विधेयक पर पूर्ण रूप से विचार कर सकें। इन मतभेदों को दूर करने के लिये कोई समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। ताकि कोई ऐसा सूत्र तैयार किया जा सके जो सब को नहीं तो कम से कम बड़ी संख्या के लोगों को स्वीकार्य हो। इस प्रकार के विवादास्पद विधान पर विचार के लिये हमें काफी समय मिलना चाहिए। प्रथम वाचन के दौरान मैंने जो दृष्टिकोण रखा था वह इस बात को देखते हुए बिल्कुल सही था कि उस समय हिंदु समुदाय का ध्यान व्यापक रूप से इस ओर नहीं दिलाया गया था। मेरी अपील इस लिहाज से भी उचित सिद्ध होती है कि सरकार स्वयं बड़ी संख्या में महत्वपूर्ण संशोधन लायी है। मेरा काम हो गया है। मैंने उस समय सोचा था कि मैं कुछ दोषों की ओर ध्यान दिला कर, जिन पर शायद अन्यथा किसी का ध्यान न जाता, अपने कर्तव्य का निर्वाह कर रहा हूँ। किस प्रकार की विधि इस सभा और हिंदू समुदाय के लिये ठीक होगी, यह सोचना मुख्य तौर पर हिंदुओं का काम है। मुख्य रूप से इसमें मेरी कोई रुचि नहीं है कि हिंदू संहिता विधेयक किस रूप में पारित हो। मेरा काम तो कुछ व्यावहारिक बातों की ओर ध्यान दिलाना था और संशोधनों के बारे में सुझाव देना था। मेरे विचार में सरकार को इन बातों की ओर ध्यान देना चाहिए और हमें बताना चाहिए कि वे क्या करना चाहते हैं और मैं विधेयक को पारित करवाने में रचनात्मक सहयोग देने के लिये तैयार हूँ। मेरी व्यक्तिगत रूप से इसमें कोई रुचि नहीं है कि विवादास्पद की सही शक्ल क्या होगी यद्यपि ऐसी बात भी नहीं कि मैं उसमें बिल्कुल रुचि नहीं रखता। मेरा निवेदन यह है कि ये ऐसी बातें हैं कि इनसे सरकार महसूस करेगी कि इनके लिये पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए और मतभेदों को दूर करने लिये कोई समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि कोई ऐसी संहिता तैयार की जा सके जो सभी अधिकांश सदस्यों को काफी हद तक स्वीकार्य हो। मुझे इतना ही कहना है।

श्री सिधवा (मध्य प्रदेश) : महादेय, मैं एक जानकारी चाहता हूँ। माननीय सदस्य के दो संशोधन थे, एक अनिश्चित काल के लिये स्थगन के बारे में था और...

माननीय अध्यक्ष : मैं इसकी अनुमति नहीं दे रहा। मैं यह विचार कर रहा था कि प्रस्ताव का सबसे अच्छा रूप क्या हो सकता है। एक विशेष सत्र बुलाने का है और दूसरा बजट सत्र में कोई तिथि निश्चित करने का है। तीसरा विकल्प बजट सत्र समाप्त होने के बाद की तिथि का है। क्या हम अगले सत्र तक स्थगित करने का सुझाव रख सकते हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं इस बात को पूरी तरह सरकार पर छोड़ता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : निःसंदेह सामान्य संशोधन आगामी सत्र तक स्थगित रहेगा। क्या मैं यह कहूँ : "कि हिंदू संहिता विधेयक पर वाद-विवाद आगामी बजट सत्र के दौरान किसी तिथि तक अथवा उसे बाद की किसी तिथि तक के लिये स्थगित किया जाये?"

डॉ. अम्बेडकर : जहां तक उद्देश्य का सम्बन्ध है, सदस्यों तथा सरकार और अन्य लोगों के बीच कोई विवाद नहीं है, वे इस विषय पर सरकार के विचार के साथ पूरी तरह सहमत हैं कि विधेयक का अध्ययन करने के लिये सदस्यों को और समय दिया जाये और वे भली-भांति विचार करने के बाद अपनी राय दें, जैसा कि प्रधानमंत्री ने अभी कहा है। विधेयक पर खंडवार चर्चा के मामले में सरकार का सिलसिलेवार चलने का कोई इरादा नहीं है। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि हिंदू संहिता विधेयक पर आगामी सत्र के दौरान जब भी वे चाहे, विचार करने की बात सरकार पर छोड़ दी जाये। वे चाहें, तो विशेष सत्र बुला लें, वे बजट सत्र की अवधि अधिक रख सकते हैं और उसके एक भाग का उपयोग हिंदु संहिता विधेयक के लिये कर सकते हैं अथवा सत्र के बाद कोई अन्य सत्र बुला सकते हैं। मैं किसी प्रस्ताव विशेष द्वारा सरकार को विवश नहीं करना चाहता। जैसा कि मैंने कहा मैं इस सत्र में विधेयक पास करवाने का इच्छुक नहीं हूँ। यह बिल्कुल असम्भव है। सम्भवतः यह बात बिल्कुल अनुचित भी है। फिर भी मैं इस प्रस्ताव का विरोध करना चाहता हूँ क्योंकि मैं नहीं चाहता कि श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के परिणामस्वरूप विधेयक पर चर्चा को स्थगित किया जाये। सरकार ने एक आश्वासन दिया है और सरकार उस पर पाबंद रहेगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे यह बात समझ में नहीं आती कि इस वक्रता का निशाना मुझे क्यों बनाया जा रहा है।

माननीय अध्यक्ष : इसलिये मुझे प्रस्ताव के स्वरूप पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

डॉ. अम्बेडकर : उनको अपने सभी प्रस्ताव प्रस्तुत करने दीजिए। हम सबको अस्वीकार कर देंगे।

श्री त्यागी : अथवा हम पिछले प्रस्ताव को प्रस्तुत करें और इस प्रस्ताव को स्थगित कर दिया जाये।

माननीय अध्यक्ष : मैं नहीं समझता कि ऐसा करना आवश्यक है। अच्छा यदि मैं यह कहूँ कि मामले को स्थगित किया जाता है और हम अगले कार्य पर विचार करें।

डॉ. अम्बेडकर : क्या मैं सुझाव दूं कि मेरे विचार में यह बहुत अच्छा होगा, यदि आप श्री नजीरुद्दीन अहमद के प्रस्ताव को निपटाने के बाद...

श्री नजीरुद्दीन अहमद : आप मुझे ही निपटा दें।

डॉ. अम्बेडकर : यदि आप इसको निपटाने के बाद इतना कह दें कि खंड 2 विधेयक का अंग बना, तो मैं स्वयं प्रस्ताव करूंगा कि विधेयक पर आगे विचार किया जाना, अब स्थगित कर दिया जाये। मैं हिंदू संहिता विधेयक को सरकारी कार्य-सूची की अन्तिम मद बनाने को तैयार हूँ।

श्री आर.के. चौधरी : मैंने एक संशोधन रखा था यद्यपि मैं बता नहीं सकता कि उसकी शब्दावली क्या है क्योंकि मेरे पास इस समय कागजात नहीं हैं। मैं इस विषय पर तैयार नहीं था। परन्तु जहां तक मुझे याद है मेरा प्रस्ताव यह था कि हिंदू संहिता विधेयक पर विचार के लिए विशेष सत्र बुलाया जाये। मेरी शिकायत इतने व्यस्त सत्र में इस प्रकार की चर्चा लाये जाने के विरुद्ध है कि व्यस्तता के कारण हम इस विषय पर अध्ययन करने के लिए समुचित समय नहीं निकाल पा रहे। इसलिये मैं चाहता हूं कि इस विषय पर विचार करने के लिये विशेष सत्र बुलाया जाये।

श्री एम.ए. आयंगर (मद्रास) : आखिरकार श्री नजीरुद्दीन अहमद के प्रस्ताव में इतना ही तो कहा गया है कि सदस्यों को पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए। और प्रधानमंत्री भी इस बात पर सहमत हैं। इसलिये मैं नजीरुद्दीन अहमद से अपने प्रस्ताव पर जोर न देने का अनुरोध करूंगा। अब प्रधानमंत्री के आश्वासन को देखते हुए इसको आगामी सत्र के किसी दिन तब के लिये स्थगित कर दिया जाये। आगामी सत्र के दौरान तिथि निश्चित करना या उसके तुरन्त बाद विशेष सत्र बुलाना सरकार का काम है। अब चूंकि हम सब इस बात पर सहमत हो गये हैं कि इस विधेयक पर खंडवार चर्चा अभी आरम्भ नहीं करनी है, तो मेरे विचार में दोनों पक्ष इससे संतुष्ट हैं। इसलिए प्रधानमंत्री के वक्तव्य को स्वीकार कर लिया जाये और श्री नजीरुद्दीन को अपने संशोधन पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है। इसलिये, इसको आगामी सत्र के किसी दिन तक के लिये स्थगित कर दिया जाये और इसका अर्थ यह होगा कि प्रधानमंत्री या सरकार कोई ऐसी तिथि निश्चित कर देंगे जो उपयुक्त और सुविधाजनक होगी।

डॉ. अम्बेडकर : क्या मैं पुनः हस्तक्षेप कर सकता हूँ? सभा में जो चर्चा हो चुकी है, मैं इसको दोहराना नहीं चाहता। हर बार जब यह विधेयक आता है, कुछ माननीय सदस्य विलम्ब करने वाला कोई प्रस्ताव रख देते हैं। अब यह बात समाप्त होनी चाहिए। हम ऐसी स्थिति में पहुंच गये हैं जब विधेयक पर खंडवार चर्चा आरम्भ की जानी चाहिए और इसके

लिये सांकेतिक रूप में सभा ने विधेयक पर खंडवार विचार करने की सहमति दे दी है। मैं अनुरोध करता हूँ कि आप खंड 2 को सभा में मतदान के लिये रख दीजिए और तत्पश्चात् हम चर्चा को स्थगित कर देंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरे विचार में इन वक्तव्यों का निशाना मैं ही हूँ। मैं यह वचन देने को तैयार हूँ कि मैं कोई विलम्बकारी प्रस्ताव नहीं लाऊंगा।

माननीय अध्यक्ष : विधि मंत्री और श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा अपनी-अपनी स्थिति स्पष्ट कर देने तक ही यह मामला सीमित नहीं है, बल्कि श्री चौधरी की भी समस्या है। इसलिये मेरा विचार यह है कि मैं प्रस्तावों को सभा में रख देता हूँ और वह उन पर मतदान कर सकते हैं।

श्री आर.के. चौधरी : परन्तु महोदय मैं अपने प्रस्ताव की व्याख्या करना चाहता हूं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य उनकी व्याख्या कर चुके हैं। इस पर और समय लगाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

श्री एम.ए. आयंगर : क्या मैं श्री चौधरी को बता सकता हूँ कि चूंकि उनके प्रस्ताव का विषय यही है कि इस प्रश्न को विशेष सत्र बुलाये जाने तक स्थगित किया जाये, हम कल्पना कर सकते हैं कि वह गिर गया है। विशेष सत्र बुलाना असम्भव बात है। फिर भी इस बात को सरकार पर छोड़ते हैं। वह कोई सुविधाजनक समय निश्चित करने के लिये बजट सत्र के साथ भी जोड़ सकते हैं। वह विशेष सत्र ही क्यों चाहते हैं? यदि सरकार आवश्यक समझेगी तो वह अपने आप बुला लेगी। विशेष सत्र बुलाने का वचन लेने मात्र से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

डॉ. पट्टाभि (मद्रास) : सरकार के रवैये में कुछ बदलाव आया है और वह इस विषय पर सोच-समझ कर विचार करने के अनुकूल हैं। मैं इस विषय का विस्तार से वर्णन नहीं करना चाहता। परन्तु मुझे माननीय विधि मंत्री के एक शिक्षक की तरह यह कहने पर निश्चय ही आपत्ति है कि इस प्रकार स्थगन की मांग को स्वीकृति नहीं दी जायेगी। यह स्वीकृति दी जानी चाहिए। विरोध के उचित तरीकों का उपयोग करने का प्रत्येक सदस्य को अधिकार है। मैं बालफोर के कथन में विस्तृत रूप से नहीं जाना चाहता, जिसने कहा था कि सरकार का विरोधी, यथा सम्भव सब प्रकार के उचित साधनों का उपयोग करके विरोध कर सकता है और यदि आवश्यक हो तो गलत तरीकों से भी विरोध कर सकता है। मैं केवल इतना कहना चाहूंगा कि जब प्रधानमंत्री ने अपनी असीम बुद्धिमत्ता से स्वीकार कर लिया है कि दो प्रकार की विचारधारा है और उन्होंने खुले दिन से और उचित तरीके से प्रस्ताव के स्थगन को स्वीकार कर लिया है, इस बात को ध्यान में रखते हुए माननीय विधि मंत्री का प्रोफेसर, शिक्षक और धर्माध्यक्ष जैसा व्यवहार वांछनीय नहीं है। इससे अलगाव की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा जो लगभग शांत हो गई है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जिस विरोधी पक्ष की कल्पना की जाती है, वह अब यहां पर नहीं है।

श्री जवाहर लाल नेहरू : मैं इस बात को पूरी तरह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि विधि मंत्री ने जो कुछ कहा है, मैं उनके प्रत्येक शब्द से सहमत हूँ। प्रत्येक व्यक्ति महसूस करता है कि इस विषय पर विचार करने के लिये पूरा समय दिया जाना चाहिए और इसीलिये हमने सभा को यह सुझाव देने का निर्णय किया है कि खंडवार चर्चा बाद में हो जायेगी। हमको प्रस्ताव के स्वरूप के बारे में निर्णय कर लेना चाहिए। यदि यह विस्तृत प्रस्ताव है और यदि माननीय सदस्य चाहते हैं कि उस पर विचार किया जाये, तो उस पर अभी विचार कर लेना चाहिए। हम उस प्रस्ताव को स्थगित नहीं करना चाहते। मैं किसी प्रस्ताव को रोकना नहीं चाहता। यदि हमारे समक्ष विस्तृत प्रस्ताव है, तो उस पर निर्णय अभी और आज ही कर लेना चाहिए।

पंडित मालवीय (उत्तर प्रदेश) : हम जानते हैं कि इस मुद्दे पर भारी मतभेद हैं, इस सभा के विभिन्न समूहों के बीच अत्यधिक मतभेद हैं। हमारे प्रधानमंत्री का व्यावहारिक दृष्टिकोण है जैसा कि हम उनसे सदा आशा करते हैं, उन्होंने इस मामले में भी हमारा नेतृत्व किया है और कहा है यह विवादास्पद मामला है जिस पर पर्याप्त समय देना होगा। क्या मैं इस बात की अपील कर सकता हूँ कि चूंकि यह मामला स्थगित किया जाना है, अत: किसी प्रस्ताव पर या धारा पर चर्चा जारी रखने का कोई अर्थ नहीं होगा। क्योंकि इस मामले पर बहुत अधिक मतभेद हैं और हिंदू संहिता पर अब विचार करने से भी उनके अधिनियम की तिथि आगे नहीं बढ़ सकती। क्या मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन कर सकता हूं कि यदि हम इस मामले को यहीं का यहीं छोड़ देते हैं, तो किसी धारा या विचार का महत्व कम नहीं हो जायेगा। यदि विधेयक पर विचार करने का इरादा होता और वास्तव में कोई प्रगति होती तो मैं कुछ नहीं कहता, क्योंकि फिर तो सभी सदस्यों को अपने विचार व्यक्त करने का अवसर मिलता है और तब सभा सामूहिक बुद्धिमत्ता से जो भी निर्णय करती, वही विधि पुस्तक में आ जाता। परन्तु अब सुझाए गये कार्यक्रम के अनुसार कोई यथार्थ प्रगति नहीं होगी। मेरा सुझाव यह है कि देश में व्याप्त भारी चिन्ता और विरोध की स्थिति और गहरी या बिगड़नी नहीं चाहिए। मुझे पता है कि दुर्भाग्य से कुछ लोगों का ऐसा भी विचार है कि देश कुछ भी सोचे, इसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। परन्तु एक दूसरा विचार यह है कि प्रश्न के प्रत्येक पहलू पर भली-भांति विचार करना चाहिए और उसका आदर करना चाहिए। मैं अधिक विस्तार में नहीं जाना चाहता। परन्तु मैं सरकार से अवश्य अनुरोध करूंगा कि उस पर क्या निर्णय किया जाये। माननीय विधि मंत्री का विचार यह प्रतीत होता है कि सभा संवैधानिक रूप से या कानूनी रूप से नहीं, बल्कि नैतिक रूप से इस स्थिति से वचनबद्ध है कि विधेयक को स्थगित करवाने के विचार से कोई विलम्बकारी प्रस्ताव नहीं लाना चाहिए...

डॉ. अम्बेडकर : यही बात है।

माननीय अध्यक्ष : यही बात प्रतीत होती है। मेरे विचार में सदस्यों के संवैधानिक अधिकारों को सीमित करने का उनका कोई इरादा नहीं है। इसलिये मेरा सुझाव यह है कि खंड दो को सभा में मतदान के लिये रखने और फिर मामले को स्थगित करने के बजाय, हम विधयेक के खंड सम्बन्धी प्रस्ताव को रखे बिना सभा को स्थगित कर देते हैं और नैतिक वचनबद्धता के रूप में एक घोषणा कर देते हैं कि किसी भी विषय पर चर्चा को स्थगित करवाने के प्रयोजन से ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं लाया जायेगा।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं-नहीं।

माननीय अध्यक्ष : यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। जब विधि मंत्री इस बारे में वक्तव्य दे रहे थे, यद्यपि मैं उनकी बात को और तर्क की शक्ति को समझता था, मैं स्वयं अपनी अन्तिम राय व्यक्त नहीं कर रहा। भूल-चूक हो सकती है। किसी भी व्यक्ति को यह नहीं सोचना चाहिए कि वह प्रत्येक सदस्य को सभा में स्थगन प्रस्ताव लाने से, यदि वह चाहे तो, रोक सकता है। अध्यक्ष पीठ उसको मतदान के लिए रखने से इस आधार पर इन्कार कर सकता है कि वह विलम्बकारी प्रस्ताव है। परन्तु यह उस समय की परिस्थितियों पर निर्भर करेगा जब ऐसा प्रस्ताव लाया जायेगा। वस्तुतः मेरे विचार में इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता कि खंड 2 को मतदान के लिये रखने के बाद सभा को स्थगित कर दिया जाये। इसलिये, जैसा कि मैंने कहा है, मैं इस सभा के सदस्यों के लिये नैतिक वचनबद्धता के बारे में एक घोषणा कर दूंगा कि जहां तक इस विधेयक का सम्बन्ध है कोई विलम्बकारी प्रस्ताव न लाया जाये और तत्पश्चात् इस मामले को स्थगित कर दूंगा। इसलिये मैं बार-बार संवैधानिक मामला उठाये जाने के पक्ष में नहीं हूँ और न ही मैं चाहता हूँ कि यह मामला बार-बार उठे कि ऐसा प्रस्ताव लाया जा सकता है अथवा नहीं। मैं कार्य को स्थगित करने वाला हूँ और सरकार...

डॉ. अम्बेडकर : क्या ये प्रस्ताव ऐसे ही रहेंगे?

माननीय अध्यक्ष : ये प्रस्ताव निरर्थक हो जायेंगे।

डॉ. अम्बेडकर : इन प्रस्तावों की क्या स्थिति होगी?

माननीय अध्यक्ष : सदस्यों ने उन पर जोर नहीं दिया है। यदि वे उन पर जोर देते तो मैं उनको सभा में मतदान के लिये अवश्य रखता।

कुछ माननीय सदस्य : उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा।

माननीय अध्यक्ष : मैंने उनसे पूछा था।

श्री आर.के. चौधरी : अब चूंकि नैतिक प्रश्न, उठाया गया है, मैं चाहूंगा कि मेरा प्रस्ताव सभा के मतदान के लिये रखा जाये और सभा निर्णय करे कि क्या यह विलम्बकारी है या नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : फिर तो स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है। मैं उसको सीधे ही मतदान के लिये रख देता हूँ और फिर हम आगे बढ़ेंगे। मैं श्री आर.के. चौधरी के प्रस्ताव को सभा में मतदान के लिये रखने जा रहा हूँ।

श्री आर.के. चौधरी : महोदय, मैंने समझ-बूझकर और दोबारा विचार कर निर्णय किया है कि मैं अपने प्रस्ताव पर जोर नहीं देता।

माननीय अध्यक्ष : इसलिए, क्योंकि मामले पर अब खूब समझ कर विचार कर लिया गया है चलिए हम इसको स्थगित करते हैं और सरकार इसके लिये तिथि निश्चित करे...

कुछ माननीय सदस्य : उनको सभा की अनुमति से प्रस्ताव वापिस लेना चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : हमारा नियम यह है कि जब प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो अनुमति की आवश्यकता नहीं है।

श्रीमती दुर्गाबाई (मद्रास) : मैं जानना चाहती हूँ कि क्या यह स्थगन प्रस्ताव विचाराधीन है?

माननीय अध्यक्ष : अब सब कुछ निरर्थक हो गया है। जो स्थगन प्रस्ताव उन्होंने रखे थे, वे निरर्थक हो गये हैं। अब कुछ नहीं रहा। उनसे पूछ लिया गया है और वे इन पर जोर नहीं देते। जहाँ तक अन्य ऐसे सदस्यों का प्रश्न है, जिन्होंने ऐसे प्रस्ताव रखे थे, पर जब उनको प्रस्ताव रखने के लिये नाम पुकारा गया, तो वे उपस्थित नहीं थे। यह वह स्थिति है। अब वाद-विवाद को स्थगित किया जा रहा है। सभी लोगों को सदा के लिये बांधे रखना सम्भव नहीं है। यदि परिस्थितियां बनो, तो हम उनसे फिर मिलेंगे।

श्री त्यागी : केवल ऐसे व्यक्तियों से जिन्होंने प्रस्तुत किये हैं...

माननीय अध्यक्ष : दुर्भाग्य से माननीय सदस्य ने चर्चा को ठीक से नहीं समझा। मैंने कोई प्रस्ताव सभा के समक्ष नहीं रखा। जब तक मैं कोई प्रस्ताव सभा के समक्ष न रखूं, उस पर सभा के मतदान अथवा उसको वापस लेने का कोई प्रश्न ही नहीं है।

श्री त्यागी : तब इसमें नैतिक कर्तव्य की कोई बात नहीं?

माननीय अध्यक्ष : नैतिक कर्तव्य तो है।

श्री त्यागी : मैं ही अनैतिक बनना चाहूँगा।

श्रीमती दुर्गाबाई : प्रस्तावों को प्रस्तुत किया गया, परन्तु उन पर जोर नहीं दिया गया।

माननीय अध्यक्ष : ये प्रस्ताव बिल्कुल भी प्रस्तुत नहीं किए गये। मैंने उनको सभा के समक्ष नहीं रखा।

श्रीमती दुर्गाबाई : माननीय सदस्य ने प्रस्तुत किया, परन्तु उस पर जोर नहीं दिया।

माननीय अध्यक्ष : इससे क्या अन्तर पड़ता है? वह प्रस्तुत करें और उनके विरुद्ध मतदान हो तो क्या इसका अर्थ यह है कि ऐसा प्रस्ताव कभी दोबारा नहीं लाया जा सकता?

श्री त्यागी : केवल आज के लिये हम नैतिक रूप से बंधे हैं।

माननीय अध्यक्ष : नैतिक बंधन सदा रहा है। अब इस पर चर्चा न की जाए। हम कार्यसूची की अगली मद पर आते हैं।

श्रीमती रेणुका रे (पश्चिम बंगाल) : उठी।

माननीय अध्यक्ष : अब बात समाप्त हो गयी है और उस पर आगे कोई चर्चा नहीं हो रही।

प्रस्तावना

महाराष्ट्र इस मामले में सौभाग्यशाली कहा जायेगा कि यहां समाज सुधारों की लंबी परम्परा रही है। यूरोप में जिस तरह ईसाई धर्म ने राजा और रंक को ईश्वर की दृष्टि में समान बताकर वहां समानता के एक युग की शुरूआत की, उसी तरह ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम, गोरा कुम्भार तथा चोखा मेला जैसे संतों ने दया, समानता तथा उपासना की स्वतंत्रता के उपदेश देकर बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन किये। जाति की बाधाएं समाप्त की गई। महान मराठाक्षत्रप शिवाजी के नेतृत्व में मराठा शक्ति के उत्थान से यह साबित हो गया कि एक लोकप्रिय नायक राजा बन सकता है। राजनीतिक समानता का अभ्युदय शिवाजी के काल से ही हुआ। महाराष्ट्र के इन संतों ने धर्म में लोकतांत्रिक मूल्यों तथा जाति-वर्ग के बंधनों को तोड़ने का उपदेश किया। वारकरी संप्रदाय जाति-पाति को स्वीकार नहीं किया। वारकरी सम्प्रदाय के लोग भ्रातृत्व की सच्ची भावना को व्यक्त करने के लिए एक ही रोटी को बारी-बारी खाते और जुलूस में एक साथ चलते थे। ईश्वर की प्राप्ति का उनका ढंग समान था। वारकारियों के भक्ति आन्दोलन ने उपासना की स्वतंत्रता को विस्तृत और गहरे आयाम दिये।

संविधान का अनुच्छेद 25 इसी तरह के स्वतंत्रता की अनुमति प्रदान करना है। हिंदू आचार संहिता में डॉ. अम्बेडकर द्वारा लाये गये सुधारों को कमोबेश सबने अपना लिया है। उन्होंने हिंदुओं के लिए समान नागरिक संहिता की नींव रखी और इसे भारतीय समाज के अन्य वर्गों में भी लागू करने योग्य बनाया। हालांकि, धार्मिक विश्वासों तथा व्यवहारों में सुधारों की गति बहुत धीमी और स्वैच्छिक है। आशा है कि विभिन्न संप्रदायों के नेतृत्वकर्ता इस संबंध में डॉ. अम्बेडकर के द्वारा सुझाये गये दिशा-निर्देशों का लाभ उठायेंगे और वे देश में विभिन्न संप्रदायों के मध्य संवाद आरम्भ करेंगे ताकि कानूनों में अपेक्षित सुधार हो सके। धार्मिक और सामाजिक सुधारों ने महाराष्ट्रियन समाज में जागृति ला दी। हिंदू आचार संहिता के ढांचे के तहत इसमें और कानून सुधारों की गुंजाइश थी। वर्षों से हिंदू आचार संहिता में परिवर्तन होते आये हैं, तथा संप्रेषण के द्वार खुलते रहे हैं। विवाह, तलाक तथा उत्तराधिकार के बारे में हिंदू को संहिताबद्ध कर डॉ. अम्बेडकर ने हिंदू आचार संहिता को तर्कसंगत बनाया और इसे इसकी खोयी गरिमा वापस पुनः प्रदान की। डॉ. अम्बेडकर ने विवाह को एक संस्कार बनाये रखने का बल दिया और पारिवारिक मूल्यों के विकास को प्रोन्नत किया। संविधान की भावना के अनुरूप, संशोधित हिंदू आचार संहिता में व्यक्तियों को अपने धर्म का अनुपालन करने और उसका प्रचार

करने की अनुमति देता है। लेकिन जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने विशेषतः कहा– "राज्य को इस देश के सभी संप्रदायों के व्यक्तिक कानूनों में हस्तक्षेप का अधिकार है," और इसलिए, यह वैयक्तिक कानूनों को उदत्त बनाने का एक ठोस आधार है ताकि वैयक्तिक स्वतंत्रता को और अधिक व्यापक बनाया जा सके और ऐसी स्वतंत्रता देश की एकता का आधार बन सके।

हस्ता.

मुम्बई (मनोहर जोशी)

28 नवम्बर, 1995 मुख्यमंत्री

महाराष्ट्र राज्य

संपादकीय

प्रस्तुत खंड में हिंदू आचार संहिता के संहिताकरण के बारे में दिये गये डॉ. अम्बेडकर के भाषणों को लिया गया है। हिंदू आचार संहिता के विशेष उपांगों को संशोधित करने और उन्हें संहिताबद्ध करने से संबंधित विधेयक को एक प्रवर समिति को सौंपा गया था। इस समिति में सर अल्लादि कृष्णास्वामी अय्यर, डॉ. बक्शी टेकचन्द, श्री एच.वी. कामत, श्रीमती जी. दुर्गाबाई जैसे विख्यात न्यायविद् और सांसद विद् सहित कई अन्य व्यक्ति शामिल थे। प्रवर समिति के सदस्यों की सूची पढ़ने से ऐसा लगता है जैसे ख्याति प्राप्त भारतीयों की नामावली पढ़ी जा रही हो।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 तथा हिंदू विवाह अधिनियम,1955 हिंदू संहिता अधिनियम, जिनका यह विधेयक पूर्वगामी है—के पहले, हिंदू आचार संहिता प्राय: संहिताबद्ध नहीं था, यद्यपि इसके कुछ उपांगों जैसे संपत्ति पर हिंदू महिलाओं का अधिकार कानून,1937 विधायी हस्तक्षेप के विषय थे। भारतीय उच्च न्यायालयों तथा प्रिवी परिषद् के अनगिनत निर्णयों में उद्धृत हिंदू आचार संहिता विधान किये जाने का एक स्रोत था इसलिए आवश्यक था कि हिंदू आचार संहिता का समेकन और संहिताकरण करके इसे एक निश्चित स्वरूप और आकार दिया जाये। संहिताकरण में सैद्धान्तिक रूप से जिन बातों को शामिल किा गया था, वे थी—(1) सम्पत्ति का अधिकार, (2) सम्पत्ति के उत्तराधिकार का अनुक्रम, (3) गुजारा, विवाह, तलाक, गोद लेना, अवयस्कता तथा वैधानिक संरक्षण। हिंदू आचार संहिता के दोनों मतों मिताक्षर और दायभाग ने असमानता को पैदा किया और बढ़ावा दिया था। मिताक्षर मत ने हिंदू की सम्पत्ति को समांशिता सम्पत्ति माना जिसमें पुत्रों, पौत्रों तथा प्रपौत्रों का जन्म के कारण अधिकार बनता है। मिताक्षर के अनुसार सम्पत्ति का हस्तांतरण परिवार के जीवित व्यक्तियों को स्वत: हो जाता था जबकि दायभाग मत में निजी अधिकार के नियम और क्षमता के तहत संपत्ति का बंटवारा होता है। इसके अलावा इस विधेयक में विधवा स्त्री, पुत्री तथा विधवा बहु को सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनाने का लक्ष्य था।

यहां पर, न तो विधेयक को पेश करने के कारणों का उल्लेख उचित है और न ही विवाह तथा तलाक से संबंधित विधि के प्रावधानों का उल्लेख करना जरूरी है, क्योंकि पाठकों को इस बारे में विस्तृत जानकारी उन लब्धप्रतिष्ठ संसद सदस्यों के भाषणों से प्राप्त हो जायेगी जिन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप में महिलाओं के मताधिकार के लिए डॉ. अम्बेडकर के साथ योगदान दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने समेकीकरण तथा संहिताकरण के कारणों के बारे में स्वयं ही स्पष्ट ढंग से बताया था। अस्त-व्यस्त हिंदू कानून को वैध निर्णयों के रूप में स्पष्ट अभिकथनों का स्वरूप प्रदान किया। इस संहिताकरण द्वारा उसका संहिताकरण, न्यायाधीशों द्वारा निर्मित विधि को वैधानिक मान्यता प्रदानकरना था। बेंजामिन नाथन कार्डोज द्वारा लिखित एक लेख 'नेचर ऑफ जुडीशियल प्रोसेस' में कहा गया है कि विधि को स्थायी होते हुए भी इतना परिवर्तनशील होना चाहिए कि वह बदलते समय की आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य कर सके।" विधेयक के सिद्धान्तों का संविधान सभा द्वारा सर्वसम्मत अनुमोदन डॉ. अम्बेडकर के विधि-नैपुण्य के साथ-साथ संविधान सभा के अन्य सदस्यों की सूझ-बूझ के प्रति भी एक श्रद्धांजलि है। विधेयक में उल्लखित सिद्धान्त स्त्री-पुरुष की समानता के संवैधानिक दर्शन से पूरी तरह मेल खाते हैं।

यहां यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि विधेयक बरास्ता विधि सामाजिक सुधार का एक भाग था। यह उस समय के हिसाब से एक क्रांतिकारी कदम था। संविधान सभा में इस विषय पर हुए वाद-विवादों में कड़ी प्रतिक्रियायें व्यक्त की गयीं। बहरहाल, इस तरह की कड़ी प्रतिक्रियायें व्यक्त किये जाने से, भाषण की स्वतंत्रता का उच्च ध्येय पूरा हुआ अर्थात् विवादास्पद मुद्दों को उठाने और उन पर विचार-विमर्श का अवसर प्राप्त हुआ। अब जबकि सारा विवाद समाप्त हो चुका है और महिलाएं यदि पुरुषों से अधिक नहीं तो बराबर के अधिकार से सम्पन्न हो चुकी हैं, हमारी नयी पीढ़ी को यह पढ़ते हुए और कल्पना करते हुए कितनी खुशी होगी कि हमारे महान संविधान द्वारा प्रदत्त की गयी स्वतंत्रता का वे कितना लाभ उठा रहे हैं।

हालांकि हिंदू आचार संहिता के समेकन और संहिताकरण का प्रस्ताव विरोध के बावजूद पारित हुआ, फिर भी लोगों ने इसे स्वीकार किया और इसकी प्रशंसा की है।

यह सब, जनता को इस बारे में निरन्तर शिक्षित करते रहने और महिलाओं की दशा सुधारने से संभव हुआ है। महिलाओं से संबंधित हिंदू आचार संहिता में सुधार लाने वाले अधिनियमों की सूची हमारे लिए काफी ज्ञानवर्धक होगी :-

1. जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम, 1850
2. हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856
3. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925
4. नेटिव कनवर्ट्स मैरिज डिस्सॅलूशॅन अधिनियम, 1866
5. 1929 के अधिनियम XX यथा संशोधित 1822 का संपत्ति अंतरण अधिनियम IV

6. भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875

7. संरक्षक और प्रति पाल्य अधिनियम, 1890

8. 1929 का सम्पत्ति हस्तांतरण (संशोधन) संबंधी अनुपूरक अधिनियम, XXI। इस अधिनियम से 1914 तथा 1921 के मद्रास अधिनियम तथा 1916 का हिंदू सम्पत्ति निर्वर्तन अधिनियम जो अजन्मे लोगों के पक्ष में संपत्ति के हस्तांतरण और वसीयत के पक्ष में है, संशोधित किया गया है।

9. हिंदू विद्या धन अधिनियम, 1930। इस अधिनियम से विद्या द्वारा प्राप्त सभी सपंत्तियों को अर्जक की अलग संपत्ति माना गया है।

10. हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम,1937 का XVIII यहां पर इसका भी ध्यान रखना चाहिए कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 हिंदू विधि साक्ष्य के नियमों को निष्प्रभावी कर देता है। इसी तरह भारतीय दंड संहिता, 1859 सम्पूर्ण हिंदू दंड विधि को निरस्त कर देता है।

यद्यपि संसद द्वारा इस दिशा में किये गये प्रयासों की गति धीमी थी फिर भी इन विधायी प्रयासों का प्रभाव पड़ना सुनिश्चित था क्योंकि ये प्रयास उस सामाजिक बदलाव का हिस्सा थे जिनकी पूर्ति की हमारे संविधान में परिकल्पना की गयी थी।

प्रस्तुत खंड में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा 11 अप्रैल, 1947 को संविधान सभा में पेश किये गये हिंदू संहिता विधेयक से संबंधित पूरी चर्चा दी गई है। इस विधेयक को 9 अप्रैल, 1948 को प्रवर समिति को सौंप दिया गया था। इसके बाद 4 वर्षों तक संसद में इस पर चर्चा होती रही और फिर भी किसी निष्कर्ष पर न पहुंचा जा सका। डॉ. अम्बेडकर के शब्दों में यह विधेयक बिना-सराहे, बिना अफसोस प्रकट किये ही समाप्त हो जाने दिया गया। स्वाधीन भारत की संसद में यह एकमात्र ऐसा विधेयक था जिस पर इतने अधिक लम्बे समय तक चर्चा हुई थी। डॉ. अम्बेडकर को ऐसा महसूस हुआ कि सरकार और सत्ताधारी दल अर्थात् कांग्रेस हिंदू संहिता विधेयकको पारित कराने में दिलचस्पी नहीं रखते। इसलिए उन्होंने 27 सितम्बर, 1951 को पंडित जवाहरलाल नेहरू को अपना त्याग-पत्र सौंप दिया, लेकिन प्रधानमंत्री के अनुरोध पर वे 10 अक्तूबर, 1951 तक संसदीय चर्चाओं में भाग लेते रहे। अपने पत्र में उन्होंने लिखा कि वे हिंदू संहिता विधेयक को सर्वाधिक महत्व देते हैं और इस विधेयक को पारित हुआ देखना चाहते हैं। भले ही इसके लिए उनके स्वास्थ्य पर कितना ही बुरा प्रभाव क्यों न पड़े। वे चाहते थे कि इस विधेयक पर प्राथमिकता के आधार पर 16 अगस्त को ही चर्चा आरम्भ करा दी जाये और 1 सितम्बर, 1951 तक इसे पारित कर दिया जाये। लेकिन

हिंदू संहिता का विरोध करने वाले इसमें बाधाएं डालते रहे और विधेयक के पारित होने में विलम्ब करवाते रहे। परिणामस्वरूप अंत: 10 अक्तूबर को डॉ. अम्बेडकर ने अपना त्याग-पत्र सौंप दिया और उद्विग्न होकर सदन छोड़ गए।

हिंदू संहिता पर हुए उस सम्पूर्ण वाद-विवाद को विधेयक के संविधान सभा में पेश किये जाने से लेकर 10 अक्तूबर, 1951 तक–इस पुस्तक को चार भागों में बांटा गया है। पहला भाग संबंधित विधेयक को इसको सदन में पेश किये जाने हेतु से संबद्ध है। इसमें विधेयक की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए डॉ. अम्बेडकर के भाषण के अलावा डॉ. पट्टाभिसीता रमैय्या, नजीरुद्दीन अहमद, श्रीमती हंसा मेहता, श्री राम सहाय, डॉ. बी.बी. केसकर, बेगम ऐजाज रसूल तथा श्री आर.के. चौधरी के भाषण सम्मिलित है। इस भाग में 17 नवम्बर, 1947 से लेकर 9 अप्रैल, 1948 तक की चर्चा शामिल की गयी है।

पुस्तक के दूसरे भाग में हिंदू संहिता का वह प्रारूप दिया है जिसे डॉ. अम्बेडकर ने तैयार किया था और जिसे प्रवर समिति ने संशोधित कर तत्कालीन हिंदू संहिता का स्वरूप दिया था। इसे यहां इस उद्‌देश्य से प्रस्तुत किया गया है कि लोगों को पता चल सके कि हिंदू विधि के मूलभूत ढांचे में सुधार के बारे में डॉ. अम्बेडकर की मूल धारणा क्या थी।

तीसरे भाग में हिंदू संहिता पर सामान्य चर्चा दी गयी है। कुछ माननीय सदस्यों ने इस तरह के परिवर्तनकारी कानून बनाये जाने के संविधान सभा के अधिकार को लेकर प्रश्न खड़े किये हैं, तो कुछ सदस्यों ने तलाक तथा महिलाओं के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों पर आपत्ति की है। कुछ अन्य सदस्यों ने इस विधेयक को हिंदुओं के धार्मिक मामलों में दखलअंदाजी मानकर इसका बहिष्कार किया। तथापि, प्रगतिशील विचारों वाले सदस्यों ने इसका समर्थन किया और उन्होंने डॉ. अम्बेडकर के इस साहसिक कदम की सराहना की।

इस के चौथे भाग में हिंदू संहिता विधेयक पर खंडवार चर्चा दी गयी है।

हालांकि, प्रस्तुत पुस्तक डॉ. अम्बेडकर के लेखन का एक भाग है, लेकिन हिंदू संहिता के माध्यम से हिंदू समाज में सुधार लाना, उनके जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी। हिंदू संहिता पर की गयी चर्चा तथा वाद-विवादों के माध्यम से हिंदू संहिता के बारे में डॉ. अम्बेडकर द्वारा अदा की गयी भूमिका हिंदुओं के सामाजिक-आर्थिक अध्येताओं के लिए बहुत ही उपयोगी है। इसलिए इस ग्रंथ पर कार्य कर रही समिति के सदस्यों ने महसूस किया कि केवल डॉ. अम्बेडकर के भाषणों के बजाय इस ग्रंथ में सम्पूर्ण चर्चा को प्रकाशित किया जाये।

आशा है कि यह संकलन विद्वानों, साधारण पाठकों तथा इतिहासकारों सबके लिये समान रूप से उपयोगी होगा और वे हिंदू समाज के विभिन्न वर्गों को अब प्राप्त स्वतंत्रता में डॉ.अम्बेडकर के योगदान की सराहना करेंगे।

इस कार्य में सहयोग के लिये मैं निम्नलिखित व्यक्तियों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ:–

* प्रमुखत: मनोहर जोशी, महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री तथा श्री दत्तात्रेय राणे, महाराष्ट्र के उच्च शिक्षा मंत्री, जिन्होंने बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के चिन्तन में गहन रुचि दिखायी और इस परियोजना को बढ़ावा दिया; और

* श्री नवजीवन लखनपाल, सचिव, उच्च और तकनीकी शिक्षा, महाराष्ट्र सरकार, जिनके मार्ग-दर्शन और प्रोत्साहन ने हमें सम्बल प्रदान किया;

इस पुस्तक का सम्पादन निम्नलिखित व्यक्तियों की सहायता, समर्थन और सहयोग के कारण संभव हुआ:

* श्री पी.एस. भोगल, निदेशक तथा श्री ई.आर. डिसूज़ा अभिलेखाध्यक्ष राज्य अभिलेखागार विभाग, मुम्बई, तथा श्री डी.एस. चौहान, पुस्तकालयाध्यक्ष, विधान भवन पुस्तकालय तथा श्री एस.एस. रेगे एवं श्री कान्त तालवटकर पुस्तकालयाध्यक्ष, सिद्धार्थ कॉलेज, मुम्बई, जिन्होंने आवश्यक पुस्तकें अर्थात् हिंदू संहिता की आधिकारिक प्रति इस ग्रंथ में उद्धृत करने हेतु उपलब्ध करायी।

* मुम्बई के श्री बी.एम. अम्भाईकर तथा दिल्ली के श्री डी.सी. अहीर जिनके सुझावों से मुझे इस ग्रंथ में काफी सहायता मिली। श्री डी.के. रामटेके जिन्होंने हिंदू संहिता का भारत सरकार द्वारा प्रकाशित हिंदी संस्करण उपलब्ध कराया तथा प्रो. प्रमोद रामटेके जिन्होंने इस ग्रंथ हेतु डॉ. अम्बेडकर पर बनायी गयी अपनी पेंटिंग दी।

* श्री पी.एस. मोरे, निदेशक, श्री पी.एल. पुरकर, उप निदेशक तथा श्री ए.सी. सैय्यद, प्रबन्धक, सरकारी मुद्रणालय तथा लेखन सामग्री, महाराष्ट्र सरकार, जिन्होंने बड़ी ही सावधानीपूर्वक इस ग्रंथ को मुद्रित किया।

* डॉ. केशवराव फाल्के तथा श्री टी.बी. सेन, उप-सचिव तथा श्री जे.एम. अभयंकर, ग्रेटर मुम्बई के शिक्षा उप-निदेशक, जिन्होंने प्रशासनिक मामलों में सहायता दी; मैं अपने अधीन कार्य कर रहे कर्मचारियों श्री रवीन्द्र सूतार, श्रीमती सुमित्रा नेवरेकर तथा श्रीमती श्लाका ताम्बे के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने टाइपिंग, प्रूफरिंडिंग तथा अन्य कार्यों में बड़े मनोयोग से सहायता की।

हस्ताक्षर

मुम्बई **(वसन्त मून)**

28 नवंबर, 1995 विशेष कार्यकारी अधिकारी

भाग - एक

अनुभाग - एक

हिंदू संहिता विधेयक को प्रवर समिति को सौंपा जाना

17 नवम्बर, 1947

से

9 अप्रैल, 1948

*हिंदू संहिता

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि हिंदू कानून के कुछ उपांगों को संशोधित और संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक को जारी रखा जाये।"

माननीय अध्यक्ष : प्रस्ताव किया जाता है :

"कि हिंदू कानून की कुछ उपांगों को संशोधित और संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक को जारी रखा जाये।"

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : महोदय, क्या मैं जान सकता हूँ कि इस महत्वपूर्ण विधेयक की वर्तमान स्थिति क्या है? मैं समझता हूँ कि इस विधेयक का हिंदू-मित्रों में काफी विरोध हो रहा है। इसलिए बेहतर हो कि यह पता चल जाये कि इस विधेयक की मौजूदा हालत क्या है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसे केवल प्रस्तुत किया गया था। इसे आगे नहीं बढ़ाया गया।

श्री आर.वी. धूलेकर (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : नयी व्यवस्था में हिंदू कानून अथवा मुस्लिम कानून का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। हमें केवल एक सामान्य कानून अपनाना चाहिए और...

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य गुण-दोष के आधार पर यह बात कह रहे हैं। जब सभा के सामने यह विधेयक आयेगा तब उन्हें भी बोलने का मौका मिलेगा। इस समय तो इसी बात पर विचार करना है कि विधेयक को जारी रखा जाये अथवा नहीं।

श्री आर.वी. धूलेकर : महोदय, तब तो मैं इसका विरोध करता हूँ। इसे जारी नहीं रखा जाना चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : हमें विचार करा है, "कि हिंदू कानून कुछ उपांगों को संशोधित और संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक को जारी रखा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

---

*भारत की संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 1, 17 नवम्बर, 1947, पृष्ठ 41

*हिंदू अंतरजातीय विवाह नियामक तथा मान्यकारी विधेयक

श्री मोहनलाल सक्सेना (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : महोदय, क्योंकि विधि मंत्री द्वारा मुझे सूचित किया गया है कि वह वर्तमान सत्र में हिंदू संहिता विधेयक को प्रवर समिति को सौंपे जाने के लिए एक प्रस्ताव लाने पर विचार कर रहे हैं, इसलिए अब मैं इस प्रस्ताव को पेश नहीं करना चाहता।

माननीय अध्यक्ष : क्या मैं यह समझूं कि माननीय सदस्य इस समय प्रस्ताव पेश करना नहीं चाहते लेकिन वे इसे निरस्त करने के पक्ष में भी नहीं हैं?

श्री मोहन लाल सक्सेना : जी, महोदय, यदि विधि मंत्री अपना प्रस्ताव पेश नहीं करते हैं तो मैं अपना प्रस्ताव पेश करूंगा।

**हिंदू विवाह मान्यता विधेयक

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : महोदय, मुझे हिंदू, सिक्खों, जैनियों तथा उनकी विभिन्न जातियों और उप-जातियों के मध्य होने वाले विवाहों को वैधता प्रदान करने संबंधी विधेयक को प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की जाये।

माननीय अध्यक्ष : प्रस्ताव है :

"कि हिंदू सिक्खों, जैनियों तथा उनकी विभिन्न जातियों और उप-जातियों के मध्य होने वाले विवाहों को वैधता प्रदान करने संबंधी विधेयक को प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : महोदय, मैं विधेयक को प्रस्तुत करता हूँ।

***हिंदू संहिता

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : मैं प्रस्ताव करता हूँ :

"कि हिंदू कानून के कुछ उपांगों को संशोधित और संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक श्री अल्लादि कृष्णा स्वामी अय्यर, डॉ. बख्शी टेक चन्द, श्री एम. अनन्त सायोनम अयंगर, श्रीमती जी. दुर्गाबाई, श्री एल. कृष्णास्वामी भारती, श्री यू. श्रीनिवास मलैय्या, श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय, डॉ. पी.एस. देशमुख, श्रीमती रेणुका रे, डॉ. पी.के. सेन, बाबू रामनारायन सिंह,

---

*संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 1, 11 फरवरी, 1948, पृष्ठ 599

**संविधान सभा (विधायी) वाद विवाद, खंड 2, 26 फरवरी, 1948, पृष्ठ 599

***संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 4, 9 अप्रैल, 1948, पृष्ठ 3628-33

श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी, श्रीमती अम्मू स्वामीनाथन, पं. बालकृष्ण शर्मा, श्री खुर्शीद लाल, श्री ब्रजेश्वर प्रसाद, श्री बी. शिवा राव, श्री बालदेव स्वरूप, श्री वी.सी. केशवराव तथा प्रस्तावक को मिलाकर निर्मित प्रवर समिति को इस निर्देश के साथ सौंप दिया जाये कि वे अगले सत्र के प्रथम सप्ताह के अंतिम दिन तक अपनी रिपोर्ट दे दें तथा यह कि समिति की बैठक के लिए कम से कम पांच सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य होगी।"

महोदय, मेरे लिये और मैं समझता हूँ कि सभा के सदस्यों के लिये भी यह बहुत ही खेदजनक और अफसोस की बात है कि हिंदू कानून के संहिताकरण जैसा महत्वपूर्ण विषय सत्र के अन्त में सभा के सामने चर्चा हेतु लाया गया है। माननीय अध्यक्ष द्वारा आज सुबह दी गयी व्यवस्था के अनुसार हमें इस प्रस्ताव पर सात बजे तक चर्चा समाप्त करनी है, जिसमें आधे घंटे का अवकाश भी शामिल है। मैं इसे अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि दी गयी समयावधि के भीतर विधेयक में उठाये गये विभिन्न बिन्दुओं पर माननीय सदस्यों को अपना मत प्रकट करने हेतु अधिकाधिक समय दिया जाये और मैं उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपना यथासंभव सहयोग प्रदान करूंगा। सहयोग करने की एकमात्र रास्ता यह हो सकता है कि मैं अपने शुरूआती भाषण को कम से कम समय में अति संक्षेप में पूरा करूं। मुझे खेद है कि मुझे यह निर्णय लेने की आवश्यकता पड़ी लेकिन विधेयक की विशेषताएं इतनी व्यापक हैं कि यदि इसे विस्तारपूर्वक स्पष्ट किया जाए और वर्तमान हिंदू विधि की पृष्ठभूमि की तुलना में इसके प्रावधानों की व्याख्या की जाए तो मुझे इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि इस प्रयास में चार-पांच घंटे से कम समय नहीं लगेगा। परन्तु यह असंभव है। इसलिए सभा से क्षमा प्रार्थना सहित मैं इसके समक्ष केवल वे ही तथ्य रखना चाहूंगा जो बहुत अधिक महत्वपूर्ण हैं और जो वर्तमान विधि से नितांत भिन्न हैं।

महोदय, यह विधेयक हिंदू संहिता के उन नियमों को संहिताबद्ध करने के लिए लाया गया है जो उच्च न्यायालयों और प्रिवी कौंसिलों के निर्णयों के कारण अपना मूल अर्थ खो बैठे हैं, जिनके कारण आम आदमी के लिए संशय और भटकाव उत्पन्न हो जाता है, ऐसे ज्ञात मुद्दों को संहिताबद्ध करना अनिवार्य है। प्रथमतः यह किसी दिवंगत हिंदू (पुरुष या स्त्री) की संपत्ति के अधिकारों से संबंधित कानूनों को संहिताबद्ध करता है जिसकी मृत्यु बिना वसीयत लिखे हुए हो गई हो। दूसरे, यह बिन वसीयत लिखे हुए किसी मृतक की संपत्ति वे विभिन्न उत्तराधिकारियों के बीच वंश की व्यवस्था के कुछ परिवर्तित आकार को स्पष्ट करता है। इस संबंध में दूसरा विषय, भरणपोषण, विवाह, तलाक, अभिग्रहण, अल्पव्यस्कों और उनके संरक्षण के बारे में है। सभा को यह पता चलेगा कि यह विधेयक कितना विस्तृत है और इसकी सीमा कितनी है। हम विरासत के प्रश्न से आरम्भ करते हैं। इस शीर्ष के अन्तर्गत, यह विधेयक नये सिद्धांतों को कम से कम ब्रिटिश भारत के कुछ भाग को अधिनियमित करता है। इस सभा के बहुत से सदस्य, जो कि वकील हैं, जानते हैं कि विरासत के संबंध में हिंदू कानून दो अलग-अलग

प्रणालियों से संचालित होते हैं। एक प्रणाली मिताक्षर और दूसरी दायभाग के रूप में जानी जाती है। दोनों प्रणालियों में मौलिक अन्तर है। मिताक्षर के अनुसार किसी हिंदू की संपत्ति उसकी व्यक्तिगत संपत्ति नहीं है। यह संपत्ति पिता, पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र से संबंधित होती है। इन सभी लोगों का संपत्ति में जन्म से अधिकार होता है और इस वंश परम्परा में किसी भी सदस्य की मृत्यु होने पर यह संपत्ति जीवित व्यक्तियों द्वारा जो कि उसके बाद जीवित रहते हैं, को हस्तांतरित हो जाएगी और मृतक के उत्तराधिकारी को हस्तांतरित नहीं होगी। इस विधेयक में अन्तर्निष्ट हिंदू संहिता दायभाग के नियमों को स्वीकार करती है जिसके अन्तर्गत यह संपत्ति उत्तराधिकारी द्वारा अपनी व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में प्राप्त की जाती है जिसको वह उपहार द्वारा अथवा वसीयत द्वारा अथवा अन्य किसी तरीके से अपनी इच्छानुसार निस्तारित कर सकता है।

इस विधेयक के माध्यम से किया जाने वाला यह मूलभूत परिवर्तन है। दूसरे शब्दों में यह विरासत के नियमों को उस क्षेत्र तक बढ़ाकर सर्वव्यापक बनाता है जिसमें मिताक्षर के नियम अभी भी चल रहे हैं।

उत्तराधिकारियों के बीच उत्तराधिकार के प्रश्न की जब बात होती है तो हम पाते हैं कि मिताक्षर और दायभाग के नियमों के बीच सामान्य प्रकार का मौलिक अन्तर भी है। मिताक्षर नियमों के अन्तर्गत किसी मृतक के सपिण्ड को ही उसके आत्मीय संबंधी से दी जाती है। दायभाग नियम के अन्तर्गत उत्तराधिकार का आधार मृतक के रक्त संबंध से होता है न कि अपिण्ड और सपिण्ड संबंधों से। यह ऐसा परिवर्तन है जो इस विधेयक में समाविष्ट है; दूसरे शब्दों में, यहाँ पर भी मिताक्षर के नियमों की अपेक्षा दायभाग के नियम ही स्वीकार किए जाते हैं।

किसी हिंदू मृतक के उत्तराधिकार की व्यवस्था में इस सामान्य परिवर्तन के अतिरिक्त, इस विधेयक के माध्यम से चार अन्य परिवर्तन किए जाने हैं। एक परिवर्तन यह है कि विधवा पुत्री, विधवा बहू सभी को विरासत के मामले में पुत्र के समान एक ही श्रेणी में रखा गया है। इसके अतिरिक्त, पुत्री को भी उसके पिता की संपत्ति में भागीदार बनाया गया ह। उसका हिस्सा पुत्र के हिस्से का आधा बताया गया है। यहाँ पुन: मैं बताना चाहता हूँ कि इस विधेयक के माध्यम से जो नया परिवर्तन किया जा रहा है, जहाँ तक स्त्री वर्ग के उत्तराधिकार का संबंध है, वह पुत्री तक ही सीमित है, अन्य सभी स्त्रियों के उत्ताधिकारों को हिंदू महिलाओं का संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 के द्वारा पहले ही मान्यता मिल चुकी है। अत: इस विधेयक में जहां तक इस भाग का संबंध है, इसमें वास्तव में कोई भी परिवर्तन नहीं है; इस विधेयक के अधिनियम में अन्तर्विष्ट मात्र उन्हीं प्रावधानों के बारे में कहा गया है जिने बारे में मैं पहले ही कह चुका हूँ।

इस विधेयक के माध्यम से स्त्रियों के उत्तराधिकार से संबंधित जो दूसरा परिवर्तन किया जाना है वह यह है कि स्त्री के उचित उत्तराधिकारियों की संख्या इस समय **मिताक्षर** अथवा **दायभाग** के अन्तर्गत आने वाले उत्तराधिकारियों से कहीं ज्यादा है।

इस विधेयक के द्वारा जो तीसरा परिवर्तन किया जाना है वह यह है कि पुराने कानून के अन्तर्गत, चाहे मिताक्षर हो अथवा दायभाग स्त्री उत्तराधिकारियों के मध्य भेदभाव किया गया था कि कोई स्त्री विशेष वसीयतकर्त्ता मृत्यु के समय धनाढ्य हो अथवा गरीब, विवाहित हो अथवा अविवाहित, उसकी कोई संतान थी अथवा नहीं, इस विधेयक के माध्यम से हटा दिया गया है। इन सभी प्रावधानों को जिससे कि स्त्री उत्तराधिकारों में भेदभाव करता है अब इस विधेयक द्वारा हटा दिये गए हैं। किसी स्त्री को, जिसे विरासत का अधिकार है, उसका अधिकार इस तथ्य के आधार पर प्राप्त होता है कि उसे किसी अन्य बातों पर विचार किए बिना ही उत्तराधिकारी घोषित किया गया है।

इस विधेयक में जो अन्तिम परिवर्तन किया गया है वह **दायभाग** में विरासत के नियमों से संबंधित है। **दायभाग** के अन्तर्गत मां की अपेक्षा पिता को उत्तराधिकार में वसीयत दी जाती है। इस विधेयक में ठीक इसके विपरीत स्थिति है ताकि मां का स्थान पिता से पहले आए।

किसी मृतक हिंदू पुरुष के उत्तराधिकारियों के उत्तराधिकार की व्यवस्था के संबंध में, मैं इस विधेयक में उन प्रावधानों की तरफ आता हूँ, जो कि वसीयत के बिना सभी उत्तराधिकार से संबंधित है। जैसा कि इस सभा के सदस्य, जो कि हिंदू कानून से परिचित हैं, जानते हैं कि वर्तमान नियमों के अन्तर्गत किसी हिंदू स्त्री द्वारा प्राप्त संपत्ति को दो श्रेणियों में रखा गया है; एक श्रेणी को उसका स्त्रीधन और दूसरी श्रेणी को 'महिला की संपत्ति' कहा जाता है। पहले इस स्त्रीधन के प्रश्न को लेते हैं; वर्तमान नियमों के अन्तर्गत **स्त्रीधन** को कई श्रेणियों में रखा गया है; केवल एक ही श्रेणी नहीं है; और वर्तमान नियमों के अन्तर्गत किसी स्त्री के **स्त्रीधन** के उत्तराधिकार की व्यवस्था स्त्रीधन की श्रेणियों के अनुसार अलग-अलग है। **स्त्रीधन** की एक श्रेणी के उत्तराधिकार के नियम दूसरी श्रेणी की अपेक्षा अलग-अलग हैं और ये नियम एक समान ही हैं जैसे कि **मिताक्षर** के नियम **दायभाग** के नियम की ही तरह लगते हैं। जहां तक **स्त्रीधन** का संबंध है, इस विधेयक में दो परिवर्तन किए गए हैं। एक परिवर्तन के माध्यम से **स्त्रीधन** की विभिन्न श्रेणियों को संपत्ति की एक ही श्रेणी में संघटित किया गया है और उत्तराधिकार को एक समान नियम बताया गया है; **स्त्रीधन** की विभिन्न श्रेणियों के परिपेक्ष्य में **स्त्रीधन** के उत्तराधिकारियों की कोई श्रेणियां नहीं हैं। सभी **स्त्रीधन** एक ही तरह के हैं और उनके उत्तराधिकार का एक ही नियम है।

विधेयक के माध्यम से उत्तराधिकारों के संबंध में जो दूसरा परिवर्तन किया जाना है वह यह है कि पुत्र को भी स्त्रीधन प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है और उसे

पुत्री द्वारा ले जाए गए धन का आधा हिस्सा दिया गया है। सदस्य यह महसूस करेंगे कि विधेयक तैयार करते समय और उत्तराधिकार के नियमों में परिवर्तन करते समय यह नियम बनाया गया है कि जब पुत्री पिता की संपत्ति का आधा भाग प्राप्त कर रही है तो पुत्र को भी मां की संपत्ति का आधा भाग मिलना चाहिए। इस तरह विधेयक के जरिए विशेषतः पुत्र और पुत्री के बीच समानता की स्थिति बनाये रखने की कोशिश की गई है।

अब हम "महिला की भू-संपत्ति" के प्रश्न पर आते हैं; जैसा कि सभा के सदस्य जानते हैं, हिंदू कानून के अन्तर्गत, जब कोई महिला कोई संपत्ति प्राप्त करती है तो केवल ऐसी संपत्ति प्राप्त करती है जिसे "जीवन संपत्ति" कहा जाता है। वह उस संपत्ति से प्राप्त आदमनी का लाभ उठा सकती है परन्तु, वह उस संपत्ति का समग्र रूप से, वैधानिक आवश्यकताओं को छोड़कर व्यापार नहीं कर सकती; यह संपत्ति महिला की मृत्यु के बाद उसके पति के उत्तरभोगियों को प्राप्त हो जानी चाहिए। यह विधेयक यहां पुनः दो परिवर्तन प्रस्तुत करता है। यह सीमित भू-संपत्ति को पूर्ण भू-संपत्ति में उसी प्रकार परिवर्तित कर देता है जैसे कि कोई पुरुष विरासत में कुछ प्राप्त करता है तो वह पूर्ण संपत्ति प्राप्त करता है और दूसरे, यह विधवा के बाद संपत्ति पर दावा करने वाले उत्तरभोगियों के अधिकार को समाप्त करता है।

एक महत्त्वपूर्ण प्रावधान जो कि इस विधयेक में अन्तर्विष्ट संपत्ति प्राप्त करने के महिलाओं के अधिकार की अनुषंगी है, दहेज क संबंध में है। सभा के सदस्य जानते हैं कि दहेज कितना निन्दनीय है; उदाहरण के लिए, लड़कियों के साथ, जो कि अपने माता-पिता से दहेज अथवा स्त्रीधन अथवा उपहार के रूप में बहुत सारा धन लेकर आती है, कितना घृणास्पद, निर्दयता और प्रताड़ना का व्यवहार किया जाता है। इस विधेयक में, मेरे निर्णय के अनुसार, एक सर्वाधिक उपयोगी प्रावधान यह है कि वह संपत्ति जो विवाह के अवसर पर दहेज के रूप में लड़की को दी जाती है, उसे ट्रस्ट की संपत्ति के रूप में समझा जाएगा, जिसका उपयोग महिला द्वारा ही किया जाएगा और वह इस संपत्ति पर अपना दावा 18 वर्ष की अवस्था पर ही कर सकेगी जिससे कि न तो उसका पति और न ही उसके पति के संबंधी उस संपत्ति में कोई रुचि दिखा सकें, न ही उनको उस संपत्ति को नष्ट करने का अवसर मिले और शेष जीवन के लिए उसे असहाय बना सकें।

अब हम भरण-पोषण से संबंधित प्रावधानों पर आते हैं। विधेयक के इस भाग में कोई अधिक नवीनता नहीं है। यह विधेयक उल्लेख करता है कि किसी मृतक के आश्रित उन लोगों से भरण-पोषण का दावा कर सकेंगे जो उसकी संपत्ति को या तो इच्छापत्र विहीन उत्तराधिकार के नियमों के अन्तर्गत अथवा उसकी वसीयत के माध्यम से प्राप्त करते हैं। इस विधेयक में 11 विभिन्न प्रकार से आश्रितों के बारे में बताया गया है। मैं सोचता हूँ कि कम से कम जब मैं स्वयं यह बात करूं तो, यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी कि एक

रखैल को भी आश्रितों की श्रेणी में शामिल किया जाए, परन्तु ऐसा है, यह एक विचारणीय विषय है। भरण-पोषण की जिम्मेदारी उस व्यक्ति पर आ पड़ती है जो मृतक की संपत्ति प्राप्त करता है। जैसा कि मैंने कहा विधेयक के इस भाग में कुछ भी नया नहीं है।

इस विधेयक में एक और महत्वपूर्ण भाग है और यह एक पत्नी द्वारा अलग से भरण-पोषण का दावा करने के अधिकार से संबंधित है। जब वह अपने पति से अलग रह रही हो। सामान्यतः हिंदू कानून के प्रावधानों के अन्तर्गत एक पत्नी अपने पति से भरण-पोषण का दावा नहीं कर सकती यदि वह अपने पति के साथ उसके घर में नहीं रहती है। तथापि, यह विधेयक इस बात की मान्यता देता है कि निःसंदेह कुछ ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जिसमें यदि पत्नी अपने पति से अलग रह रही हो तो उसका कोई कारण होगा जिस पर उसका वश न हो। अतः उसके इन कारणों को तथा उसको अलग से भरण-पोषण देने के अधिकार को मान्यता देना गलत न होगा। परिणामतः यह विधेयक प्रावधान करता है कि एक पत्नी अपने पति से अलग से भरण-पोषण का दावा तभी कर सकेगी यदि वह (पति) (1) किसी कुत्सित बीमारी से पीड़ित हो, (2) उसके पास कोई रखैल हो, (3) निर्दयता का व्यवहार करता हो, (4) उसे (पत्नी को) दो वर्षों से छोड़ रखा हो, (5) उसने अन्य धर्म अपना लिया हो और (6) कोई अन्य कारण जो पत्नी के अलग रहने को न्यायोचित ठहराते हों।

दूसरा विषय जिसके बारे में मैं कहना चाहता हूँ वह विवाह के प्रश्न से संबंधित है। संहिता दो प्रकार के विवाहों को मान्यता देती है। एक को तो 'सांस्कारिक' विवाह और दूसरे को 'सिविल' विवाह कहा जाता है। जैसा कि सदस्य जानते हैं कि यह वर्तमान नियमों से अलग होता है। वर्तमान हिंदू कानून केवल 'सांस्कृतिक' विवाह को ही मान्यता देती है लेकिन यह उसे मान्यता नहीं देती जिसे हम 'सिविल' विवाह कहते हैं। जब कोई वैध सांस्कारिक विवाह और वैध पंजीकृत विवाह की शर्तों के बारे में विचार करता है तो संहिता के अन्तर्गत दोनों के बीच वास्तव में बहुत कम अन्तर होता है। किसी सांस्कारिक विवाह की पांच शर्तें होती हैं। पहला, दूल्हे की उम्र 18 वर्ष और दुल्हन की उम्र 14 वर्ष होनी चाहिए। दूसरा, विवाह के समय किसी भी पक्ष की कोई पति/पत्नी नहीं होनी चाहिए; तीसरे, पक्षों को निषिद्ध संबंधों के स्तर पर नहीं होना चाहिए; चौथा, दोनों पक्षों को एक दूसरे का **सपिण्ड** नहीं होना चाहिए और पांचवा, किसी पक्ष को बुद्धिहीन अथवा विक्षिप्त नहीं होना चाहिए। इस तथ्य को छोड़कर कि **सपिण्ड** का होना सिविल विवाह के लिए कोई प्रतिबंध नहीं है, अन्य शर्तों में सांस्कारिक विवाह और सिविल विवाह में कोई अन्तर नहीं है। दूसरा अन्तर केवल इतना है कि पंजीकृत विवाह को इस विधेयक के प्रावधानों के अनुसार पंजीकृत होना चाहिए जबकि सांस्कारिक विवाह, यदि पक्ष चाहते हैं तो, पंजीकृत कराया जा सकता है। इस विधेयक में अन्तर्विष्ट विवाह के नियमों और वर्तमान नियमों की तुलना में, यह देखा जा सकता है कि विधेयक के द्वारा उपरिवर्तन

किए गए हैं। एक तो यह कि वर्तमान नियमों के अनुसार वैध सांस्कारिक विवाह के लिए जाति अथवा उपजाति का पता लगाने की आवश्यकता है परन्तु इस विधेयक ने इस शर्त से खुद को अलग कर दिया है। इस विधेयक के अन्तर्गत जो भी पक्ष विवाह करना चाहते हों जाति अथवा उपजाति पर ध्यान दिये बिना वैध माना जाएगा।

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्यत) : यदि विवाह अलग-अलग जातियों के व्यक्तियों के बीच होता है तो क्या यह वैध होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे अपना भाषण जारी रखने दें। यदि माननीय सदस्य अपना भाषण देते समय प्रश्न रखता है तो मैं इसका उत्तर दूंगा।

इस विधेयक का दूसरा प्रावधान यह है कि गोत्र प्रवर की जानकारी से विवाह में कोई बाधा नहीं है जबकि वर्तमान नियमों के अन्तर्गत ऐसा प्रतिबन्ध है। तीसरी मुख्य विशेषता यह है कि पुराने नियमों के अन्तर्गत बहुविवाह की अनुमति थी। नये नियमों के अन्तर्गत एक ही विवाह के बारे में कहा गया है। सांस्कारिक विवाह ऐसा विवाह था जो टूट नहीं सकता था। इसमें कोई तलाक नहीं हो सकता था। वर्तमान विधेयक में विवाह विघटन के विधिक प्रावधानों को लागू करने से नये तथ्य प्रकाश में आयेंगे। कोई भी पक्ष जो इस नई संहिता के अन्तर्गत विवाह करता है वह विवाह के प्रावधानों से बचने के लिए तीन उपाय कर सकता है। एक-निष्प्रभावी और शून्य घोषित करना होगा; दूसरा-विवाह को अवैध घोषित करना होगा और तीसरा-विवाह का विघटन करना होगा। अब, विवाह को अवैध करने के दो आधार हैं : एक, यदि किसी पक्ष की विवाह के समय कोई पति/पत्नी जीवित है तो ऐसा विवाह निष्प्रभावी और शून्य होगा। दूसरा, यदि किसी पक्ष के संबंध निषिद्ध-संबंधों के परिक्षेत्र में आते हैं तो भी विवाह निष्प्रभावी और शून्य हो सकता है। विवाह को अवैध करार दिये जाने के चार आधार हैं। प्रथम, नपुंसकता, द्वितीय-दोनों पक्षों का सपिण्ड होना; तृतीय-कोई भी पक्ष मूर्ख हो अथवा विक्षिप्त हो; चतुर्थ-संरक्षणकर्ता की सहमति बलपूर्वक प्राप्त की गई हो। विवाह विघटन की शीघ्र संभावना से बचने के लिए, मेरे विचार से, विवाह के अवैध घोषित किए जाने की कार्यवाही समित कर दी गई है। यह बताया गया है कि विवाह को अवैध घोषित किए जाने के लिए वाद विवाह की तिथि से तीन वर्ष के अन्दर दायर कर देना चाहिए। अन्यथा वाद अवैध हो जाएगा और विवाह चलता रहेगा जैसे कि विवाह में अवैध होने का कोई आधार न रहा हो। विधेयक यह भी स्पष्ट करता है कि यद्यपि विवाह अवैध हो सकता है और न्यायालय द्वारा अवैध घोषित किया जा सकता है फिर भी विवाह की अवैधता का जन्म लिए हुए बच्चों की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा और वे हमेशा वैध बने रहेंगे।

अब तक तलाक के प्रश्न पर आते हैं। तलाक प्राप्त करने के सात आधार हैं। (1) परित्याग, (2) दूसरे धर्म को अपनाना, (3) रखैल रखना अथवा रखैल बनना, (4)

असाध्य अविकसित मस्तिष्क का होना, (5) घातक और असाध्य कुष्ठ रोग से पीड़ित होना, (6) भयानक संक्रामक बीमारी से ग्रसित और (7) निर्दयता।

अब हम अभिग्रहण (गोद लेना) के प्रश्न पर आते हैं। इस विधेयक में दिए गए बहुत से नियम वर्तमान विधि के अन्तर्ग दिए गए नियमों से किसी प्रकार भिन्न नहीं हैं। अभिग्रहण के बारे में इस भाग में दो नये उपबंध हैं। प्रथम, संहिता के अन्तर्गत, पति के लिए यह आवश्यक होगा कि यदि वह अभिग्रहण करना चाहता है तो उसे अपनी पत्नी की और यदि एक से अधिक हों तो कम से कम उनमें से एक की सहमति प्राप्त करना आवश्यक होगा। दूसरे, यह भी निर्धारित करता है कि यदि विधवा अभिग्रहण करना चाहती है तो वह ऐसा तभी कर सकती है यदि उसके पति ने उसे उचित निर्देश देकर अभिग्रहण के लिए अधिकृत किया हो और इस संबंध में किसी मुकदमेबाजी से बचने के लिए, कि क्या पति ने वास्तव में अपनी पत्नी के लिए कोई निर्देश छोड़ा है, संहिता में विधान है कि इस प्रकार के निर्देशों का कोई भी साक्ष्य किसी पंजीकृत दस्तावेज के रूप में अथवा वसीयत के प्रावधानों के रूप में होना चाहिए। कोई मौखिक साक्ष्य स्वीकार्य नहीं होगा ताकि मुकदमेबाजी की संभावना काफी कम हो। संहिता यह भी प्रावधान करती है कि अभिग्रहण का पंजीकरण के द्वारा भी हो सकता है। इस देश में मुकदमेबाजी के सर्वाधिक उपयोगी साधनों में से एक अभिग्रहण के प्रश्न पर रहा है। सभी प्रकार के मौखिक साक्ष्य बनाये जाते हैं, मिथ्य होते हैं, साक्षियों को मिथ्या शपथ दिलाई जाती है, विधवाओं को मूर्ख बनाया जाता है; वे एक दिन घोषित करती हैं कि उन्होंने एक अभिग्रहण किया है और बाद में वे स्वीकार करती हैं कि उन्होंने अभिग्रहण नहीं किया और इस प्रकार सभी वादों को रोकने के लिए संहिता में एक उपयोगी प्रावधान यह है कि हिंदू द्वारा किए गए अभिग्रहण का पंजीकरण होना चाहिए।

अब प्रश्न अल्पवयस्यका और संरक्षकता का आता है, जो कि इस विधेयक में संहिताबद्ध करने का अन्तिम विषय है। संहिता के इस भाग में कुछ नया नहीं है, अतः मैं जहां तक विधेययक में इस भाग का संबंध है, कुछ नहीं कहना चाहता।

जैसा कि सदस्य महसूस कर रहे होंगे, इस विधेयक से विचार करने के लिए जो मुद्दे उभरकर सामने आते हैं, और नये हैं, वे इस प्रकार हैं : पहला, जन्म-सिद्ध अधिकार और उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति प्राप्त करने के अधिकार का उन्मूलन। विचार करने के लिए जो दूसरा मुद्दा आता है वह है पुत्रियों को आधा हिस्सा देना। तीसरा, महिला की सीमित भू-संपत्ति को पूर्ण भू-संपत्ति में परिवर्तित करना। चौथा, विवाह और अभिग्रहण (गोद लेने) के मामले में जाति की समाप्ति। पांचवा, एक पत्नी सिद्धांत और छठवां तलाक का सिद्धांत। मैंने इन बिन्दुओं से अलग-अलग और श्रेणीवार रखने का प्रयास किया है क्योंकि मैंने अनुभव किया है कि हमारे पास समय बहुत कम है, अतः यदि मैं

बता सकूं कि वाद-विवाद के लिए कौन-कौन से मुद्दे हैं जिन पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है तो यह सभा के सदस्यों के लिए बहुत ही सहायक होगा। इस विधेयक में हम जिन मुद्दों से अलग हुए हैं निःसंदेह उन के साथ न्याय करने की आवश्यकता है। परन्तु मैं सोचता हूँ कि यदि मैं ऐसी स्थिति में विधेयक से अलग हुए अधिनियमों के बचाव में कुछ कहूं तो यह मात्र समय गंवाना होगा। अब मैं इन मुद्दों पर माननीय सदस्यों के विचार सुनना चाहता हूँ कि उनको क्या कहना है जिन्हें मैंने गिनाया है और यदि मैं यह उचित समझता हूँ कि मेरे लिए इनका स्पष्टीकरण करना आवश्यक है तो मैं अपने उत्तर में ऐसा करूंगा। महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : प्रस्ताव है कि :

"हिंदू कानून के कुछ उपबंधों में संशोधन करने और उन्हें संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक प्रवर समिति को भेजा जाए जिसमें श्री अलादी कृष्ण स्वामी अय्यर, डॉ. बख्शी टेकचन्द, श्री एम. अनन्त सायनम आयंगर, श्रीमती जी. दुर्गाबाई, श्री एल. कृष्णास्वामी भारती, श्री यू. श्रीनिवास मलैया, श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय, डॉ. पी.एस. देशमुख, श्रीमती रेणुका रे, डॉ. पी.के. सेन, बाबू रामनारायण सिंह, श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी, श्रीमती अम्मू स्वामीनाथन, पं. बालकृष्ण शर्मा, श्री खुर्शीदलाल, श्री ब्रजेश्वर प्रसाद, श्री बी. शिवाराव, श्री बलदेव स्वरूप, श्री वी.सी. केशव राव और प्रस्ताव प्रस्तुतकर्ता सदस्य होंगे। यह समिति विधानसभा को अगले सत्र के प्रथम सप्ताह के अन्तिम दिन से पूर्व रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी और समिति की बैठक की कार्यवाही चलाने के लिए सदस्यों की संख्या कम से कम 5 होगी।"

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया (मद्रास : सामान्य) : अध्यक्ष महोदय, मैं आपका ध्यान पहले इसलिए आकर्षित कर रहा हूँ ताकि मैं इस सभा का भी ध्यान आकर्षित कर सकूं। इस सभा में प्रस्तुत किया गया यह विधान बहुत ही रोचक है, यह ऐसा विधान है जिसकी प्रतीक्षा पूरा देश लम्बे समय से कर रहा था। यह देश, जो हजारों वर्षों तक विदेशी शासन के अधीन रहा, उन सामाजिक परिवर्तनों को प्रभावी नहीं कर पाया। परम्परा वह ताकत है जिनको सामान्यतः शासकों द्वारा संरक्षण दिया जाता रहा है, प्रशंसा की जाती है और मान्यता दी जाती है। दुर्भाग्य से, इस देश में लम्बे समय तक कोई ऐसा शासक नहीं रहा जिसकी प्रेरणादायक मिसाल से प्रजा सामाजिक परिवर्तनों को देख सके। पश्चिमी देशों में आज भी यदि किसी सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता होती है तो जो करना होता है, वह राजा के द्वारा उस परिवर्तन को प्रारम्भ करके किया जाता है और सभी लोग उसका अनुसरण करते हैं। आपने एडवर्ड-अष्टम की कहानी तो सुनी होगी जो, जब वह प्रिंस ऑफ वेल्स था, एक सुदूर द्वीप पर गया और लोगों से सुनने के बाद, कि उनका व्यवसाय फैशन परिवर्तन के कारण समाप्त हो गया, उसने पूछा कि वह कौन-सा फैशन था जिसने उनके व्यवसाय को नष्ट कर दिया। उन्होंने बताया कि पहले वे लोग घास की टोपी बनाते थे और अब घास की टोपियों का स्थान फेल्ट की टोपियों ने ले लिया है और इसीलिए उनका व्यवसाय समाप्त हो गया। दूसरे दिन वह

समारोह में जनता के बीच एक घास की टोपी के साथ उपस्थित हुआ और एक बार पुनः घास की टोपियों का उद्योग पुनर्जीवित हो गया। राजा की शक्ति ऐसी होती है। वह अपने देश का केवल राजनीतिक अध्यक्ष ही नहीं होता बल्कि समाज का अध्यक्ष, आदर्श, परामर्शदाता और नायक होता है। वह वर्षों पुरानी, पारम्परिक और पुरातन परम्पराओं को, जिनको वर्षों से मान्यता मिली होती है, यह उसके शक्ति के अन्दर होता है कि एक या दूसरे तरीके से वह उसमें परिवर्तन कर सके, परन्तु जब से ब्रिटिश शासन आरम्भ हुआ है तब से हमारी नियति क्या रही है? जब तक मुसलमान शासक हमारे देश पर शासन कर रहे थे, तब तक हमने उनकी परम्पराओं का और उन्होंने हमारी परम्पराओं का पालन किया; तब परम्पराएं मिश्रित भी हो गई थी और इस कारण से सामाजिक उन्नति भी हुई। परन्तु अंग्रेजों के आने के बाद, देश की बहुसंख्यक आबादी द्वारा जब उनको अछूत के रूप में देखा जाने लगा, तो ऐसी स्थिति हो गई कि वे यहां की परम्पराओं को दूर से भी अनुभव करने में भयभीत होते थे। उनको सामाजिक-धार्मिक ढांचे में हस्तक्षेप करने से डर लगता था जो कि रसायनिक सामंजस्य की भांति एक कोमल ढांचा था जो कि आनुषंगिक साधनों से तथा विदेशों से आने वाले छोटे-छोटे परिवर्तनों के अप्रत्यक्ष प्रभाव को सहन करता था। उनको यह भी भय था कि ऐसी प्रतिक्रियाएं इस देश में उनके साम्राज्य की स्थिरता के लिए खतरनाक होंगी। अतः उन्होंने इस भूमि की प्रथाओं या धर्म में हस्तक्षेप न करने वाला प्रशंसनीय और तर्कसंगत दिखती विचारधारा को स्वीकार किया। इस प्रकार से, उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों ने प्रथाओं को मान्यता देकर, जैसे कि यह शताब्दियों से चल रहा हो, सहायता की और उन्होंने कभी भी समाज की उन्नति के रूप में प्रथाओं में कोई भी परिवर्तन स्वीकार नहीं किया। इस प्रकार प्रथाएं अश्मीभूत हो गई और जब प्रथाएं अश्मीभूत हुई तो उन्नति में भी चौतरफा बाधाएं आई और लगभग 150 वर्षों तक हमारे समाज की प्रगति नहीं हो पाई। यदि एक स्थिति में मिशनरी सामाजिक बुराइयों के बारे में बात करते तो उनका उद्देश्य उत्तरोत्तर सहायता की भावना की अपेक्षा उनकी बुराई करना अधिक था। और जैसे-जैसे समय बीतता गया, और अंग्रेजी शिक्षा की जड़ें जमने लगीं और जैसे-जैसे प्रजातंत्र बढ़ता गया, और लोगों की भावना इस तरफ आकर्षित होने लगी, तभी दूसरा परिवर्तन हो गया। मिशनरी और धार्मिक व्यक्ति, जो शिक्षित भारतीयों को उनकी रूढ़िवादी बेड़ियों से मुक्त करने के इच्छुक थे, अचानक इन परिवर्तनों के विरुद्ध और रूढ़िवादी हो गए जिसे शिक्षित अंग्रेज व्यक्ति कुछ गैर-जिम्मेदारी के साथ स्वीकृत कर रहे थे। उन्होंने यह पता लगाना शुरू किया कि क्या ये लोग जो इन परिवर्तनों को स्वीकार करने के लिए तैयार थे, का मतलब इन परिवर्तनों को स्वीकार करना ही था अथवा समाज की कठोर परम्पराओं को दूर फैंक करके तनावमुक्त होता था। वे इसको पसंद नहीं करते थे। क्योंकि सुधार की भावना सदैव उनकी अपनी शक्तियों का ही विनाश करती है। सुधारों को बढ़ावा देने में उन्होंने अपने शासन के प्रति खतरा पाया और मिशनरियों ने एकाएक पाया कि वे राष्ट्र में कुछ मात्रा में विद्रोह की भावना को बढ़ावा दे रहे हैं। अब इस देश को बचाने

के लिए ब्रह्मवाद की ओर देखा जा रहा था परन्तु मिशनरी ब्रह्मवाद की बुराई करते थे क्योंकि राष्ट्र की सुधारात्मक भावना को उन्होंने रोक दिया था। इस तरह मिशनरी स्वयं ही रूढ़िवादी हो गए थे। अंग्रेज रूढ़िवादी हो गये, प्रथाएं कठोर बन गई, समाज एक कक्ष में अश्मीभूत, स्थिर हो गया जो न अधिक चौड़ा था न फैलने वाला। इस प्रकार हमने बहुत अधिक परेशानी उठाई है, इतना अधिक कि इसी कारण पंजाब के उच्च न्यायालय ने यौवनारम्भ के बाद विवाह को अवैध घोषित कर दिया। यह एक अन्तिम तिनका था जिसने प्रगतिशील समाज की कमर ही तोड़ दी। इसके तुरन्त बाद, विवाह कानून में सुधार का प्रयास करके प्रथाओं को भी नष्ट करने का प्रयास किया गया। 1870 के अधिनियम 3 को, जो ब्रह्म विवाह अधिनियम के नाम से सर्वाधिक लोकप्रिय है में कुछ अमान्य कथनों की आवश्यकता थी, "मैं इसका खंडन करता हूँ कि मैं एक हिंदू हूँ, अथवा मुसलमान हूँ, या ईसाई अथवा पारसी हूँ, जैन हूँ अथवा यहूदी हूँ।" यह घोषणा उस अधिनियम के प्रावधानों के साथ संबद्ध थी। अतः यह लोकप्रिय नहीं हो पाई। बाद में शारदा अधिनियम आया। भाग्यवश सामाजिक सुधारों पर उसने अपने अधिकारों की मोहर लगा रखी थी जिसे रूढ़िवादी शासक जबरदस्ती लागू कर, रास्ता रोक रही थी। एक नये युग का सूत्रपात हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जो 1885 में स्थापित हुई थी, 1919 तक सामाजिक सुधारों की सहायक संस्था के रूप में संबद्ध रही, जिसने देश की सामाजिक बुराइयों की तरफ ध्यान दिया और कई वैधानिक उपाय करने के सुझाव भी दिए। परन्तु ब्रिटिश सरकार ने उन विधायी परिवर्तनों को लागू करने में अपनी अनिच्छा व्यक्त की और समय बीतने के साथ-साथ समाज ने भी देश में विदेशियों के हाथों समाज सुधार के कार्य को स्वीकार करने के प्रस्ताव को नहीं माना।

महोदय, सौभाग्य से हम ऐसी परिस्थितियों से निकलकर बच गए हैं। मुझे प्रसन्नता है कि मैं उस युग को देखने के लिए जीवित हूँ। जिसमें राष्ट्रीय सरकार के प्रयास से सुधार के प्रगतिशील उपायों, जो देखने में व्यापक, दूरगामी परिणामों वाले हैं, जो उपचार करने वाले हैं को आगे लाया जा रहा है और जो उत्तराधिकार के मामले में, विवाह के संबंध में, संपत्ति के संबंध में, विवाह-विच्छेद के संबंध में और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संबंध में महिलाओं के अधिकारों को स्वीकार करता है। मैं आशा करता हूँ कि जैसे-जैसे समय बीतेगा इस दिशा में और अधिक सुधार होते जाएंगे जिसके लिए ये उपाय किये गये हैं।

अब मैं महिला के पति की मृत्यु के बाद उसको प्राप्त होने वाले अधिकारों के बारे में बात करता हूँ। हमारे शास्त्रों में यह संक्षेप में बताया गया है कि युवावस्था में महिला अपने पिता की, अधेड़ उम्र में अपने पति की और जब वह माँ होती है तो अपने पुत्र की बंधुआ गुलाम होती है। वास्तव में सभी सूक्तियां, सूत्र, कहावतें, सामान्योक्तियां आधे सत्य होते हैं। उनमें थोड़ी-बहुत सच्चाई होती है। हम कभी-कभी उदाहरण देकर इनका उपयोग करते हैं परन्तु उसमें कुछ असत्यता भी होती है फिर भी हमें इनके पूरे महत्त्व को समझने का प्रयास करना चाहिए।

हमारे पास जो मानक हैं, उनके अनुसार एक महिला के पास उसके अपने अधिकार में संपत्ति होगी और वह उस संपत्ति को बेच सकेगी। मैं कानून मंत्री से यह जानने की कोशिश कर रहा हूँ कि ये अधिकार कब से प्रभावी होंगे। यह मानते हुए कि यह विधि स्वीकृत होने के बाद यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है और उसकी पत्नी संपत्ति प्राप्त करती है तो उसके अधिकार उस विधवा के अधिकारों की तुलना में क्या है जिसके पति की मृत्यु एक वर्ष पूर्व हो चुकी हो? एक वर्ष पूर्व पति की मृत्यु वाली महिला की सीमित संपत्ति होती है। इसमें क्या परिवर्तन किये जाने का प्रयास किया जा रहा है? क्या वे विधवाएं जिनके पास केवल सीमित भू-संपत्ति है अपनी संपत्ति को पूर्ण अधिकार वाली भू-संपत्ति में परिवर्तित कर सकती है जिसमें उनको किसी को देने, गिरवी रखने, बेचने आदि का अधिकार हो चाहे परिवार के हितों के लिए उसकी कोई कानूनी आवश्यकता हो या न हो? यह एक ऐसा विषय है जिसको मैं इन पृष्ठों को पलट कर समझने की कोशिश कर रहा हूँ परन्तु मैं अभी समझ नहीं पाया हूँ। मैं यह कहने का दुःसाहस करता हूँ कि विधेयक के प्रस्तुतकर्ता अपने उत्तर में इस विषय को अच्छी तरह स्पष्ट करेंगे।

पुत्री का अधिकार ऐसा विषय है जिस पर बोलने के लिए मैं बहुत उत्साहित हूँ। जब हम अंग्रेजों से बात करते हैं अथवा जब हम विदेशों से आए हुए विद्वानों और पंडितों से भारतीय समाज और अवस्थाओं के बारे में चर्चा करते हैं तो मैं अपनी परम्पराओं की प्रशंसा करने में कभी भी संकोच नहीं करता हूँ। यदि आप किसी परम्परा के आधार को समझने की इच्छा करते हैं अथवा किसी सामाजिक प्रथा अथवा व्यवहार की प्रंशसा करते हैं तो आपको इसे वर्तमान गिरी हुई परिस्थितियों के अनुसार नहीं लेना चाहिए बल्कि आपको इसकी पुरातन पवित्रता और वैभव के बारे में भी सोचना चाहिए। मैं बाल विवाह को एक अच्छी प्रथा के रूप में मानता हूँ क्योंकि हमारे पूर्वजों ने इस विचारधारा को जन्म दिन या तथा वे इसे विवाह करने के लिए औसत पुरुष और औसत महिला के लिए अच्छा मानते थे। ऐसा विवाह अच्छा होता है क्योंकि बच्चे को एक दूसरे परिवार में स्थापित होना पड़ता है और यह स्थापना ऐसे समय होनी चाहिए जब पौधा छोटा हो न कि जब पौधा बड़ा हो जाए। परन्तु तत्पश्चात्, इस विचारधारा में परिवर्तन आ गया। हम अब ऐसे युग में रह रहे हैं जब अविवाहित रहने में लोग अधिक प्रसन्न हैं और विवाह करने तथा बच्चे पैदा करने की अपेक्षा वे दूसरे की पत्नियों की आलोचना करते हैं। अतः हमारे आदर्श परिवर्तित हो गए हैं और इस प्रकार बाल विवाह का सिद्धांत हमारे लिए बाध्यकारी नहीं रह गया है। प्रत्येक को अपनी इच्छा के अनुसार अपना जीवन बिताने की आजादी है और समाज द्वारा हम पर कोई दायित्व लागू नहीं किया गया है तथा सामाजिक परिस्थितियां भी बदल गई हैं। इन परिस्थितियों के चलते हमें पूर्व परम्पराओं, प्रथाओं और घटनाओं का शिकार नहीं बनना चाहिए।

परन्तु हम उन मामलों से कैसे निपटेंगे जो आज की स्थिति में विद्यमान हैं: बहुत–सी पुत्रियां और बहनें हमें केवल निराश ही नहीं कर रही हैं बल्कि वे अपने–अपने घरों में भी परेशान हैं। हम अपनी परम्पराओं की दूसरों के समक्ष प्रशंसा करते हैं। फिर हम इस तथ्य से अपनी आँखें नहीं फेर सकते कि हमारे बहनें और पुत्रियां तथा अन्य संबंधी अपने–अपने घरों में परेशान हैं और छुटकारा नहीं पा रही हैं। बाद में मैंने अपनी महिलाओं के लिए एक प्रेम का आन्दोलन चलाने का सुझाव दिया था। यही एक उपचार है जिसको मैंने सोचा है और इस प्रश्न मे विरुद्ध मैं इसे केवल एक उपचार के रूप में सोच पाया हूँ। जब मैं अहमदाबाद किले में था तो मैंने "अपराजेय महिला" नामक एक पुस्तक पढ़ी थी। उस समय इंग्लैण्ड में एक युद्ध हुआ था और सभी महिलाएं उस युद्ध का प्रतिरोध करना चाहती थीं। वे किस प्रकार प्रतिरोध कर सकती थीं? पुरुष लालची होते हैं। पुरुष झगड़ालू और खून के प्यासे होते हैं। वे लड़ना चाहते हैं। वे अपने में चीते और बन्दर की ताकत मापना चाहते हैं। दूसरों की बन्दर और चीते की ताकत से अत: महिलाओं ने कहा : हमें प्रेम का आन्दोलन शुरू करना चाहिए। कोई युवा लड़की अपने प्रेमी से बात नहीं करेगी, कोई पत्नी अपने पति से बात नहीं करेगी, कोई मां अपने पुत्र से बात नहीं करेगी। पुरुषों को बहिष्कार कर दिया गया। पुरुषों और महिलाओं के बीच तब तक कोई सामाजिक संबंध नहीं रहा जब तक कि घोषित युद्ध समाप्त नहीं कर दिया गया। उन्होंने कहा कि वे ऐसे लोगों के साथ नहीं रह पायेंगे। परन्तु, मैं इस मामले को आगे नहीं बढ़ाऊँगा। मैं सुझाव देता हूँ कि किसी गांव, कस्बे या मोहल्ले में किसी एक महिला के साथ दुर्व्यवहार होता है तो सभी पत्नियों को हाथ में डंडा लेकर घर से बाहर निकलना चाहिए और 24 घंटे बाहर रहना चाहिए और ऐसा करने से शीघ्र ही सभी बदमाश पतियों के दिमाग ठीक हो जाएंगे। सभी व्यक्ति उस मनुष्य पर अपना नैतिक प्रभाव डालेंगे और वे उनसे कहेंगे :– "तुम कौन–सा नीच कार्य कर रहे हो? हम लोगों के घर टूट गए हैं और वे तब तक टूटे रहेंगे जब तक तुम अपनी पत्नी को साथ नहीं ले जाते हो।"

अब आप इस बात पर हँसेंगे। परन्तु अब आप क्या करने जा रहे हैं? क्या आप व्यक्ति पर मुकदमा चलाने जा रहे हैं? वह अपने आरोपों को सामने लाएंगे। क्या आप पत्नी पर मुकदमा चलाने जा रहे हैं? वह तमाम आरोप लगाएंगी। आपको पति–पत्नी के झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए। एक बार मैंने एक पति को अपनी पत्नी को मारते हुए देखा। मैं उनके पास गया और उनके मामले में हस्तक्षेप किया। महिला मेरी तरफ मुड़कर भेड़िये की तरह आई। उसने कहा, "यह मेरा पति है जो मुझे मार रहा है। आप हमारे बीच हस्तक्षेप करने वाले कौन होते हैं?" अत: आपके लिए किसी के घरेलू मामलों में आसानी से दखल देना संभव नहीं है। कौरव और पाण्डव जब लड़ते थे तो कहा करते थे : "हम पांच की तुलना में सौ हैं और तीसरे पक्ष के लिए हम 100+5 हैं।" अत: इस घरेलू मामलों में जब हम दखल देते हैं तो दोनों हमारे विरुद्ध हैं। अत: यदि बेटी को खुश रखना है तो उसे अपने अधिकारों से संपत्ति प्राप्त होनी चाहिए। मैं देखता हूँ कि

इस मामले में पत्नी की स्थिति बहुत ही चापलूसी भरी है। उसकी बहन का पुत्र आता है उसका भाई आता है। वह उनको एक अच्छा उपहार देना चाहती है। परन्तु पत्नी को 5 रुपये भी लेने के लिए पति की तरफ ताकना पड़ता है। अंततः पति की भी अपना मनोदशा होती है। वह अच्छी मनोदशा में अथवा खराब मनोदशा में हो सकता है। अतः पत्नी के पास अपनी कुछ संपत्ति होनी चाहिए। जिसे वह अपना कह सके। क्या आप चाहेंगे कि वह अपने कुछ आभूषणों को बेच दे। यह विचार तो काल्पनिक है। कोई भी महिला अपने पति की मृत्यु के बाद भी आभूषणों को नहीं बेचेगी। क्योंकि पति की मृत्यु के बाद वे आभूषण उसकी और उसके मृतक पति की एक्यता को निशानी होते हैं। मैं इसे समझता हूँ। मैंने कई महिलाओं से इस बारे में बात की है।

माननीय अध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य ज्यादा समय तक बोलना चाहते हैं?

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया : क्षमा करें, मुझे समय की जानकारी नहीं थी। मैं अभी और कहना चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : यह सभा आधे घंटे के लिए स्थगित की जाती है और साढ़े पांच बजे पुनः समवेत होगी।

तत्पश्चात् विधानसभा अपराह्न साढ़े पाँच बजे तक के लिए स्थगित हो गई।

विधानसभा साढ़े पांच बजे पुनः समवेत हुई।

[माननीय अध्यक्ष (श्री जी.वी. मानलंकर) आसन पर]

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया : मैं पैतृक संपत्ति में पुत्री के हिस्से की बात कर रहा था। मुझे अपने महिला मित्रों से मजाक करने की आदत है और उनसे पूछता रहता हूँ कि "आप अपना हिस्सा क्यों चाहती हैं। आप किसी अन्य परिवार की शोभा बनने जा रही हैं। मेरी पत्नी मेरे घर की शोभा है और वह निःसंदेह परिवार की मुखिया है। उसके पास अपनी आलमारी की चाबी है और आपको भी किसी अन्य घर की चाबी मिलेगी।" परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। पति की कृपा पर निर्भर होना पर्याप्त नहीं है चाहे जितना पति प्रिय हो। एक महिला का अपना अधिकार होना चाहिए और जब उसके पास अपना अधिकार होता है तो वह पति के द्वारा ज्यादा सम्मानित होती है और यद्यपि हमारे देश और समाज में युगों से महिला को खुद को तुच्छ समझने के सिद्धांत का अनुपालन हो रहा है। तथापि यह भी सही है कि आधुनिक युग में आत्मसम्मान की विचारधारा ने स्थिति को पूर्णत : परिवर्तित कर दिया है। कोई यह तो कह सके कि महिला के पास अपने अधिकारों का उपयोग करने के लिए कुछ धन तो है।

यहाँ मुझे थोड़ी शंका है कि यदि पुत्रियाँ भी अपना हिस्सा लेने आती हैं तो क्या हम पुत्रों को उनके हिस्से से वंचित नहीं कर रहे हैं, जिसके लिए वे वैधानिक रूप से

अधिकृत हैं। यह विधेयक जो हमारे सामने हैं, स्त्रीधन में पुत्रों के हिस्से को उस सीमा तक बताता है जहां तक पुत्रियों को पिता की संपत्ति में हिस्सा दिया जाता है। यह चीजों को समान करती है और सभी माता-पिताओं को चेतावनी देती है कि उनके समान संख्या में पुत्र और पुत्रियां होनी चाहिएं। यही एक शर्त है जो हम पर लगाई गई है और यही हमारी अर्थव्यवस्था को संतुलित रखेगी। हमें अपनी संतानों को भी संतुलित रखना होगा।

परन्तु एक और कठिनाई है। अंततः परिस्थितियों के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि हम इसके पश्चात् विवाह निमंत्रणों के माध्यम से कुछ नहीं कह सकते कि मेरी पुत्री के विवाह में यह और यह चीजें दी जा रही हैं। इसके लिए एक अन्य नई भाषा का उपयोग होगा। मेरी पुत्री और फलां व्यक्ति आपस में विवाह करेंगे। यह नई भाषा है जो स्वीकार करना है। तब भी यह तथ्य होंगे कि मालदार क्षेत्र के अलावा जहां पति, पत्नियों के घर जाते हैं, यहां सामान्यतः हमारी पुत्रियां, पतियों के घर जाती हैं। निःसंदेह मालाबार क्षेत्र की स्थिति हमारी स्थिति से पूर्णरूप से विपरीत है और इस प्रश्न पर चर्चा करने में घंटों समय लगेगा। मैं इस मनोरंजक विषय पर नहीं जा रहा हूँ। फिर भी यह तथ्य है कि जब पुत्री अपने पिता के घर से दूर जाती है तो आश्चर्य तो है कि क्या वह संपत्ति का आनन्द ले सकेगी जिसको उसके माता-पिता ने दिया है। मैंने अपने मुसलमान भाइयों और बहनों से पूछा है कि क्या पुत्रियां उनको पुत्रों के आधे भाग का आधा हिस्सा दिये जाने की प्रथा का लाभ क्या वास्तव में उठाते हैं। उन्होंने कहा कि शहरों और कस्बों को छोड़कर इसका लाभ कहीं नहीं मिलता है। किसी न किसी तरह से भाई, बहन को परेशान करता रहता है तथा उसकी संपत्ति ले लेता है तथा उसे कुछ मुआवजा दे देता है। इस तरह हो या न हो परन्तु तथ्य यह है कि इसमें एक बड़ा खतरा है और इस मामले में सबसे बड़ा खतरा यह है कि जब आप इस तथ्य को मान्यता देते हैं कि 80% पट्टादार 2" एकड़ नम भूमि का अथवा 4-5 एकड़ शुष्क भूमि का केवल 10 रुपये कर के रूप में देता है तो उनको यहां पुत्री को हिस्सा देने का कहां अवसर है जो कि वह अपने साथ ले जा सके अथवा जिससे वह लाभ उठा सकें। व्यावहारिक दृष्टि से मुझे इसमें शंका है परन्तु सैद्धांतिक रूप से यह किसी भी कीमत पर बिना कोई प्रश्न किए निःसंदेह यह सही है।

जब आपने समाज में महिलाओं की स्थिति का प्रश्न उठाया है और जब आपने पूर्ण संपत्ति हासिल करने का अधिकार उसे दिया है तो आपको उसे कुछ विशेष अधिकार देने चाहिए। जिससे स्वाभाविक रूप से उसके अन्दर स्त्रियोचित आत्मसम्मान की भावना पैदा हो सके। विवाह की शर्तें दासता की शर्तें नहीं होतीं। यह कहना बिल्कुल ठीक है कि विवाह संबंध स्वर्ग में तय होते हैं और एक समय बना पति सदैव पति ही रहता है या एक समय बनी पत्नी सदैव पत्नी ही रहती है। यह बहुत अच्छा नियम है परन्तु उसी समय कुछ शर्तें भी होती हैं जैसे-शराब पीना, क्रूरता, पति का अनैतिक चरित्र, बीमारियां जैसे-कुष्ठ रोग, नपुसंकता और अन्य बहुत-सी शर्तें जिसका उल्लेख कानून मंत्री ने किया है जो पति-पत्नी

से पति का संबंध-विच्छेद को प्रमाणित करता है। यदि कोई व्यक्ति स्वतंत्रता चाहता है और उसे विदेशों में घूमने तथा जो चाहे सो करने का अधिकार है यदि वह पहली पत्नी के जीवित रहते हुए दूसरा विवाह कर सकता है तो निश्चित रूप से पत्नी को भी पहली पति के होते हुए दूसरा विवाह करने का समान अधिकार होना चाहिए। इस स्थिति की कल्पना कीजिए। जब मैं किसी नवयुवक को हैट, बूट और सूट में देखता हूँ और उसके बगल में एक हिंदू स्त्री अच्छे कपड़ों में साड़ी पहने हुए जाती है तो मैं अपने मित्रों से पूछता हूँ, "क्या तुम अपने कपड़ों को विपरीत कर सकते हो? क्या पति धोती और पत्नी यूरोपियन महिला की तरह हैट और स्कर्ट पहनेगी तो वह कैसी लगेगी?" यह बहुत ही बुरा लगेगा, इतना बुरा कि जैसे किसी अंग्रेजी में लिखे गए दस्तावेजों पर अपनी मातृभाषा में हस्ताक्षर करना। एक बार एक आफिसर ने मुझसे कहा अंग्रेजी दस्तावेज पर तेलुगु में हस्ताक्षर न करें। तब मैंने कहा कि एक तेलुगु दस्तावेज पर अपनी मातृभाषा में हस्ताक्षर करना भी उसी प्रकार से अनुपयुक्त होगा। अतः हमें अपनी माताओं, बहनों और पुत्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता देनी चाहिए जिससे कि उन्हें, यदि आवश्यश्क हो, न्यायिक संबंध-विच्छेद और तलाक मिल सके। परन्तु मैं आशा करता हूँ कि विशिष्ट महिलाएं जो कि यहां पर हैं और जो महिलाओं के अधिकारों के लिए वर्षों से प्रयास कर रही हैं, इस तथ्य और सिद्धांत का प्रचार करेंगी कि तलाक एक सुरक्षित निधि है जिसे चालू खर्चे में नहीं डालना चाहिए कि तलाक, स्थिति में सुधार न होने पर अन्तिम उपाय के रूप में होना चाहिए। सार्वजनिक विचार, व्यक्तिगत प्रभाव, पारिवारिक प्रोत्साहन यह सब वहां पर है। आपको ध्यान देना चाहिए कि पति-पत्नी के बीच झगड़े दिन में होते हैं और प्रायः रात में शान्त हो जाते हैं। अतः इन झगड़ों का ज्यादा बढ़ने का अवसर नहीं है। हमें उसका ज्यादा शोर नहीं मचाना चाहिए। अमेरिका में एक राज्य है जिसे इण्डियनपोलिस कहते हैं जहां पर कुली लोग यह चिल्लाते हैं-"इण्डनोलिस स्टेशन, तलाक के लिए बीस मिनट।" रेलवे स्टेशन पर ही तलाक न्यायालय होते हैं। यदि किसी पति पत्नी के बीच ट्रेन में झगड़ा होता है तो वे तलाक के लिए आवेदन कर सकते हैं और ट्रेन चलने से पहले तलाक ले सकते हैं। हमारी स्थिति ऐसी नहीं होनी चाहिए। हमारे यहां तलाक सुरक्षित, निधि की भांति होनी चाहिए। महिला के आभूषणों की तरह, व्यक्तिगत और अत्यधिक आवश्यकता पड़ने पर ही इसका प्रयोग होना चाहिए और इसे कभी भी हल्केपन से उपयोग में नहीं लाना चाहिए।"

अभिग्रहण (गोद लेना) का प्रश्न एक बहुत कठिन प्रश्न है। माननीय विधि मंत्री जी ने मिताक्षर के रीति-रिवाजों को दायभाग से मिश्रित कर दिया है। मैं समझता हूँ कि दायभाग बंगाल में प्रचलित है और मिताक्षर दक्षिण भारत में और बम्बई में एक कानून है जिसे मायुक्य कहा जाता है जिसके अनुसार गैर-ब्राह्मणों में पति की अनुमति की आवश्यकता नहीं है और कोई विधवा किसी बच्चे का दत्तक ग्रहण कर सकती है। मैंने 10-12 वर्ष पूर्व प्रिवी कौंसिल का एक निर्णय पढ़ा था। मैं चाहता हूँ कि उस

कानून की नकल की जाए जहां पर मिताक्षर के अनुसार ऐसा अभिग्रहण अनुमत्य नहीं है। आखिरकार कोई परिवार किसी बालक का अभिग्रहण (गोद लेना) क्यों करता है? अपनी वंश परम्परा को बनाए रखने के लिए। क्या किसी विधवा को अपने मृतक पति की भांति परिवार की वंश परम्परा को बनाए रखने का अधिकार नहीं है? क्या किसी वंश परम्परा को बनाए रखने के लिए पुरुष का ही एक मात्र अधिकार है जो कि मर चुका है। यदि कोई लड़का कोई संपत्ति विरासत में प्राप्त कर सकता है तो किसी मां के लिए उसके अधिकार के तहत अपने पति की लिखित अथवा पंजीकृत अनुमति के बिना अथवा किसी दस्तावेज अथवा वसीयत के बिना उसकी अपनी संपत्ति के लिए किसी लड़के को अभिग्रहीत करने हेतु छूट क्यों नहीं हो सकती? अंग्रेजी कानून में मौखिक वसीयत अनुमत्य है; जहां लिखित वसीयत में दो हस्ताक्षरों की आवश्यकता होती है वहीं मौखिक वसीयत में ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है। अन्ततः मौखिक वसीयत द्वारा लाखों करोड़ों रुपयों की संपत्ति हस्तान्तरित होती है। किसी समाचार-पत्र का यह भाग कि "सब कुछ पत्नी के लिए" एक वैधिक वसीयत मानी जाती है। तब एक पति के लिए अपनी पत्नी को मौखिक अनुमति देने के लिए किसी कानून में प्रावधान क्यों नहीं है जिससे कि वह अभिग्रहण (गोद लेना) कर सके। ये सब ऐसे मुद्दे हैं जिन पर प्रवर समिति को विचार करना होगा। (**एक माननीय सदस्य**: "आखिर अनुमति क्यों?") यही तो मेरी बहस का विषय है। यदि अनुमति की आवश्यकता है तो मौखिक अनुमति क्यों नहीं? अभिग्रहण को विनियमित करने वाले कानून में जितना संभव हो सके उतनी छूट दीजिए।

तत्पश्चात् एक-पत्नी विवाह प्रथा का प्रश्न आता है। मुझे यह जानकर बहुत दुख होता है कि युवा लड़कियां अपनी युवावस्था में सभी परिस्थितयों को नहीं समझ पाती हैं जिस पर विवाह के लिए उचित वर के चयन हेतु ध्यान देना आवश्यक होता है। अंग्रेजी की एक पुरानी कहावत है जिसमें कहा गया है: आपको संपन्नता, अच्छा चेहरा, परम्परा, वंशावली, संस्कृति पर विचार करना चाहिए-एक पति चुनने से पहले इन सब बातों पर विचार करना चाहिए। परन्तु, अब तो यह एक आम बात हो गई है-और एक बहुत ही प्रतिष्ठित अधिकारी ने इस कथन को सही बताया है-शिक्षित लड़कियों को तैयार पतियों को चुनने की आदत होती है, जिनकी पहले से ही पत्नी और 5-6 बच्चे होते हैं। ऐसा क्यों होता है? इन सब मामलों में ऐसा कॉलेज के दिनों में उस विषय पर शिक्षा की कमी के कारण होता है। फिर भी इन सभी बातों को निषिद्ध माना जाता है और प्रत्येक व्यक्ति उनके बारे में बात करने से हिचकता है यद्यपि इन मामलों के संबंध में अनिवार्यतः बहुत-सी निजी बातें होती रहती हैं। निषिद्ध फल कभी बिना स्वाद के नहीं रहता। अतः यह आवश्यक है कि हम इन सब मामलों में शिक्षा दें। एक बार मैंने अपने किसी मित्र से कहा था-कि उन्होंने अपनी पुत्री को अपना दामाद चुनने के लिए स्वतंत्रता दे रखी है। तो अपनी बातचीत के दौरान उन्होंने मुझे एक कहानी बताई जिसको मैंने उनके मनोरंजन के लिए उनकी पुत्री और दामाद के

लिए जोड़ दिया। उसने उससे पूछा था : "क्या तुम फलां लड़के से विवाह करना चाहती हो जो कि सुन्दर है, देखने में अच्छा है, अच्छा पढ़ा-लिखा है, बी.ए. पास है अथवा किसी व्यवसाय में है, किसी धनी व्यक्ति का पुत्र है और अच्छा मकान है" तो उसने कहा, "नहीं पिताजी, क्या उसके पास मोटर कार, और बिजली नहीं है? यदि उसके पास मोटर कार और घर में बिजली है तो आप मेरा विवाह किसी से कर दें, मुझे चिन्ता नहीं है। मैं इच्छापूर्वक उससे विवाह कर लूंगी।" अशिक्षित युवकों की ऐसी प्रवृतियां और विचार हैं और इसीलिए यह बहुत आवश्यक है कि हम इन सब मामलों में उनको शिक्षित करें। केवल कानून बनाना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि युवा लड़कियों को एक-पत्नी विवाह की महत्ता के बारे में शिक्षित करने के लिए इन सब कानूनों को प्रचारित करने और लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है। यह बहुत ही आवश्यक है।

मैं इस विधेयक के प्रत्येक पहलू का स्वागत करता हूँ। यदि इसमें कुछ कमियां हैं, जो कि यत्र-तत्र स्पष्ट हो रही हैं, तो मैं यह विश्वास से कह सकता हूँ कि इन कमियों को उन सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा दूर कर दिया जाएगा। जिनके नामों का उल्लेख प्रवर समिति की संरचना में किया गया है। मैंने आवश्यक समय की अपेक्षा ज्यादा समय ले लिया। शायद, मैं घंटों तब बोल सकता हूँ। मुझे सभी प्रकार की परिस्थितियों का सावधानी से अध्ययन करने का 68 वर्षों का अनुभव प्राप्त है तथा मैं अभी कुछ और कहना चाहता था परन्तु समय कम है और 7:00 बजे हमें 'गिलोटिन' (बहस समाप्त करने का आदेश प्राप्त करना) का भी प्रयोग करना है तथा हमारे कुछ भाई-बहन भी बोलना चाहते हैं और मैं भी उनको सुनने का इच्छुक हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : महोदय, मेरी स्थिति बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि मेरे ऊपर मेरे मित्रों द्वारा मुझे सौंपे गये विशेष बिन्दुओं को बनाने का आरोप लगाया है। ये आरोप विधेयक की कुछ आलोचनाओं से संबंधित हैं। तथापि, मैं इस सभा को भरोसा दिलाता हूँ कि व्यक्तिगत रूप से मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ। इस विधेयक के अधिकतर प्रावधान हमारे समुदाय में प्रचलित विधियों के अनुसार ही हैं और यह विधेयक करने की कोशिश व्यावहारिक कठिनाईयों को परे रख सभी के साथ पूर्ण न्याय करने की कोशिश करता है। तथापि इसमें कुछ आपत्तियां हैं जिनके बारे में कहने के लिए खड़ा हुआ हूँ। पाता हूँ कि सभा के प्रभावशाली सदस्य, जो इस विधेयक का विरोध करते, उच्च वर्ग के 5 प्रतिष्ठित सदस्यों की शक्तिशाली व्यूहरचना से सहम गये हैं, अपनी बन्दूक लेकर खड़े हैं तो इनके बीच मैं अपने विचार व्यक्त करने का थोड़ा साहस कर सकता हूँ, जिसे मुझे बताने का आरोप लगाया गया है।

महोदय, माननीय विधि मंत्री जी ने उन अभिमतों के बारे में हमें कुछ नहीं बताया जिनको संगृहीत करके पेम्फलेट में प्रकाशित किया और जो कि हमें परिचालित की

गई है। ये हमें बिल्कुल अन्तिम चरण में उपलब्ध कराये गये। यदि यह वांछित था कि माननीय सदस्य उसे पढ़ें, उनका विश्लेषण करें और अपने विश्लेषणें के परिणाम से सभा को अवगत करायें तो मैं समझता हूँ कि इसके लिए समय बहुत कम है। हिंदू कानून समिति के प्रतिवेदन पर एक पेम्फलेट है जिसमें बहुत से अभिमतों का समावेश किया गया है। मुझे खेद है कि सदस्यों के पास इसे नहीं भेजा गया था। (**एक माननीय सदस्य:** "यह भेजा गया था।") नहीं, यह नहीं भेजा गया था। यह पुस्तक परिचारित नहीं की गई थी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह पुस्तक पुस्तकालय में काफी समय तक रखी गई थी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह पुस्तकालय में बहुत दिनों से नहीं रखी थी। इसे अभी-अभी ही पुस्तकालय में रखा गया है। मुझे इसे बाजार से खरीदना पड़ा था। अभी हाल ही में इसकी कुछ प्रतियां पुस्तकालय में रखी गई हैं।

प्रो. एन.जी. रंगा (मद्रास : सामान्य) : यह क्या है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जब प्रोफेसर रंगा जैसे माननीय सदस्य पूछते हैं कि : 'यह क्या है' तो यह यही प्रदर्शित करता है कि...

प्रो. एन.जी. रंगा : मैंने पूछा था कि आप जिसके बारे में बात कर रहे हैं, वह क्या है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह हिंदू विधि समिति का प्रतिवेदन है।

प्रो. एन.जी. रंगा : अर्थात्, यह राव समिति है। इसकी रिपोर्ट तो एक वर्ष से अधिक समय से सार्वजनिक रूप से पड़ी हुई है।

माननीय अध्यक्ष : यह जो कुछ भी है, माननीय सदस्य आप आगे बोलिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह प्रतिवेदन अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है। मैं कहना चाहता हूँ कि इस प्रतिवेदन में न्यायमूर्ति स्वर्गीय डी.एन. मित्तर ने एक प्रतिकूल टिप्पणी की थी। उन्होंने इस विधेयक के विरोध में बहुत से विचार संग्रहीत किए हैं। मैं इसे पढ़ना नहीं चाहता। उन्होंने इसे राज्य-दर-राज्य और विषय-दर-विषय में वर्गीकृत किया है। इस पर चर्चा करने हेतु पर्याप्त समय नहीं है परन्तु उन्होंने कहा है कि इस विधेयक के सिद्धांतों का पूरा हिंदू समुदाय विरोध कर रहा है, वह इस समुदाय का रूढ़िवादी वर्ग है।

मैंने इतने समय में जितना संभव हो सका, ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। सरकार द्वारा विधेयक के संबंध में नये अभिमत प्राप्त किए गए हैं। जिसे हमें वितरित किया गया। मैंने पाया कि विधेयक के विरोध में बहुत से अभिमत आए हैं। वास्तव में, जब समिति साक्ष्य ले रही थी तो बंगाल में भी सब साक्ष्य एक ही ओर थे। अब जो अभिमत

हमारे पास आए हैं—मैं पाता हूं कि पश्चिम बंगाल में अभी भी सब एक ओर हैं। यह स्पष्टत: विधेयक के विरुद्ध है। जो उल्लेखनीय बात है, वह यह है कि बंगाल सरकार के विधि मंत्रालय के सचिव का भी इस संबंध में अभिमत है। ये अभिमत पत्र संख्या 4, संख्या 17 है। यह अभिमत विधेयक के विपरीत है। इसमें कहा गया है कि विधेयक को लाने का यह उचित समय नहीं है। (**एक माननीय सदस्य**: "वह कब था।") इसमें कोई तिथि नहीं है। इसे अभी वर्तमान में ही अर्थात् 5-6 दिनों पहले परिचालित किया गया है। वास्तव में यह बताया गया है कि यह विधेयक दूरगामी महत्व वाला है और व्यक्त किए गए अभिमतों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। यह सभा अब आपत्तियों की विभिन्न श्रेणियों पर विचार करेगी। एक आपत्ति यह है कि, यह विधेयक विभिन्न समुदायों से संबंधित विभिन्न विधायकों द्वारा विचार नहीं किया जाना चाहिए। यही कारण है कि मैं विशेष रूप से बोलने का इच्छुक हूँ क्योंकि यह भय है कि विभिन्न समुदायों के व्यक्ति विधेयक का समर्थन करेंगे और रूढ़िवादी हिंदुओं के हितों को नष्ट कर देंगे। इसी कारण से मैंने जल्दबाजी में यह घोषणा कर दी कि मैं इस विधेयक का समर्थन नहीं करता हूँ क्योंकि हिंदू समुदाय इसके विरुद्ध है।

एक आपत्ति यह है कि महिलाओं की हिस्सेदारी शुरू करने से मुकदमे आने शुरू हो जायेंगे। इस संबंध में कई विचार हैं कि इससे विभाजन को बढ़ावा मिलेगा और अन्तत: इससे हिंदुओं में सयुक्त परिवार प्रथा का विघटन होगा। जिसने विभाजन के विनाशकारी प्रभाव से समुदाय को बचाया है और जिससे मुसलमान बहुत अधिक भयातुर रहते हैं। यह भी कहा गया है कि हिंदू कानून-वैदिक साहित्य और वैदिकोत्तर साहित्य जिसे श्रुति और स्मृति के रूप में जाना जाता है—इसकी उत्पत्ति दैवीय है। परन्तु यह विधेयक कहा गया है, हिंदुओं की संरचना, धार्मिक आधार और धार्मिक ताने-बाने के प्रतिकूल है। यह वह आधार है जिसका काफी विरोध हो रहा है। यह तर्क दिया जाता है कि आप सभी धर्माचरण, धार्मिक साहित्यों में उतना विश्वास नहीं कर सकते जितना विश्वास अन्धविश्वासों पर करते हैं। उन्होंने हिंदू समाज को वर्षों तक जीवित रखा है यद्यपि वह बिल्कुल सत्य है कि समाज स्थिर नहीं रह सकता। इसे गतिमान होना चाहिए परन्तु इसे सावधानी से और अनुभव के साथ गतिमान होना चाहिए।

इस विधेयक में बहुत व्यापक परिवर्तन है। इन आपत्तियों में एक स्पष्ट मुद्दा यह है कि वर्तमान विधानमंडल केवल एक मुद्दे पर चुनकर आया था और वह था स्वतंत्रता की प्राप्ति। वर्तमान विधेयक, जो कि निश्चित रूप से व्यापक और उलझा हुआ है, और इसके सिद्धांत जनता के समक्ष अभी नहीं आए हैं अत: इस संबंध में उनके विचारों की प्रतीक्षा करना और संविधान को पारित करना तथा जनता के समक्ष चुनाव में इस मुद्दे को ले जाना बेहतर होगा। तब यह पता लगेगा कि क्या वास्तव में जनता भी ऐसा ही चाहती है। वास्तव में, यह कहा जाता है कि यह विधेयक उचित रूप से परिचालित नहीं

किया गया है। कई संगठनों को इस पर विचार करने और इस पर विचार व्यक्त करने का कुछ दिन का ही और कुछ घंटों तक का ही समय मिला। ऐसी परिस्थितियों में यह तर्कसंगत है कि इस स्तर पर विधेयक पर विचार न किया जाए।

इस प्रश्न का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू है। इस विधेयक को पूरे भारत में समान रूप से हिंदुओं पर लागू करने का प्रयास है। परन्तु यह बताया गया है कि समय कम होने के कारण यह समान रूप से लागू नहीं हो पाएगा। यह सर्वविदित है कि कृषि भूमि का संबंध इस सभा के अधिकारक्षेत्र से बाहर है। यह राज्य का विषय है। जो भी कानून हम पारित करेंगे उसका प्रभाव केवल गैर-कृषि भूमि पर होगा, फिर उसका जो अर्थ हो यह कथन भी निरर्थक है। इसकी परिभाषा काराधान की दृष्टि से आयकर अधिनियम में की गई है और यह विधेयक तथा अन्य अधिनियम इसी आधार पर बने हैं। कुछ ऐसी भूमि हो सकती है जो कृषि और गैर-कृषि योग्य भूमि के बीचे में हो। वास्तव में, इस अन्तर के अलावा, हमारी संपत्ति का एक बहुत बड़ा भाग-लगभग 80 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि है। अत: यह पूर्णत: स्पष्ट है कि राज्य ही इसके बारे में कार्य कर सकते हैं और वे अलग-अलग तरीकों से इस बारे में कार्य कर सकते हैं, कुछ राज्य ऐसे भी हैं जो इस संबंध में कोई कार्य नहीं करते। कुछ राज्यों को हमने देश में शामिल किया है। यद्यपि हिंदू कानून एक समान होना है और इसे समरूप बनाने का भी प्रयास है–लोग विधान बना सकते हैं और नहीं भी बना सकते हैं और यदि वे विधान बनाते हैं वे अलग प्रावधान कर सकते हैं। वास्तव में प्रांतीय सरकारें और राज्य अधिकतर स्थानीय प्रथाओं और स्थानीय विचारों से ज्यादा निर्देशित होते हैं और मुझे विश्वास है कि पश्चिम बंगाल विधानसभा के लिए ऐसा कानून पारित करना बहुत ही कठिन होगा जो कि राज्य की विचारधाराओं के विपरीत है। अत: इसका प्रभाव ऐसा होगा कि इस कानून के अनुसार यदि किसी व्यक्ति के पास दो प्रकार की संपत्ति है–जैसे कृषि योग्य भूमि और मकान अथवा भवन–तो एक संपत्ति पर गैर-कृषि योग्य भूमि का कानून लागू होगा तो दूसरे पर कृषि योग्य भूमि का कानून। जो भी कानून आप पारित करें, वह समान रूप से होना चाहिए और इस संबंध में राज्य सरकारों के अभिमतों को एकत्रित करना और व्यापक विधान पारित करने के लिए इस सभा को राज्य के न्यायाधिकार क्षेत्र में निर्णय देने के लिए उसकी सहमति लेना अधिक उचित होगा। जैसा कि हमने कुछ मामलों में किया है। यदि व्यापक होना और परिपूर्ण होना ही मुख्य उद्देश्य है तो, यह अच्छा होगा कि केन्द्रीय विधानमण्डल राज्यों की सहमति प्राप्त करे और इस संबंध में पूरे भारत में कार्य करे। इन मामलों में राज्यों से सहयोग मांगने के लिए उनसे बात करना ज्यादा उचित होगा। यही कुछ परेशानियां हैं। अब समय अधिक हो गया है और जैसा कि माननीय कानून मंत्री जी ने बताया है, इस विधेयक की कुछ मुख्य विशेषताओं पर बात करना संभव नहीं हो पायेगा, कुछ आपत्तियों पर भी, सीमा-क्षेत्र की बात को छोड़कर, चर्चा करना असंभव है। एक बात मुझे परेशान

कर रही है कि लोगों के अभिमतों का सावधानी से अध्ययन नहीं किया जाता है। हमें इन अभिमतों पर बिन्दुवार कोई विश्लेषण नहीं मिला है। सदस्यों को विश्लेषण करने का समय दिया जाना चाहिए जिससे कि वे उन पर अपने विचार व्यक्त कर सकें। किसी निजी सदस्य के लिए तेज गति से अभिमतों का पढ़ना और उनका विश्लेषण करना, अपने मस्तिष्क विभिन्न कक्षों में उसे एकत्रित करना और उनका वर्गीकृत आकार में उपयोग करना बहुत कठिन है। किसी ऐसे महत्वपूर्ण मामले पर जैसे कि यह है, माननीय मंत्री जी के विभाग द्वारा अभिमतों को वर्गीकृत करना अत्यधिक वांछनीय हो तो, जैसे पहले इस तरह के मामलों में किया गया था, और तब उसे सदस्यों के पास भेजा जाना था ताकि वे प्रत्येक मुद्दे पर आपत्तियों अथवा समर्थन की दृष्टि से, अपने विचार रख सकें।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : विधि समिति के प्रतिवेदन में, वर्गीकरण, विश्लेषण और अन्य सभी बातें हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : टिप्पणी करने के लिए मैं आपका आभारी हूँ परन्तु मैं जिन अभिमतों की बात कर रहा हूँ वे प्रतिवेदन आने के बाद प्राप्त हुए हैं और परिचालित हुए हैं। तथ्य है कि जिन अभिमतों को विभाग ने परिचालित किय है, अभी हाल ही में प्राप्त हुए हैं और वे इस विधेयक में उसी प्रकार रखे गए हैं। परन्तु हिंदू कानून समिति के प्रतिवेदन में एकत्रित अभिमत विधेयक के प्रारूप को तैयार करने से पहले एकत्रित किए गए थे अर्थात् जांच स्तर पर। परन्तु माननीय सदस्य एक बात भूल गए हैं कि जिन अभिमतों की बात मैं कर रहा हूँ वे प्रतिवेदन में प्रकाशित नहीं हुए हैं। उनको अलग से मुद्रित और परिचालित किया गया था। ये ऐसे अभिमत हैं जिनके बारे में मैं करता हूँ। मैं समझता हूँ कि इनका सावधानी से विश्लेषण किया जाना था और विभिन्न बिन्दुओं के साथ इन्हें मुद्रित किया जाना था। महोदय, मैं इस मामले में अधिक मेहनत नहीं करना चाहता। व्यक्तिगत रूप से तो मैं इस विधेयक के पक्ष में हूँ परन्तु ये कुछ आपत्तियाँ भी हैं जिन्हें मेरे कुछ मित्रों ने मुझे उठाने के लिए कहा है। इसी वजह से मैंने इन्हें सभा में रखा है। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत सारे मुद्दे हैं परन्तु वे स्वरूप में छोटे हैं। समय की कमी के कारण मुझे अपने भाषण को संक्षिप्त करना चाहिए। पुनः, किसी भी विधान को जनता का अभिमत का अनुशरण करना चाहिए। जनता में अभिमत उत्पन्न या नजरअन्दाज करने के बजाय हमें उनके विचारों का अनुसरण करना चाहिए और मैं यहां एक प्रसिद्ध व्यक्ति की उक्ति दे रहा हूँ जो कि आधुनिक राजनीति के जनक हैं और वे हैं एडमण्ड बर्क। उन्होंने एक विशेष अवसर पर कहा था कि :–

"अनुसरण करना जनता की इच्छाओं का दमन न करना, दिशा देना और उसे एक रूप देना और तकनीकी जामा पहनाना, समुदाय की सामान्य भावना को विशिष्ट स्वीकृति देना ही किसी विधान का वास्तविक अन्त है।"

परन्तु, आपत्तियों में यह बताया गया है कि इस विधेयक के पीछे जनता का कोई अभिमत नहीं है। कुछ आपत्तियों में यह बताया गया है कि केवल कुछ शिक्षित वर्ग और अत्याधुनिक वर्ग के लोग ही इस विधेयक का समर्थन कर रहे हैं। परन्तु जन-समूह, जिसमें बहुत से लोग अज्ञानी हैं, इसके प्रति उदासीन हैं और इस तरह इसका वयस्क प्रचार नहीं हुआ है, जितना इसे महत्वपूर्ण विषय पर किया जाना था। मैं इन परिस्थितियों में इस सभा में यह विचार करने हेतु निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि यह सभा कुछ विवादित मसलों पर प्रवर समिति को कुछ निर्देश दे, तो यह अच्छा होगा परन्तु हम बिना कोई निर्देश देते हुए यह विधेयक भेज रहे हैं। इस संबंध में मुझे विधि मंत्री से कुछ स्पष्टीकरण मांगना चाहिए। इन चंद शब्दों के साथ, महोदय, मैं आशा करता हूँ कि आपत्तियों में जो मुद्दे उठाये गए हैं उन पर सावधानी से विचार किया जाएगा और अपेक्षित निर्णय पर पहुंचा जाएगा।

प्रवर समिति के सदस्यों के संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इस समिति में योग्यतम सर्वाधिक अधिकारयुक्त और सर्वाधिक जानकारी वाले सदस्य हैं और मैं आशा और विश्वास करता हूँ कि इस विधेयक के विरुद्ध जो आपत्तियां उठाई गई हैं उनके साथ पूरा न्याय किया जाएगा।

श्रीमती हंस मेहता (बम्बई : सामान्य) : अध्यक्ष महोदय, मैं माननीय मंत्री जी को सत्र के अन्तिम समय (6.00 बजे सायंकाल) में यह विधेयक लाने के लिए धन्यवाद देती हूँ। मैं श्री बी.एन. राव और उनके साथियों को इस प्रतिवेदन में उनके द्वारा किए गए महान परिश्रम के लिए, जिन पर ये सभी सिफारिशें आधारित हैं, बधाई देती हूँ और अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ। हिंदू कानून को संहिताबद्ध करने संबंधी यह विधेयक बहुत ही क्रान्तिकारी विधेयक है और यद्यपि हम इससे पूरी तरह सहमत नहीं हैं परन्तु यह हिंदुओं के सामाजिक इतिहास में एक बड़ा मील का पत्थर साबित होगा। परन्तु जब से इस विधेयक का प्रारूप तैयार किया गया तब से बहुत-सी घटनाएं हुईं और जो इनमें से सबसे बड़ी घटना हुई थी वह है हमारी राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति। हमारा नया संविधान बनने वाला है। हम उन मौलिक सिद्धांतों पर पहले ही सहमत हो चुके हैं जिन पर इस नए संविधान का प्रारूप तैयार किया जाना है। हमारा नया राज्य एक प्रजातांत्रिक राज्य बनने वाला है और प्रजातंत्र का आधार प्रत्येक व्यक्ति की समानता पर है। यह इस दृष्टि से भी है कि हमें अब विरासत और विवाह इत्यादि की समस्याओं तक पहुंचना है जो कि हमारे सामने हैं। प्रवर समिति को इसलिए यह देखना है कि नये विधेयक का प्रारूप सिद्धांतों पर हो।

यह सत्य है कि आचार-संहिता ने विरासत के संबंध में 6 भेदभावों को हटा दिया है। महिला को एक उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी गई है और वह पूर्ण अधिकार से अपनी संपत्ति का लाभ उठाने की हकदार हो गई है। अर्थात् इस आचार-संहिता ने

महिलाओं के सीमित भू-भाग का अधिकार समाप्त कर दिया है। इसके बावजूद भी हम अनुभव करते हैं कि अभी भी यह पर्याप्त नहीं है। एक पुत्री जिसे उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता मिली है, संपत्ति प्राप्त करती है परन्तु वह पुत्र के हिस्से का आधा प्राप्त करती है। यह समानता के सिद्धांत का उल्लंघन है जिसके बारे में हमने बारम्बार कहा है कि हमारा नया संविधान नई बातों पर आधारित होने जा रहा है—एक संविधान जिसका उद्देश्य इस देश के लोगों के लिए न्याय देना है, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक। हम इसलिए महसूस करते हैं कि पुत्री को अपने पिता की संपत्ति में पुत्र के साथ समान हिस्सा मिलना चाहिए और पुत्र को अपनी मां की संपत्ति में पुत्री के समान हिस्सा मिलना चाहिए। यह भी तर्क दिया जाता है कि एक पुत्री को उसके पिता और साथ ही साथ उसके पति का हिस्सा मिलता है जबकि व्यक्ति को अपनी पत्नी से कुछ नहीं मिलता। हमने पहले ही प्रस्ताव किया था, जैसा कि महिलाओं के संगठन कह चुके हैं कि पति अपनी पत्नी की संपत्ति को भी उसी प्रकार प्राप्त कर सकता है जैसे कि पत्नी अपने पति की संपत्ति प्राप्त करती है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम में, पति के उत्तराधिकार से संबंधित प्रावधान पहले से ही हैं और मैं समझती हूँ कि हमें उस प्रावधान की नकल करनी चाहिए।

लोगों ने तर्क दिया है और मेरे कुछ माननीय मित्रों ने, जिन्होंने मेरे पहले अपनी बातें कहीं हैं कि यदि पुत्री को उसका हिस्सा मिलता है विशेषकर भू-संपत्ति में, तो भूमि का विखण्डन हो जाएगा। परन्तु पुत्री के विरासत के मामले में ऐसा तर्क क्यों दिया जाता है। जब किसी व्यक्ति के पास एक से अधिक पुत्र हैं तो भी ऐसी ही स्थिति होती है। यदि उसके पास कहें 4 या 5 पुत्र हैं तो भूमि बांटनी पड़ती है; तब इस तथ्य को क्यों नहीं रखा गया। ऐसा तब किया गया जब पुत्रियों को संपत्ति प्राप्त करने का प्रश्न उठा है? यह अच्छा होगा यदि भू-विखण्डन के विरुद्ध लिए कोई कानून बनाया जाए और यदि यह निर्धारित सीमा से कम मिलती है तो इसे बेच देना चाहिए। इसका एक और विकल्प है भूमि का समूहीकरण।

अब मैं विवाह के प्रश्न पर बात करती हूँ। मुझे प्रसन्नता है और भारतीय महिलाएं भी यह जानकर खुश होंगी कि एक-पत्नी विवाह के सिद्धांत को मान्यता मिल गई है और यदि संहिता लागू हो जाती है तो एक-पत्नी विवाह का सिद्धांत स्थापित हो जाएगा। महोदय, हमने अनुभव किया है कि सभी सभ्य राष्ट्रों और सुसंस्कृत समुदायों ने एक-पत्नी विवाह के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है। महिलाओं का अनादर और महिलाओं पर किए जा रहे अत्याचार जिनके बार में हम सुनते हैं, मैं समझती हूँ कि इसका कारण यह है कि बहुविवाह का सिद्धांत अभी भी चलन में है। यदि हम एक-पत्नी विवाह को स्वीकारते तो मैं नहीं समझती कि महिलाओं का अपहरण होता, विवाह से उठा ली जातीं अथवा उनके साथ अन्य कुछ घटित होता। यह बहुत की महत्वपूर्ण सिद्धांत है और मैं आशा करती हूँ कि यह सभा इसे स्वीकार करेगी।

परन्तु विवाह की कुछ शर्तों के बारे में एक-दो बातें हैं जिन पर मैं कुछ प्रस्ताव देना चाहती हूँ। हमें सपिण्ड विवाह और सपिण्ड की परिभाषा के संबंध में कुछ पुनः सोचने की आवश्यकता है। संहिता में दी गई परिभाषा से हम बिल्कुल भी संतुष्ट नहीं हैं। पुनः हम चाहेंगे कि वैध विवाह के लिए विवाह योग्य उम्र भी एक शर्त होनी चाहिए। हमारे पास शारदा अधिनियम भी है परन्तु यह संतोषजनक नहीं है। इससे भी लोग संतुष्ट नहीं हैं क्योंकि इससे बाल-विवाह को रोकने में सहायता नहीं मिलती; यह प्रभावशाली नहीं है। इसके लिए हम चाहते हैं कि कानून ज्यादा कठोर हो। यदि हम विवाह की उम्र 16 वर्ष चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि वैध विवाह के लिए यह एक शर्त के रूप में शामिल किया जाए और मैं चाहती हूँ कि प्रवर समिति यह परिवर्तन करें।

अब तलाक के संबंध में, कुछ लोगों द्वारा विचार व्यक्त करने के बाद भी कुछ अधिक हासिल नहीं हुआ है। तथापि, एक बात है जिसे मैं प्रवर समिति के सदस्यों की सूचना में लाना चाहती हूँ और वह है परित्याग के लिए दिया गया समय। यदि कोई पुरुष या महिला पति/पत्नी का परित्याग करता है तो यह प्रावधान बनाया गया है कि वह 5 वर्षों बाद तलाक ले सकता है। संहिता में 5 वर्ष का समय दिया गया है। यहां तक कि 'नारद स्मृति' में भी एक संतान-विहीन महिला को 3 वर्ष प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया है। तीन वर्षों के बाद, वह पुनर्विवाह कर सकती है। तो यह विशेष उपबंध हम यहां क्यों नहीं लाते कि यदि एक स्त्री संतान विहीन है तो उसे 5 वर्ष प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है बल्कि वह तीन वर्षों के बाद अपने पति से तलाक ले सकती है। यदि किसी स्त्री के बच्चे हैं तो उसके लिए 5 वर्ष का समय ठीक है परन्तु किसी संतान-विहीन स्त्री के लिए तीन वर्ष का समय ही पर्याप्त होगा।

संरक्षकता के संबंध में, इस संहिता द्वारा वर्तमान कानून में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। पिता ही बच्चों का स्वाभाविक संरक्षक है। मां इस में नहीं आती। हम चाहते हैं कि माता भी पिता के साथ बच्चों की सह-संरक्षक हो।

अभिग्रहण (गोद लेना) के संबंध में, मैं समझती हूँ कि पूरा अध्याय ही हटा देना चाहिए। हमारा राज्य एक धर्मनिरपक्ष राज्य है। हम धर्मनिरपेक्ष राज्य होना चाहते हैं। हिंदू कानून में, अभिग्रहण धार्मिक कार्यों के लिए है। किसी धर्मनिरपेक्ष राज्य को ऐसा किसी धार्मिक-प्रथा के संबंध में ही क्यों कुछ करना चाहिए? हमारी चिन्ता का विषय है कि क्या अभिग्रहण को, जो कि धार्मिक कार्य के लिए है, राज्य द्वारा विरासत के उद्देश्य के लिए ही मान्यता मिलनी चाहिए। हम ऐसा नहीं चाहते। यदि किसी बच्चे का अभिग्रहण (गोद लेना) होता है चाहे वह बालिका हो या बालक, तो हम चाहते हैं कि पुत्रियों का भी अभिग्रहण होना चाहिए—यदि किसी बच्चे का अभिग्रहण धार्मिक कार्य के लिए नहीं हुआ है, बल्कि वास्तविक कार्य के लिए अर्थात् माता-पिता एक संतान चाहते हैं तो उस संतान को वही अधिकार मिलने चाहिए जो कि वास्तविक संतान को मिलते हैं। परन्तु

यदि अभिग्रहण धार्मिक कार्यों के लिए होता है तो केवल इस स्थिति में मैं समझती हूँ कि अभिग्रहण को विरासत हेतु मान्यता नहीं मिलनी चाहिए।

ये कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं जिन पर मैं चाहती हूँ कि प्रवर समिति विचार करे। हमारी पुरानी परम्पराओं के संबंध में सभी बातों की प्रशंसा करते हुए कम से कम मेरे माननीय मित्र डॉ. पट्टाभि ने बहुत लम्बे भाषण दिए हैं। हमने पुरानी बातों पर बहुत ध्यान दिया है। हमें भविष्य की तरफ भी ध्यान देना चाहिए। हम जो कानून बना रहे हैं वह भविष्य की पीढ़ियों के लिए हैं। यह हमारे लिए नहीं है परन्तु हमारे बाद आनेवाली पीढ़ियों के लिए यह कानून लागू होगा। हमें भविष्य की परिस्थितियों को देखना है। अंततः परिस्थितियां ही कानून बनाती हैं। कानून समाज को प्रतिबिम्बित करता है। कानून उन परिस्थितियों को प्रतिबिम्बित करता है जिसमें लोग रहते हैं। हमें यह भी देखना है कि विवाह अथवा तलाक के संबंध में अथवा अन्य दूसरे विचारों के संबंध में भविष्य की पीढ़ियां हमारी पूर्व धारणा से ग्रसित न हों। मैं आशा करता हूं कि प्रवर समिति इस पर विचार करेगी और ऐसा विधेयक तैयार करेगी जो आनेवाले हिंदू समाज के लिए बहुत बड़ा वरदान सिद्ध होगा।

श्री राम सहाय (ग्वालियर राज्य) : अध्यक्ष महोदय, मुझे इस विधेयक के संबंध में विशेष रूप से कुछ नहीं कहना है। वर्तमान हिंदू समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए जिस तरह से इस विधेयक का प्रारूप तैयार किया है, मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ। परन्तु मैं इसमें एक-दो कमियाँ पाता हूँ और मैं इसे प्रवर समिति के विचारार्थ उनको स्पष्ट करना आवश्यक समझता हूँ।

इस विधेयक के भाग 4 के खंड 3(6) में कहा गया है कि अवयस्क बालिकाओं के संबंध में उनके संरक्षक से विवाह की सहमति अवश्य प्राप्त करनी चाहिए। परन्तु जहाँ तक विवाह को अवैध घोषित करने का संबंध है, खंड 5 में बताया गया है कि यह केवल इस आधार पर अवैध नहीं समझा जाएगा कि संरक्षक की सहमति नहीं थी अथवा सहमति प्राप्त नहीं की गई थी। मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि इसे अवैध क्यों नहीं समझना चाहिए जब कि यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि संरक्षक ही सहमति अवश्य प्राप्त करनी चाहिए। यदि संरक्षक की सहमति बलात् अथवा गलत तरीके से प्राप्त की गई है तो भी विवाह को अवैध समझा जा सकता है और यदि सहमति बिलकुल ही प्राप्त नहीं की गई है तो विवाह को अवैध क्यों नहीं समझा जाना चाहिए इसके उलट यह लिखा गया है कि विवाह केवल इस कारण से अवैध नहीं होगा। यह एक कमी है जिस पर प्रवर समिति को विचार करना चाहिए।

मुझे दूसरी बात जो कहनी है वह उत्तराधिकार के संबंध में है और जिसके बारे में श्रीमती हंस मेहता ने अभी अभी भाषण में उल्लेख किया है। परन्तु मैं उनके द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से अक्षरशः सहमत नहीं हूँ और मेरा विचार है कि जिस

प्रकार से उत्तराधिकार की व्यवस्था का उल्लेख किया गया है उससे धर्मशास्त्र (हिंदू कानून संहिता) के मौलिक सिद्धांतों की अवहेलना होती है। मेरा मतलब यह नहीं है कि महिलाओं को कोई अधिकार नहीं मिलने चाहिएं। मेरा विचार है कि उनको यहां पुरुषों से ज्यादा अधिकार दिए गए हैं। मैं बता सकता हूँ कि जहां पुत्री को अपनी पैतृक संपत्ति में से और अपने पति के परिवार की संपत्ति से हिस्सा मिलता है वहीं इस विधेयक में कोई प्रावधान नहीं है जहां किसी पुरुष को अपनी पैतृक संपत्ति के अतिरिक्त अपने ससुर की संपत्ति से भी कुछ हिस्सा मिलता हो। इस प्रकार से, पुरुषों को उसी अन्याय का सामना करना पड़ रहा है जो अब तक महिलाओं पर होता रहा है। इसके विपरीत, यह भी कहा जा सकता है कि वह हिस्सा, जो पत्नी अपने पैतृक संपत्ति के रूप में प्राप्त करेगी, उसकी कमी को दूर करेगा। परन्तु विधेयक की विचारार्थ आपत्तियां और भौतिक परिस्थितियां जिससे इसकी आवश्यकता हुई, पर विचार करने के बाद यह महसूस किया गया है कि वास्तविक समस्या का समाधान नहीं हो पाया। इसका कारण यह है कि जो संपत्ति महिला अपने पैतृक रूप में प्राप्त करती है उसे उसका स्त्रीधन माना जाएगा और उसके पति पर उसका कोई अधिकार नहीं होगा और इसलिए उसे इस संपत्ति से कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं होगा। इस प्रकार मैंने प्रवर समिति के विचार हेतु दूसरी बात का निवेदन किया है जो कि बहुत आवश्यक है।

मुझे एक बात और कहनी है। धर्मशास्त्र के सिद्धांतों और वर्तमान स्थिति में जो कुछ अन्तर हो, मैं समझता हूँ कि हमें उनमें प्रतिपादित मौलिक सिद्धांतों का ही अनुसरण करना चाहिए और इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए हमें सभी बातों पर निर्णय लेना चाहिए। हमें केवल वही परिवर्तन करने चाहिए जो कि वर्तमान परिस्थितियों और समाज की स्थिति के अनुसार आवश्यक हों। हमें कोई परिवर्तन मात्र उत्तेजनावश अथवा पश्चिमी सभ्यता की नकल करके नहीं करना चाहिए जो हमारे समाज की प्रगति में बाधा उत्पन्न करे और कठिनाइयां पैदा करें जो कि वांछनीय न हो।

अतः मैं प्रवर के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इन सब बातों पर विचार करें और आवश्यक संशोधन करने का प्रयास करें।

डॉ. बी.बी. केस्कर (यू.पी. : सामान्य) : महोदय मैं माननीय कानून मंत्री जी को काफी विलम्ब होने के बाद भी, इस विधेयक को लाने के लिए बधाई देना चाहता हूँ। महोदय, निःसंदेह एक बहुत महत्त्वपूर्ण विधेयक है। जैसा कि, मेरे माननीय मित्र डा. पट्टाभि ने कहा, मैं नहीं समझता कि कभी इतना मौलिक और क्रान्तिकारी विधेयक आया हो जो कि हिंदू समाज के मूल आधारों में ही परिवर्तन करने का प्रयास कर रहा हो, एक ऐसा समाज जो कि गत हजारों वर्षों से जीवाश्म के रूप में बच रहा हो। निःसंदेह ऐसा ही है और मैं इस सभा का और प्रवर समिति के सदस्यों का ध्यान इस तथ्य की

ओर दिलाना चाहता हूँ कि यह समाज पिछले हजारों वर्षों से जीवाश्म के रूप में रहा है और इसके राजनीतिक ढांचे पर इनकी अकर्मण्यता और आलस्यपन छा गया है कि सभी तरीके और सभी प्रकार की शक्तियां इस विधेयक का अवरोध करने सामने आएगा ताकि हिंदू समाज के वर्तमान ढांचे में परिवर्तन से संबंधित किसी भी विधेयक को पारित करने में अवरोध उत्पन्न करेंगी। यह हिंदू समाज की अकर्मण्यता और आलस्य है जो सभवतः इसके लिए श्राप बन गया है कि प्रवर समिति के सदस्य और माननीय कानून मंत्री जी को इस पर ध्यान देना होगा क्योंकि मुझे शंका है कि जब तक यह विधेयक पारित नहीं हो जाता है, उस अन्तिम समय तक हर तरह से प्रयास किया जाएगा कि यह विधेयक कानून न बन पाये। इनमें जिन परिवर्तनों का सुझाव दिया गया है वे हिंदू कानून में मौलिक परिवर्तन है। मैं जानता हूँ कि रूढ़िवादी लोग हर तरह से प्रयास करेंगे। मेरे माननीय मित्र नजीरुद्दीन अहमद ने अच्छी तरह से विधेयक के क्रान्तिकारी स्वभाव के बारे में रूढ़िवादी समाज के कुछ वर्ग के लोगों की चेतावनी की ओर ध्यान दिलाया है। कुछ ऐसे परिवर्तनों का सुझाव दिया गया है जो निःसंदेह क्रान्तिकारी प्रतीत होते हैं। परन्तु डॉ. पट्टाभि ने ठीक कहा है कि ये परिवर्तन वास्तव में क्रांतिकारी नहीं हैं। ऐसा इसलिए है कि पिछली कई शताब्दियों से हिंदू समाज को विकास नहीं करने दिया गया। अतः हमें कुछ दिनों में शताब्दियों पुरानी परम्पराओं में परिवर्तन करना। अतः मैं प्रवर समिति के सदस्यों से कहूंगा कि वे तथाकथित रूढ़िवादी विचारधारा के दबाव का शिकार न बने जो वास्तव में कई शताब्दियों की अकर्मण्यता का प्रतीक है तथा कोई परिवर्तन नहीं चाहता है, परन्तु वर्षों तक इस पर सोच-विचार करने के बाद भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि कोई परिवर्तन हिंदू धर्म पर आक्रमण के समान है। मैं उनसे कहूंगा कि वे इसकी रक्षा करें और सभी दबावों के बावजूद भी आगे बढ़ते रहें।

हिंदू कानून के किसी मौलिक परिवर्तन के प्रश्न को छोड़कर निःसंदेह हिंदू कानून को सुदृढ़ करने की तत्काल आवश्यकता है। महोदय हिंदू कानून वर्तमान समय में एक भूल-भुलैया है। यह सुन्दरवन और तराई के जंगलों की भांति है जिसमें सभी प्रकार का व्यवहार और परम्पराएं चलती रहती हैं। जिसमें वे सभी पौराणिक पुस्तकें और जिनमें भारत के कई भाग को, कई क्षेत्रों और राज्यों के रीति-रिवाज हैं जिनमें बहुत-सी जातियां, उप-जातियां, उप-जातियां हैं और जो कि वकीलों के लिए स्वाभाविक रूप से एक स्वर्ग है। इसे किसी सीमा तक वांछनीय नहीं होना चाहिए था। परन्तु यह इस सीमा तक बढ़ गया है कि अब इसका समय आ गया है कि परम्पराओं और प्रतिपरम्पराओं की भूल-भुलैया खत्म हो और हमें इस कानून को तर्कसंगत और मजबूत बनाना चाहिए। यह हिंदू कानून में परिवर्तन के प्रश्न के अतिरिक्त है। अतः दोनों दृष्टियों से मैं समझता हूँ कि इस विधेयक में काफी विलम्ब हो गया है।

मैं प्रवर समिति के सदस्यों को सावधान करना चाहता हूं कि अब इस विधेयक में अधिक विलम्ब नहीं करना चाहिए। 1944 में पहले ही यह समिति बन चुकी थी। इस विधेयक के संबंध में कुछ प्रस्ताव और विचार पिछले कई वर्षों से परिचालित किए जा रहे हैं और अभी भी इस विधेयक के संबंध में हमारे सामने कुछ प्रस्ताव है जो परिचालित होंगे। अब मैं चाहता हूं कि चर्चा के समय को जितना संभव हो सके कम किया जाए और इस विधेयक को सभा के समक्ष शीघ्रताशीघ्र अगले सत्र से पहले लाया जाए। महोदय मैं इस विधेयक का स्वागत करता हूँ।

बेगम ऐजाज रसूल (यू.पी. : मुसलमान) : महोदय, मैं इस सभा का ज्यादा समय नहीं लेना चाहती क्योंकि मैं जानती हूँ कि समय बहुत कम है, परतु मैं समझती हूँ कि यदि मैं माननीय कानून मंत्री द्वारा सभा के समक्ष लाए गए उपायों का स्वागत करने के लिए खड़ी नहीं होती हूँ तो मैं अपने कर्तव्य से अलग हो रही हूँ। यह उचित ही है कि देश में स्वाधीनता प्राप्त होने से और राष्ट्रीय सरकार की स्थापना होने से इस सभा के समक्ष इस प्रकार के उपाय लाए गए हैं। मैं कवेल यही आशा कर सकती हूँ कि प्रवर समिति अपना प्रतिवेदन देने में विलम्ब नहीं करेगी और इस सभा को इन उपाय को पारित कानून बनाने में और इसे सांविधिक पुस्तक में शीघ्रतिशीघ्र रखने का अवसर प्राप्त होगा।

महादेय, नि:संदेह इस विधेयक के उपबंध बहुत ही दूरगामी हैं और निकाह, तलाक, विरासत तथा दत्तकग्रहण से संबंधित प्रावधान जो कि सामने लाए जा रहे हैं, निश्चित रूप से मौलिक उपाय हैं। यह बहुत ही महत्वपूर्ण मुद्दा है और हिंदू कानून का संहिताबद्ध होना विधान में एक यादगार हिस्से के रूप में देखा जाएगा। जो कि इस सभा के समक्ष कभी न लाया गया होगा।

महोदय, मैं इस विधेयक के विभिन्न खंडों पर चर्चा किए बिना ही, इन उपायों का समर्थन करती हूँ। महोदय, देश में महिलाओं की जो स्थिति है उससे देश के समाज को देखा जाता है और नि:संदेह ही भारत में हिंदू महिलाएं बहुत पीछे हैं। इस मामले में मुसलमान महिलाएं भाग्यशाली हैं कि शरियत कानून के अनुसार उनको बहुत अधिकार मिले हुए हैं। मैं अपने माननीय मित्र डॉ. पट्टाभि से पूर्णत: सहमत हूँ जब उन्होंने कहा कि यद्यपि शरियत के माध्यम से बहुत अधिक अधिकार मिले हुए हैं परन्तु वास्तविक रूप से उनका अनुपालन नहीं किया जा रहा है और मैं जानती हूँ कि आज भी भारत में बहुत से ऐसे भाग हैं जहां इस तथ्य के बावजूद कि मुस्लिम महिलाएं शरियत के द्वारा प्राप्त अपने अधिकारों का लाभ उठा रही हैं, उनका भी वास्तविक रूप में अनुपालन नहीं हो रहा है। पंजाब में पारम्परिक कानून अभी भी चल रहे हैं और पुत्रियों को पिता की संपत्ति से पूर्णत: बेदखल कर दिया जाता है। उसी प्रकार से, उत्तर प्रदेश में, कुछ भागों में यद्यपि शरियत के कानून चल रहे हैं, फिर भी मुस्लिम महिलाएं तालुकदारों के मध्य

संपत्ति में हिस्सा नहीं पाती हैं और इसीलिए मुझे प्रसन्नता है कि इस प्रकार का विधान जिसे आगे बढ़ाया जा रहा है। हिंदू महिलाओं को मुसलमान महिलाओं के समान रखेगा जहां तक उनके अधिकारों का संबंध है। महोदय, जैसा कि मैंने कहा कि समाज का कोई वर्ग इन उपायों का विरोध नहीं करेगा। यह एक आधारभूत निधि होते हुए और विभिन्न प्रकार से धर्म से जुड़ा होते हुए भी निश्चित रूप से हिंदू समाज के कुछ वर्ग ऐसे हैं जो इसका विरोध करेंगे परन्तु महादेय साहासिक कदम उठाने के लिए साहसी मस्तिष्क की आवश्यकता होती है। अतः, मैं आशा करती हूँ कि देश की रूढ़िवादी विचारधारा जो इन विधानों का विरोध कर रही है, इसके पारित होने में बाधा नहीं डालेगी और मैं आशा करती हूं कि यह विधेयक, जो कि प्रवर समिति में जा रहा है, और भी सुधारात्मक रूप में आएगा और इन उपायों में विलम्ब नहीं होगा। समाज स्थिर नहीं होना चाहिए और जैसे-जैसे हम प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते हैं, यह आवश्यक हो जाता है कि महिलाओं को अपने आप आगे आना चाहिए और जब तक भारत में महिलाएं आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी नहीं हो जातीं तब तक भारत का प्रगति के पथ पर आगे बढ़ना असंभव होगा। इन शब्दों के साथ मैं इन उपायों का पूरे हृदय से समर्थन करती हूँ।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी (असम : सामान्य) : महोदय, मैं सोचता हूँ कि मुझे इस विधेयक के प्रभारी माननीय मंत्री जी को बधाई देनी चाहिए। उनको आज के दिन का समय बहुत अच्छा लगा होगा जब उनको इन सभा में कुछ वर्ग के लोगों से शबाशी प्राप्त हुई है। परन्तु जब मैं यह कहूं कि इस विधेयक का नामकरण ठीक नहीं है तो मेरे द्वारा दुर्भावना सहित इसकी आलोचना किया जाना न समझा जाए; यह एक हिंदू संहिता नहीं है बल्कि इसका नाम हिंदू महिलाओं की संहिता ज्यादा उपयुक्त होता। महोदय, धर्म निरपेक्ष सरकार की स्थापना और साम्प्रदायिक संगठनों पर विराम लगाने के लिए हमारे द्वारा प्रस्ताव पास करने के बाद हमें 3-4 दिन ही क्यों दिए गए, यह बात मैं समझ नहीं पाता, केवल एक विशेष समुदाय हेतु विधान पारित करने हम ऐसी जल्दबाजी में अपने रास्ते से अलग हो जाना चाहिए था। सभी साम्प्रदायिक संगठनों से मुक्त हो जाने के निर्णय के बाद मैं जानना चाहता हूँ कि हमें सोचने का और इस विधान पर जिसमें सभी राज्यों के विषय, हिंदू, मुसलमान, ईसाई आदि हैं, ध्यान केन्द्रित करने का अवसर क्यों नहीं दिया गया। यदि माननीय मंत्री जी इस सभा से प्रभावित नहीं होते हैं तो मैं समझता हूँ कि इस विधेयक को वापस लेने के लिए अभी ज्यादा विलम्ब नहीं हुआ है और यदि वे इसको वापस ले लेते हैं और किसी बाद की तिथि पर और अधिक व्यापक विधेयक लेकर आने का वायदा करते हैं तो विधेयक को वापस लेने का उनका यह कार्य उस वापसी से ज्यादा महत्वपूर्ण होगा जो अभी कुछ मिनट पहले उन्होंने किया है। मैं जानता हूँ कि हमारे देश की कुछ महिलाएं अपने भाइयों की पैतृक संपत्ति का कुछ हिस्सा लेने के लिए बहुत तत्पर हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि इस देश की कुछ प्रभावशाली महिलाएं अपने विवाहों को

समाप्त करने की इच्छुक हैं जो कि उनकी अनिच्छा से हुआ था और जिसे वे असहनीय पा रही हैं। यह भी शायद एक सत्य है कि हमारे देश की कुछ शिक्षित और प्रगतिशील महिलाएं, जो किसी प्रकार के बहुविवाह के विरुद्ध हैं, इन चीजों को हटाने के लिए विधान लाने हेतु बहुत इच्छुक हैं। हिंदू संहिता अधिनियमित करने से, आप हिंदू जीवन, कानून और रीति-रिवाजों के पूरे ढांचे को क्रांतिकारी बना रहे हैं। परन्तु यह आप किसके लिए कर रहे हैं और इसे किसको लाभ मिलने वाला है? एक बहुत बड़ी जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है और कृषि संपत्ति इस विधान की परिधि से बाहर है। क्या हमारे गांवों में गरीब हिंदू लोग तलाक के लिए भटक रहे हैं। क्या वे अपने माता-पिता से प्राप्त होने वाले संपत्ति के लिए परेशान हैं, बिल्कुल नहीं। यह विधान आप उन लोगों के लिए चाहते हैं जिनको आप हमारी जनता, महिला और पुरुषों में बुद्धिमान वर्ग के रूप में मानते हैं। यह धनी व्यक्तियों के लिए हैं जिसने अपनी पुत्री का विवाह गरीब से किया है जो अपनी पत्नी को समाज में कुछ महत्त्वपूर्ण स्तर देने की आशा करता था परन्तु वह दे नहीं पाया और उसकी पुत्री अप्रसन्न हो गई; और इसलिए वह इस विवाह से छुटकारा पाना चाहता है। इस प्रकार का विधान इस प्रकार के व्यक्तियों की ही मदद करेगा।

तदुपरान्त, महोदय जहां तक व्यवहार और प्रथाओं का संबंध है, प्रथा हिंदू कानून में, जैसा कि मेरे प्रान्त में होता है, बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मैं अपने प्रान्त पर विशेष जोर देना चाहता हूं क्योंकि प्रवर समिति में हमारा कोई प्रतिनिधि नहीं है। जैसा कि सभी वकील जानते हैं, असम में जिस प्रथा ने हिंदू कानून का स्थान लिया है, वह बहुत ही अनूठी है। मै **"मणिराम कतीता"** बनाम **"केरी कलितानी"** नामक प्रिवी कौंसिल के मामले का उदाहरण दे सकता हूं जिसने हिंदुओं में प्रचलित हिंदू कानून में व्यापक परिवर्तन कर दिया है।

तदुपरान्त आदिवासी जनता का प्रश्न आता है। इस विधेयक के अनुसार उनको हिंदू समझा जाएगा और वास्तव में वे हिंदू हैं, यदि उन्होंने इस्लाम, अथवा, ईसाई अथवा बौद्ध धर्म स्वीकार नहीं किया है। क्या आप उन पर यह विधान थोपने जा रहे हैं? यदि आप उनसे इस प्रणाली को विरासत में अपनाने की बात कहते हैं तो वे सीधे आपके विरुद्ध खड़े हो जाएंगे। असम में कई प्रकार की विभिन्न प्रथाएं है। असम के खसिया लोगों में, सबसे छोटी पुत्री को संपत्ति प्राप्त होती है। अब आप इसे विधवा को, पुत्र की विधवा को, विधवा पुत्री को, पुत्र की बहू को तथा इसे विधवा को, पुत्र की विधवा को, विधवा पुत्री को, पुत्र की बहू को तथा अन्य को दे रहे हैं। यदि आप इस कानून को उनके मध्य लागू करते हैं तो क्या वे इसे क्षणभर के लिए भी सह पाएंगे? आपने सांस्कारिक विवाह और सिविल विवाह आरम्भ किया है। क्या मैं आपको बताऊं कि कचारियों का विवाह किस प्रकार होता है? कुछ लड़के और लड़कियां आपस में जान-पहचान करते हैं और लड़की माता-पिता से जबरदस्ती ले ली जाती है जिसके बाद विवाह समारोह होता है?

क्या आप उसे रजिस्ट्रार के कार्यालय और वहां विवाह करने के लिए कहेंगे।

इसके बाद, मैं दहेज के बहुत खिलाफ हूँ। धनी व्यक्ति जो दहेज दे सकते हैं, अपनी पुत्रियों का विवाह शीघ्र ही कर देते हैं चाहे वे अन्धी हो अथवा भद्दी हों। यदि मेरे पास धन नहीं है तो मैं दहेज देने के लिए अपने मकान और प्रत्येक वस्तु जो मेरे पास है को गिरवी रख दूंगा और इस प्रकार मुझे अपनी पुत्री से मुक्ति मिल जाएगी। परन्तु अब क्या होगा? पुत्री भी संपत्ति का हिस्सा प्राप्त करेगी। तो जब मैं दुल्हनें अपने पुत्रों के लिए ढूंढ़ता हू–भाग्यवश मेरे 5 पुत्र हैं। मैं उन परिवारों को देखूंगा जहां पर पुत्रियाँ कुछ धन प्राप्त करेंगी और किसी सामान्य व्यक्ति के पास नहीं जाऊंगा जिनको धन उधार लेना पड़ता है अथवा संपत्ति गिरवी रखनी पड़ती है। क्या आप इस तरह से गरीब लोगों के लिए कानून बनाने जा रहे हैं। गरीबों के लिए केवल कृषि ही संपत्ति है। यदि आप चाय के बागानों को भी शामिल कर दें, यह अलग बात है, परन्तु उनके बीच कोई कृषि संपत्ति नहीं है। इस प्रकार उनको विरासत में अधिक धन मिलने का कोई प्रश्न ही नहीं है अतः एक गरीब की पुत्री यद्यपि वह सुन्दर है, गुणवान है फिर भी उसके लिए कोई अवसर नहीं है। मैं समझता हूँ कि इस विषय पर गंभीर विचार करने की आवश्यकता है जहां तक प्रथाओं, व्यवहारों और अन्य मुद्दों का संबंध है और इसलिए इस विधान को जल्दी में पारित करना उचित नहीं है। मुझे और भी बहुत कुछ कहना चाहिए था, महोदय, परन्तु इस सभा में ऐसे भी व्यक्ति हैं जो कि अभी भी अविवाहित हैं; अतः इस विधेयक के संबंध में मेरी अपनी सभी आपत्तियों को प्रकट करना ठीक नहीं होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष महोदय, मेरा काम इस बात से बहुत हल्का हो गया है कि इस विधेयक को इस सभा में पर्याप्त समर्थन प्राप्त हुआ है। अतः मैं उत्तर देते समय अपने आपको कुछ उन मुद्दों तक ही सीमित रखूंगा जिन्हें वक्ताओं ने उठाया है, जिन्होंने इस चर्चा में भाग लिया है।

मैं माननीय मित्र नजीरुद्दीन द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से शुरू करता हूँ। महोदय, मैंने सोचा कि विधायिक कोई न्यायालय नहीं है और इस सभा का एक सदस्य, जो कि वकील है, निश्चित रूप से यहां वकालत करने अथवा मुकदमा लड़ने नहीं आता है। परन्तु किसी तरह से मेरे मित्र ने, चाहे फीस लेकर अथवा पूरी सहानुभूमि से अपने कुछ मुवक्किलों के विचारों से प्रतिनिधित्व का कार्य शुरू किया है जिनको अपने मस्तिष्क में रखी हुई बातों को कहने की हिम्मत नहीं थी। तथापि, मैं कोई तकनीक आपत्ति नहीं उठाऊंगा बल्कि उनके द्वारा उठाये गए मुद्दों पर कुछ कहूंगा।

महोदय, उनकी शिकायत थी कि इस विधेयक का पर्याप्त प्रचार नहीं किया गया और जनता को उतना पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया जितना कि इन उपायों को ध्यान में रखते हुए दिया जाना चाहिए था। मुझे सोचना चाहिए था कि मेरे मित्र के मुवक्किलों ने

उनको इस संबंध में गलत सूचना दी है। इस विधेयक के विधानों का उत्पत्ति वर्ष 1937 से प्रभावी हुए एक विधान से हुई। उस वर्ष से इस विधेयक के उपबंध एक तरफ से दूसरी तरफ, एक समिति से दूसरी समिति, तक चर्चा का विषय बने रहे। उदाहरणार्थ, वर्ष 1941 में, गृह विभाग ने उन कठिनाइयों पर विचार करने के लिए एक समिति नियुक्त की जो महिलाओं के संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 के कारण सामने आई थी। समिति का कार्य कठिनाइयों को बताना और उनका हल करने के लिए सुझाव देना था। राव समिति के नाम से जानी जानेवाली इस समिति ने अपना प्रतिवेदन 19 जून, 1941 को दिया। मेरे माननीय मित्र ने यदि इस प्रतिवेदन को देखा होता तो जानते कि समिति के प्रस्तावों को कितना ज्यादा प्रचार मिला, जारी की गई प्रश्नावलियों को प्राप्त हुए वक्तव्यों को, जांच किए गए साक्ष्यों को, स्थानीय जनता का विचार करने के लिए राज्यों का किए गए दौरों को। वर्ष 1942 में इसी समिति ने पुनः दो विधेयक प्रारूप प्रस्तुत किए जिसमें से एक उत्तराधिकार के संबंध में और दूसरा विवाह के संबंध में था। हिंदू उत्तराधिकार विधेयक, 1943 में सदन में पेश किया गया था। वह दोनों सभाओं की संयुक्त समिति को भेजा गया था। उस संयुक्त समिति ने पुनः लोगों के विचार आमंत्रित किए और उसका एक खंड तैयार करके उस समय के विधानमंडल में परिचालित किया गया था। इन सब बातों पर विचार करने के बाद, मुझे विश्वास है कि मेरे मित्र द्वारा किया गए वक्तव्य कि सरकार ने पर्याप्त प्रचार नहीं किया, सत्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

उन्होंने न्यायमूर्ति मित्तर के अल्पसंख्यक प्रतिवेदन का भी उल्लेख किया है जहां पर उन्होंने इस विधेयक में अन्तर्विष्ट विभिन्न मुद्दों का पक्ष और विपक्ष के दृष्टिकोण से विश्लेषण भी किया है। महोदय, मैं एक समिति के सदस्य के लिए कुछ अपमानजनक बातें नहीं कहना चाहता हूँ, जिन्होंने इतना उपयोगी कार्य किया है परन्तु मैं यह कहने से खुद को नहीं रोक पा रहा हूं कि ये सदस्य अपने खुद के अभिमत से दूर भाग गये। यदि मेरे माननीय मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद बहुमत वाले प्रतिवेदन को पढ़ें तो वे पायेंगे कि इस विधेयक में अन्तर्विष्ट सभी प्रस्ताव, जो महिलाओं को अधिकार प्रदान करते हैं, वर्ष 1930 में समिति के इस सदस्य के एक प्रकाशन पर आधारित हैं। इस पुस्तक में उन्होंने विचार व्यक्त किया था कि निर्णय विधि, जिसने महिलाओं के अधिकारों को सीमित कर दिया था, का कोई आधार नहीं था। अंततः उन्होंने किस कारण से यह निवेदन नहीं किया कि इस तर्क में कोई दम नहीं है, यह तो वे ही जानते हैं।

मेरे माननीय मित्र ने इस तथ्य का भी उल्लेख किया है कि यह विधेयक आखिरकार कृषि भूमि के अलावा संपत्ति तक ही समिति है। इस तथ्य से उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि यह केवल आंशिक संहिताबद्ध है क्योंकि संपत्ति का एक बहुत बड़ा भाग, जो कि विरासत से संबंधित विषय है, इस विधेयक के उपबंधों से अछूता हुआ महसूस किया जाता

है। महोदय, कृषि संपत्ति को न शामिल किए जाने के दो स्पष्टीकरण हैं। मेरे माननीय मित्र, यदि वे भारत सरकार अधिनियम की अनुसूचियों का संदर्भ लें, जहां पर राज्यों और केन्द्र के विधान बनाने का विषय दिया हुआ है, तो पायेंगे कि भूमि को "राज्यसूची" में रखा गया है। संघीय न्यायालय द्वारा न्यायिक व्याख्या दिए जाने के परिणामस्वरूप यह पाया गया है कि 'भमि' शब्द अथवा 'भूमि' विषय, जो कि 'राज्य सूची' में शामिल है, केवल काश्तकारी भूमि को ही नहीं सम्मिलित करता है बल्कि भूमि के उत्तराधिकार को भी सम्मिलित करता है और इसके परिणास्वरूप केन्द्र सरकार द्वारा भूमि के उत्तराधिकार के संबंध में बनाया गया कोई भी विधान उसके अधिकार-क्षेत्र से बाहर होगा। ऐसा न होने देने के लिए, समिति ने जानबूझकर कृषि भूमि को इस विधेयक के उपबंधों से अलग कर दिया। परन्तु मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ वह कुछ अलग है। मुझे बताना चाहिए था कि इस विधेयक से भूमि का छूट जाना, इस विधेयक में चाहे कोई कमी हो अथवा गलती हो, शायद एक प्रकार से लाभकारी ही रहा क्योंकि मैं विश्वास करता हूँ कि उत्तराधिकार का एक समान कानून सभी प्रकार की संपत्तियों पर लागू हो, यह आवश्यक नहीं है। संपत्ति स्वभाव के अनुसार अलग-अलग होती है, समुदाय के सामाजिक जीवन में इसके महत्व के अनुसार भी भिन्न होती है और परिणामत: समाज के लाभ हेतु कृषि के लिए उत्तराधिकार का पृथक कानून और गैर-कृषि संपत्ति के लिए अलग कानून होना कोई उपयोगी बात नहीं है। स्थिति की अच्छी तरह समीक्षा करके भारतीय अथवा हिंदू समाज इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि भूमि, जो कि उसके आर्थिक जीवन की धुरी है, आदिम अवस्था के कानून द्वारा बेहतर संचालित हो जिससे कि न तो कनिष्ठ पुत्र और न ही स्त्रियां उत्तराधिकार में हिस्सा ले सकें। जैसा कि मैंने कहा था कि, जो प्रश्न खुला छोड़ा जा चुका है, वह समाज के लाभ के लिए है कि वह मामले को नये सिरे से आरम्भ किया जाए। अत:, मैं नहीं समझता कि इस विधेयक के किसी भाग पर मेरे मित्र द्वारा की गई टिप्पणी से कोई क्षमा मांगने का मामला बनता है।

अब मै अपने मित्र श्री चौधरी की बातों को तरफ आता हूँ। वे सोचते हैं कि ये कानून एक साम्प्रदायिक कानून है। मैं इस बात से उतना ही सहमत हूँ कि इसमें हिंदू समाज का उल्लेख है जो कि इस देश में रहने वाले विभिन्न समुदायों में से एक है, इस कारण से इसे साम्प्रदायिक कहना ज्यादा तर्कसंगत होगा। परन्तु, इसका और विकल्प क्या है? यदि मेरे माननीय मित्र का विकल्प था कि उत्तराधिकार के लिए और विवाह के साम्प्रदायिक कानूनों का साम्प्रदायिक विधान नहीं होना चाहिए बल्कि एक-समान नागरिक संहिता होनी चाहिए जो सभी समुदायों, सभी वर्गों सभी व्यक्तियों पर लागू करते हुए; वास्तव में, धर्म, पंथ, जाति के अनुसार विभेद किए बिना यदि यह सभी नागरिकों पर लागू करते हुए तो निश्चित रूप से मैं उनके साथ हूँ। उनका निश्चितरूप से यह निष्कर्ष नहीं है। जहां तक मैं उनको समझ पाया हूँ, उनका निष्कर्ष है कि इस विधान को, इस तथ्य के कारण कि अगले दिन यह विचार व्यक्त किया गया था, कि यहां बताया गया भविष्य

का समाज जिसे यहां कहा गया धर्म निरपेक्ष होगा, के पास एक धर्म-निरपेक्ष समुदाय के लिए कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं था: यह बहुत ही विनाशकारी निष्कर्ष है। इस देश में वे ही बहुत सारे समुदाय के लोग रहते हैं। प्रत्येक समुदाय के अपने विशेष कानून हैं और केवल इस कारण से, कि राज्य को धर्मनिरपेक्ष स्वभाव अपनाना है, इसे विभिन्न समुदायों के जीवन को संचालित करने से खुद को अलग कर लेना से निःसंदेह कोई परिणाम नहीं निकलेगा बल्कि अराजकता और उन्मादकता ही फैलेगी। मैं स्वयं भी निश्चित रूप से इस तरह के प्रस्ताव को स्वीकार करने हेतु तैयार नहीं हूँ।

उन्होंने दूसरी टिप्पणी की थी कि इस विधेयक में पारम्परिक विधियों पर विचार नहीं किया गया है। उन्होंने प्रिवी कौंसिल के कुछ नियमों का हवाला दिया है। मुझे यह बताना चाहिए था कि आज के दिन प्रिवी कौंसिल के अधिकार को उद्धृत करना अनावश्यक है क्योंकि काफी समय पहले के निर्णयों से यह सिद्ध हो गया है कि जहां तक हिंदुओं का संबंध है, परम्पराएं **स्मृति** को प्रत्योदेशित करती रहेंगी। हम सब यह जानते हैं। परन्तु हम क्या कर रहे हैं। हम जो कुछ कर रहे हैं वह यह है-हम नई प्रथाओं के विकास को समाप्त कर रहे हैं। हम वर्तमान परम्पराओं को नष्ट नहीं कर रहे हैं। विद्यमान परम्पराओं को हम स्वीकृत कर रहे हैं क्योंकि हिंदू समाज में जो कानून चल रहे हैं वे परम्पराओं के कारण ही चल रहे हैं। उनका जन्म ही प्रथाओं से हुआ है और हम महसूस करते हैं कि वे इतने मजबूती के साथ विकसित हुए हैं कि हम उनको अपने विधान के माध्यम से उनके राजनीतिक ढांचे को नया जीवन दे सकते हैं।

उन्होंने यह भी कहा कि हमने आदिवासी लोगों का विचार नहीं किया जिनका जीवन निःसंदेह अधिकतर परम्पराओं के माध्यम से चल रहा है। यदि मेरे मित्र ने इस संहिता की परिभाषाओं को पढ़ा होता कि कौन हिंदू है और कौन नहीं है और किस पर यह कानून लागू होता है तो उन्होंने देखा होता कि इसमें एक ऐसी धारा है जिसमें कहा गया है कि वे व्यक्ति जो मुसलमान, पारसी अथवा ईसाई नहीं हैं, उनको हिंदू माना जाएगा। इसीलिए नहीं कि वे हिंदू हैं। उसका परिणाम यह हुआ कि यदि एक आदिवासी व्यक्ति कहना चाहता है कि वह हिंदू नहीं है तो इस संहिता के अन्तर्गत उसे अपने तर्क के समर्थन में यह साक्ष्य देने क लिए खुला अवसर मिलेगा कि वह हिंदू नहीं है और उसके निष्कर्ष को न्यायालय स्वीकार कर लेती है तो वह इस विधेयक में अन्तर्दिष्ट किसी भी प्रावधान के लिए अनुगृहीत नहीं रहेगा।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : मेरा मुद्दा यह है कि वह हिंदू नहीं कहलाना चाहता और हिंदू की सारी प्रथाओं को रखे रखना चाहता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस संबंध में स्थिति इस प्रकार है-एक बार यदि कोई व्यक्ति अपने आपको हिंदू कहलवाना चाहता है तो उसे हिंदुओं के लिए

निर्धारित सामान्य नियमों को स्वीकार करना चाहिए। हम यह अराजकता नहीं चाहते हैं। एक हिंदू सभी उद्देश्यों के लिए हिंदू ही है। यदि कोई आदिवासी व्यक्ति हिंदू नहीं बनना चाहता है तो उसके लिए यह सिद्ध करने के लिए रास्ता खुला है कि वह हिंदू नहीं है और यह विधेयक उस पर लागू नहीं होगा।

मेरे मित्र डॉ. सीता रमैया ने मुझसे यह बताने के लिए कहा कि क्या इस विधेयक के कानूनी नियम, जहां तक महिलाएं उस संपत्ति के पूर्ण भू-भाग को प्राप्त करेंगी जिसको वे विरासत से प्राप्त करती हैं, विधवाओं पर लागू होंगे जिन्होंने इस अधिनियम के पारित होने से पूर्व ही भू-भाग प्राप्त कर लिए हैं। मुझे भय है, मुझे कहना चाहिए कि यह विधेयक पूर्व से प्रभावी नहीं होगा।

साथ ही यह विधेयक इस सामान्य कारण से महिलाओं की पूर्ण संपत्ति के सिद्धांतों के लिए पूर्व प्रभावी किया जाना संभव नहीं होगा कि विधेयक के प्रभावी होने से काफी पहले, उस भू-भाग पर निहित अधिकार बन गए होते और उनको उन अधिकारों से वंचित करना उचित और ठीक नहीं होगा तथापि विधवाओं के साथ हमारी बहुत सहानुभूति हो सकती है।

श्रीमती हंस मेहता ने यह इंगित करते हुए कई प्रश्न उठाए हैं कि महिलाएं और विशेषकर स्वयं वे महिलाओं के अधिकारों से संबंधित विधेयक में दिए गए कुछ उपबंधों से संतुष्ट नहीं हैं। एक आदर्श भावना के रूप में, उनके अनुसार, यह विधेयक उनकी आशाओं के अनुरूप नहीं है। परन्तु मैं उनको बताना चाहता हूँ कि उनको यह जानकारी होनी चाहिए कि यह समाज एक निष्क्रिय समाज है। हिंदू समाज ने हमेशा यह विश्वास किया है कि कानून बनाना या तो ईश्वर का कार्य है या स्मृति का और हिंदू समाज को इसे बदलने का कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार से, हिंदू समाज में कानून वही रहे हैं जो पीढ़ियों से चलते आ रहे हैं। समाज ने अपनी सामाजिक, आर्थिक और वैधानिक जीवन को सुधारने में अपनी शक्तियों और जिम्मेदारियों को कभी भी स्वीकार नहीं किया। यह तो पहली बार है कि हम हिंदू समाज को एक ऐसा बड़ा कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं और मुझे इसमें बिल्कुल भी संदेह नहीं है किन्तु समाज, जिसने इस बड़े कदम को सहन करने के लिए पर्याप्त हिम्मत जुटाई है, हमने इस विधेयक को उसे स्वीकार करने के लिए कहा है, वह प्रगति के पथ पर चलने से नहीं हिचकिचाएगा जो कि लक्ष्य तक पहुंचने के लिए बहुत ही दुर्गम है और यह श्रीमती हंसा मेहता के मस्तिष्क में है।

महोदय, इस तथ्य पर बहुत कुछ कह दिया गया है कि अधिकांश जनमत विधेयक के विरुद्ध है। मैंने निश्चित रूप से उन विचारों को महत्त्व नहीं दिया है जिनको हमने प्राप्त किया, परन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह शायद ही एक प्रश्न है जिसका निर्णय मुण्डों की संख्या गिनकर कर सकते हैं। यह ऐसा प्रश्न नहीं है जिसे हम बहुमत

की विचारधारा के अनुसार निर्णीत कर सकते हैं। जब समाज परिवर्तन की स्थिति में होता है, भूतकाल को छोड़कर भविष्य की तरफ जाता है तो वहां बाध्यकारी विपरीत सोच–विचार होता हैं। एक भूततकाल की ओर खिंचता है तो दूसरा भविष्य की ओर और जो परीक्षण हम करना चाहते हैं वह और कुछ नहीं है बल्कि वह किसी के अन्तःकरण का परीक्षण है। मुझे बिल्कुल भी संदेह नहीं है कि इस विधेयक के उपबंध किसी समुदाय की चेतना के अनुसार ही है और अतः मुझे उन उपायों को आगे लाने के लिए बिल्कुल संकोच नहीं है यद्यपि वास्तव में यह हो सकता है कि हमारे अधिकांश देशवासी इसे स्वीकार न करें।

माननीय अध्यक्ष : प्रश्न यह है कि "हिंदू कानून के विभिन्न भागों को संशोधन करने और संहिताबद्ध करने हेतु यह विधेयक प्रवर समिति को भेजा जाए जिसमें श्री अलादी कृष्णस्वामी अय्यर, डॉ. बख्शी टेकचन्द, श्री एम. अनन्त सायनम आयंगर, श्रीमती जी. दुर्गाबाई, श्री एल. कृष्णास्वामी भारती, श्री यू. श्रीनिवास मलैया, श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय, डॉ. पी.एस. देशमुख, श्रीमती रेणुका रे, डॉ. पी.के. सेन, बाबू रामनारायण सिंह, श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी, श्रीमती अम्मू स्वामीनाथन, पं. बालकृष्ण शर्मा, श्री खुर्शीद लाल, श्री बजेश्वर प्रसाद, श्री बी. शिवाराव, श्री बलदेव स्वरूप, श्री वी.सी. केशव राव तथा विधेयक प्रस्तुत करने वाले सम्मिलित हैं। इस निर्देश के साथ कि प्रतिवेदन प्रस्तुत करने में विधानसभा के अगले सत्र के प्रथम सप्ताह के अन्तिम दिन से अधिक समय नहीं लेंगे और समिति की बैठक के लिए आवश्यक उपस्थित सदस्यों की संख्या पांच होगी।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

माननीय अध्यक्ष : इसी के साथ एक लम्बा सत्र समाप्त होता है जो 28 जनवरी से शुरू हुआ था और मैं सभी सदस्यों को उनके विश्वसनीय सहयोग के लिए, जो कि इसे सदैव मिलता रहा, हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

(*तत्पश्चात् विधानसभा अनिश्चितकाल के लिए स्थगित हुई।*)

अनुभाग 2

हिंदू संहिता विधेयक का प्रारूप
द्वारा
डॉ. बी.आर. अम्बेडकर
सहित
प्रवर समिति द्वारा संशोधित हिंदू संहिता विधेयक का प्रारूप

हिंदू संहिता का प्रारूप
द्वारा
डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

टिप्पणी

सरकार जिन संशोधनों के बारे में प्रस्ताव रखना चाहती है। उनको सुस्पष्ट करने के लिए, संहिता में और अधिक संशोधन संबंधी सामग्री को इस पुस्तक के बायीं ओर दिया गया है। सुविधा की दृष्टि से ही प्रवर समिति द्वारा यथा संशोधित संहिता प्रारूप के वर्तमान प्रावधानों को दायीं ओर दिया गया है। जिन संशोधनों को वास्तव में सभा में रखा जाना है उन्हें बायीं ओर दिया गया है और उन्हें अधो–रेखांकित या पार्श्व–रेखांकित किया गया है। जिन भागों को छोड़ दिया गया है उन्हें तारांकित किया गया है; और यदि पुस्तक का कोई भी पृष्ठ रिक्त है तो इसका तात्पर्य है कि या तो प्रवर समिति द्वारा प्रस्तुत संहिता में उससे संबंधित कोई प्रावधान नहीं है या फिर प्रवर समिति द्वारा प्रस्तुत संहिता का कोई भाग निकाल दिया गया है।

[जैसे कि आगे संशोधन के लिए प्रस्ताव है।]

(जो संशोधन किए जाने हैं उन्हें या तो अधो-रेखांकित किया गया है या पार्श्व-रेखांकित तथा जिन भागों को छोड़ना है, उन्हें तारांकित चिन्ह किया गया है।)

हिन्दू विधि के कुछ उपबंधों को संशोधित और संहिताबद्ध करने सम्बंधी विधेयक।

अ

विधेयक

हिन्दू संहिता के विशेष

संसद द्वारा इसे निम्नलिखित ढंग से अधिनियमित किया जाये:-

भाग-एक-प्राथमिक

1. संक्षिप्त शीर्षक और इसका विस्तार क्षेत्र *** (1) यह अधिनियम हिंदू संहिता, 1950 के नाम से जाना जा सकता है।
2. जम्मू और कश्मीर को छोड़कर यह सम्पूर्ण भारत में लागू होगा।

(प्रवर समिति के द्वारा प्रस्तावित)

हिंदू विधि के कुछ उपबंधों को संशोधित और संहिताबद्ध करने संबंधी विधेयक

भारत के विभिन्न प्रांतों में इस समय लागू हिंदू विधि के कुछ उपबंधों को जहां कहीं संशोधित और संहिताबद्ध करना उचित है;

इसलिए अब इसे निम्नलिखित रूप में अधिनियमित किया जाता है:—

3. इस संहिता के किसी भाग में उल्लिखित 'हिंदू' शब्द का आशय यह होगा कि ऐसा कोई भी व्यक्ति जो यद्यपि धर्म से हिंदू न भी हो, फिर भी वह इस संहिता के प्रावधानों से अधिशासित होता है।

3. परिभाषायें : इस संहिता में, संदर्भ की आवश्यकताओं के अतिरिक्त ये सभी बातें समाहित होंगी।

(1) 'एलियासान्तना विधि' का तात्पर्य एक ऐसी विधि प्रणाली से है जो उन सभी व्यक्तियों पर लागू की जाती है जो इस संहिता के पारित न होने की दशा में मद्रास एलियासान्तना अधिनियम, 1949 (1949 के IX मद्रास अधिनियम) द्वारा शासित होते।

(2) "परम्परा" और "रीति" शब्दों का तात्पर्य ऐसे किसी नियम से है जिसका पालन अनवरत और लंबे समय तक समान रूप से किया गया हो, और उसने किसी स्थानीय क्षेत्र के हिंदुओं, जनजाति, समुदाय, दल अथवा कुटुम्ब में एक विधि के रूप में मान्यता प्राप्त कर ली हों।

बशर्ते कि यह नियम सुनिश्चित और तर्कसंगत हो अथवा जनहित की नीति के विरुद्ध न हो; और

2. संहिता का लागू होना :

(1) यह संहिता लागू होगी :—

(क) सभी हिंदुओं पर अर्थात् उन सभी व्यक्तियों पर जो हिंदू धर्म को मानते हैं, इसके किसी भी रूपों अथवा विकासों में जिसमें वीरशैव अथवा लिंगायत और ब्रह्म, प्रार्थना अथवा आर्य समाज के सदस्य शामिल हों। भाग 1 खंड 2 पृष्ठ 1 वीर शैल

(ख) ऐसे किसी भी व्यक्ति पर जो बौद्ध, जैन अथवा सिक्ख धर्म के हो।

(ग) (i) किसी ऐसी संतान पर, चाहे वे वैध हो अथवा अवैध, जिनके माता-पिता इस अनुच्छेद के अर्थों में हिंदू हों।

(ii) किसी ऐसी संतान पर चाहे वह वैध हो अथवा अवैध, जिसके माता-पिता में से कोई एक इस अनुच्छेद के अर्थों में हिंदू हो; बशर्ते कि ऐसे संतान का उस समुदाय, समूह अथवा परिवार के सदस्य के रूप में पालन-पोषण किया गया हो जिनसे ऐसे माता-पिता का संबंध हो अथवा संबंध रहा हो; और

(घ) जिसने हिंदू धर्म अपना लिया हो।

(2) यह संहिता ऐसे अन्य व्यक्तियों पर भी लागू होगी जो धर्म से मुसलमान, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी न हों; — भाग 1 खंड 2 पृष्ठ 1

(क) परन्तु यदि यह सिद्ध हो जाता है कि कोई ऐसा व्यक्ति जो कि हिंदू कानून अथवा ऐसी परम्परा या रीति उस कानून के एक भाग के रूप में इस संहिता में कही गई किसी बात में परिपेक्ष्य में यह कानून पारित होने के पूर्व अधिशासित नहीं होता, ऐसा होने पर यह संहिता उन मामलों पर इस पर लागू नहीं होगी।

(3) इस संहिता के किसी भी भाग में 'हिंदू' शब्द का आशय उस व्यक्ति के सम्मिलित किये जाने से होगा जो यद्यपि धर्म से हिंदू नहीं है, तो भी इस संहिता के प्रावधानों से अधिशासित होता है।

(4) विशेष विवाह अधिनियम, 1872 (1872 का III) में अन्तर्निष्ट किन्हीं भी व्यवस्थाओं के होते हुए भी यह संहिता उन सभी हिंदुओं पर लागू होगी जिनके विवाह इस संहिता के लागू होने से पहले इस अधिनियम के उपबंधों के अन्तर्गत हो गये हों। — भाग 1 खंड 6 पृष्ठ और अनुसूची पृष्ठ 30

(3) परिभाषाए: इस संहिता में जब तक कि इस विषय अथवा संदर्भ में कुछ प्रतिकूल न हो—

(i) 'परम्परा' और 'रीति' किसी ऐसे नियम को इंगित करता है जिसका पालन अनवरत और लम्बे समय तक समान रूप से किया गया हो और उसने किसी स्थानीय क्षेत्र, जनजाति, समुदाय समूह अथवा परिवार में हिंदुओं के बीच कानून का रूप प्राप्त कर लिया है : — भाग 1 खंड 4 और 5 पृष्ठ 2

बशर्ते कि ये नियम सुनिश्चित और अतार्किक न हों अथवा जनहित के विरुद्ध न हो:

और बशर्ते कि उस स्थिति में जब एक नियम एक परिवार पर लागू होता है। उसे परिवार द्वारा अनियमित न किया गया हो।

(ii) 'जिला न्यायालय' का अर्थ है मौलिक क्षेत्राधिकार का प्रमुख दीवानी न्यायालय और धारा 44 और 49 के अतिरिक्त इसमें सामान्य मौलिक दीवानी क्षेत्राधिकार के व्यवहार में उच्च न्यायालय भी शामिल है : — भाग 1, खंड 5 (घ) पृष्ठ 2

आगे शर्त यह है कि केवल एक परिवार पर लागू होने वाले एक नियम के मामले में जिसे परिवार द्वारा अनियमित न किया गया हो।

(iii) पूर्ण रक्त संबंध और अर्द्ध रक्त संबंध–दो व्यक्ति आपस में खून के पूरे रिश्ते से संबंधित तब कहे जाते हैं जब वे उसी पत्नी से जन्म लेते हैं और उनके पूर्वज एक हो हैं। खून के आधे रिश्ते से आशय है कि विभिन्न पत्नियों द्वारा जन्म लेते हैं। हालांकि उनके पूर्वज एक ही होते हैं।

(iv) " विपितृ रक्त रिश्ता" दो व्यक्ति को आपस में विपितृज रक्त संबंध से संबंधित तब कहा जाता है जब वे एक ही पुरखिन से पतियों (पुरुषों) से जन्म लेते हैं; लेकिन उनके अलग-अलग होते हैं।

व्याख्या-उपखंड (iv) और (v) में 'पूर्वज' में पिता शामिल हैं और 'पुरखिन' में माता शामिल है।

(v) 'मरूमकद्यम कानून'–यह कानून प्रणाली ऐसे व्यक्तियों पर लागू होगी:–

(क) जो, यदि संहिता पारित न की जाती हो, मद्रास मरूकद्यम अधिनियम, 1932, (1933 का मद्रास अधिनियम XXII), 1100 का त्रावनकोर अधिनियम II, इझावा अधिनियम III, नन्जिनाद वेल्लाल अधिनियम 1101, त्रावनकोर, 1100 का त्रावनकोर क्षत्रिय अधिनियम III, 1108, त्रावनकोर कृष्णावश-मरूमुक्कथयी अधिनियम, 1115, 1107 का कोचीन थिया अधिनियम VIII, 1113 कोचीन नामर अधिनियम XXVII द्वारा नियंत्रित किये जाते हों; अथवा

(ख) जो ऐसे समुदाय से संबंध रखते हों, जिसके सदस्य ज्यादातर त्रावनकोर-कोचीन राज्य में अथवा मद्रास राज्य के निवासी हो और जो, यदि यह संहिता पारित न की जाती तो वंशानुक्रम की किसी भी प्रणाली से, जिसमें वंश की पहचान स्त्री से होती हो, अधिशासित किये जाते; परन्तु इसमें अलियसंतना कानून शामिल नहीं हैं।

(vi) 'नाम्बूदरी विधि' का अर्थ-ऐसी विधि जो ऐसे व्यक्तियों पर लागू होती है जो, इस संहिता के पारित न होने की स्थिति में, मद्रास नाम्बूदरी अधिनियम, 1932 (1993 का मद्रास अधिनियम XXI), कोचीन नाम्बूदरी अधिनियम (1114 का XVII अथवा 1106 का त्रावनकोर मलयाला ब्राहमन अधिनियम (1106 का विनियमन III) द्वारा अधिशासित किये जाते।

(viii) "भाग" का अर्थ है कि इस संहिता का एक भाग।

(ix) 'निर्धारित' का अर्थ है कि इस संहिता के अन्तर्गत बनाये गये नियमों द्वारा प्रदिष्ट किया गया।

(x) 'संबंधित होना' का अर्थ विधिक सगोत्रता से संबंधित होना है:

परन्तु अवैध संतानों को उनकी माँ से और आपस में एक दूसरे से संबंधित होना माना जायेगा और उनका विधिक वंशानुक्रम उन्हीं से संबंधित हो समझा जायेगा, और रिश्तेदारी तथा संबंध बताने वाले शब्दों की व्याख्या तद्नुसार ही की जायेगी।

(xi) 'पुत्र' में दत्तक पुत्र भी शामिल है चाहे उसे इस संहिता के आरम्भ से पूर्व अथवा बाद में दत्तक बनाया गया हो परन्तु इसमें कोई अवैध पुत्र सम्मिलित नहीं है।

(iii) पूर्ण रक्त संबंध और अर्द्ध रक्त संबंध–दो व्यक्तियों का आपस में पूर्ण रक्त संबंध तब माना जाता है जब वे एक ही पत्नी द्वारा उसी पूर्वज से जन्म लिए हों और अर्द्ध रक्त संबंध तब माना जाता है जब वे अलग-अलग पत्नियों द्वारा पूर्वज से जन्म लिये हों। खंड 5 (ड.)

(iv) 'विपितृज रक्त संबंध'–दो व्यक्तियों का आपस में विपितृत रक्त संबंध तब माना जाता है जब वे उसी पुरखिन द्वारा अलग-अलग पतियों से जन्म लियें हों। खंड 5 (ड.)

व्याख्या: इस उपखंड के अनुसार 'पूर्वज' में पिता और 'पुराखिन' में माता शामिल है।

(v) "भाग" का अर्थ है कि इस संहिता का कोई भाग। खंड 5 (ड.)

(vi) "प्रदिष्ट" का अर्थ है कि इस संहिता के अन्तर्गत बनाये गये नियमों द्वारा प्रदिष्ट किया गया।

(vii) "संबंधित होना" का अर्थ विधिक सगोत्रता है। परन्तु अवैध सन्तानों को उनकी मां से और आपस में एक-दूसरे से संबंधित होना माना जायेगा और उनका विधिक वंशनुक्रम उन्हीं से और आपस में एक दूसरे से संबंधित होना समझा जायेगा; और रिश्तेदारी तथा संबंध बताने वाले शब्दों की व्याख्या तद्नुसार ही की जायेगी।

(viii) "पुत्र" में दत्तक पुत्र भी शामिल है चाहे उसे इस संहिता के आरंभ होने से पूर्व अथवा बाद में दत्तक बनाया गया हो परन्तु इसमें कोई अवैध पुत्र सम्मिलित नहीं है। *भाग-दो, खंड 2 (ग) पृष्ठ-3*

(4) संहिता का प्रत्यावेशित प्रभाव : इस संहिता में दिए गए प्रावधानों के अतिरिक्त अन्यथा:-

(क) इस संहिता के लागू होने से पहले हिंदू विधि का कोई भी पाठ, नियम अथवा व्याख्या या कोई परम्परा अथवा रीति का प्रभाव उन सभी मामलों में समाप्त हो जायेगा। किसी भी बात के परिपेक्ष्य में जिनके बारे में वह संहिता में कहा गया है; और

(ख) इस संहिता के लागू होने से पूर्व कोई भी अन्य प्रभावी विधि अप्रभावी हो जायेगी जहां तक इस संहिता में अन्तर्निष्ट किन्हीं भी प्रावधानों से उनकी भिन्नता होती है।

भाग दो विवाह और विवाह-विच्छेद

अध्याय 1

विवाह

(5) **व्याख्या :** इस भाग में, जब तक किसी संदर्भ की आवश्यकता न हो:

(क) **जिला न्यायालय :** ऐसे कोई भी न्यायालय शामिल हैं जो जिला न्यायालय के अधीन हों और जिनको राज्य सरकार द्वारा सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट किया गया हो;

(ख) **'सपिण्ड संबंध' :** एक व्यक्ति किसी भी व्यक्ति का सपिण्ड हो सकता है जिसका उल्लेख तीसरी अनुसूची के प्रथम प्रभाग के पहले कॉलम में और एक स्त्री किसी भी व्यक्ति की सपिण्ड हो सकती है जिसका उल्लेख उपर्युक्त प्रभाग के दूसरे कॉलम में है;

(ग) **'निषिद्ध संबंध की अवस्था" :** तीसरी अनुसूची के दूसरे प्रभाग के पहले कॉलम में उल्लिखित एक आदमी और कोई भी व्यक्ति इसी प्रभाग के दूसरे कॉलम में उल्लिखित एक स्त्री और कोई भी व्यक्ति निषिद्ध संबंध की अवस्था के अन्तर्गत होते हैं।

व्याख्या : उप-उपबंध (ख) और (ग) के उद्देश्यों के लिए संबंध में निम्न शामिल हैं:-

(i) आधा अथवा विपितृज रक्त सम्बन्ध और पूर्ण रक्त सम्बन्ध;

(ii) अवैध और वैध रक्त सम्बन्ध;

(iii) दत्तकग्रहण और रक्त सम्बन्ध;

इन उप-उपबंधों में संबंध की और भी जो शब्दावलियां हैं, उनका तद्नुसार अर्थ लगाया जायेगा।

भाग दो विवाह और तलाक
अध्याय 1
विवाह

(5) व्याख्या : इस भाग में, जब तक कि विषय अथवा संदर्भ में प्रतिकूल न दिया हो, निम्न शामिल है:–

(क) (i) **किसी व्यक्ति के संदर्भ में सपिण्ड संबंध, माँ के माध्यम से पूर्वजों की पंक्ति में तीसरी पीढ़ी तक** *भाग 4, खंड 1, पृष्ठ 14* (इसे सम्मिलित कर और पिता के माध्यम से पूर्वजों की पंक्ति में पांचवी पीढ़ी (इसे सम्मिलित कर तक फैला होता है और संबंधित व्यक्ति से, जिसे पहली पीढ़ी के रूप माना जाता है, प्रत्येक मामले में आगे बढ़ता हुआ समझा जायेगा;

(ii) दो व्यक्तियों को आपस में सपिण्ड कहा जाता है। जब एक व्यक्ति सपिण्ड संबंधों की सीमा में दूसरे व्यक्ति का वंशानुगत होता है अथवा जब उनकी एक ही वंश परम्परा होती है, जो आपस में एक-दूसरे की सपिण्ड सम्बन्ध की सीमा में होती हैं।

(ख) **निषिद्ध संबंधों की अवस्था :** दो व्यक्तियों को निषिद्ध सम्बन्धों की अवस्था में कहा जाता है जब एक व्यक्ति दूसरे के वंश का होता है अथवा पति या पत्नी, दूसरे व्यक्ति के आगे या पीछे के वंश का होते हैं अथवा दोनों भाई हों, चाचा-भतीजी हो, चाची और भतीजा हों, अथवा दो भाइयों या दो बहनों की संतानें हों।

व्याख्या : उप-उपबन्ध (क) और (ख) के संदर्भ में, सम्बन्ध में निम्नलिखित शामिल हैं :–

(i) आधा अथवा विपितृज रक्त सम्बन्ध और साथ ही साथ पूर्ण रक्त सम्बन्ध;

(ii) अवैध अथवा वैध रक्त सम्बंध और साथ ही साथ सम्बन्ध;

(iii) दत्तकगृहण का रक्त सम्बंध और साथ ही साथ सम्बन्ध;

इन उप-उपबन्धों में सम्बन्ध की और भी जो शब्दावालियां हैं उनका तद्नुसार अर्थ लगाया जायेगा।

स्पष्टीकरण

(i) 'ग' एक समान पूर्वज से संबंधित है अर्थात 'क' के पिता की माँ के पिता का पिता हैं तथा 'ख' की माँ का पिता है। चूंकि 'क' के पिता की पंक्ति

में 'ग', 'क' से पांचवी पीढ़ी है और 'ख' की मां की पंक्ति में 'ख' से तीसरी पीढ़ी है, अतः 'क' और 'ख' एक दूसरे से सपिण्ड हैं।

(ii) 'क' और 'ख' समरक्त भाई और बहन हैं। सपिण्ड संबंधों की सीमा में उनके वंशज आपस में सपिण्ड होंगे। उनके पिता के वंशज और उसके पूर्वज भी 'क' और 'ख' के सपिंड होंगे और उनके वंशज सपिण्ड सम्बन्धों की सीमा में होंगे। परन्तु 'क' के ममेरे दादा आवश्यक रूप से 'ख' के ममेरे दादा के सपिण्ड नहीं होंगे और न ही 'क' के ममेरे दादा का पुत्र आवश्यश्क रूप से 'ख' के ममेरे दादा के पुत्र का सपिण्ड होगा।

(iii) 'क' और 'ख' विपितृज भाई और बहन हैं। उनके वंशज सपिण्ड संबंधों की सीमा में आपस में एक-दूसरे के सपिण्ड होंगे। उनकी मां के वंशज और उसके पूर्वज तथा सपिण्ड सम्बन्धों की सीमा में उनके पूर्वज भी 'क' और 'ख' के सपिण्ड होंगे। परन्तु यह आवश्यक नहीं कि 'क' के पैतृक दादा 'ख' के पैतृक दादा के सपिण्ड हों और यह भी जरूरी नहीं कि 'क' के पैतृक दादा का पुत्र 'ख' के पैतृक दादा के पुत्र का सपिण्ड हो।

(6) हिंदू विवाह की विधियां : यहां दिये गये तथ्यों को छोड़कर, हिंदुओं का कोई भी विवाह वैध नहीं समझा जायेगा जब तक कि यह इस प्रकार न हुआ हो:

(क) एक धार्मिक विवाह के रूप में, अथवा

(ख) एक रजिस्ट्री (कानूनी) विवाह के रूप में, अथवा

(ग) खण्ड 24 क के उन प्रावधानों के अनुसार जिन पर ये लागू होते हों।

(7)
धार्मिक विवाह के सामान्य प्रावधान

(7) वैध धार्मिक विवाह के लिए आवश्यक : दो हिंदुओं के बीच धार्मिक विधि से हुआ विवाह तभी वैध होगा, जब वे निम्नलिखित शर्तें पूरी करेंगे यथा–

(i) विवाह के समय किसी भी पक्ष का पति या पत्नी जीवित नहीं होने चाहिए।

(ii) विवाह के समय कोई भी पक्ष मूर्ख अथवा पागल न हों;

(iii) विवाह के समय दूल्हे ने उम्र 18 वर्ष और दुल्हन ने उम्र 15 वर्ष पूरी की हो;

(iv) दोनों पक्षों के बीच निषिद्ध सम्बन्ध की अवस्था न रही हो;

(v) जब तक दोनों पक्षों में से प्रत्येक को उनकी परम्परायें और रीति-रिवाज जो उन्हें अधिशासित करते हैं, उन दोनों को धार्मिक विवाह की अनुमति नहीं देते हैं। तब तक दोनों पक्ष आपस में सपिण्ड नहीं हो सकते।

(vi) यदि लड़की (दुल्हन) ने 16 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है तो विवाह में उसके संरक्षक से विवाह की अनुमति प्राप्त की गई है।

(8)
रजिस्ट्री विवाह के सामान्य प्रावधान

(8) वैध रजिस्ट्री विवाह के लिए आवश्यक शर्तें : रजिस्ट्री विधि से दो हिंदुओं के बीच हुआ विवाह तभी वैध होगा, जब वे निम्नलिखित शर्तें पूरी करेंगे यथा :–

(i) विवाह के समय किसी भी पक्ष के पति या पत्नी नहीं होने चाहिए;

(ii) विवाह के समय कोई पक्ष मूर्ख अथवा पागल न हो;

(iii) विवाह के समय लड़के ने 18 वर्ष और लड़की ने 15 वर्ष की उम्र पूरी कर ली हो;

(iv) दोनों पक्षों के बीच निषिद्ध सम्बन्ध की अवस्था न रही हो;

(v) यदि विवाह के समय लड़का या लड़की ने 21 वर्ष की उम्र न पूरी की हो तो प्रत्येक पक्ष को अपने संरक्षक से सहमति प्राप्त करना होगा :

परन्तु यदि लड़की (दुल्हन) विधवा है तो ऐसी स्थिति में किसी सहमति की आवश्यकता नहीं होगी।

(6) हिंदू विवाह के प्रकार : यहां दिये गये किन्हीं भी प्रावधानों के सिवाय, हिंदुओं के बीच किसी भी विवाह को विधिक मान्यता नहीं प्राप्त होगी जब तक कि या तो वह सांस्कारिक विवाह के रूप में अथवा इस भाग के प्रावधान के अनुसार रजिस्ट्री विवाह के रूप में न हो।

भाग IV, खंड 1, पृष्ठ 15

(7)
सांस्कारिक विवाह

(7) सांस्कारिक विवाह से संबंधित शर्तें : दो हिंदुओं के बीच सांस्कारिक विधि से विवाह कराया जा सकता है यदि ये निम्नलिखित शर्तें पूरी करते हैं :–

(1) विवाह के समय किसी भी पक्ष के पति या पत्नी जीवित नहीं हो;

(2) विवाह के समय कोई भी पक्ष मूर्ख अथवा पागल न हो; *भाग IV, खंड 3, पृष्ठ 15*

(3) विवाह के समय लड़के (दूल्हा) ने 18 वर्ष और लड़की (दुल्हन) ने 14 वर्ष की उम्र पूरी कर ली हो;

(4) दोनों पक्षों के बीर में निषिद्ध सम्बन्ध की अवस्था न हो;

(5) जब तक तक दूसरे की परम्परायें और रीति-रिवाज दोनों के बीच सांस्कारिक विवाह की अनुमति नहीं देते हैं तब तक दोनों पक्ष आपस में सपिण्ड नहीं हों;

(6) जहां पर लड़की (दुल्हन) ने 16 वर्ष की उम्र पूरी नहीं की है वहां उसके संरक्षक की अनुमति विवाह के लिए प्राप्त कर ली गई हो।

(8)

(8) रजिस्ट्री विवाह से संबंधित शर्तें : दो हिंदुओं के बीच एक रजिस्ट्री विवाह के लिए निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिए :–

(1) विवाह के समय किसी भी पक्ष के पति या पत्नी जीवित नहीं हो;

(2) विवाह के समय कोई भी पक्ष मूर्ख अथवा पागल न हो; *भाग IV, खंड 7, पृष्ठ 16*

(3) विवाह के समय लड़की (दुल्हन) ने 14 वर्ष और लड़के (दूल्हा) ने 18 वर्ष की उम्र पूरी कर ली हो;

(4) दोनों पक्षों के बीच निषिद्ध सम्बन्ध की अवस्था न रही हो;

(5) यदि लड़के अथवा लड़की ने 21 वर्ष की उम्र पूरी नहीं की है तो प्रत्येक पक्ष द्वारा विवाह में उनके संरक्षकों से सहमति प्राप्त कर ली गई हो।

परन्तु किसी विधवा के संबंध में ऐसी किसी सहमति की आवश्यकता नहीं है।

(९)

किसी धार्मिक विवाह की औपचारिकताएँ

(९) धर्मानुष्ठान :

(1) एक धार्मिक विवाह पूर्ण और किसी भी पक्ष पर बाध्यकारी नहीं होगा जब तक कि वह किसी भी पक्ष की उन धार्मिक परम्पराओं और अनुष्ठानों के अनुरूप न हो जो कि ऐसे विवाह के लिए आवश्यक है।

(2) जब ऐसे धार्मिक कृत्यों और अनुष्ठानों में सप्तपदी (अर्थात् पवित्र अग्नि के समक्ष दुल्हा–दुल्हन द्वारा संयुक्त रूप से सात फेरे लिए जाते हैं) शामिल होती है तो ये विवाह सातवां फेरा पड़ने के बाद पूर्ण और बाध्यकारी हो जाते हैं।

(3) इस खंड में अन्तर्विष्ट किन्हीं प्रावधानों के होते हुए भी धार्मिक विधि से हुआ कोई विवाह किसी पक्ष द्वारा किसी धार्मिक परम्पराओं और अनुष्ठानों के निष्पादन में हुई किसी अनियमितता के कारण अवैध नहीं समझा जायेगा।

(10)

(10) धार्मिक विवाह का पंजीयन :

(1) किसी धार्मिक विवाह के प्रमाण को प्राप्त करने के उद्देश्य से, राज्य सरकार नियमानुसार निम्नलिखित माँग कर सकती है

(क) ऐसे विवाहों से संबंधित विवरण इस उद्देश्य के लिए रखे गए रजिस्टर में इस प्रकार और ऐसी परिस्थितियों के अन्तर्गत प्रविष्ट किए जायेंगे जो हिंदू **धार्मिक** विवाह की रीति से उचित होंगे; और

(ख) राज्य में अथवा **ऐसे क्षेत्रों में** अथवा ऐसे मामलों में जैसा कि नियमों में विर्निष्टि है, इस प्रकार की प्रविष्टियों का किया जाना आवश्यक होगा।

(2) उपखंड (1) के अन्तर्गत किसी नियम के बनाते समय **राज्य** सरकार यह प्रावधान करेगी कि इनका उल्लंघन होने पर जुर्माना लगाया जायेगा जो कि 100 रुपये तक हो सकता है।

(11)
पंजीकृत विवाह की औपचारिकताएँ

(11) विवाह पंजीयक : राज्य सरकार एक या अधिक हिंदू विवाह पंजीयक नियुक्त कर सकती है। **"पंजीयक"** के रूप में सन्दर्भित इस भाग में, राज्य अथवा उसका कोई भाग और वह क्षेत्र जिसके लिए कोई पंजीयक नियुक्त दिया गया है, उसे उसका जिला कहा जायेगा।

(12)

(12) पंजीकृत को विवाह की सूचना : जब इस भाग के अन्तर्गत पंजीकृत विवाह किए जाने का कार्य होता है तो विवाह करने वाले पक्ष चौथी अनुसूची में दिये गए प्रारूप में जिले के पंजीयक को लिखित रूप से सूचना देंगे जिसमें कम से कम एक वैवाहिक पा ऐसी सूचना देने से पहले उस क्षेत्र में कम से कम 30 दिन तक रहा हो।

(8) आवश्यक अनुष्ठान :

भाग IV, खंड 4, पृष्ठ 15

(1) सांस्कारिक विवाह पूर्ण और किन्हीं पक्षों पर तब तक बाध्यकारी नहीं होगा जब तक कि वह दोनों पक्षों में से किसी की भी ऐसी धार्मिक परम्पराओं और अनुष्ठानों के माध्यम से नहीं होता है जो कि ऐसे विवाह के लिए आवश्यक हों।

(2) जिन धार्मिक परम्पराओं और अनुष्ठानों में सप्तपदी शामिल है (अर्थात् पवित्र अग्नि के समक्ष दूल्हा व दुल्हन संयुक्त रूप से सात फेरे लेते हैं) ऐसे विवाह सातवां फेरा लेने के बाद पूर्ण और बाध्यकारी हो जाते हैं।

(3) इस भाग में अन्तर्विष्ट किसी प्रावधान के होने के बाद भी, सांस्कारिक विधि से हुए विवाह, विवाह सम्पन्न होने के बाद, किसी भी पक्ष द्वारा धार्मिक परम्परायें और अनुष्ठानों के निष्पादन में किसी प्रकार की मात्र अनियमितता के आधार पर अवैध नहीं समझा जायेगा।

(9) सांस्कारिक विवाहों को पंजीयन :

भाग IV, खंड 6, पृष्ठ 15

(1) किसी सांस्कारिक विवाह के प्रमाण को प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रांतीय सरकार नियमानुसार :–

(क) ऐसे विवाहों से संबंधित विवरणों की प्रविष्टि इस उद्देश्यों के लिए रखे गए सांस्कारिक विवाह रजिस्टर में इस उद्देश्य के लिए ऐसे तरीके से और ऐसी स्थिति में की जायेगी जिससे कि यह उचित प्रतीत हो;

(ख) ऐसे मामलों में अथवा ऐसे क्षेत्रों में इस प्रकार की प्रविष्टियां जैसा कि नियमों में दिया गया हो, किया जाना आवश्यक होगा।

(2) उपखंड (1) के अन्तर्गत किसी नियम को बनाते समय प्रांतीय सरकार यह प्रावधान रखेगी कि इनका उल्लंघन होने पर जुर्माना लगाया जाएगा जो कि 100 रुपये तक हो सकता है।

(11) विवाह पंजीयक : प्रांतीय सरकार हिंदू विवाहों के लिए एक या अधिक पंजीयक नियुक्त कर सकती है। पंजीयक के रूप में सन्दर्भित इस भाग में, प्रांत अथवा उसका कोई भाग के लिए वह क्षेत्र जिसमें पंजीयक नियुक्त किया गया है, उसे उसका जिला कहा जाएगा। *भाग IV, खंड 8, पृष्ठ 16*

(12) पंजीयक को विवाह की सूचना : जब इस भाग के अन्तर्गत एक पंजीकृत विवाह किए जाने का कार्य होता है तो विवाह करने वाले पक्ष तीसरी अनुसूची में दिये गए प्रारूप में जिले के पंजीयक को लिखित रूप में सूचना देंगे जिसमें कम से कम एक वैवाहिक पक्ष ऐसी सूचना देने से पहले उस क्षेत्र में कम से कम 30 दिन तक रहा हो। *भाग IV, खंड 9, पृष्ठ 16*

(13) विवाह सूचना पुस्तिका और प्रकाशन :

(1) पंजीयक, खंड 12 के अन्तर्गत दी गई इस प्रकार की सभी सूचनाओं को अपने कार्यालय के अभिलेखों में रखेगा और ऐसी प्रत्येक सूचना की एक सत्य प्रतिलिपि राज्य सरकार द्वारा इस उद्देश्य से उपलब्ध कराई गई एक पुस्तिका में प्रविष्ट करेगा जिसे "हिंदू विवाह पंजीयन सूचना पुस्तिका" कहा जाएगा और यह पुस्तिका उचित समय पर जांच करने के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति के लिए बिना किसी शुल्क के उपलब्ध रहेगी।

(2) पंजीयक ऐसी सभी सूचनाओं को दिये गये विधि के अनुसार प्रकाशित करेगा।

(14) विवाह में आपत्ति :

(1) खंड 12 के अन्तर्गत किसी भावी विवाह के बारे में दी गई सूचना की तिथि से 30 दिन बीत जाने के बाद, यदि उप-खंड (2) के अंतर्गत कोई आपत्ति नहीं आती है तो विवाह संपन्न कराया जा सकता है।

(2) किसी भावी विवाह की सूचना देने की तिथि से 30 दिन पूरा होने से पहले कोई भी व्यक्ति इस आधार पर आपत्ति कर सकता है कि यह खंड 8 में दी गई एक या अधिक शर्तों के प्रतिकूल है।

(3) दर्ज आपत्ति की प्रकृति को रजिस्ट्रार हिंदू विवाह-पंजीयन सूचना पुस्तिका में अंकित करेगा और यदि आवश्यक हुआ तो वह आपत्ति करने वाले व्यक्ति के समक्ष उसकी आपत्तियों को पढ़ेगा और उसे समझायेगा तथा उसके द्वारा अथवा उसकी तरफ से वह हस्ताक्षर करेगा।

(15) आपत्ति प्राप्त होने की प्रक्रिया :

(1) यदि किसी भावी विवाह के संबंध में खंड 14 के अंतर्गत आपत्ति की जाती है तो पंजीयक ऐसी आपत्ति प्राप्त होने के 30 दिन पूरे होने तक चाहे कोई सक्षम न्यायालय उस समय खुला हो अथवा न खुला हो तो न्यायालय खुलने की तिथि से जब तक 30 दिन समाप्त नहीं हो जाते तब तक किसी विवाह की अनुमति नहीं देगा।

(2) भावी विवाह के प्रति आपत्ति करने वाला व्यक्ति स्थानीय न्यायाधिकार के अन्तर्गत जिला न्यायालय में इस घोषणा के साथ एक मुकदमा दायर कर सकता है कि यह विवाह **खंड 8** में दिये गए एक या अधिक शर्तों के प्रतिकूल है और न्यायालय, जिसमें यह मुकदमा दायर किया गया है, उस व्यक्ति को इस आशय का एक प्रमाण-पत्र देता है कि इस प्रकार का एक मामला दायर हुआ है।

(3) यदि उपखंड-2 में सन्दर्भित प्रमाण-पत्र पंजीयक को आपत्ति प्राप्त होने की तिथि से 30 दिन के अन्दर दे दिया जाता है और यदि उस समय कोई सक्षम न्यायालय खुला है अथवा कोई ऐसा न्यायालय ने खुला हो तो ऐसे न्यायालय खुलने के 30 दिन के अन्दर, कोई भी विवाह सम्पन्न नहीं हो सकता। जब तक कि न्यायालय कोई निर्णय नहीं देता और जब तक कि निर्णय आने के बाद अपील के लिए नियमतः स्वीकृत समय-सीमा समाप्त नहीं हो जाती है अथवा निर्णय के विरुद्ध कोई अपील की जाती है और जब तक कि इस संबंध में अपील किए गये न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया जाता है।

(4) यदि ऐसा प्रमाण-पत्र अनुसार विधि और उपखंड 3 में दिये गये समय-सीमा के अन्दर नहीं दिया जाता है, अथवा यदि न्यायालय निर्णय देता है कि यह विवाह **खंड 8** में दी गई किन्हीं भी शर्तों के प्रतिकूल नहीं है तो पंजीयक जिसको इस विवाह की सूचना दी गई है, यह विवाह करा सकता है।

(5) यदि न्यायालय का निर्णय है कि यह विवाह **खंड 8** में दी गई किन्हीं भी शर्तों के प्रतिकूल है तो यह विवाह सम्पन्न नहीं होगा।

(16) आपत्ति तर्कसंगत न पाए जाने की स्थिति में न्यायालय को जुर्माना लगाने का अधिकार : यदि न्यायालय को, जिसके समक्ष मुकदमा दायर किया गया है, यह प्रतीत होता है कि आपत्ति तर्कसंगत और प्रामणिक नहीं है तो वह आपत्ति करने वाले व्यक्ति पर एक हजार रुपये तक जुर्माना लगा सकता है और विवाह करने वाले दूसरे पक्ष को इस जुर्माने की राशि अथवा उसका कोई भी भाग दे सकता है।

(17) पक्षों और साक्षियों द्वारा घोषणा :

(1) विवाह होने से पहले दोनों पक्षों और तीन गवाहों को पंजीयक के समक्ष पांचवी अनुसूची में दिये गए फार्म में एक घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करना पड़ेगा और जहां पर यदि किसी पक्ष ने 21 वर्ष की अवस्था पूरी नहीं की है वहां पर, विधवा के मामले को छोड़कर, उनके संरक्षकों द्वारा हस्ताक्षर किया जायेगा।

(2) उपखंड 1 में दी गई प्रत्येक घोषणा पर पंजीयक प्रति हस्ताक्षर करेगा।

(18) विवाह संपन्न होने की विधि और स्थान :

(1) विवाह निम्नलिखित स्थानों पर संपन्न कराया जा सकता है :

(क) पंजीयक के कार्यालय में; अथवा

(ख) समुचित दूरी के किसी अन्य स्थान पर, जहां पर पार्टियां चाहती हों और ऐसी शर्तों पर तथा तय किए गए किसी निश्चित अतिरिक्त शुक्ल के भुगतान पर।

(2) विवाह किसी भी विधि से संपन्न कराया जा सकता है; इन सब के होते हुए भी यह तब तक पूर्ण और दोनों पक्षों पर बाध्यकारी नहीं होगा जब तक कि प्रत्येक पक्ष पंजीयक और तीनों गवाहों की उपस्थिति में एक-दूसरे से यह नहीं कहता है कि, मैं (क) तुमको (ख) विधि अनुसार अपनी पत्नी/पति स्वीकार करता हूँ।

(3) ऐसा विवाह पंजीयक और तीनों गवाहों की उपस्थिति में संपन्न होगा।

(19) विवाह का प्रमाण-पत्र :

(1) विवाह संपन्न हो जाने पर पंजीयक पुस्तिका की छठवीं अनुसूची में दिये गये फार्म के अनुसार जो कि 'इस उद्देश्य के लिए रखी जाती है और जिसे "पंजीकृत विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका" कहते हैं, प्रमाण-पत्र की प्रविष्टि करेगा और यह प्रमाण-पत्र विवाह के दोनों पक्षों द्वारा तथा तीनों साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित होगा।

(2) पंजीयक द्वारा हिंदू पंजीकृत विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका में प्रविष्टि कर दिये जाने के बाद, प्रमाण-पत्र इस तथ्य का निर्णायक प्रमाण-पत्र होगा कि पंजीकृत विवाह

संपन्न हो चुका है और सभी आपैचारिकताएं जैसे विवाह के साक्षियों के हस्ताक्षर आदि पूरी हो चुके हैं।*

(20) सूचना देने के तीन महीने के भीतर विवाह न होने की स्थिति में नई सूचना की आवश्यकता : जब पंजीयक को सूचना दिए जाने के बाद तीन महीने के अन्दर विवाह संपन्न नहीं होता है, तो खंड 12 की आवश्यकताओं के अनुसार अथवा जहां होने वाले विवाह पर आपत्ति करे वाले व्यक्ति ने किसी सक्षम न्यायाधिकार वाले न्यायालय में मुकदमा दायर किया है और न्यायालय ने निर्णय दे दिया है। ऐसे निर्णयों के विरुद्ध विधित: अपील किए जाने के लिए निर्धारित तीन महीने का समय समाप्त होने पर, अथवा निर्णय के विरुद्ध अपील किये जाने पर, अपील किये गये, न्यायालय द्वारा निर्णय किये जाने के तीन महीने के अन्दर, सूचना तथा अन्य सभी प्रक्रियाएं समाप्त हुई मानी जाएंगी और कोई भी पंजीयक किसी भी विवाह के संपन्न होने की तब तक अनुमति नहीं देगा जब तक कि इस अध्याय में दी गई विधि से नई सूचना नहीं दी जाती है।

(18) विवाह संपन्न होने की विधि और स्थान : विवाह निम्नलिखित स्थानों पर संपन्न कराया जा सकता है:–

(1) (क) पंजीयक के कार्यालय में, अथवा

(ख) समुचित दूरी के किसी अन्य स्थान पर जहां पर दोनों पक्ष चाहते हैं और ऐसी शर्तों पर तथा तय की गई किसी निश्चित अतिरिक्त शुल्क के भुगतान पर; *भाग IV, खंड 15, पृष्ठ 17*

(2) विवाह किसी भी विधि से संपन्न कराया जा सकता है;

इन सब के होते हुए भी यह पूर्ण और दोनों पक्षों पर तब तक बाध्यकारी नहीं होगा जब तक कि प्रत्येक पक्ष पंजीयक और तीनों गवाहों की उपस्थिति में एक दूसरे से यह नहीं कहता है कि मैं (क) तुमको (ख) विधिनुसार अपनी पत्नी/पति स्वीकार करता हूँ।

(3) ऐसा विवाह पंजीयक और तीनों गवाहों की उपस्थिति में सम्पन्न होगा।

*खंड 19 के अन्तर्गत डॉ. अम्बेडकर ने अपनी व्यक्तिगत प्रति मे पेन्सिल से इस प्रकार टिप्पणी की है:– यह कहना पर्याप्त नहीं है कि सभी औपचारिकताओं को देख लिया है। यह हमें कहीं नहीं ले जाता है। निर्णायक साक्ष्य विवाह का सम्पन्न होना है न कि औपचारिकताओं का पूरा होना।

(18)

(19) विवाह का प्रमाण पत्र :

(1) विवाह संपन्न हो जाने पर पंजीयक, पुस्तिका की पांचवी अनुसूची में किये गये फार्म के अनुसार जो कि इस उद्देश्य के लिए रखी जाती है और जिसे हिंदू "पंजीकृत विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका" कहते हैं, प्रमाण-पत्र की प्रविष्टि करेगा और यह प्रमाण-पत्र विवाह के दोनों पक्षों तथा तीनों साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित होगा।

भाग IV, खंड 17, पृष्ठ 18

(2) पंजीयक द्वारा हिंदू पंजीकृत विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका में प्रविष्टि कर दिये जाने के बाद, यह प्रमाण-पत्र इस तथ्य का निर्णायक प्रमाण-पत्र होगा कि पंजीयन हो चुका सभी औपचारिकताएँ विवाह के साक्षियों के हस्ताक्षर आदि के परिप्रेक्ष्य में पूरे हो चुके हैं।

(19)

(20) सूचना देने के तीन महीने के भीतर विवाह न होने की स्थिति में नई सूचना की आवश्यकता : जब पंजीयक को सूचना दिये जाने के बाद तीन महीने के अन्दर विवाह संपन्न नहीं होता है, खंड 12 की आवश्यकताओं के अनुसार अथवा विवाह पर आपत्ति करने वाले व्यक्ति ने किसी सक्षम न्यायाधिकार वाले न्यायालय में मुकदमा दायर किया है और न्यायालय ने निर्णय दे दिया है, ऐसे निर्णयों के विरुद्ध विधितः अपील किये जाने के लिए निर्धारित तीन महीने का समय समाप्त होने पर अथवा निर्णय के विरुद्ध अपील किए जाने पर, अपील किए गए न्यायालय द्वारा निर्णय किये जाने के तीन महीने के अन्दर दी गई सूचना तथा अन्य सभी प्रक्रियाएं समाप्त हुई मानी जायेंगी और कोई भी पंजीयक किसी भी विवाह को संपन्न होने की तब तक अनुमति नहीं देगा जब तक कि इस अध्याय में दिए गए विधि से नई सूचना नहीं दी जाती है।

(21)

पंजीकृत धार्मिक विवाहों का विवाहों की तरह पंजीकरण

(21) कुछ निश्चित धार्मिक विवाहों के पंजीकरण की प्रक्रिया :

(1) जब किन्हीं दो हिंदुओं ने धार्मिक विधि से विवाह किया है :

(क) इस संहिता के लागू होने से पहले, और विवाह के समय प्रचलित परम्पराओं या रीति-रिवाजों अथवा हिंदू कानून की व्याख्या से अथवा किन्हीं नियमों

और पाठों के प्रावधानों के कारण किसी ऐसे विवाह की वैधता के संबंध में हों; शंका जाहिर की गई हो; अथवा

(ख) इस संहिता के लागू होने के बाद और इस तथ्य के आधार पर कि यह खंड 7 के उपखंड (v) में अन्तर्विष्ट प्रावधानों के प्रतिकूल है, विवाह अवैध हो जाता है :

ऐसे व्यक्ति उस जिले के, पंजीयक के पास, जिसमें दोनों में से कोई एक रहा हो, कम से कम तीस दिन शीघ्र ही अपने विवाह का पंजीकरण कराने के लिए आवेदन इस तरह दे सकते हैं मानों पंजीयक के समक्ष उनका विवाह एक पंजीकृत विवाह के रूप में संपन्न हो गया है।

(2) ऐसे किसी प्रार्थना-पत्र के प्राप्त होने पर, पंजीयक निर्धारित विधि से सरकारी सूचना जारी करेगा और आपत्ति आमंत्रित करने के लिए 30 दिनों का समय देने के बाद और उस अवधि में पंजीयक द्वारा आपत्तियों पर बहस सुनने के बाद, यदि वह संतुष्ट है कि :–

(क) विवाह समारोह प्रार्थना-पत्र में दी गई तिथि को ही संपन्न हुआ और दोनों पत्नी-पत्नी के रूप में तब से ही रह रहे हों;

(ख) प्रार्थना-पत्र देने की तिथि को विवाह के दोनों पक्ष **खंड 8 के उपखंड (i), (ii) और (iv)** में दी गई शर्तों को पूरा करते हैं; और

(ग) दोनों पक्षों में से कोई पक्ष विधवा/विधुर न हो और आवेदन देने की तिथि पर 21 वर्ष की उम्र पूरी कर ली हो और विवाह को पंजीकृत विवाह के रूप में पंजीकृत करने के लिए विवाह के लिए उसके संरक्षक की सहमति प्राप्त कर ली गई है;

ऐसी स्थिति में पंजीयक **सातवीं अनुसूची** में दिये तरीके से हिंदू **धार्मिक** विवाह पंजीकरण में विवाह प्रमाण पत्र की प्रविष्टि करेगा और यह प्रमाण-पत्र विवाह के पक्षों द्वारा तथा तीन साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित होगा।

(3) उपखंड 2 में यथा निर्दिष्ट प्रमाण-पत्र की प्रविष्टि होने के बाद यह विवाह सभी उद्देश्यों के लिए वैध माना जाएगा और इस तिथि के बाद जिस पर दोनों पक्षों ने धार्मिक विधि से विवाह किया है। जन्म लेने वाले सभी बच्चे (जिनके नाम भी प्रमाण-पत्र और हिंदू धार्मिक विवाह रजिस्टर में अंकित किये जायेंगे) हर तरह से हमेशा अपने माता-पिता के वैध संतान रहेंगे।

(4) विवाह का कोई भी पक्ष इस खंड के अन्तर्गत पारित किए गए यदि किसी आदेश से संतुष्ट नहीं है तो वह आदेश/आदेश के विरुद्ध **खंड 3** में यथा परिभाषित जिला न्यायालय में जिसमें स्थानीय सीमा के अन्दर, पंजीयक अपना कार्य करता है, अपील कर सकता है और इस संबंध में जिला न्यायालय का निर्णय अन्तिम होगा।

(21) सांस्कारिक विवाहों के पंजीकरण की प्रक्रिया :

(1) हिंदुओं ने सांस्कारिक विधि से विवाह किया हो :–

(क) इस संहिता के लागू होने से पहले और विवाह के समय प्रचलित परम्पराओं या रीति-रिवाजों अथवा हिंदू कानून की व्याख्या से अथवा किन्हीं नियमों और किसी पाठ्य के प्रावधानों के कारण किसी ऐसे विवाह की वैधता के संबंध में शंका जाहिर की गई हो; अथवा *भाग IV, खंड 18, पृष्ठ 18*

(ख) इस संहिता के लागू होने के बाद और विवाह को इस तथ्य के आधार पर कि यह खंड 7 के उपखंड (V) में अन्तर्विष्ट प्रावधानों के प्रतिकूल है, अवैध हो जाता है :

ऐसे व्यक्ति किसी भी समय उस जिले के पंजीयक के पास जिले में दोनों में से कोई एक कम से कम 30 दिन रह रहा हो, शीघ्र ही अपने विवाह का पंजीकरण कराने के लिए इस तरह आवेदन दे सकते हैं मानो पंजीयक के समक्ष उनका विवाह एक पंजीकृत विवाह के रूप में संपन्न हुआ हो।

(2) ऐसे किसी आवेदन के प्राप्त होने पर, पंजीयक निर्धारित विधि से सरकारी सूचना जारी करेगा और आपत्ति आमंत्रित करने के लिए 30 दिनों का समय देने के बाद और उस अवधि में पंजीयक प्राप्त आपत्तियों पर बहस सुनने के बाद यदि वह संतुष्ट हैं कि:–

(क) विवाह समारोह प्रार्थना-पत्र में दी गई तिथि को संपन्न हुआ और तब से दोनों पति-पत्नी के रूप में रह रहे हैं;

(ख) प्रार्थना पत्र देने की तिथि को विवाह के दोनों पक्ष खंड 10 के (1) से (4) के उपखंडों में दी गई शर्तों को पूरा करते हैं; और

(ग) दोनों पक्षों में से कोई भी पक्ष विधवा/विधुर न हो और आवेदन देने के समय 21 वर्ष की उम्र पूरी कर ली हो और विवाह को पंजीकृत विवाह के रूप में पंजीकृत करने के लिए विवाह के लिए उसके संरक्षक की सहमति प्राप्त कर ली गई है :

ऐसी स्थिति में पंजीयक छठवीं अनुसूची में दिये गए तरीके से हिंदू सांस्कारिक विवाह रजिस्टर में विवाह प्रमाण–पत्र की प्रविष्टि करेगा और यह प्रमाण–पत्र विवाह के पक्षों द्वारा तथा तीन साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित होगा।

(3) उपखंड 2 में यथा निर्दिष्ट प्रमाण–पत्र की प्रविष्टि होने के बाद यह विवाह सभी उद्देश्यों के लिए वैध माना जाएगा और इस तिथि के बाद, जिस पर दोनों पक्षों ने सांस्कारिक विधि से विवाह किया है, जन्म लेने के बाद उनके सभी बच्चे (जिनके नाम भी प्रमाण–पत्र और हिंदू सांस्कारिक विवाह रजिस्टर में अंकित किए जाएंगे) हर तरह से अपने माता–पिता की वैध संतान होंगे।

(4) विवाह का कोई भी पक्ष इस खंड के अन्तर्गत पारित किये गए यदि किसी आदेश से संतुष्ट नहीं है तो वह आदेश के विरुद्ध जिला न्यायालय में जिसकी स्थानीय सीमा के अन्दर पंजीयक कार्य करता है, अपील कर सकता है और इस संबंध में जिला न्यायालय का निर्णय अन्तिम होगा।

(22)
विवाह अभिलेखों का उपयोग

(22) निरीक्षण हेतु विवाह अभिलेखों का उपलब्ध होना : हिंदू **धार्मिक** विवाह पंजीकरण और हिंदू पंजीकृत विवाह प्रमाण–पत्र पुस्तिका सभी तर्कसंगत समय पर निरीक्षण हेतु उपलब्ध रहेगी और उसमें अन्तर्विष्ट सभी कथनों की सत्यता साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य होगी :

आवेदन करने और निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर पंजीयक उसमें से प्रमाणित उद्हरण उसे देगा।

(23) विवाह अभिलेखों में जन्म, मृत्यु और विवाह के महा पंजीयक के पास भेजा जाना : पंजीयक राज्य के जन्म, मृत्यु और विवाह के महा पंजीयक के पास, जिस जिले में वह स्थिर है, यथा निश्चित अन्तराल में निर्धारित फार्म पर पिछले अन्तराल से लेकर अब तक हिंदू **धार्मिक** विवाह रजिस्टर और हिंदू पंजीयकृत विवाह प्रमाण–पत्र पुस्तिका में उसके द्वारा की गई प्रविष्टियों की स्वयं द्वारा सत्यापित एक प्रति भेजेगा।

(22) निरीक्षण हेतु विवाह अभिलेखों का उपलब्ध होना : हिन्दू सांस्कारिक विवाह पंजी और हिन्दू पंजीकृत विवाह प्रमाण–पत्र पुस्तिका/तर्कसंगत समय पर निरीक्षण हेतु उपलब्ध रहेगी और उसमें अन्तर्विष्ट सभी कथनों की सत्यता साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य होगी। *भाग IV, खंड 19, पृष्ठ 18*

आवेदन करने पर और निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर पंजीयक उसमें से प्रमाणिक उद्तरण उसे देगा।

(23) विवाह अभिलेखों में प्रविष्टियों की प्रतियों का जन्म, मृत्यु और विवाह के महापंजीयक विषात अभिलेखों में प्रतिविष्टयों की प्रतियों का जन्म, मृत्यु और विवाह के महापंजियक के पास भेजा जाना : पंजीयक राज्य के जन्म, मृत्यु और विवाह के महापंजीयक के पास जिस जिले में वह स्थित है यथा निश्चित अन्तराल में निर्धारित फार्म पर पिछले अन्तराल से लेकर अब तक हिन्दू सांस्कारिक विवाह रजिस्टर और हिन्दू पंजियकृत प्रमाणपत्र पुस्तिका में उसके द्वारा की गई प्रविष्टियों की स्वयं द्वारा सत्यापित एक प्रति भेजेगा। *भाग IV, खंड 20, पृष्ठ 18*

(24)
विवाह में संरक्षकता

(24) विवाह में संरक्षकों की प्राथमिकता :

(1) भाग IV के प्रावधानों के होते हुए भी, इस भाग के अन्तर्गत जहां भी विवाह में संरक्षक की सहमति की आवश्यकता होती है, इस प्रकार की सहमति देने के लिए निम्नलिखित व्यक्ति इस क्रम में अधिकृत होंगे :–

(1) पिता, (2) माता, (3) भाई।

(4) दूर के संबंधी के बजाय के निकट संबंधी को प्राथमिकता देते हुए कोई भी अन्य संबंधी।

व्याख्या :

(1) उपर्युक्त कॉलम 4 में दो संबंधियों में से कौन ज्यादा निकट है, यह तय करने के लिए यह परीक्षण होगा कि भाग 7 के स्थायी सम्पत्ति का उत्तराधिकार के नियम के अनुसार बच्चे की पुश्तैन संपत्ति का इनमें से प्रथम कौन उत्तराधिकारी है।

(2) कोई भी व्यक्ति इस खंड के प्रावधानों के अन्तर्गत संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए तब तक अधिकृत नहीं होगा जब तक कि उस व्यक्ति ने स्वयं ही 21 वर्ष पूरे न कर लिए हों।

(3) कोई व्यक्ति, जो उपर्युक्त प्रावधानों के अन्तर्गत विवाह में संरक्षक बनने के लिए अधिकृत है, अनुपस्थित रहने के कारण, असमर्थता अथवा अन्य कारणों से, अयोग्य अथवा अस्वस्थ होने से यह कार्य करने में मना कर देता है तो क्रम में दूसरा व्यक्ति विवाह में संरक्षक बनने के लिए अधिकृत होगा।

(4) यह भाग, संरक्षकों द्वारा आयोजित भावी विवाह को यदि न्यायालय सोचता है कि अव्यस्कों के हित में ऐसा करना आवश्यक है, उसे अपनी निषेधाज्ञा से रोकने के

न्यायाधिकार को प्रभावी नहीं करेगा।

(24) विवाह में संरक्षकता :

(1) भाग IV के प्रावधानों के होते हुए भी, इस भाग के अन्तर्गत जहां भी विवाह में संरक्षक की सहमति की आवश्यकता होती है, इस प्रकार की सहमति देने के लिए निम्नलिखित व्यक्ति इस क्रम में अधिकृत होंगे :– *भाग IV, खंड 22, पृष्ठ 19*

(1) पिता,

(2) माता,

(3) दादा (पिता के पिता)।

(4) पूर्ण अथवा अर्द्ध रक्त संबंधी भाई, अर्द्ध रक्त संबंधी की अपेक्षा, पूर्ण रक्त संबंधी के भाई को वरीयता दी जाती है और भाइयों में से पूर्ण अथवा अर्द्ध रक्त संबंधी में से जो बड़ा होता है उसे वरीयता मिली है :

यह भाग, संरक्षकों द्वारा आयोजित भावी विवाह को यदि न्यायालय सोचता है कि अव्यस्कों के हित में ऐसा करना आवश्यक है, उसे अपनी निषेधाज्ञा से रोकने के न्यायाधिकार को प्रभावी नहीं करेगा।

(5) उपर्युक्त कॉलम-चार में स्थापित प्राथमिकता के नियमों को ध्यान में रखते हुए, पूर्ण अथवा अर्द्ध रक्त संबंधी।

(6) ममेरे दादा।

(7) उपर्युक्त कॉलम 4 में स्थापित प्राथमिकता के नियमों को ध्यान में रखते हुए मामा।

(8) उपर्युक्त कॉलम 4 में स्थापित प्राथमिकता के नियमों को ध्यान में रखते हुए, कोई अन्य संबंधी, दूर के रिश्ते के बजाय निकट के रिश्ते वाले को और दो संबंधियों में से एक के ऊपर दूसरे को इसी तरह वरीयता दी जाएगी।

व्याख्या :

(1) उपर्युक्त कॉलम 8 में दो संबंधियों में से कौन ज्यादा निकटस्थ है, इसका निर्धारण करने के लिए यह परीक्षण होगा कि भाग VII में स्थायी सम्पत्ति के उत्तराधिकार के नियमों के अनुसार बच्चे की पुश्तैनी संपत्ति का इनमें से प्रथम कौन उत्तराधिकारी है।

(2) कोई भी व्यक्ति इस खंड के प्रावधानों के अन्तर्गत संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए तब तक अधिकृत नहीं होगा जब तक कि उस व्यक्ति ने स्वयं ही 21 वर्ष पूरे न कर लिये हों;

(3) यदि कोई भी व्यक्ति जो उपर्युक्त प्रावधानों के अन्तर्गत विवाह में संरक्षक बनने के लिए अधिकृत है, अनुपस्थित रहने के कारण, असमर्थता अथवा अन्य कारणों से, अयोग्य अथवा अस्वस्थ होने से यह कार्य करने से मना कर देता है तो क्रम में दूसरा व्यक्ति संरक्षक बनने के लिए अधिकृत होगा।

(4) इस भाग में, यदि न्यायालय की दृष्टि में किसी, अवयस्क के हितों के लिए ऐसा करना आवश्यक है तो निषेधाज्ञा का पालने करते हुए न्यायालय कर सकेगा। ऐसे में आयोजित भावी विवाह के संरक्षक न्यायालय के न्यायाधिकार को प्रभावित नहीं कर सकेंगे। संरक्षकों द्वारा आयोजित भावी विवाह को निषेधाज्ञा द्वारा रोकने न्यायालय में क्षेत्राधिकार को कुछ भी प्रभावी नहीं होगा।

(25)
मरूमक्कटइयों आदि के बीच वैधानिक विवाहों के लिए विशेष प्रावधान

24. A. मरूमक्कटयम अथवा आलियसंतान महिला के विवाह से संबंधित शर्तें :

(1) इस संहिता के आरम्भ होने के बाद एक स्त्री, जो कि यदि संहिता पारित नहीं होगी तो मरूमक्कटयम अथवा आलिय संतान विधि द्वारा अधिशासित किये जाते, और एक हिंदू पुरुष के मध्य संपन्न हुआ विवाह वैध माना जाएगा यदि खंड 7 में दी गई शर्तें पूरी होती हों :

इसके बावजूद इस खंड के उपखंड (5) में दी गई शर्तें ऐसे किसी विवाह पर लागू नहीं होगी।

(2) इस खंड के अन्तर्गत प्रत्येक विवाह, अपने समुदाय में प्रचलित जो दोनों अथवा कोई एक पक्ष से संबंधित धार्मिक परम्परायें और अनुष्ठान हो, उनके अनुसार सार्वजनिक रूप से संपन्न होगा :

इसके बाद भी कोई ऐसा विवाह मात्र इस आधार पर अवैध नहीं होगा कि उपर्युक्त विवाह के संपन्न होने में धार्मिक परम्पराओं और अनुष्ठानों के पालन में अनियमितता पाई गई।

(3) इस खंड के अन्तर्गत प्रत्येक विवाह की सूचना अधिकृत व्यक्ति द्वारा अधिकृत अधिकारी को अधिकृत तरीके से और अधिकृत समय में दी जायेगी जैसा कि नियमों में निर्धारित किया गया हो।

(4) जब इस खंड के प्रावधानों के अन्तर्गत एक स्त्री, जो यदि यह संहिता पारित नहीं होती तो मरूमक्कटयम अथवा आलिय-संतान विधि द्वारा अधिशासित होते, और हिंदू पुरुष, जो किसी ऐसे कानून द्वारा अधिशासित नहीं होता, का विवाह संपन्न होता है तो दोनों पक्षों के लिए यह वैधानिक होगा कि उपखंड तीन में दी गई सूचना के अन्तर्गत यह घोषणा करें कि वे मरूमक्कटयम अथवा आलिय-संतान विवाहों के प्रावधानों को विलोपन करके इस भाग में अन्तर्विष्ट विशेष प्रावधानों का पालन करना चाहते हैं। और जब तक ऐसी घोषणा नहीं की जाती :-

(क) (इस खंड के अतिरिक्त) किसी ऐसे विशेष प्रावधान में अन्तर्विष्ट कोई भी प्रावधान किसी भी पक्ष पर लागू नहीं होगा; और

(ख) इस भाग के अध्याय II और III ऐसे विवाह पर अथवा विवाह के संबंध में लागू होंगे जैसा कि किसी धार्मिक विवाह पर अथवा धार्मिक विवाह के संबंध में लागू होते हैं।

(5) यदि कोई व्यक्ति उपखंड 3 में दी गई आवश्यकता के अनुसार विवाह की सूचना नहीं दे पाता है तो उसे जुर्माना देना पड़ेगा जो कि पचास रुपये तक हो सकता है :

इसके बाद भी, कोई विवाह ऐसी सूचना न दे पाने के कारण अवैधानिक नहीं माना जाएगा अथवा यदि विवाह से संबंधित कोई मामला उठता है तो किसी पक्ष के वैधिक अधिकारों को प्रभावित नहीं करेगा अथवा ऐसे विवाहों के मामलों का?

(26)
दण्ड इत्यादि

***(25) द्विपत्नीक विवाह और उसके लिए दण्ड :** कोई भी व्यक्ति जो अपने पति/पत्नी के जीवन काल में, यदि ऐसे व्यक्ति का विवाह, विलोपन, ऐसे पति/पत्नी के साथ संहिता के प्रावधानों के अनुसार अथवा इस संहिता के लागू होने से पहले किसी भी समय उस वक्त की विधि, प्रचलित परम्पराओं अथवा रीति-रिवाजों से

*डॉ. अम्बेडकर की अपनी व्यक्तिगत प्रति में पेन्सिल से की गई टिप्पणी, 'मामले को स्पष्ट करने के लिए मान्य परम्पराएं' —संपादक

नहीं हुआ है, इस संहिता के लागू होने के बाद कोई दूसरे तरह का विवाह करता है, तो वह पति/पत्नी के जीवनकाल में दूसरा विवाह करने के अपराध में भारतीय दण्ड संहिता, 1860 (1860 का 45वां अधिनियम) की धारा 494 और 495 के अन्तर्गत दण्ड का भागी है।

(27)

(26) झूठे घोषणा पत्र अथवा प्रमाण-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए दण्ड:

इस भाग के अन्तर्गत किसी आवश्यक घोषणा-पत्र अथवा प्रमाण-पत्र बनाने, हस्ताक्षर करने वाला अथवा प्रमाणित करने वाला जिसमें अन्तर्विष्ट वक्तव्य झूठा हो और जिसे या तो वह जानता है अथवा झूठा मानता है अथवा सत्य नहीं मानता, भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45वां अधिनियम) की धारा 199 में दिये गये अपराध का दोषी होगा।

(25)

भाग V, खंड 24, पृष्ठ 19

(25) द्विपत्नीक विवाह और उसके लिए दण्ड : कोई भी व्यक्ति जो अपने पति/पत्नी के जीवन काल में, यदि ऐसे किसी व्यक्ति का विवाह ऐसे पति/पत्नी से सक्षम न्यायाधिकार वाले न्यायालय द्वारा रद्द नहीं कया गया है। इस संहिता के लागू होने के बाद कोई विवाह करता है जो वह पति/पत्नी के पूरे जीवनकाल में दूसरा विवाह करने के अपराध में भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45वां) की धारा 494 और 495 में दिये गए दण्ड का भागी होगा अपने पति अथवा पत्नी के जीवित रहते पुनः विवाह करने के अपराध में।

(26)

भाग IV, खंड 21, पृष्ठ 18

(25) झूठे प्रमाण-पत्रों अथवा घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करने से दण्ड : इस भाग के अन्तर्गत किसी आवश्यक घोषणा-पत्र बनाने अथवा प्रमाण -पत्र पर हस्ताक्षर करने वाला अथवा प्रमाणित करने वाला, जिसमें अन्तर्विष्ट वक्तव्य झूठे हों जिसे या तो वह जानता है अथवा झूठा मानता है अथवा सत्य नहीं मानता, भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45वां अधिनियम) की धारा 199 में दिये गये अपराध का दोषी होगा।

(28)

अध्याय II

दाम्पत्य अधिकारों और न्यायिक विच्छेद का प्रत्यावस्थान

(27) वैवाहिक अधिकारों के प्रत्यानयन के लिए आवेदन : जब पति अथवा पत्नी बिना किसी उचित कारण के एक–दूसरे के समाज से अलग हो जाते हैं तो पीड़ित पक्ष जिला न्यायालय में दाम्पत्य अधिकारों की वापसी (प्रत्यानयन) के लिए प्रार्थना–पत्र दे सकता है और न्यायालय, आवेदन में दिये गए कथनों की सत्यता से संतुष्ट होकर तथा जांच करके कि आवेदन स्वीकार करने में कोई अड़चन नहीं है, तद्नुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यानयन का निर्णय दे सकता है।

(28) दाम्पत्य अधिकारों के दाम्पत्य के लिए आवेदन का उत्तर : दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यानयन के लिए आवेदन के उत्तर में कोई सफाई नहीं दी जायेगी जिससे कि वह न्यायिक–विच्छेद के लिए अथवा विवाह विघटन के लिये कोई आधार न बन सके।

(30)

(29) न्यायिक विच्छेद : विवाह का कोई भी पक्ष, चाहे वह इस संहिता के लागू होने से पहले अथवा बाद में संपन्न हुआ हो, निम्नलिखित आधार पर न्यायिक विच्छेद के निर्णय की प्रार्थना करते हुए जिला न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि दूसरे पक्ष ने :–

(क) आवदेन दिये जाने की तिथि से कम से कम दो वर्ष पूर्व से बिना किसी कारण से आवेदक का परित्याग कर दिया हो; अथवा

(ख) ऐसी निर्दयतापूर्ण व्यवहार का दोषी है जिससे आवेदक का दूसरे पक्ष के साथ रहना असुरक्षित हो गया हो;

(ग) रतिज (यौन) रोग से पीड़ित रहा है जो संक्रामक है और उसने आवेदन दिए जाने की तिथि से कम से कम एक वर्ष से आवेदक से संपर्क नहीं रखा हो; अथवा

(घ) कुष्ठ रोग से बहुत अधिक पीड़ित हो; अथवा

(ड) विवाह के समय से ही विक्षिप्त मस्तिष्क का रोगी रहा हो; अथवा

(च) विवाह के समय व्यभिचारी रहा हो।

व्याख्या : इस खंड में, सजातीय कथनों और व्याकरणीय भिन्नताओं से "परित्याग" कथन का अर्थ है कि बिना किसी उचित कारण के स्व और दूसरे पक्ष की इच्छा के विरुद्ध अथवा बिना सहमति के, दूसरे पक्ष का विवाह से परित्याग करना है।

(31) दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यानयन के लिए आवेदन : जब पति अथवा पत्नी बिना किसी उचित कारण के एक दूसरे के समाज से अलग हो जाते हैं तो पीड़ित पक्ष जिला न्यायालय में दाम्पत्य अधिकारों की वापसी (प्रत्यानयन) के लिए प्रार्थना-पत्र दे सकता है और न्यायालय, आवेदन में दिये गये कथनों की सत्यता से संतुष्ट होकर तथा जांच करके कि आवेदन स्वीकार करने में कोई कानूनी अड़चन नहीं है, तदनुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यानयन का निर्णय दे सकता है।

(32) वैवाहिक अधिकारों के प्रत्यानयन के लिए आवेदन का उत्तर : दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यानयन के लिए आवेदन के उत्तर में कोई सफाई नहीं दी जायेगी जिससे कि वह न्यायिक विच्छेद के लिए अथवा अलगाव के लिए कोई आधार न बन सके।

(33) न्यायिक विच्छेद : विवाह का कोई भी पक्ष, वह चाहे इस संहिता के लागू होने से पहले अथवा बाद में, संपन्न हुआ हो, निम्नलिखित आधार पर न्यायिक विच्छेद के निर्णय की प्रार्थना करते हुए जिला न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि दूसरे पक्ष नें :-

भाग IV, खंड 30, पृष्ठ 21

(क) कम से कम दो वर्ष से आवेदक का परित्याग कर दिया हो; अथवा

(ख) आवेदक के साथ ऐसे निर्दयतापूर्ण व्यवहार का दोषी रहा हो जिससे कि आवेदक का दूसरे पक्ष के साथ रहना असुरक्षित हो गया हो; अथवा

(ग) दूसरा पक्ष असाध्य यौन (रजित) रोग के संक्रामक रूप से पीड़ित रहा हो और आवेदन देने से कम से कम एक वर्ष तक आवेदक से संपर्क न रखा हो, अथवा

(घ) यदि रजिस्ट्री विवाह मानते हुए भी, यह खंड 8 के उपखंडों (1) व (4) में दिए गए किसी भी शर्त के प्रतिकूल है:

इसके होते हुए भी, यदि कोई विवाह, विवाह-विच्छेद की कार्यवाही आरम्भ होने से पहले, खंड 21 के अन्तर्गत रजिस्ट्री विवाह के रूप में पंजीकृत है तो खंड 7 के उपखंड (5) में अन्तर्विष्ट निषिद्ध सीमा में पड़ने वाले किसी भी मामले पर इस खंड में अन्तर्विष्ट कोई भी प्रावधान लागू नहीं होगा।

(31)

अध्याय - तीन

विवाह के निष्प्रभावी होने से संबंधित सामान्य प्रावधान

(30) न्यायालय के आदेश के अलावा विवाह का निष्प्रभावी न होना : इस भाग में अन्तर्विष्ट किन्हीं प्रावधानों के होते हुए भी, कोई भी विवाह, चाहे वह इस संहिता

के लागू होने से पहले अथवा बाद में संपन्न हुआ हो, कानूनी तौर पर **निष्प्रभावी हुआ नहीं माना जायेगा जब तक कि सक्षम न्यायालय ने इस संबंध में अपनी तरफ से कोई निर्णय न दिया हो।**

(32)

(30क) विवाह के निष्प्रभावी होने की पद्धति : विवाह निष्प्रभावी होने का आदेश हो जाने पर कोई विवाह निष्प्रभावी हो सकता है यदि खंड 31 में दिये गए किन्हीं कारणों से यह शून्य करार दिया जाता है, अथवा विवाह विघटन का आदेश हो जाता है, यदि खंड 32 में दिये गए किन्हीं कारणों से यह शून्य घोषित होने योग्य है अथवा खंड 33 में दिये गये किन्हीं वजहों के आधार पर तलाक का आदेश हो जाता है, जैसा भी मामला लागू हो।

विवाह का निष्प्रभावी होना

(31) विवाह के निष्प्रभावी होने के निर्णय के आधार :

(1) इस संहिता के लागू होने से पहले संपन्न हुआ कोई भी विवाह **निष्प्रभावी होने के आदेश से शून्य हो सकता है :–**

(क) किसी विवाह के समय प्रचलित किन्हीं कानूनी प्रावधानों के कारण से ऐसा विवाह इस आधार पर अवैध था कि विवाह के समय किसी पक्ष के कोई पति अथवा पत्नी थी; अथवा

(ख) यदि विवाह के समय कोई पक्ष खंड 5 के उपखंड (ग) में यथा परिभाषित निषिद्ध संबंधों की सीमा में थे :

इसके बाद भी कोई विवाह इस उप–भाग के उपखंड (ख) के प्रावधानों के अन्तर्गत निष्प्रभावी नहीं होगा यदि विवाह के समय प्रचलित कानूनी प्रावधानों के अनुसार यह विवाह वैध रहा हो।

(2) इस संहिता के आरम्भ होने के बाद कोई भी विवाह **निष्प्रभावी के आदेश के द्वारा शून्य हो सकता है :–**

(क) यदि धार्मिक विवाह मानते हुए भी यह खंड 7 के उपखंडों (i), (ii) और (v) में दी गई किसी शर्त के प्रतिकूल है।

(34) न्यायालय के आदेश के बिना किसी विवाह का न टाला जाना : इस भाग में अन्तर्विष्ट किन्हीं प्रावधानों के होते हुए भी, कोई भी विवाह चाहे इस

संहिता के आरम्भ होने से पहले अथवा बाद में संपन्न हुआ हो और चहो यह विवाह अमान्य हो अथवा अमान्य होने योग्य हो, कानूनी तौर पर विच्छेदित हुआ नहीं माना जाएगा जब तक कि किसी सक्षम न्यायालय ने यह घोषणा करते हुए निर्णय न दिया हो कि विवाह का विच्छेद या तो इस संबंध में दिए गए किसी अभ्यावेदन पर हुआ है अथवा किसी ऐसी कार्यवाही पर हुआ है जिसमें विवाह की वैधता पर कोई प्रश्न चिन्ह लगा हो।

इसके बाद भी, उपभाग (2) के उपखंड (क) में उद्धृत मामले पर खंड 7 के उपखंड (5) में दी गई कोई भी शर्त लागू नहीं होगी जब किसी न्यायालय में विवाह-विच्छेद का अभ्यावेदन देने से पहले खंड 21 के अन्तर्गत कोई भी विवाह रजिस्ट्री विवाह के रूप में किसी भी समय पंजीकृत हुआ हो।

(34)
विवाह का विघटन

(32) विवाह विघटन का निर्णय होने के आधार :

(1) इस संहिता के लागू होने से पूर्व संपन्न हुआ कोई भी विवाह, **विघटित होने के आदेश से इस आधार पर निष्प्रभावी हो जाएगा** कि विवाह का कोई पक्ष विवाह के समय बुद्धिहीन अथवा विक्षिप्त था।

(2) इस संहिता के लागू होने के बाद संपन्न हुआ कोई भी **विवाह विघटित होने का आदेश किए जाने से, निष्प्रभावी** हो जाएगा-

(क) यदि, इसे धार्मिक विवाह मानते हुए भी, यह खंड 7 के उपखंडों (II), (III) और (IV) में दी गई किसी भी शर्त के प्रतिकूल है;

(ख) यदि, इसे पंजीयकृत विवाह के रूप में मानते हुए भी, यह खंड 8 के उपखंडों (II), (III) और (V) में दी गई किन्हीं शर्तों के प्रतिकूल है :

इसके बाद भी, जब तक कि कोई जबरदस्ती अथवा धोखाधड़ी न की गई हो, कोई भी धार्मिक विवाह, इसके पूरा होने के बाद, केवल इस आधार पर अवैध नहीं समझा जायेगा, अथवा अवैध हुआ नहीं समझा जायेगा कि विवाह में दुल्हन के संरक्षक की सहमति विवाह के लिए नहीं थी अथवा प्राप्त नहीं की गई थी।

विवाह का शून्य होना

(29) अमान्य योग्य विवाह :

(1) इस संहिता के लागू होने से पहले संपन्न हुआ कोई भी विवाह शून्य करने योग्य हो जायेगा यदि विवाह का कोई भी पक्ष विवाह के समय बुद्धिहीन अथवा विक्षिप्त रहा हो। *भाग IV, खंड 5, पृष्ठ 15*

(2) इस संहिता के आरम्भ होने के बाद संपन्न हुआ कोई भी विवाह शून्य होगा:–

(क) यदि इसे सांस्कारिक विवाह मानते हुए भी, यह खंड 7 के उपखंडों (II), (III) और (VI) में दी गई किसी भी शर्त के प्रतिकूल हो;

(ख) यदि इसे पंजीकृत विवाह के रूप में मानते हुए भी, यह खंड 10 के उपखंडों (II), (III) और (V) में दी गई किन्हीं शर्तों के प्रतिकूल है :

इसके बाद भी, जब तक कि कोई जबरदस्ती अथवा धोखाधड़ी न की गई हो, कोई भी सांस्कारिक विवाह, इसके पूरा हो जाने के बाद, केवल इस आधार पर अवैध नहीं समझा जायेगा कि विवाह में दुल्हन के संरक्षक की सहमति नहीं थी अथवा सहमति प्राप्त नहीं की गई थी।

(3) इस संहिता के लागू होने से पहले या बाद में संपन्न हुआ कोई विवाह खंड 30 में दिए गए किन्हीं आधार पर शून्य करने योग्य हो जाएगा।

(4) जहां पर कोई अभ्यावेदन देने के लिए इस भाग के अन्तर्गत कोई समय–सीमा निर्धारित की गई है और इस निर्धारित सीमा में अभ्यावेदन नहीं दिया गया तो यह विवाह वैध हुआ माना जायेगा और सभी उद्देश्यों के लिए सदैव वैध रहेगा।

(36) विवाह का विघटन :

(1) खंड 35 के प्रावधानों के होते हुए भी, विवाह का कोई भी पक्ष जिला न्यायालय में किसी भी समय किसी भी आधार पर विवाह विघटन करने का अभ्यावेदन कर सकता है जिससे कि विवाह शून्य अथा शून्य करने योग्य हो।

(2) उपखंड (I) में दिया गया कोई भी प्रावधान किसी भी न्यायालय को यह आदेश देने के लिए अधिकृत नहीं करता:–

(i) इस संहिता के लागू होने से पहले संपन्न हुआ कोई भी विवाह जो विवाह संपन्न होने के समय वैध रहा हो, इस आधार पर कि :–

(क) पुरुष पक्ष की पूर्व पत्नी विवाह के समय जीवित रही हो; अथवा

(ख) खंड (5) के उपखंड (ख) में यथा परिभाषित, दोनों पक्ष निषिद्ध संबंधों की सीमा में हों;

(ii) इस संहिता के लागू होने से पहले या बाद में सम्पन्न, कोई भी विवाह इस आधार पर कि विवाह के समय कोई भी पक्ष बुद्धिहीन या विक्षिप्त रहा हो अथवा विवाह के समय प्रतिवादी नपुंसक रहा हो और यह कार्यवाही आरंभ होने तक उसकी स्थिति ऐसी ही रही हो, शून्य करार दिये जाने योग्य नहीं होगा जब तक कि विवाह सम्पन्न होने के 3 वर्ष के अन्दर विवाह विघटन के संबंध में कोई अभ्यावेदन नहीं किया जाता है, अथवा इस संहिता के लागू होने से पहले संपन्न हुए विवाह की स्थिति में संहिता लागू होने के 2 वर्ष के अन्दर अभ्यावेदन न दिया गया; अथवा

(iii) शून्य करार दिये जाने योग्य विवाह के मामले में इस संहिता के लागू होने से पहले या बाद में संपन्न हुआ कोई विवाह, इस आधार पर आवेदक की सहमति अथवा जहां पर उसके संरक्षक की सहमति की आवश्यकता है, ऐसे संरक्षक की सहमति बल प्रयोग से अथवा धोखा-धड़ी से प्राप्त की गई हो जब तक कि विवाह विघटन का आवेदन जबरदस्ती अथवा धोखा-धड़ी का पता लगने के बाद एक वर्ष के अन्दर न दिया हो :

इसके बाद भी न्यायालय ऐसे अभ्यावेदनों को निरस्त कर देगा यदि–

(क) इस संहिता के लागू होने से पहले संपन्न हुआ विवाह के शून्य करार होने की स्थिति में, जब संहिता आरम्भ होने से पहले बल प्रयोग का कार्य बन्द हो गया हो अथवा जालसाजी का पता लगा लिया गया हो; और विवाह विघटन का आवेदन अथवा इस संहिता के लागू होने के एक वर्ष के बाद दिया गया हो।

(ख) आवेदक अपनी सहमति से विवाह तक दूसरे पक्ष के साथ, बल प्रयोग कार्य बन्द होने अथवा जालसाजी का पता लगाने के बाद, पति/पत्नी के रूप में रहे हों, जैसी भी स्थिति हो।

(34)

(30) विवाह विघटन के अन्य आधार : इस संहिता के आरम्भ होने से पहले या बाद में संपन्न हुआ कोई भी विवाह निम्नलिखित किसी आधार पर विच्छेद हो जाएगा, यथा:–

भाग IV, खंड 29, और पृष्ठ 2

(i) विवाह का कोई भी पक्ष विवाह के समय नपुंसक रहा हो और अभियोग की कार्रवाई आरम्भ तक ऐसी ही स्थिति रही हो;

(ii) पति ने किसी स्त्री को रखैल के रूप में रखा हो अथवा पत्नी किसी व्यक्ति के रखैल हो अथवा वह वेश्या का जीवन बिता रही हो;

(iii) विवाह के किसी पक्ष ने हिंदू धर्म से धर्मान्तरण करके कोई अन्य धर्म अपना लिया हो;

(iv) कोई भी पक्ष विकृत मस्तिष्क का हो और अभ्यावेदन देने से पूर्व कम से कम 5 वर्ष तक लगातार उसका इलाज चलता रहा हो;

(v) कोई भी पक्ष भयानक असाध्य कुष्ठ रोग से पीड़ित हो।

(38) विवाह और विघटन (नया) के आधार : इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व अथवा पश्चात् संपन्न विवाह का एक पक्ष जिला न्यायालय में यह प्रार्थना करते हुए अभ्यावेदन दे सकता है कि उनका विवाह निम्न कारणों से विघटित कर दिया जाए इस आधार पर कि दूसरे पक्ष ने :–

(क) न्यायिक विच्छेद का कोई आदेश पारित अथवा डिक्री होने के बाद, किसी भी पक्ष ने लगभग दो अथवा उससे अधिक वर्षों तक पुनः वैवाहिक समागम प्रारम्भ नहीं किया है;

(ख) प्रतिवादी वैवाहिक अधिकारों की वापसी के निर्णय का दो या अधिक वर्षों से, पालन करने में असफल रहा है।

(35)
विवाह विच्छेद (तलाक)

(33) विवाह-विच्छेद (तलाक) की डिक्री का आधार : कोई विवाह चाहे इस संहिता के आरम्भ होने से पहले या बाद में संपन्न हुआ हो निम्नलिखित में से किसी भी आधार पर तलाक की डिक्री से निष्प्रभावी हो सकता है :–

(i) विवाह का कोई भी पक्ष विवाह के समय नपुंसक हो और अभियोग की कार्रवाई शुरू होने तक ऐसी ही स्थिति रही हो;

(ii) पति के पास कोई रखैल हो अथवा पत्नी किसी व्यक्ति की रखैल बन गई हो अथवा वेश्या का जीवन व्यतीत करती हो;

(iii) विवाह के किसी पक्ष ने धर्मान्तरण करके अन्य धर्म को अपना लिया हो और हिंदू न रहा हो;

(iv) विवाह का कोई भी पक्ष विक्षिप्त मस्तिष्क के असाध्य रोग से ग्रस्त हो और इस आवेदन से पहले लगातार कम से कम 5 वर्षों तक उसका इलाज चलता रहा हो; और

(v) कोई भी पक्ष असाध्य कुष्ठ रोग से पीड़ित हो;

(vi) **किसी भी पक्ष ने दूसरे पक्ष के विरुद्ध न्यायिक विच्छेद का आदेश अथवा डिक्री होने के बाद दो या उससे अधिक समय तक वैवाहिक समागम स्थापित न किया हो;**

(vii) **किसी भी पक्ष में दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यावस्थान की डिक्री का दो वर्ष या अधिक समय तक अनुपालन न किया गया हो।**

(36)

(34) विवाह निष्प्रभावी करने का अधिकार :

(1) विवाह निष्प्रभावी करने की डिक्री विवाह के किसी भी पक्ष द्वारा अथवा अभिकर्त्ता द्वारा अथवा विवाह से प्रभावित किसी व्यक्ति द्वारा अथवा व्यक्ति द्वारा जिसकी इसमें रुचि हो, निष्प्रभावी होने के लिए आवेदन देकर डिक्री द्वारा अथवा किसी अन्य कार्रवाई में उठाये गये तर्क के आधार पर प्राप्त की जा सकती है।

(2) विघटन के लिए अथवा विवाह-विच्छेद के लिए डिक्री का अधिकार केवल वैवाहिक पक्ष के पास होगा :

इसके बाद भी कोई भी पक्ष राहत पाने के उद्देश्य से अपनी गलतियों अथवा अयोग्यता का लाभ प्राप्त करने के योग्य नहीं होगा।

(37)

(35) अभिकर्ताओं की नियुक्ति :

(1) राज्य सरकार राज्य के लिए अथवा किसी भाग के लिए एक या अधिक अभिकर्ताओं की नियुक्ति कर सकती है जिसके पास निम्न अधिकार होंगे :-

(i) वह किसी विवाह को निष्प्रभावी करने की किसी कार्यवाही में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना अथवा उसमें हस्तक्षेप करना, स्व-प्रेरणा से किसी भी

कार्रवाई में किसी भी विवाह को निष्प्रभावी करने के मामले में, जहां पर अभिकर्ता की राय में, लोक हित में उचित है अथवा कोई न्यायालय ऐसा करने की अनुमति दे।

(ii) किसी विवाह के विलोपन की किसी कार्यवाही को, जहां विलोपन का समुचित निदान न्यायालय द्वारा अमान्यता का निर्णय देना ही है, प्रारम्भ करना;

(2) राज्य सरकार उस तरीके को विनियमित करने के लिए नियम बना सकता है जिसमें अभिकर्ता अपने अधिकार का प्रयोग कर सके और वे सब जो किसी अधिकारों के प्रयोग के लिए आकस्मिक अथवा परिणामकारी है।

(35) विघटन (विवाह-विच्छेद) का आवेदन प्रस्तुत करने के लिए सक्षम व्यक्ति : जब कोई विवाह चाहे वह इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व अथवा बाद में संपन्न हुआ हो, इस आधार पर प्रतिवाद किया जाता है कि यह एक शून्य विवाह है, तो न्यायालय इस तर्क को इस आधार पर स्वीकार कर सकता है :

(1) विवाह के किसी पक्ष द्वारा विघटन का आवेदन दिये जाने पर; अथवा

(2) विवाह से प्रभावित अथवा रुचि रखने वाले किसी व्यक्ति द्वारा किसी कार्रवाई में यह मुद्दा उठाये जाने पर।

(3) जब किसी विवाह का, चाहे वह इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व अथवा बाद में संपन्न हुआ हो, इस आधार पर विरोध किया जाता है कि यह शून्य होने योग्य विवाह है, तो न्यायालय द्वारा ऐसा कोई तर्क, विवाह के किसी पक्ष के द्वारा ऐसा करने के अतिरिक्त, स्वीकार नहीं होगा :

इन सबके होते हुए भी कोई पक्ष राहत पाने के उद्देश्य से अपनी कमी अथवा अयोग्यता का लाभ प्राप्त नहीं कर पायेंगे।

(38)

(36) विवाह संपन्न होने के तीन वर्ष के अन्दर विवाह-विच्छेद के लिए कोई आवेदन स्वीकार नहीं :–

(1) इस भाग में अन्तर्विष्ट होते हुए भी कोई भी सक्षम न्यायालय विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए कोई आवेदन तब तक स्वीकार नहीं करेगा जब तक कि आवेदन दिये जाने के समय तक विवाह के तीन वर्ष न बीत गये हों :

इसके बाद भी, न्यायालय, उच्च न्यायालय द्वारा प्रार्थना-पत्र देने के संबंध में बनाये

गये नियमों के अनुसार, विवाह संपन्न होने के तीन वर्ष पूर्व भी आवेदन देने की स्वीकृति इस आधार पर दे सकता है कि आवेदक की कठिनाइयों के कारण यह एक अपवाद है अथवा प्रतिवादी की तरफ से एक विशेष प्रकार का गलत आचरण किया जा रहा है, परन्तु यदि न्यायालय को आवेदन की सुनवाई के समय यह प्रतीत होता है कि आवेदक नक मिथ्या तथ्यों को प्रस्तुत करके अथवा मामले की प्रकृति को छिपाकर आवेदन देने की अनुमति प्राप्त की है तो न्यायालय, इस शर्त पर आज्ञप्ति का आदेश दे सकता है, कि उसका प्रभाव विवाह संपन्न होने के तीन वर्ष बाद ही प्रभावी होगा अथवा आवेदन बिना किसी पूर्वाग्रह के निरस्त कर सकता है जिसे कथित तीन वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद उसी आधार पर लाई जानी है उसी अथवा वस्तुतः उन्हीं तथ्यों जिन्हें उस आवेदन के समर्थन में दिया गया हो जो कि निरस्त हो चुका है।

(2) विवाह संपन्न होने के तीन वर्ष से पहले इस खंड के अन्तर्गत तलाक का कोई आवेदन देने की अनुमति से संबंधित कोई भी प्रार्थना-पत्र निरस्त करते समय न्यायालय विवाह से संबंधित बच्चों के हितों का तथा ऐसी बातों का पूरा ध्यान रखेगा कि क्या तीन वर्ष की अवधि समाप्त होने से पूर्व पक्षों के बीच किसी प्रकार के युक्तिसंगत समझौते की संभावना है।

(39)

विवाह-विच्छेद का प्रभाव

(37) पक्षों को पुनर्विवाह की स्वतंत्रता : जब कोई विवाह किसी प्राधिकृत न्यायालय के आज्ञप्ति द्वारा विच्छेद हो गया हो और इस आज्ञप्ति के विरुद्ध कोई अपील न हुई हो अथवा ऐसी कोई अपील निरस्त हो चुकी हो तो ऐसी स्थिति में विवाह के किसी पक्ष द्वारा पुन: विवाह कियाजाना विधिसंगत होगा मानो कि पहला विवाह मृत्यु के कारण विच्छेद हो गया हो।

(36)

(50) पक्षों को पुनर्विवाह की स्वतंत्रता : जब जिला न्यायाधीश के (नया) विवाह विघटन के निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकृति मिल जाने के छह महीने की समाप्ति के बाद, अथवा जब विवाह विघटन के उच्च न्यायालय के आज्ञप्ति के छह महीने बीत जाने के बाद भी इस आज्ञप्ति के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जाती है :

अथवा ऐसी कोई अपील निरस्त हो चुकी है अथवा ऐसे अपील के परिणामस्वरूप कोई विवाह विघटित हो जाता है तो यह संबंधित पक्षों के लिए विवाह पुन: करना विधिसंगत होगा मानो कि पूर्व विवाह मृत्यु के कारण विघटित हो गया हो।

(40)

(38) विवाह-विच्छेद का परिणाम :

(1) **जहां अकृतता की आज्ञप्ति से कोई विवाह-विच्छेद हो जाता है तो दोनों पक्ष आपस में कभी विवाह हुआ नहीं मानेंगे और न ही कभी भी पति पत्नी के रूप में संबंधित रहेंगे :**

बशर्ते जहां कोई विवाह-विच्छेद अकृतता की डिक्री द्वारा इस आधार पर हो जाता है कि पूर्व पत्नी या पति जीवित थे और यह विनिर्णीत हो जाता है कि परिवर्तित विवाह परस्पर विश्वास पर हुआ था और एक या दोनों पक्षों को यह विश्वास हो गया था कि पूर्व पत्नी या पति की मृत्यु हो चुकी है तो आज्ञप्ति जाने के पूर्व पारित किये जन्म लिये बच्चे आज्ञप्ति में विर्निदिष्ट किये जायेंगे और हर तरह से अपने माता-पिता की वैध संतान माने जायेंगे।

(2) **जब कोई विवाह-विच्छेद विवाह विघटन की आज्ञप्ति से अथवा तलाक के आज्ञप्ति से होता है तो दोनों पक्ष आज्ञप्ति दिये जाने की तिथि से पत्नी और पति के रूप में एक-दूसरे से संबंधित नहीं रहेंगे और इस विवाह के फलस्वरूप जन्म लिये बच्चे हर तरह से अपने माता-पिता की हमेशा वैध संतान माने जाएंगे और आज्ञप्ति में उनके नामों का विशेष उल्लेख होगा।**

(41)
क्षेत्राधिकार और कार्यविधि

(39) इस भाग के अन्तर्गत राहत दिए जाने की शक्तियों की सीमा : इस भाग में अन्तर्विष्ट कोई भी प्रावधान किसी भी न्यायालय को इन मामलों में प्राधिकृत नहीं करेगा:—

(क) विवाह के अकृतता की आज्ञप्ति देना केवल उन्हीं मामलों को छोड़कर विवाह भारत में ही संपन्न हुआ हो और आवेदन दिए जाने के समय आवेदक भारत का निवासी हो।

(ख) विवाह विघटन अथवा तलाक की आज्ञप्ति देना, केवल उन्हीं मामलों को छोड़कर जिनमें विवाह के दोनों पक्ष आवेदन दिये जाने के समय भारत में ही रह रहे हों; अथवा

(ग) विवाह अकृतता की आज्ञप्ति अथवा विवाह विघटन या तलाक के निर्णय के अतिरिक्त, इस भाग के अन्तर्गत राहत देना, केवल उन्हीं मामलों को छोड़कर जिसमें आवेदक आवदेन दिये जाने के समय भारत में रह रहा हो।

(37) विवाह को अमान्य घोषित किए जाने का प्रभाव :

(1) जब कोई विवाह इस आधार पर विघटित हो जाता है यह शून्य हो गया है अथवा कोई विवाह शून्य घोषित कर दिया जाता है तो विवाह शुरू से ही शून्य हुआ माना जाता है और इस विवाह के फलस्वरूप पैदा हुए बच्चे सदैव अवैध माने जायेंगे :

बशर्ते इसके जब कोई विवाह इस आधार पर विघटित हो जाता है अथवा शून्य घोषित हो जाता है कि पूर्व पत्नी या पति जीवित थे और यह विनिर्णीत हो जाता है कि परिवर्ती सम्पन्न विवाह परस्पर विश्वास पर सम्पन्न हुआ था और एक या दोनों पक्षों को यह विश्वास हो गया था कि पूर्व पत्नी या पति की मृत्यु हो चुकी है और ऐसे मामलों में आज्ञप्ति दिये जाने से पूर्व, जन्म लिये बच्चों के बारे में आज्ञप्ति में विशेष उल्लेख किया जायेगा और वे सभी मामलों में अपने माता–पिता की वैध संतान माने जाएंगे।

(2) जब कोई विवाह खंड 29 और 30 में दिए गए किसी भी आधार पर विच्छेछित हो जाता है तो इस विवाह के परिणामस्वरूप पैदा हुए सभी बच्चे सदैव हर प्रकार से अपने माता–पिता की वैध सतान माने जायेंगे/रहेंगे और उनके नामों का आज्ञप्ति में उल्लेख किया जायेगा। *भाग IV, खंड 29 (1), पृष्ठ 21*

क्षेत्राधिकार और कार्य विधि

(39) इस भाग के अन्तर्गत राहत दिए जाने वाली शक्तियों की सीमा : इस भाग में दिया गया कोई भी उपबंध किसी न्यायालय (नया) को इन मामलों में प्राधिकृत नहीं करेगा :–

(क) विवाह विघटन की आज्ञप्ति देने के मामले में;

(1) किसी शून्य अथवा शून्यकरणीय विवाह की स्थिति में जो कि भाग 7 के खंड 2 अथवा भाग 10 के खंड 2 के प्रतिकूल हो अथवा जिसे इस आधार पर बचाया जा सके कि विवाह के समय कोई भी पक्ष महत्वपूर्ण था और इस कार्रवाई के आरम्भ होने तक ऐसा चलता रहा हो जब तब तक कि विवाह किसी प्रान्त में न हुआ हो और आवेदक यह आवेदन दिये जाने के समय प्रान्त का निवासी न हो, अथवा

(2) शून्य करार योग्य विवाह के मामलें में जो कि इस भाग के खंड (क) के उपखंड (1) के अन्तर्गत न हों, और विवाह विघटन का आवेदन किये जाने के समय जब तक विवाह के दोनों पक्ष प्रात में न रह रहे हों, अथवा

(ख) इस भाग के अन्तर्गत राहत देने के मामले में विवाह विघटन की आज्ञप्ति देने के आलावा केवल उन मामलों को छोड़कर जिनमें आवेदक आवेदन दिए जाने के समय प्रांत में रह रहा हो।

(40) न्यायालय जिसमें आवेदन दिया जाए और बंद कमरे में सुनवाई :

(1) इस भाग के अन्तर्गत कोई भी आवेदन जिला न्यायालय में दिया जाएगा जिसके सामान्य मूल सिविल न्यायाधिकार की सीमा में विवाह संपन्न हुआ हो अथवा पति व पत्नी साथ-साथ रहे हों।

(2) यदि कोई पक्ष चाहता हो अथवा यदि न्यायालय उचित समझती है तो इस भाग के अन्तर्गत सुनवाई बंद कमरे में होगी।

(43)

(41) विषय और आवेदनों की जांच :

(1) इस भाग के अन्तर्गत दिया गया प्रत्येक आवेदन, मामले का स्वभाव जिस प्रकार की अनुमति देता हो, साफ-साफ उन तथ्यों को बतायेगा जिस पर राहत प्राप्त करने के लिए दावा किया जा रहा है और किसी विवाह विघटन का अथवा **न्यायिक अलगाव** का प्रत्येक आवेदन स्पष्ट करेगा कि आवेदक और विवाह के दूसरे पक्ष के बीच कोई सन्धि नहीं है।

(2) इस भाग के अन्तर्गत प्रत्येक आवेदन में अन्तर्विष्ट वक्तव्य की आवेदक द्वारा अथवा किसी अन्य समक्ष व्यक्ति द्वारा इस प्रकार जांच की जाएगी जैसी कि वाद-पत्र की जांच के लिए कानून द्वारा आवश्यक होता है और सुनवाई के दौरान उसे साक्ष्य के रूप उद्धृत किया जा सकता है।

(44)

(42) सिविल व्यवहार प्रक्रिया संहिता का लागू होना : इस भाग में अन्तर्निष्ट अन्य उपबंधों के अतिरिक्त दोनों पक्षों के बीच इस भाग के अन्तर्गत सारी कार्रवाई जहां तक संभव हो, सिविल कार्यविधि संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम (V) के अनुसार विनियमित की जाएगी।

(45)

(43) कार्रवाई में आज्ञप्ति : इस भाग के अन्तर्गत दिये गये किसी भी आवेदन से, चाहे इसके बचाव में कुछ कहा गया हो अथवा नहीं, यदि न्यायालय संतुष्ट है कि राहत दिए जाने का कोई भी आधार विद्यमान है और यह आवेदन प्रतिवादी के साथ हाथ मिलाकर नहीं दिया गया है अथवा अभियोग चलाया गया है अथवा व्यभिचार की कोई भी शिकायत, यदि कोई है, अनदेखी नहीं की गई है अथवा उस पर ध्यान नहीं दिया गया है, तो न्यायालय तदनुसार इस प्रकार राहत दिये जाने का डिक्री देगा।

(40) न्यायालय जिसमें आवेदन दिया जाए :

(1) इस भाग के अन्तर्गत कोई भी आवेदन उस जिला न्यायालय में दिया जाएगा जिसके सामान्य सिविल न्यायाधिकार की सीमा में पति और पत्नी रहते हों अथवा पहले साथ-साथ रहे हों। *भाग III (2), डिविजन अधिनियम*

(48) अभियोग की सुनवाई बन्द कमरे में हो : यदि कोई भी पक्ष चाहता हो अथवा यदि न्यायालय उचित समझती है तो इस भाग के अन्तर्गत सुनवाई बन्द कमरे में होगी।

(42)

(41) विषय और आवेदन की जांच :

(1) इस भाग के अन्तर्गत दिया गया प्रत्येक आवेदन, मामले की प्रकृति जिस प्रकार की अनुमति देती हो, साफ-साफ उन तथ्यों को बताएगा, जिस पर राहत प्राप्त करने के लिए दावा किया जा रहा है और विवाह विघटन की आज्ञप्ति के लिए अथवा न्यायिक अलगाव के लिए प्रत्येक आवेदन स्पष्ट करेगा कि आवेदक और विवाह के दूसरे पक्ष के बीच कोई सन्धि नहीं है। *भाग X, इण्ड डिवि. अधिनियम*

(2) इस भाग के अन्तर्गत प्रत्येक आवेदन में अन्तर्निष्ट वक्तव्य आवेदक द्वारा अथवा किसी अन्य सक्षम व्यक्ति द्वारा इस प्रकार जांचा जाएगा जैसा कि वाद-पक्ष की जांच के लिए कानून द्वारा आवश्यक होता है और सुनवाई के दौरान उसे साक्ष्य के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

(43)

(42) सिविल कार्यविधि संहिता का लाभ होना : इस भाग में अन्तर्निष्ट अन्य उपबंधों के अतिरिक्त दोनों पक्षों के बीच इस भाग के अन्तर्गत सारी कार्रवाई, जहां तक हो सके, सिविल व्यवहार प्रक्रिया की संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम 5) के अनुसार विनियमित की जाएंगी।

भाग 15, एण्ड. डिवि. अधिनियम

(44)

आज्ञप्ति की कार्रवाई : इस भाग के अन्तर्गत दिए गए किसी भी आवेदन पर, चाहे इसके बचाव में कुछ कहा गया हो या नहीं, यदि न्यायालय संतुष्ट है कि राहत दिये जाने का कोई भी आधार विद्यमान है और यह आवेदन प्रतिवादी के साथ मिलकर नहीं दिया गया है अथवा अभियोग चलाया गया है, अथवा व्यभिचार की कोई शिकायत, यदि कोई है तो अनदेखी नहीं की गई है अथवा उस पर ध्यान नहीं दिया गया है, न्यायालय तदनुसार इस प्रकार राहत दिये जाने का आज्ञप्ति देगी।

(46)

विवाह-विच्छेद की कार्रवाई में पारित किये जाने वाले दूसरे आदेश

(44) संभरण वादकालीन : इस भाग मे अन्तर्गत किसी कार्रवाई में जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पत्नी के पास अपना व्यय वहन करने के लिए और पत्नी के प्रार्थना -पत्र पर, हो रही कार्रवाई में आवश्यक खर्च के लिए कोई पर्याप्त पत्र पर, हो रही कार्रवाई में आवश्यक खर्च के लिए कोई पर्याप्त आय का स्वतंत्र आधार नहीं है तो वह पति को कार्रवाई का खर्च देने के लिए आदेश कर सकती है और कार्रवाई के दौरान यह व्यय महीने के आधार पर इस तरह कि पति की कुल आय के पांचवे हिस्से से अधिक नहीं होना चाहिए अथवा जैसा न्यायालय को उचित प्रतीत हो।

(47)

(45) स्थायी संभरण :

(1) इस भाग के अन्तर्गत अपने न्यायाधिकार का प्रयोग करते हुए कोई भी न्यायालय कोई आज्ञप्ति दिये जाने के समय अथवा परिवर्ती किसी समय इसी संबंध में इस उद्देश्य के लिए किए गए आवेदन पर, आदेश दे सकती है कि पति यदि पत्नी चरित्रवान है

और अविवाहित है, पत्नी की सुरक्षा करेगा और उसके भरण-पोषण और निर्वहन के लिए यदि आवश्यक है, पति की कुल संपत्ति का अथवा मासिक आधार पर अथवा नियतकालिक रूप से उस अवधि के लिए, जो कि पत्नी के पूरे जीवन-काल से अधिक नहीं होगी, उसकी अपनी संपत्ति, यदि कोई है, को ध्यान में रखकर धन का भुगतान करेगा। उसके पति की संपत्ति से और पक्षों के आचरण न्यायसंगत होगा।

(2) यदि न्यायालय संतुष्ट है कि उपखंड (1) के अन्तर्गत आदेश दिए जाने के उपरान्त किसी भी समय दोनों पक्षों की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन आया है, तो यह किसी भी पक्ष के द्वारा कहे जाने पर अपने आदेश को इस प्रकार परिवर्तित कर सकती है, संशोधित कर सकती है अथवा निरस्त कर सकती है जैसा कि उसे उचित प्रतीत हो।

(3) यदि न्यायालय संतुष्ट है कि पत्नी ने, जिसके पक्ष में उपखंड (1) या (2) के अन्तर्गत निर्णय दिया गया हो, पुनः विवाह कर लिया है अथवा सच्चरित्र नहीं है, वह अपना आदेश निरस्त कर सकता है।

(48)

(46) बच्चों का संरक्षण : इस भाग के अन्तर्गत किसी भी कार्रवाई में, न्यायालय समय-समय पर अंतरिम आदेश दे सकता है और डिक्री में ऐसे प्रावधान बना सकती है जो न्यायसंगत और उचित हो। छोटे बच्चों के संरक्षण, भरण-पोषण और शिक्षा के लिए, उनकी इच्छाओं का ध्यान रखते हुए जहां तक संभव है और डिक्री देने के बाद, आवेदक द्वारा इस उद्देश्य के लिए आवेदन दिए जाने पर, बच्चों के संरक्षण, भरण-पोषण और शिक्षा के संबंध में अपने सभी आदेशों और प्रावधानों के संबंध में अपने आदेश को समय-समय पर वापस ले सकती है, रोक सकती है अथवा परिवर्तित कर सकती है। जो कि उन अंतरिम आदेशों और आज्ञप्तियों में दिया गया हो, जिनमें आज्ञप्ति प्राप्त करने की आर्रवाई अभी लम्बित हो।

(45)

भाग 6, मुम्बई अधिनियम

(45) संभरण वादकालीन : इस भाग के अन्तर्गत किसी कार्रवाई में जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पत्नी के पास, अपना व्यय वहन करने के लिए और पत्नी के प्रार्थना पत्र पर, हो रही कार्रवाई में आवश्यक खर्च के लिए पर्याप्त आय का स्वतंत्र आधार नहीं है तो वह पति को कार्रवाई का खर्च देने के लिए आदेश कर सकती है और कार्रवाई के दौरान यह व्यय महीने के आधार पर इस तरह कि पति की कुल आय के पांचवे भाग से अधिक नहीं होना चाहिए अथवा जैसा न्यायालय को उचित प्रतीत हो।

(46)

(46) स्थायी संभरण :

(1) इस भाग के अन्तर्गत अपने न्यायाधिकार का प्रयोग करते हुए कोई भी न्यायालय, कोई आज्ञप्ति दिये जाने के साथ अथवा परिवर्ती किसी समय इसी संबंध में, इस उद्देश्य के लिए किए गए आवेदन पर, आदेश दे सकती है कि पति, यदि पत्नी चरित्रवान् है और अविवाहित है पत्नी को सुरक्षा करेगा और उसके भरण-पोषण और निर्वहन के लिए पत्नी, पति की कुल संपत्ति का अथवा मासिक आधार पर अथवा नियतकालिक रूप से उस अवधि के लिए जो कि पत्नी के पूरे जीवनकाल से अधिक नहीं होगी, उसकी अपनी संपत्ति यदि कोई है को ध्यान में रखकर धन का भुगतान करेगा। उसके पति की संपत्ति से और पक्षों के आचरण न्यायसंगत होगा।

खंड 6, मुम्बई अधिनियम

(2) यदि न्यायालय संतुष्ट है कि उपखंड (1) के अन्तर्गत आदेश दिये जाने के उपरान्त किसी भी समय दोनों पक्षों की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन आया है, तो यह किसी भी पक्ष के द्वारा कहे जाने पर, अपने आदेश को इस प्रकार परिवर्तित कर सकता है, संशोधित कर सकता है अथवा निरस्त कर सकता है जैसा कि उसे उचित प्रतीत हो;

(3) यदि न्यायालय संतुष्ट है कि पत्नी ने, जिसके पक्ष में उपखंड (1) या (2) के अन्तर्गत निर्णय दिया गया है, विवाह पुनः कर लिया है अथवा सच्चरित्र नहीं है, तो यह अपना आदेश परिवर्तित/निरस्त कर सकती है।

(47)

(47) बच्चों का संरक्षण : इस भाग के अन्तर्गत किसी भी कार्रवाई में, न्यायालय समय-समय पर अंतरिम आदेश दे सकता है और डिक्री में ऐसे प्रावधान बना सकता है जो न्यायसंगत और उचित हो, उनकी इच्छाओं का ध्यान रखते हुए छोटे बच्चों के संरक्षण, भरण-पोषण और शिक्षा के लिए उचित हो और निर्णय देने के बाद आवेदक द्वारा इस उद्देश्य के लिए आवेदन दिए जाने पर बच्चों के संरक्षण, भरण-पोषण और शिक्षा के संबंध में अपने सभी आदेशों और प्रावधानों के संबंध में अपने आदेश को समय-समय पर वापस ले सकती है अथवा परिवर्तित कर सकती है जैसा कि उन अंतरिम आदेशों और आज्ञप्तियों में दिया गया है, जिसमें आज्ञप्ति प्राप्त करने की कार्रवाई लम्बित है।

खंड 15, मुम्बई अधिनियम

(49)

(47) संपत्ति का निपटारा : इस भाग के अन्तर्गत अपने न्यायाधिकार का प्रयोग करते हुए कोई न्यायालय आज्ञप्ति देते समय निम्नलिखित मामलों में अपने आज्ञप्ति में ऐसे प्रावधान बना सकती है जो कि उसे न्यायापूर्ण और उचित प्रतीत हो :–

(1) किसी संपत्ति के संबंध में जोकि निर्णय दिये जाने के तुरन्त पहले पति और पत्नी दोनों से संयुक्त रूप से संबंधित हो;

(2) कोई संपत्ति जो पत्नी से संबंधित हो, चाहे वह खंड 93 में परिभाषित दहेज के रूप में हो या अन्य किसी रूप में, और जो कि पति के आधिपत्य में हो।

(50)

आज्ञप्तियों के निष्पादन को निष्पादित करना और आदेशों से अपील करना

(48) आज्ञप्तियों का प्रवर्तन और आदेशों से अपील करना : इस भाग के अन्तर्गत किसी कार्रवाई में न्यायालय द्वारा दिए गए सभी आज्ञप्ति और आदेश का प्रवर्तन इस तरह होगा जैसा कि वास्तविक सिविल न्यायाधिकार का प्रयोग करते हुए दिए गए आज्ञप्ति और आदेश के दौरान किया जाता है और तत्संबंध में अपील इस समय प्रचलित कानूनों के अन्तर्गत की जा सकती है :

बशर्ते केवल लागत के विषय पर कोई अपील ग्रहण नहीं होगी।

(49) आज्ञप्तियों का प्रवर्तन और आदेशों से अपील करना : इस भाग के अन्तर्गत किसी कार्रवाई में न्यायालय द्वारा दी गई आज्ञप्ति और आदेश का प्रवर्तन इस तरह होगा जैसा कि वास्तविक सिविल न्यायाधिकार का प्रयोग करते हुए दी गई आज्ञप्ति और आदेश में होता है और तत्संबंध में अपील उस समय प्रचलित कानूनों के अन्तर्गत की जा सकती है?

बशर्ते –

(1) विवाह विघटन हेतु जिला न्यायालय की आज्ञप्ति पर अथवा किसी आज्ञप्ति की पुष्टि अथवा पुष्टि को मना करते हुए उच्च न्यायालय के आदेश पर कोई अपील नहीं होगी;

(2) केवल लागत के विषय पर कोई अपील ग्रहण नहीं होगी।

अध्याय – चार

मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाह के विच्छेद के लिए विशेष उपबंध

(49) मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाह का विच्छेद :

(1) खंड 24 (क) के उपखंड (4) में दिए गए उपबंधों के अतिरिक्त, उस खंड के अन्तर्गत संपन्न हुआ कोई भी विवाह–विच्छेद हो सकता है :–

(क) खंड 49 के के अन्तर्गत अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा;

(ख) खंड 49 ख के अन्तर्गत तलाक के किसी आदेश द्वारा;

(ग) विवाह के पक्षों द्वारा प्रयोग किये गये विघटन की पंजीकृत विधि द्वारा :

बशर्ते, यदि विवाह के सभी पक्ष ने 18 वर्ष की अवस्था पूरी नहीं की है तो कोई भी विवाह तब तक किसी तलाक के निर्णय से विच्छेदित नहीं होगा जब तक कि यह आवश्यक उम्र पूरी न कर ले।

(2) विवाह–विच्छेद की पंजीकृत विधि द्वारा किसी विवाह का विघटन उस विधि के पंजीकरण की तिथि से प्रभावी होगा।

(52)

(49क) मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाह के अकृतता की आज्ञप्ति का आधार :

(1) मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान कानून के अंतर्गत इस संहिता के लागू होने से पूर्व संपन्न हुआ कोई विवाह का विवाहोच्छेद अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा हो सकता है :–

(क) यदि विवाह के समय प्रचलित किसी कानून के उपबंधों के कारण से कोई विवाह इस आधार पर अवैध हो जाता है कि विवाह के समय किसी भी पक्ष के पति/पत्नी हैं; अथवा

(ख) यदि विवाह के समय कोई भी पक्ष खंड 5 के उपखंड (ख) के यथा परिभाषित निषिद्ध संबंध के स्तर में हैं;

बशर्ते, इस प्रकार संपन्न हुआ कोई भी विवाह इस उपखंड की धारा (ख) के अन्तर्गत रद्द नहीं होगा, यदि विवाह के समय प्रचलित किसी कानून के प्रावधानों के अन्तर्गत यह विवाह वैध था।

(2) खंड 24 क के उपखंड (4) में दिए गए उपबंधों को छोड़कर इस खंड के अन्तर्गत संपन्न हुआ कोई भी विवाह अकृतता को आज्ञप्ति द्वारा रद्द हो सकता है यदि यह खंड 7 के उपखंड (1) या (4) में दी गई शर्तों के प्रतिकूल हैं।

(3) जब इस भाग के अन्तर्गत अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा कोई विवाह रद्द हो जाता है तो दोनों पक्ष कभी भी विवाह नहीं हुआ माने जायेंगे और न ही कभी उनके बीच पति -पत्नी का रिश्ता रहेगा।

बशर्ते जब अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा कोई विवाह इस आधार पर रद्द हो जाता है कि पूर्व पति या पत्नी जीवित थे और यह विनिर्णीत होता है कि परिवर्ती संपन्न हुआ विवाह आपसी विश्वास विश्वास पर संपन्न हुआ था और एक या दोनों पक्ष यह अच्छी तरह विश्वास करते थे कि पूर्व पति या पत्नी मर चुके हैं, तो ऐसे मामले में आज्ञप्ति दिए जाने से पूर्व जन्म लिए हुए बच्चों के बारे में आज्ञप्ति में विशेष उल्लेख किया जाएगा और वे सभी मामलों में हमेशा अपने माता-पिता की वैध संतान समझे जाएंगे।

(53)

(49ख) मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाह के संबंध में तलाक की प्रक्रिया और आवेदन :

(1) खंड 24 (क) के उपखंड (4) में दिए गए उपबंधों के अतिरिक्त उस खंड के अन्तर्गत विवाह का कोई भी पक्ष तलाक के आदेश द्वारा ऐसे विवाह को रद्द करने के लिए जिला न्यायालय में आवेदन दे सकता है।

(2) इस आवेदन में, विवाह का स्थान, विवाह की तिथि और संरक्षक का नाम व पता, यदि कोई है, जिसकी सहमति से विवाह संपन्न हुआ था, का उल्लेख होगा।

(3) इस आवेदन की एक प्रति आवेदक के खर्चे पर प्रतिवादी के पास भेजी जायेगी।

(4) आवेदन के प्रस्ताव पर, जोकि उपर्युक्त आवेदन की प्रति भेजने की तिथि के 6 महीने से पूर्व और एक वर्ष के बाद न की गई हो, यदि आवेदन इसी बीच वापस न कर लिया गया हो तो न्यायालय, स्वयं संतुष्ट होने पर, कुछ जांच-पड़ताल करने के बाद जैसा कि उसे उचित प्रतीत हो कि कोई विवाह, जो कि खंड 24 क के अन्तर्गत वैध हो, दोनों पक्षों के मध्य संपन्न हुआ हो और यह विवाह खंड 7 के उपखंड (I) और (IV) में उल्लिखित दोनों शर्तों को पूरा करता हो, अपने लिखित आदेश द्वारा विवाह को रद्द हुआ घोषित कर सकता है।

(5) विवाह का विलोपन आदेश की तिथि से प्रभावी होगा और कोई भी पक्ष तत्पश्चात् इस भाग के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए पुनर्विवाह करने के लिए स्वतंत्र होगा।

(6) जब इस खंड के अन्तर्गत तलाक के आदेश से कोई विवाह रद्द हो जाता है तो दोनों पक्ष आदेश की तिथि से दोनों के बीच पति-पत्नी का रिश्ता नहीं रहेगा और इस विवाह से पैदा हुए बच्चे हर तरह से हमेशा अपने माता-पिता की वैध संतान माने जाएंगे।

(54)

(50) मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाह के कुछ उपबंधों का लागू होना :

(1) खंड 39 से 48 तक के उपबंध जहां तक हो सके, इस अध्याय के अन्तर्गत विवाहोच्छेद की कार्रवाई में, खंड 24क के अन्तर्गत संपन्न किसी भी विवाह चाहे विघटन के आदेश से अथवा अकृतता की आज्ञप्ति से रद्द हुआ हो, लागू होंगे।

(2) इस खंड में अन्तर्विष्ट कोई भी उपबंध खंड 24क के उपखंड (4) के संचालन को प्रभावित नहीं करेगा और उपखंड (1) में दिए गए उपबंधों के अतिरिक्त, अध्याय 2 अथवा 3 में अन्तर्विष्ट कोई भी उपबंध इस खंड में अन्तर्गत संपन्न हुए किसी विवाह पर अथवा इस संबंध में लागू नहीं होंगे।

(55)

अध्याय - पांच

रक्षक

(51) पूर्व विवाहों के रक्षक और तत्संबंधी विशेष उपबंध :

(1) इस संहिता के लागू होने से पहले हिंदुओं के मध्य संपन्न हुआ कोई भी विवाह, जो कि अन्यथा वैध है, कभी भी मात्र इस आधार पर अवैध नहीं माने जाएंगे अथवा कभी अवैध रहे होंगे कि दोनों पक्ष एक ही गोत्र अथवा प्रवर से संबंधित हैं अथवा विभिन्न जातियों से संबंधित हैं अथवा उसी जाति के उप-भाग हैं।

(2) इस संहिता के आरम्भ होने से पहले स्त्री व हिंदू पुरुष के बीच संपन्न हुआ विवाह जिसमें स्त्री विवाह के समय प्रचलित मरुमकद्‌यम और अलियसंतान के नियमों द्वारा शासित हो और जो कि वैध हो वैध बना रहेगा और इस संहिता के आरम्भ के समय चल रहा हो। और इस संहिता में अन्तर्विष्ट मरुमकद्‌यम अथवा अलियसंतान विवाहों के विवाहोच्छेद के संबंध विशेष उपबंध ऐसे विवाह पर अथवा इस संबंध

में इस तरह से लागू होगा जैसे कि दो व्यक्तियों के बीच अपनाए हुए विवाह पर लागू होते हैं और जो उस समय की प्रचलित विधियों के अनुसार होता है।

(3) किसी स्त्री का किसी पुरुष के साथ दाम्पत्य मिलाप, जो कि खंड 3 में 'मरुमकट्‌यम विधि' की परिभाषा के उपखंड (3) में उल्लिखित किसी भी समुदाय से संबंधित हो, चाहे वह किसी कानून अधि-द्वारा शासित हो अथवा नहीं, जो कि इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व उस समुदाय में प्रचलित रीति-रिवाजों, समारोहों के द्वारा संपन्न हुआ हो जिससे कि दोनों अथवा कोई भी पक्ष संबंधित हो, हर तरह के सभी उद्देश्यों के लिए उपखंड (2) को सम्मिलित करें। हमेशा वैधिक विवाह के रूप में माना जायेगा यदि संगठन के दोनों पक्षों के बीच समरक्तता अथवा रिश्ते के किसी स्तर पर आपस में कोई संबंध नहीं है जिससे कि उनके मध्य दाम्पत्य-एकता इस समुदाय की परम्परा और रीति-रिवाज के कारण निषिद्‌ध हो गया है जिससे कि वे संबंधित हो अथवा कोई भी पक्ष संबंधित रहा हो :

बशर्ते, इस उपखंड में अन्तर्विष्ट कुछ उपबंधों के अतिरिक्त, कोई भी उपबंध दोनों पक्ष के अथवा किसी भी एक पक्ष के समुदाय के जिससे कि वे संबंधित हो, प्रचलित परम्पराओं के अनुसार इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व विवाह विघटन के किसी निर्णय को अवैध हुआ नहीं माना जाएगा।

(51क) कुछ वैध विवाहों के संहिता के पहले या बाद में हुए विघटन से बच्चों के अधिकार प्रभावित न होना : इस संहिता के आरंभ होने से पूर्व एक स्त्री, जो कि उस समय प्रचलित मरुकमट्‌यम अथवा अलियसंतान विधि द्वारा अधिशासित रही हों, और हिंदू पुरुष के बीच संपन्न हुआ विवाह किसी भी कानून के अनुसार वैध विवाह है, चाहे विवाह के समय वह चल रहा हो अथवा बाद में पारित किया गया हो, अथवा खंड 51 के उपखंड (3) के कारण से हुआ हो, ऐसा विवाह-विघटन चाहे मृत्यु से अथवा अन्य किसी कारण से हुआ हो और चाहे इस संहिता के लागू होने से पूर्व या बाद में हुआ हो ऐसे विवाह के बच्चों अथवा उनके वंशजों की उस संहिता के अन्तर्गत उनके कानूनी अधिकारों और महत्ता को किसी भी तरह से प्रभावित नहीं करेगा।

(27) पूर्व विवाहों की रक्षा : इस संहिता के लागू होने से पूर्व हिंदुओं के बीच संपन्न हुआ कोई विवाह जो कि अन्यथा वैध है, कभी भी मात्र इस तथ्य पर अवैध नहीं माना जाएगा अथवा कभी अवैध रहा होगा कि दोनों पक्ष एक ही गोत्र अथवा प्रवर से संबंधित रहे हों अथवा भिन्न जाति के हैं अथवा उसी जाति के उप-भाग है।

खंड 4, खंड 3, पृष्ठ (व्याख्या)

(51) बचत रक्षा :

(1) इस भाग में अन्तर्विष्ट कोई भी उपबंध किसी सांस्कारिक *खंड 4, खंड 34,* पृष्ठ विवाह विघटन कराने के लिए मद्रास मरुमकट्यम *22, मुंबई अधिनियम* अधिनियम, 1932 (1932 का मद्रास नियम 22) में दिए गए किसी भी अधिकार को प्रभावित करने वाला नहीं माना जाएगा चाहे यह विवाह इस संहिता के आरम्भ होने से पूर्व अथवा बाद में संपन्न हुआ हो।

(2) इस भाग में अन्तर्विष्ट कोई भी उपबंध विवाह विघटन के लिए अथवा विवाह अकृतता के लिए अथवा न्यायिक विच्छेद के लिए जो कि इस संहिता के लागू होने की तिथि को लम्बित रहा हो, थोड़े समय के लिए प्रचलित किसी अन्य कानून के अन्तर्गत किसी भी कार्रवाई को प्रभावित नहीं करेगा और ऐसी कोई भी कार्रवाई आगे चलती रह सकती है तथा निश्चित हो सकती है मानो कि यह संहिता पारित नहीं हुई हो।

(51ख) लम्बित कार्रवाईयों की रक्षा : इस भाग में अन्तर्विष्ट कोई भी उपबंध विवाह विच्छेद के लिए अथवा न्यायिक विच्छेद के लिए जो कि इस संहिता के लागू होने की तिथि को लम्बित रहा हो, थोड़े समय के लिए प्रचलित किसी अन्य कानून के अन्तर्गत किसी भी कार्रवाई को प्रभावित नहीं करेगा और ऐसी कोई भी कार्रवाई आगे चलती रह सकती है तथा निश्चय कर सकती है मानों कि यह संहिता पारित ही नहीं हुई हो।

यह बिल मामले की आवश्यकताओं पर विचार की तुलना में "महिला भावना" को अधिक व्यक्त करता है। तभी विभाग ने एक सर्वाधिक अभूतपूर्व कार्य हाथ में लिया है। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं, कि बिल का प्रारुप उपयुक्त रूप से तैयार नहीं हुआ था, कि इसमें कुछ खामियां थीं, कि इसे पुनः तैयार किया जाना था। बिल में अनेक अलग अध्याय बनाए गए थे, जिनके अलग क्रमांक और अलग परिभाषाएँ थीं, जो एक-दूसरे से पूरी तरह अलग थे। विधायी विभाग ने सोचा कि यह त्रुटि थी और बिल दोबारा तैयार करना किया जाना चाहिए। जिसमें क्रमांक निरंतर रूप में हो और वह पूर्ण रूप से एक हो।

मेरा मानना है कि विधायी विभाग जिस क्षण उस निष्कर्ष पर पहुंचा था, वही समय था बिल वापस लेने का और एक नया बिल तैयार करने का, जिसे मंत्रालय स्वीकार कर सकता था, और उसे एक नए बिल के रूप में प्रस्तुत कर सकता था। इसके बजाय विभाग विधायी प्रारूप की तैयारी में लग गया, जिससे मैं सर्वथ अनभिज्ञ था। भारत और विदेश के संपूर्ण संवैधानिक इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण प्रस्तुत नही होगा कि एक बिल के प्रस्तुत होने और उसे प्रवर समिति के भेजे जाने के बाद कोई विभागीय बिल तैयार किया जा रहा हो। श्री रामनारायण सिंह ने कल पूछा था कि प्रारुप समिति को क्या प्राधिकार था कि वह कुल मिलाकर एक नया बिल तैयार कर सकें। **(एक माननीय**

सदस्य : 'यह कोई नया बिल नहीं है।') मैं ऐसी स्थिति में नहीं हूं कि मैं किए गए बड़े बदलावों की जानकारी दे सकूं। यद्यपि माननीय कानून मंत्री ने कल प्रश्न का उत्तर देने में टालमटोल की थी, तथापि अंत में उन्हें मानना पड़ा कि उन्होंने कोई बदलाव नहीं किए थे, यह बदलाव प्रवर समिति ने किए थे। मैं उस स्थिति में हूँ कि सदन को दिखा सकूं कि बदलाव बहुत गंभीर थे, बहुत अतिवादी थे और ये छोटे बदलाव नहीं थे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्री मान्, एक नियम आधारित आपत्ति है। यदि माननीय सदस्य अपने तर्क के लिए यह आधार चाहते हैं कि प्रवर समिति को इस तथ्य पर बिल का पुनर्गठन करना चाहिए कि जिस पर विचार हुआ वह उसके पास भेजे गए बिल के अलावा कोई और बिल था, यह बात सत्ता पक्ष के सभापति महोदय ने भी ध्यान में रखी है; उन्हें इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है। यदि उनके कोई अन्य कारण है, तो वह ऐसा कर सकते है; वह बिल के पुनर्गठन के लिए उसे प्रवर समिति को देने के लिए अपने संशोधन के बारे में बातें कर रहे हैं। किंतु यदि वह अपने तर्क पर जोर देते हैं, अर्थात् जो बिल प्रवर समिति के विचारार्थ भेजा गया था, वह इस सदन द्वारा नहीं भेजा गया था, जिसका जिक्र सभापति महोदय ने किया है और यह घोषित हो चुका है कि यह वही बिल है।

श्री टी.टी. कृष्णामाचारी (मद्रास: सामान्य) : यह प्रस्ताव को अस्वीकार करने का एक तर्क हो सकता है।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती : यदि ऐसा है, तो इस बात को इस तरह विचार-विमर्श द्वारा सुलझाया जा चुका है कि इस पर पुन: चर्चा करना चाहें, तो इसमें सदन का समय ही व्यर्थ जाएगा। इस प्रकार की अवधारणा को सुलझाया गया है और तर्कों को बढ़ाया गया है। वह केवल उन्हें दूहरा रहे हैं। श्रीमान् मैं आपको बताना चाहूँगा कि हम कोई भी तर्क सुन सकते हैं, किंतु हम इनके द्वारा दोहराए जाने वाले उन्ही तर्को को दोबारा सुनने के लिए तैयार नहीं हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : क्या मैं अपने मित्र श्री भारती द्वारा उठायी गई आपत्ति के संबंध में कुछ कह सकता हूँ? इन्होंने कहा कि माननीय सदस्य जनाब नजीरुद्दीन अहमद ने बिल के पुनर्गठन के लिए प्रवर समिति को प्रस्तुत अपने संशोधन में वही आधार दिया है जिसका अध्यक्ष महोदय ने जिक्र किया है। मैं यह बल-पूर्वक कहता हूँ और सदन भी इससे सहमत होगा कि प्रत्येक माननीय सदस्य अध्यक्ष महोदय का अनादर किए बिना उन कारणों का उल्लेख करने का पात्र है, जिनसे वह प्रवर समिति को बिल के पुनर्गठन हेतु अपनी अनुशंसा दे सकें। अत: इसमें कोई नियमापत्ति जैसी बात नहीं है। यह एक सदस्य का न्यायसंगत अधिकार है कि वह, वे सभी तर्क दे सकता है, जिनसे वह प्रवर समिति द्वारा पुनर्गठन हेतु एक प्रस्ताव ला सकता है।

माननीय अध्यक्ष : मैं सोचता हूँ कि इसमें कोई नियमापत्ति नहीं है, क्योंकि वह अपने संशोधन की बात कर रहे हैं कि बिल पर और रायशुमारी लेने के लिए उसे पुनः परिचालित किया जाए और वह अपने तर्क को और पुष्ट कर रहे हैं कि बिल को कैसे बदला गया हैं। मूल बिल को प्रवर समिति में कैसे संशोधित किया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं मानता हूँ, मेरे माननीय मित्र को कोई वास्तविक कठिनाई नहीं है। मेरा विश्वास है कि श्री भारती, जो सभी व्यक्तियों में, सबसे बुद्धिमान हैं, इस स्थिति की वास्तविक कठिनाइयों से पूर्णतया परिचित हैं। इसलिए, मेरा मानना है कि वह बड़ी बुद्धिमत्ता से अध्यक्ष महोदय के माध्यम से मुझे बीच में रोक देना चाहते हैं। अतः मैं यहां तत्काल यहा घोषणा करना चाहता हूँ कि सदन में उपस्थित सभी व्यक्तियों में से मैं, अध्यक्ष के निर्णय का सर्वाधिक सम्मान करता हूँ।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : आप इस मामले में क्यों पड़ते हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं केवल यह कह रहा हूँ कि मैं अध्यक्ष के निर्णय को स्वीकार करता हूँ। मैं इस मामले में नहीं पड़ रहा हूँ।

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : आपको इसमें अवश्य पड़ना चाहिए आखिर क्यों नहीं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : किंतु, आदेश क्या थे? आदेश यह था कि बिल पर विचार की अवधि समाप्त नहीं हुई थी, वास्तव में आदेश यह था कि प्रवर समिति के सदस्यों के पास पुराना बिल था और विभागीय बिल था और उन्हें समस्त बातों पर विचार करना चाहिए था और इस आधार पर, मैंने जो तकनीकी आपत्ति उठाई थी कि उक्त विभागीय बिल पर विचार किया गया था किन्तु मूल बिल को शामिल नहीं किया गया था, यही आदेश का प्रभाव था और यही नियम है। मेरा वर्तमान उद्देश्य अब यह दिखाना होगा कि यद्यपि प्रवर समिति के सदस्यों के पास मूल बिल था, और उनके पास विभागीय बिल भी था अर्थात् उनके पास दोनों बिल थे। यद्यपि उनके पास दोनों की तुलना करने और यह देखने का अवसर था कि विभागीय बिल में क्या नया चमत्कारी शामिल किया गया है, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया। उन्होंने अपना कर्तव्य, मैं इस विषय की महत्ता पर विचार करने के संबंध में कहना चाहूंगा कि, एक उतावले तरीके से और अपर्याप्त रूप से तथा अपेक्षाकृत लापरवाही से निभाया। यही दृष्टिकोण था, जिस पर मैं जोर दे रहा था।

एक माननीय सदस्य : आप कानून मंत्री को हिंसा के लिए उकसा रहे हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं ऐसा कोई काम नहीं करूंगा, क्योंकि श्री अहमद से बात करने के लिए मेरे पास अनेक तर्क हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं मानता हूँ कि माननीय विधि मंत्री परिस्थिति से पूरी तरह अवगत हैं, पर मुझे थोड़ा संदेह है कि इस समय उन्हें यह ज्ञात है कि विभागीय बिल में कौन से गंभीर बदलाव किए गए हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं नहीं जानता। पर, मैं उन्हें सुनने के लिए प्रतीक्षारत हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय विधि मंत्री ने कहा है ''कुछ गंभीर बदलाव हुए हैं, किंतु मैंने कुछ नहीं किया है। यह सब प्रवर समिति ने किया है। विभागीय समिति ने कोई बदलाव नहीं किए हैं।'' वास्तव में मैंने कल एक सुस्पष्ट प्रश्न किया था, जिसका कृपा पूर्वक उत्तर दिया कि जो विभागीय समिति गठित की गई थी, क्या उसे निर्देश दिए गए थे कि वह कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं करें। ऐसा इस तथ्य के कारणवश था जो मैंने प्रवर समिति की रिपोर्ट में प्रवर समिति के अधिकांश सदस्यों की घोषणा में पाया था। ''यह संशोधित प्रारुप मूल बिल के कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं करता है।'' यही घोषणा मैं समझता हूँ प्रवर समिति को दी गई थी उसके द्वारा कि कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं किए गए हैं। इस आधार पर कि, जबकि मूल बिल उनके पास था, उन्होंने उसे सावधानीपूर्वक नहीं देखा और इस दृष्टि से उसका मिलान नहीं किया कि क्या कोई महत्वपूर्ण बदलाव किए गए हैं।

श्रीमती रेणुका रे : अध्यक्ष महोदय, एक आपत्ति व्यवस्था पर। क्या प्रवर समिति में जो घटित हुआ है, उन विवरणों को क्या इस तरीके से उठाए जाने की अनुमति है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इस आपत्ति के संबंध में, मैं पहले ही कर चुका हूँ कि :

श्रीमती रेणुका रे : श्रीमान्, यह एक व्यवस्था संबंधी आपत्ति है, जिस पर मैं आपका निर्णय चाहती हूँ।

माननीय अध्यक्ष : मैं समझता हूँ कि यह कोई व्यवस्था संबंधी आपत्ति नहीं है। यह केवल श्री नजीरुद्दीन अहमद का अनुमान है कि प्रवर समिति ने ऐसा किया है अथवा ऐसा कोई कार्य नहीं किया है। मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य प्रवर समिति पर अथवा प्रवर समिति के सदस्यों पर ऐसा कोई आरोप नहीं लगाएंगे। वे अपने तर्क को आगे बढ़ा सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : प्रवर समिति ने जिस तरीके से बर्ताव किया है, उसकी सदन में आलोचना की जा सकती है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है···

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : अध्यक्ष महोदय, आप सही हैं। आरोप लगाए बिना वह अपना तर्क रख सकते हैं।

श्रीमती रेणुका रे : किंतु वह आरोप लगा रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : उनके अनुमान बढ़िया हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मेरा अनुमान है कि प्रवर समिति के सदस्यों को निश्चित रूप से माननीय मंत्री जी द्वारा आश्वासन दिया गया था…

श्रीमती रेणुका रे : श्रीमान्, मुझे इस पर आपत्ति है। ये अनुमान नहीं, आरोप लगा रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : प्रत्येक माननीय सदस्य को अपने अनुमान व्यक्त करने की स्वतंत्रता है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं मानता हूँ कि प्रवर समिति के किसी भी सदस्य द्वारा तत्काल इसका खंडन किया जा सकता है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : नहीं; वस्तुतः हम खंडन नहीं कर सकते। किंतु आप खंडन करने के लिए चूंकि आमंत्रित कर रहे हैं, प्रवर समिति के एक सदस्य के रूप में मैं इसका खंडन करता हूँ। मेरा कहना है कि हमने सम्पूर्ण मामले पर विचार किया है और हम संतुष्ट है कि…

श्री नजीरुद्दीन अहमद : आप बयान दे रहे हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : आप खंडन चाहते हैं। और मैं खंडन कर रहा हूँ।

श्रीमती रेणुका रे : अध्यक्ष महोदय, मैं कहना चाहूँगी क्योंकि अनुमान तैयार किए जाते हैं और आरोप गढ़े जाते हैं, प्रवर समिति के सदस्य एक बड़ी अजीब स्थिति में आ गए हैं, अतः इस स्थिति में वह सब सामने लाना होगा, जो प्रवर समिति में घटित हुआ है, पर जिसे हम यहां नहीं ला सकते।

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर। मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि प्रवर समिति के सदस्यों के विरुद्ध कोई आरोप न लगाएं। वह अपना तर्क रख सकते हैं कि बिल में बदलाव कैसे हुआ है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अपनी इच्छा से तब तक कोई आरोप नहीं लगाऊँगा, न ही किसी माननीय सदस्य पर कोई आरोप नहीं मढूंगा जब तक कि किसी स्तर पर ऐसा करना आवश्यक न हो। यदि कुछ ऐसा बुरा किया गया हो, जिससे 30 करोड़ लोगों का हित प्रभावित होता हो और यदि प्रवर समिति के सदस्यों द्वारा कोई भूल अथवा चूक की गई हो तो मुझे उसकी सम्मानपूर्वक किंतु खुले मन से आलोचना करनी चाहिए। सदन के एक सदस्य को इतना लाभ तो मिलना ही चाहिए। यदि मैं गलत हूँ तो मुझे सुधार भी

करना चाहिए। केवल आरोप गढ़ने के लिए ही मुझे कोई आरोप नहीं गढ़ने चाहिए। किंतु मैं अपने आपको प्रक्रिया के कुछ गंभीर बदलावों और उन त्रुटियों पर उंगली उठाने के लिए तैयार करूंगा, जो बिल की खूबियों को प्रभावित करते हैं, और उस पर होने वाली वार्ता के लिए प्रवर समिति के सदस्यों की आलोचना में मुझे निश्चित रूप से शामिल होना होगा। प्रवर समिति के सदस्यों को बातचीत से क्यों डरना चाहिए?

श्रीमती रेणुका रे : हम बातचीत करने से नहीं डरते। लेकिन प्रवर समिति में क्या कुछ हुआ, हमें उस पर बोलने का अधिकार भी मिलना चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : प्रवर समिति की यह तथाकथित पवित्रता इस संबंध में कई बार छिन्न-भिन्न हुई है।

श्री महावीर त्यागी (यू.पी. : सामान्य) इसमें पवित्रता जैसी कोई बात नहीं है। हम इस पर बातचीत कर सकते हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : हम वार्ता के लिए तैयार हैं।

श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय (पं. बंगाल : सामान्य) श्रीमान्, क्या सदस्यों को इस प्रकार की बातचीत जारी रखने की अनुमति देनी चाहिए?

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर। जो कुछ हो रहा है, मैं देख रहा हूँ। मैं उम्मीद करता हूँ कि माननीय सदस्य, भाषणकर्ता को अपनी बात जारी रखने की अनुमति प्रदान करेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय उपाध्यक्ष ने कल डॉ. अम्बेडकर से कहा था कि वे स्पष्ट करें कि इस तरह की स्थितियां क्यों उत्पन्न हुई हैं। डॉ. अम्बेडकर ने कहा है कि यह सब उनके दोस्तों की तुलना में बढ़ते दुश्मनों के प्रभाव के कारण हुआ है। वे एक साथ मिल गए हैं इसलिए यह सब किया है। इससे प्रवर समिति के तथाकथित रहस्यों का तो पता नहीं चल पाता।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं माननीय सदस्य को बीच में बिल्कुल भी रोकना नहीं चाहता था। किंतु अब मैं सोचता हूँ कि यह मेरा कर्तव्य है कि मैं आपका ध्यानाकर्षित करूं, साथ ही अध्यक्ष महोदय का भी ध्यानाकर्षित करूं कि उनका इशारा इस ओर था कि चूंकि बिल में कुछ बदलाव किए गए हैं, अतः इसे पुनः चालित किया जाना चाहिए था। मैं सोचता हूँ कि इस इशारे के लिए सबसे सुसंगत यह होगा कि उन्हें किसी प्रारंभिक बातचीत के बिना सीधे यह कहना चाहिए था कि क्या बदलाव किए गए हैं। मैं उनसे यह सुनने की प्रतीक्षा कर रहा था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जब अन्य मुद्दे उठे थे, तो मैं ऐसा ही करने वाला था।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : एक बात व्यवस्था संबंधी आपत्ति पर। मैं यह बताना चाहूँगा कि यह प्रश्न सदन के सदस्यों के हितों को प्रभावित करता है। मुद्दे के संबंध में प्रश्न यह है, क्या सदन के सदस्यों को प्रक्रिया को लेकर प्रवर समिति के सदस्यों के दुर्व्यवहार अथवा गलत आचरण की आलोचना करने का कोई अधिकार नहीं है? मान लो यदि किसी प्रवर समिति के समक्ष कोई बिल प्रस्तुत किया जाता है और उक्त प्रवर समिति द्वारा ऐसे किसी बिल पर विचार कर लिया जाता हो, जो पहले बिल के स्थान पर रखा गया हो, तो क्या सदन के सदस्य उन्हें कुछ कहने के पात्र नहीं हैं? आप इस मुद्दे पर क्या कोई नियम बता सकते हैं कि क्या सदन के सदस्य प्रवर समिति के आचरण की आलोचना नहीं कर सकते? प्रवर समिति में जो कुछ भी हुआ है उसके रहस्योद्घाटन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। परन्तु जिस तरीके के कार्यवाही घटित हुई है, उसकी आलोचना होनी चाहिए। अन्यथा यह मान लिया जाएगा कि एक बिल पर सदन के सदस्यों का किसी भी तरह का नियंत्रण नहीं है। यदि सदन में कोई बिल लाया जाता है तो वह सदन की संपत्ति बन जाता है और प्रत्येक सदस्य को प्रवर समिति में होने वाली अनियमिताओं को उजागर करने का अधिकार है।

माननीय अध्यक्ष : यह बात आपत्ति की नहीं है। वक्ता महोदय कृपया अपनी बात जारी रखें।

माननीय श्री.के. संथानम (रेलवे एवं परिवहन राज्य मंत्री) : मैं यह कहना चाहता हूँ के जब सदन को प्रवर समिति की आलोचना करने का अधिकार है तो यह भी सुनिश्चित करना चाहूँगा कि, इसे यह कहने का अधिकार नहीं है कि इसके समक्ष प्रस्तुत बिल वह बिल नहीं है जिसका इसे संदर्भ दिया गया था। सदन को यह नहीं बताया गया था कि वह यह बिल नहीं था, जो प्रवर समिति को भेजा गया था। यदि सदन यह समझता है कि प्रवर समिति ने अपने कर्तव्य का निर्वाह नहीं किया है, तो वह प्रवर समिति की निन्दा कर सकता है। जब कभी सदन के समक्ष कोई बिल प्रस्तुत होता है और उस पर विचार-विमर्श होता है तब हमारे समक्ष उसका खुलासा नहीं किया जाता यह वह बिल नहीं है, जो सदन के समक्ष प्रस्तुत किया गया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है कि मैं केवल प्रवर समिति की निन्दा कर रहा था और इससे अधिक और कुछ नहीं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य बिल्कुल सही हैं। यदि वह बिल की आलोचना करते हैं, क्योंकि प्रवर समिति के कार्य से यह स्पष्ट हुआ है और किए गए बदलाव सामने आए हैं। अतः अब अपनी टिप्पणियां बिल में हुए बदलावों तक सीमित रखेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं सदन के समक्ष यह बताने जा रहा हूँ कि कुछ बदलाव किए गए हैं, कुछ गंभीर बदलाव किए गए हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उन्हें उजागर करें। मैं किए गए बदलावों के बारे में जानने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। माननीय सदस्य इसके लिए समय ले सकते हैं, किंतु वे बतलाएँ कि बदलाव क्या हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अपने तरीके से आगे बढ़ूंगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडरक : वह इस तरीके से बात नहीं कर सकते।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है कि मूल बिल श्री जोगेन्द्र नाथ मंडल द्वारा पेश किया गया था। इस पर 1 अगस्त, 1946 तारीख मुद्रित है। यह वही बिल था जो प्रवर समिति को भेजा गया था। तदोपरांत, 16 अगस्त, 1948 को मुद्रित बिल, वह बिल है, जो रिपोर्ट के साथ प्रवर समिति द्वारा जारी किया गया।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसमें मुद्दा क्या है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं उसी पर आ रहा हूँ। इन दो बिलों के बीच गंभीर विषमताएं हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वही हम सब जानने के लिए प्रतीक्षारत हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि यह स्वीकार है तो मैं महत्वपूर्ण बिंदुओं पर आगे बढ़ना चाहूंगा। मूल बिल और प्रवर समिति की रिपोर्ट में परिशिष्ट के रूप में जोड़े गए बिल में गंभीर विषमताएं थीं। (बीच में हस्तक्षेप हुआ) इससे मैं अपनी बात शीघ्रता से नहीं रख पा रहा हूँ। मेरा कहना है कि इन दो बिलों के बीच एक बहुत रोचक दस्तावेज आया है। यह एक विभागीय प्रारुप है जो 17 जुलाई, 1948 को मुद्रित हुआ था। वह वही प्रारुप है जो इन दोनों बिलों के बीच आया। इस विभागीय प्रारुप पर समस्त नियमापत्तियां उठाई गईं और बहस हुई यहां तक कि इस विचार-विमर्श में भी, यदि मैं ठीक से समझ रहा हूँ, माननीय कानून मंत्री ने, विभागीय बिल का कोई उल्लेख नहीं किया है, बल्कि यह कहा है कि सभी बदलाव प्रवर समिति द्वारा किए गए थे, उनके द्वारा नहीं। यहाँ मैं 17 जुलाई, 1948 के उस बिल का हवाला दे रहा हूँ।

श्री महावीर त्यागी : वह प्रवर समिति की बैठक से पहले का था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं यह बताने के लिए अपने मित्र श्री त्यागी का आभारी हूँ कि उसके मुद्रण की तारीख अर्थात् 17 जुलाई, 1948 थी, जो प्रवर समिति की कथित बैठक से पूर्व मुद्रित हुआ था। मेरा कहना है कि यह बिल....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अपने माननीय मित्र के इस तर्क को यह कहते हुए बीच में काटना चाहूँगा कि ऐसा करना बाध्यता था। वह संशोधित प्रारुप प्रवर समिति की बैठक से एक माह पहले भेजा गया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यही वह बिंदु है, जिसका मैं उल्लेख कर रहा था। इस स्वीकारोक्ति के लिए मैं आभारी हूँ। यह प्रारूप प्रवर समिति की बैठक से पहले से तैयार था। इस चरण पर मैं यह बताना चाहूंगा कि सदन को इस बारे में सूचित नहीं किया गया था। मूल बिल को पूरी तरह बदले जाने के लिए सदन से प्राधिकार प्राप्त नहीं किया गया था।

श्री महावीर त्यागी : क्या बीच वाला भाग बिल्कुल वैसा ही था जैसा रिपोर्ट के परिशिष्ट में लगाया गया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसमें कुछ बदलाव थे। प्रवर समिति द्वारा थोड़े से बदलाव किए गए थे, किंतु गंभीर बदलाव विभाग द्वारा किए गए थे, जिनके बारे में प्रवर समिति को कुछ पता नहीं था।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : प्रवरी समिति ने ही उक्त बदलाव किए थे, न कि विभाग ने।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है कि सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने विभागीय प्रारुप को कभी भी विस्तार से जांच नहीं की। वस्तुतः मेरा आशय यह है कि यदि मेरे माननीय मित्र श्री संथानम इस बारे में भारत अथवा अन्य देशों के संपूर्ण संवैधानिक इतिहास में से एक भी उदाहरण प्रस्तुत कर सकें, तो मैं बैठ जाऊंगा। एक बिल जो एक प्रवर समिति को भेजा गया, उसके स्थान पर एक अन्य पूरी तरह से संशोधित बिल साथ में रख दिया गया।

माननीय श्री के. संथानम : मैं कई प्रवर समितियों में रहा हूँ और कई मामलों में मूल बिल को प्रवर समिति द्वारा पूर्ण रूप से संशोधित किया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वह एक अलग मुद्दा है।

माननीय अध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य को बताना चाहूँगा कि अध्यक्ष महोदय ने एक निर्णय दिया है कि प्रवर समिति ने मूल बिल के साथ ही माननीय कानून मंत्री द्वारा किए गए प्रारुप पर भी विचार-विमर्श किया था। उक्त निर्णय के आलोक में, माननीय सदस्य को इस बात पर अपनी टिप्पणियों को सीमित करना चाहिए कि प्रवर समिति में मूल बिल में कैसे बदलाव लाया गया। प्रवर समिति में क्या हुआ इस बारे में टिप्पणियां करना माननीय सदस्य के अधिकार क्षेत्र से परे है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना यह है कि, यद्यपि प्रवर समिति को मूल बिल और विभागीय प्रारुप पर विचार करना चाहिए था और इस निष्कर्ष पर आना चाहिए था कि वह कार्य यंत्रवत् तरीके से और असमुचित रूप से किया गया था। मेरा तर्क यह है, कि यद्यपि प्रवर समिति को मूल बिल और विभागीय प्रारुप पर विचार करना अथवा मान लिया जाए कि विचार किया जाना चाहिए था और इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए था। यदि ऐसा हुआ, तो मेरा तर्क यह है कि यह कार्य सर्वाधिक यंत्रवत् तरीके से तथा सर्वाधिक असमुचित रूप से किया गया। मेरा मानना है कि प्रवर समिति विभागीय बिल में हुए गंभीर बदलावों से प्रभावित हो गई और वह पूरी तरह से एक संशोधित प्रारुप एक गढ़ी हुई वस्तु, जो उसके हाथ में रख दी गई थी, के सम्मोहक प्रभाव में आ गई। प्रवर समिति के सदस्यों पर इसका एक अभूतपूर्व मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा होगा, और प्रवर समिति भी, यद्यपि उसे अधिकार था, कि पूरी तरह से विभागीय प्रारुप पर निर्भर हो जाती चाहे इससे प्राथमिकताएं प्रभावित होगी, भले ही निर्णायक बिल की वैद्यता प्रभावित नहीं होती उससे पूर्णतः प्रभावित हो गई।

मेरा तर्क यह है कि प्रत्येक प्रवर समिति को अनेक बदलाव करने का अधिकार है, किन्तु ऐसा कभी नहीं हुआ कि एक नया बिल, जो प्रवर समिति के समक्ष रखा गया, पूरी तरह बदल दिया जाए और तब वह नए बिल पर विचार-विमर्श आरंभ कर दें, यद्यपि, तकनीकी तौर पर, उनके पास मूल बिल भी था, तब भी उन्होंने नए बिल का ही खंड दर खंड अध्ययन किया। यह गुणवत्ता का मामला था। मेरा तर्क है, कि इस विभागीय बिल के आने से बिल के उचित और अपेक्षातापूर्ण विचार-विमर्श में काफी मात्रा में पूर्वाग्रह उत्पन्न हुए हैं। मेरा तर्क है कि मूल बिल के वाक्यांश एक-एक करके आरंभ किए जाने चाहिए थे और मूल बिल के आधार पर ही बदलाव किए जाने चाहिए थे। इसके बजाय विभागीय बिल का अनिवार्य तौर पर अनुपालन करते देखा गया, जबकि उसमें मूल बिल की शर्तों के संदर्भ भी दिए गए थे। अस्तु, मैं प्रवर समिति के किसी भी सदस्य का अनादर किए बिना यह बताना चाहूँगा कि किसी भी सदस्य के लिए यह एकदम देख पाना असंभव था कि विभागीय बिल में क्या अभूतपूर्व बदलाव किए गए थे और इसी कारण, मैं बताना चाहूँगा कि, अंतिम निर्णायक बिल की प्राथमिकताएं प्रभावित हुई हैं। मैंने यह कभी नहीं कहा कि प्रवर समिति के सदस्यों को बदलाव करने अथवा विभागीय बिल को अपनाने अथवा मूल बिल पर विचार-विमर्श करने का कोई अधिकार नहीं है। मेरा तर्क है और मैं पुनः सादर बोल रहा हूँ, यह कार्य लापरवाही से किया गया था और प्रवर समिति को अपने कार्य के लिए पर्याप्त रूप से विभागीय प्रारुप पर निर्भरता रखनी पड़ी। अतः विभागीय प्रारुप पर विचार करने के कारण, अब वर्तमान बिल की प्राथमिकताओं पर भी विचार होना चाहिए।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : चलिए, हम मतभेद वाले सभी पहलुओं पर विचार कर लेते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा तर्क है कि संपूर्ण विधायी प्रक्रिया भारी भूल के साथ आरंभ हुई और यह एक भूल से दूसरी भूल के साथ आगे बढ़ती गई। जब तक कि यह सबसे बड़ी भूल, जो वर्तमान बिल के रूप में सामने है, तक नहीं पहुंच गई। मेरा कहना है कि सर्वप्रथम गलती 1937 में हुई। वह गलती वहां से बढ़ी और मैं सिद्ध कर सकता हूँ कि एक गलती से दूसरी गलती होती गई और इन सभी गलतियों ने प्रवर समिति को भी शामिल कर लिया और अंततः (हस्तक्षेप) मैं बेहद गंभीरता से श्री कृष्णस्वामी भारती से पूछना चाहता हूँ कि क्या मुझे इसी तरह बाधित किया जाएगा?

माननीय अध्यक्ष : यदि माननीय सदस्य अध्यक्ष को संबोधित करके अपनी बातें रखें, तो मैं सोचता हूँ कि विघ्न कम होगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, आप यह जानकर हर्षित होंगे कि वर्ष 1937 में कानून का एक बिल पारित हुआ था, और वही हिंदू विवाहित महिलाओं के लिए संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 बना। मेरा मानना है कि यह जल्दबाजी में बनाया गया कानून था। इसमें गले नहीं उतरने वाले और कम समझ में आने वाले कानून थे जिनसे यह सारी समस्याएं उत्पन्न हुईं। वास्तव में यह बिल डॉ. देशमुख द्वारा लिखा गया था। अतः देशमुख-मैं यहाँ यह बताकर प्रसन्न हूँ कि यह हमारे वर्तमान डॉ. देशमुख नहीं हैं-जिन्होंने हिंदू समाज की भलाई से उदासीन रहकर, वह बिल तैयार किया था। बिल का प्रभाव ऐसा था कि एक क्रमबद्ध रूप में उत्तराधिकार के कानून में कुछ परिवर्तन लाया जाए। हिंदू कानून के अनुसार, जैसा कि मैं समझता हूँ, जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो उसके पुत्र, पौत्र और परपौत्र उसके उत्तराधिकारी होते हैं। पुत्र के होने की स्थिति में भी पूर्व-मृत के बेटे अर्थात् पौत्र को भी अधिकार होता है-पौत्र अपने मृत पिता का प्रतिनिधि होता है और अपने पिता का हिस्सा उसे मिलता है। इस प्रकार पुत्र, पौत्र और परपौत्र अर्थात् तीन पीढ़ियों का सम्पत्ति पर अधिकार होता है। डॉ. देशमुख इस विचार से उत्साहित थे कि विधवा को एक निश्चित स्तर और एक निश्चित अधिकार मिलना चाहिए। इसलिए उन्होंने संपत्तिधारक की विधवा को भी एक भागीदार बनाया, और संपत्तिधारक की विधवा को ही नहीं, बल्कि मृत बेटे की विधवा, मृत पौत्र की विधवा और मृत परपौत्र की विधवा को भी इसमें भागीदार बनाया। उनमें भागीदारों के अन्य क्षेत्रों में भी शामिल किया गया। अतः मेरा मानना है कि वह सब विचार शून्य था, यद्यपि लेखक देशभक्ति और समाज के कल्याण की भावना से ओत-प्रोत माने जाते थे पर मैं कहता हूँ कि वह उस समय...

माननीय श्री के. संथानम : क्या मेरे माननीय मित्र यह जानना चाहेंगे कि वह बिल वास्तव में स्व. सर एन.एन. सिरकार द्वारा स्वीकृत था, जो हिंदू कानून के एक श्रेष्ठ प्राधिकार प्राप्त व्यक्ति थे?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं यह बताने की स्थिति में हूँ कि उस पर न केवल उन्होंने, बल्कि उस समय मैंने भी बिल को स्वीकृति दी थी। (हस्तक्षेप)। मैं यह निवेदन करता हूँ कि मैं सदन के अधिकार-क्षेत्र में हूँ।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य हिंदू कानून के संशोधनों के इतिहास की बातें कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा मानना है, कि विवाहित हिंदू महिलाओं के सम्पत्ति के अधिकार का अधिनियम पहली भूल थी और मैं बताना चाहूंगा कि इससे उपजी अन्य भयंकर भूलें इस वर्तमान बिल में भी शामिल हैं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : वर्तमान की तुलना में तत्कालीन विधायिका का यह एक गंभीर मूल्यांकन है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है कि विधायिका ने अपनी गलती स्वयं स्वीकार की थी और मैं उन वाक्यांशों को उद्धत कर सकता हूँ जिनमें विधायिका ने यह स्वीकार किया है कि वह एक गलती थी। (हस्तक्षेप)।

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं दिखाऊँगा कि गलती कैसे हुई। वास्तव में, मृत पुत्र, पौत्र और परपौत्र की विधवा को सम्पत्ति का उत्तराधिकार देने में, पुत्री की स्थिति एकदम अनिश्चित हो गई। यह अधिनियिम के अंतर्गत ऐसी स्थिति में पुत्री की क्या स्थिति हुई होगी, कोई नहीं जानता।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सर एन.एन. सिरकार द्वारा मेरे मित्र डॉ. देशमुख से एक शपथ -पत्र लिया गया था कि सरकार इन उपायों का तभी समर्थन करेगी यदि वह पुत्री शब्द को हटा दें और उन्होंने वचन दिया था कि वह 'पुत्री' शब्द को हटा देंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे भी उस कानून के इतिहास की उतनी जानकारी है, जितनी की माननीय डॉ. अम्बेडकर को है।

माननीय अध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य और समय लेना चाहते है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जी हाँ, श्रीमान्।

माननीय अध्यक्ष : ऐसी स्थिति में, वह अपना अभिभाषण बाद में जारी रख सकते हैं और अब हम यहां इस सभा को स्थगित करते हैं।

इसके पश्चात् गुरुवार दिनांक 3 मार्च, 1949 को प्रातः सवा ग्यारह बजे तक के लिए विधानसभा स्थगित कर दी गई।

*हिंदू कोड–लगातार

माननीय उपाध्यक्ष : मैं माननीय सदस्यों को सूचित करना चाहता हूँ कि निम्नलिखित समितियों के लिए नामांकन प्राप्त करने और चुनाव संपन्न कराने, यदि आवश्यक हो, निम्नलिखित तिथियां निर्धारित की गई है:

	नामांकन की तारीख	चुनाव की तारीख
1. तकनीकी शिक्षा की आखिल भारतीय परिषद }	2.4.1949	5.4.1949
2. रेलवे कार्यपद्धति की समीक्षा की समिति		

इन समितियों के लिए नाम उनके उद्देश्यों के लिए उल्लिखित तारीख को अपराह्न 12 बजे तक सूचना कार्यालय में स्वीकार किए जाएंगे। चुनाव, एकल हस्तांतरणीय मतदान द्वारा आयोजित किए जाएंगे। चुनाव का आयोजन परिषद भवन में सहायक सचिव के कक्ष (सं. 21) में प्रात: 10.30 बजे से अपराह्न 1.00 बजे तक किया जाएगा।

हिंदू कोड-लगातार

माननीय उपाध्यक्ष : सदन में अब माननीय डॉ.बी.आर. अम्बेडकर द्वारा 31 अगस्त, 1948 को प्रस्तुत प्रस्ताव पर आगे विचार विमर्श की कार्यवाही आरंभ की जाएगी। ये प्रस्ताव है:

''जैसा प्रवर समिति की रिपोर्ट है, उस पर विचार करते हुए बिल में -हिंदू कानून की विभिन्न शाखाओं को संशोधित और संहिताबद्ध किया जाए।''

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय (पं. बंगाल : सामान्य) श्रीमान्, इससे पूर्व कि आप मेरे माननीय मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद को अपना अभिभाषण जारी रखने के लिए आमंत्रित करें, मैं बाध्य होकर एक बार पुन: आपका ध्यान उस अनियमित तरीके की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, जिसके अंतर्गत यह प्रस्ताव समय-समय पर सदन के समक्ष लाया जा रहा है। मैं सोचता हूँ कि हम में से बहुत कम लोग कल तक यह जानते थे कि यह बिल विचार-विमर्श के लिए पुन: लाया जा रहा है। एक तरीके से देखें तो सदन की यह राय भी कि सरकार के तात्कालिक कामों का इतना अधिक दबाव था कि सत्र में यह मामला उठने ही नहीं जा रहा था। वास्तव में इस सदन में बहुत से सदस्य जो यहां बहस में भाग लेने के लिए आए थे, वापिस लौट गए इस धारणा से कि इस सभा में

*सी.ए. (विधि.) डी, खंड 3, भाग II, 1 अप्रैल, 1949, पृष्ठ 2211–43

पुनः यह विषय नहीं उठाया जा रहा है। मैं विशेष रूप से एक माननीय सदस्य, पंडित गोविन्द मालवीय का उल्लेख करना चाहता हूँ, जो यहां आए और जो बहुत लम्बे समय तक बोलना चाहते थे और जब वह आश्वस्त थे कि मामला नहीं उठाया जा रहा है''

अनेक माननीय सदस्य : आश्वस्त, किसके द्वारा?

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : अधिकांश लोग जानते हैं। यह सदन के सामान्य कामकाज का मामला नहीं था। सरकार का कोई भी सदस्य खड़ा नहीं हुआ और न ही उसने कुछ ऐसा कहा ''मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि इस मामले पर चर्चा होगी।'' ऐसा कुछ नहीं हुआ। सभी को यह राय, पार्टी में होने वाली और अन्य कहीं होने वाली सेमिली कि यह मामला किसी तरह इस सत्र में उठने वाला नहीं है। (हस्तक्षेप) ऐसा होने पर यदि यह मामला अभी उठता है तो इससे सदन के शिष्टाचार में कमी आ जाएगी। मैं सोचता हूँ यह बिल ऐसी विवादग्रस्त प्रवृत्ति का है कि मैं नहीं समझता कि आपको इस बिल पर इस तरह चर्चा की अनुमति देनी चाहिए, जिस प्रकार इसके विभिन्न चरणों में बार-बार ऐसा किया जा रहा है। श्रीमान्, आप इस पर इस दृष्टिकोण से विचार करें, जो मैं सदन के समक्ष रख रहा हूँ। सदन में क्षीण उपस्थिति है और क्योंकि बजट पर होने वाली बहस पूरी तरह समाप्त हो चुकी है, अधिकांश सदस्यों की सोच यही थी-और काफी हद तक सही थी। अतः जब बदलाव का कोई विचार नहीं था, तो अचानक सत्र के इस अंतिम चरण में इस प्रकार का प्रस्ताव लाना चौंकाने वाली ही है, और मैं समझता हूँ कि यह उचित नहीं है।

एक माननीय सदस्य : श्रीमान्, हम आपका निर्णय चाहते हैं।

माननीय अध्यक्ष : किंतु यहां कोई व्यवस्थागत आपत्ति नहीं है।

श्री महावीर त्यागी (उत्तर प्रदेश : सामान्य) तो भी मैं जानना चाहता हूँ कि विचार-विमर्श कितनी देर तक चलने का प्रस्ताव है। मेरे प्रान्त के मेरे मित्रों ने मुझे यह जानकारी देने का अनुरोध किया था कि हिंदू कोड बिल विचार-विमर्श के लिए कब रखा जाएगा। मैं उन्हें जानकारी नहीं दे सकता, क्योंकि मैं नही जानता कि क्या बिल पर केवल आज विचार होगा अथवा कल अथवा किसी अन्य दिन अथवा सत्र के अंत तक विचार होगा। अतः श्रीमान् क्या अब आप सदन को यह बताने की स्थिति में हैं कि इस बिल पर कितनी लम्बी चर्चा करने जा रहे हैं, ताकि मेरे मित्रों को आने का समय मिल जाए। मैं उन्हें इस बारे में सूचित कर सकूं।

माननीय उपाध्यक्ष : पंडित मैत्रेय ने जो कुछ कहा, उससे मुझे पूरी सहानुभूति है, किंतु मुझे कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है। जहाँ तक मुझे जानकारी है-मैं इस संसद में

कई वर्षों से हूँ–जब कोई ऐसा महत्वपूर्ण मामाल आता है, जिसमें अनेक व्यक्तियों की रुचि हो, तो आगामी सप्ताह की कार्य सूची कम से कम उससे पिछले शुक्रवार को ही पढ़ दी जानी चाहिए। मैं कुछ प्रक्रियाओं से बंधा हुआ हूँ। स्पष्ट रूप से यह संभावित नहीं था कि इस बिल के लिए समय मिलेगा, किंतु जब एक दिन का कार्यक्रम बढ़ा तो यह रखा गया और इसके लिए आज तथा आने वाले कल का समय मिल पाया। इसलिए पूर्व सूचना नहीं दी जा सकी। मुझे विश्वास है कि माननीय सदस्यगण इसका अच्छा उपयोग करने का प्रयास करेंगे और टेलीग्राम आदि भेजते हुए अन्य सदस्यों को भी सूचित कर देंगे। अत:, यहाँ तक श्री त्यागी का प्रश्न है, यदि वे यह समझते हैं कि जो सदस्य बाहर हैं, वे इस कार्यवाही में रुचि रखते हैं, तो मैं बता सकता हूँ कि आज सायंकाल अथवा प्रात:काल कार्यवाही का प्रसारण होगा और इससे वे भी इस बारे में जानकारी ले सकेंगे।

एक माननीय सदस्य : वे कल कैसे आ सकते हैं?

माननीय उपाध्यक्ष : वे हवाई जहाज से आ सकते हैं। इसका निर्णय अध्यक्ष को नहीं लेना है कि वे कैसे आ सकते हैं। मैं केवल यही कह सकता हूँ कि इस प्रकार के महत्वपूर्ण मुद्दे पर वस्तुत: सरकार को उचित सूचना देनी चाहिए। ऐसा नहीं है कि सरकार इस महत्त्वपूर्ण मामले की अनदेखी कर सकती है। आम जनता उत्सुक हैं, प्रान्तों और राज्यों के अधिकांश सदस्य यहां नहीं हैं। यदि वे यहां होते भी, तो यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि हर किसी को सभी पुस्तकें पढ़नी चाहिए और तत्काल सूचना पर समस्त जानकारी का उपयोग करना चाहिए। यह लाभ की स्थिति नहीं है, किंतु मुझे विश्वास है कि माननीय सदस्यगण इस अवसर का लाभ उठाने के लिए श्रेष्ठ प्रयास करेंगे। कोई भी इस बात की गारंटी नहीं दे सकता कि चर्चा कितनी लम्बी चलेगी। यह आज सायंकाल भी समाप्त हो सकती है, अथवा कल तक चल सकती है।

श्री टी.ए. रामलिंगम चेट्टियार (मद्रास : सामान्य) : इस बिल के लिए क्या कार्यक्रम है?

माननीय उपाध्यक्ष : यह पूरी तरह से सदन के हाथ में है। मैं नहीं समझता कि हम इसे संक्षिप्त कर सकते हैं। यह सदन को देखना है कि क्या चर्चा को जारी रखना आवश्यक है, और यदि पर्याप्त विचार-विमर्श हो जाता है तो जितना जल्दी संभव हो, इसे समाप्त कर दिया जाएगा।

श्री महावीर त्यागी : श्रीमान्, मैं प्रश्न को दूसरी तरह से रखूंगा। क्या मैं जान सकता हूँ कि शेष भाग में कोई अन्य सरकारी बिल रखा जाना है अथवा हमारे समक्ष केवल यही बिल रखा जाएगा? मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह बिल कितनी देर तक चलेगा?

माननीय उपाध्यक्ष : जैसा कि माननीय सदस्य आदेश संबंधी दस्तावेज से देख सकते हैं; अन्य कई कार्य भी हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह आज का पहला बिल हो सकता है, परन्तु कल अन्य वे बिल भी आएंगे, जो सूची में उपलब्ध हैं। अत: हमें इस प्रश्न पर अधिक समय व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं है श्री नजीरुद्दीन अहमद!

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : क्या आप कृपया भाषणों के लिए कोई समय सीमा निर्धारित कर सकते हैं?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इस तरह के विवादास्पद मामले पर कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं कर सकता। जब तक मैं इस कुर्सी पर हूँ, मैं प्रयास करूंगा नि:संदेह अध्यक्ष महोदय यह कार्य बेहतर कर सकते हैं यह देखना कि दोहराव से बचा जा सके। मैं यही सब कर सकता हूँ और मैं अपनी पूरी योग्यता से इस विषय पर उठाए जाने वाले सभी असंबद्ध मामलों को टालने का भी प्रयास करूंगा। मैं जितना संभव हो सकता है स्वतंत्रता दूंगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद : (पं. बंगाल : मुसलमान) :** उपाध्यक्ष महोदय, यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि इस बिल पर होने वाली चर्चाओं में जो बाधाएं आई हैं, सरकार द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि इस बिल की राजकोषीय अवधि और बीच-बीच में होने वाली बातचीत के अंतराल के बाद मूर्खता-दिवस पर गंभीर चर्चा फिर से बहाल की जानी चाहिए। पिछली बार जब मैंने बताया था कि बिल बहुत जल्दबाजी में गत 9 अप्रैल को प्रवर समिति को भेजा गया था, कुछ माननीय सदस्यों ने हमें यह याद दिलाया था कि 9 अप्रैल, 1 अप्रैल से बहुत निकट होती है अत: किसी न किसी तरह यह बिल 1 अप्रैल (मूर्खता दिवस) से जुड़ा हुआ है। इस दिन, हम एक-दूसरे से हास्य-विनोद की भावना से मिलते हैं। हम नकली निमंत्रण पत्र भेजते हैं, नकली शादियों की घोषणा करते हैं और अन्य नकली चीजें अमल में लाते हैं।

श्रीमती अम्मू स्वामीनथन (मद्रास : सामान्य) : श्रीमान्, क्या हिंन्दू कोड के साथ इन बातों का कोई संबंध है? अभी आपने कहा है कि किसी असंगत चर्चा की अनुमति नहीं दी जाएगी। क्या 'ऑल-फूल्स-डे' (मूर्खता दिवस) का हिंदू संहिता के साथ कोई संबंध है?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य की बात ठीक से सुन नहीं सका हूँ जिससे इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि क्या यह असंगत है अथवा नहीं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान् मैंने केवल उस संतोषजनक तरीके पर जोर दिया है, जिस तरीके से बिल समय-समय पर लाया जा रहा है। इस तरह के महत्वपूर्ण और

---

*सी.ए. (विधि.) डी, खंड 3, भाग II, 1 अप्रैल, 1949, पृष्ठ 2213-43

स्तरीय बिल के लिए आवश्यक है कि इस पर माननीय सदस्यों द्वारा बैठकर लगातार ध्यान दिया जाए।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : बैठकर लगातार किसलिए?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : पंडित मैत्रेय ने गलत सोचा है। लगातार बैठने से मेरा आशय 'अंडे देना' नही था। श्रीमान्, इस तरह के महत्वपूर्ण बिल के लिए आवश्यकता है कि सदस्यगण लंबे समय तक बैठकर इस पर विचार करें। इस मामले पर लंबे अंतरालों के बाद विचार करते रहने से यह हानि होगी कि सदस्यों की विचार शृंखला भंग हो जाएगी और उनके लिए यह समझना बहुत कठिन हो जाएगा कि अभी तक क्या-क्या कहा जा चुका है। इससे प्रत्येक अवसर पर एक बात को दूसरी बात से जोड़ना कठिन हो जाता है। अत: मेरा मानना है कि बिल के साथ अथवा सदन के साथ गंभीरता से पेश नहीं किया जा रहा है।

पिछली बार जब मैं इस महत्वपूर्ण विधेयक के इतिहास के बारे में बात कर रहा था, तो मैंने बताया था कि हिंदू विवाहित महिलाओं की सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 में के दौरान पहली गलती वर्ष 1937 में हुई थी।

वह गलती विधाायिका के पास बिल को शीघ्रता से ले जाने की थी और पर्याप्त विचार-विमर्श किए बिना इस तरह की जटिल प्रकृति के बिलों को पारित करने की थी। वास्तव में, उस समय उस सदन के एक माननीय सदस्य श्री देशमुख ने एक अच्छा विचार रखा था। किंतु उस विषय पर पर्याप्त विचार-विमर्श किए बिना वे सदन के समक्ष आए और उन्होंने सदन में खुशी-खुशी उस बिल को पास कर दिया। जब उस अधिनियम के द्वारा, कुछ महिलाओं को अपने पुत्रों, पौत्रों और पर-पौत्रों सहित प्रत्यक्ष उत्तराधिकार मिल गया था। उन्हें स्वतंत्र अधिकार प्रदान किया गया था। वे न केवल हिंदू महिला के अधिकार, किन्तु पूर्णत: हस्तांतरणीय और उत्तराधिकार के अधिकार थे। उसके फौरन बाद, बंगाल के एक विख्यात वकील श्री ऋषीन्द्रनाथ सरकार ने कुछ कठिनाइयों की ओर ध्यान आकर्षित किया जो उस अधिनियम के संबंध में उठ सकती थीं। श्री ऋषिन्द्रनाथ सरकार एक विख्यात वकील हैं और हिंदू महिलाओं की सम्पत्ति के अधिकार अधिनियम और उससे जुड़े अधिनियमों की एक पाठ्य पुस्तक के लेखक भी हैं। उन्होंने कुछ ऐसी उत्तराधिकार संबंधी कठिनाईयों का हवाला दिया जो बिल के संबंध में उठ सकती थीं, और वर्ष 1938 में, वह अधिनियम, 1938 के अधिनियम XVI के रूप में संशोधित करना पड़ा। तथापि, समस्या सुलझी नहीं और नई कठिनाइयां सामने आने लगी। उस अधिनियम से एक विशेष कठिनाई सामने आई, जैसे कि उसे 1938 में संशोधित दिया गया था। परन्तु उस अधिनियम में संशोधन के बाद भी, मृतक की विधवा ,पुत्र की विधवा, पौत्र की विधवा और पर-पौत्र की विधवा को अधिकार देने

से पुत्री की स्थिति के मद्देनजर पर्याप्त कठिनाइयां सामने आयी थीं। वास्तव में, वहां बहुत बड़ी विसंगति पैदा हुई थी और श्री सरकार ने पुनः संकेत किया उस कठिन परिस्थिति की जो पुत्री को लेकर थी। इस सवाल पर पूरे देश में विरोध हुआ था, और हमने देखा है कि पुत्री की स्थिति को स्पष्ट करने, उसे भी पुत्र, पौत्र, तथा अन्य व्यक्तियों की विधवाओं के समान अधिकार देने के लिए लगभग आधा दर्जन बिल विधान सभा में प्रस्तुत किए गए थे। वे बिल सदन में प्रस्तुत किए गए थे और उन्हें कार्य-सूची में भी शामिल किया गया था। मेरा विश्वास है कि पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय जैसे सदन के अनुभवी सदस्य को भी उस स्थिति की याद होगी जब तत्कालीन सरकार के सामने अनेक बिल-लगभग छह बिल रखे गए थे। तत्कालीन गृहमंत्री सर रेंगिनाल्ड ने उस समय सदन में यह कहा था कि सामाजिक मामलों में पर्याप्त विचार किए बिना ही हमेशा खराब मामलों को विधायिका में भेज दिया जाता है। अतः कठिनाई तब और अधिक बढ़ जाती है, जब ज्यादा से ज्यादा कानून बनाने होते हैं। अतः वे तत्कालीन सदस्यों की स्थिति से भी पूर्ण सहानुभूति रखते थे और वे इस बात से सहमत थे कि मामलों की हर तरह से पूरी तरह जांच की जाए। इसी में 'राउ समिति' का गठन संभव हुआ। उस समिति ने ड्राफ्ट बिल तैयार किया और विभिन्न व्यक्तियों को प्रश्नावली बनाकर भेजी। फिर उनसे प्राप्त उत्तरों पर विचार-विमर्श करके उनका विश्लेषण किया और एक अन्य बिल तैयार किया। परन्तु अपने इस कार्य में आगे बढ़ने से पूर्व समिति को एक अन्य कठिनाई का सामना करना पड़ा। उन्हें पता चला कि वर्ष 1937 और 1938 के अधिनियमों में एक अन्य भयंकर भूल थी। वह, यह कि 1937 का अधिनियम, जो 1938 के अधिनियम के द्वारा संशोधित हुआ था, कृषि भूमि पर लागू नहीं हुआ था। इस संबंध में जो कठिनाई सामने आई वह, यह भी कि 1937 का प्रथम अधिनियम जब विधानसभा द्वारा पारित हुआ था, तब इस विषय को केंद्र द्वारा संज्ञेय नहीं माना गया था।

माननीय उपाध्यक्ष : सदन को दोपहर 2.30 बजे तक के लिए स्थगित किया जाता है।

तत्पश्चात् सदन दोपहर के भोजन के लिए 2.30 बजे तक स्थगित कर दी गई।

दोपहर के भोजन के बाद 2.30 बजे सदन की कार्रवाई पुनः आरंभ हुई।

माननीय अध्यक्ष (माननीय श्री जी.वी. मावलंकर) : ने अपना स्थान ग्रहण किया।

श्रीमती एनी मॅस्क्रेनी (ट्रावनकोर राज्य) : मैं एक व्यवस्थागत बिंदू उठाना चाहती हूँ। क्या मैं जान सकती हूँ कि क्या इस सदन के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य है कि वह सदन के पूरे सत्र में उपस्थित रहे?

माननीय अध्यक्ष : यह व्यवस्थागत आपत्ति नहीं है यदि कोई सदस्य न चाहे तो उसे पूरी चर्चा में उपस्थित रहना आवश्यक नहीं है। किंतु मैं एक राय दूंगा। यदि कोई सदस्य, किसी बिल के समर्थन में अथवा विरोध में कोई टिप्पणी करता है, तो उसका कर्तव्य है कि वह उसका उत्तर सुनने के लिए भी सदन में उपस्थित रहे।

श्रीमती एनी मॅस्क्रेनी : यदि वह कुछ दिनों के लिए अनुपस्थित रहता है और वापस आकर शिकायत करता है कि उसे सदन की कार्यसूची की जानकारी नहीं है तो श्रीमान् क्या उसे माफी दी जा सकती है?

माननीय अध्यक्ष : सदन में उसके बयान के आधार पर ही इस पर निर्णय किया जा सकेगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : आज दोपहर के भोजन के लिए यहां से जाने से पहले मैं इस विधान के इतिहास के पहले भाग पर चर्चा कर रहा था। वर्ष 1937 के अधिनियम और 1938 के संशोधित अधिनियम में पुत्री को लेकर कठिनाइयां बढ़ीं और स्थिति को स्पष्ट करने के लिए बड़ी संख्या में बिल सामने आए। उस स्थिति में सरकार मामले की जांच के लिए सहमत हुई और उसने राउ समिति का गठन किया। शीर्ष ही राउ समिति ने पाया कि जहां तक कृषि भूमि का संबंध था, विधानसभा को अधिनियम पारित करने का कोई न्यायिक अधिकार नहीं था। इस संबंध में यह मुद्दा उठा कि पिछले संविधान के तहत कृषि भूमि केन्द्र की विधायी सूची में शामिल थी। उक्त बिल मार्च 1937 में निचले सदन द्वारा पारित किया गया था, जब वह सदन पुराने संविधान के तहत कार्य कर रहा था। ऊपर सदन में इसे अप्रैल की किसी तारीख को पारित किया गया था, जब 1935 का नया संविधान लागू हुआ था। इस प्रकार जब बिल ऊपरी सदन द्वारा पारित किया गया, उस समय कृषि भूमि पर अधिनियम पारित करने का उसका कोई अधिकार-क्षेत्र नहीं रह गया था। संशोधित अधिनियम, 1938 जब पारित हुआ तब किसी भी सदन के पास उसे पारित करने का अधिकार नहीं था। विधायिका द्वारा ये अपनी समय की घातम भूलें थीं। राउ समिति ने राय लेने हेतु मामले को फेडरल कोर्ट में भेज दिया। फेडरल कोर्ट ने एक निर्णय दिया कि सदन को"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (कानून मंत्री) : यह इतिहास पूरी तरह गलत है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : राउ समिति मामले को फेडरल कोर्ट कैसे भेज सकती थी?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : क्या यह बिल्कुल गलत है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, बिल्कुल गलत।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : किस संबंध में?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इस बारे में अपने उत्तर में बताऊंगा।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : वह काफी सही हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : राउ समिति ने अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंपी और वहाँ से गर्वनर जनरल ने मामले को फेडराल कोर्ट में भेज दिया। मैं तकनीकी विवरण देने में केवल एक मिनट की गलती कर गया था। मैं पुन: दोहराता हूँ : राउ समिति ने उचित माध्यम - गवर्नर जनरल द्वारा मामले को फेडरल कोर्ट में भेजा। क्या यह गलत है? मैं काफी सही था यानी बिल्कुल गलत नहीं था। (हस्तक्षेप)।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अपना वक्तव्य जारी रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इस प्रकार जब मामला राउ समिति द्वारा फेडरल कोर्ट में भेजा गया और कोर्ट ने यह निर्णय दिया कि जहां तक कृषि भूमि का संबंध है विधायिका ने अभी तक अधिकारातीत काम किया है। यह एक घातक भूल थी जिसका समय रहते पता चल गया। जैसे ही फेडरल कोर्ट का निर्णय सामने आया मैं भी उस परिदृश्य में सामने आ गया। हिंदू कोड के साथ मेरे संबंध आकस्मिक अथवा हालिया नहीं है। मैं सदन को यह स्पष्ट करने की स्थिति में हूँ कि मैं काफी पहले 1941 से ही इस कानून के संबंध में विधिक कार्रवाई कर चुका था। उस समय मैं बंगाल विधानसभा का एक सदस्य था और मैंने राउ समिति की प्रथम रिपोर्ट जारी होने से पहले ही एक बिल प्रस्तुत कर दिया था। जैसे ही फेडरल कोर्ट का निर्णय सामने आया, मैंने बंगाल विधानसभा में अधिनियम को बंगाल में भी लागू करने, उसे कृषि के संबंध में भी एक बिल प्रस्तुत कर दिया। इस संबंध में यह भारत का उस समय का पहला कानूनी प्रयास था।

श्री तजामुल हुसेन (बिहार : मुसलमान) : क्या मैं अपने माननीय मित्र से यह जानकारी पा सकता हूँ कि यदि उस समय वह हिंदू कोड बिल के पक्ष में थे, तो किस समय उनका मन इससे बदल गया?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : हिंदू कोड बिल उस समय तक बना भी नहीं था। उस समय कई अन्य व्यक्तियों की तरह जहां तक इस विषय का संबंध है, कई अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियों की तरह, यह बाद में ज्ञात हुआ कि मैंने गलत कदम उठाया था। वास्तव में, मैं इस अधिनियम के अंतर्गत बंगाल की कृषि भूमि को भी शामिल करना चाहता था। यही उस बिल का उद्देश्य था, जो मैंने बंगाल विधानसभा में रखा था। इस पर रायशुमारी के लिए इसे पूरे बंगाल में परिचालित किया गया था और आम जनता ने काफी बड़ी संख्या में बिल के पक्ष में अपनी राय दी थी। प्रत्येक व्यक्ति ने उस समय मेरी इस सोच को पसंद किया था कि बिल सही था।

श्री तजामुल हुसेन : श्रीमान्, माननीय सदस्य ने अपने उन कारणों का उल्लेख नहीं किया कि उन्होंने अपना मन क्यों बदला?

माननीय अध्यक्ष : इसका इस बात से कोई संबंध नहीं है। वे चाहें तो अनेक बार अपना मन बदल सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय सदस्य को उत्तर की प्रतीक्षा करनी चाहिए। यह जानकर सदन को प्रसन्नता होती कि मैंने जब 14 जुलाई, 1941 को बिल प्रस्तुत किया था, तो बंगाल की हिंदू जनता का एक बहुत बड़ा वर्ग इसके पक्ष में था। तत्पश्चात् एक प्रवर समिति सक्षम बिल को कार्यसूची में रखा गया था। मेरे पास उस कार्यसूची के दस्तावेज की प्रतिलिपि है, जो 25 सितंबर, 1942 को जारी हुई थी। मैं तब उस स्थिति में था कि मैं उसे बंगाल विधानसभा में पारित करवा सका, जहां हिंदू मुस्लिम के समन्वय वाली पार्टी का एक बड़ा बहुमत था। पार्टी ने बहुमत के साथ बिल के पक्ष में निर्णय लिया था और उसे प्रवर समिति को भेजा जाना था। उस समय, हालांकि, बिल के विरोध में हिंदुओं की राय की पूरी तरह से छानबीन कर ली गई थी, मुझे बताया गया था कि यदि बिल पारित हुआ तो गंभीर समस्याएं उत्पन्न होंगी। तब मुझ सहित अनेक लोगों ने महसूस किया कि यदि बिल पारित हुआ, तो पुत्रियाँ और अन्य की स्थिति को लेकर विरोध के स्वर उठेंगे। इसी बीच राउ समिति की रिपोर्ट प्रकाशित हो चुकी थी और उनके द्वारा तैयार बिल का प्रारुप देश के सामने था। इसके संबंध में 1941 और 1942 में बड़ी संख्या में बैठकें आयोजित हुई। एक बैठक मेरे पैतृक स्थल बर्दवान में आयोजित हुई थी और इसी प्रकार की अनेक बैठकें पूरे बंगाल में आयोजित हुई, जिनमें मुख्य बिल का विरोध किया गया। यद्यपि मुझे अपने बिल के पक्ष में अपेक्षित बहुमत प्राप्त था, मैं इसे लेकर आगे नहीं बढ़ा क्योंकि यह केवल हिंदू समुदाय को प्रभावित करने वाला मामला था और उनके द्वारा इसका विरोध किया गया था। मैंने सोचा कि यह कोई बेहतर उपाय नहीं है कि ऐसे व्यक्तियों के बहुमत से बिल पारित करा लिया जाए, जो इससे प्रभावित नहीं हैं। मैं कभी भी हिंदू कोड बिल का पक्षधर नही था, अपितु कुछ समय के लिए मैं अपने बिल के पक्ष में था। मैं समझता हूँ कि इससे मेरे माननीय मित्र श्री ताजमुल हुसेन संतुष्ट हो सकेंगे। मैंने हिंदू सदस्यों से पूछा कि वे मुझे बताएं कि क्या किया जाए और चूँकि वे मेरे बिल के विरुद्ध थे, अतः बिल को छोड़ दिया गया। मुझे इस बात की स्वीकृति से कोई डर नहीं है कि हर किसी ने और यहां तक कि राउ समिति ने भी यह सोचा कि मेरे बिल को दरकिनार करने वाला एक बिल लाया जाए, ताकि कृषि भूमि के लिए प्रत्येक स्थानीय विधानसभा में 1937 के अधिनियम का विस्तार किया जा सके। मैं भी इसी नीति पर चल पड़ा, किंतु तभी मैंने देखा कि बड़ी संख्या में हिंदुओं की राय मेरे बिल के विरुद्ध थी। किसी भी प्रान्त ने 1937 के अधिनियम को कृषि के लिए लागू नहीं किया। उसके बाद से, श्रीमान्, बंगाल में बड़ी संख्या में बैठक हुई है और राउ समिति के बिल की एक स्वर में निन्दा हुई है।

अब राउ समिति की उस रिपोर्ट के संबंध में उन्होंने एक बिल तैयार किया था, जो- 'हिंदू कोड बिल-भाग 1 निर्वसीयती उत्तराधिकार' था और जिसे केन्द्रीय विधानसभा में रखा गया था और जिसे केन्द्रीय विधायिका के दोनों चैम्बर्स की एक बहुत शक्तिशाली संयुक्त प्रवर समिति को भेजा गया था। मेरे पास प्रवर समिति की रिर्पोट है। एक ओर तो इसका जोरदार समर्थन किया गया था, किंतु दूसरी ओर इसका लगातार जोरदार विरोध भी हुआ और रिपोर्ट के अनुसार प्रवर समिति द्वारा तैयार यह बिल एक बार फिर विधायिका में आया। 1941 में बनी राउ समिति की रिर्पोट थी कि हिंदू कोड बिल पर उपखंडों में कार्यवाही की जाए। यह बहुत महत्वपूर्ण विच्छेद था और मैं इस तथ्य की ओर विशेष ध्यानाकर्षित करना चाहता हूँ कि वास्तव में राउ समिति ने रिपोर्ट जारी की थी कि हिंदू कानून की खंड-खंड में, उत्तराधिकार, विवाह, संरक्षण तथ अन्य पारित करने चाहिए। वर्ष 1941 में जारी रिपोर्ट के पृष्ठ 23 पर राउ समिति ने कहा था:

"वह अनुशंसा जिस पर हम पूरी शक्ति लगाकर जोर देना चाहेंगे, यह है कि एक सम्पूर्ण हिंदू संहिता के आरंभ में क्रमिक चरणों में, तैयारी के संबंध में, जैसा कि हमने कहा है, उत्तराधिकार के कानून के साथ-साथ विवाह के कानून का और इसी के साथ हिंदू कानून के अन्य विषयों का पालन किया जाए। यह सत्य है कि ये बड़े समूह कुछ हद तक एक-दूसरे से आपस में जुड़े हुए भी हैं; किन्तु प्रारूपकार को, उदाहरण के लिए यदि वह विधवाओं के लिए सम्पत्ति के अधिकारों से संबंधित उलग से लिखे गए नियमों पर विचार करने की बजाय उत्तराधिकार के सम्पूर्ण कानून पर विचार करता है, तो ये देख पाना सरल होगा कि वह क्या कर रहा है। यह योजना विवादित मुद्दों पर सहमति के उपायों के लिए एक बेहतर अवसर का प्रस्ताव भी प्रस्तुत भी प्रस्तुत करेगी, जिसका क्षेत्र व्यापक होगा और जिसमें समझौते के लिए अधिक अवसर होंगे। जहां तक संभव हो, इसका उद्देश्य सहमति के उपायों पर पहुंचना होना चाहिए और विकट विरोधाभास उत्पन्न होने जैसी स्थितियों से बचना होना चाहिए। इस आवश्यकता का अर्थ यही है कि वास्तव में धीमे दिखने वाली सुधार की गति को सच्चे सुधार के लिए रुकने की बजाय, दृढ़ निश्चिय के साथ आगे बढ़ना चाहिए।"

इसी संदर्भ में पृष्ठ 11 पर, राउ समिति का कथन है:

"हम यह सुझाव नहीं देते कि कानून के सभी खंडों पर एक साथ कार्रवाई की जाए। उत्तराधिकार का नियम... सबसे पहले किया जाए, तत्पश्चात् विवाह कानून आदि-आदि। प्रत्येक खंड के कानून को कम करने उसे एक ऐसा वैधानिक रूप दिया गया है कि विभिन्न अधिनियमों को एक एकल महिला के रूप में समेकित किया जा सके।"

यह एक रिपोर्ट थी और इसी रिपोर्ट के अनुपालन में हिंदू कोड भाग-I, इच्छा-पत्र हीन उत्तराधिकार संबंधी अपना बिल प्रस्तुत किया गया। जैसा संयुक्त प्रवर समिति ने तय किया था उत्तराधिकार से संबंधित उक्त बिल असेम्बली में आने से पहले ही संयुक्त प्रवर समिति ने स्वयं सिफारिश कर दी कि केवल इस खंड को अकेले पारित करना ठीक नहीं

है, बल्कि उसमें सम्पूर्ण हिंदू कोड की सही तस्वीर दिखनी चाहिए। चूंकि विभिन्न भाग एक-दूसरे पर आधारित होते हैं इसलिए उन्होंने सिफारिश कर दी की यह बिल पारित नहीं किया जाना चाहिए और हिंदू कानून का एक ज्यादा सच्चा और व्यापक दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। तद्नुसार अपनी रिपोर्ट में प्रवर समिति ने कहा:

''हमारा मत है कि हिंदू कानून समिति को पुनर्जीवित करने और इस अन्तराल के बीच प्रस्तावित विधेयक के शेष भागों के बनाने और गठित करने के लिए प्रोत्साहित करने के अन्य वे उपाय भी किए जाने चाहिएस, जो वर्तमान बिल के पारित होने और उसके प्रभावी होने के बीच आते हैं। यह स्पष्टतया देखा जा सकता है कि वर्तमान बिल के लागू होने से पूर्व हिंदू कानून की अन्य विविध शाखाओं के संबंध में लिए गए निर्णयों के आलोक में इसके पुनर्नियोजन और संशोधन की आवश्यकता पड़ेगी।''

अत: उन्होंने सिफारिश की कि सदन और देश के सामनू पूरी तस्वीर होनी चाहिए। तदनुसार हिंदू कानून समिति को भंग करके उसका पुनगठन किया गया और उससे हिंदू कानून की अन्य शाखाओं की एक पूरी तस्वीर तैयार करने को कहा गया। तब उन्होंने सर्वप्रथम जो कार्य किया, वह था एक अन्य बिल ''हिंदू कोर्ड भाग-III विवाह'' प्रस्तुत करना। यह उनके द्वारा तैयार किया दूसरा बिल था और बाद में उन्होंने अन्य भाग भी तैयार किए। मैं जिस बिन्दु पर जोर देने का प्रयास कर रहा हूँ कि वे अलग-अलग स्वत: परिपूर्ण बिल थे। उत्तराधिकार का कानून पूरी तरह से स्वत: स्पष्ट था और अलग था और अलग से तैयार किए जाने में सक्षम था। विवाह कानून भी अलग से तैयार किया जाने में सक्षम था। विवाह कानून भी अलग से तैयार किया जा सकता था। ऐसे तीन भाग थे जिन्हें अलग भागों में तैयार किया गया था, यद्यपि उन्हें एक साथ एक ही खंड में मुद्रित करके परिचालित किया गया था, इसके बाद राय लेने के पश्चात्, उन्होंने अनुपूरक के रूप में कुछ बदलाव भी जारी किए। अत: सदन को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि एक ही पुस्तक में पूरी तरह से अलग-अलग बिल अलग-अलग विषयों के साथ अलग-अलग क्रमांकों में उनके वास्तविक अर्थों और उद्देश्यों के साथ मुद्रित किए गए। तथापि, कानून मंत्रालय ने इन अलग भागों को अलग क्रमांक के साथ मुद्रित करने को गलत समझा। वास्तव में, वर्तमान बिल पर प्रवर समिति की रिपोर्ट में सत्तापक्ष के सदस्यों ने कहा है कि अलग-अलग क्रमांक और अलग-अलग हिस्से एक अज्ञात और उद्देश्यहीन बात थी और इसीलिए वे विभिन्न भागों को एक साथ पूर्ण रूप में क्रमिक अंकों के साथ प्रस्तुत देखना चाहते थे। इसका रिपोर्ट में भी स्पष्ट उल्लेख है। यही कारण है कि उन्होंने एक हिंदू संहिता तैयार की, जिसके बारे में वे सोचते थे कि वह स्वत:पूर्ण और ज्यादा व्यावहारिक थी। लेकिन उसमें अलग-अलग हिस्सों के गठन और उसके बाद सभी हिस्सों के समेकन का राउ समिति का उद्देश्य, पूरी तरह से गायब था।

इस संबंध में जो पहली बात में यह कहना चाहूंगा कि विधि मंत्रालय द्वारा गठित बदलाव, मूल बिल के उद्देश्य से परे थे अथवा वे अलग बिलों की तरह थे। वास्तव में मूल बिल के विभिन्न भागों को एक साथ शामिल करना ऐसा कार्य था, जिससे अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हुई और इससे उपज संदेह भी पुष्ट हुए हैं। जैसा राउ समिति द्वारा सुझाव दिया गया था, बेहतर यह होगा कि अलग भागों को अलग-अलग पारित किया जाए, ताकि उन पर काम आपत्ति हो और सदन के साथ-साथ देश का ध्यान प्रत्येक विषयों पर भले ही सम्पूर्ण हिंदू कानून में उनका एक व्यापक दृष्टिकोण हो। अब विभिन्न भागों के बिलों को समेकित करना और उन्हें क्रमिक अंक देने में हमारे सामने यह कठिनाई आ खड़ी हुई है कि सदन का कोई भी सदस्य यह कह नहीं पाया है, कि वह पूरी तरह समेकित बिल, जैसा कि प्रवर समिति की ओर से स्पष्ट हुआ है, के पक्ष में है। कुछ सदस्य विवाह के प्रावधानों के पक्ष में हैं; कुछ उत्तराधिकार के पक्ष में हैं। संरक्षण और अन्य बातों पर आपत्तियाँ कम हैं। जैसा कि मूल योजना में है अलग-अलग बिल मामलों को सरल कर सकते हैं, और उनसे अन्य कठिनाइयां भी कम हो जाएंगी।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : भरण-पोषण वाले हिस्सा सर्वश्रेष्ठ है; शेष सभी बातें बेकार हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : भरण-पोषण वाला हिस्से पर, जैसा पंडित मैत्रेय ने हमें याद दिलाया है, सब से कम आपत्ति हुई है। अत: यदि भागों को अलग-अलग रखा जाता, तो सदन अलग-अलग विषयों पर आसानी से विचार करने की स्थिति में होता। भरण-पोषण का मुद्दा विवादास्पद नहीं है। यह समाज के धार्मिक ढांचे को प्रभावित नहीं करता। यह धार्मिक भावनाओं और हिंदूओं के सदियों पुराने विश्वासों को ठेस नहीं पहुंचाता और यह एकदम पारित हो जाना चाहिए था। अलग-अलग कार्रवाई का यही कारण था। किंतु विभागीय समिति ने इसके अलग कार्रवाई को अंजाम न देकर सम्पूर्ण बातों को एक रुपेण कर दिया।

श्रीमान्, मैं यह बताना चाहता हूँ कि राउ समिति की दूसरी रिपोर्ट में भी, बिल विभिन्न खंडों में तैयार किया गया था। उन्होंने अपना परामर्श भी दोहराया कि इसे अलग-अलग रूप में लिया जाए। आशा की गई थी कि बिल को अलग-अलग भागों में लिया जाएगा और उन पर अलग-अलग कार्रवाई की जाएगी।

जनाब तजामुल हुसेन : आप ऐसा करने का तुरंत संशोधन क्यों नहीं लाते?

जनाब नजीरुद्दीन अहमद : मेरे माननीय मित्र बाधा डालते हुए यह कहना चाहते हैं कि "मैं जैसे चाहूं स्थितियों को मिला सकता हूँ, और यह आप पर है कि आप उन्हें अलग-अलग करने के लिए उपयुक्त संशोधन लाएं।" यह असंभव है। यदि आप मांस,

मछली और सब्जियां एक साथ पकाते हैं और एक शाकाहारी से एक संशोधन के माध्यम से उन्हें अलग-अलग करने को कहते हैं, तो यह कार्य घोड़े के सामने गाड़ी रखने जैसा होगा। बिल में विशिष्ट और अलग श्रेणियों के कानूनों को पूर्णतः मिश्रित कर दिया गया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : नहीं, नहीं। इसके अलग-अलग अध्याय हैं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अपना निजी दृष्टिकोण प्रकट कर रहे हैं और अन्य माननीय सदस्यों को भी अपना दृष्टिकोण व्यक्त करने का अवसर मिलेगा। क्या बाधा उत्पन्न करना उचित कार्य है, इससे केवल उनके भाषण की अवधि बढ़ जाएगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : किसी एक भाग के अनुच्छेदों को वहां से उठाकर अन्य भाग में रख दिया गया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान्, एक व्यवस्थागत आपत्ति है। इनका बयान है कि विभिन्न अध्यायों को आपस में मिलाया गया है, जिसमें सुधार की गुंजाइश है। तो क्या मुझे इस बात में सुधार करने का कोई अधिकार नहीं है?

माननीय अध्यक्ष : अपने तरीके से वे पुनः सुधार के पात्र होंगे। यहां कोई बाधा उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। मैं सोचता हूँ कि हम अनावश्यक रूप से व्यग्र हो रहे हैं। बिल के पक्ष में अथवा उसके विरोध में हमारे जो भी विचार हों, हमें अपने सामने वाले को ध्यान से सुनना चाहिए और उसके तथ्यों को समझने का प्रयास करना चाहिए। मैं प्रत्येक को पूर्ण अवसर प्रदान करूँगा। अतः अब कोई बाधा उत्पन्न न हो।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इस दिशानिर्देश के लिए मैं बहुत आभारी हूँ। तथ्य यह है कि प्रत्येक भाग में परिभाषाएं और अन्य धाराएं बिल्कुल अलग-अलग थीं। किसी के लिए भी यह बहुत सरल है वह सदन में श्री जोगेन्द्रनाथ मंडल द्वारा प्रस्तुत मूल बिल और संशोधित बिल के बीच तुलना करके बड़े सब्र के साथ उनके अंदर को देख सकता है।

एक माननीय सदस्य : जोगेन्द्रनाथ मंडल कौन थे?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वह पूर्व कानून मंत्री थे। यदि कोई उनके द्वारा प्रस्तुत बिल और वर्तमान बिल की तुलना करे तो वह देखना सरला होगा कि विभिन्न भाग अन्य भागों के साथ जोड़ दिए गए हैं। यद्यपि यह कार्य पूर्णतया सदाशयी दिखाई देता है, परन्तु वह विषयों पर अलग-अलग विचारों के उद्देश पर पूरी तरह आधारित नहीं था। वास्तव में, प्रवर समिति ने विधि मंत्रालय द्वारा फिर से तैयार किए गए बिल को प्रस्तुत किया था। जिस पर मेरा मानना है कि यह प्रवर समिति पूरी तरह भ्रम में रखने जैसा था। यह वही दस्तावेज था, जो 17 जुलाई, 1948 को मुद्रित हुआ था। इसे प्रवर समिति के उपयोगार्थ हाथों-हाथ तैयार किया गया था और प्रवर-समिति कभी बैठती उसके पहले इसे विभागीय बिल को उसे प्रस्तुत किया था। मैं पहले ही इसके एक बिंदु पर काम कर चुका हूँ, कि

इस मध्यावधि विभागीय बिल में एक गंभीर व्यवस्था की गई थी, अर्थात् विभिन्न भागों को इस प्रकार मिलाकर एक किया गया है कि उन भागों को उनके मूल रूप से अलग करना असंभव कार्य है। यह कार्य किसी अनुसंधान में लगे एक विद्यार्थी द्वारा किया जा सकता है न कि सदन के किसी सदस्य द्वारा बिना ऐसी प्रवृत्तियों और रुझानों के। अतः मैं कहता हूँ कि विभागीय समिति द्वारा पूर्णतया भिन्न विषयों को मिश्रित करके पहली भूल की गई थी। इससे एक गंभीर और अभूतपूर्व संवैधानिक अभिनवता की शुरूआत हुई।

श्रीमान्, इसके बाद विभागीय समिति ने अपने विभागीय बिल में बहुत गंभीर बदलाव किए। जब हम प्रवर समिति की कार्रवाइयों पर इस विभागीय बिल के संबंध और प्रभाव पर विचार करते हैं। तो ऐसा करना बहुत महत्वपूर्ण भी होगा। जैसा कि मैं दर्शाने का प्रयास करूंगा, विभागीय बिल से कई महत्वपूर्ण परिवर्तन शुरू हुए, यद्यपि मैं यह अवश्य उजागर करना चाहूँगा, यद्यपि मैं यह अवश्य उजागर करना चाहूँगा कि न तो माननीय कानून मंत्री ने, न ही प्रवर समिति के किन्हीं सदस्यों ने तथा न ही सदन के सदस्यों ने प्रभावी परिवर्तनों की गंभीरता के बारे में कोई जागरूकता दिखाई। वास्तव में, कानून मंत्री ने पिछली बार, जब वे प्रस्ताव के विचार–विमर्श के समर्थन में वर्तमान सत्र में बोले थे, बिल में हुए समुचित बदलावों के बारे में बताया था। किन्तु वे यह बताते हुए सावधान थे कि सभी बदलाव प्रवर समिति द्वारा किए गए थे। मैंने उनका भाषण ध्यान से सुना था और इसका सत्यापन अधिकारिक रिपोर्टों से किया जा सकता है। उन्होंने अंतिम रूप से तैयार बिल में मूल जोगेन्द्रनाथ मंडल के बिल के नए अंतरों के बारे में सराहनीय रूप से हवाला दिया था। यह दर्शाता है कि माननीय मंत्री जी प्रवर समिति को प्रस्तुत कथाकथित बिल में अपने विभाग द्वारा किए गए गंभीर बदलावों से पूरी तरह अनभिज्ञ थे। वस्तुतः मैंने माननीय मंत्री जी से एक अल्प सूचित प्रश्न के माध्यम से पूछा था कि क्या विभागीय समिति को मूल बिल में समुचित बदलाव करने के लिए अधिकृत किया गया था। इसका उत्तर था कि उन्हें ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। दूसरी ओर, कानून मंत्री ने बदलावों, यदि कोई थे, कि सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली थी। श्री रामनारायण सिंह के एक अनुपूरक प्रश्न के संबंध में कानून मंत्री ने कहा है– ''मैंने कोई बदलाव नहीं किए हैं।'' वास्तव में, मुद्दा यह था कि क्या विभागीय बिल में समुचित बदलाव किए गए थे, और उन्होंने इस बारे में पूरी तरह स्पष्ट किया था कि उन्होंने कोई बदलाव नहीं किए थे और केवल प्रवर समिति ने अकेले ही यह बदलाव किए थे। पूरे सदन को प्रतीत हुआ था कि प्रवर समिति ने बदलाव किय थे और विभागीय समिति ने कोई प्रमुख बदलाव नहीं किए थे। विगत सत्र में जब मैं अपनी बात रख रहा था, मुझे बार–बार विभागीय समिति से किए गए बदलावों को पूछा जा रहा था। यह महत्वपूर्ण है कि मुझे इस संदर्भ का हवाला देना चाहिए, क्योंकि यह दर्शाता है कि प्रवर समिति के सदस्य अथवा सदन के सदस्य, यहां तक कि कानून मंत्री भी, इस बात से अवगत नहीं थे कि समुचित बदलाव

किए गए थे। इसलिए मैं मानता हूँ, कि यदि मैं यह दिखा सकता हूँ कि उक्त समुचित बदलाव वास्तव में विभागीय समिति द्वारा किए गए थे और प्रवर समिति ने शायद ही बदलाव किए थे, तब इस पर सदन में महत्वपूर्ण विचार-विमर्श हो सकेगा। प्रवर समिति को एकदम तैयार नया बिल दिया गया था और प्रवर समिति की रिपोर्ट में यह आश्वासन था कि इसमें कोई खास बदलाव नहीं किए गए हैं और यह भी कि बदलावों के द्वारा केवल धाराओं का पुनर्नियोजन किया गया है या उनका क्रम फिर से व्यवस्थित कर दिया गया है और ऐसे सामान्य बदलाव किए गए हैं, जो पूरी तरह से प्रारुप की प्रकृति के ही हैं। यह आश्वासन हमें प्रवर समिति की रिपोर्ट में मिलता है। अतः मैं यह दर्शाना चाहूंगा कि उक्त बदलाव विभागीय समिति द्वारा किए गए है। उन बदलावों को ढूंढ पाना भी सरल नहीं है, अतः मैं किसी माननीय सदस्य से यह जान पाने में असफल रहने का दोष नहीं देना चाहता। अतः मुझे एक तुलनात्मक चार्ट तैयार करना था, जिसमें केवल क्रमांक का ही उल्लेख नहीं था, बल्कि तीनों बिलों की धाराओं और उप-धाराओं को भी एक-एक करके लिखा गया था। मैंने विभागीय बिल की एक प्रति मांगी थी, किंतु वह मुझे नहीं मिली। श्रीमान् मैं कहता हूँ कि विभागीय बिल एक बहुत महत्वपूर्ण दस्तावेज है और इसे सदस्यों को दिया जाना चाहिए। हमें प्रवर समिति के समक्ष उपस्थित गवाहों के साक्ष्य की एक रिपोर्ट दी गई, किंतु सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज, जिसने अंतिम बिल तैयार किए जाने में बड़ी भूमिका अदा की है, की प्रति अभी तक नहीं दी गई है। मैंने बड़ी कठिनाई से एक प्रति प्राप्त की है, जो मुझे विभाग से नहीं, बल्कि एक माननीय सदस्य के माध्यम से मुझे मिली है। अतः श्रीमान्, मैंने मूल बिल के समुचित प्रावधानों और विभागीय बिल तथा अंतिम बिल के समकक्ष प्रावधानों को समानांतर कॉलमों में प्रस्तुत करके तुलनात्मक रिपोर्ट तैयार की है। उससे मैंने यह पाया कि तुलनात्मक चार्ट के माध्यम से भी बदलावों की वास्तविकता का वर्णन करना बहुत ही कठिन है।

मैं प्रयासरत हूँ कि बिल समानांतर कॉलमों में मुद्रित हो जाएं। किंतु मुझे खेद है कि यह कार्य अभी तक पूर्ण नहीं हो सका है और उन्हें सदस्यों की सुविधा के लिए दिया नहीं जा सकता है। किंतु मैं यहाँ पर किए गए बदलावों का एक-एक करके उल्लेख कर सकूँगा। ऐसा करने के समय, मैं विभागीय समिति द्वारा किए गए बहुत खास बदलावों का जिक्र करूंगा। तदनुसार विभागीय समिति द्वारा किए गए बदलावों पर विचार-विमर्श से इस मुद्दे पर निर्णय भी हो सकेगा। मैं विभागीय समिति द्वारा किए गए उन बदलावों का उल्लेख करूंगा, जिन्हें विभाग द्वारा अधिकारिक तौर पर मानने से इंकार किया गया है और सदन के सदस्यों को भी जिनकी जानकारी नहीं है। अतः सदन को मूल बिल की कुछ धाराओं पर विचार-विमर्श करने में प्रसन्नता होगी।

यह भाग-I, धारा-2 उप-धारा (3) (क) में हैं। इसकी समकक्ष धारा विभागीय बिल की धारा 2 उप-धारा (2) है। मूल बिल में कहा गया है:

''जब तक इसके विरुद्ध सिद्ध न हो जाए, तब तक यह माना जाएगा कि यह सम्पूर्ण संहिता उस प्रत्येक व्यक्ति पर लागू होगी जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी या यहूदी धर्म का नहीं है।''

अत: मूल बिल में एक परिकल्पना पर आधारित नियम है। किन्तु विभागीय बिल में, यह एक परिकल्पना का नियम न होकर, कानून का एक सकारात्मक नियम है। मूल बिल में यह परिकल्पना की गई थी, कि यदि एक व्यक्ति जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी नहीं है, वह 'अनुमानत:' एक हिंदू ही होगा। वह कानून एक नियम नहीं हो सकेगा, अपितु वह एक परिकल्पना आधारित नियम होगा। लेकिन विभागीय बिल में वह बदलकर इस प्रकार प्रस्तुत किया गया:

''यह संहिता उन अन्य व्यक्तियों पर भी लागू होगी जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी धर्म के नहीं हैं।''

इन दोनों के बीच अंतर यह है कि मूल बिल के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी धर्म का नहीं है उसे हिंदू मान लिया जाएगा और उसे इस अधिनियम के द्वारा शासित माना जाएगा। पर विभागीय बिल में यह कहा गया कि:

''संहिता उन अन्य व्यक्तियों पर भी लागू होगी, जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी नहीं है।''

श्रीमान्, मेरा कहना यह है कि यह एक बड़े बदलाव का संकेत है। मूल बिल में जबकि यह एक अनुमान का नियम था, पर अब यह एक निश्चात्मक नियम है, न कि अनुमान का नियम, न कि हिंदु कानून उस किसी भी व्यक्ति पर लागू होता है, जो मुस्लिम, ईसाई, पारसी अथवा यहूदी नहीं है।

प्रावधान में यह कहा गया है:-

''यदि यह सिद्ध हो जाता है कि हिंदू कानून प्रत्येक पर लागू नहीं होता, तो हिंदू कानून लागू नहीं होगा।''

मैं समझता हूँ कि यह तथ्यों के उल्लेख का सबसे असंतोषजनक तरीका है। अंतिम बिल इसे अन्यों पर भी लागू कर देता है और उक्त प्रावधान के साथ-साथ इसने कानून में भी परिवर्तन कर दिया है।

श्रीमान्, मैं कहता हूँ कि इससे एक गंभीर परिवर्तन हो गया है। मैं कानून की नीति के बारे में चिंतित नहीं हूँ। किंतु, मैं विभागीय बिल में हुए बदलावों के बारे में चिंतित हूँ, जिनके बारे में प्रवर समिति अनभिज्ञ है।

तो, श्रीमान् अब मैं बिल के दूसरे भाग पर आता हूँ। विभागीय बिल में ....

श्री तजामुल हुसैन : क्या मुझे एक प्रश्न करने की अनुमति मिलेगी?

माननीय अध्यक्ष : जी, कहिए।

श्री तजामुल हुसैन : मेरे काबिल मित्र, श्री नजीरुद्दीन अहमद सदन के समक्ष यह दर्शाने का प्रयास कर रहे हैं कि प्रवर समिति ने मूल बिल पर विचार नहीं करके विभागीय बिल पर विचार-विमर्श किया था और ऐसा उन्होंने आपके द्वारा तथ्यों का निष्कर्ष निकालने और नियमों का हवाला देने, कि मूल बिल पर प्रवर समिति द्वारा विचार किया गया था, के बाद किया है। अब मैं आपके आदेश के बारे में जानना चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : मैं इस तर्क को सुन रहा हूँ और मैं समझता हूँ कि वे अपने संशोधन के बारे में बात कर रहे हैं कि रायशुमारी के लिए बिल को परिचालित किया जाए और उनका दूसरा संशोधन प्रवर समिति के समक्ष पुनः प्रस्तुतिकरण के लिए है। अतः, यद्यपि मेरा आदेश भी लागू है, मैं सोचता हूँ, वह यह सिद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं कि जोगेन्द्रनाथ मंडल द्वारा लाए गए मूल बिल में, उसकी विषय-वस्तु के साथ-साथ उद्देश्य में पर्याप्त ऐसे अंतर विद्यमान हैं, कि उन्हें अब पुनः परिचालित किया जाना तथा उन्हें प्रवर समिति को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है। जहां तक मैं अभी समझ पाया हूँ, उनका तर्क यह है कि प्रथम बिल में राउ समिति का मूल उद्देश्य यह भी कि कानून के विभिन्न भागों को विभिन्न खंडों में रखा जाना चाहिए। इसमें एक खंड को दूसरे खंड से अलग करना संभव था, किन्तु वर्तमान रूप में, जहां सब कुछ मिलाकर एक किया गया है, यह कठिन कार्य है कि उन कुछ भागों को रखा जाए, जिन पर लोग सहमत हैं और अन्य भागों को हटा दिया जाए। जिनसे लोग सहमत नहीं हैं। वह कहां तक सही है, यह एक अलग मुद्दा है। अतः, वह कहते हैं, कि यह आवश्यक है कि रायशुमारी के लिए बिल को पुनः परिचालित करना आवश्यक है। यही वह है, जो मैं अब इसे समझ सका हूँ। मैं नहीं समझता कि वह मेरे नियम के विरुद्ध है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कभी नहीं श्रीमान्, पूरे दिन में ऐसा कभी नहीं हुआ कि मैंने आपके आदेश पर प्रश्न किया हो। आदेश कानून के एक बिंदु पर था। वह अत्यंत तकनीकी प्रकृति का था। मेरी नियमापत्ति उन परिकल्पनाओं पर भी, जो स्पष्ट तौर पर सिद्ध नहीं हो सकी थीं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अपने तर्क जारी रख सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं पूरी तरह से सहमत हूँ कि मेरा दृष्टिकोण यही था। किन्तु इसमें कुछ और भी है। वास्तव में, मेरा उद्देश्य यह दर्शाना था कि माननीय कानून मंत्री, जो विभागीय बिल के लिए जिम्मेदार हैं, और प्रवर समिति के सदस्यों को विभागीय बिल में किए गए समुचित बदलावों की हू-ब-हू जानकारी नहीं थी, तो क्या

यह कहा जा सकता है कि उन्होंने कानूनन और यह भी कि क्या वास्तव में, उन्होंने दोनों पर समुचित विचार-विमर्श किया था? तकनीकी रूप से अवश्य ही उन्होंने दोनों पर विचार-विमर्श किया था किंतु सोचने वाली बात यह है कि क्या उन्होंने पर्याप्त रूप से विचार-विमर्श किया था? आपके आदेश के आधार पर, जिसके प्रभाव को मैं सादर स्वीकार करता हूँ, कानून का एक मुद्दा होने के कारण इस पर प्रश्न नहीं उठ सकता। परन्तु मैं जिस बार पर जोर दे रहा हूँ कि यद्यपि उन्होंने दोनों पर विचार-विमर्श किया, उन्होंने वस्तुतः सामने आई कठिनाई भी झेली कि उन्हें एक ऐसा बिल मिला था, जिसके बारे में कहा गया था कि यह मूल बिल का मात्र एक पुन तैयार प्रारुप और धाराओं की एक पुनर्व्यवस्था है, जिसके बारे में यह गारंटी व्यक्त की गई थी कि इसमें कोई बड़े बदलाव नहीं किए गए थे, तब भी वास्तव में बड़े बदलाव किए भी गए थे। मेरा तर्क यह है कि यद्यपि तकनीकी रूप से प्रवर समिति ने मूल बिल तथा विभागीय बिल दोनों पर विचार-विमर्श किया था, देखने वाली बात यह है कि, उन्होंने यह खुलासा नहीं किया कि इन बदलावों पर कोई समुचित अर्थात् पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं किया और न कर सके। अतः मेरा उद्देश्य बिल को वापस प्रवर समिति को भेजे जाने अथवा परिचालित करने का मुद्दा तैयार करना है।

विभागीय समिति द्वारा किया गया अगला बदलाव धारा 2, उप-धारा (4) में महत्वपूर्ण प्रकृति का है। यहां उल्लिखित बदलाव विभागीय समिति द्वारा किया गया था। यह बदलाव बिल्कुल नया है और यह मूल बिल में शामिल नहीं है और एक महत्वपूर्ण बदलाव है। यह बदलाव बिल में विभागीय समिति द्वारा किया गया था, प्रवर समिति द्वारा नहीं। यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य भी है। विभागीय बिल में व्यवस्था है कि :-

"2(4). विशेष विवाह अधिनियम, 1872 (1872 का III) में निहित प्रावधानों के होते हुए भी, यह संहिता उन सभी हिंदुओं पर लागू होगी जिनका विवाह इस संहिता के आरंभ से पूर्व उक्त अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत संपन्न हुआ था।"

मूल बिल में ऐसा कुछ भी निहित नहीं था और मूल बिल में यह तथ्य छोड़ दिया गया था कि जिनका विवाह 1872 के विशेष विवाह अधिनियम के अंतर्गत संपन्न हुआ था, वे उस अधिनियम द्वारा शासित होंगे। इस प्रकार तलाक, भरण-पोषण और अन्य प्रावधान उन पर लागू होंगे जिनका विवाह उक्त अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत हुआ था वे विशेष विवाह अधिनियम, 1872 के प्रावधानों द्वारा शासित होंगे, जो पूरी तरह भिन्न है। वर्तमान संहिता से यह कितना भिन्न है, यह बात यहाँ ज्यादा विचारणीय नहीं है। तथापि वर्तमान उप-धारा में यह बताने की चेष्टा है कि विशेष विवाह अधिनियम, 1872 के अंतर्गत संपन्न हुए विवाह, जो इस संहिता के प्रभाव होने से पूर्व संपन्न हुए थे, वे विशेष विवाह अधिनियम द्वारा शासित न होकर, अब इस संहिता द्वारा शासित होंगे। मेरा कहना है कि विभागीय बिल में किया गया यह एक बड़ा अंतर या बदलाव है और इसे प्रस्तुत

विभागीय समिति ने किया था और इसने प्रवर समिति कार्य प्रणाली के तौर पर मात्र इसकी स्वीकृति दी थी। यह एक महत्वपूर्ण बदलाव था, भले ही यह अच्छा था अथवा बुरा, भले ही यह सदाशयी था अथवा नहीं, प्रश्न यह नहीं है। किन्तु यह एक महत्वपूर्ण बदलाव था, जो विभागीय समिति द्वारा किया गया था किन्तु प्रवर समिति को इस बदलाव के बारे में विशेष रूप से सूचित नहीं किया गया था। यद्यपि मूल बिल की धाराओं के संदर्भ आदि हाशिये में दिए गए हैं, तो भी यह उप-धाराएं एकदम नई हैं और उन में ऐसा कोई संकेत नहीं है कि ये बदलाव फलस्वरूप हैं। उप-धाराओं में भी बदलावों का कोई संकेत नहीं है। वास्तव में प्रवर समिति द्वारा जारी साधारण बिलों में सभी बदलाव या तो अंडरलाइन करके अथवा हाशिये में डालकर किए जाते थे। प्रवर समिति ने उल्लेख किया है कि यह प्रक्रिया अनावश्यक है, क्योंकि छोटे-मोटे संदर्भ में दिए गए हैं। मेरा कहना है कि छोटे-छोटे संदर्भ केवल धाराओं में हैं, किन्तु यह उप-धारा (4) बिल्कुल नई है। इस उप-धारा का संदर्भ, भाग I, उपभाग 6, पृष्ठ 2 और अनुसूची I, पृष्ठ 30 है। लेकिन किए गए परिवर्तन न तो इसमें संदर्भ द्वारा दर्शाए गए है और न ही इसके लिए कोई उपयुक्त व्यवस्था की गई है। वस्तुत: यह एक महत्वपूर्ण प्रकृति का बदलाव था और किसी भी तरीके से प्रवर समिति के विशेष ध्यान में इसे नहीं लाया गया, न ही बदलाव की प्रकृति का उल्लेख किया गया। यह बदलाव नं. 2 था। मैं बड़े तथा महत्वपूर्ण बदलावों का भी बात कर रहा हूँ। ऐस और कई बदलाव हैं। अत: उम्मीद करता हूँ कि भविष्य में सदस्यों के साथ-साथ आम जनता को भी प्रकाशित रूप में ये सभी उपलब्ध होंगे, जिनसे यह स्पष्ट हो सकेगा कि विभाग द्वारा कौन से वास्तविक बदलाव किए गए थे और प्रवर समिति द्वारा वास्तव में कौन से बदलाव किए गए थे। मैं पुन: जोर देना चाहता हूँ कि प्रवर समिति ने कुछ ही बदलाव किए और सर्वाधिक बड़े बदलाव प्रारूप समिति द्वारा किए गए थे।

मैं अब बिल के दूसरे भाग पर आता हूँ। मूल बिल में, भाग I, धारा 3 में पुराने रीति-रिवाजों और प्रथाओं के संबंध में संहिता में लाए जाने का वर्णन है, जिसमें कहा गया है:

"इस संहिता में किसी भी मामले के पालन के संबंध में इसके प्रावधान ऐसे किसी रिवाज अथवा प्रथा का स्थान ले लेंगे जिन्हें यहां विशेष रूप से नहीं दर्शाया गया है।"

मूल बिल केवल ऐसे रीति-रिवाजों अथवा प्रथाओं का स्थान लेगा जिन्हें यहां विशेष रूप से नहीं दर्शाया गया है। ऐसे सभी रीति-रिवाज जिन्हें मूल बिल द्वारा विशेष रूप से मान्यता प्रदान नहीं की गई है, हटा दिए जाएंगे। अब आइए हम विभागीय बिल के तुलनात्मक प्रावधानों को भी देख लें जिन्हें प्रवर समिति ने बिना कोई प्रश्न किए स्वीकार कर लिया था। अत: मैं यही बताना चाहता हूँ कि बदलाव विभागीय समिति द्वारा किया गया था, प्रवर समिति द्वारा नहीं। विभागीय बिल में, धारा 4, अंतिम रूप से तैयार बिल

की धारा 4 के समान ही है। इसमें मामूली अंतर संहिता का ओवर राइडिंग प्रभाव' है, जो काफी अलग है, किन्तु मैं इस पर जोर नहीं देता, क्योंकि यह बिल का हिस्सा नहीं है। विभागीय बिल में कहा गया है:

''कोई मूल-पाठ अथवा नियम अथवा हिंदू कानून की व्याख्या अथवा रीति अथवा प्रथा अथवा इस अधिनियम के गठन से तत्काल पूर्व लागू कोई अन्य कानून, जो इस संहिता में स्पष्ट तथा दिए गए प्रावधान के अन्यथा हो, इस संहिता के द्वारा निपटाए जाने वाले किसी भी मामले में, अपना प्रभाव समाप्त कर देंगे।''

मौखिक बदलाव महत्वपूर्ण नहीं होते, परन्तु क्या आप कृपया उन अनेक महत्वपूर्ण नए मामलों पर विचार करेंगे जो विभागीय समिति द्वारा प्रवेश कराए गए हैं। यथा, 'हिंदू कानून का कोई मूल-पाठ, नियम अथवा व्याख्या' और इसके बाद 'इस संहिता के गठन से तत्काल पूर्व लागू कोई अन्य कानून' बिल्कुल नए हैं। सदन एक मिनट रुक कर बदलाव की इस गंभीरता पर विचार करे। सभी रीति-रिवाज और प्रथाएं जिन्हें मूल बिल द्वारा विशेष मान्यता नहीं दी गई है, बिल्कुल समाप्त हो जाएंगी। किंतु विभागीय बिल अपने कानून में हिंदू कानून के किसी मूल-पाठ, नियम अथवा व्याख्या को शामिल करेगा। यह सब ऐसा है जो प्रथा और रिवाजों से पूर्णतया भिन्न हैं। वास्तव में पवित्र पुस्तकों, वेदों और स्मृतियों, हिंदू कानून का कोई नियम अथवा व्याख्या, जिसके बारे में कहें, उच्च न्यायालयस, फेडरल कोर्ट और प्रिवी काउंसिल के सभी नियम, संस्कृत के मूल-पाठों की सभी अधिकारिक व्याख्याएं अथवा उच्चतम न्यायिक प्राधिकरणों द्वारा की गई व्याख्याओं को नष्ट हो जाना चाहिए, साथ ही इस संहिता के गठने से तत्काल पूर्व लागू किसी अन्य कानून को भी समाप्त कर दिया जाना चाहिए। हमारे पवित्र मूल-पाठ और डेढ़ सो से अधिक वर्षों बनाए गए कानून, कलम के जरा से झटके से एक साथ समाप्त हो जाएंगे। 'किसी भी मूल-पाठ, नियम अथवा हिंदू कानून की व्याख्या' में संभवतः सभी कुछ शामिल है। 'इस संहिता के गठन से तत्काल पूर्व लागू कोई अन्य कानून' भी संभवत इस पाठ में शामिल किया जाएगा। किन्तु मैं कहता हूँ कि विभागीय बिल का यह पाठ यदि मुझे यह कहने की अनुमति दी जाए, सभी मूल-पाठों, हिंदू कानून की व्याख्या अथवा ऐसे नियम जो विशेषकर बिल के द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं हैं, वे सब समाप्त हो जाएंगे। मेरा कहना है कि यह एक बड़ा परिवर्तन होगा।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य) : मुझे आपत्ति है कि माननीय सदस्य ने अपने अधिकारों के भीतर आपके नियमों की सक्षमता पर प्रश्न उठाया है। जब वह इस बिल को विभागीय बिल कहते हैं तो वह प्रवर समिति के सदस्यों के विरुद्ध बहुत बड़ा कटाक्ष करते हैं। प्रवर समिति के सदस्यों ने बिल का पूरा अध्ययन किया है और उन्होंने बदलावों पर ध्यान दिया है। इन्हें इसे 'विभागीय बिल' का संदर्भ देकर इस बिन्दु पर अधिक बहस नहीं करनी चाहिए। हम आपका आदेश चाहते हैं कि क्या वह सही बातें कर रहे हैं?

माननीय अध्यक्ष : मुझे कहना है, इसमें नियम-भंग जैसी कोई बात नहीं है। ये टिप्पणियां हैं जिनसे, मैं मानता हूं कि, कुछ सदस्य नाराज हो सकते हैं, किन्तु जब वह 'विभागीय बिल' शब्द का प्रयोग करते हैं, तो मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्य यह मत व्यक्त करते हैं कि प्रवर समिति के सदस्यों ने मुद्दों पर विचार नहीं किया। जैसा मैंने देखा है, वह हर बार 'प्रवर समिति के सदस्यों के विचारार्थ विभाग द्वारा तैयार बिल का प्रारूप' कहने की बजाय संक्षिप्त रूप में 'विभागीय बिल' शब्द का प्रयोग करते हैं। मैं नहीं समझता कि हमें इस पर कुछ अलग विचार करना चाहिए और हमें इसका कोई और अर्थ भी नहीं निकालना चाहिए, क्योंकि विभागीय बिल उसी का एक लघु रूप हैं। जैसा एक बार मैंने कहा कि जब सदन के एक अन्य माननीय सदस्य ने यह मुद्दा उठाया था, मैं नहीं जानता था कि क्या उस समय यह माननीय सदस्य उपस्थित थे। इससे यह बात निकलती है कि प्रवर समिति द्वारा किए गए परिवर्तन महत्वपूर्ण थे। और यदि परिवर्तन महत्त्वपूर्ण थे तो उन्हें वास्तव में यह कहने का अधिकार है कि बिल को पुनर्गठित अथवा पुनः परिचालित किया जाना चाहिए। इसमें तथ्य दिखाई देता है, भले ही वह अपने तरीके से अपनी बातें कह रहे हैं और इस बारे में बड़ी व्यापकता से अपने विचार रख रहे हैं, जो उन्हें थोड़े कम समय में रखने चाहिए।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : मेरा तर्क है कि वे प्रवर समिति के सदस्यों पर अनभिज्ञता का आरोप लगा रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं जरा सी अनभिज्ञता का आरोप नहीं लगा रहा हूँ, किन्तु विभागीय बिल से जो लापरवाही सामने आ रही है, उससे पता चलता है कि उन्हें बदलावों का कोई सुराग नहीं मिला। (हस्तक्षेप)।

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं 'अनभिज्ञता' शब्द का प्रयोग नहीं करूंगा किन्तु वे विभागीय बिल पर गलत विश्वास से तो प्रभावित हुए ही थे। (हस्तक्षेप)। यदि उन्हें अभी तक इसका आभास नहीं हुआ है, तो मैं इसके लिए क्षमा चाहता हूँ कि माननीय सदस्य अभी भी अपनी बात पर दृढ़ है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अब अलग तरीके से अपनी बातें कहें। उन्हें यह कहना चाहिए कि इस विषय पर अधिक ध्यान देना चाहिए था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा यही आशय है। अपने तर्क के लिए वास्तव में मुझे किसी कठोर व्याख्या की आवश्यकता नहीं है-मैं शब्दों की बजाय कारणों पर अधिक ध्यान दिलाता हूँ। यदि मैंने किसी कठोर शब्द का प्रयोग किया हो, भले ही वह असंसदीय न हो, मैं उसे वापस लेता हूँ। तर्क यह है कि हमें पुनः इस बात से शुरूआत करनी चाहिए कि...

माननीय अध्यक्ष : उन्हें इसे दोहराने की आवश्यकता नहीं है। वे अपनी बातें जारी रख सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : एक अन्य बात यह है कि प्रवर समिति को पर्याप्त अथवा स्पष्ट सूचना दिए बिना, केवल महत्वपूर्ण परिवर्तन ही नहीं किए गए हैं, बल्कि"

श्री कृष्णास्वामी भारती : इसी बात पर ही हमें आपत्ति है। वे ऐसा नहीं कह सकते हम उसे भली-भांति जानते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि माननीय कानून मंत्री को बदलाव की जानकारी नहीं थी और यदि माननीय सदस्य मुझसे महत्वपूर्ण बदलावों के बारे में बार-बार पूछ रहे हैं, तो इससे स्पष्ट होता है कि उन्हें इस बारे में जानकारी नहीं है और उस जानकारी के बिना उन्होंने सदाशयी तरीके से बदलावों को स्वीकार कर लिया है। मैं सोचता हूँ कि उक्त बदलाव किसी अत्यधिक जलन रखने वाले व्यक्ति द्वारा तैयार किए गए थे, जिसने यह सोचे बिना बिल में सुधार करने की सोची और कुछ सदाशयी बदलाव किए कि वह एक बिल्कुल नया बिल तैयार कर रहा है और इस बारे में किसी ने भी विचार तक नहीं किया।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे वास्तव में इसका विरोध करना चाहिए। इससे ड्राफ्ट्समैन की गलत छवि प्रस्तुत होती है। मेरे मित्र ने लगभग यह कह दिया है कि प्रवर समिति के विचार-विमर्श के पश्चात् ड्राफ्ट्मैन ने ही बिल में परिवर्तन के लिए समिति के दिमाग में बात डाली है। मैं इसका बड़ा विरोध करता हूँ।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : और हम उस तरीके का विरोध करते हैं जिस तरीके से वह प्रवर समिति के सदस्यों से पेश आ रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : क्या परिवर्तन प्रवर समिति की रिपोर्ट के बाद किए गए हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यही मत वे व्यक्त कर रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : उनका अभिप्राय है शायद पहले से हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जी हाँ, श्रीमान्, मैं बिल्कुल आश्वस्त हूँ कि प्रवर समिति की बैठक से पहले ही परिवर्तन हो चुके थे।

माननीय अध्यक्ष : मुझे लगता है कि इसमें कुछ गलतफहमी है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे इसकी जानकारी नहीं है। यदि मैं अपने मित्र का भाषण समझ चुका हूँ, तो इसका सामान्य आशय यही है कि प्रवर समिति ने बिना विचार किए आँखें मूंदकर रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किए हैं अथवा उनका आशय है कि

प्रवर समिति जब अपना कार्य कर चुकी थी तो कुछ परिवर्तन करने के लिए ड्राफ्ट्समैन ने अपना दिमाग लगाया। इससे कोई अन्य अर्थ इसका नहीं हो सकता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : हमें इस मामले में पड़ने की आवश्यकता नहीं है कि किए गए परिवर्तन सदाशयी थे अथवा लापरवाही से किए गए थे अथवा गलत तरीके से किए गए थे।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य का तर्क यह है कि जिन परिवर्तनों को वे महत्वपूर्ण मानते हैं, वे किए गए थे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अपने किसी भी मित्र को सुनने के लिए तैयार हूँ कि वह उन परिवर्तनों को क्रमानुसार रखकर दिखाए, जिन्हें वह सोचते हैं कि, वह परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किए गए हैं। यह मानते हुए कि प्रवर समिति द्वारा कुछ परिवर्तन किए गए हैं, मैं जानना चाहूंगा कि क्या उन्हें पुनः परिचालित किए जाने के लिए यह एक पर्याप्त आधार होगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : बिल्कुल भी नहीं। मैंने कभी नहीं कहा कि वे परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किए गए थे।

माननीय अध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य को यह समझा रहा था कि मान लो कि उनकी राय में, किए गए कुछ परिवर्तन महत्वपूर्ण प्रकृति के हैं, तो तर्क के लिए रखी गई उनकी राय सशक्त है और उन्हें यह कहने की आवश्यकता नहीं हैं कि क्या किए गए परिवर्तन अनभिज्ञता के कारण थे अथवा गलत ढंग से किए गए थे। प्रवर समिति ने खुले दिमाग से और समस्त स्थिति पर विचार करते हुए परिवर्तन किए होंगे। तो भी वे सोचते हैं कि वे परिवर्तन महत्वपूर्ण प्रकृति के थे और, इसलिए इस बिल को पुनः परिचालित किया जाना चाहिए। सभी लोगों को इससे सहमत होने की आवश्यकता नहीं है, कि जो परिवर्तन, जैसा कि वह मानते हैं, महत्वपूर्ण थे, आवश्यक नहीं है कि वे महत्वपूर्ण हों। इसमें राय भिन्न-भिन्न हो सकती हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय कानून मंत्री ने कहा था कि मुझे यह दिखाना चाहिए कि प्रवर समिति ने क्या परिवर्तन किए थे। मुझे यह बताते हुए दुख हो रहा है कि मैं प्रवर समिति द्वारा किए गए परिवर्तनों के बारे में सदन का ध्यान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं कर रहा। मेरा मानना है कि माननीय कानून मंत्री के दिमाग में यही गलती घूम रही है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ऐसी कोई बात नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वस्तुतः वह इस बात पर जोर दे रहे थे कि परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किए गए थे। मैं अभी तक जिन परिवर्तनों की बात कर रहा हूँ, वे परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा नहीं, बल्कि विभागीय समिति द्वारा किए गए थे।

माननीय अध्यक्ष : कृपया शांत रहिए। यहीं मुश्किल आ रही है। जिन परिवर्तनों को प्रवर समिति ने स्वीकार किया है, उन्हें चाहे किसी ने भी किया हो, वे प्रवर समिति द्वारा किए गए परिवर्तन हैं और प्रवर समिति के संज्ञान में लाए बिना किसी के भी द्वारा नहीं किए गए हैं उन्हें इस प्रकार का आक्षेप अथवा स्वीकारोक्ति लगाने की आवश्यकता नहीं है। परिवर्तन किसी के द्वारा भी किए गए-एक अवसर पर चाहे एक अकेले सदस्य द्वारा अथवा कानून मंत्री अथवा प्रारूप समिति अथवा किसी और के द्वारा इन्हें इस अनुमान पर आगे बात रखनी चाहिए कि ये परिवर्तन वे परिवर्तन हैं, जो प्रवर समिति द्वारा स्वीकार किए गए हैं, और इन्हें यह प्रदर्शित करके दिखाना चाहिए कि वे महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरी कठिनाई यह है कि मैं इस बात पर रुक नहीं सकता। माननीय कानून मंत्री ने दावा किया है कि परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किए गए थे, प्रारुप समिति द्वारा नहीं। इससे यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाएगा कि प्रवर समिति ने प्रारुप समिति द्वारा सुझाए गए परिवर्तनों को अनुग्रहपूर्वक और सदाशयी रूप से स्वीकार किया। यदि ऐसा है तो इसे स्वीकार करते हुए प्रवर समिति ने यह जानते हुए भी कि यह एक परिवर्तन है इस पर अपना दिमाग नहीं लगाया। यदि प्रवर समिति नहीं जानती थी, जैसा कि माननीय कानून मंत्री भी नहीं जानते, कि ये परिवर्तन विभागीय समिति द्वारा किए गए थे, उन्होंने किए गए सभी परिवर्तनों को, पूरे सम्मान के साथ नहीं, अपितु तकनीकी रूप से स्वीकार कर लिया। इस तर्क से भी मेरी बात पुष्ट हो जाती है। ये परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा मात्र अपनी इच्छानुसार नहीं किए गए, बल्कि उनके द्वारा यह जाने बिना कि वे जिन परिवर्तनों को स्वीकार कर रहे थे, वे महत्वपूर्ण प्रकृति के हैं जिनसे मेरा मामला पुष्ट हो जाता है। वास्तव में, उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से यह मान लिया था कि विभागीय बिल मात्र एक फिर से तैयार किया गया प्रारूप था, जिसमें कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए थे। इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है कि कानूनमंत्री ने भी यह माना कि मैं प्रवर समिति द्वारा किए गए परिवर्तनों का उल्लेख कर रहा हूँ। यही कारण है कि मैं यह तर्क प्रस्तुत कर रहा हूँ कि परिवर्तनों की ओर प्रवर समिति का ध्यानाकर्षित नहीं किया गया। दूसरी ओर, उन्होंने विभागीय बिल को मूल बिल का एक महत्वपूर्ण पुनः प्रस्ततीकरण माना, जिसमें कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं था। मैं कह सकता हूँ कि कोई वास्तविकता जाने बिना; हम केवल भूलों अथवा अनदेखी करने अथवा सदाशयी त्रुटियों के संबंध में तर्क प्रस्तुत कर सकते हैं। मुझे इससे बेहतर कोई तर्क प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है।

श्रीमान्, मेरा कहना है कि प्रवर समिति के सदस्यों अथवा कानून मंत्री को इस बारे में बहुत भावनात्मक नहीं होना चाहिए। यह मामला अभिलेखन का है। वास्तव में, यहां तक कि माननीय कानून मंत्री ने भी माना है कि उन्होंने कोई परिवर्तन नहीं किया और वह समझते हैं कि मैं यह तर्क दे रहा हूँ कि परिवर्तन, प्रवर समिति द्वारा किए गए थे।

वे उन्हें अपना चुके हैं: जैसे कि आपके द्वारा दी गई व्यवस्था स्वीकार की जानी चाहिए, उन्हें ये परिवर्तन स्वीकार करने चाहिए। किन्तु मैं जो प्रश्न उठा रहा हूँ कि वह यह है कि इनकी जानकारी नहीं दी गई अथवा विधिक तौर पर ध्यान नहीं दिला गया। माननीय मंत्री जी ने कल एक प्रश्न पर कहा था कि विभागीय समिति ने कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए। महत्वपूर्ण परिवर्तन तो हुए हैं, पर उन्हें विभागीय विधेयक में नहीं दर्शाया गया है। अतः इसमें आक्षेप लगाने जैसा कोई प्रश्न नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : अब हमें पुनः इस प्रश्न पर चर्चा नहीं करनी चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था। श्रीमान्, मैंने सोचा था कि मैं ठोस आधार पर कदम रख रहा हूँ। किंतु सुस्पष्ट मामलों को उजागर करना यदि प्रवर समिति के सदस्यों को अपराध लगता है, तो मुझे बहुत खेद है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : आप सदस्यों के विरुद्ध ऐसा आक्षेप नहीं लगा सकते।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कैसा आक्षेप कि उन्होंने गलतियां की हैं? गलती करना मानवीय स्वभाव है। मैं केवल यह सुझा रहा था कि प्रवर समिति के सदस्य भी मानव ही थे।

श्री बी. दास : मुझे व्यवस्थागत् आपत्ति है। श्रीमान्, क्या माननीय सदस्य लगातार तीन महीनों तक प्रवर समिति की कमियों को उजाकर करते रह सकते हैं? मुद्दा उठा और उसका निपटान हो गया। मैं उनके शब्दों को स्वीकार करता हूँ अथवा नहीं, यह एक अलग प्रश्न है। किन्तु माननीय सदस्य इस तरह से अड़ंगेबाजी वाले अंदाज में अपनी बात जारी नहीं रख सकते हैं, जैसा कि कुछ वर्ष पहले मेरे मित्र श्री बैजनाथ बेजोरिया ने बाल-विवाह अधिनियम पर मेरे संशोधन के समय किया था। वे शास्त्रों तथा अन्य पुस्तकों के कथनों के उद्धरण देते रहे थे। यहां बेचारी प्रवर समिति पर मेरे मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा गत तीन महीनों से प्रहार किए जा रहे हैं। यह कोई कानूनी अदालत नहीं है। श्रीमान् आप इनसे इस पर अपने विचार रखने को कह सकते हैं कि हिंदू संहिता विधेयक पारित नहीं होना चाहिए। हमे प्रवर समिति के विरुद्ध क्यों लम्बी बातचीत करते रहनी चाहिए? इस सदन के सबसे पुराने सदस्य होने के नाते, मैं इसे नहीं समझ सकता।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य केवल महत्वपूर्ण परिवर्तनों का ही उल्लेख करें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जी, श्रीमान्। श्रीमान्, मुझे आपत्ति है कि मेरे भाषण को अड़ंगेबाजी वाला भाषण कहा जाता है। मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य थोड़ा गलत दिशा में बढ़ गए हैं। इससे प्रतीत होता है कि उन्होंने पूरी तरह से अपने मस्तिष्क पर ताला लगा लिया है और अब वे कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हैं।

श्रीमान्, क्या मैं आपसे अनुरोध कर सकता हूँ कि आप इस पर विचार करें और देखें कि क्या मैं तथ्य से असंबद्ध अथवा गलत हूँ? जब तक कि परिवर्तन महत्वपूर्ण नहीं होते संभवतः, वे स्पष्ट रूप से हिंदू कानून के मूल-पाठों को और शीर्ष न्यायालयों द्वारा नियमों की व्याख्या की अनदेखी करते हैं। मूल विधेयक में किसी प्रकार की दिक्कत नहीं थी। परिवर्तन विभागीय समिति ने किये थे क्या यह, किसी भी तरह से, एक महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं था। दास महाशय विधिक मामले नहीं सुन सकते। वह वित्तीय मामलों के जानकार हैं, किन्तु विधिक मामलों में वह तेजी से वापस अपने दूसरे बचपन की ओर बढ़े जा रहे हैं।

श्री. बी. दास : हम यहां कानून बनाने के लिए आते हैं। यहां हम वकीलों की अथवा उच्च न्यायालय के न्यायधीशों की व्याख्याएं सुनने को नहीं आते। (हस्तक्षेप)।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, यहाँ महत्वपूर्ण परिवर्तनों पर काफी कुछ आधारित है। क्या इनकी प्रस्तुत विभागीय समिति द्वारा नहीं की गई है? यह पूरा मामला इसी मुद्दे पर आधारित है। यदि इसकी प्रस्तुति विभागीय समिति द्वारा की गई थी और यदि यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था, तब प्रवर समिति को इसकी जानकारी क्यों नहीं दी गई थी। यह बार-बार स्पष्ट किया गया है कि प्रवर समिति ने विभागीय विधेयक पर विचार-विमर्श किया था न कि मूल विधेयक पर। यदि यह आक्षेप करना है, तो मुझे खेद है कि मुझे बड़ी निष्ठापूर्वक और बिना डरे, पर आदरपूर्वक अपना कर्तव्य निबहाना होगा। मैं कहता हूँ कि प्रवर समिति को यह विश्वास दिलाने के लिए पूरी तरह पुसलाया गया था कि विभागीय विधेयक, मूल विधेयक का एक महत्वपूर्ण प्रतिकृति ही था, और यहां तक कि कानून मंत्री से भी यह विश्वास करने को कहा गया कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं था। यह आक्षेप नहीं है, यह एक तथ्य है। तब, परितर्वन किसने किए? यदि यह कार्य कानून मंत्री ने किया था, तो उन्हें इसकी जानकारी होनी चाहिए थी। क्या वह कोई और था? तब, मेरे लिए यह कहना उचित न होगा कि किसी अन्य द्वारा परिवर्तन किए हैं। मैं बस यह कहता हूँ कि उसने ये परिवर्तन भूलवश अथवा सदाशयी तौर पर किए। लेकिन क्या मेरे लिए यह सुझाव देना उचित होगा कि ये परिवत्रन कपटपूर्वक किए गए थे? मैं इस तरह का कोई सुझाव नहीं देता। मैं केवल इतना करूंगा कि मैं यह अनुमान लगा सकता हूँ कि ये कार्य सदाशयी तरीके से किए गए थे-सुधार के लिए इन पर थोड़ी-सी कलम चलाई गई थी। 'मात्र प्रथागत कानून को ही क्यों समाप्त किया जाए? आइए, हम प्रिवी काउंसिल के सभी नियमों को भी समाप्त क्यों न कर दें?'

श्रीमान्, मेरी आलोचना उचित है। यदि मैंने कोई शब्द गलत तरीके से इस्तेमाल किया है, तो मैं उसे वापस लेता हूँ। किन्तु आलोचना तो करूँगा ही!

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : अब हम अन्य तर्कों को सुनें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इतने चिंतित क्यों हो रहे हैं? इसी के बारे में क्यों नहीं सुनना चाहते?

माननीय अध्यक्ष : कृपया शान्त रहिए। इस तरीके से हम विधेयक पर विचार-विमर्श जारी नहीं रख सकते। कुछ ऐसे सदस्य हैं जो विधेयक का समर्थन करना चाहते हैं, और कुछ उसका विरोध करना चाहते हैं। प्रत्येक को अपने तरीके से अपनी बात कहते दें, बस कोई अप्रिय बात न कहें अथवा असंसदीय भाषा का प्रयोग न करें। आपत्ति केवल यही है। अन्यथा, प्रत्येक चरण में बाधा उत्पन्न होगी और जो विधेयक का समर्थन करना चाहते हैं, आगे चलकर उन्हें कष्ट होगा, क्योंकि इस तरह की अनावश्यक चर्चा में समय व्यतीत हो जाएगा। माननीय सदस्य अपनी बात रख सकेंगे और यदि वह कहते हैं कि प्रवर समिति ने इस बात पर अथवा उस बात पर ध्यान नहीं दिया अथवा प्रवर समिति ने इन तथ्यों की जांच नहीं की, इसमें बेइज्जती का आधार कहाँ बनता है? वह पूर्ण रूप से ऐसा कहने के पात्र हैं। किन्तु उन्हें कोई ऐसा आक्षेप नहीं करना चाहिए; यह वह है, जिसकी मुझे रक्षा करनी पड़े। परन्तु मुझे यकीन है, वह अपने विचार व्यक्त करने के पात्र हैं।

एक अन्य तथ्य भी है, जिसके संबंध में मैं माननीय सदस्य का ध्यानाकर्षित करने जा रहा हूँ। उनका कहना है कि चूंकि कानून मंत्री को महत्वपूर्ण परिवर्तन की जानकारी नहीं थी, अतः वह परिवर्तन किसी अन्य द्वारा किया गया था। इसका एक अन्य पहलू भी है। जिस तथ्य को वह महत्वपूर्ण मानते हैं, पर यदि कानून मंत्री उसे महत्वपूर्ण नहीं मानते, तो माननीय कानून मंत्री उचित रूप से यह कहने के पात्र हैं कि उन्हें किसी महत्वपूर्ण परिवर्तन की जानकारी नहीं थी। अतः इसका निश्चित रूप से यह आशय नहीं है कि किसी अन्य व्यक्ति ने अनजाने में अथवा मंत्री जी के पीठ पीछे, इसे प्रवर समिति में प्रस्तुत कर दिया था तथ्यों को महत्वपूर्ण रहने दें और इस विवाद को इस प्रश्न तक समिति रहने दें कि क्या तथ्य महत्वपूर्ण हैं अथवा नहीं। मेरा विश्वास है कि विवाद का मुख्य बिन्दु भी यही है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं इस बारे में सुधार का पक्ष लेता हूँ। जैसा हो सकता है कि कानून मंत्री द्वारा यह जाने बिना और यह विश्वास किए बिना कि यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है। किंतु मुद्दा यह है कि वास्तव में स्थिति क्या थी। ये महत्वपूर्ण मुद्दे हैं, चाहे वे परिवर्तन कानून मंत्री द्वारा होशो-हवास में किए गए अथवा किसी अन्य द्वारा अनजाने में, किसी भी तरीके से किए गए। हमारे लिए उस पर बहस करना उचित न होगा। किंतु जरा सी एक कलम चलाकर, हिंदू कानून के सभी मूल-पाठ नियम और व्याख्याएं समाप्त कर दी गई हैं। इसका प्रभाव यह पड़ेगा कि प्रिवी कार्उसिल, फेडरल कोर्ट और उच्च न्यायालय के सभी नियम, कलम के एक झटके के कारण खत्म हो जाएंगे। वास्तव में, यदि यह मूल विधेयक में गंभीर हस्तक्षेप नहीं कर रहा, तो मैं नहीं

जानता वह क्या कर रहा है? हमारे मतभेद हो सकते हैं। परन्तु यदि कोई बिना किसी भेदभाव, और खुले दिमाग से, इस प्रश्न को समझे, तो मुझसे सहमत होने में उसे कोई कठिनाई नहीं होगी कि मूल विधेयक में यह बहुत गंभीर हस्तक्षेप था।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : कृपया अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तनों के विषय में भी बताएं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह एक गंभीर विषय को बहुत हल्के लेने जैसा है। परन्तु मैं कहता हूँ कि ये बहुत गंभीर परिवर्तन है जो अन्तर्वेशन, सदाशयी अथवा कदाचार, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता?

श्रीमान्, इसके बाद विभागीय समिति द्वारा जो अगली तिकड़म की गई, वह भाग I, धारा 5, उप-धारा (ख) में, जिसमें जाति की परिभाषा का उल्लेख है, उससे 'जाति' की परिभाषा को हटाना है। उसे वहाँ से पूर्णतया विलुप्त कर दिया गया है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य किस धारा की बात कर रहे हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं भाग II, धारा 5, उप–धारा (ख) का उल्लेख कर रहा हूँ जिसमे 'जाति' की परिभाषा है।

माननीय अध्यक्ष : क्या आप मूल विधेयक का उल्लेख कर रहे हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जी हाँ। पर विभागीय विधेयक में उक्त परिभाषा पूर्णतया विलुप्त कर दी गई है और इस विलोपन के बारे में कहीं भी कोई संकेत तक नहीं दिया गया है। मूल धारा में केवल हाशिये में इस विषय में मात्र एक संदर्भ दिया गया है। लेकिन इसकी उप–धारा को विलुप्त कर दिया गया है और इसका कोई संकेत भी नहीं दिया गया है। श्रीमान्, मैं कहता हूँ कि इस विलोपन के बारे में प्रवर समिति का विशेष ध्यानाकर्षण नहीं किया गया है और ये महत्वपूर्ण मुद्दे हैं अथवा नहीं, इस बारे में ज्यादा मतभेद नहीं हो सकता। प्रवर समिति को किसी भी मूल्य पर यह बताया जाना चाहिए था कि ये-परिवर्तन किए गए थे; वे परिवर्तन महत्वपूर्ण थे अथवा नहीं, यह बात व्यक्ति-व्यक्ति के लिए भिन्न हो सकती है। किन्तु प्रवर समिति को यह जानने का अधिकार था कि ये परिवर्तन किए गए थे। किन्तु उन्हें बताया ही नहीं गया।

और अब हम उसी धारा की उप-धारा (च) पर आते हैं और पाते हैं कि वहाँ गौत्र और परिवार की परिभाषा विलुप्त कर दी गई है। इसके पश्चात् उप–धारा (छ) में स्त्रीधन की परिभाषा विलुप्त कर दी गई है। इस प्रकार, जाति की परिभाषा, गोत्र की परिभाषा, परिवार की परिभाषा और स्त्रीधन की परिभाषा, पूर्णतया विलुप्त हो गई हैं। इससे इस विधेयक पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस सदन में इसके संक्षेप में बतलाया नहीं जा सकता।

श्री ए. थानु पिल्लेय (ट्रावणकोर राज्य) : क्या मैं माननीय सदस्य से यह जान सकता हूँ कि क्या यदि कानून में कोई शब्द जरूरी नहीं है, तो भी उसे परिभाषित किया जाना चाहिए?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य इतनी सावधानीपूर्वक इस कार्यवाही में भाग नहीं ले रहे हैं, जितना कि उन्हें होना चाहिए। वास्तव में, क्या किसी शब्द की परिभाषा अपेक्षित है अथवा अपेक्षित नहीं है, प्रश्न यह नहीं है।

विधेयक में एक परिभाषा थी और उसे किसी के द्वारा, किसी प्राधिकार के बिना ही हटा दिया गया। विभागीय समिति ने इसे हटाया, और प्रवर समिति, जो इसे हटाए जाने के लिए अकेले सक्षम थी, का ध्यान इस ओर आकर्षित तक नहीं किया गया।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : प्रवर समिति इसके लिए पूरी जिम्मेदारी लेती है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इस पर प्रवर समिति द्वारा विचार-विमर्श ही नहीं किया गया।

श्री एम. तिरुमला राव (मद्रास : सामान्य) : क्या आप आश्वस्त हैं कि उसे कम्पोजीटर ने नहीं हटाया था?

माननीय अध्यक्ष : जो व्यक्ति बाधा पहुंचाएंगे, उन्हें हस्तक्षेप वाला माना जाएगा। कारण यदि किसी को रोका जाता है, तो वह अधिक समय लेगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मैं यह कहते हुए इस बहस को छोटा करना चाहता हूँ कि वास्तव में प्रवर समिति का ध्यान इन सब बातों की ओर आकर्षित किया गया था। माननीय सदस्य इस बिंदु पर अनावश्यक राग अलाप रहे हैं, कि प्रवर समिति का ध्यान आकर्षित नहीं किया गया था। किन्तु प्रवर समिति का एक सदस्य होने के नाते, मैं यह कह सकता हूँ कि इन सभी बिंदुओं पर पूरी तरह विचार-विमर्श किया गया था, मामले के सभी पहलुओं पर प्रवर समिति द्वारा विचार-विमर्श किया गया था। अतः माननीय सदस्य को बार-बार इस मामले को उठाने की आवश्यकता नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : मैं यह कहूँगा कि यदि इस प्रश्न पर पूरी तरह विचार कर लिया गया है, तब भी माननीय सदस्य को पूर्ण अधिकार है कि वह अपने विचार रखें। माननीय सदस्य यह देखेंगे कि वह बिल के पुनर्विचार के लिए मामला प्रवर समिति को भेजना चाहते हैं, और इसी के लिए वह अपने तर्क दे रहे हैं। प्रवर समिति ने, हो सकता है, पूर्ण, पर्याप्त, समुचित, उचित ध्यान दिया हो, किन्तु उनकी राय में, यह अपर्याप्त है। अतः वह जोर दे रहे हैं कि दिया गया ध्यान अपर्याप्त था और विधेयक को प्रवर समिति के पास पुनर्विचार के लिए पुनः भेजा जाना चाहिए। इसी तर्क के आधार पर वह अपनी बात कह रहे हैं; और यदि वह इसी तर्क विशेष पर चल रहे हैं, तो उन्हें उसी

पर चलते रहना चाहिए। जहाँ तक इस तथ्य की पर्याप्तता का प्रश्न है कि प्रवर समिति के सदस्य किसी तथ्य के पूर्ण निर्णायक नहीं हो सकते कि क्या विधेयक पर समुचित अथवा पर्याप्त ध्यान दिया गया था या नहीं, इसी प्रकार, माननीय सदस्य का निर्णय भी अंतिम नहीं है। किन्तु वह अपनी राय रख रहे हैं। आइए, हम इसी आधार पर आगे बढ़ें। अन्यथा इस बातचीत का कोई अंत नहीं होगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मैं केवल प्रश्न के बारे में तथ्यात्मक उल्लेख कर रहा था।

माननीय अध्यक्ष : यह अभिमत संबंधी प्रश्न है। माननीय सदस्य जिसे एक तथ्यात्मक प्रश्न समझते हैं, वह वास्तव में सम्मतियों का प्रश्न है। ध्यान दिए जाने में पर्याप्तता थी या नहीं, यह सम्मतियों का एक प्रश्न नही हैं, बल्कि मात्र तथ्यात्मक प्रश्न है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यहाँ प्रश्न उपयुक्त विचार-विमर्श का है।

(इसी समय अध्यक्ष महोदय अपनी कुर्सी से उठकर चले गए, इसके बाद उपाध्यक्ष महोदय श्री एम. अनंतसयनम आयंगर ने उनका स्थान ग्रहण किया।)

श्री कृष्णास्वामी भारती : मैं केवल अपने बारे में बात कर रहा था।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : आप चीजों को समझ नहीं सकते।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वास्तव में यह एक व्यक्ति का मामला नहीं है। यह मामला पूरी प्रवर समिति का है न कि एक व्यक्ति का। यदि एक व्यक्ति ने अनुशरण किया है, तो इसका मतलब यह नहीं कि दूसरों ने भी किया है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : हाँ,

श्री नजीरुद्दीन अहमद : बिल्कुल।

यदि प्रवर समिति में एक व्यक्ति समझता है कोई बदलाव नहीं किया गया है तो इससे बिल को प्रवर समिति में पुनर्विचार किए जाने हेतु प्रर्याप्त आधार नहीं बनता। और फिर, उनमें से कितनों ने ध्यान दिया? मेरे मित्र को आश्चर्य होगा कि वहां बहुत सारे बदलाव थे। मैं बतला सकता हूँ बहुत, बहुत बदलाव हुए हैं। उदहारण के लिए...

श्रीमति दुर्गाबाई : इसी बीच सूचना के प्रश्न पर क्या मैं पूछ सकती हूँ कि बदलाव जो प्रवर समिति ने किए हैं, सदन के लिए बाध्यकारी हैं? सदन क्या उन्हें स्वीकार या अस्वीकार नहीं कर सकती?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं आदरपूर्वक कहता हूँ कि यह असंगत है पूछना कि प्रवर समिति के द्वारा किए गए बदलावों को सदन को स्वीकार करना चाहिए अथवा

अस्वीकार करना चाहिए। प्रवर समिति कोई भी बदलाव कर सकती है और सदन भी उसके आगे बदलाव कर सकती है। सदन बदलाव कर सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं है। किन्तु प्रश्न यह है कि प्रवर समिति ने किसी कारण-वश कर सकी अथवा नहीं कर सकी अथवा असफल हुई अपने कर्तव्य को निभाहने में पूरी तौर पर। यदि ऐसा है तो प्रश्न की तह तक जाने का अधिकार सदन पर है और यही कारण हे कि मैंने प्रवर समिति की ओर से उससे बड़ी सदन को निवेदन किया। बेशक, उससे भी बड़ा सदन है समस्त भारत का प्रतिनिधि। अब मैं मूल धारा पर आता हूँ। (व्यवधान)

माननीय सदस्य इस बात का विश्वास नहीं दिला सकते कि प्रवर समिति ने प्रत्येक वस्तु पर विचार किया है। यदि वे सही हैं तो मैं भी सही हूँ कई कारणों से पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मुझे कल से ही प्रायः लगातार से अपनी बात कहने से रोका जा रहा है, और आज भी पुनः अनेक बार बाधा उत्पन्न की गई है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : मैं लगातार आपका समर्थन कर रहा हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरे मित्र श्री भारती यहां मौजूद हैं। क्या वह सदन को बतलाने के लिए प्रवर समिति में क्या कुछ हुआ है? यदि ऐसा है तो मेरे पास भी इसके विरुद्ध प्रवर समिति के ही सदस्यों के समान शक्ति का प्राधिकार है। एक सदस्य के बयान की दूसरे से तुलना करना बहुत गलत होगा और यह इस बात पर परदा डालने जैसे होगा कि प्रवर समिति में क्या कुछ हुआ।

मुझे लगता है कि यहाँ कुछ सदस्यों की बुद्धि ही भ्रष्ट हो गई है।

श्री तजामुल हुसेन : मैं इस बयान पर कड़ा विरोध प्रकट करता हूँ कि सदस्यों की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। मैं इस व्यवस्थागत आपत्ति को गंभीरता के साथ उठा रहा हूँ। उन्हें बिना शर्त अपने शब्द वापस लेने चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य का इस तरह कहना अनावश्यक था।

श्री तजामुल हुसैन : वह अपना कथन वापस लें। क्या वह ऐसा बयान देते हुए होश में हैं? वह कुल मिलाकर माननीय सदस्य के विरुद्ध हिंसक आक्षेप कर रहे हैं?

माननीय अध्यक्ष : मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्य द्वारा यह कहना कि सदस्यों की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है, उचित टिप्पणी थी। इससे सदन की गरिमा भंग होती है। इस समय मैं यह कह सकता हूँ, कि मैं देख रहा हूँ एक-दो सदस्य ऐसी भाषा का प्रयोग

कर रहे हैं या ऐसे तर्क दे रहे हैं, जो सम्बोधित सदस्य को पसंद नहीं आ रहे। फिर भी, एक हद तक धैर्य रखा जाना चाहिए। किसी शब्द के द्वारा अथवा किसी इशारे द्वारा कोई बाधा उत्पन्न नहीं की जानी चाहिए। इसी प्रकार, यदि माननीय सदस्य अपने दस्तावेजों के कुछ पृष्ठ पलट रहें हों, और वे उन्हें बाधा पहुंचते तो वह अपनी बात भूल सकते हैं और वह बाधा उन्हें उत्तेजित कर सकती है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मुझे कहीं से यह टोका गया था कि मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है।

माननीय अध्यक्ष : लगता है माननीय सदस्य अब अपना सूत्र खोने लगे हैं- अपने तर्क का सूत्र।

श्री तजामुल हुसैन : क्या मैं जान सकता हूँ कि वह अपना पवित्र धागा यानी सूत्र खो चुके हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अपने तर्कों को आगे बढ़ाता हूँ, श्रीमान्। मूल विधेयक की धारा 2 हमें 'पुत्र' की परिभाषा दी गई है। वहाँ 'पुत्र' में एक 'दत्तक कृत्रिम' अथवा 'गोद लिया पुत्र' आदि शमिल हैं, किंतु उसमें कोई दासी पुत्र आदि शामिल नहीं हैं। विभागीय विधेयक में इसे इसी तरह माना गया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : जब कोई माननीय सदस्य कुछ पढ़ते हैं, तो क्या उन्हें सही बात नहीं पढ़नी चाहिए?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने देख लिया है कि इसे हटा दिया गया है। यदि इसका उल्लेख परिभाषा में अथवा विधेयक के किसी अन्य भाग में मिले, तो कृपया मेरे ध्यान में ला दिया जाए।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य, जिन्होंने अभी वक्ता को अपनी बात कहने से रोका है, बार-बार अपनी सलाह दे रहे हैं। श्री नजीरुद्दीन अहमद जो भी संदर्भ आगे देना चाहें, उससे थोड़ा धीमी गति हो सकती है उन्हे रोके जाने की आवश्यकता नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा कहना है कि 'पुत्र' की परिभाषा विलुप्त कर दी गई है। यदि मैं गलत हूँ तो वह गलती मुझे बताई जाए।

डॉ. पी.एस. देशमुख (सी.पी. एवं बरार : सामान्य) : मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्य गलत हैं।

माननीय अध्यक्ष : यदि माननीय सदस्यगण इसी तरह बाधा उत्पन्न करते रहेंगे तो सदन की कार्रवाई नियमानुसार चलाना असंभव हो जाएगा। श्री नजीरुद्दीन अहमद माननीय सदस्यों से कोई प्रश्न किए बिना अपनी बात जारी रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने जैसा कहा है कि पुत्र की परिभाषा दी गई है, इस संबंध में भाग II, उप-धारा (3) की धारा 2 में इच्छा-पत्रहीन उत्तराधिकार में भी स्पष्टीकरण दिया गया है। चार स्पष्टीकरण विलुप्त कर दिए गए हैं। ये महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं। मैं केवल किए गए परिवर्तनों की प्रकृति की ओर ध्यानाकर्षित करने का प्रयास कर रहा हूँ। मेरे अनुसार ये भूलें बहुत गंभीर प्रकृति की हैं ये भूलें प्रारुप तैयार किये जाने की प्रकृति नहीं हैं। मैं विधेयक में सुधार के लिए प्रवर समिति के अधिकार पर प्रश्न नहीं कर रहा हूँ, अथवा इन भूलों को करने पर प्रश्न नहीं उठा रहा हूँ। ये परिवर्तन, हालांकि, प्रवर समिति द्वारा नहीं किए गए, बल्कि प्रारूप समिति द्वारा किए गए थे पर इन भूलों की ओर प्रवर समिति का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित नहीं किया गया था।

तत्पश्चात् मैं विधेयक के एक अन्य महत्वपूर्ण भाग पर आकर यह दिखाना चाहता हूँ कि प्रारूप समिति द्वारा बहुत गंभीर परिवर्तन किए गए थे। भाग II, में मूल, विधेयक की धारा 4 में, वारिसों की सूची दी गई है। इसमें उल्लेख है कि उत्तराधिकार में प्राप्त किसी पुरुष की इच्छा पत्रहीन संपत्ति इस भाग में निर्धारित नियमानुसार कानूनन उन्हें सौंप दी जाएगी : (क) सूची में उल्लिखित उत्तराधिकारी को, यदि कोई हो, जैसा अनुच्छेद 5 में उल्लिखित है; (ख) यदि सूची में कोई अगला उत्तराधिकारी न हो, तो उसके किसी सगौत्र को यदि कोई हो; (ग) यदि कोई सगौत्र न हो, तो उसके सजातीय बन्धु को, यदि कोई हो; और (घ) यदि कोई सजातीय बन्धु न हो, तो अनुच्छेद 10 में उल्लिखित किसी वारिस को, यदि कोई हो।

माननीय अध्यक्ष : मैं नहीं जानता कि माननीय सदस्य के पास हिंदू संहिता की तुलनात्मक तालिकाओं की प्रतिलिपि है या नहीं है जो कि सभी सदस्यों को परिचालित की गई थी। राउ समिति द्वारा मूल हिंदू संहिता का जो मसौदा तैयार किया गया था, उसे विधि मंत्रालय द्वारा संशोधित किया गया है और उसमें किए गए परिवर्तन भी दर्शाए गए हैं। अतः मैं सुझाव देना चाहूंगा कि माननीय सदस्य इस मुद्दे पर मेहनत न करें। मैं सोचता हूँ कि उन्होंने इस मुद्दे पर पर्याप्त समय ले लिया है। व्यक्तिगत तौर पर मैं सोचता हूँ कि यह मुद्दा काफी हद तक स्पष्ट है और वास्तव में स्पष्टीकरणों के द्वारा उसे कई गुना बढ़ाया जा सकता है। मैं सोचता हूँ कि उन्होंने पहले मुद्दे पर ही पर्याप्त समय बिता दिया हैं व्यक्तिगत तौर पर मैं सोचता हूँ कि यह मुद्दा पर्याप्त स्पष्ट है और वास्तव में स्पष्टीकरणों को और भी कई गुना बढ़ाया जा सकता है। यदि यह मुद्दा इधर या उधर का है, तो यह सदन उस पर विचार कर लेगा। कुछ ऐसे मुद्दे होते हैं जो बनाए जाते समय संख में होते हैं। मैं इससे सहमत हूँ कि उन्हें भी स्पष्ट किया जा सकता है, किन्तु तालिका में किए गए परिवर्तन ही पर्याप्त हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, सूची न तो पूर्ण है, न ही सही और वह परिवर्तनों को भी उजागर नहीं कर पाती है। वास्तव में, मूल विधेयक की मूल शर्तों और किए गए

परिवर्तनों के विरुद्ध की गई टिप्पणियां अभी अपर्याप्त है। अब मैं एक बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन पर आता हूँ, जिसका नाम है विरासत इसमें इस कदर परिवतन किया गया है कि इसे नए विधेयक के साथ अथवा विभागीय प्रारूप के साथ देखना असंभव हो जाता है और न ही यह किसी भी प्रकार से मूल बिल का स्थान ले पाया है। अतः मैं कह सकता हूँ कि विरासत के संबंध में बड़ी संख्या में परितर्वन किए गए है।

सर्वप्रथम मैं सूचीबद्ध किए गए वारिसों के संबंध में विधेयक के भाग II(क) की धारा 4 में किए गए उल्लेख पर यह प्रदर्शित करने की स्थिति में हूँ कि वारिसों की सूची में गंभीर परिवर्तन किए गए हैं। मूल बिल में वह एक समान थी और विभागीय समिति के प्रारूप में वह बिल्कुल भिन्न है। मूल व्यवस्था पूरी तरह गड्ड-मड्ड हो गई है और यह कहा गया है कि यदि कोई लिखित रूप से वारिस न हो तो संपत्ति किसी एक सपिण्ड व्यक्ति को चली जाती है। सपिण्ड व्यक्ति की परिभाषा सर्वविदित है। वह परिभाषा मूल विधेयक में थी, किंतु विभागीय समिति द्वारा संशोधित विधेयक में 'सपिण्ड' शब्द को अब काफी हद तक सीमित कर दिया गया है। अतः लिखित उत्तराधिकारी के न होने की स्थिति में सपिण्ड व्यक्ति, जहां तक कि दूरस्थ भी हिंदू कानून, मुस्लिम कानून और अन्य सभी कानून जो मूल विधेयक के अनुरूप हैं, के अनुसार उत्तराधिकारी के पात्र होंगे। किन्तु विभागीय समिति द्वारा तैयार नए संशोधित प्रारुप में 'सपिण्ड' शब्द को एक निश्चित सीमा तक गंभीर रूप से संशोधित कर दिया गया है। ऐसे सगोत्रीय जो उन सीमाओं से परे थे, पुराने विधेयक के तहत उत्तराधिकार के पात्र हो गए होते, किन्तु विभागीय विधेयक के तहत वे इस अधिकार से बाहर हो जाएंगे। इसी प्रकार, नजदीकी रिश्तेदारों (कोग्नेट) को विभागीय विधेयक में भी प्रतिबंधित किया गया है और यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है क्योंकि यह दूरस्थ एकवंशीय और दूरस्थ नजदीकी रिश्तेदारों को पूर्णतया वंचित कर देता है। तत्पश्चात्, श्रीमान्, भाग 4, धारा (घ) में, तथा अन्य शब्द भी पूरी तरह से हटा दिए गए। मूल विधेयक के भाग II, की धारा 4 में उत्तराधिकार की पद्धति प्रत्येक चरण में परिवर्तित कर दी गई है और उसमें अत्यंत गंभीर परिवर्तन किए गए हैं तथा सूचीबद्ध किए गए उत्तराधिकारियों में भी परिवर्तन किया जा चुका है। एकवंश वाले व्यक्तियों को समिति कर दिया गया है; नजदीकी रिश्तेदारों को सीमित कर दिया गया है और अन्य धाराओं को पूरी तरह से हटा दिया गया हैं मैं भली-भांति समझता हूँ कि प्रवर समिति द्वारा स्पष्ट तौर पर पूरी तरह विचार-विमर्श करके ये परिवर्तन किए जा सकते थे, किंतु ये परिवर्तन प्रवर समिति के नहीं, बल्कि विभागीय समिति द्वारा किए गए हैं और सदस्यों ने मुझसे पूछा है "हमें बताएं, क्या परिवर्तन किए गए हैं?"

माननीय अध्यक्ष : क्या मैं माननीय सदस्य से जान सकता हूँ कि यदि प्रवर समिति के सभी सदस्य खड़े होकर स्वयं ही संबोधित करने लगें, तो क्या माननीय सदस्य पूरी तरह से संतुष्ट हो जाएंगे कि प्रवर समिति द्वारा क्या कार्य किया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा मुद्दा यह है कि प्रवर समिति के सदस्यों को परिवर्तनों की जानकारी नहीं दी गई थी।

माननीय अध्यक्ष : इससे कोई उपयोगी बात सिद्ध नहीं होती। यह कोई कानूनी प्रश्न नहीं है कि क्या इस सदन को प्रवर समिति द्वारा किए गए कार्य के बारे में न्यायाधिकार प्राप्त हो गया है। यह निर्णय हो चुका है और पर्याप्त रूप से यह दर्शाने के लिए इस बात पर विचार-विमर्श भी हो चुका है कि प्रवर समिति ने एक निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले प्रत्येक धारा पर विचार कर लिया है। किन्तु वस्तुगत मामलों पर, पुराने कानून में बड़े परिवर्तन किए गए है। इसमें कुछ सच्चाई है। वे ही ऐसे मामले हैं, जिन पर माननीय सदस्य को सदन में संबोधन करना चाहिए। मैं यह नहीं कह सकता कि जो कहा गया है, वह ठीक नहीं है, किंतु काफी कुछ कह दिया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कुछ माननीय सदस्यों को पर्याप्त जानकारी नहीं दी गई है। ऐसा बताया गया है कि ये परिवर्तन महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हैं और मैं उन पर बात करते हुए इस बात का ध्यान रखूंगा। स्थिति यह है कि किए गए परिवर्तनों की संख्या बहुत अधिक है, जिस पर सदन का ध्यानाकर्षित करना कठिन कार्य है। वास्तव में, परिवर्तन बहुत गंभीर है और बहुत अलग हैं तथा बहुत महत्वपूर्ण हैं और मेरा तर्क यह है कि उन्हें प्रवर समिति द्वारा नहीं किया गया था। उन्होंने उन परिवर्तनों को स्वीकार किया था अथवा नहीं, यह एक अलग मामला है। मेरा विश्लेषण यह है कि उन्हें पहले से तैयार एक विधेयक के साथ प्रस्तुत किया गया था इस आश्वासन के साथ कि उनमें कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हैं और इस प्रकार प्रवर समिति का पूरा ध्यान इस मामले की ओर नहीं दिलाया गया। अब हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि सूची में दिए गए उत्तराधिकार संबंधी वास्तविक परिवर्तन कौन से हैं। वास्तव में मूल विधेयक में उत्तराधिकार की सूची पृष्ठ संख्या 4, 5 और 6 पर दी गई है। इसे पूरी तरह से इस जगह से उठाकर विभागीय विधेयक में सातवें अनुसूची में रख दिया गया है, जबकि अन्य भाग मूल पाठ में ही रखे गए हैं। उत्तराधिकार की सूची बड़े हैरतअंगेज ढंग से और बिना जवाबदेही के वहां से हटा दी गई है। अतः मूल सूची की तुलना नई सूची से करना बहुत सरल नहीं है जो सातवीं अनुसूची में रखी गई है उसमें गंभीर और महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं। यहाँ माननीय मंत्री महोदय स्वयं जानना चाहते हैं कि किए गए परिवर्तन कौन से हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे उनकी पूरी जानकारी है। जहां तक मेरा प्रश्न है, आपको मुझे जानकारी देने के लिए मेहनत करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि ये परिवर्तन जानबूझ कर किए गए हैं, तो यह कहने में क्या तुक है कि प्रारूप समिति द्वारा कोई परिवर्तन नहीं किए गए थे और यह

कि सभी परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किए गए थे? और प्रवर समिति के बारे में यह भी कहा गया है ''हमने अपना ध्यान विभागीय विधेयक तक समिति रखा है''। इससे यह प्रतीत होता है कि उनका ध्यान इस ओर आकर्षित ही नहीं किया गया था। यह एक बहुत सीधा-सा निष्कर्ष है।

माननीय डॉ.बी.आर. अम्बेडकर : आप इसे अपने तरीके से दीजिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि माननीय कानून मंत्री ने स्वयं को ऐसी असुविधाजनक परिस्थिति में घिरा पा रहे हैं, और किसी भी तरह से या अन्यथा, अपनी भूल मान भी रहे हैं, तो उसे तर्कसंगत नहीं मान रहे हैं वास्तव में, किए गए परिवर्तन महत्वपूर्ण प्रकृति के थे। कल मुझसे माननीय कानून मंत्री ने स्वयं पूछा था: ''कृपया हमें बताएं कि प्रारुप समिति द्वारा क्या परितर्वन किए गए है,'' और अब वे कह रहे है ''मैं सब कुछ जानता हूँ।'' निःसंदेह उन्होंने बाद में उनका अध्ययन कर लिया होगा, किन्तु ये सभी परिवर्तन गंभीर प्रकृति के हैं। उनकी शुरूआत प्रवर समिति द्वारा नहीं की गई थी, बल्कि विभागीय समिति द्वारा की गई थी और प्रश्न यह है कि वास्तव में प्रवर समिति उन्हें कहाँ तक समझ पाई। कम से कम डॉ. बक्शी टेक चन्द ने अपनी असहमति की टिप्पणी में कहा है ''हमने अपना ध्यान विभागीय समिति विधेयक तक समिति रखा और मूल विधेयक पर ध्यान नहीं दिया'', क्योंकि उन्हें आश्वस्त कर दिया गया था कि विभागीय विधेयक में उन्होंने कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए थे। अतः इसे ध्यान में रखते हुए, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि क्या करना चाहिए। वास्तव में, यदि यह एक गंभीर अनियमितता नहीं है, और सदन के ध्यान में लाए जाने का मामला नहीं है, तो मैं नहीं जानता, यह क्या है? जब विभाग द्वारा निर्णय लेने में भूल की गई है, तो मैं समझता हूँ कि इसे स्वीकार लेना बेहतर और उपयुक्त होगा, बजाय इसके यह कहना कि: ''मैं यह सब कुछ जानता हूँ किन्तु वहाँ कोई परिवर्तन नहीं किए गए। प्रत्येक परिवर्तन प्रवर समिति द्वारा किया गया।'' और जब मैं कहता हूँ कि प्रवर समिति ने कोई परिवर्तन नहीं किए और सभी परिवर्तन विभागीय समिति द्वारा किए गए तो यह कहा गया कि : ''मैं इस बारे मे भी जानता हूँ'' इसलिए हम जानना चाहते हैं कि इसमें विभाग की क्या स्थिति है? यदि विभागीय द्वारा कोई परिवर्तन किया गया··

श्री बी. दास : यह कोई कानूनी अदालत नहीं है, जहाँ हम मदवार सुनवाई करें। माननीय सदस्य को अपना भाषण समाप्त करके बैठ जाना चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य, श्री बी.दास ने सदन में अध्यक्ष की उपस्थिति में यह बयान दिया था। कुछ हद तक यह एक कानूनी अदालत ही है पर उस अर्थ में कानूनी अदालत नहीं है कि वह माननीय सदस्यों पर यह प्रभाव डालना चाहते हों जैसे कि वह एक कानूनी अदालत में बहस कर रहे हैं फिर भी, हम उन्हें बाधा पहुंचाना नहीं चाहते। जहाँ तक संभव हो इस प्रकार के विवाद से बचना चाहिए।

श्री बी. दास : हम आपस में बातचीत कर रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य को उस समय बातचीत का कोई अधिकार नहीं है कि जब एक माननीय सदस्य अपनी बात कहने के लिए खड़े हैं। अतः उस समय उन्हें बाधा नहीं पहुंचाई जानी चाहिए।

श्री बी. दास : वह हम से बात कर रहे हैं।

श्री माननीय अध्यक्ष : आपको बातचीत नहीं करनी चाहिए। जब कोई माननीय सदस्य बोल रहा हो, तो अन्य माननीय सदस्यों को बातचीत नहीं करनी चाहिए। उन्हें सुनना चाहिए और सदन में शोर-शराबा भी नहीं करना चाहिए।

श्री बी. दास : आप भड़काना समझ सकते हैं। मैं स्वयं यहां से बाहर जाने को तैयार हूँ, किन्तु माननीय सदस्य को अपने भाषण से सदन के सदस्यों को भड़काना नहीं चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : यह गलत है। किसी भी माननीय सदस्य के भाषण को तब तक भड़काऊ नहीं कहा जाना चाहिए। जब तक कि वह अपशब्दों अथवा असंसदीय भाषा का प्रयोग न करें। हम चाहे सहमत हों अथवा न हों, किंतु माननीय सदस्य सदन के समक्ष अपनी बात रख रहे हैं। किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि वह एक माननीय सदस्य के भाषण को भड़काऊ कहे।

श्री बी. दास : मैं आपके निर्णय को स्वीकार करता हूँ। किन्तु उन्होंने कानून मंत्री के लिए 'धोखेबाज' जैसे शब्द का प्रयोग किया है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय कानून मंत्री स्वयं इतने सक्षम हैं कि वह अपना ध्यान रख सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि माननीय सदस्यों को मूल धाराओं की तुलना करनी चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : क्या कोई ऐसे सारगर्भित मामले भी हैं, जिनके द्वारा माननीय सदस्य को अपना मन बदलने के लिए प्रेरित कर सकें?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं। मुझे इन बातों को उजागर करना होगा। वास्तव में, मुझे बड़ी संख्या में उदाहरण देने होंगे। सबसे बेहतर यह होता कि गलतियों को मान लिया जाता अथवा धैर्य रखकर सुना जाता। मुझे सभी मुद्दों को बताना चाहिए और यदि मैं अपने तर्क को दोहराता हूँ अथवा असंबद्ध हो जाता हूँ, तो नियमानुसार कहने को कहा जा सकता है। भाग II, की धारा-5 में श्रेणी I, में पुत्रों, विधवाओं और पुत्रियों का हवाला है। विभागीय समिति द्वारा इसमें एक परिवर्तन किया गया है। विभागीय विधेयक की सातवीं अनुसूची में श्रेणी I, के तुलनात्तक भाग में एक उत्तराधिकारी पुत्र के उत्तराधिकारी पुत्र के पुत्र को नए तरीके से शामिल किया गया है।

वास्तव में, मूल विधेयक से इस अनुसूची को अपने स्थान से इस प्रकार हटाया गया है कि जब तक दोनों श्रेणियों को साथ-साथ न रखा जाए, तब तक परिवर्तन के बारे में पता लगाना सरल नहीं है। प्रस्तुत अधिनियम में, एक पूर्व मृत पुत्र के पूर्वमृत पुत्र के पुत्र को मूल विधेयक में स्थान नहीं दिया गया है। किन्तु उसे विभागीय समिति द्वारा संशोधित विधेयक की सातवीं अनुसूची में शामिल किया गया है।

इसके बाद हम अन्य सूचियों पर आते हैं। मूल विधेयक में उल्लिखित उत्तराधिकारी के बाद मद सं. 2 में पुत्री सूची में प्रथम है। लेकिन विभागीय विधेयक में, पुत्री के पुत्र को नीचे खिसका दिया गया है। तत्पश्चात् पिता और माता पर ते हैं। मूल विधेयक के अनुसार, पिता की तुलना में माता को उत्तराधिकार का पात्र होना चाहिए था। जबकि विभागीय विधेयक में पिता और माता को एक साथ रखा गया है और वहाँ उनका क्रम भी बदल दिया गया है और विभागीय विधेयक के अंतर्गत उन्हें एक साथ उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया है, जब कि मूल विधेयक के अंतर्गत पिता को शामिल किए जाने से पूर्व माता को उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया था। वहाँ माता के न होने की स्थिति में ही पिता को उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया था। जैसा कि पहले भी बताया गया है पुत्री के पुत्र को, विभागीय सूची में और नीचे कर दिया गया है। किसी को भी, जो इस मामले पर विचार करना चाहता है, अब इस बारे में सुस्पष्ट हो जाना चाहिए कि ये सब महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं।

अब हम मूल विधेयक की तृतीय श्रेणी पर आते हैं। भाई के पुत्र जो मूल विधेयक में तृतीय श्रेणी की सूची में प्रथम था, उसे विभागीय विधेयक में पूरी तरह से अनदेखा कर दिया गया है। यदि ऐसा जानबूझ कर किया गया था, तब हमें प्रवर समिति की रिपोर्ट में अथवा उसके भाषणों में तत्संबंधी संकेत प्राप्त होना था। मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं था? यह उस व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण भले न हो, जो भाई के पुत्र का पुत्र नहीं है, किन्तु एक भाई के पुत्र के लिए यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है, क्योंकि अन्य उताधिकारी के न होने की स्थिति में वह सम्पत्ति का उत्तराधिकारी हो जाएगा।

सूची में अगला आने वाला सदस्य है, बहन। विभागीय बिल में भाई और बहन को उत्तराधिकार में एक साथ रखा गया है। मूल विधेयक की सूची में भाई का नाम बहुत ऊपर था, उसे अब स्थानांतरिक करके नीचे तृतीय श्रेणी में कर दिया गया है और उत्तराधिकार में बहन के साथ ही रख गया है (हस्तक्षेप)।

क्या मैं अपनी बात समाप्त कर दूं?

श्री तजामुल हुसैन : माननीय सदस्य को किसी अन्य माननीय सदस्य से बात करने का अधिकार नहीं है। श्रीमान् मैं इसका बड़ा विरोध करता हूँ।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा : सामान्य) : ऐसा प्रतीत होता है कि यहां कोई कोरम नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : यहाँ कोरम है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मान लिजिए किसी व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसका एक भाई और एक बहन जीवित हैं। मूल विधेयक के अनुसार भाई को उत्तराधिकार दिया जाता तो बहन को उसके लाभ से दूर रखा जाता। किन्तु विभागीय विधेयक में भाई और बहन को समान उत्तराधिकार दिया गया है। अब भाई की सूची में शामिल अन्य 11 संबंधियों के स्थान से नीचे बहन के साथ रखा गया है। मेरा कहना है कि इसमें बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है।

अब हम भाई के पुत्र पर आते हैं। वह श्रेणी-I बहुत उच्च स्थान पर था। पर विभागीय विधेयक में बहन के पुत्र के साथ रखा गया है। यदि कोई मृत व्यक्ति अपने पीछे अपने भाई का पुत्र और अपनी बहन का पुत्र छोड़ जाता है, तो मूल विधेयक के अंतर्गत, भाई के पुत्र को उत्तराधिकार मिलेगा, किंतु विभागीय विधेयक के अंतर्गत भाई के पुत्र और बहन के पुत्र को समान उत्तराधिकार मिलेगा। मेरा कहना है कि ये बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं।

इसके बाद मैं मूल विधेयक की श्रेणी-IV पर आता हूँ। मूल विधेयक की श्रेणी-IV में यदि किसी मृत व्यक्ति के पीछे उसके पिता की माँ और पिता का पिता जीवित रहते हैं, तो उन्हें मूल विधेयक और विभागीय विधेयक में भिन्न रूपों से रखा गया है। मूल विधेयक में पिता की माँ और पिता के पिता को उत्तराधिकारी के रूप में रखते हुए, पिता की माँ और पिता के पिता को उत्तराधिकारी के रूप में रखते हुए, पिता की माँ को प्राथमिकता दी गई थी, पिता के पिता को तरजीह नहीं दी गई थी। परन्तु विभागीय विधेयक में दोनों को एक साथ रखा गया है और दोनों को एक साथ ही उत्तराधिकार दिया गया है। मैं पूछता हूँ कि क्या यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं है।

तत्पश्चात् श्रीमान, श्रेणी-IV में मद (1क), (1ख), (1ग), और (1घ) में इनकी प्रविष्टि राउ समिति द्वारा मूल रिपोर्ट में संशोधन द्वारा की गई थी। मूल बिल में, यदि पिता की कोई विधवा थी और भाई की कोई विधवा थी, तो भाई की विधवा की तुलना में पिता की विधवा को प्राथमिकता दी गई थी। विभागीय बिल में पिता की विधवा और भाई की विधवा को एक साथ उत्तराधिकार दिया गया है। मेरा कहना है कि यह एक बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन है – भले ही यह अच्छा हो अथवा बुरा, यहाँ मुद्दा यह नहीं है। इसके बाद राउ समिति द्वारा संशोधन के रूप में सामने आई पूरक सूची में शामिल दो अन्य उत्तराधिकारियों की बात करें तो भाई के पुत्र की विधवा और भाई के पुत्र के पुत्र की विधवा को विभागीय विधेयक में पूरी तरह से हटा दिया गया है। जब कि मूल बिल में उन्हें एक के बाद एक

उत्तराधिकार दिया गया था। इस तरह विभागीय बिल में उन्हें विलुप्त कर दिया गया है, यानी विभागीय बिल में इसके बारे में कोई प्रस्ताव नहीं रखा गया।

इसके बाद मद 2 पर आते हैं। श्रेणी-IV में, पिता के पिता को मूल विधेयक में बहुत नीचे रखा गया है, किन्तु विभागीय समिति द्वारा तैयार सूची में उसे बहुत ऊपर कर दिया गया है।

तत्पश्चात्, श्रीमान्, हम पिता के भाई और पिता की बहन की स्थिति पर आते हैं। सूची में पिता का भाई क्रमांक 3 पर है और पिता की बहन क्रमांक 6 पर है। अतः मूल विधेयक में, यदि वहां पिता के पिता तथा अन्य शामिल थे, तो पिता के पिता को प्राथमिकता दी गई थी। इसके बाद पिता का भाई, पिता के भाई का पुत्र, पिता के भाई का पुत्र का पुत्र और तत्पश्चात् पिता की बहन आते हैं। विभागीय बिल में पिता के पिता और पिता की बहन को एक स्तर पर रखा गया है, इस तरह बाद वाले को ऊपर लाया गया है।

इसके बाद उत्तराधिकारियों की एक बड़ी सूची है, जिसे पूरी तरह विलुप्त कर दिया गया है। मूल विधेयक में क्रमांक (4), (5), (7) और (8) उत्तराधिकारी हैं। विभागीय विधेयक में उनका कहीं उल्लेख नहीं है, उन्हें पूरी तरह से हटा दिया गया है।

श्रीमान्, मैं जानता हूँ कि इस सबका उल्लेख करना एक थकाने वाला कार्य है, परन्तु मैं अपना कर्तव्य निभा रहा हूँ और मैंने प्रत्येक सदस्य को तुलनात्मक विवरण की प्रति सौंपने का कार्य हाथ में लिया है, जो अभी तैयार हो रही है। मैं सदस्यों से प्रत्येक परिवर्तन की जांच करने का अनुरोध करूंगा और यदि मैं गलत सिद्ध हुआ तो भी मुझे बहुत खुशी होगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं आशा करता हूँ कि प्रति निःशुल्क दी जाएगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि सरकार यह सोचती हैं कि में एक धर्मार्थ संस्था हूँ, तो यह आशा पर खरा उतरने में भी मुझे खुशी होगी।

माननीय अध्यक्ष : यदि इसकी आपूर्ति पहले कर दी गई होती, तो यह सारा समय बच गया होता!

श्री नजीरुद्दीन अहमद : खेद की बात है कि मेरे मुद्रणालय की हालत सरकारी मुद्रणालय से बदतर ही है।

माननीय अध्यक्ष : यदि माननीय कानूनी मंत्री को सुझाव दिया गया होता, तो उन्होंने इसका मुद्रण करवा दिया होता।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अवश्य, मैंने इसका मुद्रण करवा दिया होता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरे पास अब इसकी पाण्डुलिपि तैयार है। यदि माननीय कानून मंत्री इसका मुद्रण करवा दें तो मुझे प्रसन्नता होगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अब इसका कोई उपयोग नहीं हो पाएगा, क्योंकि उन्हीं बातों को आप सदन में कह चुके हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अब हम मूल विधेयक की श्रेणी V पर आते हैं। यह आश्चर्यजनक दुर्घटना है–मैं किसी पर आक्षेप लगाने से डरता हूँ– पर इसमें शामिल प्रत्येक तथ्य को विभागीय विधेयक में हटा दिया गया है। इसमें उत्तराधिकारियों की नौ श्रेणियां और चार अन्य अनुपूरक श्रेणियां थी। मूल विधेयक श्रेणी V के तेरह उत्तराधिकारी अब पूरी तरह से हटा दिए गए हैं। क्या गलती से…?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : पूर्णतया जानबूझ कर!

श्री नजीरुद्दीन अहमद : तो फिर प्रवर समिति की रिपोर्ट में यह क्यों कहा गया है कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए थे? यदि इन्हे जानबूझ कर हटाया गया था, तो मुद्दा केवल यह है कि क्या वे परिवर्तन महत्वपूर्ण थे। माननीय कानून मंत्री द्वारा सदन को यह आश्वासन दिया जा चुका है कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए थे। कि ये परिवर्तन जानबूझ कर किए गए थे, यह स्वीकृत किया गया है इसलिए, अब प्रश्न यह उठता है कि ये परिवर्तन महत्वपूर्ण हैं या नहीं क्योंकि हमें आश्वस्त किया गया है कि कोई महतवपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह तो अपनी–अपनी राय की बात है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : तो भी प्रश्न यही उठता है कि क्या ये महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं? कानून बनाने वाले के दृष्टिकोण से यह बहुत महत्वपूर्ण भले न हों परन्तु उत्तराधिकारी के लिए तो यह महत्वपूर्ण ही है। यदि आप उत्तराधिकारी के क्रम को थोड़ा–सा भी बदल देंगे, तो यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन होगा। अभी तक हमें आश्वासन दिया गया था कि जो परिवर्तन किए गए थे, वे केवल प्रारूप की प्रकृति के थे। प्रवर समिति की यह रिपोर्ट है कि विभाग द्वारा कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए। रिपोर्ट इतनी स्पष्ट और सुनिश्चित है और उसमें विभिन्न मुद्दों पर इतना स्पष्ट जोर दिया है कि वे कहते हैं कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए हैं–केवल कुछ क्रमों में बदलाव या कुछ छोटे–मोटे शाब्दिक परिवर्तन किए गए है और यही कारण है कि विभागीय अथवा मूल विधेयक में परिवर्तनों की साइड–लाइनिंग अथवा अंडरलाइनिंग करते परितर्वनों को दर्शाने वाला उपयोगी तरीका नहीं अपनाया गया है।

अब इन सारे प्रश्नों के निचोड़ से यह प्रश्न निकलता है: क्या ये महत्वपूर्ण परिवर्तन

है और इसकी कसौटी क्या है? क्या उत्तराधिकारी की सूचियों को अस्त-व्यस्त करना एक महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं है? मैं कहता हूँ, है। यदि ऐसा है कि मैं बहुत बहस कर रहा हूँ, इस तरह की जैसे यह कोई कानूनी अदालत हो-यदि कोई माननीय सदस्य ऐसा सोचता हो-तो ऐसा प्रतीत होता है कि इन परिवर्तनों की गंभीरता को पूरा महत्व नहीं दिया जा रहा है।

श्री तजामुल हुसैन : सिवाए आपके।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि इसे केवल एक व्यक्ति द्वारा महत्व दिया जाए। निःसंदेह यह एक सर्वाधिक धन पाने वाला विभाग है और यहाँ एक सर्वाधिक सुयोग्य कानून मंत्री भी हैं जो थोड़े से अंतरों को भी समझ पाने में सक्षम हैं। किंतु मुझे खेद है कि मुझे इन समस्त समस्याओं से गुजरना पड़ा और यह सब पता लगाने और इनका स्पष्टीकरण देने में मुझे अपना समय और धन दोनों खर्च करने पड़े। यह एक सरल मुद्दा नहीं था और इस बात से यह समस्या और बढ़ गई कि जिस विभाग ने सभी परिवर्तन किए, वह मुझे ड्राफ्ट विधेयक की प्रतिलिपि तक उपलब्ध नहीं करवा सका। बहुत खोज-बीन करने के बाद ही मैं उसकी एक प्रति प्राप्त कर सका। अतः यह खोज लम्बी हो गई और विचार-विमर्श भी लम्बा हो गया है तथा मेरे लिए यह मामला बहुत कठिन हो गया है। मेरे कहने का आशय यह नहीं है कि कोई अन्य सदस्य इसके महत्व को नहीं समझ सकता, किन्तु इस पर विचार करने के लिए कुछ के पास ही समय है-अथवा कुछ को ही इसमें अभिरुचि है। और वे ऐसा करें भी क्यों? लेकिन क्या यह प्रत्येक सदस्यों का कर्तव्य और स्पष्ट विशेषाधिकार नहीं है- और मैं सदस्यों के पक्ष में यह बात कह रहा हूँ-कि वे विधि मंत्रालय पर विश्वास कर लें या प्रवर समिति की रिपोर्ट में दी गई इस गारंटी पर विश्वास कर लें कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए हैं। मैं सोचता हूँ कि उन्हें पूर्ण औचित्य मिल गया है, एक माननीय सदस्य यदि यह कहता है कि मेरे अलावा इस बारे में और कोई नहीं जानता तो मैं उसे दोष नहीं दे सकता। ये दोष विभाग का है। क्या अब इन परिवर्तनों का कोई अंत है? शायद किसी भी तरह नहीं।

अब श्रेणी V-क पर आइए। इसका प्रवेश राउ समिति द्वारा अपने पूर्व विधेयक में संशोधन के द्वारा किया गया था। उसकी टिप्पणी है कि यह श्रेणी V-क, श्रेणी V के बाद शुरू की जाए। लेकिन अब श्रेणी V-क पूर्णतया विलुप्त कर दी गई है। मैं विनम्रता से यह सुझाव देना चाहता हूँ कि यह विलोपन अनजाने में किया गया या जानबूझ कर, किंतु इससे विधेयक की निष्ठा को पूर्णतया क्षति पहुंची है।

तत्पश्चात् श्रीमान्, हम श्रेणी VI पर आते हैं।

(हस्तक्षेप)

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य अपनी बात जारी रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अब हम श्रेणी VI को मद (1) और (2) माता की माता और माता के पिता पर आते हैं। मूल विधेयक में मामा के पिता की तुलना में माता की माता को प्राथमिकता दी गई है, किंतु विभागीय विधेयक में इन्हें एक साथ रखा गया है। अब उन्हें एक साथ समान उत्तराधिकार प्राप्त होगा। श्रेणी IV की मद (3) में माता के भाई और माता की बहन को उत्तराधिकार में–मूल विधेयक में पूर्ववर्ती के बाद परवर्ती को रखा गया है, किंतु विभागीय विधेयक के अंतर्गत उन्हें एक साथ उत्तराधिकारी बनाया गया है। विभागीय विधेयक में मद (4) और (5) के तहत माता के भाई के पुत्र को पूरी तरह अलग रखा गया है। मद (7), (8) और (9) के तहत–माता की बहन के पुत्र, माता की भाई की पुत्री, माता की बहन की पुत्री को भी पूरी तरह से विलुप्त कर दिया गया है।

तत्पश्चात् श्रेणी VI में मद (3) को भी पूरी तरह से विलुप्त कर दिया गया है।

इसमें उत्तराधिकारियों की सूची को समाप्त कर दिया गया है, जिसमें कम से कम 20 क्रम परिवर्तन, संशोधन तथा विलोपन किए गए हैं। वारिसों को जानबूझ कर अथवा जान–बूझ कर पूरी तरह से हटा दिया गया है, किन्तु प्रवर समिति की रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत नहीं होता है। सदन में प्रवर समिति के माननीय सदस्यों ने बार–बार मुझसे पूछा है कि अन्तर कहाँ–कहाँ हैं, यह मैं उन्हें बताऊँ। मैं उन पर ध्यान न दिए जाने के लिए किसी भी माननीय सदस्य को दोष नहीं दूंगा। परिवर्तनों का स्थान बदलने अथवा उन्हें मूल स्थान से हटाए जाने से ये परिवर्तन सुस्पष्ट नहीं रहें होंगे। उधर प्रवर समिति की रिपोर्ट में यह गारंटी दी गई है कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया गया है। ये विभागीय विधेयक के माध्यम से परिवर्तन किए गए थे जो प्रवर समिति के ध्यान से निकल गए हों। कम से कम उनका ध्यान विभागीय बिल की तरफ नहीं दिलाया गया था। एक बहुत ही आदरणीय और सक्षम सदस्य डॉ. बक्शी टेक चन्द ने अपने असहमति पत्र में कहा है कि प्रवर समिति ने विभागीय विधेयक पर ध्यान केंद्रित कर दिया था, क्योंकि वे आश्वस्त थे कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए थे। मैं डॉ.बक्शी टेक चन्द से पूछना चाहूँगा कि क्या इन तथ्यों की ओर विभाग ने उनका ध्यान दिलाया था अथवा डॉ. अम्बेडकर ने वैसा किया था? इतने ज्यादा विलोपन और स्थानों के परिवर्तन पर किसी भी सदस्य का ध्यान अब तक नहीं जा सकेगा, जब तक कि वह एक मेहनती वकील की तरह दोनों की तुलना के लिए अथक परिश्रम नहीं करेगा।

डॉ. बक्शी टेक चंद (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैं अपने माननीय मित्र का ध्यान रिपोर्ट के पृष्ठ 9 की ओर दिलाना चाहूँगा, जहाँ मेरी असहमति की टिप्पणी छपी है। वहाँ मैंने कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तनों का जिक्र किया है। जिन परिवर्तनों को मैं महत्वपूर्ण

समझता हूँ, उन्हें किसी भी कीमत पर, और क्योंकि यह सुझाव मैंने ही दिया था, विधेयक को पुन: परिचालित किया जाना चाहिए ताकि जनता की राय प्राप्त की जा सके अथवा किसी भी स्थिति में उसे प्रवर समिति को सौंपा जाए। पृष्ठ 9 पर उन बड़े तथ्यों जिन विधेयक में जो परिवर्तन किए गए थे, का उल्लेख किया गया है, भले ही वे उतने विस्तृत नहीं हों, जैसा कि माननीय सदस्य आज अपने भाषण में व्यक्त कर रहे हैं। यह कहना सही न होगा कि प्रवर समिति के किसी भी सदस्य को उनकी जानकारी नहीं थी। नि:संदेह किसी के पास माननीय सदस्य जितना परिश्रम अथवा धैर्य नहीं है, परन्तु विषय उनके ध्यान के जा सका था। चूंकि उन्होंने मेरा नाम लिया है, मेरा कर्तव्य है कि मैं यह तथ्य सदन के समक्ष रखूं। अपनी असहमति की टिप्पणी में मैंने उत्तराधिकार के क्रम में किए गए उन परिवर्तनों का उल्लेख किया है, जिन्हें मैं महत्वपूर्ण समझता हूँ और जिनके संबंध में मैं अपने माननीय मित्र के साथ पूरी तरह सहमत हूँ।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद : इस स्पष्टीकरण के लिए मैं बहुत आभारी हूँ। न्यायिक प्रक्रिया का सार्वधिक अनुभव रखने वाले एक सम्मानीय सदस्य यह सोचते हैं कि ये महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं और उन्होंने सोचा कि वे इतने महत्वपूर्ण थे कि विधेयक को पुन: परिचालित किया जाना चाहिए। यही बात मैं कह रहा था कि प्रवर समिति के कम से कम एक सदस्य तो यह सोचते हैं कि वे परिवर्तन महत्वपूर्ण थे। उन्होंने उन परिवर्तनों को देखा था, किन्तु क्या इस ओर उनका ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया गया?

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : श्री बालकृष्ण शर्मा ने भी उस पर हस्ताक्षर किए हैं।

एक माननीय सदस्य : लेकिन उन्हें कोई न्यायिक अनुभव नहीं था।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : उन्हें सामाजिक अनुभव तो था।

माननीय अध्यक्ष : पंडित बालकृष्ण शर्मा की भी यही राय है। हालांकि डॉ. टेक चन्द का नाम लेना काफी होगा। कोई और नाम जोड़े जाने से उनके प्राधिकार और स्थिति में कोई गंभीर वृद्धि नहीं होगी। इन माननीय सदस्यों ने सोचा कि ये महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं और इसलिए उन्होंने सोचा कि विधेयक को पुन: परिचालित किया जाना आवश्यक है। विधेयक को अन्य भागों में भी परिवर्तन हैं, जिन्हें खोज पाना बहुत कठिन कार्य होगा।

विभागीय समिति द्वारा किए गए इन परिवर्तनों के आलोक में और डॉ. टेक चन्द की भारी भरकम टिप्पणियों के बाद, ये बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन थे, मैं सोचता हूँ कि इस मामले में अब कोई शक जाहिर नहीं किया जाना चाहिए कि इन परिवर्तनों पर पुनर्विचार करने अथवा इसे पुन: परिचालित करने के लिए विधेयक को प्रवर समिति के पास पुन: भेजा जाना चाहिए।

एक माननीय सदस्य : उसी प्रवर समिति को?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उसी प्रवर समिति को लेकर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। इसमें बहुत अच्छे और सच्चे व्यक्ति हैं, न्यायिक प्रक्रिया और कानून की समझ रखने वाले व्यक्ति हैं और जो कानून की विभिन्न धाराओं पर व्यावहारिक प्राधिकार रखने वाले लोग हैं। वास्तव में, प्रवर समिति में हर प्रकार की योग्यता का प्रतिनिधित्व है। प्रवर समिति पर मुझे पूर्ण विश्वास है और इस पर मेरा विश्वास खत्म नहीं हुआ है। मेरा कथन यह है कि इन मामलों की सावधानीपूर्वक छानबीन की जानी चाहिए और प्रत्येक परिवर्तन पर सावधानीपूर्वक चिंतन करना चाहिए और उन्हें सोच-समझकर स्वीकार करना चाहिए। महत्वपूर्ण परिवर्तन चुपचाप और सोच-समझकर किए गए। हमें कानूनी मंत्री द्वारा और प्रवर समिति द्वारा आश्वस्त किया गया है कि कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए हैं। एक ओर तो हमें सदन में सर्वश्रेष्ठ विधिक योग्यता प्राप्त व्यक्तियों की राय प्राप्त है कि ये महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं तथा दूसरी ओर, एक प्रकाण्ड कानूनी विद्वान कहते हैं कि उन्होंने बहुत सोच-विचार से परिवर्तन किए और, वहीं उसी समय यह भी कहते हैं, कि उन्होंने कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए हैं। यह गारंटी डॉ. अम्बेडकर ने अपने हस्ताक्षर के साथ स्वयं दी है। इस प्रकार प्रवर समिति हताश होकर आपस में ही बंट गई है। यदि दो ऐसे प्रसिद्ध प्राधिकारी एक व्यापक मुद्दे पर इस प्रकार भिन्न-भिन्न बातें करते हैं तो मैं सोचता हूँ कि इस मामले पर समिति के पुनर्विचार की आवश्यकता है और यही बात मैंने कही है। यद्यपि कानून मंत्री सोचते हैं कि ये महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं थे, तो शायद एक विवेकशून्य सदन ही उनसे सहमत होगा। किसी का वारिस होना एक व्यक्ति का एक महत्वपूर्ण अधिकार है। यह कहना कि किए गए परिवर्तन, महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं है, कुछ इस प्रकार कहना होगा, जो स्पष्टतया और वस्तुतः गलत होगा। अतः मैं कहता हूँ कि परिवर्तन महत्वपूर्ण होने के कारण और यह गारंटी दिए जाने के कारण कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए गए हैं, केवल इसी आधार पर विधेयक को प्रवर समिति के पास वापस भेजा जाना चाहिए या सकारात्मक दिशानिर्देशों के साथ इस प्रकार परिचालित किया जाना चाहिए कि सबका ध्यान इन परिवर्तनों की ओर आकर्षित हो सके और वे सावधानीपूर्वक, बुद्धिमानी से, तथा इच्छापूर्वक उन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार कर सकें। इसी तरह के कुछ अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन भी हैं।

श्री बी.एन. मुन्नावल्ली (बम्बई राज्य) : वह केवल एक ही तर्क बार-बार दोहरा रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : मैंने सोचा कि उन्होंने अपनी बात समाप्त कर दी है। यदि उनके पास कोई अन्य विषय न हो, तो वह बैठ सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरे पास कई अन्य गंभीर परिवर्तनों की जानकारी भी है। अतः मैं यह जानना चाहूंगा कि माननीय कानून मंत्री कब तक इस बात पर जोर देते रहेंगे कि कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुए हैं।

श्री खुर्शीद लाल (उपमंत्री-संचार) : तब तक, जब तक आप अपनी बात समाप्त नहीं करते।

माननीय अध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य एक वकील के रूप में अपने अनुभवों के आधार पर यह आशा कर सकते हैं कि जिसने इस विधेयक का प्रस्ताव रखा है, वह यह बात लेगा कि उसने जो भी किया वह गलत था?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं आपकी इस भारी-भरकम टिप्पणी का आदर करता हूँ। किन्तु यह कोई कानूनी आदलत नहीं है, जहां हम किसी का पक्ष लेते हैं। यह एक विधान परिषद है जहाँ हम किसी का पक्ष नहीं लेते। हम ईमानदारी से अपनी राय जाहिर कर सकते हैं, किन्तु हम यहाँ फीस लेने के बदले में किसी का पक्ष नहीं लेते। हम एक पक्ष अथवा दूसरे पक्ष की ओर जाने के लिए प्रतिबद्ध नहीं हैं। मैं कहता हूँ कि विधायिका में, एक कानून मंत्री यदि कोई गलती करे तो उसे विधायिका के प्रति उत्तरदायित्व निभाते हुए इस स्वीकारोक्ति को अपने कर्तव्य का अंग समझना चाहिए। अत: मुझे एक क्षीण-सी आशा भी है कि इन त्रुटियों एवं परिवर्तनों का अम्बार, माननीय कानून मंत्री को कुछ हद तक इस स्वीकारोक्ति के लिए प्रेरित करेगा कि उन्होंने महत्वपूर्ण परिवर्तन किए थे और तब मेरा अपने तर्क को आगे बढ़ाना अनावश्यक हो जाएगा। परन्तु इस तथ्य के आलोक में कि माननीय कानून मंत्री एक योद्धा की भांति बंदूक लेकर खड़े हैं—वह अपने जीवनकाल में एक योद्धा की भांति रहे हैं और वह अपने धैर्य और नैतिक गुणों के लिए प्रसिद्ध भी रहे हैं—और मैदान में डटे हुए हैं, मैं उन्हें एक क्षीण उम्मीद के साथ अधिकारिक परिवर्तनों के बारे में बताना चाहता हूँ, ताकि अंततः वह इन्हें मान लेने के लिए प्रेरित हो जाएँ।

श्री खुर्शीद लाल : मैं बाधा नहीं पहुंचाना चाहता, किन्तु क्या उनका आशय यही है कि वह इसी तरीके से अपनी बातें करते रहेंगे जब तक कि वह कानून मंत्री से यह स्वीकार नहीं करवा लेते कि उन्होंने गलती की थी?

माननीय अध्यक्ष : अकेले कानून मंत्री ही क्यों? संभवतः अन्य सदस्य भी उनसे सहमत होंगे क्योंकि वे पूरे सदन को अपने साथ लेकर चलते हैं।

श्री बी. दास : श्रीमान् आप ऐसे कैसे कह सकते हैं, हम उनकी आवाज बंद कर सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह इतना आसान नहीं है। श्रीमान्, मेरी आवाज दबाने के साथ ही मुझे धमकाया जा रहा है। मैंने अभी तक नहीं देखा है कि यहां किसी सदस्य ने मेरी आवाज को दबाया हो—मुझे अभी तक ऐसा कोई दिखाई नहीं दिया है। मैं सादर आमंत्रित करता हूँ कि कोई भी आए और मुझ पर चीखकर मेरी आवाज को दबा दे। वह स्वयं देख रहा होगा कि सदन में इतनी चीख-चिल्लाहट के बीच भी मुझे अपनी आवाज सुनाने के लिए किसी माइक्रोफोन तक की आवश्यकता नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : मेरा अनुरोध है कि सदन के भीतर इस चुनौती को स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : सदन के बाहर भी मुझे चुनौती देना, उनके लिए निरापद नहीं होगा।

श्री तजामुल हुसैन : आप नहीं चाहते कि हम बीच में बोलें, इसलिए मैं एक जानकारी पाने के लिए आपकी अनुमति चाहता हूँ। मैं अपने माननीय मित्र से यह जानना चाहता हूँ कि आज पहली अप्रैल है, क्या इसी कारण से वह इस विधेयक पर पूरे दिन के लिए चर्चा करते रहना चाहते हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : 'आल फूल्ड डे' (मूर्खता दिवस) पर यह प्रस्ताव लाने से संबंधित यह प्रश्न माननीय कानून मंत्री को संबोधित होना चाहिए!

माननीय अध्यक्ष : यह बात हरेक पर लागू होती है या नहीं? पर माननीय सदस्य अपना भाषण जारी रहने दें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : तथा हम मूल विधेयक के भाग II, की अगली धारा पर आते हैं।

डॉ. मॉन मोहन दास (पं. बंगाल : सामान्य) : श्रीमान् प्रतीत होता है कि माननीय सदस्य तैयार होकर नहीं आए हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं माननीय डॉ. साहब ही बात समझ नहीं पाया।

माननीय अध्यक्ष : आप अपनी बात जारी रखें। मुझे उम्मीद है कि वह कम से कम आज अपना भाषण समाप्त कर लेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं नहीं जानता।

माननीय अध्यक्ष : मैं केवल इतना कहूंगा कि महत्वपूर्ण परिवर्तनों के इस मुद्दे पर अभी तक काफी कुछ कहा जा चुका है। आखिरकार माननीय मंत्री जी इस विधेयक के प्रभारी नहीं है इसलिए केवल उन्हीं को संतुष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। उनके अपने विचार हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसका निर्णय सदन करेगा।

माननीय अध्यक्ष : हाँ, अंततः सदन ही इसका निर्णय करेगा। अतः माननीय सदस्य को एक सदस्य पर, चाहे वह कितना ही महत्वपूर्ण हो, अधिक समय व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं है। वह सदन को अपने साथ ले जाने की कोशिश करें। जैसा मैंने पहले भी कहा महत्वपूर्ण परिवर्तनों के मामले में काफी कुछ कहा जा चुका है। मैंने सोचा कि वह विवाह, तलाक और गोद लेने जैसे अन्य मूल मुद्दों का हवाला देने जा रहे हैं। मैं नहीं समझता कि माननीय मंत्री महोदय हठधर्मी होंगे और मैं आश्वस्त हूँ कि यद्यपि इस बारे में उनके विचार बहुत अच्छे होंगे, वे प्रतीक्षा करना चाहेंगे और देखेंगे कि दूसरे पक्ष से कितनी देर तक तर्क रखे जाते हैं और वे संतुष्ट हो सकते हैं। मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य अब मूल मुद्दों पर आएंगे। इस मुद्दे पर पहले ही काफी समय व्यतीत हो चुका है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे इतने धैर्य से सुनने के लिए मैं खुले दिन से कानून मंत्री के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ। मैं कहता हूँ कि मेरे पास परिवर्तनों को दर्शाने वाले अन्य तथ्य भी हैं, जिनका मैं संक्षिप्त विवरण दूंगा।

माननीय अध्यक्ष : परिवर्तनों की बात छोड़ दें। परिवर्तन हुए हैं। मैं इसे इस तरह कह सकता हूँ कि मैं किसी गोपनीय बात को छिपा नहीं रहा हूँ और जैसा मेरा विचार है सदन के समक्ष कुछ भी गोपनीय नहीं होता। प्रवर समिति में प्रस्तुत होने के बाद, जब कोई मामला सदन के समक्ष आता है और अगर प्रवर समिति कोई गलती करती है, तो सदस्य कह सकते हैं कि यह गलती है तथा गलती को ठीक किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए एक या दो मामलों के अलावा, प्रवर समिति में प्रत्येक सदस्य ने क्या कहा उसे सदन के समक्ष नहीं रखा जाना चाहिए, क्यों ये बातें द्रव्य रूप में होती हैं और इससे विघ्न और विद्वेष उत्पन्न हो सकता है। मैं ऐसा कह सकता हूँ। जहाँ तक प्रवर समिति का प्रश्न है, वहाँ किसी भी प्रारूप पर विचार किया जा सकता है। वहाँ प्रस्तुत प्रारूप मंत्रालय का था। उस समिति की रिपोर्ट के पैरा 2 के प्रारंभ में यह कहा गया है कि :

"विधान परिषद में प्रस्तुत हिंदू संहिता के प्रारूप की शुरूआत से पहले विभागीय स्तर पर कोई छानबीन नहीं की गई थी, और विधि मंत्रालय ने (जिसमें शीर्ष पद पर कानून मंत्री भी शामिल हैं), जिसके पास विधान परिषद् के पिछले सत्र के अंत तथा वर्तमान सत्र के आरंभ के बीच की अवधि में विधेयक की जांच-पड़ताल का अवसर भी था, अब एक संशोधित प्रारूप तैयार किया है..."

प्रारूप को प्रवर समिति के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और अध्यक्ष की व्यवस्था

यह है कि प्रारूप के साथ जो मूल विधेयक प्रवर समिति को भेजा गया था, जिसे हम समस्त संशोधनों की पूरी सूची मान लेंगे और जिसे कानून मंत्री प्रस्तुत करना चाहते थे, उस पर प्रवर समिति द्वार विचार किया गया था। सदस्यों को यह कहने का हक है कि विधेयक और उसमें शामिल धाराएँ गलत हैं, कि उन्होंने समाज में गड़बड़ी पैदा की है और यह कि प्रवर समिति द्वारा मूल विधेयक में किए गए परिवर्तनों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। मैं समझता हूँ कि इससे सदन को इस निष्कर्ष पर पहुंचने में मदद मिलेगी कि या तो संपूर्ण विधेयक अथवा उसकी विभिन्न धाराएं महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। इस मामले पर हम पहले भी काफी समय व्यतीत कर चुके हैं। पर इस मामले का स्पष्टीकरण आवश्यक है और मैं नहीं समझता कि यहां उपस्थित कोई भी सदस्य किसी विशेष मुद्दे पर हठधर्मिता दिखाना चाहता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं खुले तौर पर यह कह सकता हूँ कि मेरा दिमाग खाली बक्सा नहीं है बल्कि मैं खुले दिमाग का व्यक्ति हूँ।

माननीय अध्यक्ष : हम भी यही आशा करते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं उनका बहुत आभारी हूँ। श्रीमान्, मैं विधेयक के अन्य खंड पर आता हूँ। मैं सदन का ध्यान विभागीय विधेयक की धारा 102 की ओर आकर्षित करना चाहूंगा, जो मूल विधयेक की धारा 101 के तदनुरुप है। विभागीय विधेयक द्वारा इसकी पहली बार प्रस्तुति की गई है। प्रवर समिति ने कुछ परिवर्तन किए, किन्तु विभागीय समिति द्वारा इसमें एक गंभीर परिवर्तन किया गया। विभागीय विधेयक में यह व्यवस्था है कि यदि एक पुरुष और एक महिला की ही बराबरी पर खड़े हों, तो महिला की तुलना में पुरुष को दुगुना हिस्सा प्राप्त होगा। पर अंतिम विधेयक में दोनों को एक समान हिस्सा दिया गया है। जहां तक अंतिम विधेयक के न्याय का प्रश्न है, इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता, किंतु मैं कहना चाहता हूँ कि यह नई शुरुआत एक विचलन है।

माननीय अध्यक्ष : यदि, यह मान लें कि, 100 विचलन हैं तो क्या सभी 100 विचलनों को समाप्त किया जाना आवश्यक है? केवल कोई दस अथवा पन्द्रह से भी अधिक हैं, सांकेतिक तौर पर काफी होंगे। वह कुछ विचलनों को ले सकते हैं और यह कह सकते हैं कि इन कारणों से मामले को वापस प्रवर समिति को भेजा जाना चाहिए अथवा संपूर्ण मामला जनता की राय लेने के लिए भेजा जाना चाहिए। मैं सोचता हूँ कि माननीय सदस्य ने यह निष्कर्ष निकाला है कि जहां कहीं कोई विचलन है, विभिन्न मुद्दों के उस भाग का वे उल्लेख कर रहे हैं विचलन हैं और जो सूची परिचालित की गई है, उसमें विचलनों की एक सूची भी शामिल है, जिसका विस्तार तेरह पृष्ठों तक है, यद्यपि इसमें यह संदर्भ नहीं दिया गया है कि विचलन क्यों किए गए हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : विचलनों को नोट नहीं किया गया है।

माननीय अध्यक्ष : यह सच है कि उन्हें विचलनों के तरीके से नोट नहीं किया गया है। यह स्वीकार है कि विचलन हैं, किन्तु यह दर्शाने के के उद्देश्य से केवल कुछ महत्वपूर्ण लिए जा सकते हैं कि इन विचलनों के आधार पर विधेयक को पुनः प्रवर समिति को अथवा किसी अन्य प्रवर समिति को भेजा जाना चाहिए आवश्यक रूप से उस पर रायशुमारी के लिए पूरे देश में हर ओर भेजा जाना चाहिए। मैं सोचता हूँ कि हम उसी पर बहुत समय व्यतीत कर रहे हैं।

श्री बी. दास : श्रीमान्, मैं यह सब-कुछ बता चुका हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं एक दो सदस्यों के चिढ़ से बिल्कुल सहमत हूँ।

श्री बी. दास : श्रीमान्, वह उसी शब्द का प्रयोग कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं सदन का ध्यान विभागीय विधेयक की धारा 103 की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, जो धारा 102 के तद्नुरुप है।

माननीय अध्यक्ष : मैं इस संदर्भ में पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह एक महत्वपूर्ण मामला है।

माननीय अध्यक्ष : मैं माननीय सदस्य को केवल सुझाव दे सकता हूँ। मैं उनसे बहस नहीं कर सकता। मैं केवल यह कह सकता हूँ कि उदाहरणों में इजाफा नहीं करना चाहिए। उनके अनुसार उदाहरणों की संख्या काफी अधिक है, किन्तु यदि वह सोचते हैं कि वह एक तथ्य भूल गए हैं, जो अन्यों से अधिक महत्वपूर्ण है, तो वह उस तथ्य को उजागर कर सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : विभागीय विधेयक की धारा 103 मूल विधेयक की धारा 102 के समकक्ष है जो नजदीकी वारिस (एग्नेट) को पांच कोटियों तक सीमित कर देती है। इस परिवर्तन में उत्तराधिकार को केवल पांच कोटियों तक सीमित किया गया है। सूची में किसी उत्तराधिकारी के नाम के न होने की स्थिति में, हिंदू कानून के अनुसार सम्पत्ति नजदीकी वारिस को दी जाएगी, किन्तु नजदीकी वारिस की परिभाषा गंभीर रूप से सीमित करके पांच कोटियों तक कम कर दी गई है। अगली धारा, जो विभागीय विधेयक की धारा 104 है, मूल विधेयक की धारा 103 के समकक्ष है, इसमें सजातीय रिश्तेदारों (कॉग्नेट) को भी पांच कोटियों तक सीमित रखा गया है। हिंदू कानून की अवधारणा और मूल विधेयक के अनुसार यह एक गंभीर अंतर है। कोई भी नजदीकी रिश्तेदार, भले ही वह दूर के रिश्ते से जुड़ा हो, प्राथमिकता वाले उत्तराधिकारियों की अनुपस्थिति में

एक उत्तराधिकारी होगा। सजातीय रिश्तेदारों के मामले में भी नजदीकी रिश्तेदार के न होने पर सजातीय रिश्तेदार, भले ही दूर का हो, वारिस होगा। अतः सजातीय रिश्तेदारों के मामले में यह परिवर्तन बिल्कुल नया है। नजदीकी रिश्तेदार के मामले में यह मूल धारा के अनुसार एक गंभीर अंतर है। वहाँ कहीं भी यह उल्लेख नहीं यिा गया है कि सूचीबद्ध वारिसों के न होने की स्थिति में वे नजदीकी रिश्तेदार का रूख करेंगे, और उसके भी न होने की स्थिति में वे सजातीय रिश्तेदार का रुख करेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : कॉग्नेट अथवा एग्नेट?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कॉग्नेट। मेरा कहना है कि ये गंभीर परिवर्तन हैं। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार ये गंभीर नहीं है, क्योंकि परिवर्तन उनके द्वारा किए गए हैं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : गंभीर और महत्वपूर्ण परिवर्तन।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि आप चाहती हैं तो महत्वपूर्ण भी। मैं भी सोचता हूँ कि ये परिवर्तन मात्र महत्वपूर्ण नहीं है, अपितु गंभीर भी है। गंभीर थोड़ा और आगे चला जाता है। वास्तव में, यह अनेक व्यक्तियों के उत्तराधिकार के अधिकार को सीमित कर देता है।

माननीय अध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य अपनी बात सायं पांच बजे तक समाप्त कर देंगे? इस विषय पर काफी कुछ कहा जा चुका है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जी नहीं, श्रीमान्। कुछ सदस्यों को आश्वस्त करने के लिए इतना समय भी पर्याप्त नहीं है। मैं उन्हें पूर्णतया आश्वस्त करना चाहता हूँ।

श्री खुर्शीद लाल : तब आपको कयामत के दिन तक बहस करनी होगी।

माननीय अध्यक्ष : यदि वह अभी पांच घंटे तक आश्वस्त नहीं कर सके तो, अगले पांच घंटों में भी वह उन्हें आश्वस्त नहीं कर सकेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय कानून मंत्री खाली दिमाग की नहीं, खुले दिमाग की बात करते हैं और वहीं काफी देर में समझ सकेंगे।

----

(169)
चतुर्थ अनुसूची
(धारा 12 देखें)
विवाह का नोटिस

सेवा में,

हिंदू संहिता भाग-II के अन्तर्गत .... जिले के हिंदू विवाह के रजिस्ट्रार....................

हम हिंदू संहिता के भाग-II के अन्तर्गत आप को सूचना दे रहे हैं कि हम यहां दी गई तारीख से तीन महीने के अन्दर सिविल विवाह करना चाहते हैं।

नाम	अवस्था	रैंक या व्यवसाय	आयु	निवास स्थान	निवास की अवधि
'क' 'ख)	अविवाहित विधुर तलाकशुदा	भूस्वामी	...	...	...
'ग' 'घ'	अविवाहित विधवा	...	...	...	

साक्षी..............दिन .... महीना, 19

(हस्ताक्षर)

'क' 'ख'

'ग' 'घ'

तृतीय अनुसूची

(धारा 12 देखें)

विवाह का नोटिस

सेवा में,

हिंदू संहिता भाग-II के अन्तर्गत .... जिले के हिंदू विवाह के रजिस्ट्रार..................

हम हिंदू संहिता के भाग-II के अन्तर्गत आप को सूचना दे रहे हैं कि हम यहां दी गई तारीख से तीन महीने के अन्दर सिविल विवाह करना चाहते हैं।

नाम	अवस्था	रैंक या व्यवसाय	आयु	निवास स्थान	निवास की अवधि
'क' 'ख)	अविवाहित विधुर तलाकशुदा	भूस्वामी	...	...	...
'ग' 'घ'	अविवाहित विधवा	...	...	...	

साक्षी..............दिन .... महीना, 19

(हस्ताक्षर)

'क' 'ख'

'ग' 'घ'

(170)

पंचम अनुसूची

(खंड 17 देखें)

वर द्वारा की जाने वाली घोषणा

मैं 'क' 'ख' निम्नलिखित घोषणा करता हूँ :—

1. मैं इस समय अविवाहित हूँ। (या एक विधुर हूँ, जैसा भी मामला हो)
2. मैं हिंदू धर्म का पालन करता हूँ (या बौद्ध धर्म में विश्वास या जैन धर्म में, जैसा भी मामला हो।)
3. मैंने ·········· वर्ष की आयु पूरी कर ली है।
4. मैं 'ग' 'घ' (वधु) से हिंदू संहिता के भाग II के प्रतिबंधित संबंधों की किसी भी श्रेणी से संबंधित नहीं हूँ।

(और जब वर ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है:)

5. मेरे पिता 'ड' 'ढ' (या संरक्षक, जैसा मामला हो) ने मेरे और से 'ग' 'घ' के विवाह की अनुमति प्रदान कर दी है और प्रतिसंहरण नहीं किया है।
6. मुझे इस बात की जानकारी है कि यदि इस घोषणा में कोई भी कथन असत्य है और यदि मुझे कथन की जानकारी है या मेरा विश्वास है कि यह असत्य है या यह विश्वास करता हूँ कि यह सत्य नहीं है, तो मैं सजा और जुर्माने का इकदार होऊंगा।

(हस्ताक्षर) 'क' 'ख' (वर)

(वधु द्वारा की जाने वाली घोषणा)

मैं, 'ग' 'घ' निम्नलिखित घोषणा करती हूँ :—

1. मैं इस समय अविवाहित हूँ (या एक विधवा हूँ, जैसा भी माला हो।)
2. मैं हिंदू धर्म का पालन करती हूँ (या बौद्ध धर्म, सिख या जैन धर्म, जैसा भी मामला हो)
3. मैंने ·········· वर्ष की आयु पूरी कर ली है।
4. मैं 'क' 'ख' (वर) से हिंदू संहिता के भाग II में प्रतिबंधित संबंधों की किसी श्रेणी से भी संबंधित नहीं हूँ।

(और जब वधु ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो यदि विधवा हो)

5. मेरे पिता 'त' 'थ' (या संरक्षक, जैसा भी मामला हो) ने मेरे और 'क' 'ख' के विवाह की अनुमति प्रदान कर दी है और प्रतिसंहरण नहीं किया है।

6. मुझे इस बात की जानकारी है कि यदि इस घोषणा में कोई भी कथन असत्य है, और यदि मुझे इस कथन की जानकारी है, या मेरा विश्वास है कि यह असत्य है या विश्वास करती हूँ कि यह सत्य नहीं है, तो मैं सजा और जुर्माने की हकदार होऊंगी।

(हस्ताक्षर) 'ग' 'घ' (वधु)

चतुर्थ अनुसूची

(खंड 17 देखें)

वर द्वारा की जाने वाली घोषणा

मैं 'क' 'ख' निम्नलिखित घोषणा करता हूँ :–

1. मैं इस समय अविवाहित हूँ। (या एक विधुर हूँ, जैसा भी मामला हो)
2. मैं हिंदू धर्म का पालन करता हूँ (या बौद्ध धर्म, सिख या जैन धर्म, जैसा भी मामला हो।)
3. मैंने .... वर्ष की आयु पूरी कर ली है।
4. मैं 'ग' 'घ' (वधु) से हिंदू संहिता के भाग II के प्रतिबंधित संबंधों की किसी भी श्रेणी से संबंधित नहीं हूँ।

   (और जब वर ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो)

5. मेरे पिता 'ङ' 'ढ' (या संरक्षक, जैसा मामला हो) ने मेरे और 'ग' 'घ' के विवाह की अनुमति प्रदान कर दी है और प्रतिसंहरण नहीं किया है।
6. मुझे इस बात की जानकारी है कि यदि इस घोषणा में कोई भी कथन असत्य है और यदि मुझे कथन की जानकारी है या मेरा विश्वास है कि यह असत्य है या यह विश्वास करता हूँ कि यह सत्य नहीं है, तो मैं सजा और जुर्माने का हकदार होऊंगा।

(हस्ताक्षर 'क' 'ख' (वर)

(वधु द्वारा की जाने वाली घोषणा)

मैं, 'ग' 'घ' निम्नलिखित घोषणा करती हूँ :–

1. मैं इस समय अविवाहित हूँ (या एक विधवा हूँ, जैसा भी मामला हो।
2. मैं हिंदू धर्म का पालन करती हूँ (या बौद्ध धर्म, सिख या जैन धर्म, जैसा भी मामला हो)
3. मैंने .... वर्ष की आयु पूरी कर ली है।
4. मैं 'क' 'ख' (वर) से हिंदू संहिता के भाग II में प्रतिबंधित संबंधों की किसी श्रेणी से भी संबंधित नहीं हूँ।

(और जब वधु ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो यदि विधवा हो)

5. मेरे पिता 'त' 'थ' (या संरक्षक, जैसा भी मामला हो) ने मेरे और 'क' 'ख' के विवाह की अनुमति प्रदान कर दी है और प्रतिसंहरण नहीं किया है।

6. मुझे इस बात की जानकारी है कि यदि इस घोषणा में कोई भी कथन असत्य है, और यदि मुझे इस कथन की जानकारी है, या मेरा विश्वास है कि यह असत्य है या विश्वास करती हूँ कि यह सत्य नहीं है, तो मैं सजा और जुर्माने की हकदार होऊंगी।

(हस्ताक्षर) 'ग' 'घ' (वधु)

'क' 'ख' और 'ग' 'घ' जिनके नाम ऊपर दिए गए हैं, ने हमारी उपस्थिति में हस्ताक्षर

किए हैं। जहां तक हमारी जानकारी है, इस विवाह में कोई कानूनी बाधा नहीं है।

'छ' 'ज'

'झ' 'अ' तीन साक्षी

'ट' 'ठ'

(और जब वर या वधु ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो, विधवा के मामले को छोड़कर।)

'क' 'ख' या 'ग' 'घ' के पिता (या संरक्षककर्ता) (जैसा भी मामला हो) ने मेरी उपस्थिति और मेरी अनुमति से हस्ताक्षर किए हैं।

हस्ताक्षर 'ड' 'च'

पंजीयक

हिंदू विवाह भाग II

हिंदू संहिता, जिला ....

दिनांक .... दिन .... मास .... वर्ष ....

'क' 'ख' और 'ग' 'घ' जिनके नाम ऊपर दिए गए हैं, ने हमारी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए हैं। जहां तक हमारी जानकारी है, इस विवाह में कोई कानूनी बाधा नहीं हैं।

'छ' 'ज'

'झ' 'ञ' तीन साक्षी

'ट' 'ठ'

(और जब वर या वधु ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो, विधवा के मामले को छोड़कर।)

'क' 'ख' या 'ग' 'घ'; 'ड' 'ढ' (त, थ) उपर्युक्त 'क' 'ख' (या 'ग' 'घ' के पिता जैसा भी मामला हो) ने मेरी उपस्थिति और मेरी अनुमति से हस्ताक्षर किए हैं।

हस्ताक्षर 'ङ' 'च'

पंजीयक

हिंदू विवाह भाग II

हिंदू संहिता, जिला ....

दिनांक .... दिन .... मास .... वर्ष ....

(171)

छठी अनुसूची

(खंड 19 देखें)

रजिस्ट्रार का विवाह प्रमाण-पत्र

मैं 'ङ' 'च', प्रमाणित करता हूँ कि 'क' 'ख' और 'ग' 'घ' दिनांक .... मास .... वर्ष .... को मेरे समक्ष उपस्थित हुए और प्रत्येक ने मेरी और तीन विश्वसनीय साक्षियों की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए और हिंदू संहिता के भाग II की अपेक्षित घोषणा की तथा उक्त भाग के अन्तर्गत मेरी उपस्थिति में उनका विवाह विधिवत् रूप से संपन्न हुआ।

हस्ताक्षर 'ङ' 'च'

हिन्दू संहिता के भाग के अन्तर्गत ..... जिले के हिन्दू विवाह के रजिस्ट्रार

(हस्ताक्षर) 'क' 'ख'

'ग' 'फ'

'द' 'ज'

'झ' 'ञ'

'ट' 'ठ'

दिनांक....................... मास .... वर्ष ....

पंजीयक

हिंदू विवाह भाग II

हिंदू संहिता, जिला ....

दिनांक .... दिन .... वर्ष ....

पंचमी अनुसूची
(खंड 19 देखें)
रजिस्ट्रार का विवाह प्रमाण-पत्र

मैं 'ङ' 'च', प्रमाणित करता हूँ कि 'क' 'ख' और 'ग' 'घ' दिनांक .... मास .... वर्ष .... को मेरे समक्ष उपस्थित हुए और प्रत्येक ने मेरी और तीन विश्वसनीय साक्षियों की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए और हिंदू संहिता के भाग II की अपेक्षित घोषणा की तथा उक्त भाग के अन्तर्गत मेरी उपस्थिति में उनका विवाह विधिवत् रूप से संपन्न हुआ।

हस्ताक्षर 'ढ़' 'च'

हिन्दू संहिता के भाग के अन्तर्गत ..... जिले के हिन्दू विवाह के रजिस्ट्रार

(हस्ताक्षर) 'क' 'ख'

'ग' 'फ'

'द' 'ज'

'झ' 'त्र'

'ट' 'ठ'

दिनांक...................... मास .... वर्ष ....

पंजीयक

हिंदू विवाह भाग II

हिंदू संहिता, जिला ....

दिनांक .... वार .... वर्ष ....

(172)

सातवीं अनुसूची

(खंड 21 देखें)

रजिस्ट्रार का धार्मिक विवाह प्रमाण-पत्र

मैं 'ड' 'च', प्रमाणित करता हूँ कि 'क' 'ख' और 'ग' 'घ' आज मेरे समक्ष उपस्थित हुए और प्रत्येक ने मेरे और तीन विश्वसनीय साक्षियों की उपस्थिति में यहां हस्ताक्षर किए, घोषणा की कि उन्होंने हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार .... दिन ....मास .... वर्ष .... को विधिवत रूप से धार्मिक विवाह किया है और उनकी इच्छा के अनुसार, हिंदू संहिता के भाग II के अनुसार उक्त विवाह आज पंजीकृत किया गया है और यह विवाह दिनांक .... दिन .... मास .... वर्ष .... से प्रभावी होगा, वह तारीख जब धारा 21 के अन्तर्गत विवाह के पंजीकरण के लिए आवेदन किया गया था।

हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार हुए उनके विवाह के पश्चात् उनसे निम्नलिखित बच्चे पैदा हुए, जो वैध होंगे।

(यहां प्रत्येक बच्चे का नाम, उनकी जन्म तिथि के क्रमानुसार लिखें तथा उनके नाम के सामने उनकी जन्म तिथि लिखें)

हस्ताक्षर 'ड' 'च'

पंजीयक

हिंदू विवाह भाग II

हिंदू संहिता, जिला ....

(हस्ताक्षर) 'क' 'ख'

'ग' 'फ'

'द' 'ज' (तीन साक्षी)

'झ' 'त्र'

'ट' 'ठ'

दिनांक .... वार .... वर्ष ....

छठी अनुसूची

(खंड 21 देखें)

रजिस्ट्रार का सांस्कारिक विवाह प्रमाण-पत्र

मैं 'ङ' 'च', प्रमाणित करता हूँ कि 'क' 'ख' और 'ग' 'घ' आज मेरे समक्ष उपस्थित हुए और प्रत्येक ने मेरे और तीन विश्वसनीय साक्षियों की उपस्थिति में यहां हस्ताक्षर किए, घोषणा की कि उन्होंने हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार .... दिन ....मास .... वर्ष .... को विधिवत रूप से धार्मिक विवाह किया है और उनकी इच्छा के अनुसार, हिंदू संहिता के भाग II के अनुसार उक्त विवाह आज पंजीकृत किया गया है और यह विवाह दिनांक .... दिन .... मास .... वर्ष ....से प्रभावी होगा, वह तारीख जब धारा 21 के अन्तर्गत विवाह के पंजीकरण के लिए आवेदन किया गया था।

हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार हुए उनके विवाह के पश्चात् उनसे निम्नलिखित बच्चे पैदा हुए, जो वैध होंगे।

(यहां प्रत्येक बच्चे का नाम, उनकी जन्म तिथि के क्रमानुसार लिखें तथा उनके नाम के सामने उनकी जन्म तिथि लिखें)

वधु द्वारा की जाने वाली घोषणा

मैं 'ग' 'घ' निम्नलिखित घोषणा करती हूं-

1. मैं वर्तमान धर्म का पालन करती हूं (या एक विधवा, जैसा भी मामला हो)
2. मैं हिंदू धर्म का पालन करती हूं (या बौद्ध, सिख या जैन धर्म, जैसा भी मामला हो)
3. मैंने ....वर्ष की आयु पूरी कर ली है।
4. मैं 'क' 'ख' (वर) से हिन्दू संहिता भाग 2 में प्रतिबंधित संबंधों की किसी भी श्रेणी से संबंधित नहीं हूं।

   (और जब वधु ने 21 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो यदि विधवा हो)।
5. मेरे पिता 'त' 'थ' (या संरक्षक जैसा भी मामला हो) ने मेरे और 'क' 'ख' के विवाह की अनुमति प्रदान कर दी है, और प्रतिसंहरण नहीं किया है)।

6. मुझे इस बात की जानकारी है कि यदि इस घोषणा में कोई भी कथन असत्य है और इस कथन को जारी करते हुए मैं या तो यह जानती हूं या विश्वास करती हूं कि यह झूठ है या विश्वास नहीं करती कि यह सच है, तो मैं सजा और जुर्माने की हकदार होउंगी।

(हस्ताक्षर) 'ढ' 'च'

हिन्दू संहिता के भाग 2 के अन्तर्गत ... जिले के हिन्दू विवाह के रजिस्ट्रार।

(हस्ताक्षर) 'क' 'ख'

'ग' 'फ'

'द' 'ज' (तीन साक्षी)

'झ' 'त्र'

'ट' 'ठ'

सातवीं अनुसूची
अधिमानी वारिस
श्रेणी I
(खंड 98 देखें)

पुत्र; विधवा; पूर्वमृत्त पुत्र का पुत्र; पूर्वमृत्त पुत्र की विधवा; पूर्वमृत्त पुत्र के पूर्वमृत्त पुत्र का पुत्र, पूर्वमृत्त पुत्र के पूर्वमृत्त पुत्र की विधवा।

श्रेणी *II*
(खंड 98 देखें)

1. पिता; माता
2. (1) पुत्र की पुत्री, (2) पुत्री का पुत्र, (3) पुत्री की पुत्री
3. (1) पुत्र की पुत्री का पुत्र, (2) पुत्र की पुत्र की पुत्री, (3) पुत्र की पुत्री की पुत्री, (4) पुत्री के पुत्र का पुत्र, (5) पुत्री के पुत्र की पुत्री, (6) पुत्री की पुत्री का पुत्र, (7) पुत्री की पुत्री की पुत्री।
4. भाई, बहन।
5. (1) भाई का पुत्र, (2) बहन का पुत्र, (3) भाई की पुत्री, (4) बहन की पुत्री।
6. पिता के पिता; पिता की माता।
7. पिता की विधवा; भाई की विधवा।
8. पिता का भाई; पिता की बहन।
9. माता का पिता; माता की माता।
10. माता का भाई; माता की बहन।

स्पष्टीकरण : इस अनुसूची में भाई और बहन के मामलों में सहोदर रक्त के भाई या बहन शामिल नहीं है।

(173)

आठवीं अनुसूची

अधिमानी वारिस

श्रेणी I

(खंड 98 देखें)

पुत्र; विधवा* (क) पुत्री; पूर्वमृत्त पुत्र का पुत्र; पूर्वमृत्त पुत्र की विधवा; पूर्वमृत्त पुत्र के पूर्वमृत्त पुत्र का पुत्र, पूर्वमृत्त पुत्र के पूर्वमृत्त पुत्र की विधवा।

श्रेणी III

(खंड 98 देखें)

1. पिता, माता* (ख)
2. (1) पुत्र की पुत्री, (2) पुत्री का पुत्र, (3) पुत्री की पुत्री।
3. (1) पुत्र की पुत्री का पुत्र, (2) पुत्र की पुत्र की पुत्री, (3) पुत्र की पुत्री की पुत्री, (4) भाई, (5) बहन।
4. (1) पुत्री के पुत्र का पुत्र, (2) पुत्री के पुत्र की पुत्री, (3) पुत्र की पुत्री का पुत्र, (4) पुत्री की पुत्री की पुत्री।
5. (1) भाई का पुत्र, (2) बहन का पुत्र, (3) भाई की पुत्री, (4) बहन की पुत्री।
6. पिता के पिता; पिता की माता।
7. पिता की विधवा; भाई की विधवा।
8. पिता का भाई; पिता की बहन।
9. माता का पिता; माता की माता।
10. माता का भाई; माता की बहन।

स्पष्टीकरण : इस अनुसूची में भाई और बहन के मामलों में सहोदर रक्त के भाई या बहन शामिल नहीं है।

*डॉ. अम्बेडकर ने अपनी व्यक्तिगत प्रति में यह संशोधन किया था–(क) अविवाहित पुत्री, (ख) विवाहित पुत्री।

खंड - तीन

प्रवर समिति द्वारा

हिंदू संहिता के विधेयक को लौटाए जाने पर चर्चा

11 फरवरी, 1949
से
14 दिसम्बर, 1950

*हिंदू विवाह विधिमान्यता विधेयक

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैं प्रस्तुत करता हूँ "कि हिंदुओं, सिक्खों, जैनियों और उनकी विभिन्न जातियों तथा उप-जातियों के विवाहों को विधि-मान्य बनाने वाले विधेयक को प्रवर समिति को भेजा जाए, जिसके ज्ञान गुरुमुख सिंह मुसाफिर, सरदार हुकुम सिंह, श्री एम. अनन्तसयनम् आयंगर, श्री देशबंधु गुप्ता, श्रीमती जी. दुर्गाबाई, श्रीमती रेणुका रे, श्री रामनाथ गोयनका, डॉ. बक्शी टेक चंद, लाला अंचित राम, चौ. रणबीर सिंह, श्री महावीर त्यागी और प्रस्ताव्य सदस्य और समिति की बैठक के लिए कम से कम पांच सदस्य अनिवार्य रूप से उपस्थित होंगे।"

महोदय, आपकी अनुमति से इस प्रस्ताव को रखते हुए, इसके बारे में बताना चाहता हूँ कानून की वर्तमान स्थिति क्या है। इस समय, हिंदू, सिख और जैनों पर सभी मामलों में हिंदू कानून लागू होता है। जहां तक विवाह का संबंध है। इस समय हिंदू कानून के अनुसार विभिन्न जातियों के पुरुष तथा महिलाओं में विवाह विधिमान्य नहीं हैं, सिवाए बम्बई के जहां 'अनुलोम' विवाह की अनुमति है परन्तु 'प्रतिलोम' विवाह की अनुमति नहीं है। इलाहाबाद, मद्रास और कलकत्ता में भी उच्च न्यायालयों ने निर्णय दिया है कि 'अनुलोम' विवाह विधिमान्य नहीं है।

जहां तक विभिन्न धर्म के लोगों का संबंध है, मैं कहना चाहता हूँ कि इस मामले में भी स्थिति अनिश्चित है। रीति-रिवाजों के अनुसार किसी भी प्रकार के विवाह की अनुमति है जबकि हिंदू कानून के कड़े सिद्धांतों के अनुसार इसकी अनुमति नहीं हो सकती है। उदाहरण के तौर पर पंजाब में और कड़े हिंदू विवाह कानून के अनुसार विभिन्न समुदायों के बीच इसकी अनुमति नहीं है यहां तक कि करवारी और चन्द्रदारी विवाहों की अनुमति हैं, परन्तु कुछ स्थानों पर रीति-रिवाजों के अनुसार ऐसे विवाहों की अनुमति है। उदाहरण के तौर पर नेपाल में ऐसे विवाह विधि सम्मत हैं। पंजाब में, जहां जातिवाद नहीं है, न्यायालय द्वारा नहीं बल्कि समाज द्वारा सामान्यत: हिंदुओं और सिखों के बीच विवाह मान्य हैं। उनके बच्चों को भी उत्तराधिकारी माना है। जैसा कि कानून के अनुसार विवाह से मिलता है। पहले हिंदू और जैनियों के बीच विवाह नहीं होते थे परन्तु अब स्थिति बदल गई है और हिंदुओं और जैनियों के बीच भी विवाह होते हैं, विशेषकर जैन अग्रवालों और हिंदू अग्रवालों के बीच, परन्तु एक जैन अग्रवाल का विवाह एक शूद्र या ब्राह्मण के साथ मान्य नहीं है। जहां तक सब-डिविजन और उपजातियों का संबंध है, 1946 का अधिनियम पारित होने से पहले कुछ स्थानों पर समुदायों के सब-डिवीजनों के बीच विवाह वैध था और कुछ स्थानों पर अवैध था। परन्तु यह मुद्दे से हटकर हैं यदि सब डिवीजन और

*संविधान सभा, वाद-विवाद, खंड 1, 11 फरवरी, 1949, पृष्ठ 419-28

उपजाति एक ही है, तो यहां उपजाति शब्द का इस्तेमाल ठीक नहीं है। मुख्य जाति के सब-डिवीजन के सदस्यों के बीच विवाह को पहले ही विधिसम्मत बना दिया गया है। शेष के मामले में, उदाहरण के तौर पर, यदि भिन्न-भिन्न धर्मों और भिन्न-भिन्न जातियों के सदस्य विवाह करना चाहते हैं, तो ऐसे विवाह वैध नहीं है। इस समय लोगों की मांग है कि ऐसा होना चाहिए और भिन्न-भिन्न धर्मों और भिन्न-भिन्न जातियों के लोगों के बीच विवाह वैध बनाया जाए। इस समय ऐसे अनेक युवा पुरुष और युवा महिलाएं हैं जो अपनी जाति से बाहर विवाह करना चाहते हैं। जहां तक लोगों की राय का सम्बन्ध है, मुझे विश्वास है कि हम इस दिशा में एक ठोस नींव रख रहे हैं।

देश के हित की दृष्टि से, मैं सदन को बताना चाहता हूँ कि पंजाब में हिंदुओं और सिखों के बीच भेदभाव समाप्त हो जाए और वे एक बन जाएं, यदि सैकड़ों हिंदू और सिख लड़कियां और लड़के आपस में विवाह कर लें, तो यह समस्या समाप्त हो गई होती। वास्तव में, मेरा विश्वास है कि यदि हिंदुओं और मुसलमानों के बीच विवाह हुए होते, तो आज पाकिस्तान नहीं बनता। यदि अन्तर्विवाह को एक परंपरा के रूप में स्वीकार कर लें, तो मुझे विश्वास है कि भिन्न-भिन्न जातियों और धर्मों के बीच यह कटुता समाप्त हो जाएगी। मेरी समझ में नहीं आता कि हम इसे क्यों नहीं अपना सके हैं। यह कहा जा सकता है कि हिंदू धर्म के सिद्धान्त ऐसा नहीं करने देंगे, परन्तु हम विरोधी बातों को नहीं अपनाएंगे। मैं बताना चाहता हूँ कि महाभारत के श्लोक में लिखा है कि धरती पर बहुत ज्यादा क्षत्रिय नहीं हैं, इसलिए कुछ ब्राह्मणों को लाया जाए, जो प्रजनन करेंगे। हमारा धर्म और वैदिक अनुश्रुति हमें बताती है कि हिंदुओं में ऐसे विवाह कोई कम नहीं होते थे। वास्तव में, जाति प्रणाली रूढ़िबद्ध होने से पहले, हिंदुओं में अन्तर्जातीय विवाह पर कोई रोक नहीं थी। अतः इसमें सुधार लाने की दृष्टि से, मैं समझता हूँ कि यह कदम उठाने में कोई कठिनाई नहीं है।

परन्तु, इसके साथ ही, मैं कहना चाहता हूँ कि इस कदम से एक अधिकार मिल जाएगा। यह किसी को अपनी जाति से बाहर विवाह करने के लिए बाध्य नहीं करता। यदि एक व्यक्ति ऐसा चाहता है, यदि एक युवा पुरुष और एक युवा महिला ऐसा चाहते हैं, यदि उनके माता-पिता ऐसा चाहते हैं, तो उन्हें ये अधिकार मिलना चाहिए और उनके बच्चे वैध होने चाहिए। इस समय यदि एक हिंदू अपनी जाति के बाहर विवाह करना चाहता है, यह ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि वह झूठ का सहारा लेकर अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सकता। आर्य विवाह विधिमान्य अधिनियम के अन्तर्गत वह अपनी जाति से बाहर किसी हिंदू से विवाह कर सकता है। मान लो कोई व्यक्ति आर्य समाज से संबंधित नहीं है, तो वह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए झूठ का सहारा क्यों ले? अतः, कानून में इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि लोगों को यह कानूनी अधिकार मिलना चाहिए। मैं यह भी जानता हूँ कि विशेष विवाह अधिनियम, 1872 (1872 का अधिनियम III) के

उपबंधों के अनुसार एक हिंदू इसके असंशोधित उपबंधों के अन्तर्गत ऐसा कर सकता था : बशर्ते वह यह घोषित करे कि वह गैर-हिंदू हैं। एच.एस. गौड़ ने हिंदू संहिता के पृष्ठ 457 पर एक बहुत ही मजेदार विरोधाभास का उल्लेख किया है। यह कहता है :–

"इससे पता चलता है कि विशेष विवाह (संशोधन) अधिनियम ने एक विरोधाभास पैदा कर दिया है। यदि एक हिंदू अपने को गैर-हिंदू घोषित करके विवाह करता है, तो भी उस पर हिंदू कानून लागू होता है यदि वह घोषित नहीं करता है, तो वह हिंदू कानून के अन्तर्गत (हिंदू) नहीं रहता, जो कि एक पहेली है; एक हिंदू कब गैर-हिंदू होता है? इसका उत्तर है: जब वह विशेष विवाह (संशोधन) अधिनियम के अन्तर्गत विवाह कर लेता है।"

जब 1923 का अधिनियम पारित हुआ–मैंने उस समय की कार्यवाही पढ़ी है–तो ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. गौड़ की बात पर ध्यान नहीं दिया गया और उन्हें हालात के साथ समझौता करना पड़ा। यदि वे स्वतंत्र होते, तो इस स्थिति को कभी स्वीकार नहीं करते। विशेष विवाह (संशोधन) अधिनियम के अनुसार बहुत अद्भुत स्थिति है। यदि एक व्यक्ति अपने धर्म से बाहर विवाह करना चाहता है, मानो लो एक हिंदू, एक गैर-हिंदू से विवाह करता है, तो संशोधित अधिनियम के अंतर्गत उनके पूर्व अधिकार जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम के सीमा तक अप्रभावित रहते हैं। परन्तु इसके बावजूद भी यदि वे विवाह करते हैं, तो क्या होता है? जिस निर्योग्यता का उन्हें सामना करना पड़ेगा, मैं उसके बारे में गौड़ के हिंदू कानून द्वारा उसका वर्णन करता हूँ। "उनके पूर्वाधिकार जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम की सीमा तक अप्रभावित रहते हैं। उन्हें गोद लेने के अधिकार से वंचित होना पड़ता है। यदि इस प्रकार का विवाह करने वाला व्यक्ति एक दत्तक पुत्र हैं, तो उसे गोद लेने वाला पिता यदि चाहे दूसरी संतान गोद ले सकता है।" अतः जो व्यक्ति विचारा इस प्रकार का विवाह करना चाहता है, तो उसे दत्तक पुत्र के अधिकारों से वंचित होना पड़ता है और उसका पिता एक अन्य गोद लेने को सक्षम होता है। फिर "इस प्रकार के विवाह से संयुक्त परिवार के टूटने में अपना प्रभाव डालते हैं।" यह एक बहुत बड़ी अक्षमता है। यदि कोई व्यक्ति गैर-हिंदू से विवाह करना चाहता है, उसे संयुक्त परिवार के सरोकारों के मद्देनजर स्थगन करना पड़ता है। इसके बाद, उनकी सम्पत्ति का उत्तराधिकार तथा उनसे संतान की सम्पत्ति का उत्तराधिकार भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम द्वारा नियमित होता है। मेरा विनम्र प्रस्ताव है कि ऐसा कोई कारण नहीं कि हम इन अक्षमताओं के साथ विकास करें। क्योंकि एक व्यक्ति, गैर-हिंदू से विवाह कर इन मुसीबतों को सामना करे, जिससे पता चलता है कि उसे इन कानूनों को त्यागना पड़ेगा, जो उसे बहुत प्रिय हैं और जो उसे अपने वंशजों से उत्तराधिकार में मिले हैं। यह एक बहुत ही गलत उपबंध हैं और इससे धोखाधड़ी तथा अन्य बुराइयां पैदा होती हैं। इसमें कोई शक नहीं कि पुरानी स्थिति से नई स्थिति थोड़ी अच्छी है। मुझे ऐसे मामलों की जानकारी है, जिनमें आर्य समाजियों ने आर्य विवाह विधिमान्यकरण अधिनियम पारित होने से पहले विवाह किए परन्तु उन्होंने

वर्षों तक अपने आपको पति-पत्नी घोषित नहीं किया। वह यह घोषणा करने से डर रहे थे। उन्हें डर था कि उनके बच्चों के साथ क्या होगा? यह कह सकते हैं कि हिंदू संहिता विधेयक इस समय विचाराधीन है, अतः इस स्तर पर परीक्षण करने की कोई आवश्यकता नहीं है? मेरा अनुरोध है कि मुझे इस पर बोलने दिया जाए।

सबसे पहले मैं कहना चाहता हूँ कि मैं यह नहीं जानता कि हिंदू संहिता विधेयक कब पारित होगा। इसमें संदेह है कि यह इस सत्र में या अगले में या किसी अन्य सत्र में पारित होगा। हम नहीं जानते। दूसरी बात यह है कि यदि यह पारित हो जाता है, तो इससे हिंदू कानून के उन उपबंधों के लिए मार्ग प्रशस्त हो जाएगा, जिनका उल्लेख उसमें है और इससे कानून को पारित करने में मदद मिलेगी। उन अनेक लोगों का क्या होगा जो ऐसा कानून होने के कारण विवाह नहीं कर पाएंगे? या यदि एक व्यक्ति मर जाता है, तो क्या उसका सम्पत्ति का अधिकार प्रभावित नहीं होगा? इसके साथ ही,यदि यह विधेयक कानून के रूप में पारित नहीं होता है तो अनेक ऐसे मामलों जो इस कानून से संचालित होते हैं, नहीं होंगे। उन पर वर्तमान कानून लागू होगा और लोग पीड़ित होंगे। यदि हम ऐसी व्यवस्था नहीं करते, जिससे पूरा देश सुदृढ़ और एक बने, तो पूरे देश को नुकसार उठाना पड़ेगा।

यह कहा जा सकता है कि यह विधान का एक खंड है। हम सबको विधान के ऐसे खंडों की जानकारी है। हमें पता है कि 1946 में हमने जातियों के उपवर्गों में विवाह के विधि मान्यकरण के लिए अधिनियम बनाया था और इसके बाद बम्बई में द्विपत्नीक विवाह अधिनियम पारित हुआ और अनेक ऐसे विधेयक पारित हुए। मैं नहीं समझता कि इस विधेयक पर कोई आपत्ति करेगा। यह एक छोटा-सा उपाय है और यह प्रथम श्रेणी का विधेयक है। इसमें केवल यही व्यवस्था है कि पहले किए गए सभी विवाह वैध होंगे और भविष्य में ऐसे विवाह वैध होंगे। इसमें और अन्य किसी प्रकार का प्रस्ताव नहीं है। मैं सभा के समक्ष सीधा प्रस्ताव लाने का साहस नहीं कर सकता क्योंकि मुझे डर है कि यह सदन की परम्परा है कि इस प्रकार के उपाय प्रवर समिति को भेजे जाते हैं।

मुझे इस बात की चिंता है कि इस सत्र में इसे पारित कर पायेंगे ताकि जनता यह जाने कि हम एक वर्गविहीन समाज का निर्माण कर रहे हैं। मुझे यह पता है कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ उसे पसन्द नहीं किया जाएगा। मैंने अपने विचार समाचार-पत्रों में व्यक्त किये हैं। ये विचार आज मैंने सदन में पढ़े हैं परन्तु इस महत्वपूर्ण कार्य में हमें किसी से डरना नहीं चाहिए। यहां तक कि महात्मा गांधी ने कहा है कि हमारा समाज वर्गविहीन होना चाहिए। वर्ग समाज के निर्माण का उचित मार्ग है यदि हम इस प्रकार के उपाय करते हैं, तो लाभान्वित आर्थिक अधिकारों और राजनैतिक अधिकारों की जो लड़ाई है, वह समाप्त हो जाएगी और हमारा समाज एक वर्गविहीन समाज होगा। मेरा सदन से अनुरोध है कि आज इसे प्रवर समिति को भेजे जाने के बाद इसे इसी सत्र में पारित किया जाए।

माननीय अध्यक्ष : प्रस्ताव है कि :–

"कि हिंदुओं, सिखों, जैनियों और उनकी विभिन्न जातियों तथा उपजातियों के विवाह को विधिमान्य बनाने वाले विधेयक को प्रवर समिति को भेजा जाए, जिसके ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर, सरकार हुक्म सिंह, श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर, श्री देशबंधु गुप्ता, श्रीमती दुर्गाबाई, श्रीमती रेणुका रे, श्री रामनाथ गोयनका, डॉ. बक्शी टेक चन्द, लाला अंचितराम, चौ. रणबीर सिंह, श्री महावीर त्यागी और प्रस्ताव्य सदस्यों और समिति की बैठक के लिए कम से कम पांच सदस्य इसमें अनिवार्य रूप से उपस्थित होंगे।"

सामान्य परम्परा यह है कि सदन को रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने की तारीख निर्धारित की जाती है। रिपोर्ट प्रस्तुत करने की क्या तारीख निर्धारित की जाए?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : इस महीने के अंत तक अथवा 28 फरवरी तक।

माननीय उपाध्यक्ष : इसको 28 फरवरी, 1949 तक प्रस्तुत किया जाए।

श्री के. हनुमनथैया (मैसूर राज्य) : महोदय, मैं इस विधेयक का स्वागत करते हुए बहुत आनंदित हूँ। पंडित ठाकुर दास भार्गव ने इसके समर्थन में बहुत अच्छे तर्क दिये हैं। इसके समर्थन में और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। 1947 से हमारा नारा था 'आजादी' और महात्मा गांधी ने हमें 'भारत छोड़ों' का नारा दिया और आजादी मिलने के बाद सरदार पटेल ने संगठित होने का नारा दिया और वे इस काम को राजनैतिक मोर्चे पर कर रहे हैं और यह इस देश के लिए एक महानतम उपलब्धि है। (व्यवधान)

हमें सामाजिक मोर्चे पर भी यह कार्य करना है। मैं आपको यह ईमानदारी से कह रहा हूँ। भारत को विघटनकारी प्रवृत्तियों, जिन्हें हम देश के लिए ये साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों कहते हैं, ये सबसे बड़ा खतरा है। विवाह एक सुरक्षा कवच है, जो इन विभिन्नताओं के बावजूद अखण्डता और स्थायित्व बनाए रख सकते हैं। यह उपाय इन दूरियों को समाप्त करने के लिए एक शुरूआत है और यह हिंदू समाज को संगठित करेगा। मैं इन मानकों का दिल से स्वागत करता हूँ। मेरा प्रस्तावक से अनुरोध है कि वे अन्य सदस्य भी शामिल कर सकते हैं, मैं श्री मती एनी मैसकरीन, एम.ए.बी.एल. को भी प्रवर समिति में शामिल कर लें।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे उनका नाम शामिल करने पर कोई आपत्ति नहीं है।

श्री के.एम. मुंशी (बम्बई-जनरल) : मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ। मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने सहर्ष इसे एक छोटा मानक बताया है। परन्तु मेरा उनसे इस बात पर मतभेद है। यह एक बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण मानक है। यह अब नहीं बल्कि 40 वर्ष पूर्व पारित होना चाहिए था। जब पहली बार न्यायालयों में यह मामला उठाया गया तो न्यायालयों ने विभिन्न प्रान्तों में भिन्न–भिन्न जातियों के हिंदुओं के बीच

विवाह किसी न किसी कारण से अवैध बताया। परन्तु उन दिनों सरकार ने हिंदुओं को प्रगतिशील नहीं बनने दिया और 700 या 800 वर्ष पूर्व की पुस्तकों में दिये गये रिवाजों को ही प्रचलन में रखने पर बल दिया। मुझे एक मामला याद है। महोदय, मैं समझता हूँ कि यह 40 वर्ष पहले की बात है। बम्बई उच्च न्यायालय में एक ऐसी विधवा के विवाह की वैधता का मामला लाया गया था जिसके पति के कई वर्ष पहले मृत्यु हो चुकी थी और पोते-पोतियों की दादी बन चुकी थी। बम्बई उच्च न्यायालय ने उसके विवाह को अवैध बताया, क्यों वह अपने पति की तुलना में ऊंची जाति की थी। एक और ऐसा ही मामला था, जो चार वर्ष तक चला और जिसमें एक उच्च जाति के पुरुष का एक निम्न जाति की महिला के साथ विवाह को अवैध बताया गया था। तथ्य यह था कि श्री लालूभाई शॉ एक उदार जज थे, शायद मैं मुकदमा जीत जाता परन्तु कुछ प्रान्तों में 'अनुलोम' विवाह–जिसमें पति उच्च हिंदू जाति का और पत्नी निम्न हिंदू जाति की हो–विधिमान्य नहीं है। देश के कुछ भागों में हिंदुओं और जैनियों के बारे में भी यह प्रश्न उठा है। हिंदुओं और जैनियों में विवाह होते रहे हैं, परन्त वकीलों के पास उनकी राय जानने के लिए यह मुद्दा आता रहा है कि क्या एक हिंदू और एक जैन के बीच विवाह वैध है। ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका वर्षों पहले समाधान होना चाहिए था। परन्तु अब हम ऐसी स्थिति में पहुंच गए हैं कि इनका समाधान तुरन्त होना चाहिए।

मेरे माननीय मित्र, पंडित ठाकुर दास भार्गव ने पंजाब के मामले का हवाला दिया है। यह किसी प्रान्त विशेष का मामला नहीं है, इससे पूरा देश प्रभावित है। शिक्षा के कारण, आजादी के कारण भिन्न-भिन्न जातियों के बीच विवाह हो रहा है। परन्तु इस हिंदू कानून के सिद्धान्त के कारण उन्हें बड़ी कठिनाइयां झेलनी पड़ती हैं। दर्जनों ऐसे मामले हैं जिनमें पक्षकार केवल सिविल विवाह अधिनियम के अन्तर्गत विवाह स्वीकार करते हैं, वे ऐसा करना नहीं चाहते; वे इससे नफरत करते हैं, वे अपने संयुक्त परिवार को तोड़ना नहीं चाहते; वे नहीं चाहते कि उन पर उत्तराधिकार अधिनियम लागू हो, वे अपने माता-पिता से अलग नहीं होना चाहते, परन्तु कानून की इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के कारण उन्हें सिविल विवाह अधिनियम के अन्तर्गत विवाह करना पड़ता है। अतः मेरा कहना है कि यह बहुत दुखदायी है और इसका तुरन्त समाधान किया जाना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि प्रस्तावक ने 28 फरवरी के बारे में आपका सुझाव स्वीकार कर लिया है। यह विधेयक यथासंभव पारित होना चाहिए।

मैं एक छोटी सी बात और कहना चाहूंगा और मुझे विश्वास है कि यह कभी भी प्रवर समिति में दूर कर ली जाएगी। जो मैं कहना चाहता हूँ, वह इस प्रकार है :–

"हिंदुओं के बीच कोई भी विवाह, चाहे वे किसी धर्म, जाति या उपजाति के हों, अवैध नहीं है या अवैध नहीं माना जाएगा, चाहे हिंदू नियम व्याख्या या कोई रीति-रिवाज इसके विपरीत हो।"

इससे संभवत: यह निर्धारित हो जायेगा कि यह उपबंध केवल उन्हीं पक्षों पर लागू है, जो जीवित हैं। यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए जो विवाह पहले हो चुके हैं और जिनमें उत्तराधिकार का मामला उठा है, वे इस उपबंधता के बाद वैध होंगे। मुझे विश्वास है कि प्रवर समिति में उचित संशोधन को लिया जाएगा। महोदय मैं प्रत्येक का हार्दिक स्वागत करता हूँ।

श्री देशबंधु गुप्ता (दिल्ली) : सदन में जिस प्रस्ताव की चर्चा हो रही है, मैं उसका समर्थन करता हूँ। जैसा कि मेरे माननीय मित्र मुंशी जी ने कहा है, मैं समझता हूँ कि यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण उपाय है। वर्षों से हिंदुओं में एकता इसलिए नहीं हो सकी, क्योंकि हिंदू समाज जातियों में विभाजित है। समय आ गया है कि बिना देर किए अब हमें इसी तरह के उपाय करने चाहिए, जिससे ये कृत्रिम बाधाएं दूर हो जाएं। मैं ऐसे मामले जानता हूँ, जिनमें ऐसे निकट मित्रों को न चाहते हुए भी सिविल विवाह अधिनियम के अन्तर्गत विवाह करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने अपना ऐसा जीवनसाथी चुना था जो उनकी जाति का नहीं था। आप जानते हैं कि आर्य समाज 'गुण' और कर्म के आधार पर जाति प्रणाली का समर्थक रहा है और इस तथ्य के बावजूद भी आर्य समाज के संस्थापक ने यह कहा कि जन्म से कोई जाति नहीं होती। आर्य समाजियों को भी अन्य लोगों की तरह इसका नुकसान उठाना पड़ा।

वर्षों के संघर्ष के बाद आर्य विवाह विधि मान्यकरण अधिनियम पारित हुआ। परन्तु आम राय प्राप्त करते हुए मैंने पाया कि हिंदुओं ने काफी प्रगति की है और न केवल आर्य समाजी बल्कि कुछ हिंदू भी जन्म से जाति की इस प्रणाली को मान्यता प्रदान नहीं करते। अत: इसका कोई कारण नहीं है कि हम आर्य विवाह विधि मान्यकरण या सिविल विवाह अधिनियम को मानें। आज, लोगों में जागृति आई और जब एकता के बीच और राष्ट्रीय भावना के बीच जातियां दीवार बनकर खड़ी हैं, उसे तोड़ा जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के उपाय में विलंब नहीं किया जाना चाहिए।

यह कहा जा सकता है कि हिंदू संहिता बन रही है, इसलिए खंडों में कानून बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु मैं और मेरे मित्र यह समझते हैं कि इस उपाय, जो हिंदू संहिता में दिए गए सुधारवादी विचारों का विरोध नहीं करता, को लाने में देर नहीं करनी चाहिए। यद्यपि माननीय डॉ. अम्बेडकर चाहते हैं कि हिंदू संहिता कानून के रूप में इसी सत्र में पारित हो जाए। परन्तु हमारे में से कुछ लोग इससे सहमत नहीं हैं। इसमें समय लगेगा। इसमें कुछ विवादास्पद खंड हैं और यह एक महत्वपूर्ण उपाय है। अत:, मैं अनुरोध करता हूँ कि इसका स्वागत किया जाना चाहिए और इसमें विलंब नहीं करना चाहिए।

मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकर दास भार्गव द्वारा रखे गए प्रस्ताव का मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ और आशा करता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर इसे स्वीकार करेंगे और हिंदू समाज के लिए बहुत महत्वपूर्ण उपाय को सदन इसी सत्र में पारित करेगा।

डॉ. बख्शी टेकचन्द (पूर्वी पंजाब : जनरल) : मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के इस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत करता हूँ कि इस विधेयक को प्रवर समिति को भेजा जाए। इस विधेयक को सदन के बहुत से भागों का समर्थन मिला है और कोई इसका विरोध नहीं करेगा।

मैं कहना चाहूँगा कि यह विधेयक एक नया उपाय है। इसी प्रकार का एक विधेयक श्री विट्ठलभाई पटेल द्वारा 1919 में इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल में प्रस्तुत किया गया था। उस विधेयक पर राय जानने के लिए वितरित किया गया था। निःसंदेह भिन्न-भिन्न प्रकार के मत प्रकट किए गए। रूढ़िवादियों ने अधिकृत लोगों, कर्मचारियों ने उसका विरोध किया, परन्तु अनेक लोगों और सोसाइटियों ने इसका समर्थन किया। परन्तु विचार के लिए काउंसिल में प्रस्तुत किए जाने से पहले मोंटगू चेम्सफोर्ड रिफार्मस् लागू हो गए और काउंसिल भंग कर दी गई तथा यह विधेयक रद्द हो गया। इसके पश्चात् डॉ. गौड़ ने 1923 में 1872 के पुराने विधेयक में संशोधन करने का प्रयास किया था, परन्तु तब भी इसका विरोध हुआ था और कुछ विशेष संशोधन ही किए गए। इसमें केवल यह किया गया था कि अलग-अलग जातियों और उपजातियों के हिंदू विवाह कर सकते थे परन्तु सांस्कारिक विवाह की अनुमति नहीं थी। जहां तक सांस्कारिक विवाह का संबंध है हिंदू कानून के अन्तर्गत भिन्न-भिनन प्रांतों में भिन्न-भिन्न स्थिति है। जैसे कि चिह्नित किया गया है, कुछ प्रान्त अनुलोम विवाह की अनुमति देते हैं, कुछ नहीं देते। जिन प्रान्तों में अनुलोम विवाह की अनुमति नहीं है, उनके बारे में न्यायालयों ने निर्णय लिया कि यद्यपि कुछ स्मृतियों में अनुलोम विवाह की अनुमति है, परन्तु यह प्रथा प्रचलन में नहीं है और उनको अब मान्यता नहीं है। लगभग सभी प्रान्तों में प्रतिलोम विवाह अवैध हैं। पंजाब में और कुछ अन्य प्रान्तों में रीति-रिवाज ही नियम हैं और कुछ अन्य प्रान्तों में रीति-रिवाज ही नियम हैं और कुछ जातियों में विवाह की अनुमति है परन्तु कुछ अन्य जातियों में इसकी अनुमति नहीं है। मैं यह समझता हूँ कि अब समय आ गया है और हमें कड़े कदम उठाते हुए इस उपाय को कानूनी रूप प्रदान किया जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि हिंदू संहिता जो हमारे सामने प्रस्तुत है, में ऐसे नियम हैं जो उसे कार्यान्वित/प्रभावी बना सकेंगे। हिंदू कोड बिल एक व्यापक मानक है जो विविध विषयों को समाहित किए है और व्यापक क्षेत्र को समेटे हुए है। इसके भी कुछ भाग का विरोध किया जा रहा है। पता नहीं इस विधेयक को पारित होने में कितना समय लगेगा और यह किस रूप में पारित होगा या यह पारित भी होगा। (**श्री एल. कृष्णस्वामी भारती :** यह पारित होगा।) निश्चित तौर पर इसमें समय लगेगा। जिस तरह का मुद्दा है उसे शीघ्रता से पारित न करने का कोई कारण भी नहीं है। इससे अधिकतर लोग सहमत हैं। अतः मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।

श्री महावीर त्यागी (उत्तर प्रदेश : सामान्य) : मैं भी इस विधेयक का समर्थन करता हूँ। जैसा कि मेरे मित्र माननीय मुंशी जी ने कहा है, यह एक व्यापक सुधार है।

साम्प्रदायिक मतभेदों के कारण भारत बहुत लम्बे समय से नुकसान उठा रहा है। इन सभी मतभेदों का मूल विवाह और इसके परिणाम चुनाव में दिखाई देते हैं। क्योंकि विवाह के समय ही मुख्य रूप से कोई किसी दूसरे की जाति की पूछताछ करता है। जब भी विवाह होते हैं, जातियों की पूछताछ की जाती है। दूसरा अवसर तब आता है, जब कोई चुनाव में खड़ा होता है। तब भी जातियों की पूछताछ की जाती है। अब हमने संयुक्त मतदाता सूची बनाने का निर्णय किया है और कुछ हद तक इस साम्प्रदायिक बुराई को दूर किया है। इस प्रकार राजनैतिक दृष्टि से हम सही दिशा में बढ़ रहे हैं। जैसा कि मेरे मित्र श्री हनुमनतैया ने अभी कहा है कि इसका श्रेय सरदार पटेल को जाता है, जिन्होंने देश में हमें राजनैतिक संगठन प्रदान किया। इस मजबूती के बाद जरूरत है, सामाजिक संगठन की। यह विधयेक इस जरूरत को पूरा करेगा। मुझे विश्वास है कि यदि यह विधेयक पारित हो जाता है, तो विवाह मुक्त रूप से होने लगेंगे। मैं मुक्त विवाह में विश्वास रखता हूँ। अब भारत आजाद है, अतः विवाह करने की भी आजादी होनी चाहिए। इस पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए। मुझे इस बात पर खेद है कि यह विधेयक हमारे जीवनकाल में बहुत देर से आया। परन्तु हमें अपनी आगामी पीढ़ियों के अमल करने के लिए इसे पारित कर देना चाहिए। मुझे आशा है कि इस अधिनियम से मिलने वाली आजादी का देश की जनता लाभ उठाएगी। मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत करता हूँ।

श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : मैं भी इस विधेयक का तथा इसे प्रवर समिति को सौंपने का हार्दिक स्वागत करता हूँ। मेरे दिमाग में एक बात को लेकर दृढ़ निश्चयी हूँ। हमारी राष्ट्रीय भावना के रास्ते में जातिप्रथा एक बहुत बाधा है। जब तक यह प्रथा जारी रहेगी, हिंदू समुदाय के विभिन्न वर्ग और गैर-मुस्लिम समुदाय के विभिन्न वर्ग एक नहीं हो सकते और राष्ट्रीय भावना को उसकी संवेदनशीलता के साथ ग्रहण नहीं कर सकते। जब तक एक व्यक्ति के भी मन में यह भावना रहेगी कि वह अपने पुत्र या पुत्री का विवाह अपने पड़ोसी के पुत्र या पुत्री से नहीं कर सकता, वे एक नहीं हो सकते। मैं समझता हूँ कि इस विधेयक को पारित करने से यह बाधा दूर हो जाएगी। यह बंधुत्वभाव ही राष्ट्रीय भावना का आधार है और मैं इस विधेयक का हार्दिक स्वागत करता हूँ और आशा करता हूँ कि यह यथासंभव शीघ्रातिशीघ्र पारित हो जाएगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : जहां तक इस विधेयक का संबंध है, मेरे और इस विधेयक के प्रस्तावक मेरे मित्र में इस कारण से कोई मतभेद नहीं हो सकता कि यह विधेयक उस हिंदू संहिता का एक छोटा-सा भाग है, जिसे मैं प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरी आपत्ति केवल इस बात पर है कि जब विधानमंडल ने सिद्धांत रूप से यह बात स्वीकार कर ली है कि हिंदू कानून को संहिताबद्ध किया जाना चाहिए, तो खंडों में विधान बनाना गलत है। मुझे इस विधेयक के सिद्धांतों पर कोई आपत्ति नहीं

है। वास्तव में यही सिद्धान्त हिंदू संहिता में दिए गए हैं। अतः मेरे माननीय मित्रों को मेरा सुझाव है कि वे या तो इसे वापस ले लें या इस विधेयक पर विचार करना मुल्तवी कर दें ताकि हमें सही रूप से पता लग जाए कि हिंदू संहिता का क्या होगा? इस बात को ध्यान में रखते हुए कि मैं हिंदू संहिता प्रस्तुत कर रहा हूँ और सदन के सामने एक विधेयक विचार के लिए है, जैसा कि प्रवर समिति ने रिपोर्ट की है, तो मैं इस सुझाव के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता।

चौ. रनबीर सिंह : खड़े हुए।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : उन्हें बोलने की अनुमति कैसे दी जा सकती है।

आगे न बोलने का प्रस्ताव पेश कर दिया गया है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने डॉ. अम्बेडकर को बोलने की अनुमति दी है। और वे प्रायोजक नहीं हैं। प्रश्न नहीं पूछा गया।

चौ. रनबीर सिंह (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : (हिंदी भाषण का अंग्रेजी अनुवाद) उपाध्यक्ष महोदय, मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ क्योंकि मैं एक हिंदू हूँ और प्रारंभ से ही इस विधेयक में दिए गए सिद्धांतों में विश्वास करता हूँ। यदि हिंदुओं में कोई ऐसा समुदाय है, जिसने अपने समुदाय से बाहर संबंध स्थापित किये हैं और कोई झगड़ा नहीं हुआ है, जो वह जाट समुदाय है। यह सच है कि कुछ असहमतिओं के तत्व थे और सामाजिक दबाव भी था, परन्तु वे नगण्य हैं। वास्तव में इस विधेयक से देश में वे सिद्धांत स्थापित होंगे जिनमें हम सदियों से विश्वास करते आये हैं। इसलिए मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ।

दूसरे, जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने कहा है, इससे आपसी विवाद समाप्त हो जाएंगे, जिनके कारण हम गुलाम बने। छोटी रियासतों का एकीकरण करके सरदार पटेल ने देश को संगठित बनाया है और जिससे इस समस्या का समाधान हो गया है। यह विधेयक हमारी सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए बहुत अच्छा है।

जहां तक हिंदू संहिता विधेयक का संबंध है, वह एक बहुत बड़ी चीज है। अभी यह स्पष्ट नहीं है कि यह देश या यह सदन इसे स्वीकार करेंगे। इसमें कुछ ऐसे उपबंध हैं, जिन पर हमारे नेताओं में मतभेद हैं। अतः यही समझ में नही आता कि यह कहाँ तक सही है कि इस विधेयक को स्थगित कर दिया जाए या इसे अस्वीकृत कर दिया जाए क्योंकि यह हिंदू संहिता विधेयक का एक भाग है और हिंदू संहिता पारित होने पर यह भी उसमें पारित हो जाएगा यदि वह पारित नहीं हुआ, यह विधेयक के पारित होने की संभावना हो सकती है। इन शब्दों के साथ मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ।

श्री के.एम. मुंशी : मुझे डॉ. अम्बेडकर द्वारा उठाए गए एक मुद्दे का उत्तर देने की अनुमति देने की कृपा करें।

एक माननीय सदस्य : पंडित भार्गव उसका उत्तर दे सकते हैं?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे प्रसन्नता है कि सदन के सभी पक्षों ने इस विधेयक का समर्थन किया है। यह ऐसा उपाय है, जिस पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होनी चाहिए और मुझे प्रसन्नता है कि इसे सबने पंसद किया है। एक आपत्ति उठाई गई है कि जब तक हिंदू संहिता पर चर्चा चल रही है, तब तक इस विधेयक पर आगे नहीं बढ़ा जाए। यदि इस विधेयक में दिये गये सिद्धांत और हिंदू कोड में दिए गए सिद्धांत एक-दूसरे के विपरीत हैं, तो यह आपत्ति उठाना ठीक है, परन्तु जब दोनों के सिद्धांत एक जैसे हैं तो यदि इस विधेयक को पहले पारित कर दिया जाता है, हिंदू संहिता को पारित करने का मार्ग प्रशस्त हो जाएगा। यह बात समझ में नहीं आती कि इस विधेयक को पारित करने से हिंदू संहिता को पारित करने में कैसे दिक्कत आ जाएगी, बल्कि इससे तो उसे पारित करने की गति और तेज हो जाएगी। मैं यह पूछना चाहता हूँ कि क्या कोई ऐसा कानून या परम्परा या नियम है जिसमें यह दिया गया हो कि जब हिंदू संहिता जैसे विस्तृत विधेयक पर चर्चा जारी हो, तो दूसरा विधेयक पारित नहीं हो सकता। ऐसी कोई परम्परा नहीं है। यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि जब एक उपाय में एक दूसरे उपाय के मुद्दे शामिल हैं, तो दूसरे उपाय को पारित नहीं किया जा सकता।

बक्शी टेकचन्द ने बताया है कि यह उपाय 1919 के विधेयक की विषय-वस्तु था और यह विधेयक हमारे माननीय प्रेसीडेंट वी.जे. पटेल के नाम से था। जहां तक हिंदू संहिता का संबंध है, यह उपाय बहुत पहले उठाया गया था। इस प्रकार के उपाय में यदि तकनीकी खामियां हैं भी, तो ये नहीं उठाई जानी चाहिए। यदि हिंदू संहिता पारित नहीं हुई, तो उन हजारों पुरुषों और महिलाओं का क्या होगा, और इस सदन में इस पर खंडवार चर्चा नहीं हो रही है और यह सितम्बर या अक्तूबर में होगी और इस सत्र में यह पारित नहीं होगा, क्योंकि यह एक विवादास्पद विधेयक है और एक वर्ष भी लग सकता है और हजारों युवा पुरुषों और महिलाओं का क्या होगा जो इस विधेयक के उपबंधों के अन्तर्गत विवाह करने के इच्छुक हैं और देश को मजबूत बनाने के प्रयासों का क्या होगा?

महोदय, यह एक मजाक का मामला नहीं है। मैं तो डॉ. अम्बेडकर की मदद कर रहा हूँ क्योंकि उनका विवाह भी इसी विधेयक के द्वारा ही वैध होगा। वे इस पर क्यों हंस रहे हैं? यह उन पर लागू हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। यदि खामियां होंगी तो दूर कर ली जाएंगी। मैं जानता हूँ कि सैकड़ों लोग इस विधेयक के उपबंधों के अन्तर्गत विवाह करना चाहते हैं और क्या इस नियम के अंतर्गत विवाह करना गलत है? कोई भी इस विधेयक की निंदा कर सकता है, इस सत्र में इसके पारित होने में

बाधा डाल सकता है। यदि यह विधेयक इस सत्र में पारित नहीं होता है, तो हमारे सभी प्रयास और गांधी जी के सभी प्रयास विफल हो जाएंगे। अतः मेरा डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध है, वे अपनी आपत्ति को वापस ले लें और इस विधेयक को यथासंभव पारित करने के लिए सहमत हो जाएं क्योंकि इससे उन्हें हिंदू संहिता के संगत भाग को पारित कराने में सहायता मिलेगी।

श्री के. हनुमन्तैया : मैंने श्रीमती एनी मैसकरीन का नाम सुझाया था, क्या माननीय सदस्य ने उसे स्वीकार कर लिया है?

माननीय उपाध्यक्ष : हाँ, मैं समझता हूँ कि माननीय विधि मंत्री जानना चाहते हैं कि कितने लोग प्रतीक्षा सूची में हैं।

प्रश्न है कि :–

"कि हिंदुओं, सिखों, जैनियों और उनकी विभिन्न जातियों तथा उपजातियों के विवाहों को विधिमान्य बनाने वाले विधेयक को प्रवर समिति को भेजा जाए, जिसके ज्ञानी गुरुमुख सिंह मुसाफिर, सरदार हुक्म सिंह, श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर, श्री देशबंधु गुप्ता, श्रीमती दुर्गाबाई, श्रीमती रेणुका रे, श्री रामनाथ गोयल, डॉ. बक्शी टेक चन्द, लाला अचिंतराम, चौ. रणबीर सिंह, श्री महावीर त्यागी और प्रस्तावक सदस्यों को और समिति की बैठक के लिए कम से कम पांच सदस्य इसमें अनिवार्य रूप में उपस्थित होंगे।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

*हिंदू संहिता – जारी

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : खड़े हुए।

श्री जसपतराय कपूर (यू.पी. : सामान्य) : अध्यक्ष महोदय, मेरा एक व्यवस्था जन्य प्रश्न है और यदि यह स्वीकार कर लिया जाता है, तो पिछले सत्र में श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा उठाए गए व्यवस्था के प्रश्न पर और आगे चर्चा बंद हो जाएगी।

अत: मुझे व्यवस्था का प्रश्न उठाने की अनुमति दी जाए।

माननीय उपाध्यक्ष : पंडित ठाकुर दास भार्गव बोलने के लिए खड़े हुए हैं। पहले उनकी बात सुनी जानी चाहिए। मुझे नहीं पता वे क्या कहना चाहते हैं। व्यवस्था जन्य प्रश्न पर मेरे विचार हैं परन्तु पंडित ठाकुर दास भार्गव की बात पहले सुनी जाएगी।

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्व पंजाब : सामान्य) : महोदय, पिछली बार जब डॉ. अम्बेडकर ने प्रस्ताव पेश किया था, तो श्री नजीरुद्दीन अहमद ने व्यवस्थाजन्य प्रश्न उठाया था कि जिस विधेयक पर प्रवर समिति ने विचार किया था, वह विधेयक सदन द्वारा भेजा गया विधेयक नहीं था। जब इस मुद्दे पर विचार चल रहा था, तो मैंने आपसे विचार करने के लिए कुछ आधार बताए थे कि क्यों वह व्यवस्थाजन्य प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण था। उस समय आपने चर्चा बंद कर दी थी और मामले को छोटा कर दिया था, जैसा कि 31 अगस्त 1948 की कार्यवाही के पृष्ठ 778 पर दिया गया है। तब आपने कहा था कि रिपोर्ट के पृष्ठ 779 पर दिए गए प्रश्नों में से दो-तीन पर उचित समय पर विचार किया जाएगा। वे दो प्रश्न ये थे कि क्या प्रवर समिति ने अनोखा तरीका अपनाया है या उसने क्षेत्राधिकार से बाहर जाकर कार्य किया है। ये वे दो प्रश्न थे जब चर्चा चल रही थी, तो आपने निर्णय किया, जैसा कि पृष्ठ 780 पर दिया गया है, कि वे सभी तथ्यों का अध्ययन करेंगे और उसके बाद अपना निर्णय देंगे। मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा उठाए गए व्यवस्था जन्य प्रश्न के बारे में आपके विचार के लिए कुछ बातें रखना चाहता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : रिपोर्ट को देखने पर पता चला कि मैंने निम्नलिखित कहा था–मेरे पास रिपोर्ट की छपी हुई प्रति नहीं है बल्कि उसका प्रूफ है। जब श्री विश्वनाथ दास ने एक एक मुद्दा उठाया, तो मैंने कहा था–

"जैसाकि मैंने कहा है, मैं मामले पर निर्णय नहीं देने जा रहा हूँ। मैं व्यवस्था जन्य प्रश्न सहित इसको चर्चा के लिए खुला रखना चाहता हूँ, क्योंकि इसमें बड़े प्रश्न भी

---

*विधानसभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 1, भाग II, 17 फरवरी, 1949, पृष्ठ 614-21

शामिल हैं और मैं इन सभी बातों का स्वयं अध्ययन करूंगा, जो अभी तक मैंने नहीं किया है। मैं मामले को अभी ऐसे ही छोड़ता हूँ।"

अत: मैंने इसे अपने अध्ययन के लिए छोड़ दिया था। अब मैंने इसका अध्ययन कर लिया है। माननीय सदस्यों ने व्यवस्था के प्रश्न के बारे में जो कुछ कहा, मैंने प्रवर समिति की रिपोर्ट, पहले विधेयक और प्रवर समिति के समक्ष आए अन्य प्रारूप का अध्ययन कर लिया है। यदि इसके बारे में सदस्य कुछ कहना चाहें, तो कह सकते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : उसी के संदर्भ में मैं बोलना चाहता हूँ। वास्तव में मैं भी इस व्यवस्था के प्रश्न को उठाना चाहता था, परन्तु श्री नजीरुद्दीन भाग्यशाली रहे कि उन्होंने यह प्रश्न उठाया। अत: इस प्रश्न पर मुझे कुछ कहना है।

श्री मोहन लाल गौतम (यू.पी. : सामान्य) : प्रक्रिया नियमों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है कि सदन में एक रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद कोई व्यवस्था का प्रश्न उठाया जाए। माननीय सदस्य से अनुरोध है कि वे मुझे बताएं कि किस नियम के अंतर्गत ऐसा किया जा रहा है ताकि मैं देख सकूं कि व्यवस्था का प्रश्न नियमानुसार उठाया जा रहा है।

माननीय सभापति : ये बहुत स्पष्ट मुद्दे हैं जिन पर बहस करने की आवश्यकता नहीं है। यदि मुद्दे की स्पष्टता पर मतभेद हो, तो हमें उस मुद्दे की विषय-वस्तु पर ध्यान देना चाहिए न कि तकनीकी बातों पर समय बर्बाद किया जाए। यदि लोग संहिता विरुद्ध है, तो यह विषय-वस्तु की बात है। यदि वे इसका समर्थन करते हैं, तो यह भी विषय-वस्तु की बात है। परन्तु, हमें तकनीकी बातों पर सदन का समय बर्बाद नहीं करना चाहिए।

इसके बाद, व्यवस्था का जो प्रश्न उठाया गया था, उसमें कहा गया था कि जो विधेयक समिति को भेजा गया था, यह वह नहीं था, जिस पर समिति ने विचार किया और रिपोर्ट किसी अन्य पर आधारित है। यह था व्यवस्था का प्रश्न। और उस व्यवस्था के प्रश्न पर बहस हुई। यदि श्री भार्गव सही बताए, तो मामला भिन्न होगा और मेरा विश्वास है कि और जो कुछ श्री नजीरुद्दीन अहमद ने कहा है, उसका उत्तर मिल जाएगा। क्या वे अन्य तथ्यों की ओर भी मेरा ध्यान आकर्षित करेंगे।

श्री जसपतराय कपूर : महोदय, क्या मैं आप से व्यवस्था का प्रश्न आपके समक्ष रखने का अनुरोध कर सकता हूँ। इस प्रश्न का समाधान इस सत्र में करना इस सदन की सक्षमता से संबंधित है कि क्या श्री नजीरुद्दीन द्वारा उठाये गये प्रश्न पर इस सत्र में चर्चा होगी? यदि मेरा व्यवस्था का प्रश्न स्वीकार हो जाता है, तो इस सत्र में इस विषय पर चर्चा समाप्त हो जाएगी।

माननीय सभापति : मैं मुद्देवार आगे बढूंगा। पहले व्यवस्था के प्रश्न पर चर्चा करें? माना जाए कि व्यवस्था का पहला प्रश्न विधेयक के हक में है, माननीय सदस्य द्वारा उठाया गया दूसरा प्रश्न होगा और इसलिए वे अपने प्रश्न को बाद में उठा सकते हैं।

श्री जसपत रायकपूर : मेरा कहना है कि यदि श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा उठाए गए प्रश्न पर सदन में चर्चा होती है, तो प्रश्न यह है कि क्या यह इस प्रश्न पर चर्चा के लिए सक्षम है।

माननीय सभापति : मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ कि इस मुद्दे को पहले लिया जाए। यह निर्णय करना पीठाध्यक्ष का काम है कि प्रवर समिति ने उसे भेजे गए विधेयक पर विचार किया था या किसी अन्य पर और क्या उसकी रिपोर्ट ली जाए अथवा नहीं। इसका निर्णय होने के पश्चात् माननीय महोदय मुझे बता सकते हैं कि किस कानून या परम्परा के अनुसार यह सदन इस विधेयक पर चर्चा करने के लिए सक्षम नहीं है। यह रास्ता ठीक रहेगा। हमें समय की बचत करनी चाहिए।

श्री जसपत राय कपूर : महोदय, क्या मैं कुछ कह सकता हूँ।

माननीय सभापति : नहीं, पंडित भार्गव जी।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : महोदय मैं आपके समक्ष कुछ तथ्य और कुछ कानून रखना चाहता हूँ, जो इन तथ्यों पर लागू होंगे। उदाहरण के तौर पर, मैं यह बताना चाहता हूँ कि प्रवर समिति के समक्ष कार्यवाही इस सदन के नियमों का दुरुपयोग करना था। प्रवर समिति और विधि विभाग की प्रक्रिया द्वारा इस सदन के विशेषाधिकार का उल्लंघन किया गया है। दूसरे, यदि मेरी बात सही है, तो प्रवर समिति ने दूसरे विधेयकों पर विचार किया है और उस विधेयक पर विचार नहीं किया, जो उसे सभा द्वारा विचारार्थ भेजा गया था। अब प्रश्न उठता है जो कानूनन है कि क्या इसके लिए अपनाई गई प्रक्रिया न्यायोचित थी और सदन को इस रिपोर्ट पर यह समझ कर चर्चा करनी चाहिए कि प्रवर समिति ने उसी विधेयक पर विचार किया है जो इसे भेजा गया था, या क्या यह दस्तावेज कानूनी रूप से वैध नहीं है और यह एक कानूनी दस्तावेज नहीं है।

माननीय सभापति : माननीय सदस्य उसी बात को दोहरा रहे हैं, जो माननीय नजीरुद्दीन अहमद ने कही है। यह वही बात है। मैंने उठाई गई आपत्ति को ध्यान में रखकर रिपोर्ट का अध्ययन किया है और माननीय सदस्य को कोई अन्य ऐसे तथ्य रखने की पूरी स्वतंत्रता है, जो श्री नजीरुद्दीन अहमद के भाषण में नहीं थे। परन्तु एक बात को दोहराने का कोई लाभ नहीं है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं दोहराना नहीं चाहता। मैं केवल यह जानना चाहता

हूँ कि क्या ये तथ्य सही हैं। यदि कोई सदस्य यह कहता है कि ये तथ्य गलत हैं तो पूरी बहस खत्म हो जाएगी। अत:, मैं यह बताना चाहता हूँ कि मैं जिस निष्कर्ष पर पहुंचा कि ये तथ्य सही हैं। यदि आप इसे सही मानते हैं तो सदन का समय बर्बाद नहीं करना चाहूंगा। अत: मैं अपने आपको दो प्रकार के प्रश्नों तक सीमित रखूंगा। जोकि इससे संबंधित हैं। आपकी आज्ञा से, विषय-वस्तु के बारे में मुझे कुछ कहना है। मेरा कहना है कि प्रश्न के दो भाग हैं। पहला भाग यह है कि क्या सदन को प्रस्तुत रिपोर्ट प्रक्रिया की दृष्टि से ठीक है। दूसरा यह है कि क्या रिपोर्ट निर्धारित क्षेत्र से बाहर चली गई है।

सदन के समक्ष तथ्य प्रस्तुत करने से पहले मैं पहले प्रश्न के बारे में कुछ कहना चाहूंगा। मेरा कहना है कि प्रवर समिति की रिपोर्ट तथा हमें वितरित पत्रों, जोकि पुस्तकालय में उपलब्ध हैं, से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि विधेयक को प्रवर समिति को भेजे जाने के बाद, विधि विभाग ने इस विधेयक के स्थान पर एक अन्य विधेयक प्रतिस्थापित कर दिया और उसी विधेयक पर प्रवर समिति ने विचार किया। पता नहीं कि मैं बिल्कुल ठीक कह रहा परन्तु मैंने प्रवर समिति के कुछ सदस्यों से परामर्श किया है और उन्होंने मुझे इसके बारे में बताया है और इसके साथ ही प्रवर समिति की रिपोर्ट से पता चलता है... क्योंकि समिति की रिपोर्ट और असहमति टिप्पणी से पता चलता है कि किसी अन्य विधेयक पर विचार नहीं किया गया और जो विधेयक समिति को भेजा गया था, उस पर बिल्कुल विचार नहीं किया गया।

महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने एक तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। यदि आप कृपापूर्वक इस तालिका को देखें हमारे समक्ष तो इसके दो भाग हैं; पहला दिखाता है कि यह विधेयक मूल विधेयक से किस प्रकार भिन्न है। उन्होंने एक तालिका और दी है, जिसमें प्रारूप विधेयक के और प्रवर समिति रिपोर्ट में अन्तर दिखाया है। इसमें भी यही दिखाया गया है कि पुन: तैयार किए गए विधेयक पर ही विचार किया गया और मूल विधेयक पर विचार नहीं किया गया। खैर, इसे सही मानते हुए यदि यह मान लिया जाता है कि पुन: तैयार किए गए विधेयक पर ही विचार किया गया तो आपके समक्ष अब प्रश्न उठता है कि प्रवर समिति पुन: तैयार किए गए विधेयक पर विचार कर सकती है या नहीं और क्या उनकी यह कार्यवाही सदन के विशेषाधिकार का उल्लंघन और प्रवर समिति को सदन द्वारा दिए गए अधिकार का दुरुपयोग है कि नहीं। महोदय, अब मैं यह तो नहीं कहूँगा कि इसके पीछे कोई गलत उद्देश्य था, या जानबूझकर या अनजाने में ऐसा किया गया, या यह अच्छे के लिये या बुरे के लिए किया गया। इससे मेरा कोई सरोकार नहीं। मेरा सरोकार सिर्फ एक तथ्य से है कि प्रवर समिति ने उसे भेजे गए उस मूल विधेयक पर विचार नहीं किया जिसे इस सदन ने उनको भेजा था।

माननीय श्री के. सनतानम (रेल और परिवहन राज्य मंत्री) : इस व्यवस्था के

प्रश्न के बारे में मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या प्रवर समिति द्वारा एक विधेयक पर की गई कार्यवाही पर सदन में इस तरीके से कार्यवाही होनी चाहिए। हम रिपोर्ट को स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं, परन्तु प्रवर समिति ने एक मामले में किस प्रकार कार्यवाही की, इस पर यह चर्चा संगत नहीं है और इस पर चर्चा करना समय की परम्परा नहीं है। अन्यथा, प्रत्येक प्रवर समिति को अपनी कार्यवाही की शब्दश: रिपोर्ट देनी पड़ेगी, ताकि इसके औचित्य की जांच को सके।

माननीय अध्यक्ष महोदय : व्यवस्था संबंधी विभिन्न प्रश्न उठाए गए हैं और उनके बारे में विस्तार से कहा गया है। वर्तमान विषय के संबंध में यदि सदन द्वारा भेजे गए विधेयक पर प्रवर समिति ने बिल्कुल विचार नहीं किया। मैं पंडित भार्गव से कहना चाहूंगा कि उन्होंने जो कुछ कहा है उसके बावजूद भी इस पर आगे चर्चा नहीं होगी। आप इसे सदन के विशेषाधिकार का उल्लंघन कहें या प्रक्रिया का दुरुपयोग, संक्षेप में बहस इस बात पर पहुंची है कि समिति ने एक प्रति स्थापित विधेयक पर विचार किया, इसने मूल विधेयक पर विचार नहीं किया और यह निष्कर्ष प्रवर समिति की रिपोर्ट में की गई कुछ टिप्पणियों पर आधारित है—अल्पमत अथवा बहुमत की रिपोर्ट—और इसलिए उन्होंने अनुमान लगाया– अधिक सत्यता के साथ कहा—इन दस्तावेजों के आधार पर मूल विधेयक पर विचार नहीं किया गया। संक्षेप में यह व्यवस्था का प्रश्न है। विशेषाधिकार उल्लंघन या प्रक्रिया के दुरुपयोग का प्रश्न तब उठता है जब समिति के बारे में आपका निष्कर्ष सही हो परन्तु यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि आपकी आशंका निर्मूल है, और प्रवर समिति दोषी नहीं है, तो किसी व्याभिचार उल्लंघन या प्रक्रिया के दुरुपयोग का प्रश्न नहीं उठता है। मैं सदस्यों को आश्वासन देता हूँ कि माननीय सदस्य प्रवर समिति की रिपोर्ट को पढ़कर जो मुद्दे उठाने जा रहे हैं, मैंने उनका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है और इसके बारे में मेरा अपना निष्कर्ष है। मैं पूरे मामले को संक्षेप में बताता हूँ। इस पर विचार करने के बाद निर्णय किया जाएगा। संसद का और मेरा समय बर्बाद न किया जाए। इस मामले में मैं यही समझता हूँ। (**कुछ माननीय सदस्य: ठीक है महोदय**)। इस विधेयक पर चर्चा आज समाप्त नहीं कर रहे हैं। हम स्थिति को स्पष्ट करेंगे और इस पर और बहस नहीं होगी, मैं शायद...

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आपकी बात सुनने के बाद मैं मामले पर और बहस नहीं करना चाहता कि कार्य कैसा हो रहा है। परन्तु मैं आपके सामने कुछ विनिर्णय रखना चाहता हूँ, जिनसे पता चलता है कि प्रवर समिति से परे यह विधेयक स्वरूप लेता है जो आया विधेयक पूर्णत: अनुचित, अवैध तथा समिति की पूरी रिपोर्ट अमान्य करता है और सदन के समक्ष चर्चा के लिए कोई रिपोर्ट नहीं है। यही मेरा कहना है। यदि आप अनुमति दें तो मैं कुछ विनिर्णय प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

माननीय सभापति : तथापि, विनिर्णय कुछ तथ्यों पर आधारित होते हैं। इस मामले में जैसे कि आरोप लगाया जो तथ्य के रूप में है कि प्रवर समिति ने मूल विधेयक पर विचार नहीं किया। यदि यह बात सिद्ध हो जाती है, तो विनिर्णयों पर विचार करने के लिए बहुत समय है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : तथ्यों से कोई इन्कार नहीं कर सकता।

माननीय सभापति : बिल्कुल यही बात है, जो माननीय सदस्य देखेंगे। मैंने दस्तावेजों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करके अपना विनिर्णय तैयार किया है। यदि मेरे द्वारा प्रस्तुत तथ्य स्वीकार कर लिए जाने के बाद और तथ्य उभर कर आते हैं तो व्यवस्था के और प्रश्नों पर विचार किया जा सकता है।

श्री एम. तिरुमाला राव (मद्रास : सामान्य) : आपका विनिर्णय आने से पहले आशंका के सिवाए सच्चाई जानने का और कोई तरीका नहीं है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : मैं आपकी अनुमति से माननीय पंडित भार्गव की इस आशंका को दूर करना चाहता हूँ कि प्रवर समिति ने उस मूल विधेयक पर विचार नहीं किया, जो सदन द्वारा उसे भेजा गया था? मैं समझता हूँ कि यह बात गलत है, यदि माननीय सदस्य...

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने स्थिति का विस्तार से अध्ययन किया है। मैं अपना निर्णय पढ़ने के बाद स्पष्ट करूंगा।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव (अजमेर : मारवाड़ा) : मेरे पास कुछ अतिरिक्त तथ्य है।

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया शांत रहिए।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : एक और तथ्य है, जो अध्यक्ष महोदय के ध्यान में नहीं लाया गया है। मैंने विधि विभाग को यह जानने के लिए एक पत्र लिखा था कि कोई पुनः तैयार किया गया प्रारुप प्रकाशित किया गया है। मुझे बताया गया कि कुछ ही प्रतियाँ प्रकाशित हुई थीं और वे सदन के पुस्तकालय में उपलब्ध हैं। मैंने यह विधेयक देखा और यह सच है कि प्रवर समिति की बैठक होने से पहले जुलाई, 1948 में पुनः तैयार किया गया विधेयक प्रकाशित हुआ था। उस विधेयक पर समिति द्वारा खंडवार विचार किया गया, और यही वह विधेयक है, जो प्रवर समिति की रिपोर्ट के साथ आया है। रिपोर्ट में इसका उल्लेख है। इसलिए मेरा अनुरोध है कि पुनः तैयार किए गए विधेयक पर यह जानने के लिए विचार किया जाए कि क्या समिति ने उसी विधेयक पर विचार किया था जो सदन द्वारा उसे भेजा गया था या उसने उस विधेयक पर विचार

किया था जो डॉ. अम्बेडकर के हस्ताक्षर से पुनः तैयार करके प्रकाशित हुआ था और मूल विधेयक से बिल्कुल अलग था। यह बहुत ही महत्वपूर्ण तथ्य है और अध्यक्ष द्वारा अपना विनिर्णय देने से पहले मैंने उनके ध्यान में ला दिया है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मेरे पास उस विधेयक की एक प्रति है।

माननीय सभापति : मेरे पास कुछ ऐसे तथ्य हैं, जो माननीय सदस्य के पास नहीं है।

प्रवर समिति ने जिस विधेयक पर विचार किया वह मूल विधेयक के स्थान पर एक संशोधित प्रारूप था। इसलिए समिति ने उसे भेजे गए विधेयक पर नहीं बल्कि किसी अन्य दस्तावेज पर विचार किया और प्रवर समिति की वर्तमान रिपोर्ट एक नये दस्तावेज पर रिपोर्ट है और मूल विधेयक पर इसकी रिपोर्ट नहीं है। अत: प्रवर समिति द्वारा दी गई इस रिपोर्ट पर माननीय मंत्री द्वारा विचार के लिए रखा गया प्रस्ताव उचित नहीं है। व्यवस्था के प्रश्न का मूल यही है। (**श्री महावीर त्यागी :** क्या यह आपका निर्णय है?) मैं समझता हूँ कि मैंने इस मुद्दे को स्पष्ट कर दिया है।

व्यवस्था का प्रश्न उठाने वाले या उसका समर्थन करने वाले श्री नजीरुद्दीन अहमद, पंडित ठाकुर दास भार्गव और श्री विश्वनाथ दास इनमें से कोई भी प्रवर समिति का सदस्य नहीं था और स्वाभाविक है कि इसलिए उन्हें इस बात की व्यक्तिगत जानकारी नहीं है कि प्रवर समिति की बैठकों में किस पर विचार किया गया। उन्होंने प्रवर समिति की रिपोर्ट में दिए गए कुछ विवरणों पर विश्वास करके यह आशंका व्यक्त कर दी कि प्रवर समिति ने उस विधेयक पर विचार नहीं किया, जो उसे भेजा गया था।

माननीय विधि मंत्री द्वारा हिंदू संहिता विधेयक पर प्रवर समिति की रिपोर्ट पर विचार के लिए रखे गए प्रस्ताव पर माननीय नजीरुद्दीन और कुछ अन्य सदस्यों द्वारा 31 अगस्त, 1948 को उठाया व्यवस्था का प्रश्न कि यह उचित नहीं है, बहुत हल्के तथ्यों पर आधारित है। इस आपत्ति को इन तर्कों से संबद्ध करके निम्नलिखित तरीके से प्रस्तुत किया गया।

अत: उठाया गया प्रश्न यह तथ्य जानने के लिए है कि क्या प्रवर समिति को भेजा गया विधेयक, जिसमें विभिन्न मूल उपबंध हैं, बिल्कुल भिन्न हैं। जिस सत्र में उसे भेजा गया था और क्या प्रवर समिति ने उस भेजे गए मूल रूप से इसके मूल उपबंधों पर विचार किया है।

इस बात पर कोई विवाद नहीं होना चाहिए कि प्रवर समिति को उसे भेजे गए विधेयक में कुछ जोड़ने या कम करने या सुधार करने आदि का पूरा अधिकार है, बशर्ते कि प्रवर समिति द्वारा दिए गए सुझाव विधेयक के विषय क्षेत्र में आते हों। इस बारे में कुछ कहने की जरूरत नहीं है। क्योंकि किसी ने भी यह नहीं कहा कि प्रवर समिति ने अपने विषय-क्षेत्र से बाहर जाकर कार्य किया है।

मैं अब अपने समक्ष लिखित और मौखिक साक्ष्यों की सहायता से व्यवस्था का प्रश्न उठाने वाले माननीय सदस्यों द्वारा प्रस्तुत तथ्यों की जांच कर सकता हूँ।

मैं संक्षेप में बताता हूँ कि यह विधेयक, जो पुनः स्थापित किया गया है, कैसे बना। जैसाकि उद्देश्य और कारणों से विवरण में बताया गया है कि केन्द्रीय सरकार ने अपने 20 जनवरी, 1944 के एक संकल्प के द्वारा हिंदू कानून की एक संहिता, जो कि यथासंभव पूर्ण होनी चाहिए, बनाने के लिए एक हिंदू कानून समिति बनाई। यह इसलिए किया गया कि देश में यह मांग की जा रही थी कि सभी प्रान्तों तथा हिंदुओं के सभी वर्गों के विभिन्न विषयों के लिए एक समेकित तथा एक समान संहिता बनाई जाए, इस कानून में परिवर्तन लाने की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि यह नई पद्धति के अनुरूप बन सके, जिसके लिए हिंदू समाज तेजी से आगे बढ़ रहा है।

जब 9 अप्रैल, 1948 को इस विधेयक को प्रवर समिति को भेजने का प्रस्ताव लाया गया था, तो माननीय सदस्यों के पास विधयेक की विषय-वस्तु तथा इसके स्वरूप और इसका प्रारूप तैयार करने के लिए कोई समय नहीं था। विधि मंत्रालय ने जब यह देखा कि हिंदू कानून समिति द्वारा तैयार किया गया विधेयक संहिता के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं है, उसने विधेयक के प्रारूप को संशोधित करने तथा उसकी कमियों को दूर करने का निर्णय किया ताकि इसमें संहिता के उपबंधों को पूर्ण रूप से समादृत किया जा सके। इसलिए उन्होंने विधेयक के भागों और खंडों को क्रमिक अनुभागों और तर्कसंगत क्रम में व्यवस्थित किया और इसके बाद उन्होंने जैसा उचित समझा प्रवर समिति के विचार के लिए कुछ सुझाव भी दिए। विधि मंत्रालय ने तो केवल प्रवर समिति के समक्ष विधेयक का एक उचित रूप रखा था ताकि प्रवर समिति अपनी बैठकों में इसे एक व्यवस्थित रूप प्रदान कर सके या प्रारूप-निर्माता से इसमें उचित परिवर्तन करवा सके।

इसके बाद विधि मंत्रालय ने संशोधित प्रारूप में किए जाने वाले परिवर्तनों की ओर प्रवर समिति के सदस्यों का ध्यान आकर्षित किया था। अतः इससे स्पष्ट है कि विचार-विमर्श के प्रत्येक चरण में प्रवर समिति के सामने संशोधित तथा मूल उपबंध थे और मूल उपबंधों तथा विधि मंत्रालय द्वारा सुझाए गए उपबंधों के तुलनात्मक अध्ययन पर विचार-विमर्श हुआ।

जहां तक उपयुक्त तथ्यों के साक्ष्य का संबंध है, व्यवस्था के प्रश्न पर प्रवर समिति का केवल एक सदस्य पंडित बालकृष्ण शर्मा ने ही बोला है। पंडित बाल कृष्ण शर्मा ने सदन में कहा था कि "जिस विधेयक पर सदन ने हमें विचार करने के लिए कहा था वह हमेशा हमारे सामने रहा।" जिन सदस्यों ने यह प्रश्न उठाया है, ऐसा लगता है कि उन्होंने प्रवर समिति की रिपोर्ट के कुछ परिच्छेदों अथवा असहमति टिप्पणों पर विश्वास करके ऐसा किया है। मुख्य रिपोर्ट में कहा गया है :-

"हम अधोहस्ताक्षरी, विधेयक पर विचार किए जाने के बाद संशोधित प्रारूप पर नहीं– प्रस्तुत करते हैं आदि।" इस प्रकार उन्होंने रिपोर्ट को प्रारम्भ किया है।

उन्होंने संशोधित प्रारूप के बारे में नहीं बल्कि विधेयक पर विचार करने के बारे में कहा है। इसके बाद वे कहते हैं :–

"विधानमण्डल में यथा पुन: स्थापित हिंदू संहिता के प्रारूप पर इसके पुन: स्थापित किए जाने से पहले विभागीय जांच नहीं की गई और विधि मंत्रालय में एक संशोधित प्रारूप प्रस्तुत किया है, जो कि हमारे विचार में ज्यादा संतोषजनक है। मूल विधेयक के संशोधित प्रारूप में कोई तात्विक परिवर्तन नहीं किया गया है, परन्तु यह मूल विधेयक के अनुरूप ही बनाया गया है और इसे वही रूप प्रदान किया गया है, जिस रूप में विधानमण्डल में विधेयक पुन: स्थापित किए जाते हैं।"

इससे स्पष्ट है कि प्रवर समिति ने मूल विधेयक पर ही विचार किया है और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इसके मूल विषय में नहीं बल्कि स्वरूप में परिवर्तन किया गया है।

उन्होंने मूल विधेयक के संशोधित प्रारूप पर विचार करना उचित समझा, इस कारण का उल्लेख किया है, और उन्होंने कहा है :–

''फलत: हमने तय किया कि विधेयक के संशोधित प्रारूप पर विमर्श केंद्रित किया जाए।

इसमें शब्द फलत: महत्वपूर्ण है। मूल विधेयक और संशोधन प्रारूप के मूल उपबंधों को देखने के बाद संशोधित प्रारूप पर विचार करना उचित था, क्योंकि इसे मूल विधेयक में सुधार करके तैयार किया गया था। प्रवर समिति ने आगे कहा है :–

"हाशिए में प्रत्येक धारा का संदर्भ दिया गया है जिसमें मूल विधेयक की तत्संबंधी धारा का उल्लेख है।"

यह एक और अकाट्य प्रमाण है। यद्यपि उन्होंने अन्तिम रूप प्रदान करने के लिए संशोधित प्रारूप पर ही विचार किया है, परन्तु मूल विधेयक के प्रत्येक खंड को भी ध्यान में रखा है, इससे खंडों के बाद लिखे नोट, जिनमें उन्होंने विधेयक के विभिन्न भागों और खंडों पर कार्यवाही की है, से और भी स्थिति स्पष्ट हो जाती है और मूल विधेयक के प्रत्येक भाग और खंड का उल्लेख किया है।

डॉ. बक्शी टेक चन्द और पंडित बालकृष्ण शर्मा के संयुक्त असहमति टिप्पणी में एक स्थान पर कहा गया है कि प्रवर समिति ने मूल विधेयक नहीं बल्कि संशोधित प्रारूप पर विचार किया है। इसकी व्याख्या जो कुछ ऊपर कहा गया है उसको ध्यान में रख कर करें। जहां उन्होंने उल्लेख किया है कि संशोधित प्रारूप पर विचार किया

गया, वहां उन्होंने अपनी मंशा जाहिर की है कि संशोधित प्रारूप में सुझाए गए परिवर्तन केवल परिवर्तन नहीं हैं, अपितु वे मूल विषय में संबंधित हैं। यह याद रखना चाहिए कि उन्होंने कहीं भी यह नहीं कहा कि प्रवर समिति ने मूल विधेयक पर विचार नहीं किया। संशोधित प्रारूप में सुझाए गए परिवर्तन अच्छे हैं या अन्यथा हैं, इसके बारे में उन्होंने असहमति टिप्पण में उल्लेख किया है।

अभिलेख में दिए गए तथ्यों के आधार पर मैं इस बारे में बिल्कुल स्पष्ट हूँ कि प्रवर समिति ने भेजे गए मूल विधेयक पर पूर्ण विचार किया और इसलिए माननीय विधि मंत्री द्वारा रखा गया वर्तमान प्रस्ताव उचित है।

तथ्यों के आधार पर इस निर्णय पर पहुंचने के बाद श्री कपूर जी, व्यवस्था का कोई प्रश्न नहीं होना चाहिए।

एक माननीय सदस्य : अब सभा की बैठक स्थगित होनी चाहिए, पांच से अधिक बज चुके हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : अब सदन की बैठक स्थगित होती है।

तत्पश्चात्, सभा की बैठक शुक्रवार, 18 फरवरी, 1949 को पौने ग्यारह बजे तक स्थगित हुई।

पूर्वाह्न 11:45 बजे

*हिंदू संहिता – जारी....

माननीय उपाध्यक्ष : हम हिंदू संहिता पर विचार करेंगे।

श्री जसपतराय कपूर (यू.पी. : सामान्य) : मैं एक व्यवस्था का प्रश्न उठाना चाहता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : खड़े हुए।

माननीय उपाध्यक्ष : श्री कपूर द्वारा व्यवस्था का एक प्रश्न उठाया गया है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (विधि मंत्री) : मैं उसी के विषय में बोल रहा था, महोदय यहां आर्डर पेपर में 16 विभिन्न प्रस्ताव दिए गए हैं। इनमें से कुछ व्यवस्था के प्रश्न हैं और कुछ मूल प्रस्ताव हैं। प्रस्ताव पर बोलने से पहले मैं उन पर स्पष्टीकरण देना चाहता हूँ। क्योंकि, मेरे मित्र कुछ कहना चाहता हैं, तो उन्हें बोलने दें।

माननीय उपाध्यक्ष : हम उनका व्यवस्था का प्रश्न सुनते हैं।

श्री जसपतराय कपूर : महोदय, जब पिछली बार प्रस्ताव पर चर्चा चल रही थी, तो मैं एक व्यवस्था का प्रश्न उठाना चाहता था। तब अध्यक्ष महोदय ने कहा था कि जब तक श्री नजीरुद्दीन अहमद के व्यवस्था के प्रश्न पर चर्चा समाप्त नहीं हो जाती, आप प्रतीक्षा करें। उस व्यवस्था के प्रश्न पर उस दिन ठीक पांच बजे चर्चा समाप्त हुई। उसके बाद सदन की बैठक स्थगित हो गई। मैं आशा करता हूँ कि आप आज मुझे व्यवस्था का प्रश्न उठाने की अनुमति देंगे। परन्तु यह प्रश्न उठाने से पहले मैं सदन को आश्वासन देता हूँ कि मेरा उद्देश्य''

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य अपने व्यवस्था के प्रश्न के बारे में कुछ कहेंगे। क्षमा मांगने की या बहस करने की कोई आवश्यकता नहीं हैं। मैं व्यवस्था का प्रश्न सुनना चाहता हूँ।

श्री जसपतराय कपूर : मेरा व्यवस्था का प्रश्न सबसे पहले सदन के सदस्यों के अधिकारों और विशेषाधिकार से संबंधित है और दूसरे इस सदन द्वारा हिंदू संहिता जैसे महत्वपूर्ण और विवादास्पद विधेयक पर विचार करना उचित है, जबकि बड़ी संख्या में सदस्य इसमें भाग नहीं ले रहे हैं और न ही वे भाग ले सकते हैं। वे ऐसा अपने व्यक्तिगत

---

*विधानसभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 2, भाग II, 24 फरवरी, 1949, पृष्ठ 821-52

कारणों से या दलगत काम के कारण नहीं, बल्कि वे पूरे देश के हित में ऐसा कर रहे हैं क्योंकि इस समय वे प्रान्तीय विधानमण्डलों के बजट सत्र में व्यस्त हैं। जबकि वे इसमें भाग लेने के बहुत इच्छुक हैं और हम चर्चा में भाग लेना चाहते हैं, जिससे कि पूरा हिंदू समाज प्रभावित हो रहा हो।

एक माननीय सदस्य : यह कोई व्यवस्था का प्रश्न नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इस निर्णय के लिए यहाँ हूँ कि क्या यह व्यवस्था का प्रश्न है या नहीं। मैं आशा करता हूँ कि वे अपनी बात शीघ्र समाप्त करेंगे।

श्री जसपतराय कपूर : मैं जानता हूँ कि मेरे कुछ मित्र इस विधेयक पर अग्रसर होने के लिए अधीर हैं। महोदय, मैं प्रारम्भ में ही सदन को यह आश्वासन देना चाहता था कि मेरा उद्देश्य इस विधेयक की कार्यवाही में बाधा डालने का नहीं है क्योंकि इसके बहुत से उपबंधों से मैं भी सहमत हूँ। मेरा उद्देश्य यह है कि किसी कार्य को संवैधानिक तरीके से उचित समय पर और उचित ढंग से किया जाना चाहिए। जैसाकि आप जानते हैं...

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने व्यवस्था का प्रश्न सुन लिया है। माननीय सदस्य यह समझते हैं कि यह सदन इस विधेयक के साथ अग्रसर होने में सक्षम नहीं है। पहली बात, दूसरे क्या वे चाहते हैं कि कुछ सदस्य, जो यहां उपस्थित नहीं हैं, उन्हें यहां उपस्थित होना चाहिए। जिस प्रस्ताव पर विचार किया जा रहा है, उस पर यह कोई व्यवस्था का प्रश्न नहीं है। यह एक सार्वभौमिक विधानसभा है और कोई भी विधान पारित करने के लिए उपयुक्त है। मैंने व्यवस्था का प्रश्न सुन लिया है, और इस पर और बहस नहीं सुनना चाहता। जहां तक सदस्यों की अनुपस्थिति का प्रश्न है, निःसंदेह यह सच है कि प्रान्तों और राज्यों से यहां सदस्य उपस्थित नहीं हैं। परन्तु उन्हें इस बात की स्वतंत्रता है कि वे यहां आकर चर्चा में भाग ले सकते हैं।

बाबू रामनारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : क्या मैं...

माननीय उपाध्यक्ष : जहां तक पीठाध्यक्ष और इस सदन का संबंध है, ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया गया है और इसलिए सदन अपने कार्य के साथ अग्रसर होने में सक्षम है। माननीय सदस्य किसी भी समय आकर चर्चा में भाग ले सकते हैं। मैं व्यवस्था के प्रश्न को अस्वीकार करता हूँ।

बाबू रामनारायण सिंह : आपके प्रति पूर्ण सम्मान सहित...

माननीय सदस्य : शांत रहिए।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं और कुछ नहीं सुनना चाहता।

बाबू रामनारायण सिंह : आपके द्वारा दिया गया पूर्व आदेश

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने सभी पूर्व आदेश पर विचार कर लिया है। मेरे पास वे सभी यहां हैं।

श्री वी.एल. सर्वटे (मध्य भारत) : मैं भी व्यवस्था का एक प्रश्न उठाना चाहता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या कोई व्यवस्था का प्रश्न है।

श्री वी.एस. सर्वटे : जी हां।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य अपने व्यवस्था के प्रश्न के बारे में कुछ कहेंगे।

श्री वी.एस. सर्वटे : मैं संक्षेप में बोलूंगा मेरा व्यवस्था का प्रश्न यह है: इस विधेयक के उद्देश्यों के लिए प्रकाशन संबंधी प्रावधान का पालन नहीं किया गया है। यह पीठाध्यक्ष का कर्त्तव्य है कि वह देखें कि इन प्रावधानों का पालन किया गया है। मैं नियम संख्या 20 का संदर्भ दे रहा हूँ जो कहता है कि :

"विधेयक के पुनः स्थापित होते ही यथाशीघ्र, यदि यह पूर्व में प्रकाशित नहीं हुआ है तो राजपत्र में प्रकाशित किया जाएगा।" यहां यह भी व्यवस्था है कि प्रवर समिति की रिपोर्ट को भी संशोधित विधेयक के साथ प्रकाशित किया जाएगा। मेरा उस संबंध में यह कहना है कि यह विधेयक मूलतः स्वतंत्रता से पहले अप्रैल 1947 में प्रकाशित हुआ था। अब भारत का राजनैतिक ढांचा बदल गया है। और यह परिवर्तन अच्छे के लिए हुआ है। मैं आपका ध्यान उस ओर खींचना चाहता हूँ कि जो भारतीय देशी राज्य ब्रिटिश शासन का हिस्सा नहीं थे, उन पर यह लागू नहीं होगा। इसके उपरान्त, कुछ राज्य भारत में मिल गए और कुछ अगस्त 1948 में इससे अलग हो गए। इस क्रम में यह प्रकाशन हुआ। पीठाध्यक्ष यह बात भी जानते हैं कि इन राज्यों ने अगस्त 1948 में एक प्रतिज्ञापत्र दिया है। उस प्रतिज्ञापत्र के परिणामस्वरूप केन्द्र द्वारा अपने विशिष्ट क्षेत्राधिकार या समवर्ती क्षेत्राधिकार का प्रयोग करके कोई भी विधान पारित करता है तो वह इन राज्यों पर भी लागू होगा। अतः मेरा अनुरोध है कि यह जिम्मेदारी पीठाध्यक्ष की है कि इस विधेयक से प्रभावित होने वाले उन राज्यों के लोगों के अधिकारों की सुरक्षा की जाए। इसका उद्देश्य दोहरा है। विधेयक के प्रकाशित होने से इससे प्रभावित होने वाले राज्यों या लोगों को अपनी प्रतिक्रियाएं, विचार और भावनाएं व्यक्त करने का अवसर मिलता है। मैं यह समझता हूँ कि प्रजातंत्र का यह मूलभूत सिद्धांत है कि जब तक किसी विधेयक पर लोगों को अपने विचार व्यक्त करने का अवसर प्रदान नहीं किया जाता, वह विधेयक पारित नहीं किया जाता। दूसरे, इस प्रकाशन का उद्देश्य है कि विधानसभा के सदस्यों को अपने निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों की भावनाएं जानने का अवसर मिल जाता

है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सदस्यों का यह कर्त्तव्य है कि वे यहां अपने व्यक्तिगत विचार न रखें। महत्वपूर्ण मुद्दों के सम्बन्ध में उन्हें अपने निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों के विचार ही यहां रखने चाहिए। जहां तक छोटे-मोटे मामलों का सम्बन्ध है, वे अपने व्यक्तिगत विचार भी रख सकते हैं। परन्तु, जब किसी उपाय से पूरा जीवन, पूरा समाज प्रभावित होता हो, तो ऐसे महत्वपूर्ण मामलों में उन्हें अपने निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों के विचार जानकर ही यहां प्रस्तुत करने चाहिए। उन्हें अपनी व्यक्तिगत भावना यहां प्रस्तुत नहीं करनी चाहिए। उन्हें वही करना चाहिए, जो उनके निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों का विचार है। इसके लिए यह आवश्यक है कि विधेयक प्रकाशित किया जाए। मेरा कहना है कि यह विधेयक प्रकाशित हुआ था परन्तु उस समय भारत में मिलने वाले राज्यों या इससे अलग होने वाले राज्यों के लोगों ने इस पर इतनी गंभीरता से विचार नहीं किया था, जितना कि इस पर होने चाहिए था जो इसके लिए अनिवार्य है। अतः मेरा कहना है कि इसका उचित प्रकाशन नहीं था जैसे कि उन लोगों से सरोकार था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : माननीय सदस्य द्वारा दो भागों में उठाए गए व्यवस्था के प्रश्न का मैं उत्तर देता हूँ। यह तो केवल विशिष्ट मामलों में ही होता है कि सदन कोई संकल्प पारित करके या सरकार किसी कार्यकारी कार्यवाही से यह इच्छा व्यक्त करे कि विधेयक इतना महत्वपूर्ण है कि इस पर लोगों के विचार जानना बहुत जरूरी है या इस पर लोगों के विचार जानने चाहिए। ऐसा कोई अधिकार नहीं है, सरकार या विधानमंडल पर ऐसी कोई पाबंदी नहीं है। अतः इस दृष्टि से यह कोई व्यवस्था का प्रश्न नहीं है।

व्यवस्था के प्रश्न पर दूसरी बात मुझे यह कहनी है कि हमने जानबूझकर भारत के प्रांतों तक ही इस विधेयक के क्षेत्राधिकार को सीमित रखा है और जहां तक प्रान्तों का संबंध है, तीन बार लोगों के विचार जाने जा चुके हैं। और मैं यह नहीं सोचता कि चौथी बार जनमत जानने से कोई हल निकलेगा।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं विधि मंत्री से सहमत हूँ क इस विधेयक को पहली बार में भारत के प्रांतों तक ही सीमित रखा गया है। यह अभी अनिश्चित है कि भारत में मिलने वाले राज्यों पर यह लागू होगा कि नहीं और यदि ऐसा होता है, तो किन शर्तों पर। यह उस समय विचार किया जाएगा जब वे इसमें मिल जाएंगे। दूसरी बात यह है कि जब तक सदन एक संकल्प पारित न करे तब तक विधेयक को परिचालित करने के लिए कोई बंधन नहीं है।

अपराह्न 12.00 बजे

प्रवर समिति ने इस पर विचार किया है और उसके विचार में यह आवश्यक नहीं है कि इस विधेयक को राजपत्र में पुनः प्रकाशित किया जाए। इसलिए मैं इस व्यवस्था के प्रश्न को अस्वीकार करता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, अपने प्रस्ताव पर बोलने से पहले, मेरे विचार में यह वांछनीय होगा कि…

श्री बी. दास (उड़ीसा : सामान्य) : प्रत्येक मामले में रुकावट डाली जाती है। प्रत्येक व्यक्ति व्यवस्था का प्रश्न उठा रहा है। श्री नजीरुद्दीन अहमद ने छः महीने पहले व्यवस्था का प्रश्न उठाया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : वह व्यवस्था का प्रश्न अलग था। माननीय सदस्य को कुछ धैर्य रखना चाहिए।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं केवल यही कह सकता हूँ कि सदस्य को सोच-विचार कर व्यवस्था का प्रश्न उठाना चाहिए। वे इस बात पर भी विचार करें कि यदि उनका प्रश्न विधेयक से संबंधित नहीं हुआ तो, उन्हें सदन की आलोचना का पात्र बनना पड़ेगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा प्रश्न व्यर्थ समय गँवाने वाला नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : कोई भी सदस्य व्यवस्था का प्रश्न उठा सकता है। कोई सदस्य कितने भी व्यवस्था के प्रश्न उठा सकता है परन्तु प्रश्न औचित्यपूर्ण और उचित हो।

श्री नजीरुद्दीन : व्यवस्था के प्रश्न पर आपत्ति करना व्यर्थ समय गँवाना है। मेरा व्यवस्था का प्रश्न यह है : माननीय विधि मंत्री इस प्रस्ताव पर पहले ही बोल चुके हैं। उन्होंने प्रस्ताव का पहला भाग समाप्त कर लिया था और उसके बाद अनुवर्ती चरण प्रारम्भ हुए। उन्हें चर्चा के अन्त में उत्तर देने का अधिकार है। अब प्रस्ताव रखा गया है कि विधेयक पर विचार किया जाए और इस बारे में 31 अगस्त, 1948 को भाषण किया जा चुका है। हमारे पास संशोधन की मुद्दागत सूची है। इस स्तर पर माननीय मंत्री जी प्रस्ताव पर दूसरा भाषण नहीं दे सकते।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने 31 अगस्त, 1948 की कार्यवाही में इस प्रकार प्राप्त है :–

"माननीय विधि मंत्री डॉ. बी.आर. अम्बेडकर" : महोदय मैं प्रस्ताव रखता हूँ :–

"कि हिंदू कानून की कुछ धाराओं में संशोधन करने और उन्हें संहिताबद्ध करने, जैसा कि प्रवर समिति ने रिपोर्ट दी है, वाले विधेयक पर विचार किया जाए।"

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम) : महोदय, मेरा व्यवस्था का एक प्रश्न है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं पहले मंत्री महोदय की बात सुनूंगा, उसके बाद आप अपना प्रश्न उठा सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : कार्य सूची में दिए गए सरकार के अन्य अत्यन्त

आवश्यक कार्यों को देखते हुए, जिन्हें सरकार के विचार में प्राथमिकता मिलनी चाहिए, मैं अपने प्रस्ताव के समर्थन में कोई भाषण नहीं देना चाहता, क्योंकि यह स्पष्ट है कि यदि मैं भाषण देता हूँ, तो इस पर बहस शुरू हो जाएगी और सरकार का बहुत समय खर्च हो जाएगा और इसलिए मैं अनुरोध करता हूँ कि इस विधेयक पर संसद के अगले सत्र में आगे विचार किया जाए।"

माननीय उपाध्यक्ष : उपर्युक्त को देखते हुए डॉ. अम्बेडकर को अपना भाषण देना चाहिए। मुझे खेद है कि इस प्रकार का व्यवस्था का प्रश्न उठाया गया। यह एक विलंबकारी प्रस्ताव है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जैसे कि मैं कहने जा रहा था ये 16 प्रस्ताव तीन अलग-अलग श्रेणियों में हैं। कुछ तो ऐसे प्रस्ताव हैं जिनमें कहा गया है कि लोगों के विचार जानने के लिए विधेयक को पुन: वितरित किया जाए। कुछ ऐसे हैं, जिनमें विधेयक को प्रवर समिति को भेजने की मांग की गई है और यह प्रवर समिति पहली प्रवर समिति से भिन्न हो। एक मांग यह की गई है कि इसे पहली समिति पुनर्स्वीकृत करने को ही भेजा जाए।

इन प्रस्तावों के बारे में श्री बी.एस. सर्वटे द्वारा एक व्यवस्था का प्रश्न उठाया गया है। आपने वह प्रस्ताव रद्द कर दिया है और इसलिए प्रस्ताव संख्या 7 और 8 को कार्य-सूची में निकाल दिया गया है। अन्य प्रस्ताव अभी हैं और उनके बारे में मैं जानना चाहता हूँ कि क्या आप चाहते हैं कि इन प्रस्तावों को मेरे अपने प्रस्ताव के साथ ही ले लिया जाए ताकि इन सब पर एक साथ ही चर्चा हो जाए और आखिरकार में प्रत्येक प्रस्ताव को सदन के समक्ष अलग-अलग रखा जाए या इन प्रस्तावों को मेरे प्रस्ताव से पहले लिया जाए ताकि इनका निबटारा हो सके और मेरे द्वारा रखे गए प्रस्ताव पर मेरे भाषण के लिए रास्ता साफ हो जाए, जिन्हें मैंने श्रेणीबद्ध किया है।

रखे गए प्रस्तावों के बारे में मैं एक या दो बात अवश्य कहना चाहूंगा। मैं इस बात से सहमत हूँ कि जब तक प्रस्तावक यह नहीं चाहें कि इन प्रस्तावों पर विचार न किया जाए, आप इन पर चर्चा करवाने के लिए बाध्य हैं। कुछ प्रस्ताव ऐसे होते हैं, जिनके बारे में आप अपने स्वविवेक से निर्णय कर सकते हैं कि ये विलंबकारी नहीं है और इनमें कुछ तथ्य हैं, उनके बारे में पूर्ववर्ती अध्यक्षों द्वारा ऐसे प्रश्नों के बारे में दी गई व्यवस्था के अनुसार उन्हें सदन में रखने के लिए आप अपनी इच्छा से निर्णय नहीं कर सकते क्योंकि अध्यक्षपीठ को इसके लिए संतुष्ट होना चाहिए कि इनमें कुछ तथ्य हैं और ये पूर्णरूप से विलंबकारी नहीं है। उदाहरण के लिए यदि कोई प्रस्ताव ऐसा है जिसमें मांग की गई है कि इस प्रस्ताव पर अब विचार न करके बाद में किसी अन्य चरण में से लिया जाए, तो इस प्रश्न पर पूर्ववर्ती अध्यक्ष पीठों द्वारा दी गई व्यवस्था के अनुसार आप स्वविवेक से निर्णय कर सकते हैं। जिस प्रस्ताव में आप यह समझते हैं कि इनमें कुछ

तथ्य हैं, तो आपको वह प्रस्ताव सदन के समक्ष विचार के लिए रखना चाहिए। उदाहरण के लिए जिस प्रस्ताव में मांग की गई है कि इस विधेयक को पुनः उसी प्रवर समिति को भेजा जाए, वह प्रस्ताव इसी श्रेणी में आता है क्योंकि यदि आप व्यवस्था के इन दो खंडों को भेजते हैं, तो मुझे विश्वास है कि...

माननीय उपाध्यक्ष : मैं जो चाहता हूँ, वह इस प्रकार है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इस मामले में आपका मार्गदर्शन चाहता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने इस मामले पर तथा अन्य रखे गए प्रस्तावों पर विचार किया है। जहां तक प्रस्ताव संख्या 1 और 2 का प्रश्न है, प्रस्ताव संख्या 1 में प्रस्ताव किया गया है कि प्रवर समिति द्वारा यथासंशोधित विधेयक को वापस ले लिया जाए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैं इसे इस समय पेश नहीं करना चाहता, इसलिए नहीं कि मैं ऐसा करने का पात्र नहीं हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : अतः इस बात की जांच करना आवश्यक नहीं है कि यह ठीक है या गलत है। दूसरा प्रस्ताव है...

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं इस चरण में इसे नहीं रखना चाहता।

माननीय उपाध्यक्ष : इसके बाद मास्टर नन्दलाल का संशोधन प्रस्ताव है कि इसे बजट सत्र 1951 तक स्थगित रखा जाए।

मास्टर नन्दलाल (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : मैं यह प्रस्ताव नहीं रख रहा हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : इन तीन प्रस्तावों के वापस लिए जाने से रास्ता साफ हो गया है। इन प्रस्तावों को कोई भी नाम दिया जाए, परन्तु वे चर्चा को स्थगित करने के लिए ही हैं, मेरे विचार से विधेयक को प्रस्तावक माननीय विधि मंत्री आगे तभी बढ़ सकते थे, जबकि इन प्रस्तावों को रखने वाले सदस्य इन पर चर्चा के लिए जोर डालते क्योंकि जब तब इनके प्रस्तावों को निबटाया नहीं जाता, तब तक माननीय प्रस्तावक को बोलने की अनुमति नहीं दी जाती। ये प्रस्ताव ही नहीं रखे गए, मैं चुप रहा। अब यह स्पष्ट है कि इन्हें वापस ले लिया गया। अन्य प्रस्ताव चाहे जो पुनर्विचारित करने वाले हों या प्रवर समिति से संबंधित हों, चाहे वे जिस भी प्रकृति के हों, किसी भी सक्षम व्यक्ति द्वारा नियमान्तर्गत रखे जा सकते हैं। उन पर कार्यवाही करना सदन का काम है। जहां तक प्रवर समिति के भेजे जाने संबंधी प्रस्ताव हैं, मैं उनसे संतुष्ट हूँ। इसके अतिरिक्त इसके पुनः परिचालित करने संबंधी प्रस्ताव के लिए कुछ जरूरी आवश्यकताएं पूरी नहीं की गई हैं, जो कि किसी नियम या व्यवस्था में अपेक्षित हैं। अतः इस चरण में मैं प्रस्तावक को अपना भाषण देने की अनुमति देता हूँ और भाषण समाप्त हाने के बाद प्रवर समिति

संबंधी प्रस्तावों को बिना किसी भाषण के रखने की अनुमति दी जाएगी। इसके बाद सभी प्रस्तावों पर बारी-बारी चर्चा होगी और मैं उन्हें एक के बाद एक रखूंगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं आपके मार्गदर्शन का आभारी हूँ। जैसा कि आमतौर पर होता है, प्रवर समिति को भेजे गए विधेयक पर इस समिति की रिपोर्ट पर प्रस्ताव रखने से पहले प्रवर समिति के सभापति सबसे पहले उन परिवर्तनों की ओर सदन का ध्यान आकर्षित करते हैं, जो उसमें मूल विधेयक में किए हैं, जो उसे भेजा गया था। मैं प्रस्ताव करता हूँ कि पहले इस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाए।

महोदय, पहला भाग विवाह और तलाक से संबंधित है। जहां तक इस भाग का संबंध है, प्रवर समिति ने इसमें दो खंड जोड़े हैं, जो दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन और न्यायिक अलगाव से संबंधित है। ये खंड मूल विधेयक में नहीं थे। मूल विधेयक के प्रारूपकारों ने विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1869 का हवाला देकर अपने आपको संतुष्ट कर लिया, जिसमें दाम्पत्याधिकारों के प्रत्यास्थापन और न्यायिक अलगाव संबंधी व्यवस्था है। मूल विधेयक के प्रारूपकारों ने समझा कि इन दो उपबंधों को लागू करने के लिए विधेयक में भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम का हवाला देना ही पर्याप्त होगा और इसके परिणाम स्वरूप उन्होंने इस कोड में विस्तृत रूप से इसका उल्लेख करने की जरूरत नहीं समझी। प्रवर समिति का विचार कुछ अलग था। प्रवर समिति के विचार में यह हिंदू कानून एक पूर्ण संहिता बनने जा रहा है, इसलिए केवल किसी कानून का हवाला मात्र देकर इसे अधूरा छोड़ना गलत है। अतः उन्होंने सोचा कि यह वांछनीय होगा कि भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम में मामलों से संबंधित उपबंधों को संहिता में भी लिखा जाए और इसके परिणामस्वरूप प्रवर समिति ने विवाह और विवाह-विच्छेद संबंधी उपबंधों को इन खंडों के रूप में विधेयक में जोड़ दिया। देखने से सदन को पता चलेगा कि मूल विधेयक और प्रवर समिति द्वारा तैयार किए गए विधेयक में कोई परिवर्तन नहीं है। जो कुछ किया गया है, वह यही है कि मूल विधेयक में जो काम का हवाला देकर किया गया था उसे संहिता में स्पष्ट और सकारात्मक रूप से संहिता में इन मामलों से संबंधित धाराओं में जोड़ दिया गया है।

जहां तक दत्तक-ग्रहण करने का संबंध है, प्रवर समिति ने कुछ नए परिवर्तन किए हैं। जब एक पिता अपना धर्म बदलने के कारण अयोग्य घोषित कर दिया जाता है और वह हिंदू नहीं रहता, तो मां उस पुत्र को गोद दे सकती है। दूसरे शब्दों में इसे कह सकते हैं कि पिता द्वारा हिंदू धर्म छोड़कर उसे दूसरा धर्म ग्रहण करने पर अयोग्य ठहराने का उपबन्ध किया गया है और मां को ऐसे मामले में गोद देने का अधिकार होगा। परिणामस्वरूप, इन परिस्थितियों में मां को पुत्र को गोद देने का अधिकार दिया गया है। इसी प्रकार, एक विधवा को अपना पुत्र उसके पिता के जीवित न होने पर गोद देने का

अधिकार रहेगा। विधवा अगर हिंदू धर्म छोड़ देती है, तो उसे भी पुत्र को गोद देने का अधिकार नहीं होगा, जोकि अन्यथा यह अधिकार से होता।

प्रवर समिति ने दूसरा परिवर्तन गोद लेने के लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न तरीकों के बारे में किया है। सदन इस बात को जानता है कि अब तक दत्तक ग्रहण के लिए विभिन्न तरीके अपनाए जाते रहे हैं। दत्तकग्रहण का मुख्य तरीका, जो स्मृति द्वारा मान्यता प्राप्त है, दत्तकग्रहण का दत्तक तरीका कहलाता है। इसके अतिरिक्त, भारत के विभिन्न भागों में दत्तक ग्रहण के विभिन्न तरीके प्रचलन में हैं, जैसे कि गोधा दत्तकग्रहण, कृत्रिम दत्तक ग्रहण, द्वधामुश्यायना दत्तक ग्रहण। प्रवर समिति ने महसूस किया कि वे कानून को संहिताबद्ध करने जा रहे हैं, इसलिए यह वांछनीय होगा कि रिवाजों के आधार पर दत्तकग्रहण करने की प्रथा को समाप्त किया जाए, क्योंकि यदि रिवाजों की अनुमति दी जाती है, तो इस संहिता का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा और एक दिन यह संहिता रद्द हो जाएगी। इसलि प्रवर समिति ने निर्णय किया कि यदि कोई इस संहिता के अन्तर्गत दत्तक–ग्रहण करना चाहता है, तो किसी को भी, इस संहिता के उपबंधों को छोड़कर, दत्तकग्रहण करने की अनुमति नहीं होगी और केवल दत्तक तरीका ही मान्य होगा।

इसके बाद, महोदय, दत्तक–पुत्र का गोद लिए जाने से जिन–जिन लोगों के नाम सम्पत्ति हैं, उन्हें उस सम्पत्ति से वंचित करने के अधिकार का मामला है। इस सदन के प्रत्येक सदस्य हिंदू कानून के वर्तमान उपबंधों को जानता है कि गोद लिया गया पुत्र–चाहे जिस भी आयु में उसे गोद लिया गया हो–चाहे पिता की मृत्यु के 40 वर्ष बाद उसे गोद लिया गया हो–समय का उसके अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उसके गोद लिए जाने से पूर्व विधवा द्वारा स्थानांतरित की गई सम्पत्ति को वह वापस लेने के लिए मुकदमा कर सकता है। इस मुद्दे पर कोई भी मुकदमा किया जा सकता है। वास्तव में यदि कोई इस बात की जांच करता है कि विभिन्न मुद्दों पर हिंदू कानून के अन्तर्गत हिंदुओं में मुकदमें होते हैं, तो मुझे विश्वास है कि इन मुकदमों में सबसे अधिक संख्या उन मुकदमों की होगी जो दत्तक पुत्र द्वारा सम्पत्ति से बेदखल किए जाने के लिए चल रहे हैं। अतः यह वांछनीय होगा कि इस मामले को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया जाए। राव समिति ने दत्तक ग्रहण को दो श्रेणियां में बांटा है–संहिता लागू होने के बाद पिता की मृत्यु से तीन वर्ष पहले किए दत्तकग्रहण और इस संहिता के लागू होने के बाद किए गए दत्तकग्रहण। उन्होंने निर्धारित किया कि यदि कोई लड़का दत्तक ग्रहण करने वाले पिता की मृत्यु से तीन वर्ष पहले गोद लिया जाता है, तो उसे हिंदू संहिता के अंतर्गत दत्तक पुत्र वाले सभी मूल अधिकार होंगे। यदि पिता की मृत्यु के तीन वर्ष बाद उसे गोद लिया जाता है, तो उसे हस्तांतरण करने का कोई अधिकार नहीं होगा।

दूसरी चीज जो हिंदू कानून के अंतर्गत होती है, वह यह है कि दत्तक पुत्र विधवा मां को, जिसने उसे गोद लिया, पूरी तरह सम्पत्ति से वंचित कर देता है। इसके परिणामस्वरूप पूरी सम्पत्ति दत्तक पुत्र को स्थानांतरित हो जाती है जो कि कुछ मामलों में एक अजनबी होता है और इसके बावजूद कि वह दत्तकग्रहण करने वाले पिता के परिवार का सदस्य बन जाता है, उसका लगाव अपने वास्तविक परिवार के सदस्यों के साथ जारी रहता है। इसके परिणामस्वरूप, दत्तकग्रहण के बाद दत्तकग्रहण करने वाली मां को दत्तकग्रहण के परिणाम स्वरूप वह सुरक्षा मिलनी चाहिए, जो कि एक सगी मां को अपने पुत्र से मिलती है, परन्तु दत्तक पुत्र सम्पत्ति के साथ भाग जाता है और मां के पास केवल भरण-पोषण का अधिकार रह जाता है। हमने सोचा है कि महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से यह ठीक नहीं है और इसके बारे में कुछ परिवर्तन किए हैं। राव समिति ने जो विशिष्टता अपनाई थी उसे निकाल दिया गया है। यह व्यवस्था की गई है कि दत्तक पुत्र को पिता की मृत्यु की तारीख से नहीं बल्कि गोद लिये जाने की तारीख से उसे अधिकार मिलेंगे ताकि उसके दत्तकग्रहण से पूर्व सम्पत्ति के हस्तांतरण को वह चुनौती न दे सके।

दूसरी व्यवस्था यह की गई है कि दत्तक पुत्र को दत्तकग्रहण करने वाली मां को पूरी तरह सम्पत्ति से बेदखल करने का अधिकार नहीं होगा। संशोधित विधेयक में कहा गया है कि विधवा की आधी संपत्ति ही दत्तक पुत्र को मिलेगी। बाकी आधी विधवा के अधिकार में रहेगी। परिणाम यह है कि समिति ने दत्तकग्रहण की अनुमति दी है, क्योंकि हिंदू समुदाय समझता है कि परिवार को जारी रखने के लिए यह आवश्यक है। परन्तु इसके साथ ही यह भी व्यवस्था की है कि दत्तक पुत्र मां को कहीं भिखारी न बना दे।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या देशमुख अधिनियम के अन्तर्गत भी यह है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं। जैसा मैंने कहा है, वह केवल भरण-पोषण ले सकती है।

माननीय उपाध्यक्ष : उसे सम्पत्ति का आधा हिस्सा मिलता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जैसे ही दत्तकग्रहण होता है संपत्ति का अधिकार पुत्र के पास चला जाता है।

श्री प्रभुदयाल हिमतसिंहका (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : 1937 के अधिनियम के अनुसार वह पुत्र के साथ सहभागी है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : पुत्र बाद में आता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ऐसा हो सकता है। अब मैं नाबालिग और संरक्षक की बात पर आता हूँ। इस मामले में विधेयक के इस भाग में प्रवर समिति ने

दो परिवर्तन किए हैं। पहला परिवर्तन यह किया गया है कि यदि वास्तविक संरक्षक सांसारिक जीवन त्याग देता है या हिंदू धर्म छोड़ देता है, तो नाबालिग पुत्र का पिता होने का अधिकार उससे ले लिया जाता है। मूल कानून यह कहता है कि परिस्थितियों में कोई भी बदलाव आए, चाहे वास्तविक संरक्षक के धर्म परिवर्तन करने की कोई परिस्थिति हो जाए, वह नाबालिग पुत्र का संरक्षक बना रहता है। समिति का विचार है कि चूंकि यह संहिता हिंदू समाज और उसके कानूनों को सुदृढ़ बनाने के लिये हैं, इसलिए यह वांछनीय होगा कि एक पिता तब तक वास्तविक संरक्षक रहेगा जब तक कि वह हिंदू हैं। संशोधित संहिता में एक और परिवर्तन किया गया है कि यदि एक विधवा के पति ने कोई वसीयती संरक्षक नहीं किया है, तो विधवा को वसीयती संरक्षक नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है। उनके पास पहले ऐसा अधिकार नहीं था और यह अधिकार उसे प्रवर समिति ने दिया है।

महोदय, अब मैं विधेयक के उस भाग पर आता हूँ जिसमें उत्तराधिकार की व्यवस्था है और सबसे पहले पुरुष के उत्तराधिकार के बारे में किए गए परिवर्तनों के बारे में बताऊंगा। अब जैसा कि पहले से हम जानते हैं जो हिंदू विधि में उत्तराधिकार की संहत शृंखला है उसे राव समिति ने पहले क्रम में रखा है, का सरोकार है। इसमें प्रवर समिति ने परिवर्तन नहीं किया है। संहत शृंखला को बताख और क्रम में वैसे ही रखा गया है। इस मामले में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। परन्तु राव समिति ने खंड 1 से खंड 4 में जिन व्यक्तियों को शामिल किया है उसमें उत्तराधिकार की पंक्ति और उत्तराधिकार की प्राथमिकता में कुछ परिवर्तन किया गया है। समिति ने दोनों सिद्धांतों का पालन किया है अर्थात् रिश्ता और प्यार और उसके आधार पर प्रवर समिति ने मूल विधेयक के खंड 1 से खंड 4 में दिए वारिसों में कुछ परिवर्तन किया है। प्रवर समिति ने एक काम और भी किया है। गोत्रजों और सजातियों की डिग्री की संख्या कम की है, जोकि मृतक के वारिस बन सकते हैं और इसने अन्य वारिसों को निकाल दिया है जैसे कि वे वारिस जो रिश्तेदार नहीं हैं, जैसे कि साम ब्रह्मचारी गुरु आदि। प्रवर समिति द्वारा मूलविधेयक में दिए गए वारिसों में कटौती करने का कारण इस प्रकार है। इस संहिता में प्रत्येक हिंदू को अपनी वसीयत लिखने का अधिकार दिया जा रहा है। एक बहुत ही महत्वपूर्ण पत्रिका जिसका नाम कम्पोटिव ....में। आलोचना प्रकाशित हुई है। इसमें एक बहुत ही प्रसिद्ध वकील ने कहा है कि जब वसीयत लिखने का अधिकार दिया जा रहा है तो वारिसों की इतनी लम्बी सूची, 14 डिग्री तक देना अनावश्यक है। यदि मृतक की दिलचस्पी सूची की चौदहवीं डिग्री में शामिल किसी रिश्तेदार में हैं और वह उसकी मृत्यु के समय जीवित है, तो वह वसीयत कर सकता है और वह अपनी सम्पत्ति का कोई भाग उस व्यक्ति को दे सकता है, जिसमें उसकी दिलचस्पी है।

भारतीय गैर-न्यायिक

भारत

हक जायदाद : बिक्रीशुदा भूमि स्थित मौजा अमेरी (शेष क्षेत्र रेलवे लाइन के उस पार) प. ह. न. 26 रा.रि.मं. सकरी वह, तखतपुर जिला विलासपुर वि. खं. तखतपुर ग्राम पंचायत अमेरी है जिला विलासपुर (छत्तीसगढ़)। लेआउट भूखण्ड क्रमांक बी-23 है।

किस्म जमीन : खसरा नं. रकबा बर्ग फुट में/वर्गमीटर में परि, लगान

बिक्री शुदा भूमि की चौहद्‌दी : उत्तर में विक्रेता की भूमि

62 फुट

पश्चिम में निस्तारी रास्ता : 32 फुट | बिक्री शुदा भूमि रकबा 1984 वर्गफुट | 32 फुट पूर्व में यादव की भूमि

62 फुट

दक्षिण में विक्रेता की भूमि

नोट 1 : इस विक्रय विल्लेख से म.प्र. भू-राजस्व सं. 1959 की धारा 165/6.7 -अ, म.प्र.भ्रष्ट आचरण नियम की धारा 24 का, भारतीय मुद्रांक अधि. की धारा 27 का उल्लंघन नहीं होता है। भूमि भू-दान शास, पट्टे किसी धार्मिक संस्था अथवा न्यास की संपत्ति नहीं है किसी भी सास, नियमों का उल्लंघन होने का अध्यक्ष जवाबदार होंगे।

2. बिक्रीशुदा भूमि विलाशपुर मुंगेली मुख्य मार्ग से लगभग 300 मीटर की दूरी पर स्थित है।

3. भूमि का बी-1 खसरा संलग्न है। भूमि पर पेड़, झाड़ कुआं आदि नहीं है। और न ही किसी-किसी प्रकार का निर्माण कार्य ही किया गया है।

4. बिक्रीशुदा भूमि का डावर्व्हर्सन रा.मा.क्र. 65/अ-2/2004-05 आदेश दिनांक 25-01-2005 के द्वारा किया गया है, एवं भूमि का स्तार क्रमांक 6 भू-खण्डक क्रमांक 27 है।

यदि मृतक ने अपने जीवनकाल में 14 डिग्री में शामिल किसी रिश्तेदार को कभी याद ही नहीं किया, उसे उत्तराधिकार के कारण उसकी सम्पत्ति में हिस्सा क्यों दिया जाए। इस कारण से प्रवर समिति ने यह उपबंध स्वीकार किया है।

मैं सदन का ध्यान एक बात की ओर दिलाना चाहता हूँ कि प्रवर समिति ने उस विधवा को भी अयोग्य करार दिया है, जो दूसरा विवाह कर लेती है, उससे उत्तराधिकार का अधिकार छीन लिया गया है।

इसके बाद पुत्री के हिस्से की बात है, जो कि मूल विधेयक में दिया गया है। प्रवर समिति ने इसमें एक महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। मूल विधेयक में कहा गया है कि पुत्री का हिस्सा पुत्र के हिस्से के आधे के बराबर होगा और इसमें समानता लाने के लिए उन्होंने व्यवस्था दी है कि महिला की स्त्रीधन सम्पत्ति में पुत्र का हिस्सा पुत्री के हिस्से के आधे के बराबर होगा, ताकि पुत्री को पिता की सम्पत्ति में आधा तथा पुत्र को मां की सम्पत्ति में आधा हिस्सा मिलेगा। मैं यह नहीं कह सकता कि यह एक असमान बंटवारा था परन्तु फिर भी उन्होंने पिता की सम्पत्ति में पुत्री के हिस्से को बराबर कर दिया है अर्थात् आधे हिस्से को पूरा हिस्सा कर दिया है। जो कि पुत्र के हिस्से के बराबर है। (**एक माननीय सदस्य:** पुत्र को भी दिया गया है।) मुझे उसकी जानकारी है। जहां तक महिला के उत्तराधिकार का संबंध है, प्रवर समिति ने इसमें दो परिवर्तन किए हैं। वर्तमान नियमों के अन्तर्गत महिला की सम्पत्ति में पति के उत्तराधिकार की बारी काफी बाद में आती है और यह व्यवसाय राव समिति ने की थी। प्रवर समिति के विचार में यह अन्याय है क्योंकि आमतौर पर पत्नी को स्त्रीधन सम्पत्ति या कोई और सम्पत्ति ज्यादातर पति से मिलती है। अतः यह उचित नहीं है कि उसे किसी और वारिस को दिया जाए। इसके परिणामस्वरूप, प्रवर समिति ने इसमें परिवर्तन किया है और स्त्रीधन के अन्य वारिसों की सूची में पति को भी ला दिया है। ताकि अन्य वारिसों की तरह पति को भी पत्नी की सम्पत्ति में हिस्सा मिल सके। जैसा कि मैंने कहा इससे पिता की सम्पत्ति में पुत्री का हिस्सा बढ़ जाता है और इसके साथ-साथ मां की स्त्रीधन सम्पत्ति में पुत्र का हिस्सा बढ़कर पुत्री के समान हो गया।

माननीय उपाध्यक्ष : उन्होंने पुत्र और पुत्री को बराबर कर दिया।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : भरण-पोषण संबंधी कानून में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है और इसके बारे में सदन को बताने की जरूरत नहीं है।

अब संयुक्त परिवार का प्रश्न उठता है। यह कहा गया है कि प्रवर समिति से आए विधेयक में संयुक्त परिवार संबंधी उपबंध बिल्कुल नए हैं। मैं इसका खंडन करता हूँ। प्रवर समिति ने इसमें कोई परिवर्तन नहीं किया है। राव समिति द्वारा तैयार किए गए प्रारूप में मिताक्षरा संयुक्त परिवार संबंधी उपबंध पहले ही दिए हुए हैं। और यह 9

अगस्त में सदन के समक्ष रखा गया था। जिसे सदन ने स्वीकार किया था और प्रवर समिति को भेजा था। **(एक माननीय सदस्य : 9 अप्रैल।)** मेरा पहला कहना यह है कि प्रवर समिति ने कोई परिवर्तन नहीं किया है। प्रवर समिति ने केवल दो नए खंड इसमें जोड़े हैं–खंड 88 और खंड 89। खंड 88 में पुनीत कर्त्तव्य का सिद्धांत है। खंड 89 में संयुक्त परिवार के ऋण को अदा करने की जिम्मेदारी है। इन खंडों को जोड़ना अनावश्यक था, क्योंकि यदि आप एकबार सहभागिता तोड़ देते हैं तो पुनीत कर्तव्य के बारे में कोई स्पष्ट उपबंध करना आवश्यक नहीं है क्योंकि पुनीत कर्त्तव्य का सिद्धांत वहां लागू होता है, जहां उत्तरजीविता सम्पत्ति है? क्योंकि उत्तरजीविता के द्वारा यदि 'ख' की सम्पत्ति 'क' लेता है और 'ख' की सम्पत्ति कर्ज में डूबी हुई है, तो इस मामले में कोई विशेष सिद्धांत बनाना और 'ख' पर जिम्मेदारी थोपना उचित नहीं है क्योंकि दाय जो एक व्यक्ति को मिलता है, तो उसे लाभ और उसका कर्ज दोनों साथ ही मिलते हैं। परन्तु, मिताक्षरा के सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक सहभागी को उत्तरजीविता द्वारासम्पत्ति मिलती है, जोकि मृतक की नहीं होती। पटना उच्च न्यायालय और बम्बई उच्च न्यायालय ने हम पर बड़ा सख्त दबाव डाला कि संयुक्त परिवार के मिताक्षरा सिद्धांत की इन बातों की संहिता में स्पष्ट रूप से व्याख्या कीजाए ताकि जब कोई न्यायिक व्याख्या की बात आए, तो इस संबंध में कोई विवाद, या संदेह न हो। चूंकि संहिता का एक उद्देश्य यह भी है कि कानून को सिर्फ वकीलों के ही लिए नहीं बल्कि आम नागरिक के लिए भी बिल्कुल स्पष्ट लिखा जाए। चूंकि ये सुझाव पटना और बम्बई उच्च न्यायालय की ओर से आया है, तो हमने दो बातें शामिल करना वांछनीय समझा अर्थात् पुनीत कर्त्तव्या के मूल आधार पर ऋण अदायगी का कोई दायित्व शामिल नहीं तथा परिवार संबंधी कोई पहले ऋण का इसके अतिरिक्त और कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। यदि मेरे मित्रों को अभी भी कोई संदेह है कि मिताक्षर के संयुक्त परिवार के संबंध में हमने कोई आधारभूत परिवर्तन किए हैं, तो मैं धारा 86 (भाग 5, संयुक्त परिवार संपत्ति) की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। प्रवर समिति द्वारा लिखी गई धारा 86 शब्दश: वही है, केवल कुछ मौखिक परिवर्तनों को छोड़कर, जो कि राव समिति द्वारा तैयार किए गए मूल विधेयक में भाग-तीन 'क' धारा 2, पृष्ठ 12 पर दी गई है। इसी प्रकार धारा 87 भी शब्दशः वही है जो राव समिति के विधेयक में भाग-तीन 'क', धारा 2 पृष्ठ 12 पर दी गई है। इन दोनों का मिलान करने पर पता चलता है कि सम्पत्ति के अनुपात को छोड़कर, जिसके बारे में सदन को बताया है, इसमें कोई नई बात नहीं जोड़ी गई है परन्तु राव समिति द्वारा तैयार किए मूल विधेयक का इन्हें अंग बना दिया है।

इस बार यदि कोई और संदेह हो, तो मैं राव समिति की रिपोर्ट (पृष्ठ 13) का संदर्भ देकर उस संदेह को दूर करना चाहूंगा। राव समिति में कहा गया है (पैराग्राफ 51) :–

"अब ड्राफ्ट कोड की विषय-वस्तु पर आते हैं। जिन मुख्य प्रस्तावों पर उनमें विभिन्न प्रकार के मतभेद सामने आए, वे इस प्रकार हैं :–"

(1) मिताक्षरा प्रान्तों में जन्म से अधिकार को और उत्तरजीविता के सिद्धांत को समाप्त करना और मिताक्षरा का प्रतिस्थापना दायभाग से करना।

(2) पुत्री को आधा हिस्सा देना।

(3) हिंदू महिला की सीमित सम्पत्ति को पूर्ण सम्पत्ति में बदलना।

(4) एकविवाह को कानूनी रूप प्रदान करना।

(5) विवाह-विच्छेद के लिए कुछ उपबंध शामिल करना।

माननीय सदस्य इस बात पर ध्यान देंगे कि राव समिति ने अपने द्वारा किए जा रहे काम को सार्वजनिक कर दिया था कि उन्होंने संहिता में क्या-क्या शामिल किया है और इस बारे में क्या विशिष्ट उपबंध किए गए है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि सदन द्वारा नियुक्त पहली संयुक्त समिति, राव समिति और सरकार द्वारा एक कार्यकारी आदेश निकालकर एकत्रित किए गए साक्ष्यों को जिसने भी पढ़ा होगा उसने देखा होगा कि इस सदन में या सदन के बाहर कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जिसने संहिता के इस भाग पर ध्यान दिया है, जिसे यह भ्रम हो कि राव समिति ने सहभागिता को समाप्त करने का निर्णय लिया है या प्रस्ताव रखा है। अतः यह प्रवर समिति द्वारा खोजी गई कोई नई चीज नहीं है।

प्रवर समिति ने हिंदू संहिता को लागू करने के बारे में कुछ परिवर्तन किए हैं। राव समिति के विधेयक में यह कहा गया है कि जिन क्षेत्रों में मरुमक्काटटायम और अलियासंतानम कानून लागू होते हैं, उनमें संहिता लागू नहीं होगी। परन्तु, प्रवर समिति ने यह व्यवस्था की है कि कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं होगा, जिस पर यह संहिता लागू नहीं होगी। अतः इस उपबंध को उन्होंने निकाल दिया है।

माननीय उपाध्यक्ष : एकरूपता लाने के लिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे नहीं पता यह गलत हुआ है या ठीक, इस बारे में सदन को विचार करना है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव (अजमेर : मारवाड़) : मैं जानना चाहता हूँ कि क्या माननीय अध्यक्ष इस विचार से असहमत हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं बाद में असहमत होऊंगा। इस बारे में मैं खुले दिमाग से काम लेता हूँ।

श्री वी.एच. कामथ (सी.पी. बराड़ : सामान्य) : खाली दिमाग नहीं है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मुझे प्रत्येक प्रश्न पर आशा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मेरे द्वारा किया गया भाषण सामान्य परिस्थितियों में ऐसे अवसर पर पर्याप्त और उचित होता। परन्तु, यह तथ्य छिपाना गलत है कि सदन के कुछ लोगों को, जिनकी संख्या बहुत ज्यादा नहीं है, विधेयक के कुछ भागों पर आपत्ति है। मैं यह भी छिपाना नहीं चाहता कि सदन के बाहर अनेक लोगों की इस विधेयक में दिलचस्पी है और उसके बारे में बहुत चिंतित हैं। महोदय, यदि आप अनुमति दें तो मैं विवादास्पद मुद्दों के बारे में समाचारों में प्रकाशित लोगों की कुछ सामान्य टिप्पणियों का उल्लेख करना चाहता हूँ, जोकि इस विधेयक के आरम्भ से ही आ रही है। मैं इस मामले को खंडवार और धारावार लूंगा। मैं विवादास्पद मुद्दों पर बोलूंगा। पहले मैं विवाह और विवाह-विच्छेद पर आता हूँ। इस मामले में तीन मुद्दों पर विवाद है। पहला विवाद है कि एक वैध विवाह के लिए जाति का बंधन समाप्त करना, दूसरा है एकल विवाह की व्यवस्था और तीसरा है विवाह-विच्छेद की अनुमति।

मै सबसे पहले जाति बंधन के मुद्दे को लेता हूँ। जहां तक इस विधेयक का संबंध है, इसमें और पुरानी व्यवस्था में एक प्रकार का समझौता किया गया है। विधेयक में कहा गया है कि यदि हिंदू समुदाय का कोई सदस्य पुरानी प्रथा को मानना चाहता है, जिसमें व्यवस्था है कि जब तक वर और वधु एक ही वर्ण, एक ही जाति या उपजाति के नहीं होंगे, विवाह वैध नहीं होगा। इस संहिता में ऐसा कुछ नहीं है, जो उसकी इच्छा पर प्रतिबंध लगाता हो या उसके *धर्म* के विरुद्ध हो। इसी प्रकार यदि एक सुधारवादी जो *वर्ण* में विश्वास नहीं रखता, अपने वर्ण, जाति या उपजाति के अलावा किसी लड़की से विवाह करना चाहता है, तो उसका विवाह कानूनी रूप से वैध होगा। जहां तक विवाह कानून का संबंध है, इसमें किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं है। व्यधिकास, रूढ़िवादियों को इस बात की छूट है कि वे अपने धर्म के अनुसार चल सकते हैं। सुधारवादी, जो धर्म को नहीं मानते, जो अपनी आत्मा की बात मानते हैं उन्हें अपनी आत्मा के अनुसार चलने की अनुमति है।

श्री महावीर त्यागी (यू.पी. : सामान्य) : यदि उनकी आत्मा अपने धर्म से बाहर विवाह करने के लिए कहे, तो क्या उन्हें ऐसा करने की अनुमति है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उसके लिए दूसरा विधेयक है। मुझे इस बात की जानकारी नहीं है कि मेरे मित्र त्यागी जी अविवाहित हैं। यदि वे अविवाहित हैं, तो मैं यह विधेयक जल्दी ही ले आऊंगा।

श्री महावीर त्यागी : मैं दूसरों के लिए रास्ता बनाना चाहता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : परिणामस्वरूप, जहां इस विवाह कानून का संबंध है, हिंदू समाज का क्या होगा यदि नये और पुराने कानून में मुकाबला हो गया

है और मुझे आशा है कि नए कानून को मानने वालों की जीत होगी। परन्तु, यदि ऐसा नहीं होता है, तो हमें इस बात की संतुष्टि होगी हमने विवाह की दो समानान्तर प्रथाओं को अनुमति दे दी है। कोई भी अपनी इच्छानुसार किसी भी प्रथा को अपना सकता है। इससे न तो किसी शास्त्र का और ना ही किसी स्मृति का उल्लंघन होगा।

जहां तक एक विवाह का संबंध है, यह एक नई चीज हो सकती है। मैं बताना चाहता हूँ कि इस सदन का कोई भी सदस्य यह नहीं कह सकता कि हमारे शास्त्रों में यह लिखा है कि कोई हिंदू पति बेरोकटोक एक से ज्यादा विवाह कर सकता है। ऐसा कभी नहीं था। आज भी, दक्षिण भारत के कुछ भागों में कुछ लोग, नाटूकोटाई चेट्टियार का एक वर्ग–यह मामला प्रिवी कौंसिल में भी आया था, इस रिवाज को मानते हैं कि एक पति अपनी पत्नी की सहमति के बिना दूसरी पत्नी नहीं रख सकता। दूसरे, जब पत्नी की सहमति मिल जाती है, तो उसे अपनी पत्नी के नाम कुछ सम्पत्ति आबंटित करनी पड़ती है, जिसे तमिल भाषा में 'मोप्पू' कहते हैं। वह उसकी स्थायी सम्पत्ति बन जाती है ताकि पति को विवाह की अनुमति देने के बाद यदि पति उसके साथ दुर्व्यवहार करें, तो वह स्वतंत्र रूप से जीवनयापन कर सके। यह उदाहरण मैंने इसलिए दिया है कि एक पति बेरोकटोक एक से ज्यादा विवाह नहीं कर सकता।

एक अन्य उदाहरण मैं कौटिल्य के अर्थशास्त्र से देता हूँ। मैं नहीं जानता कि कितने सदस्य इस पुस्तक का पालन करते हैं। मैं समझता हूँ काफी सदस्य इस पुस्तक को मानते हैं। यदि वे मानते हैं, तो वे इस बात को मानेंगे कि कौटिल्य ने दूसरे विवाह को काफी सीमित किया है। सबसे पहले, किसी पति को विवाह के दस या बारह वर्ष बाद तक दूसरे विवाह की अनुमति नहीं थी, क्योंकि उसे इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि उसकी पत्नी संतान उत्पन्न करने में असमर्थ है। एक तो यह प्रतिबंध है। दूसरा प्रतिबंध यह है कि दूसरी शादी करने के लिए पति को अपनी पत्नी को वह पूरा स्त्रीधन वापस करना पड़ेगा, जो उसे विवाह के समय मिला था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में एक हिंदू पति को दूसरा विवाह करने के लिए ये दो शर्तें दी गई हैं।

तीसरे, हमारे देश में अनेक प्रान्तों में एकल विवाह के लिए कानून पारित किया गया है। उदाहरण के तौर पर 'मरुमाक्काथायम्' और 'आलियासंथनम' कानून में एकल विवाह की व्यवस्था है। इसी प्रकार, एकल विवाह के लिए बम्बई या मद्रास और बड़ौदा ने एकल विवाह के लिए कानून बनाया है।

मुझे आशा है कि उपर्युक्त उदाहरणों से सदन के समक्ष यह स्पष्ट हो जाएगा कि हम कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं कर रहे हैं। हमारे पास विभिन्न राज्यों द्वारा पारित कानून

और कौटिल्य के अर्थशास्त्र जैसे पुराने शास्त्रों के उदारहण हैं। इसके अतिरिक्त, वैवाहिक संबंधों का जहां तक संबंध है, पूरे विश्व में एकल विवाह को मान्यता मिली है।

श्री देशबन्धु गुप्ता (दिल्ली) : मुस्लिम कानून क्या कहता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जब मुस्लिम कानून पर चर्चा होगी तो उस समय इस पर प्रकाश डाला जायेगा।

जहां तक विवाह-विच्छेद का संबंध है, मैं सदन को बताना चाहता हूँ कि यह भी कोई नई चीज नहीं है। सदन का प्रत्येक सदस्य जानता है कि ऐसे समुदायों हैं, जिन्हें 'शूद्र' कहते हैं, जिनमें विवाह-विच्छेद का रीति-रिवाज है, और इसलिए हम उन्हें शूद्र कहते हैं। किसी ने भी इस बात का मूल्यांकन नहीं किया होगा कि हिंदू समाज में कितने शूद्र हैं, परन्तु मुझे इसमें थोड़ा-सा भी संदेह नहीं है कि हिंदू जनसंख्या का 90 प्रतिशत शूद्र है। उन्नत जाति से 10 प्रतिशत से अधिक नहीं हैं। मैं सदस्यों से एक बात जानना चाहता हूँ कि जिस कानून को 90 प्रतिशत लोग मानते हैं, आप उसे मानेंगे या जिस कानून को 10 प्रतिशत लोग मानते हैं, उसे आप 90 प्रतिशत लोगों पर थोपेंगे? यह एक साधारण-सा प्रश्न है, जिसका उत्तर प्रत्येक सदस्य को देना चाहिए।

जहां तक हम उन्नत जातियों का संबंध है, जिस समय नारद स्मृति या पाराशर स्मृति लिखी गई, तो इन स्मृतियों में इस बात को मान्यता प्रदान की गई कि जब एक पति अपनी पत्नी को छोड़ देता है, तो वह उसे तलाक दे देती है, जब उसका पति मर जाता है, जब वह 'परिव्रिज्य' ले लेती है, तो वह दूसरा पति पाने की हकदार है। इस बात को दिखाने के लिए मैं बाद में शास्त्रों से कुछ उदाहरण पेश करूंगा। (**एक माननीय सदस्य :** "आपका शास्त्र")। हाँ, क्योंकि मैं अन्य जाति से संबंधित हूँ।

मैं यह दिखाने के लिए उदाहरण पेश करूंगा कि देश में क्या हुआ है। किसी प्रकार वैवाहित जीवन संबंध रीति-रिवाज दुर्भाग्यवश, अनजाने में शास्त्रों पर हावी हो गए। मैं सदन को यह बताना चाहता हूँ कि जहां तक विवाह या विवाह-विच्छेद कानून में यह सिद्धांत शामिल करने का प्रश्न है, जो कुछ किया गया है, वह उचित और शास्त्रों तथा पूरे विश्व के अनुभव के आधार पर किया गया है।

दत्तक-पुत्र के मामले में तीन मुद्दे विवादास्पद हैं। जहां तक दत्तकग्रहण का संबंध है, पुराने कानूने में उसी जाति से दत्तकग्रहण होना चाहिए, हमने ऐसा नहीं किया है। जो कानून हमने विवाह के लिए बनाया है, इस मामले में भी उसी का अनुसरण किया गया है। इस मामले में भी वही बात है, कि यदि एक ब्राह्मण एक ब्राह्मण लड़के को गोद लेना चाहता है या एक शूद्र अपने समुदाय के एक लड़के को गोद लेना चाहता है, तो वे ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं। यदि एक ब्राह्मण किसी शूद्र को गोद लेना चाहता है,

तो उसको इसकी अनुमति है। अतः इसमें किसी प्रकार की रोक नहीं है।

सेठ गोविंद दास (सी.पी. बराड़ : सामान्य) : आप ऐसे ब्राह्मण को प्रबुद्ध है क्यों कहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे नहीं पता मेरे विचार से यह प्रबुद्ध है। आपके विचार से वह मूर्ख हो सकता है, परन्तु यह एक मतभेद है।

जहां तक एक दत्तक पुत्र द्वारा उस सम्पत्ति को चुनौती देने का प्रश्न है, जिसे विधवा ने उसे दत्तकग्रहण करने से पहले किसी अन्य को हस्तांतरिक कर दिया था। मैं नहीं समझता किस इस मामले में कोई विवाद होगा। इस बात में कोई औचित्य नहीं है कि एक दत्तक पुत्र को दत्तक ग्रहण वाले पिता की मृत्यु से ही उसका पुत्र मान लिया जाए। यह एक कोरी कल्पना है। इसका कोई अर्थ नहीं है। यह केवल एक कल्पना ही नहीं है बल्कि इसमें मुकदमेबाजी होती है और बड़ी कठिनाई आती है। अतः दत्तकग्रहण और सम्पत्ति का अधिकार साथ-साथ होना चाहिए। मैं समझता कि सदन का कोई सदस्य यह कहेगा कि इसे स्वीकार नहीं किया जाए। (**श्री बी.दास. :** हमें इसे स्वीकार करते हैं।)

इसी प्रकार, दत्तक पुत्र पर मां को पूरी तरह छोड़ देने और उसे उसके द्वारा दिए जाने वाले भरण-पोषण पर जीवित रहने के लिए मजबूर करने पर प्रतिबंध लगाने के मामलों में सदन का कोई भी सदस्य यह नहीं मानेगा कि यह उचित है। मैं समझता हूँ कि दत्तकग्रहण के अधिकार को जारी रखा जाए, जिसे रूढ़िवादी समुदाय में काफी महत्त्व दिया है, परन्तु महोदय मेरी समझ में एक बात नहीं आती कि दत्तकग्रहण क्यों किया जाए। जो लोग दत्तक- ग्रहण करते हैं, उनमें से अधिकांश का नाम इतिहास में रिकार्ड नहीं होता। जहां तक मेरा व्यक्तिगत प्रश्न है, मैं नहीं चाहूंगा कि मेरा नाम इतिहास में लिखा जाए, क्योंकि मेरा रिकार्ड बहुत कमजोर है। मैं हिंदू समुदाय का एक असाधारण-सा व्यक्ति हूँ। परन्तु, अनेक ऐसे लोगं हैं जिनका कोई रिकार्ड लिखने योग्य नहीं है। यह बात समझ में नही आती कि एक बेवकूफ को, एक अनपढ़ को, एक चरित्रहीन लड़के को क्यों गोद लिया जाए, जिसका यह पता नहीं कि वह कैसा निकलेगा। उसे एक गरीब महिला पर हुक्म चलाने और उसके पास जो सम्पत्ति है, उसे उससे वंचित करने के लिए क्यों दत्तकग्रहण किया जाए। अतः मेरा कहना है कि यदि आप दत्तकग्रहण नहीं रखना चाहते हैं, तो ऐसी व्यवस्था की जाए कि दत्तक पुत्र मां को उसकी सम्पत्ति, जो उसका सहारा है, बिल्कुल वंचित न कर पाए। मैं नहीं समझता ंकि इस मामले में कोई विवाद है।

जहां तक प्रथागतदत्तक ग्रहण को समाप्त करने की बात है, मैं दो बातें कहना चाहता हूँ। यह एक आम बहस है, जिसे सदन स्वीकार करेगा। वह यह है। संहिता प्रथागत

कानून के विपरीत है। यह एक मूल तर्क है। यदि आप एक संहिता को बनाए रखना चाहते हैं और उसके साथ ही एक रिवाज को भी जारी रखने और उस रिवाज को संहिता के खिलाफ इस्तेमाल करने की अनुमति देते हैं, जो संहिता बनाने का कोई लाभ नहीं क्योंकि एक रिवाज संहिता को समाप्त कर देता है और उसको अमान्य बना देता है। कृत्रिम दत्तक पुत्र, गोफा दत्तकग्रहण और दवैमुशायान जैसे प्रथागत दत्तक ग्रहण वास्तव में दत्तकग्रहण नहीं है। प्रिवी कौंसिल ने अपने निर्णय में कहा है कि दत्तक ग्रहण एक धार्मिक मामला है। दत्तक पुत्र सम्पत्ति प्राप्त करना एक गौण बात है। वह सम्पत्ति प्राप्त कर सकता है, वह सम्पत्ति नहीं भी प्राप्त कर सकता है, और यदि वह सम्पत्ति नहीं भी प्राप्त होता है। फिर भी धार्मिक दृष्टि से दत्तकग्रहण जैसा है। अत: मेरा कहना है कि ये प्रथागत दत्तक ग्रहण कोई दत्तक ग्रहण नहीं है। ये तो केवल दो परिवारों द्वारा एक समझौते के जरिए सम्पत्ति को अपने पास रखने का एक तरीका है।

मेरे विचार में, हमने संविधान पारित कर दिया है और राज्य की नीति के निदेशक सिद्धांतों की एक धारा में लिखा है कि सम्पत्ति को एक या कुछ व्यक्तियों के हाथों में रखने की अनुमति नहीं दी जाएगी। अत: दो परिवारों द्वार समझौता करके सम्पत्ति में हिस्सेदारी करने के "दवैमुशायान" जैसे तरीकों को सहन नहीं किया जाएगा। नहीं, तो जो पक्ष ईमानदारी से दत्तक ग्रहण चाहती हैं, वे कानून के अनुसार दत्तकग्रहण क्यों नहीं करती।

माननीय उपाध्यक्ष : अब एक बज चुका है। माननीय मंत्री दोपहर के भोजन के बाद अपना भाषण जारी रख सकते हैं।

तत्पश्चात् सभा की बैठक मध्याह्न भोजन के लिए 2.30 बजे तक स्थगित हुई।

सभा की बैठक मध्याह्न भोजन के पश्चात् 2.30 बजे पुन: समवेत हुई।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : न।

(श्री अनन्तशयम आयंगर पीठासीन हुए।)

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं सहभागीदारी संबंधी नियम के मामले में विवादास्पद मुद्दों पर बोलना चाहता हूँ। प्रश्न उठाया गया है कि विधेयक में 'मिताक्षरा' कानून द्वारा निर्धारित सहभागीदारी को समाप्त करने की मांग क्यों की गई है। इस मामले में पूरी तरह सोच-विचार करने के बाद, इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि इस पर तीन दृष्टिकोण से विचार किया जाना चाहिए। पहली बात तो यह देखना है कि सहभागीदारी में कितनी सम्पत्ति है। यदि एक व्यक्ति के पास उसकी सम्पत्ति का बहुत बड़ा भाग सहभागीदारी सम्पत्ति का है, तो इस पर गंभीरता से विचार किए जाने की आवश्यकता है। अत: यह मामले का पहला प्रश्न है जिस पर विचार किया जाना चाहिए।

दूसर प्रश्न जिस पर विचार किया है, वह सहभागीदारी वाली सम्पत्ति को अधिकार में रखने का है कि क्या कोई सहभागी व्यक्तिगत रूप से सम्पत्ति को दस्तांतरित करने का अधिकार रखता है? तीसरी बात यह कि क्या किसी सहभागी को सहभागिता तोड़ने का अधिकार है? यदि सहभागीदारी सम्पत्ति की श्रेणी में आनेवाली सम्पत्ति कुल सम्पत्ति का एक छोटा-सा हिस्सा है, तो इस मामले में अलग प्रश्न उठता है। इसी प्रकार, यदि एक सहभागी के पास वर्तमान हिंदू कानून के अंतर्गत अपने हिस्से की सम्पत्ति की हस्तांतरित करने का अधिकार है, तो क्या सहभागीदारी वाली सम्पत्ति का निराकरण करने वाले विधेयक का अर्थ कुछ और होगा? इसी प्रकार, यदि वर्तमान हिंदू कानून के अन्तर्गत किसी सहभागी को सहभागिता को तोड़ने का अधिकार उत्तराधिकार में मिला हुआ है, तो मेरा कहना है कि यह प्रश्न महत्वहीन हो जाता है कि यह विधेयक सहभागिता को समाप्त करता है, जैसा कि सदन के अधिकांश सदस्य और सदन से बाहर लोग समझते हैं।

अब मैं पहला प्रश्न लेता हूँ। इस तथ्य के बावजूद कि एक व्यक्ति सहभागीदारी वाली सम्पत्ति का सदस्य है, वह सहभागीदारी वाली सम्पत्ति के अलावा कितनी सम्पत्ति रख सकता है। मेरे मित्र ने इस प्रश्न पर ध्यान दिया होगा, उसने देखा होगा कि वर्तमान हिंदू नियम के अन्तर्गत एक सहभागी अपनी अलग से कितनी भी सम्पत्ति रख सकता है जबकि वह एक सहभागी भी है। एक सहभागी दो तरह की सम्पत्ति रख सकता है—एक तो वह सम्पत्ति जो सहभागीदारी वाली सम्पत्ति है और दूसरी वह सम्पत्ति जो सहभागीदारी वाली सम्पत्ति नहीं है और वह उसकी अपनी है तथा उत्तरजीविता के कानून के अन्तर्गत नहीं जा सकती।

मैं सदन को बताना चाहता हूँ कि एक सहभागी कितनी तथा किस प्रकार की सम्पत्ति रख सकता है। मैंने हिंदू कानून की पुस्तकों में देखा है कि एक व्यक्ति सहभागी होते हुए निम्नलिखित श्रेणियों की सम्पत्ति रख सकता है। पहली, एक तो वह सम्पत्ति जो उसे अपने पिता, दादा और पड़दादा के अलावा किसी हिंदू से उत्तराधिकार में मिली है। यदि एक हिंदू एक ऐसे व्यक्ति से सम्पत्ति प्राप्त करता है जो उसका मित्र, दादा या पड़दादा नहीं है, तो वह सम्पत्ति उसकी अपनी अलग सम्पत्ति है और सहभागीदारी वाली सम्पत्ति से उसका कोई संबंध नहीं होता। दूसरी वह सम्पत्ति है, जो उसे अपने नाना से उत्तराधिकार में मिली है। तीसरी पैतृक अचल सम्पत्ति है, जो उसके पिता ने उसे तोहफे के रूप में दी है। चौथी वह सम्पत्ति है, जो उसे सरकार ने अनुदान में दी है। ये सम्पत्ति उसकी अपनी सम्पत्ति होती है तथा इनका सहभागीदारी वाली सम्पत्ति से कोई सम्बन्ध नहीं होता। पांचवी वह पैतृक सम्पत्ति है, जो परिवार के अधिकार से निकल चुकी है, और उसने बिना परिवार की सहायता के स्वयं प्राप्त की है। यद्यपि वह सम्पत्ति सहभागीदारी वाली सम्पत्ति होती है, परन्तु वह उसकी अपनी बन जाती है। छठी वह सम्पत्ति है, जो

उसने अपनी अलग सम्पत्ति की आय से खरीदी है। वह भी उसकी अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति है। सातवीं, एक संतानहीन पुरुष सहभागी को बंटवारे के बाद मिलने वाला हिस्सा। आठवीं, एक एकमात्र जीवित सहभागी की सम्पत्ति, जिसकी कोई ऐसी विधवा नहीं होती जिसके पास दत्तकग्रहण का कोई अधिकार हो। नौंवी, संयुक्त परिवार के एक सहभागी द्वारा अपनी अलग से अर्जित सम्पत्ति। दसवीं, विद्या से प्राप्त लाभ। मिताक्षरा कानून के अन्तर्गत इन दस श्रेणियों की आम एक सहभागी की अपनी आय होती है।

मैं इसके बारे में उदाहरण देता हूँ। हमारे सचिवालय में सैंकड़ों क्लर्क हैं। कुछ को बहुत कम वेतन मिलता है और कुछ को मंत्रिमंडल के सदस्यों से भी ज्यादा, अर्थात् 4000 रुपये से भी अधिक मिलते हैं। (**माननीय सदस्य** : क्लर्क? क्या वे क्लर्क हैं?) मेरा अर्थ अधिकारी। एक अर्थ में वे प्रतिष्ठित क्लर्क है।

मैं सदन को यह बताना चाहता हूँ कि इतनी अधिक आय, जैसे विद्या से आम, जो कि एक व्यक्ति की 4000 रुपये तक हो सकती है, तो यह आम संयुक्त परिवार के भरण पोषण के लिए संयुक्त परिवार को मिलनी चाहिए। क्या होता है? विद्या से प्राप्त आम संबंधी अधिनियम के अन्तर्गत, जिसे इसी सदन ने कुछ वर्षों पहले पारित किया था। एक व्यक्ति द्वारा विद्या से प्राप्त आय, जो विद्या उसे परिवार की सहायता से प्राप्त हुई थी, उसकी अपनी व्यक्तिगत बन जाती है। मेरा कहन यह है कि मिताक्षरा कानून में संशोधन करके इन श्रेणियों में आने वाली इनती अधिक आय को जब व्यक्तिगत आय बना दिया गया है तो सहदायिकी सम्पत्ति के नाम पर क्या रह जाता है? मेरा कहना है कि सहदायिकी सम्पत्ति के नाम पर बहुत थोड़ी-सी सम्पत्ति बच जाती है। अब मैं दूसरा प्रश्न लेता हूँ कि सहदायिकी बहुत बहुती संकीर्ण और सीमित होती है और यह संयुक्त परिवार की तरह नहीं होती है। यह कहा जाता है कि सहभागिकी प्रणाली में हिंदू सम्पत्ति सुरक्षित रहनी चाहिए, परिवार के किसी सदस्य द्वारा इसका अपव्यय नहीं किया जाना चाहिए। मैं सदन के समक्ष यह प्रश्न रखना चाहता हूँ कि यह सच है कि इस सम्पत्ति का हस्तांतरण नहीं किया जा सकता, इसका अपव्यय नहीं किया जा सकता। इसका उत्तर नकारात्मक है। इस मामले में मैं पिता का एक उदाहरण देता हूँ। पिता पूर्व ऋण को चुकाने में संयुक्त सम्पत्ति का हस्तांतरण कर सकता है। पिता ने एक हजार या दो हजार रुपये वचनपत्र देकर कर्ज लिया हुआ है। इसके बाद छः महीने पश्चात् वह सहभागिकी सम्पत्ति को बेचने का हकदार बन जाता है, ताकि वह उस कर्ज को चुका सके। मैं सदन से यह पूछना चाहता हूँ कि क्या पिता को अपना व्यक्तिगत या पूर्ण कर्ज चुकाने के लिए इतना बड़ा अधिकार देना उचित है। सदन को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि मिताक्षरा कानून के अन्तर्गत सम्पत्ति के हस्तांतरण के मामले में प्रबंधन और पिता दो अलग चीजें हैं। यह सच है कि एक प्रबंधक तक तक सम्पत्ति का हस्तांतरण नहीं कर सकता जब तक कि यह सिद्ध न हो जाए कि ऐसा करना परिवार के लिए आवश्यक

है। लेकिन एक पिता के लिए ऐसा कोई बन्धन नहीं है। एक पिता स्वयं के लि कर्ज लेता है परन्तु वह अपने व्यक्तिगत कर्ज को चुकता करने के लिए सहभागिकी सम्पत्ति का हस्तांतरण करने का हकदार है, जबकि वह कर्ज उसने परिवार की जरूरत के लिए नहीं लिया है। उसके लिए एक बंधन है कि कर्ज कि किसी अनैतिक और अपवित्र कार्य के लिए नहीं लिया जाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है, तो पिता पूरी सहभागिकी सम्पत्ति को हस्तांतरित कर सकता है। इसकी कोई सीमा नहीं है।

इसी प्रकार, पुत्र का मामला है। मिताक्षरा कानून के अन्तर्गत पुत्र किसी भी समय परिवार की सम्पत्ति के बंटवारे की मांग कर सकता है। मैं इस तर्क को ठीक समझता यदि हिंदू कानून के अन्तर्गत ऐसा होता है कि कोई भी सहभागी सम्पत्ति को हस्तांतरित नहीं कर सकता, सम्पत्ति एक सहदायिकी सम्पत्ति रहनी चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं है। सहदायिका सम्पत्ति को समाप्त करने का कारण सहभागिकी में स्वयं है, क्योंकि सहदायिकी कानून में ही जन्म से यह अधिकार दिया हुआ है कि सम्पत्ति के बंटवारे की मांग की जा सकती है। जिससे पूरा समाज बिखर जाता है।

तीसरे, हालांकि यदि पुत्र को सम्पत्ति हस्तांतरण का अधिकार नहीं है, परन्तु वह अपने व्यक्तिगत कार्यों के लिए ऋण ले सकता है, और ऋणदाता को वसूली के लिए सहदायिकी की सम्पत्ति के बंटवारे हेतु मुकदमा कर सकता है। एक अजनबी को सहदायिकी भंग करने का अधिकार है। मेरे मित्र जो इस मामले में बहुत चिंतित हैं, मैं उनसे एक बात पूछना चाहता हूँ कि जब सम्पदा का एक बहुत बड़ा भाग, परिसम्पत्तियों का बहुत बड़ा भाग सहदायिकी सम्पत्ति का हिस्सा नहीं होता है और पिता को अधिकार है कि वह अनैतिक ऋण को छोड़कर सहदायिकी की कितनी भी सम्पत्ति को हस्तांतरिक कर सकता है और पुत्र का अधिकार है कि वह किसी भी समय सम्पत्ति का बंटवारा कर सकता है, पुत्र को अधिकार है कि वह सहदायिकी सम्पत्ति पर ऋण ले सकता है और ऋणदाता को सम्पत्ति के बंटवारे के लिए मुकदमा चलाने का अधिकार दे देता है, तो क्या यह प्रणाली ठोस है, क्या यह प्रणाली सुस्पष्ट है, क्या यह प्रणाली धोखेबाजी से रहित है? मेरा कहना है कि यह वर्तमान कानून विघटनकारी है। अतः इस विधेयक में मूल रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि हिस्सा अलग होगा। आज परिस्थियां ऐसी है कि प्रत्येक व्यक्ति अलग रहना चाहता है। जैसे ही पिता की मृत्यु होती है, पुत्र दावा करता है कि जो तथ्य आज विद्यमान हैं, उन्हीं को माना जाए। विधेयक के इस मांग में ऐसी कोई मूल बात नहीं की जाती है।

मैं एक बात कहना चाहता हूँ, जो सामान्य तौर पर महसूस नहीं की जाती। मैंने शुरू में कहा था कि सहदायिकी और संयुक्त परिवार में अन्तर होना चाहिए। इस विधेयक में सहदायिकी को समाप्त किया गया है और संयुक्त परिवार को रखा गया है। संयुक्त परिवार बनाए रखने में इससे कोई रुकावट पैदा नहीं होगी। केवल एक बात की गई है कि मिताक्षरा के अन्तर्गत संयुक्त परिवार का स्वरूप वही होगा, जो दायभाग कानून के

अन्तर्गत संयुक्त परिवार का है। यह नहीं समझा जाना चाहिए कि बंगाल में मिताक्षरा कानून नहीं है, तो वहां संयुक्त परिवार ही नहीं है। वहां संयुक्त परिवार है। केवल अन्तर यही है कि संयुक्त परिवार के संयुक्त अधिकारियों के अधिकार अब एक सामान्य अधिकारी के अधिकार के रूप में होंगे। वर्तमान मिताक्षरा कानून और भविष्य के मिताक्षरा कानून में केवल यही अन्तर होगा।

अब मैं महिला सम्पत्ति के बारे में बोलना चाहता हूँ। मुझे पता नहीं सदन के कितने सदस्यों को इस विषय से जुटी जटिलताओं की जानकारी है। जहां तक मैंने इस विषय का अध्ययन किया है, हिंदू कानून में इस विषय से, महिला सम्पत्ति से जुड़ी जटिलताओं से कठिन कोई विषय नहीं है। (**एक माननीय सदस्य :** जैसे कि महिला स्वयं जटिल है।) जैसे कि महिला स्वयं है। यदि आप यह प्रश्न करते हैं कि स्त्रीधन क्या है, उस प्रश्न का उत्तर देने से पहले आपको एक प्रश्न और पूछना होगा और इसका उत्तर मिलेगा सबसे पहले आप पूछिए क्या वह अविवाहित है या वह विवाहित है। क्योंकि स्त्रीधन क्या है वह महिला के इस दर्जे पर निर्भर करता है। कुछ स्त्रीधन वह सम्पत्ति होती है, जो उसे अविवाहित होते हुए मिलती है और कुछ ऐसी सम्पत्ति होती है जो उसे विवाह के बाद मिली सम्पत्ति भी स्त्रीधन नहीं होती। इसके परिणामस्वरूप, यदि आप प्रश्न पूछते हैं कि स्त्रीधन एक अविवाहित का है या विवाहित महिला का। क्यों एक अविवाहित स्त्री के स्त्रीधन की परंपरा एक विवाहित स्त्री के स्त्रीधन की परंपरा से बिल्कुल अलग है। जब आप विवाहित स्त्री की सम्पत्ति के बारे में उत्तराधिकार परंपरा की बात करते हैं, तो आपको अलग प्रश्न पूछना होगा कि क्या वह बंगाल स्कूल के अन्तर्गत होती है या वह मिताक्षरा स्कूल के अन्तर्गत आती है। यदि आप प्रश्न पूछते हैं कि क्या वह मिताक्षरा स्कूल के अन्तर्गत आती है, तो तब तक आपको इसका निश्चित उत्तर नहीं मिलेगा, जब तक आप इस बात का पता नहीं लगा लेते कि वह मिथिला स्कूल या बनारस स्कूल या अन्य किसी स्कूल के अन्तर्गत आती है। यह एक बहुत ही जटिल विषय है। सदस्यों से अनुरोध है कि वे दो बातें दिमाग में रखें। पहली बात तो यह है कि आमतौर पर स्त्री सम्पत्ति को दो श्रेणियों के अन्तर्गत रखा जा रहा है। पहली श्रेणी में स्त्रीधन आता है और दूसरी श्रेणी में विधवा की सम्पत्ति आती है। दूसरी सम्पत्ति वह है, जो उसे अपने परिवार के किसी पुरुष सदस्य से उत्तराधिकार में मिलती है और वर्तमान कानून के अन्तर्गत जो उसे केवल अपने जीवनकाल में ही मिलती है और उसके पश्चात् वह सम्पत्ति पुरुष के उत्तरभोगियों के पास चली जाती है।

इसलिए, जहां तक स्त्री की सम्पत्ति का संबंध है, दो विभिन्न प्रकार का उत्तराधिकार होता है और दो विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति होती है। स्त्रीधन और विधवा की सम्पत्ति। स्त्रीधन के उत्तराधिकारी और पुरुष सदस्य से उसे उत्तराधिकार में मिली सम्पत्ति के उत्तराधिकारी अलग–अलग हैं। अतः हिंदू कानून की इस शाखा को संहिताबद्ध करने के लिए इस प्रश्न पर विचार करना पड़ेगा। क्या आप चाहते हैं कि इस समय प्रचलन

में जो दो प्रकार की सम्पत्ति है अर्थात् स्त्रीधन और विधवा की सम्पत्ति, इन्हें आप बनाए रखना चाहते हैं? दूसरे, क्या आप चाहते हैं कि उत्तराधिकार की दो परंपराएं रखी जाएं–एक स्त्रीधन के लिए उत्तराधिकार की परंपरा और दूसरी विधवा की सम्पत्ति के लिए उत्तराधिकार की परंपरा? इस कानून को संहिताबद्ध करने के लिए ये दो मुख्य प्रश्न हैं। समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि यदि वर्तमान स्थिति को बनाए रखा जाता है, तो संहिताबद्ध करने का उद्देश्य ही असफल हो जाएगा। हमें यह निर्णय करना है कि एक स्त्री या तो पूर्ण सम्पत्ति की हकदार होगी या पूर्ण सम्पत्ति की हकदार नहीं होगी। हमें यह भी निर्णय करना है कि महिला के उत्तराधिकारियों की पंक्ति एक जैसी होगी या अलग–अलग होगी। समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि जहां तक सम्पत्ति के अधिकारों का संबंध है, इसमें एकरूपता होनी चाहिए, और एकरूपता से ही महिला को पूरी सम्पत्ति का हकदार होने का पता चलेगा।

मैं जानता हूँ कि स्त्री को पूर्ण सम्पत्ति मिलने के मामले में हमेशा बहस होती है। यह कहा जाता है कि स्त्री अल्पबुद्धि होती है। यह कहा जाता है कि उस पर सभी प्रकार के लोग दबाव डालते हैं, जिसके परिणामस्वरूप, महिलाओं को चालाक पुरुषों के सभी प्रकार के दबाव में रखना बहुत खतरनाक होगा। वे सम्पत्ति को निबटाने के लिए उस पर हर तरह का दबाव डालते हैं, जो कि उनके लिए और उस परिवार के लिए हानिकारक होता है, जिससे उन्हें उत्तराधिकार में सम्पत्ति मिलती है। समिति ने बहुत ही साधारण–सा दृष्टिकोण अपनाया है। कुछ मामलों में या स्त्रीधन जैसी सम्पत्ति के कुछ मामलों में स्मृतियों में स्त्री को पूर्ण अधिकार देने की बात कही गई है। इस बात पर कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है कि स्त्रीधन पर स्त्री का पूर्ण अधिकार होता है। वह इसका जैसे चाहे इस्तेमाल कर सकती है। मेरा सदन से यह कहना है कि यदि स्त्री को अपने स्त्रीधन का अपनी इच्छा से इस्तेमाल करने का अधिकार है और मिताक्षरा कानून के अन्तर्गत इस पर कोई आपत्ति नहीं कर सकता, तो यह सिद्ध करना विपक्षी पार्टी का काम है कि सम्पत्ति का कुछ भाग, जो उसे उत्तराधिकार में मिला है, वह स्त्री की पूर्ण सम्पत्ति नहीं होनी चाहिए। जब स्त्री को सम्पत्ति के एक भाग का हस्तांतरित करने का अधिकार है, तो यह सिद्ध करना विपक्षी पार्टी का काम है कि सम्पत्ति के एक विशेष भाग को हस्तांतरित करने का उसे अधिकार नहीं है। समिति इस मामले का समाधान ढूंढने में असफल रही है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूँ, कि जब स्त्री को सम्पत्ति के भाग को बेचने या हस्तांतरित करने का अधिकार है, तो उसे दूसरे भाग को भी बेचने या हस्तांतरित करने का अधिकार होना चाहिए। यही कारण है कि समिति ने यह नियम बनाया है कि स्त्री को पूर्ण सम्पत्ति का अधिकार होगा।

स्त्री की सम्पत्ति से संबंधित दूसरा प्रश्न पुत्री के हिस्से का है। मैं जानता हूँ क यह बहुत ही नाजुक और चिंता का विषय है। विश्व में, भारत में आज भी ऐसे रूढ़िवादी

और गैर-रूढ़िवादी लोग हैं, जो पुत्री पैदा करना नहीं चाहते। यदि पुत्रियां पैदा नहीं होंगी, तो इस दुनिया का क्या होगा। इसके साथ ही माता-पिता पुत्री को वह प्यार नहीं देते जो उन्हें पुत्र और पुत्री दोनों को समान रूप में देना चाहिए। परन्तु मैं प्रवर समिति द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पर ज्यादा बहस के हक में नहीं हूँ और इस मामले में थोड़ा ही कहूंगा। पहली बात सदन को मैं यह बताना चाहता हूँ। समिति द्वारा उत्तराधिकारियों में पुत्री को शामिल किया जाना कोई नई बात नहीं है। माननीय सदस्य इस बात को जानते हैं कि मिताक्षरा और दायभाग के अनतर्गत उत्तराधिकार के कानून में पुत्री को शामिल किया गया है, जो कि एक संहत शृंखला है। जैसा कि सदस्य जानते हैं कि हिंदू उत्तराधिकारियों को विभिन्न श्रेणियों में बांटा गया है। पहली श्रेणी संहत श्रृंखला है। इसके बाद '*स्पिनदास*' श्रेणी है और इसके बाद '*समानोतक*' है : इसके बाद बंधुओं की श्रेणी आती है। बंधु तीन श्रेणियों में बंटे हैं : *आत्म बंधु, पितृ बंधु* और *मातृ बंधु* संहत शृंखला उत्तराधिकारियों की एक विशेष किस्म की शृंखला जो कि *गौत्रज, समानो*दक और *बंधु* संबंधी उत्तराधिकार के मूल सिद्धांत के अनुरूप नहीं होती क्योंकि यह एक मिश्रित श्रेणी है। यह दो आधारों पर टिकी है। यह रिश्तों और धार्मिक प्रभाव पर आधारित है। यह '*स्पिनदास*', *समानो*दक और *बंधु* श्रेणियों के लिए निर्धारित मापदण्डों का अनुरूप नहीं है।

अपराह्न 3.00 बजे

यदि आप दोनों कानूनों को मिताक्षरा और दायभाग को मानें, तो पुत्री संहत शृंखला में शामिल है। मिताक्षरा और दायभाग में केवल एक ही अन्तर है। दायभाग के अनुसार उत्तराधिकार में समर्पण क्षमता आवश्यक है। इसके परिणामस्वरूप दायभाग में एक विवाहित पुत्री, एक अविवाहित पुत्र, एक विवाहित पुत्री, जिसके पास पुत्र है और एक विधवा पुत्री के लिए अलग कानून है। इसमें उस पुत्री को अधिमानता दी गई है, जो विवाहित है और जिसके पास पुत्र है। उसके बाद विवाहित पुत्री को अधिमानता दी गई है। तीसरे नम्बर में अविवाहित पुत्री है। लेकिन यह उस श्रेणी में है इसका होने का कारण यह है कि विवाहित पुत्री जिसके पास पुत्र है, वह समर्पण कर सकती है, उसका पुत्र समर्पण कर सकता है। एक अविवाहित पुत्री को कोई पुत्र नहीं होता, इसलिए वह समर्पण नहीं कर सकती। इसलिए उसे नीचे रखा गया है। परन्तु, मैं इस बात पर बल देना चाहता हूँ और सदन को भी यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि पुत्री को संहत शृंखला में शामिल करके कोई नया काम नहीं किया गया है। वह मिताक्षरा और दायभाग कानूनों के अन्तर्गत इस शृंखला में हमेशा से थी। सिर्फ इस विधेयक में पुत्री का दर्जा बढ़ाने का नया काम किया गया है। इस विधेयक के अन्तर्गत वह पुत्र, विधवा, पूर्वमृत पुत्र की विधवा, पूर्वमृत पुत्र के पूर्वमृत पुत्र के पुत्र, पूर्वमृत पुत्र के पूर्वमृत पुत्र की विधवा के साथ उत्तराधिकारियों में शामिल है।

मूलत: और विशेषकर मिताक्षरा कानून के अन्तर्गत कोई महिला किसी भी प्रकार के हिस्से की हकदार नहीं है। वर्ष 1937 में इस कानून के परिवर्तन करके मृतक की विधवा,

पूर्वमृत्त पुत्र की विधवा, पोते की विधवा और पड़-पोते की विधवा को उत्तराधिकारियों में शामिल कर दिया गया था। पुत्री को शामिल नहीं किया गया था। तत्कालीन सरकार पुत्री को विधवा और पूर्वमृत्त पुत्रों की विधवाओं और पूर्व पुत्र पुत्रों के पूर्वमृत्त पुत्रों की विधवाओं के समान नहीं रखना चाहती थी। इस विधेयक में केवल यही नया काम किया गया है। पुत्री को केवल उत्तराधिकारियों के क्रम में ऊपर कर दिया गया है। ऐसा नहीं है कि उसे पहली बार उत्तराधिकारी बनाया गया है।

अब मैं उसके हिस्से की बात पर आता हूँ। जैसा कि राव समिति ने और शास्त्र जानने वाले साक्ष्यों ने कहा है, पुत्री पुत्र के साथ उत्तराधिकारी थी और अपने पिता की सम्पत्ति में वह चौथाई भाग की हिस्सेदार थी। इसे 'याज्ञवाल्कय' और 'मनु' में स्वीकार किया गया है। मैंने एक बार 137 स्मृतियां गिनी थीं और मुझे नहीं पता कि हमारे पुराने ब्राह्मण स्मृतियां क्यों लिखते थे और उन्होंने और कार्य क्यों नहीं किया और यह कहना कठिन है कि स्मृति लिखना उस समय का उनका सर्वोच्च कार्य था। इसमें कोई संदेह नहीं कि दो स्मृतिकारों ने–'मनु' और 'याज्ञवल्कय' ने इन 137 स्मृतियों में सबसे अधिक स्मृतियां लिखी हैं। दोनों ने ही पुत्री को चौथे भाग का हकदार बनाया है। यह बहुत खेद की बात है कि रीति-रिवाजों के कारण इसका प्रभाव समाप्त हो गया, अन्यथा स्मृतियों के अनुसार पुत्री चौथाई भाग की हकदार होती। प्रिवी कौंसिल ने जो विनिर्णय दिया है, उसके लिए मुझे खेद है। इससे कानून में सुधार करने का मार्ग बंद हो गया। प्रिवी कौंसिल ने निर्णय दिया था कि रीति-रिवाज कानून से ऊपर हैं, जिसके परिणामस्वरूप न्यायापालिका के लिए पुरानी संहिता और ऋषियों तथा स्मृतिकारों द्वारा निर्धारित नियमों की जांच करना असंभव हो गया। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि प्रिवी कौंसिल ने यह निर्णय नहीं दिया होता, तो कुछ वकील, कुछ न्यायाधीश इस बात की जांच अवश्य करते कि 'याज्ञवल्कय' और मनुस्मृति में क्या कहा गया है और स्त्री आज सम्पत्ति का कम से कम चौथाई हिस्से की हकदार होती।

मूल विधेयक में पुत्री के हिस्से को बदलकर आधा किया गया है। प्रवर समिति ने एक कदम और आगे बढ़ते हुए पुत्री के हिस्से को पुत्र के बराबर कर दिया है।

मैं यह बात नहीं बता सकता कि प्रवर समिति में क्या हुआ और यह व्यवस्था किस प्रकार की गई है। मैं पूरी तरह...

श्रीमती रेणुका रे (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : सर्वसम्मति से।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या पुत्र के दुगुने हिस्से और विधेयक की व्यवस्था के अनुसार पुत्री को आधे हिस्से के बारे में कोई समझौता हुआ था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : किसी प्रकार का समझौता नहीं हुआ। मेरे दुश्मन मेरे समर्थकों के साथ मिल गए और मेरे दुश्मनों ने सोचा कि यदि विधेयक बदतर बना तो इसकी आलोचना होगी।

श्री एम.वी. कामथ : क्या आपके कोई दुश्मन हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : स्थिति यह है कि जहां तक पुत्री के हिस्से का संबंध है, हमने यही नया काम किया है कि पुत्री के हिस्से को बढ़ा दिया गया है और उसके हिस्से को पुत्र या विधवा के बराबर कर दिया गया है। यदि आप मुझसे सहमत हैं तो कोई नया काम नहीं किया गया है और यह स्मृतियों के अनुसार किया गया है।

मैं आपको यह भी बताना चाहता हूँ कि पुत्री के हिस्से पर चर्चा करते समय हमने उत्तराधिकार की सभी प्रणालियों का अध्ययन किया है। हमने उत्तराधिकार की मुस्लिम प्रणाली का अध्ययन किया। उत्तराधिकार की पारसी प्रणाली का अध्ययन किया, हमने भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम और उत्तराधिकार की निर्धारित परंपरा का अध्ययन किया है और हमने उत्तराधिकार की ब्रिटिश प्रणाली का अध्ययन किया है। किसी भी प्रणाली में पुत्री को हिस्से से वंचित नहीं किया गया है। विश्व में कोई ऐसी प्रणाली नहीं है, जिसमें पुत्री को हिस्से से वंचित किया गया हो।

महोदय, एक प्रश्न निरंतर उठाया जा रहा है, कि पुत्री को हिस्सा देने का मतलब है, परिवार का विघटन। मैं स्पष्ट रूप से बताना चाहता हूँ कि मैं इससे सहमत नहीं हूँ। यदि एक व्यक्ति के 12 पुत्र हैं और एक पुत्री है और यदि 12 पुत्र अपने पिता की मृत्यु के दिन तुरन्त सम्पत्ति का बंटवारा करते हैं और पिता की सम्पत्ति का 12वां हिस्सा प्रत्येक को मिलता है, तो क्या यदि पुत्री भी 13वें हिस्से की मांग कर ले तो यह बंटवारा ज्यादा बदतर होगा?

12 हिस्से किसी भी तरह 13 हिस्से से ज्यादा अच्छे नहीं हैं। सम्पत्ति को टुकड़ों में बांटने से रोकने के लिए उत्तराधिकार के नियम के जरिए नहीं बल्कि किसी अन्य कानून के जरिए से ऐसा करना पड़ेगा। राष्ट्रीय उत्पादन के उद्देश्य से कुछ ऐसा करना पड़ेगा जिससे कि बंटवारे से सम्पत्ति से मिलने वाला लाभ कम न हो।

श्री टी.ए. रामालिंगम (मद्रास : सामान्य) : क्या हिंदू कानून कृषि भूमि पर लागू होता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ऐसा नहीं है। मैं तो एक आम बात कर रहा हूँ।

मैं समझता हूँ कि सदस्यों तथा जनता द्वारा उठाए गए सभी विवादास्पद मुद्दों का मैंने उत्तर दे दिया है। मैं आशा करता हूँ कि विभिन्न मुद्दों पर मेरे द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण से सदस्यों में जो इस उपाय के बारे में भ्रम था वह समाप्त हो जाएगा। वे इस बात को समझेंगे कि यह कोई क्रांतिकारी उपाय नहीं है। मेरा कहना है कि यह कोई अतिवादी उपाय भी नहीं है। मैं सदस्यों का ध्यान एक महत्वपूर्ण मुद्दे की ओर दिलाना चाहता हूँ, अर्थात् राव समिति के गठन तथा रचना के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। राव समिति के

चार सदस्य थे परन्तु रिपोर्ट पर हस्ताक्षर करने वालों में से दो हिंदू समुदाय के अदिवादी सदस्य नहीं है। मेरे मित्र श्री थारपुड़े जिन्हें मैं बहुत वर्षो से जानता हूँ, एक बहुत ही रूढ़िवादी हैं... मैं जानता हूँ···

श्री एच.वी. कामथ : राजनैतिक या सामाजिक दृष्टि से।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : राजनैतिक और सामाजिक रूप से भी। असल में मुझे यह बताने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अनेक ऐसे अवसर आए जबकि वे मुझसे अपनी असहमति प्रकट करने में कठिनाई महसूस कर रहे थे। वे एक रूढ़िवादी हैं। मेरे मित्र श्री टी.आर. वेंकटरमण शास्त्री एक उदार व्यक्ति हैं परन्त जैसा कि मैं जानता हूँ वे अतिवादी नहीं हैं। जब इन रूढ़िवादी सदस्यों ने रिपोर्ट पर हस्ताक्षर कर दिए हैं, तो हमें यह बात गारंटी से समझ लेनी चाहिए कि यह कोई क्रांतिकारी उपाय नहीं है। और न ही यह हिंदू समाज के लिए विघटनकारी उपाय है। जहां तक मेरा संबंध है, मैं एक रूढ़िवादी व्यक्ति हूँ और मैं सदन को एक महत्वपूर्ण बात बताना चाहता हूँ, जिसे प्रत्येक व्यक्ति को ध्यान में रखना चाहिए, विशेषकर सदन के रूढ़िवादी सदस्यों को। महान राजनैतिक दार्शनिक एडमंड बुर्के, जिन्होंने अतिवाद और क्रांतिकारी परिवर्तनों के कारण फ्रांस की क्रांति के खिलाफ एक बहुत बड़ी पुस्तक लिखी है, अपने देश के रूढ़िवादियों को एक महत्वपूर्ण सच बताना नहीं भूले। उन्होंने कहा कि जो रूढ़िवादी बने रहना चाहते हैं उन्हें सुधार के लिए तैयार रहना चाहिए और मैं भी इस सदन से कह रहा हूँ कि यदि आप हिंदू प्रणाली, हिंदू संस्कृति, हिंदू समाज को बनाए रखना चाहते हैं, तो जहां सुधार की जरूरत है वहां सुधार करने में न हिचकिचाएं। इस विधेयक से हिंदू प्रणाली के उन भागों में सुधार करने की कोशिश की गई, जो बेकार हो गए हैं।

श्री एच.वी. कामथ : मैं एक बात याद दिलाना चाहता हूँ। माननीय डॉ. अम्बेडकर ने स्मृतियों से कुछ उदाहरण देने के लिए कहा था। क्या वे अपना वायदा पूरा करेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अंत में उदाहरण दूँगा। सौभाग्यवश, मेरे पास श्री द्वारका नाथ मित्र की लिखी "हिंदू महिलाओं के अधिकार" नामक पुस्तक है। मैं इसमें से कुछ उदाहरण देना चाहता हूँ जिससे पता चलेगा कि वेदों में महिलाओं को जो अधिकार दिए गए हैं वे बाद में स्मृतियों में छीन लिए गए हैं और कुछ अन्य स्मृतियों ने ये अधिकार वापस करने के प्रयास किए हैं। मैं अपने भाषण के दौरान उदाहरण दूँगा।

श्री देशबंधु गुप्ता : क्या माननीय मंत्री महोदय प्रवर समिति के समक्ष रखे गए साक्ष्यों के बारे में सदन को कुछ बताएंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जैसा कि हमारे सदस्य जानते हैं, हमारे दो संगठनों ने साक्ष्य देने के लिए कहा था। समिति ने उनका साक्ष्य लेने का निर्णय किया।

एक संगठन ने आकर साक्ष्य दिया था और एक ने लिखकर भेजा था। वह संगठन था "धर्म निर्णय मण्डल"। सामान्य तौर से विधेयक के उपबंधों से सहमत थे। एक व्यक्ति और था, जो इससे सहमत नहीं था।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया :

"कि हिंदू कानून की कुछ शाखाओं में संशोधन करने तथा उन्हें संहिताबद्ध करने के लिए प्रवर समिति द्वारा यथा प्रस्तुत विधेयक पर विचार किया जाए।"

दो संशोधनों पर जोर नहीं दिया गया। अगला संशोधन क्या है?

पंडित ठाकुर दास भार्गव : महोदय, मैं कोई संशोधन नहीं रखना चाहता।

माननीय उपाध्यक्ष : जैसा कि मैंने विधेयक के माननीय प्रस्तावक के सुझावों का उत्तर देते हुए बताया है कि मैं प्रस्ताव रखते समय उन प्रस्तावों को बिना किसी भाषण के रखने की अनुमति दूंगा। सभी संगत और स्वीकृत संशोधनों को रखने के बाद उन पर तथा मूल प्रस्ताव पर चर्चा होगी।

श्री देश बन्धु गुप्ता : महोदय मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। क्या सदस्य को इस बात की अनुमति है कि वे ये कहें कि वे अपने संशोधन रखने की स्थिति में नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : जी हाँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय, निदेश दिया गया है।

एक माननीय सदस्य : किसने।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे पहले बिना भाषण के संशोधन रखने का निदेश दिया गया है। (**एक माननीय सदस्य** : "किसने निदेश दिया है?")। मुझे माननीय उपाध्यक्ष महोदय ने निदेश दिया है। मुझे लगता है कि माननीय सदस्य बहुत बेचैन हैं।

श्री आर.के. सिधवा (सी.पी. और बराड : सामान्य) : नहीं, हम नहीं। जारी रखिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे निदेश दिया गया है कि बिना भाषण के संशोधन रखें। मेरे माननीय मित्र विधि मंत्री के भाषण से मेरी जबान पहले ही बंद है।

श्री कृष्णास्वामी भारती : आप पहले ही उल्लंघन कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महिलाओं ने मेरे ऊपर गहरा प्रभाव छोड़ा है। और अब पंडित ठाकुर दास भार्गव ने कहा है कि वे संशोधन रखने की स्थिति में नहीं हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या संशोधन रखने से पहले यह सब कुछ कहना आवश्यक है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं पहले ही भाषण देने योग्य नहीं रहा हूँ और इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि मैं भाषण नहीं दूंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य बाद में बोलेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय मैं निम्नलिखित प्रस्ताव रखना चाहता हूँ :–

"कि विधेयक पर और विचार जानने के लिए वर्ष 1949 के अंत तक इसे पारिचालित किया जाए।"

माननीय उपाध्यक्ष : संशोधन प्रस्तुत हुआ :

"कि विधेयक पर और विचार जानने के लिए वर्ष 1949 के अंत तक इसे परिचालित किया जाए।"

श्री बी. दास : महोदय, यह विलम्बकारी है, इससे अस्वीकृत किया जाना चाहिए।

श्री महावीर त्यागी : मेरा यह व्यवस्था का प्रश्न है। विलम्बकारी प्रस्तावों के बारे में सुबह भी एक व्यवस्था दी गई थी। महोदय, मेरा कहना है कि यह सदस्य का विशेषाधिकार है। यद्यपि, मैं अनेक बातों पर डॉ. अम्बेडकर से सहमत हूँ, तथापि मेरा कहना है कि सदस्य, जो दल सत्ता में नहीं हैं उनके द्वारा विलंबकारी प्रस्ताव रखना, उनका विशेषधिकार है। इसे अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। यदि सदस्य किसी कार्य से विलंब करना चाहते हैं, तो यह उनका लोकतांत्रिक अधिकार है। अतः किसी प्रस्ताव को विलंबकारी मानकर उसे अस्वीकृत नहीं किया जाना चाहिए। विलंबकारी प्रस्ताव एक लोकतांत्रिक सदन का विशेषाधिकार है।

माननीय उपाध्यक्ष : श्री त्यागी ने जो कुछ कहा है, वह व्यवस्था का प्रश्न नहीं है। वे इस पर पूरी चर्चा चाहते हैं। जो कुछ श्री बी. दास ने कहा है, वह मेरी समझ में नहीं आया। क्या वे कहना चाहते हैं कि किसी नियम के अन्तर्गत यह प्रस्ताव अनुमत्तेय नहीं है? यदि ऐसा है, तो जब रिपोर्ट प्रस्तुत होती है, तो यह प्रक्रिया है। (**एक माननीय सदस्य** : वे नियम क्या हैं?) नियम हमने पिछले सत्र में स्वीकार किए हैं।

नियम में लिखा है :–

"कि प्रभारी सदस्य प्रस्ताव प्रस्तुत करता है कि विधेयक पर विचार किया जाए, तो कोई भी सदस्य यह संशोधन रख सकता है कि विधेयक पर और विचार जानने के लिए इसे पुनः समिति के पास भेजा जाए, या परिचालित किया जाए या पुनः परिचालित किया जाए।"

अतः नियम के अन्तर्गत इस प्रकार के प्रस्ताव की अनुमति है। मैं जानना चाहता हूँ किस प्रकार इसे अस्वीकृत कर दिया जाए।

श्री बी. दास : मुझे नियम की जानकारी है। परन्तु सुबह जो व्यवस्था दी गई थी उसके अनुसार विलंबकारी प्रस्ताव की अनुमति नहीं है। अतः मैंने व्यवस्था का प्रश्न उठाया था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : क्या मैं कुछ कह सकता हूँ? मैं समझता हूँ कि श्री दास ने बिल्कुल सही व्यवस्था का प्रश्न उठाया है, क्योंकि...

एक माननीय सदस्य : नहीं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : जब उपाध्यक्ष महोदय ने अपनी व्यवस्था दे दी है तो उस पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य एक साथ नहीं बोलेंगे। वे अपने स्थान पर खड़े होंगे और एक-एक करके बोलेंगे। मुझे माननीय विधि मंत्री की बात सुनने दीजिए। प्रत्येक सदस्य को इस मुद्दे पर बोलने का अवसर दिया जायेगा, बशर्ते कि वह चर्चा में अपना उचित योगदान करें। किसी को भी बेचैन होने की जरूरत नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, जैसा कि आपको याद होगा कि कार्यसंचालन नियमों के अनुसार अनुज्ञेय प्रस्तावों की दो श्रेणियां हैं: एक तो वे प्रस्ताव हैं जिन्हें अध्यक्ष महोदय को आवश्यक रूप से सदन के सामने रखना होता है। और दूसरी श्रेणी उन प्रस्तावों की है, जिन पर अध्यक्ष महोदय सदन के समक्ष रखने से पहले इस बात पर स्वयं संतुष्ट हो जाएं कि ये उचित हैं। मैं एक स्थगन प्रस्ताव का हवाला देता हूँ। नियमों के अन्तर्गत कोई भी सदस्य स्थगन प्रस्ताव रख सकता है। परन्तु कुछ सदस्यों द्वारा स्थगन प्रस्ताव रखने से अध्यक्ष महोदय को यह अधिकार नहीं है कि वे उसे सदन के समक्ष रखें क्योंकि नियमों में यह निर्धारित है कि जब तक अध्यक्ष महोदय अनुज्ञेय समझें, प्रस्ताव नहीं रखा जा सकता, मैं और भी अनेक उदाहरण दे सकता हूँ। इस प्रकार के प्रस्ताव के बारे में अर्थात् विधेयक पर विचार के लिए स्थगन प्रस्ताव और आगे विचार जानने के लिए उसे परिचालित करने का प्रस्ताव, मैं समझता हूँ उस श्रेणी में आता है जिसमें सदन के समक्ष रखने से पहले अध्यक्ष महोदय की संतुष्टि जरूरी है। यह सदन की एक परंपरा है कि प्रवर समिति द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद उस पर स्थगन प्रस्ताव या उस विधेयक को परिचालित करने का प्रस्ताव प्रथम दृष्टया विलंबकारी प्रस्ताव है। जब तक प्रस्तावक इसके लिए समुचित कारण नहीं बताता और अध्यक्ष महोदय संतुष्ट नहीं हो जाते कि कारण समुचित हैं, ऐसा प्रस्ताव अनुज्ञेय नहीं है। इन पुस्तकों में अनेक व्यवस्थाएं दी गई हैं। परन्तु मैं पुस्तक संख्या एक में व्यवस्था संख्या एक की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। इस प्रस्ताव के बारे में समुचित कारण नहीं बताए गए हैं।

एक माननीय सदस्य : लेकिन वे बिल्कुल नहीं बोले हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय विधि मंत्री जी को अपनी बात पूरी करने दीजिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं तो केवल इस पुस्तक में दी गई व्यवस्था संख्या एक की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता था। और भी अनेक व्यवस्थाएं हैं। इसमें कहा गया है :–

"कपास पर उत्पादन शुल्क समाप्त करने संबंधी संकल्प पर चर्चा के दौरान इसे स्थगित करने के लिए एक प्रस्ताव रखा गया था। (जिसका मतलब था इसे परिचालित करना या इस संकल्प को छोड़ देना।)"

"अध्यक्ष ने इस विशेष अवसर पर पुस्तक को स्वीकार करने के बारे में बिना कोई मिसाल स्थापित करते हुए कहा :–

"अध्यक्षपीठ किसी प्रस्ताव पर विचार को स्थगित करने के लिए ऐसे प्रस्ताव को रखने के अनुमति नहीं दे सकती जो केवल कार्य–सूची की अगली मद पर विचार करने के लिए रखा गया है। इसके लिए समुचित कारण बताए जाने चाहिए।"

पंडित ठाकुर दास भार्गव : व्यवस्था में कहा गया है कि यह कोई मिसाल नहीं बननी चाहिए, परन्तु आप इसे मिसाल बनाना चाहते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष कहते हैं "मैं व्यवस्था दे रहा हूँ परन्तु मैं मिसाल कायम नहीं कर रहा हूँ।"

पंडित ठाकुर दास भार्गव : इस मामले में मैं "अध्यक्षपीठ के निर्णय" नामक पुस्तक के पृष्ठ 81 की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। जिसमें कहा गया है कि कुछ ऐसे प्रस्ताव होते हैं, जिन्हें विलंबकारी कहा जा सकता है। परिचालन का प्रस्ताव उस श्रेणी में नहीं आता। परन्तु कुछ प्रस्ताव विलंबकारी होते हैं और यह अध्यक्षपीठ के विवेक और अधिकार पर निर्भर करता है कि वह उसको अनुमति दे अथवा नहीं। इस पुस्तक के पृष्ठ 81 पर प्रस्ताव को वापस सौंपने के बारे में कहा गया है कि यदि प्रवर समिति में कुछ हुआ है, तो इसे विलंबकारी प्रस्ताव कहा जा सकता है परन्तु अध्यक्षपीठ को यह निर्णय करने का पूरा अधिकार है कि यह विलंबकारी नहीं है। माननीय सदस्य से इसके लिए कारण नहीं पूछे गए हैं और इससे पहले ही मेरे मित्र खड़े होकर कह रहे हैं कि यह विलंबकारी है। यह बहुत ही गलत बात है कि प्रारम्भ में यह कह देना कि यह विलंबकारी है। परिचालित करने का प्रस्ताव विलंबकारी नहीं है। जब तक अध्यक्ष महोदय इस निष्कर्ष पर न पहुंचे कि प्रवर समिति में कुछ नहीं हुआ है या कोई घटना नहीं घटी है, जिससे यह सिद्ध होता है कि यह विलंबकारी है, मैं समझता हूँ कि अध्यक्ष महोदय किसी प्रस्ताव को विलंबकारी नहीं कह सकते। नियमानुसार रखे गए प्रस्ताव विलंबकारी प्रस्ताव नहीं कहे जा सकते।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं समझता हूँ कि एक मिनट में इस मामले पर बहस को कम किया जा सकता है। माननीय विधि मंत्री ने जो मिसाल दी है, वह इस मामले में लागू नहीं होती, उसका शीर्षक है "वाद-विवाद का स्थगन"....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाता है, तो यह वाद-विवाद का स्थगन है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : नहीं, यह बिल्कुल अलग है क्योंकि मैं यह दिखा सकता हूँ। उप शीर्षक है "वाद-विवाद का स्थगन : प्रस्ताव प्रस्तुत करने की अनुमति देने पर।" मैंने वाद-विवाद पर स्थगन के लिए प्रस्ताव नहीं रखा है, जो कि संशोधन संख्या 2 में है। इसमें प्रस्ताव किया गया है :

"विधेयक पर प्रवर समिति की रिपोर्ट पर विचार को स्थगित किया जाए।"

मेरा उद्देश्य है कि वाद-विवाद जारी रहना चाहिए, प्रस्ताव पर विचार जारी रहना चाहिए और मैं चाहता हूँ कि विचार मेरे प्रस्ताव के साथ ही होना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर ने जिस व्यवस्था का उदाहरण दिया है, उससे बिल्कुल स्पष्ट हो जाएगा :–

"कपास पर उत्पादन शुल्क समाप्त करने संबंधी संकल्प पर चर्चा के दौरान इसे स्थगित करने के लिए एक प्रस्ताव रखा गया था।"

"अध्यक्ष ने इस विशेष अवसर पर प्रस्ताव को स्वीकार करने के बारे में बिना कोई मिसाल स्थापित करते हुए कहा : अध्यक्षपीठ किसी प्रस्ताव पर विचार को स्थगित करने के लिए ऐसे प्रस्ताव को रखने की अनुमति नहीं दे सकती जो केवल कार्य-सूची को अगली मद पर विचार करने के लिए रखा गया है। इसके लिए समुचित कारण बताए जाने चाहिए।"

जैसा कि मैं समझता हूँ, यह बात उस समय कही गई है जब सदन में एक प्रस्ताव पर चर्चा चल रही थी और शायद किसी एक रुचिकर या महत्वपूर्ण प्रस्ताव पर चर्चा करवानी थी एक सदस्य ने एक विचाराधीन संकप पर चल रही चर्चा को स्थगित करने का प्रस्ताव रखा ताकि एक और अधिक रुचिकर प्रस्ताव पर चर्चा हो सके। यह पहले प्रस्ताव को स्थगित करने के लिए था जिसे स्वीकार नहीं किया गया। मैंने अपने प्रस्ताव में वाद-विवाद को स्थगित करने का प्रस्ताव नहीं रखा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह उसी के लिए है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : हम नियम 52 की व्याख्या पर बोल रहे हैं। नियम के अनुसार प्रस्ताव नियमानुसार है। नियम को रद्द किए बगैर इसे गलत नहीं कहा जा सकता।

पंडित हृदय नाथ कुंजरू (यू.पी. : सामान्य) : यह विधेयक भावनाओं से जुड़ा हुआ है और इस पर होने वाली चर्चा पर किसी प्रकार की रोक लगाना अवांछनीय होगा। मैं समझता हूँ कि सदन के प्रत्येक वर्ग द्वारा यह महसूस किया जाना चाहिए कि इस पर अपने विचार प्रकट करने का पूरा अवसर दिया गया और वाद-विवाद की अनुमति दी गई। इस विधेयक की अच्छाइयों के बारे में हमारी कोई भी व्यक्तिगत राय हो सकती है लेकिन श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा रखे गए प्रस्ताव का विरोध करने का कोई आधार नहीं है।

डॉ. अम्बेडकर ने एक व्यवस्था उद्धृत की है जो इस मामले से संबंधित नहीं है। पहली बात तो यह है कि व्यवस्था एक संकल्प के बारे में दी गई है न कि एक विधेयक के बारे में। दूसरी बात यह है कि नियमों में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है कि जहाँ तक एक विधेयक का संबंध है, न केवल इसे परिचालित करने बल्कि इसे पुनः परिचालित करने और न केवल इसे समिति को भेजने बल्कि इसे समिति को पुनः भेजने के लिए रखा जा सकता है, भाषा बिल्कुल स्पष्ट है। जब भी किसी विधेयक को समिति को पुनः भेजने या इसे पुनः परिचालित करने का प्रस्ताव रखा जाता है, तो यह कहकर इसका विरोध किया जाता है कि यह विलंबकारी है। यदि ऐसा होता है तो, नियमों के अन्तर्गत सदस्यों को स्पष्ट रूप से दिए अधिकार निरर्थक हो जाएंगे। हमें इस बात की बेचैनी हो सकती है कि एक प्रस्ताव, जैसा कि श्री नजीरुद्दीन अहमद ने रखा है, रद्द कर दिया गया। हम इसे अस्वीकृत कर सकते हैं परन्तु इसे प्रस्तुत करने की अनुमति न देने का कोई कारण नहीं है।

मैं समझता हूँ कि यह नियमानुसार है और घोर अन्याय है कि यदि एक ऐसे कानून को पारित करने के लिए सदस्यों के अधिकारों को कम कर दिया जाए, जिसमें हमारी गहरी दिलचस्पी है। नियमों की अपनी सुविधानुसार व्याख्या कर ली जाए चाहे बहुमत कुछ भी कहे।

श्री कृष्णास्वामी भारती : महोदय, इसमें कोई संदेह नहीं कि नियम 52 (2) के अन्तर्गत सदस्य को अधिकार है बशर्ते कि उसे स्वीकार कर लिया जाए और यह अध्यक्ष के विवेक पर निर्भर करता है। डॉ. अम्बेडकर ने यही कहा है कि सदस्यों को प्रश्न पूछने का अधिकार है परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि प्रत्येक प्रश्न को कार्यसूची में रखा जाए, यह प्रश्न की स्वीकृति पर निर्भर करता है। आप अपने स्वविवेक से यह निर्णय करें कि क्या यह एक विलंबकारी प्रस्ताव है। आप श्री नजीरुद्दीन अहमद से कारण पूछ सकते हैं। यदि उसके द्वारा बताए गए कारणों से आप संतुष्ट हैं, तो आपको अधिकार है कि आप उन्हें प्रस्ताव प्रस्तुत करने की अनुमति दें। डॉ. अम्बेडकर ने यही बात कही है। प्रत्येक सदस्य को बोलने तथा अवसर प्राप्त करने का अधिकार है। आपको केवल प्रक्रिया के बारे में सोचना है और प्रक्रिया यह है कि एक प्रस्ताव तभी प्रस्तुत किया जा

सकता है जब आप इसे स्वीकार करें। मेरा सुझाव है कि आप श्री नजीरुद्दीन अहमद से कारण पूछें और फिर निर्णय करें कि क्या यह विलंबकारी है और आप व्यवस्था दे सकते हैं कि यह नियमानुसार नहीं है, परन्तु आप कारणों से संतुष्ट हैं, तो आप इसे प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकते हैं।

श्री तजामुल हुसैन : खड़े हुए।

बाबू रामनारायण सिंह : महोदय, एक महत्वपूर्ण बात कहनी है।

माननीय उपाध्यक्ष : व्यवस्था का प्रश्न उठाकर?

बाबू रामनारायण सिंह : जी हाँ, महोदय।

माननीय उपाध्यक्ष : ठीक है।

श्री तजामुल हुसैन (बिहार : मुस्लिम) : महोदय, आपकी नजर पहले मुझ पर पड़ी है। मेरा भी एक व्यवस्था का प्रश्न है।

माननीय उपाध्यक्ष : इस व्यवस्था के प्रश्न को निबटाने के बाद श्री तजामुल हुसैन के व्यवस्था के प्रश्न पर विचार किया जाएगा।

बाबू रामनारायण सिंह : महोदय, आप पहले ही नियम उद्धृत कर चुके हैं। मैं समझता हूँ कि किसी नियम के विरुद्ध कोई भी अध्यक्ष व्यवस्था नहीं दे सकता। स्थिति यह है कि सदन में कोई विषय विचाराधीन हो सकता है और उस पर अलग–अलग मत हो सकते हैं। यह स्वाभाविक है। लोगों का एक वर्ग इसे वरदान समझता है और दूसरा इसे प्लेग की तरह खतरनाक एक अभिशाप समझ सकता है। जो लोग इसे अभिशाप समझते हैं। उन्हें प्रस्ताव में विलंब करने और यहां तक कि इसे समाप्त करवाने का अधिकार है। इस मामले में भी इस वर्ग को यह प्रस्ताव रखने का अधिकार है। और न्याय की मांग है कि उन्हें यह विशेषाधिकार और अधिकार है।

श्री तजामुल हुसैन : खड़े हुए।

माननीय उपाध्यक्ष : एक और व्यवस्था का प्रश्न है, जिसे माननीय सदस्य उठाना चाहते हैं। इसके बाद इस पर विचार होगा।

मैं समझता हूँ कि श्री नजीरुद्दीन अहम ने स्वयं ही इतने सारे व्यवस्था के प्रश्न उठवाएं हैं क्योंकि उन्होंने आज सुबह एक व्यवस्था के प्रश्न से शुरूआत की थी। सभी कानूनी बारीकियों के अलावा हम श्री नजीरुद्दीन अहमद से पूछ सकते हैं कि उनका उद्देश्य क्या है और परिचालन के लिए रखे गए प्रस्ताव के बारे में कौन–से महत्वपूर्ण मुद्दे उनके दिमाग में हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं समझता हूँ कि यह प्रश्न··

पंडित हृदय नाथ कुंजरू : श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा उत्तर दिए जाने से पहले क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि क्या आप इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि विधेयक को पुनः परिचालित करने के लिए प्रस्ताव रखने का सदस्य का अधिकार अध्यक्षपीठ की इच्छा पर निर्भर करता है?

माननीय सदस्य : खड़े हुए।

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया शांत रहिए। सदस्यों को अध्यक्षपीठ का सम्मान करना चाहिए। जब मैं खड़ा होता हूँ, तो उन्हें बैठ जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि मैंने काफी कुछ सुन लिया है। क्या अध्यक्षपीठ कारण पूछने के लिए स्वतंत्र नहीं है? इसका मतलब यह नहीं है कि मैंने कोई निष्कर्ष निकाल लिया है। मैं निष्कर्ष निकालने की तैयारी कर रहा हूँ। मैंने श्री भारती के विचार सुने हैं। इस प्रश्न को छोड़कर कि क्या अध्यक्ष जी को नियमों के अन्तर्गत स्वीकृत या अस्वीकृत करने का अधिकार है, मैं जानना चाहता हूँ कि किन कारणों से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया जाए। यह जानने के बाद मैं अपनी व्यवस्था दूंगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा उत्तर दोहरा है। पहला प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए कानून के बारे में है तथा दूसरा प्रस्ताव प्रस्तुत करने के कारणों के बारे में है। इस समय, अध्यक्षपीठ ने मुझे भाषण न देने के लिए कहा है। मैंने इस बहस से पूरी तरह बचने की कोशिश की है कि इस प्रस्ताव को स्वीकार करने का क्या कारण है। मेरा अनुरोध है कि प्रस्ताव की कानूनी वैधता और अनुज्ञेता और सदन द्वारा इसे स्वीकार किए जाने के कारणों के बीच अन्तर होना चाहिए। इस समय मेरा कहना है कि मेरे द्वारा रखे गए प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए मुझे कुछ नहीं कहना है।

माननीय उपाध्यक्ष : इस मुद्दे पर काफी बहस हो चुकी है। जहां तक श्री दास का कहना है कि यह विलंबकारी है, मैं समझता हूँ कि माननीय विधि मंत्री ने जिस प्रस्ताव का हवाला दिया है, वह बिल्कुल अलग है। उन्होंने अध्यक्षपीठ की व्यवस्था उद्धत की है और वाद-विवाद को स्थगित करने के बारे में व्यवस्था संख्या एक का उदाहरण दिया है। जब स्थगन प्रस्ताव, जिसके लिए कोई विशेष नियम निर्धारित नहीं किए गए हैं, को विलंबकारी मानना अध्यक्षपीठ के स्वविवेक पर निर्भर करता है और उसे इस बात के लि संतुष्ट होना चाहिए कि किन कारणों से वाद-विवाद का स्थगन जरूरी है। जहां तक परिचालन के लिए वर्तमान प्रस्ताव का संबंध है, इसके लिए नियम 52(2) में व्यवस्था है। माननीय विधि मंत्री ने इसे स्थगन प्रस्ताव के समान मान कर हवाला दिया है परन्तु स्थगन प्रस्तावों के लिए विशिष्ट नियम निर्धारित किए गए हैं और इसके लिए अध्यक्ष को अधिकार दिया गया है कि वे इस बात का निर्णय करें कि क्या प्रथम दृष्टया प्रस्ताव नियमानुसार है। मैं नियम 36 उद्धत कर रहा हूँ। स्थगन प्रस्ताव रखने का

अधिकार कुछ शर्तों पर निर्भर करता है जैसे कि प्रश्नों के मामले में होता है। जब तक प्रश्न नियमों के अन्तर्गत एक श्रेणी या दूसरी में नहीं आता, तो अध्यक्ष इसको अस्वीकृत करने के लिए स्वतंत्र है। इसी प्रकार स्थगन प्रस्ताव में होता है। इसके लिए छः शर्तें पूरी की जानी चाहिए। अनुमति लेने का भी उपबंध है। सबसे पहले यदि अध्यक्षपीठ उचित समझे तो यह कह सकते हैं कि यह जनहित में नहीं, यह पुराना है, आदि। दूसरे यदि वे इसे स्वीकार करना चाहते हैं, तो पूछ सकते हैं कि क्या इस प्रस्ताव को सदन के सब सदस्यों का समर्थन प्राप्त है। इसके बाद अनुमति दी जाती है। ऐसे मामलों में विशेष उपबंध किए गए हैं। परिचालन के लिए रखा गया वर्तमान प्रस्ताव इस में अथवा दूसरी श्रेणी में नहीं आता।

जहां तक पृष्ठ 81 पर दिए गए नियम 120 का सम्बन्ध है। यह प्रवर समिति के प्रस्तावों के बारे में हैं। इस बारे में अब तक अध्यक्षपीठ की कोई व्यवस्था मुझे नहीं मिली है। इन दोनों पुस्तकों में "अध्यक्षपीठ के निर्णय" में यह नहीं कहा गया कि पुनः परिचालन के लिए रखा गया प्रस्ताव विलंबकारी है। इन परिस्थितियों में, मैं सदन की शक्तियों को कम नहीं करना चाहता। यदि मैं प्रस्ताव को स्वीकारता हूँ, तो यह न समझें कि सदन इसे स्वीकार करने के लिए बाध्य है। यह प्रस्तुत भी होता है, तो यदि सदन इससे संतुष्ट नहीं है,तो इसे अस्वीकार कर सकता है। इन परिस्थितियों में, इस मुद्दे पर व्यवस्थाएं स्पष्ट नहीं हैं, मैं इस प्रस्ताव को रद्द नहीं करना चाहता। माननीय सदस्य जारी रख सकते हैं। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि जिन सदस्यों के नाम प्रस्ताव हैं, वे पहले प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे और उन सभी पर एक साथ वाद-विवाद होगा। अगला प्रस्ताव पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव और श्री झुनझुनवाला के नाम है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मेरे मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव मूलतः समान है। अतः मैं उस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रस्ताव प्रस्तुत न करने के लिए कोई कारण बताने की आवश्यकता नहीं है। श्री झुनझुनवाला जी आप क्या चाहते हैं?

श्री बी.पी. झुनझुनवाला (बिहार : सामान्य) : मैं अपने मित्र श्री भार्गव का समर्थन करता हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : अतः वे प्रस्तुत नहीं करना चाहते। मैं पहले ही कह चुका हूँ प्रस्ताव संख्या 7 और 8 नियमानुसार नहीं हैं। इस विधेयक का क्षेत्राधिकार प्रान्तों के लिए है न कि मिलने वाले राज्यों के लिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जो राज्य पूरी तरह भारत संघ में मिल चुके हैं उनके लिए अलग व्यवस्था है। पूर्वी राज्य उड़ीसा प्रान्त में मिल गए हैं। वे अब भारत के अंग हैं। यह विधेयक पर लागू होगा।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं इसका अर्थ कुछ इस तरह समझता हूँ—क्या वे किसी प्रान्त के साथ मिल गए अथवा नहीं, यदि वे किसी प्रान्त का अंग हैं, तो उन पर यह विधेयक लागू होगा। यह आवश्यक नहीं है कि राजपत्र की प्रति प्रत्येक गांव को तथा देश के कोने-कोने में भेजी जाए। यदि कोई राज्य किसी प्रान्त का अंग बन गया है, तो उसे उस प्रान्त के सभी अधिकार और जिम्मेदारियां मिल जाती हैं। मुझे इसका कोई कारण नहीं दिखाई देता है कि यह विधेयक पुनः परिचालित किया जाए। अत: मैं व्यवस्था देता हूँ कि प्रस्ताव संख्या 7 नियमानुसार नहीं है। प्रस्ताव संख्या 8 भी नियमानुसार नहीं है। क्या श्री भार्गव जी आप प्रस्ताव संख्या 9 को प्रस्तुत करना चाहते हैं।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं करना चाहता।

माननीय उपाध्यक्ष : अगला संशोधन। श्री नजीरुद्दीन अहमद जी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं जो प्रस्ताव रख चुका हूँ उसका एक वैकल्पिक प्रस्ताव रखना चाहता हूँ :—

"कि जिस प्रवर समिति को 9 अप्रैल, 1948 को मूल विधेयक भेजा गया था, उसी प्रवर समिति को और आगे रिपोर्ट देने के लिए इस विधेयक को पुनः भेजा जाए।"

माननीय उपाध्यक्ष : संशोधन प्रस्तुत हुआ :

"कि जिस प्रवर समिति को 9 अप्रैल, 1948 को मूल विधेयक भेजा गया था, उसी प्रवर समिति को और आगे रिपोर्ट देने के लिए इस विधेयक को पुनः भेजा जाए।"

श्रीमती रेणुका रे : अध्यक्ष महोदय की व्यवस्था के अनुसार यह नियमानुसार नहीं हैं। यह अध्यक्ष महोदय की व्यवस्था का उल्लंघन है।

माननीय उपाध्यक्ष : पुनः परिचालित करने का प्रस्ताव सदन के समक्ष है। सदन इस प्रस्ताव पर भी विचार क्यों नहीं करना चाहता?

श्रीमती रेणुका रे : यह अध्यक्ष महोदय द्वारा एक दिन दी गई व्यवस्था के खिलाफ है।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या मैं महिला सदस्य से पूछ सकता हूँ कि यह किस प्रकार अध्यक्ष की व्यवस्था के खिलाफ है।

श्रीमती रेणुका रे : अध्यक्ष ने व्यवस्था दी है कि यह विधेयक उस विधेयक जैसा है, जो प्रवर समिति को भेजा गया था और इसलिए इसे पुनः प्रवर समिति को भेजने का प्रस्ताव नहीं लाया जा सकता। इस विधेयक में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया गया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं और मैं आपको दिखा दूँगा।

माननीय उपाध्यक्ष : बेंचों पर आपस में कोई भाषण नहीं होना चाहिए। जहां तक महिला सदस्य द्वारा दिए गए तर्क का संबंध है, मैं इस प्रकार समझता हूँ। अध्यक्ष महोदय ने निश्चित रूप से यह कहा था कि प्रवर समिति ने जिस विधेयक पर विचार किया था वह उससे भिन्न नहीं हैं, जो उसे भेजा गया था। परन्तु विधेयक को पुन: उसके पास भेजने के अनेक कारण हैं। इसलिए, जब तक अन्य आधार पर कोई आपत्ति नहीं उठाई जाती...

श्रीमती रेणुका रे : "मूल विधेयक" शब्द इसमें हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : मेल विधेयक दूसरे विधेयक जैसा ही है। इसलिए उन्होंने कहा है, "मूल विधेयक"। हम "मूल" शब्द को निकाल देंगे।

श्रीमती रेणुका रे : "मूल" शब्द उसमें हैं। अतः हम इसे प्रस्ताव में से नहीं निकाल सकते।

माननीय उपाध्यक्ष : अध्यक्ष महोदय ने व्यवस्था दी है कि प्रवर समिति से जो विधेयक आया है, वह मूल विधेयक है और इसलिए "मूल" शब्द का प्रयोग करने में कोई हानि नहीं है। इस बात पर आपत्ति उठाई गई थी कि मूल विधेयक पर प्रवर समिति ने विचार नहीं किया। अध्यक्ष महोदय ने व्यवस्था दी कि यह मूल विधेयक था, जिस पर प्रवर समिति ने विचार किया। अतः माननीय सदस्य ने अपने संशोधन में कहा है कि मूल विधेयक को प्रवर समिति के पास पुन: भेजा जाए। महिला सदस्य द्वारा दिया गया तर्क उसके द्वारा स्वयं उठाई गई आपत्ति के खिलाफ है। मैं समझता हूँ कि प्रस्ताव में कोई गलत बात नहीं है।

श्री आर.के. सिधवा : प्रस्तावक की मंशा बिल्कुल अलग है। वह इसे मूल विधेयक नहीं समझते और इसलिए वे इसे उसी प्रवर समिति को पुन: भेजना चाहते हैं।

श्री एच.वी. कामथ : यद्यपि, प्रस्तावक की मंशा स्पष्ट है। मैं समझता हूँ कि श्री नजीरुद्दीन अहमद संशोधन का प्रारूप तैयार करते समय कुछ आगे बढ़ गए। मेरा सुझाव है कि वे पूरे मामले पर पुनः विचार करें और इस प्रस्ताव को बाद में प्रस्तुत करें।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं नहीं समझता कि "मूल" शब्द का प्रयोग करने से स्थिति प्रभावित होगी। दूसरी बात यह है कि अध्यक्ष महोदय ने व्यवस्था दी है कि यह वही मूल विधेयक है जो प्रवर समिति को भेजा गया था और यही विधेयक संशोधन के बाद वापस आया था। मैं इस पर आपत्ति स्वीकार नहीं कर सकता। इस मामले पर और अधिक समय बर्बाद करना ठीक नहीं है।

संशोधन संख्या 13 प्रस्तुत किया जाए।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मेरा संशोधन भी मूलतः वही है, जो श्री नजीरुद्दीन अहमद ने रखा है। मैं इसके समर्थन में बोलूंगा और अपना प्रस्ताव नहीं रखूंगा।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य को अन्य प्रस्तावकों के बाद बारी मिलेगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अपना अगला संशोधन तब ही रखूंगा, जब मेरा संशोधन संख्या 10 पारित हो जाएगा।

श्रीमती रेणुका रे : मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। संशोधन संख्या 15 अध्यक्ष महोदय की व्यवस्था के खिलाफ है।

माननीय उपाध्यक्ष : अध्यक्ष महोदय की व्यवस्था इस मुद्दे पर लागू नहीं होती। यह सदन प्रवर समिति द्वारा की गई पुनर्व्यवस्था से संतुष्ट नहीं होगा। अतः मूल प्रस्ताव "कि इसे प्रवर समिति को भेजा जाए" रह सकता है। इस मामले में कोई व्यवस्था का प्रश्न नहीं हो सकता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं प्रस्तुत करता हूँ :

"कि विधेयक को प्रवर समिति के पास इन अनुदेशों के साथ भेजा जाए कि वह सदन को प्रस्तुत मूल विधेयक पर विचार करे और अलग अधिनियमन के लिए स्वतः पूर्ण अलग भागों और अध्यायों के मूल क्रम को पुनर्व्यवस्थित किया जाए।"

माननीय उपाध्यक्ष : मुझे संशोधन को अस्वीकृत करना पड़ेगा। क्योंकि भागों और अध्यायों को पुनर्व्यवस्थित करने पर कोई आपत्ति नहीं उठाई जा सकती। मैं इस संशोधन को रद्द करता हूँ।

श्री बी. दास : महोदय अलग संशोधन प्रस्तुत किए जाने से पहले, मैं जानना चाहता हूँ कि क्या एक सदस्य पांच संशोधन रख सकता है?

माननीय उपाध्यक्ष : वैकल्पिक संशोधन की सूचना दी जा सकती है। माननीय सदस्य इस सदन के पुराने सदस्य हैं, उन्हें इस बात की जानकारी होनी चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद के अगले संशोधन में केवल "31 दिसम्बर, 1949" शब्द जोड़े गए हैं। मैं नहीं समझता कि उन्हें संशोधन संख्या 16 रखने की जरूरत है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसमें जिस प्रवर समिति का हवाला दिया गया है, वह अलग है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं नहीं समझता कि इस संशोधन की अनुमति दी जाए। माननीय सदस्य को प्रस्ताव की सूचना देते समय प्रवर समिति के सदस्यों के नाम देने चाहिए थे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने इसे दो भागों में विभाजित किया है। पहले भाग में प्रवर समिति के बारे में कहा गया है। यदि यह स्वीकार्य हैं॰॰

माननीय उपाध्यक्ष : इस प्रकार के मामले में सदन को अपनी राय देने के लिए नहीं कहा जा सकता। चूंकि माननीय सदस्य ने अध्यक्ष पीठ को प्रवर समिति के सदस्यों के नाम की सूचना पहले नहीं दी है, इसलिए यह संशोधन नियमानुसार नहीं है।

अब सामान्य प्रस्ताव पर चर्चा होगी। अब मैं सेठ गोविंद दास को बोलने के लिए कहता हूँ।

सेठ गोविंद दास : सभापति जी॰॰

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : सामान्य चर्चा के दौरान उस सदस्य को सबसे पहले मौका मिलना चाहिए, जिसने संशोधन रखा है।

माननीय उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य इसे अध्यक्ष पीठ पर छोड़ दें। अध्यक्ष पीठ को प्रक्रिया की जानकारी है।

श्री तजामुल हुसैन : मैं बहुत देर से एक व्यवस्था का प्रश्न उठाने का प्रयास कर रहा हूँ। महोदय, मैं बहुत संक्षिप्त में बोलूँगा। माननीय सदस्य श्री नजीरुद्दीन अहमद, जो विराम चिन्ह, अर्द्ध विराम, पूर्ण विराम आदि का बहुत ध्यान रखते हैं, ने इस विधेयक को परिचालित करने के लिए नोटिस दिया है। यह नियामानुसार नहीं है। माननीय सदस्य को अपना संशोधन इस प्रकार लिखना चाहिए था। इस विधेयक को पुनः परिचालित किया जाए। यह मेरा व्यवस्था का प्रश्न है। संगत नियम में इस प्रकार लिखा है : "कोई भी सदस्य संशोधन के रूप में प्रस्ताव कर सकता है कि इस विधेयक पर और विचार जानने के लिए प्रवर समिति द्वारा वापस किए गए विधेयक को पुनः समिति को भेजा जाए या पुनः परिचालित किया जाए, जैसा भी मामला हो।" अतः माननीय सदस्य, जो अर्द्ध विराम, पूर्ण विराम, आदि का पूरा ध्यान रखते हैं, को इस प्रकार लिखना चाहिए था : "और विचार जानने के लिए पुनः परिचालित।" मेरा व्यवस्था का प्रश्न यह है चूंकि इस संशोधन में लिखे गए शब्द नियमानुसार नहीं हैं, इसे अस्वीकृत किया जाना चाहिए।

अपराह्न 4.00 बजे

माननीय उपाध्यक्ष : यह सच है कि माननीय सदस्य, जिन्होंने मत प्रस्ताव रखा है और जो सामान्य तौर पर विरामचिन्ह आदि का पूरा ध्यान रखते हैं, ने "पुनः" शब्द न

लिखकर गलती की है। मैं इसके स्वरूप पर कोई निर्णय नहीं करना चाहता, परन्तु यह परिचालित करने का प्रस्ताव प्रवर समिति की रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद आया है, इसलिए इन परिस्थितियों में इसका अर्थ है "पुनः परिचालन"। मैं यह व्यवस्था पहले ही दे चुका हूँ। व्यवस्था अभी भी लागू है। सेठ गोविंददास द्वारा चर्चा जारी रहेगी।

श्री वी.एस. सर्वटे : उपाध्यक्ष महोदय, मैं आपका ध्यान इस बात की ओर दिलाना चाहता हूँ कि पुनः परिचालन का प्रस्ताव मैं पहले ही रख चुका हूँ और यह उन्हीं दो प्रस्तावों पर आधारित है। ये दो प्रस्ताव 21 अगस्त, 1948 को दिए गए थे। मैं सदन का और समय नहीं लेना चाहता। मैं प्रस्ताव को पढ़ता हूँ, ताकि इस पर आगे चर्चा हो सके। प्रस्ताव इस प्रकार है :

"विधेयक, जैसा कि प्रवर समिति से रिपोर्ट प्राप्त हुई है, पर और विचार जानने के लिए इसे पुनः परिचालित किया जाए।"

माननीय उपाध्यक्ष : संशोधन की सूचना कब दी गई थी।

श्री वी.एस. सर्वटे : सूचना 1 अगस्त, 1948 को दी गई थी। यह संशोधन अनुपूरक सूची संख्या 2 में दिया गया है।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रस्ताव 1 अगस्त को दिया गया और प्रवर समिति की रिपोर्ट 12 अगस्त को प्राप्त हुई और एक सप्ताह बाद यह सदन में प्रस्तुत की गई।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : प्रस्ताव 31 अगस्त को दिया गया था।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रस्ताव देने की आवश्यकता नहीं थी। यह रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद हुआ। परन्तु, सत्र समाप्त होने पर सभी प्रस्ताव व्यपगत हो गए। एक नया नोटिस देना चाहिए था। मुझे नहीं पता कि माननीय सदस्य के पास इसकी प्रतियां हैं।

श्री जसपतराय कपूर : मेरे पास इसकी एक प्रति है। यह एक समेकित सूची है; संशोधनों की सूचना"। यह कार्यालय में 28 अगस्त, 1948 को भेजा गया था। इस सूची में 24 संशोधन हैं इस सूची में श्री सर्वटे का संशोधन क्रमसंख्या चार पर है।

माननीय उपाध्यक्ष : ये सभी नोटिस पिछले सत्र के लिए थे। सत्र समाप्त होने पर ये सभी नोटिस व्यपगत हो गए। केवल उन्हीं संशोधनों पर, विचार किया जाएगा। जिनकी प्रतियाँ प्रत्येक सदस्य की मेजों पर रखी हैं। अन्य सभी नोटिस व्यपगत हो गए हैं। अतः सेठ गोविंद दास द्वारा आगे चर्चा जारी रखी जाएगी।

***सेठ गोविन्द दास :** सभापति, मैं यह देखता हूँ कि इस विधेयक का विरोध करने वाले और इसका समर्थन करने वाले दोनों 4 समूहों में बांटे जा सकते हैं। विरोध करने

वालों में एक समूह उन व्यक्तियों का है जो इसका विरोध उसी दृष्टि से करते हैं जिस दृष्टि से सती प्रथा को उठाने के लिये जो कानून बनाया गया था उसका विरोध किया गया था। ईश्वरचन्द विद्यासागर ने विधवा विवाह के सम्बन्ध में कानून बनवाया, उस समय जिस दृष्टि से उसका विरोध किया गया था; श्री शारदाजी ने बाल विवाह रोकने के लिए कानून बनवाना चाहा, उस समय जिस दृष्टि से उसका विरोध किया गया था। शारदा विधेयक के समय मैं कौंसिल ऑफ स्टेट में था और उस समय के उस विधेयक के विरोध का हाल मैं स्वयं जानता हूँ। यह वह समूह है जो यह मानता है कि हमारे वेदों में, हमारे शास्त्रों में, हमारी स्मृतियों में, जो कुछ लिखा गया है, उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं हो सकता। मैं उस समूह का नहीं हूँ। हमारे धर्मशास्त्रों को भी यदि देखा जाए तो पता लगेगा कि समय-समय पर अगर एक ऋषि ने कुछ कहा तो दूसरे ऋषि ने दूसरी बात कही। यदि यह बात न होती तो आज एक सौ से ऊपर स्मृतियां हमारे ऋषियों ने न बनाई होती। अगर उन स्मृतियों को देखा जायेगा तो मालूम होगा कि एक स्मृति जो कुछ कहती है दूसरी स्मृति वही बात नहीं कहती। दूसरी स्मृति दूसरी बात कहती है तो जैसा मैंने आपसे कहा कि जितने सुधार हुए हैं उन सब सुधारों के विरुद्ध जो समूह आवाज उठाता है, उस समूह में मैं नहीं हूँ।

विरोध करने वाला दूसरा समूह वह है जो यह तो मानता है कि हमको इन विषयों में सुधारों की आवश्यकता है परन्तु साथ ही वह यह भी मानता है कि इस समय वह कानून हमारे सामने लाया जाना उचित नहीं है। यह तब आना चाहिये कि जब नया चुनाव हो जाये, नये चुनावों के पश्चात् जब हमारे नये प्रतिनिधि आ जाएँ उस समय उनके सामने यह कानून लाया जाये। मैं यह कहना चाहता हूँ कि यदि हिंदू कानूनों में इस समय कोई परिवर्तन न किया जाए और तीन वर्ष बाद भी किया जाए तो कोई अनर्थ नहीं होगा। यह एक ऐसा विषय है जिस पर देश को विचार करना है, हम सब को विचार करना है, जो यहां पर मौजूद हैं उनको विचार करना है, जो भविष्य में यहां पर आने वाले हैं उनको विचार करना है इसलिये जो दूसरा समूह यह कहता है कि इस विधेयक को लेने का न यह उपयुक्त समय है और न उपयुक्त स्थान है। मेरा यह मत है कि उस समूह के कहने में बहुत अधिक बल है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि हमको इस पर अवश्य विचार करना चाहिये।

जो इस कानून के पक्ष में हैं, वे भी, जैसा मैंने कहा, दो समूहों में बांटे जा सकते हैं। एक तो वे हैं जो हमारी किसी भी प्राचीन परम्परा को देखना ही नहीं चाहते, जो इस बात पर भी विचार नहीं करना चाहते कि यह देश एक प्राचीन देशों में से है, इस देश का एक

---

*संविधान सभा (विधायी) ड., खंड 2, भाग II, 24 फरवरी, 1949, पृष्ठ 861-71

विशेष इतिहास है, इस देश की एक विशेष संस्कृति है, इस देश की एक विशेष परम्परा है। इस प्रकार के सुधारक लोग हैं। वे इस बात की परवाह नहीं करना चाहते कि हमारे यहां पहले क्या था और आज हमको अपने देश का निर्माण कैसे करना है। इस प्रकार के सुधार न प्राचीन इतिहास का ध्यान रखना चाहते हैं और न प्राचीन संस्कृति और प्राचीन परम्परा का ही। मैं कहना चाहता हूँ कि यदि इस प्रकार का सुधार इस प्राचीन देश में हुआ तो यह भारतवर्ष, भारतवर्ष नहीं रह जायेगा, यह और कुछ ही हो जायेगा। सुधारकों का दूसरा समूह वह है जो यह मानता है कि सुधार तो करना चाहिये, परन्तु हमें सुधार करते समय अपने प्राचीन इतिहास, अपनी प्राचीन संस्कृति और अपनी प्राचीन परम्परा को देखना चाहिये। मैं पहले समूह में नहीं हूँ परन्तु दूसरे समूह में हूँ। मैं यह मानता हूँ कि सुधार करना अत्यन्त आवश्यक है; परन्तु सुधारों की आवश्यकता होते हुए भी हमको अपनी प्राचीन परम्परा, प्राचीन सभ्यता और प्राचीन संस्कृति का ध्यान रख कर सुधार करना चाहिए।

इस समय जब हमारा संविधान बन रहा है, जब संविधान के मौलिक अधिकारों को और निर्णयात्मक अधिकारों को हम पारित कर चुके हैं और जब यह आशा की जाती है कि अगली 16 मई और 15 अगस्त के बीच हमारा संविधान पूरा बन जाएगा तब यदि यह कानून नये संविधान के अनुसार आता तो उपयुक्त बात होती। आज जब हम इस देश को "सेक्यूलर स्टेट" कहते हैं। आज जब हम यह मानते हैं कि इस देश के नागरिकों को, हर एक धर्म को मानने वाले को–हर एक जाति को चाहे वह हिंदू हो, मुसलमान हो, सिख हो, पारसी हो कोई भी क्यों न हो–समान रूप से नागरिक अधिकार होने चाहिये तो मैं यह कहता हूँ कि डाक्टर अम्बेडकर साहब को एक ऐसा विधेयक यहाँ पर लाना चाहिये था जिसका हिंदुओं से ही सम्बन्ध न होता बल्कि जो इस देश के रहने वाले सभी लोगों पर लागू होता। अपने देश को "सेक्यूलर स्टेट" मानते हुए एक हिंदू संहिता बिल को लाना मुझे एक असंगत बात मालूम पड़ती है।

अब यदि हम इस बिल की ओर देखें तो हमें यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी की इस बिल में...

श्री आर.के. सिधवा : डॉ. अम्बेडकर साहब ने प्राचीन शास्त्रों को बताया। आप यह बतायें कि कौन या शास्त्र हिंदू संहिता के खिलाफ है।

सेठ गोविन्द दास : अब यदि विधेयक को हम देखें तो हमें मालूम होता है कि इस विधेयक में कई धाराएं ऐसी हैं जिन धाराओं को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये और यदि यह विधेयक नहीं रुका और पारित हुआ तो मेरा विश्वास है कि हम उन धाराओं को बिना विशेष वाद-विवाद के स्वीकार करेंगे। परन्तु इसी के साथ हमें यह भी दिखाई देता है कि कई धाराएं इसमें ऐसी भी हैं जिन्हें स्वीकार करने में बड़ी आपत्ति हो सकती है और स्वयं डॉ. अम्बेडकर साहब ने आज बतलाया है कि कई धाराएं

विवादग्रस्त धाराएं है और उन विवादग्रस्त विषयों पर उन्होंने पूरा प्रकाश भी डाला है। पहला विवादग्रस्त विषय है विवाह और तलाक। यदि हम विवाह और तलाक को लें तो मैं एक बात को तो स्वीकार करने को तैयार हूँ कि हमें अपने कानून में इस प्रकार का परिवर्तन करना चाहिये। जिससे जात-पात की समाप्ति हो जाय। और यदि कोई ब्राह्मण किसी शूद्र से विवाह करना चाहता है, या कोई शूद्र किसी ब्राह्मण से विवाह करना चाहता है तो उनको विवाह के सम्बन्ध में या ब्राह्मण और शूद्र छोड़ दीजिये, कोई हिंदू किसी मुसलमान से विवाह करना चाहता है, या कोई मुसलमान किसी हिंदू से विवाह करना चाहता है, किसी भी जाति के लोग यदि किसी अन्य जाति में विवाह करना चाहते हैं तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये हमारे यहां जात-पात ने हमारे देश को नष्ट कर दिया है। इस देश और समाज के टुकड़े, छोटे से छोटे टुकड़े हो गये हैं। और आज विवाह के सम्बन्ध में उन टुकड़ों के सबब से जो दिक्कतें होती हैं वे हम सब जानते हैं। पुराने लोग भी जानते हैं और आज जब उन्हें इस प्रकार के विवाह करने पड़ते हैं। तो उनकी नाक भौंह सिकुड़ती है। वे कहते हैं कि हम अपने लड़कों की शादी अपनी इच्छा के विरुद्ध करते हैं या हमें अपनी लड़की की शादी अपनी इच्छा के खिलाफ करनी पड़ती है। तो इस आजादी के मैं बिल्कुल पक्ष में हूँ। मैं तलाक के भी पक्ष में हूँ। मैं कहना चाहता हूँ कि यद्यपि अब तक संसार में कोई ऐसी विवाह पद्धति नहीं निकली है जो सब आपत्तियों के निवारण करने की चीज मानी जाय, परन्तु इसेक साथ हमें यह भी देखना है कि यदि पति पत्नी एक दूसरे के साथ सुख से नहीं रह सकते तो उन्हें तलाक का अधिकार होना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर ने यह कहा कि इस देश के नब्बे प्रतिशत लोगों में अब भी तलाक की प्रथा है। ये नब्बे प्रतिशत शूद्र कहलाते हैं, मैं तो शूद्रों और ब्राह्मणों में कोई फर्क नहीं मानता और उन्हें शूद्र कहना सबसे बड़ा जुल्म मानता हूँ···

माननीय श्री जगजीवन राम (श्रम मंत्री) : क्या यह हिंदू धर्म की जड़ों को नहीं काट देगा?

सेठ गोविन्द दास : नब्बे प्रतिशत शूद्रों में तलाक है, उनमें भी मुझे ऐसा लगता है कि उनके जो रीति-रिवाज है उनको न मान कर यदि हमने इस विधेयक को पारित कर दिया तो नब्बे प्रतिशत लोग···

श्री राज बहादुर : अध्यक्ष महोदय, क्या मैं माननीय सदस्य से प्रार्थना कर सकता हूँ कि तलाक के स्थान पर कोई हिंदी का शब्द प्रयोग करें?

सेठ गोविन्द दास : मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्य हिंदी भाषा का अर्थ नहीं जानते। जितने शब्द हिंदी में ले लिये गये हैं वे हिंदी के ही हैं वह चाहे 'तलाक' हो चाहे और कुछ, फिर भी यदि वे तलाक के लिये शब्द सीखना चाहते हैं तो मैं कहना चाहता हूँ कि ऐसा शब्द विवाह-विच्छेद हो सकता है। हां, तो मैं यह कह रहा था कि

उन नब्बे प्रतिशत लोगों के रीति-रिवाज को हटा कर अगर यह कानून पारित किया गया तो इसका यह अर्थ होगा कि वे अपने रीति-रिवाज के मुताबिक तलाक नहीं दे सकेंगे और उसमें उन्हें बहुत अड़चनें होंगी। इसलिये अम्बेडकर साहब की जो इच्छा है कि लोगों को विवाह करने की पूरी आजादी हो, लोगों को तलाक देने की पूरी आजादी हो तो उसमें भी बड़ी भारी अड़चनें आ सकती हैं। औरतों और मर्दों को सबको मैं इस प्रकार की पूरी आजादी देने के पक्ष में हूँ।

अम्बेडकर साहब ने जो यह कहा कि हम जो दस प्रतिशत उच्च वर्ग के लोग कहे जाते हैं, ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य, वे नब्बे प्रतिशत लोगों पर कुछ चीजें लादना चाहते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि हम जो दस प्रतिशत पढ़े लिखे लोग हैं वे नब्बे प्रतिशत लोगों के ऊपर बहुत चीजें लादना चाहते हैं। लादते ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य नहीं हैं, लादते ये लोग हैं जो किसी प्रकार से एसेम्बली में आ गये हैं। मैं अपनी बहनों से भी कहना चाहता हूँ कि मैं इस बात को स्वीकार करने को तैयार नहीं हूँ कि मेरी बहन दुर्गाबाई और रेणुका रे और यहां जो स्त्रियां हैं वे स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हैं, या यहां जो बहनें दर्शक दीर्घा में आती हैं वे स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। मैं मानता हूँ कि जो यहां मौजूद नहीं हैं, जो दर्शक दीर्घा में नहीं आतीं। वे इस देश की स्त्रियों का अधिक प्रतिनिधित्व कर सकती हैं, बनिस्बत उनके जो यहां पर मौजूद हैं। हमें स्वीकार करना होगा कि जो आज यह बात कही जाती है कि कुछ उच्च वर्ण के कहे जाने वाले लोग निम्न वर्ण के कहे जाने वाले वर्णों पर अपनी राय लादते हैं, यह सही नहीं है। सही बात यह है कि दस प्रतिशत पढ़े-लिखे लोग नब्बे प्रतिशत पर अपनी राय लाद देना चाहते हैं, इस देश की जनता क्या चाहती है, इस बात को जाने बिना वे अपनी राय इस देश की जनता पर न लादें। मैं यह नहीं चाहता कि यहां पर इस प्रकार का कोई कानून पास हो जो जनता की इच्छा के खिलाफ हो।

श्रीमती रेणुका रे : क्या 90 प्रतिशत यह जानती है, कि आप संविधान बना रहे हैं।

सेठ गोविन्द दास : हम जानते हैं कि लोग हमारे साथ हैं। यह कहना ठीक नहीं है, कि आपको ही इसकी चिंता है। इस संबंध में लोगों का आदेश लेकर आए हैं।

दूसरी बात उत्तराधिकार के सम्बन्ध में यहां पर कही गई हैं। यह कहा गया कि उत्तराधिकार के मामले में हमको बहुत से सुधार की आवश्यकता है। मानता हूँ कि स्त्रियों को कोई उत्तराधिकार न दिया जाय और वे सम्पत्ति वे ले सकें तो यह उनके प्रति बड़े से बडा अन्याय है। स्त्रियों को उत्तराधिकार का अधिकार होना चाहिए। अब स्त्रियों को उत्तराधिकार का अधिकार कहां तक होना चाहिये यह सवाल है। डॉ. अम्बेडकर ने मनु और याज्ञवल्क्य की स्मृतियों की बात यहां कही और यह कहा कि उन स्मृतियों में भी लड़कियों को चार आने तक उत्तराधिकार दिया गया है। मैं कहना चाहता हूँ कि

जहां तक उत्तराधिकार का सम्बन्ध है वहां तक यदि याज्ञवल्क्य और मनु की यह राय है तो भी मेरे मत से इसमें सुधार होना आवश्यक है। इस देश में या इस संसार में एक जमाना था जब मातृ-गृह थे पर आज के समाज में मातृ-गृह न रह कर पितृ-गृह हो गए हैं। जब तक देश में तथा संसार में मातृ गृह थे और विवाह के पश्चात् वर कन्या के यहां आकर रहता था। उस समय तक कन्या को पिता की सम्पत्ति में अधिकार होना ठीक बात थी। परन्तु अब जब पितृ-गृह हैं और कन्या पिता के यहां से श्वसुर के यहां जाती है उस समय पिता की सम्पत्ति में कन्या को अधिकार देना मेरी दृष्टि से उचित बात नहीं है। मेरी दृष्टि से बहू को श्वसुर की सम्पत्ति में अधिकार होना चाहिये। ज्योंही विवाह हो जाए त्यों ही बहू को सम्पत्ति में उतना ही अधिकार मिलना चाहिये, जितना लड़के को मिलता है। आज जो लड़के को पूरा अधिकार ही रहता है। यदि कोई स्त्री विधवा हो जाए तो उसे खाने और कपड़े का अधिकार ही रहता है। मैं इसके बिल्कुल खिलाफ हूँ। इसलिए मैं कहना चाहता हूँ कि स्त्रियों को अधिकार तो होना चाहिए सम्पत्ति पर, पर उनका अधिकार होना चाहिए श्वसुर के घर की सम्पत्ति पर, पिता के घर की सम्पत्ति पर नहीं।

श्री मोहन लाल गौतम : यदि श्वसुर न हो?

सेठ गोविन्द दास : तो पति के घर में।

श्री मोहन लाल गौतम : यदि पति न हो?

सेठ गोविन्द दास : तो लड़के के घर में।

श्री मोहन लाल गौतम : और अगर लड़का न हो?

श्री तजामुल हुसैन : यदि वह शादीशुदा नहीं है, तो क्या करेगी?

सेठ गोविन्द दास : यह अलग बात है। उनको कहीं न कहीं से मिल ही जाता है। यहां पर जो यह दृष्टान्त दिया गया है कि अगर 12 लड़के हों और तेरहवीं लड़की हो, तो यदि 12 लड़कों में पिता की सम्पत्ति का विभाजन करने का अधिकार है तो तेरहवीं लड़की को क्यों न हो। मैं कहना चाहता हूँ कि 12 लड़के अपने पिता के घर में रहते हैं। 12 लड़कों का जो विभाजन होता है यह उसी स्थान पर होता है।

श्री कृष्ण चंद्र शर्मा : अगर लड़की भी पिता के घर रहना चाहे?

सेठ गोविन्द दास : चूंकि लड़की दूसरे के घर जाती है, इसलिए लड़की के लिए यह बात लागू नहीं हो सकती। एक बात सम्पत्ति के उत्तराधिकार में और हुई है और वह यह कि अब उत्तराधिकार का अधिकार वसीयतना में से होगा। जहां वसीयतनामे नहीं लिखे जायेंगे वहीं झगड़े होंगे। यह नहीं, पर जहां वसीयतनामे लिखे जायेंगे वहां भी झगड़े

पड़ेंगे। डाक्टर अम्बेडकर साहब, जो बहुत विख्यात वकील हैं, इस बात को जानते हैं कि जितने वसीयतनामे आजकल लिखे गये हैं उनमें से कितने प्रतिशत वसीयतनामे कचहरियों में आये और कितने वसीयतनामों पर मुकदमे चले। मुझे भय है कि जो अधिकार आप सम्पत्ति के उत्तराधिकार का लड़कों और लड़कियों को इस कानून के मुताबिक देना चाहते हैं, उसमें ज्योंहि वसीयतनामा आया त्यों ही वह सम्पत्ति ने लड़कों को मिलेगी और न लड़कियों को मिलेगी। वह सब वकीलों के यहां चली जाएगी।

फिर एक बात और होगी। डॉ. अम्बेडकर साहब चाहते हैं कि लड़कियों की भी सम्पत्ति में उत्तराधिकार का अधिकार दिया जाए। तो मैं अर्ज करना चाहता हूँ कि जिस तरह का आज हमारा समाज संगठित है, उसमें जो पिता वसीयतनामा करेंगे वे लड़कियों को कुछ नहीं देंगे, वे लड़कों को ही देंगे और वे स्त्रियों को उत्तराधिकार देने का आपका उद्देश्य है इससे पूरा नहीं होगा। मैं उत्तराधिकार के सम्बन्ध में यह कहना चाहता हूँ कि उत्तराधिकार का विषय बड़ा जटिल है, जैसा कि डाक्टर अम्बेडकर साहब ने भी खुद कहा है। हमको तो ऐसा लगता है–चाहे हम साम्यवादी या समाजवादी न हों– कि एक तरफ से उद्योगपतियों की आवाज उठी हुई है कि इस देश में उद्योग–धंधे नहीं बढ़ रहे हैं। दूसरी तरफ उत्तराधिकार का प्रश्न उठा हुआ है, अतः सबसे अच्छा तो यह हो कि आप व्यक्तिगत सम्पत्ति को ही समाप्त कर दें। यदि यह व्यक्तिगत सम्पत्ति समाप्त होकर एक नई सामाजिक रचना हो, ऐसी सामाजिक रचना जो साम्यवाद और सामाजवाद के सिद्धान्तों पर हो, यह मैं नहीं कहता, पर यह व्यक्तिगत सम्पत्ति को समाप्त करके एक नये प्रकार की सामाजिक रचना की जाये, मैं इस पक्ष में हो गया हूँ। यदि हमारे पूंजीपति देखेंगे तो उनको मालूम होगा कि यह सम्पत्ति उनके भी कोई कल्याण की चीज नहीं है। मैं उसी वर्ग में से आता हूँ जो पूंजीपति कहा जा सकता है। परन्तु हम देखते हैं कि आखिर इस सम्पत्ति से सच्चा सुख किसे मिल रहा है। मैंने किसी भी ऐसे श्रीमान् को नहीं देखा कि गरीब का पेट तो आधा सेर या तीन पाव से भरता है, तो श्रीमान् का पेट 10 या 20 सेर खाकर पचा सकता हो। मैंने कोई भी ऐसा श्रीमान् नहीं देखा कि अगर गरीब आदमी का शरीर पांच या सात गज कपड़े से ढकता हो तो श्रीमान्, सौ, दो सौ, चार सौ गज इकट्ठा पहन लेता हो।

माननीय मौलाना अब्बुल कलाम आजाद (शिक्षा मंत्री) : कुछ लोग युद्ध करते हैं।

सेठ गोविन्द दास : और मुझे तो महलों में रहने का अभ्यास है और मैं कहना चाहता हूँ कि अगर किसी श्रीमान् को उनके महल में किसी बड़े हाल से सुला दिया जाए तो उनको नींद नहीं आती। सोने के लिए तो 12 या 14 फुट का कमरा ही चाहिए। आजकल सम्पत्ति एक दुःख हो गया है अमीर के लिए भी। जिनके पास यह नहीं है, उसको पाने की और जिसके पास है उनको उसके मारे इतनी मुसीबत है कि वे चैन से रह नहीं सकते।

माननीय अब्दुल कलाम आजाद : और वे इसे छोड़ना भी नहीं चाहते।

सेठ गोविन्द दास : छोड़ना इसलिए नहीं चाहते कि उस सम्पत्ति के संग्रह करने वाले को समाज में इज्जत की दृष्टि से देखा जाता है।

श्री सीताराम एस. जाजू (मध्य भारत) : उसको त्याग या दान कर देने वाले को भी इज्जत की दृष्टि से देखा जाता है।

सेठ गोविन्द दास : हमारे साम्यवादी और समाजवादी कहते हैं कि जितने सम्पत्तिशाली हैं वे सब चोर हैं, डाकू हैं, और उठाइगीर हैं। कुछ साम्यवादी और समाजवादी इससे भिन्न हो सकते हैं। मैं सबके लिए नहीं कहता, लेकिन बहुत ऐसे हैं कि यदि उनको यह सम्पत्ति मिल जाए तो वे समाजवाद और साम्यवाद छोड़ दें। सम्पत्ति के संग्रह करने वाले आज भी समाज में इज्जत की दृष्टि से देखे जाते हैं। हमें समाज की भावनाओं का, और मूल्यों का इस प्रकार परिवर्तन करना चाहिए कि सम्पत्तिशाली सचमुच चोर, डाकू और उठाइगीर माने जाने लगें और तब मैं कहना चाहता हूँ कि कोई भी सम्पत्तिशाली इसे अपने गले में नहीं रखना चाहेगा। तो यह उत्तराधिकार का झगड़ा सुलझाने के लिए मैं तो यह चाहता हूँ कि हमारे लॉ मेम्बर डॉ. अम्बेडकर साहब एक ऐसा विधेयक ले आयें जिससे व्यक्तिगत सम्पत्ति की समाप्ति ही हो जाय और उन लोगों का भी उद्धार हो जाए जो कि इसके चक्कर में पड़े हुए हैं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : क्या आप इसका विरोध नहीं करेंगे?

सेठ गोविन्द दास : मेरा यह विचार है कि यह दो ही ऐसे विषय हैं, इस विधेयक में जिनके सम्बन्ध में बहुत वाद-विवाद उठाया जा सकता है। और मेरा यह भी ख्याल है कि समय को देखते हुए यदि हम इस वाद-विवाद में न पड़कर इस विधेयक को नई विधानसभा के बनने तक स्थगित कर दें और इस बीच लोगों की राय ले लें और लोगों की राय लेकर नए चुनाव के पश्चात् इस विषय को हम यहां पर लावें और इस विषय को हम हिंदू संहिता के रूप में न लावें परन्तु जिस प्रकार हमने संविधान पारित किया है, जिसमें इस देश के प्रत्येक नागरिक को अधिकार दिए हैं।

डॉ. मोनो मोहन दास (पश्चिम बंगाल : सामान्य) : महोदय मेरा व्यवस्था का प्रश्न है। क्या इस प्रकार की बहस के लिए कोई समय-सीमा नहीं है।

माननीय उपाध्यक्ष : कोई समय-सीमा नहीं है।

सेठ गोविन्द दास : तो मैं कहना चाहता हूँ और इन शब्दों से मैं अपने इस कथन को समाप्त करता हूँ, कि मैं यह आवश्यक मानता हूँ कि हमारे सामाजिक कानूनों में सुधार आवश्यक हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि जो लोग इसका विरोध इस प्रकार करते हैं,

जिस प्रकार उन्होंने सती प्रथा के सम्बन्ध में जो विधेयक आया था उसका, या विधवा विवाह के सम्बन्ध में या बाल विवाह के सम्बन्ध में जो विधेयक आया था उसका विरोध किया था, वे ठीक नहीं कर रहे हैं। पर इसी के साथ मैं यह भी मानता हूँ कि यह विधेयक इस समय ठीक अवसर पर उपस्थित नहीं हुआ है और हमें इस समय इस पर विचार न कर लोगों की राय लेकर आगे इसको पेश करना चाहिए। इतने ही शब्दों के साथ मैं न तो इसका समर्थन करता हूँ और न इसका विरोध करता हूँ।

***श्रीमती सुचेता कृपलानी (यू.पी. : सामान्य) :** महोदय, जब से प्रभुत्तासम्पन्न विधानमण्डल बना है, तब से कोई भी विधान इतना विवादास्पद नहीं रहा, जितना कि हिंदू संहिता विधेयक। यदि विवाद हिंदू कानून में परिवर्तनों के कारण और गुणावगुण पर आधारित होता, तो अच्छा होता, परन्तु अधिकतर विवाद, असंगत मुद्दों पर है। इस संहिता के विरुद्ध यह प्रचार किया जा रहा है कि धर्म खतरे में है। यह कहा गया है कि इससे हिंदू धर्म की जड़ें हिल जाएंगी। जो ऐसा कह रहे हैं, वे अपने ही धर्म के साथ अन्याय कर रहे हैं।

हिंदू धर्म मूलतः व्यक्ति की आत्मिक मुक्ति पर आधारित है। यह आत्मानुभूति का मार्ग दिखाता है। एक व्यक्ति को स्वपूर्ति के लिए सत्य, न्याय अहिंसा आदि जैसे नैतिक आत्मिक सिद्धांतों की आवश्यकता होती है। ये बातें हमारे धर्मग्रंथों में दी गई हैं। ये अपरिवर्तनीय और आधारभूत हैं। सामाजिक व्यवस्थ, बातचीत और रीति-रिवाज, जो युगों में विकसित हुए हैं, धर्म नहीं है। हिंदू संहिता में हिंदू धर्म के साथ छेड़खानी करने की नहीं अपितु हिंदू सिविल कानून में संशोधन करने की बात कही गई है। कानून समय-समय पर बदला है। यह धर्म से अलग है और कभी अपरिवर्तनीय और स्थायी नहीं रहा है। धर्म शास्त्रों के लेखकों ने समुदाय की तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुसार इसमें परिवर्तन किए हैं। अंग्रेजों के यहां आने के बाद, हिंदू कानून कठोर और स्थायी बन गया।

हिंदू धर्म की यह विशेषता रही है कि इसके मूल सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, परन्तु बदलती परिस्थितियों के अनुसार हिंदू सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन किया गया है। निरंतर अनुकूलनशीलता हिंदू धर्म की शक्ति है। जब तक हिंदू समाज स्थायी नहीं होता, कानून में बदलती परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होना चाहिए। हम जानते है कि स्मृतियाँ भी अपरिवर्तनीय नहीं रही हैं। स्मृतियों में उत्तराधिकार और विवाह संबंधी कानून को शामिल करने के अतिरिक्त कानून की अन्य शाखाओं को भी शामिल किया गया है। इनमें भारतीय विधानमण्डल में कार्यवाही हुई है और कुछ को निरस्त कर दिया गया है। हिंदू धर्म लड़खड़ाया नहीं है। हिंदू धर्म झटके झेल कर भी जीवित है। यदि हिंदू

---

*संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, खंड 2, भाग II, 24 फरवरी, 1949, पृष्ठ 866-924

धर्म इन परिवर्तनों को झेल सकता है, तो मुझे विश्वास है कि इसमें थोड़े और परिवर्तन किए जाने के बाद भी यह जीवित रहेगा। हमने बहुत ही महत्वपूर्ण कानून बनाए हैं। हमने सती प्रथा समाप्त की है। हमने बाल-विवाह और कुछ हद तक अस्पृश्यता समाप्त की है। हिंदू धर्म एक बहुत ही उदार धर्म है। अतः यह कहना कि हिंदू धर्म खतरे में है, उचित नहीं है। इस उदार धर्म में विभिन्न मतों, रीति-रिवाजों के लोगों को आश्रय मिला हुआ है। आज क्या हुआ है? हमने अपने धर्म में विश्वास क्यों खो दिया है, जिसके कारण आवाज उठाई जा रही है कि हिंदू धर्म खतरे में है? इसका मतलब यह नहीं है कि जिसने भी इसका विरोध किया है, वे रूढ़िवादी और प्रतिक्रियावादी हैं। मैं केवल यह कहना चाहती हूँ कि अपनी बात पर बल देकर आप अपने धर्म के साथ यह कह कर अन्याय कर रहे हैं कि हिंदू धर्म खतरे में है।

एक तर्क यह दिया गया है कि इस विधेयक पर इस समय विचार नहीं किया जाना चाहिए और कि हमने लोगों को विधेयक के उपबंधों की जानकारी लेने का पर्याप्त अवसर नहीं दिया है। जहां तक मेरी जानकारी है, यह विधेयक पिछले दस वर्षों से सदन और देश के सामने है। इस विधेयक में दिए गए उत्तराधिकार विधेयक और विवाह विधेयक जैसे कुछ उपाय 1943 में सदन के समक्ष रखे गए थे। इसका रिपोर्ट 1945 या 1946 में प्रकाशित हुई और इसके प्रारूप का तेरह भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। प्रारूप विधेयक की हजारों प्रतियाँ परिचालित की गईं। इसके बावजूद भी यदि हमें इसके उपबंधों की जानकारी नहीं है, तो यह सरकार की नहीं बल्कि हमारी गलती है। इसके अतिरिक्त, यह विधेयक कोई एक दिन में पारित नहीं हो जाएगा। इस पर विचार करने में काफी समय लगेगा। जब विस्तार से इस पर चर्चा होगी, तो इस पर काफी समय लगेगा। उस समय हमारे पास जनता के समीप जाने, उसके इसके उपबंधों की जानकारी देने और जनता के विचार जानने के पर्याप्त अवसर होंगे। यह बड़ा ही आश्चर्यजनक प्रचार किया जा रहा है कि अगले चुनावों तक विधेयक को स्थगित किया जाना चाहिए। इसे स्थगित क्यों किया जाना चाहिए? क्योंकि हमारी पार्टी की लोकप्रियता पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा? क्या कांग्रेस के लिए ऐसा कहना उचित है? क्या हमने कभी कर्त्तव्य से पहले अपनी लोकप्रियता को तरजीह दी है? यदि हम समझते हैं कि विधेयक उचित है, यह लोगों की भलाई के लिए है, तो हमें आगे बढ़ना चाहिए। अगले चुनावों में मत प्राप्त करने के लिए इस विधेयक को रोकना उचित नही है। यह ईमानदारी नहीं है। हमारे लिए लोगों की भलाई सबसे पहले है। यदि हम इस बात को ध्यान में रखते, अगर हमारा दृष्टिकोण ऐसा नहीं है, तो हम कभी भी आमूल परिवर्तन नहीं कर पाएंगे। हमारे जीवन का क्षेत्र कोई भी हो, जब भी कभी आमूल परिवर्तन होता है, तो हमें निहित स्वार्थों और स्थापित रीति-रिवाजों का सामना करना पड़ता है। ऐसे परिवर्तनों के खिलाफ हमेशा शोर मचता है। यदि हम इस आधार पर सुधार नहीं करते, तो हम कभी भी कोई परिवर्तन नहीं कर पाएंगे।

मैं यह कहना चाहती हूँ। हिंदू संहिता विधेयक के बारे में बहुत-कुछ कहा गया है। मैं यह कहना चाहती हूँ कि इस विधेयक का समर्थन करने वाले लोग भी बहुत योग्य और विचारशील हैं। और इन योग्य और विचारशील लोगों में केवल महिलाएं ही नहीं हैं। इस विधेयक के समर्थन में अनेक पुरुष भी हैं। हमारे अन्य देशों के इतिहास में भी देखा है कि जब भी कोई आमूल परिवर्तन किया गया है, जब भी कोई सुधार किया गया है, तो बहुत कम लोगों ने इसका समर्थन किया, बहुत कम लोगों ने इसका प्रचार किया और लोगों को शिक्षित किया और कुछ समय के बाद लोग इसके अनुसार ढल गए। अतः मुझे विश्वास है कि हिंदू संहिता के विरुद्ध कितने भी लोग क्यों न हों, यदि यह न्यायोचित और उचित है, तो जनमत हमारे साथ हो जाएगा। वे केवल हमारा समर्थन ही नहीं करेंगे बल्कि यदि यह पारित हो जाता है तो कुछ समय बाद हमें दुआएं देंगे। (**एक माननीय सदस्य :** वे पहले ही हमारे साथ हैं)। वे कहते हैं कि बहुमत हमारे साथ है। उनके लिए मेरा यह उत्तर है।

गर्मा-गर्मी और विवाद में हम यह भूल जाते हैं कि इस विधेयक में केवल उत्तराधिकार और विवाह संबंधी उपबंध ही नहीं हैं। हमने एक समान कानून और कानून की सम्पूर्ण प्रणाली बनाने का प्रयास किया है। कानून या संहिता की इस सम्पूर्ण प्रणाली में विसंगतियों, असमानताओं और अन्याय को दूर करने का प्रयास किया है। उदाहरण के तौर पर आज ही डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में बताया था कि संरक्षणता, भरण-पोषण, दत्तकग्रहण आदि सबक उपबंध किस प्रकार लाभदायक हैं। जो इस विधेयक के पूरी तरह विरोध में हैं, उन्होंने इस विधेयक के अच्छे और अविवादास्पद पक्ष पर ध्यान नहीं दिया है और पूरा ध्यान इस विधेयक का विरोध करने पर केन्द्रित रखा है।

जहां तब उत्तराधिकार संबंधी उपबंध का संबंध है, बड़ी संख्या में लोगों ने इसका विरोध किया है।

श्री तजामुल हुसैन : इसका विरोध लोगों ने निहित स्वार्थों से किया है।

श्रीमती सुचेता कृपलानी : बड़ी संख्या में लोगों ने इसका विरोध किया है। उन्होंने संयुक्त परिवार के टूटने और स्त्री के अत्यंतिक अधिकार के संबंध में विरोध किया है। मैं पहले दूसरे मुद्दे के बारे में बताती हूँ। हम एक ऐसे समाज का निर्माण करने जा रहे हैं, जिसमें स्त्री और पुरुष और सभी जातियों के लोग समान होंगे। एक पूर्ण प्रजातंत्र लाने का प्रयास कर रहे हैं, जिसका सपना हम वर्षों से देख रहे हैं। हम स्त्री को समाज में समान दर्जा देने के लिए प्रतिबद्ध हैं। हम लिंग भेद को समाप्त करने के लिए प्रतिबद्ध हैं और यह प्रतिज्ञा नया संविधान लागू करने से ही नहीं शुरू होगी। मैं आपको याद दिलाना चाहती हूँ कि ये प्रतिज्ञाएं कराची संकल्प में भी शामिल की गई थीं। इसके बाद हमने कार्यभार संभाला है और इसके बाद पुनः यह दोहराया गया कि

लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। यदि स्त्री और पुरुष एक जैसा काम करते हैं, यदि वे राज्य के समान नागरिक की तरह कार्य करते हैं, यदि वे राज्य के प्रति समान रूप से अपना उत्तरादायित्व पूरा करते हैं। तो स्त्री के सम्पत्ति अधिकार के मामले में इस भेदभाव पूर्ण कानून कैसे बना सकते हैं? जब तक हम स्त्री को सम्पत्ति का पूरा हिस्सा नहीं देते, तब तक उससे यह आशा नहीं कर सकते कि वह राज्य के प्रति अपना दायित्व पूरी तरह निभाएंगी। वास्तव में जब भी हमने कोई परिवर्तन किया है, स्थापित रीति-रिवाजों और स्थापित कानून प्रभावित हुए हैं। इससे थोड़ी व्यवस्था गड़बड़ाई है और असुविधा हुई है परन्तु हमने उसको बर्दाश्त किया है और इसे अनिवार्य माना है। इससे होने वाली असुविधा को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं बताना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर और अन्य साथियों ने बताया है कि स्मृतियों में स्त्री के सम्पत्ति के अधिकार को स्वीकार किया गया है। जो कुछ हमें कानून ने दिया उसे प्रथाओं ने अस्वीकार कर दिया। व्यवहार में अधिकार को रद्द कर दिया गया। हम यही करने का प्रयास कर रहे हैं। हम हिंदू धर्म के मूल सिद्धांतों या हिंदू रीति -रिवाजों या हिंदू कानून के विरोध में नहीं हैं बल्कि जो हिदू कानून ने हमें दिया और जिसे मनमाने ढंग से छीन लिया गया, उसे वापस लेने का प्रयास कर रहे हैं जिसे समाज ने पिछले वर्षों में हमें नहीं दिया। यह केवल न्याय किया जो लम्बे अर्से से अपेक्षित था।

यदि आप आधुनिक समय की बात करते हैं तो 1937 के अधिनियम में पत्नी, पुत्र-वधु, पोते की पत्नी आदि को सम्पत्ति का अधिकार दिया गया है। केवल पुत्री को छोड़ दिया गया है। अब इसे शामिल करना उचित होगा। अत: इसमें ज्यादा बहस करने वाली कोई बात दिखाई नहीं देती। यदि अन्य स्त्रियों को यह अधिकार दिया गया है, यदि वह पति की सम्पत्ति में उत्तराधिकारी है, तो उसे पिता की सम्पत्ति में अधिकार मिलना चाहिए। यह बहुत स्वाभाविक और उचित है।

माननीय श्री जगजीवन राम : वे उसे अन्य स्तरों पर आगे बढ़ाना चाहते हैं।

श्रीमती सुचेता कृपलानी : जहां तक संयुक्त परिवार का संबंध है, इसके बारे में उत्तेजना है। मेरी समझ में यह नहीं आता कि इतनी उत्तेजना क्यों है। मैं बहुत से लोगों से मिली हूँ, वे संयुक्त परिवार से बाहर होने के लिए बेताब हैं। पुत्र अपने पिता के साथ नहीं रहना चाहते। पूरे देश के बहुत सारे संयुक्त परिवार टूटे हैं। अत: मेरे अनुसार संयुक्त परिवार की व्यवस्था बड़ी तेजी से टूट रही है। यहां तक कि संयुक्त परिवार का कानूनन स्थिति भी दोषपूर्ण है, जैसा कि सुबह डॉ. अम्बेडकर ने बताया है। यहां तक कि मिताक्षरा प्रणाली में भी संयुक्त परिवार का कोई सदस्य सम्पत्ति में बंटवारा मांग सकता है।

अत: मैं पूछना चाहता हूँ कि संयुक्त परिवार है कहां, जिसके बारे में आप इतना शोर मचा रहे हैं।

एक संयुक्त परिवार में एक असुरक्षित महिला की सुरक्षा के बारे में बहुत कुछ कहा गया है। मैं जानती हूँ कि अतीत में भी संयुक्त परिवार में असुरक्षित को सुरक्षा मिलती थी। अब भी कुछ महिलाओं को सुरक्षा मिलती है परन्तु सैंकड़ों महिलाएं ऐसी हैं, जिन्हें संयुक्त परिवार में आश्रय नहीं मिलता और उनके पास अपने आर्थिक संसाधन न होने के कारण उन्हें अपमान भरा जीवन व्यतीत करना पड़ता है। हमारे में जो महिलाएं सामाजिक कार्य करती हैं, उनके सामने असंख्य ऐसे मामले आते हैं। जिस हिंदू समाज के बारे में आप इतना जोर-जोर से बोल रहे हैं, तो उसकी सुरक्षा के लिए महिला को उसका हिस्सा देना न केवल उचित और न्यायोचित होगा बल्कि ऐसा करना अनिवार्य है।

माननीय श्री जगजीवन राय : और इसके अतिरिक्त भी कुछ दिया जाना चाहिए।

श्रीमती सुचेता कृपलानी : यह अच्छी बात है। हमें कुछ और ज्यादा दीजिए। अतीत में आपने हमें नहीं दिया, अब हमें दे दीजिए।

जहां तक विवाह के प्रश्न का संबंध है, इस विधेयक में भ्रांति और अनिश्चितता को दूर करने तथा विवाह की प्रथाओं में एकरूपता लाने की व्यवस्था की गई है। इससे प्रथागत कानून के अंतर्गत होने वाले विवाहों के लिए कुछ कठिनाई हो सकती है परन्तु इस विधेयक में जिस सांस्कारिक और सिविल विवाह का प्रस्ताव किया गया है, उसे निर्धन और पिछड़े वर्ग अपना सकते हैं। अत: मैं नहीं समझती कि इसमें कोई कठिनाई आएगी। सांस्कारिक विवाह के पंजीकरण पर कुछ आपत्ति है। यह केवल भावनात्मक आपत्ति है क्योंकि पंजीकरण वैकल्पिक है। यदि आप पंजीकरण नहीं चाहते, तो आप पंजीकरण मत करवाइये।

एक माननीय सदस्य : यह अनिवार्य है।

माननीय डॉ. बी.आर अम्बेडकर : यह अनिवार्य नहीं है।

श्री तजामुल हुसैन : अनिवार्य नहीं है। आप चाहें तो करवाइये और न चाहें, तो मत करवाइये।

श्रीमती सुचेता कृपलानी : यदि मैंने गलत कहा है, तो डॉ. अम्बेडकर मेरी गलती दूर कर सकते हैं। यह व्यवस्था तो केवल सुरक्षा प्रदान करने के लिए की गई है।

अब मैं अन्तरजातीय और सगोत्र विवाह पर आती हूँ। मैंने अपने से पहले वाले वक्ता की बात सुनी है। मैं नहीं जानती कि अन्तरजातीय और सगोत्र विवाह पर कैसे आपत्ति की जा सकती है, जबकि समाज में अनेक ऐसे विवाह हो रहे हैं। यदि ऐसी शादियां नहीं होती, तो कोई बात नहीं परन्तु, जब ऐसी अनेक शादियां हो रही हैं, तो या तो हम उन पर दबाव डालें कि वे नियमित शादी करें या हम उन्हें हिंदू धर्म से निकाल दें, या उन्हें अन्यत्र जाने के लिए कहें या उन्हें पंजीकरण कार्यालय में जाकर विवाह पंजीकरण के

लिए कहें। यदि ऐसा हो रहा है, तो क्यों न हमें इसे स्वीकार कर लें। जब यह प्रचलन में है, तो इसे मान्यता प्रदान कर इसे वैधता क्यों न प्रदान कर दें।

जहां तक एकपत्नी विवाह के प्रश्न का संबंध है, मैं समझती हूँ कि समाज ने इस विवाह को स्वीकृति प्रदान कर दी है। बहुपत्नी विवाह को घृण की दृष्टि से देखा जाता है और इसे समाज का समर्थन नहीं मिला है, यद्यपि ऐसे विवाह होते हैं। अधिकांश हिंदुओं ने वर्तमान प्रथा को मान्यता प्रदान की है और हम इसे कानूनी रूप प्रदान कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, जब हम एक ऐसे समाज का निर्माण करने जा रहे हैं, जिसमें महिला और पुरुष को बराबर का दर्जा प्रदान किया गया है, तो हम महिलाओं और पुरुषों के लिए दोहरी नैतिकता नहीं निर्धारित कर सकते। मैं समझती हूँ कि पुरुषों के लिएतो यह खुशी की बात है क्योंकि एक पत्नी विवाह की व्यवस्था करके हम पुरुष की नैतिकता के स्तर को बढ़ाकर महिला की नैतिकता के स्तर के बराबर कर रहे हैं। मैं समझती हूँ कि पुरुषों को हमें धन्यवाद देना चाहिए।

एक माननीय सदस्य : आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। हम आमदनी से तलाक ले सकते हैं और दूसरा विवाह कर सकते हैं।

श्रीमती सुचेता कृपलानी : जहां तक तलाक के प्रश्न का संबंध है, हम रूढ़िवादी लोगों के विचारों से असहमत नहीं हैं, परन्तु, प्राचीन ग्रन्थों में भी तलाक की व्यवस्था थी। तलाक के लिए जिन आधारों और कारणों की अनुमति दी गई है, वे उपयुक्त और न्यायोचित हैं। हमने छोटी-मोटी बातों पर तलाक की अनुमति नहीं दी है, जैसा कि पश्चिम के देशों में होता है। हमने इस बात का ध्यान रखा है कि तलाक का सहारा बहुत ही गंभीर परिस्थितियों में लिया जाना चाहिए। यदि हम बड़ौदा, त्रावणकोर, कोचीन और मालाबार का रिकार्ड देखें तो पता चलता है कि बहुत कम लोगों ने इस मामले में कानून का सहारा लिया है। अपवादात्मक परिस्थितियों में कठिन स्थिति से छुटकारा पाने के लिए इसका सहारा लिया जाता है। हिंदू समाज में यह प्रथा है कि छोटे-मोटे कारणों से तलाक के लिए न्यायालय की ओर नहीं दौड़ते। जो लोग यह सोचते हैं कि तलाक का अधिकार देने से हिंदुओं के पारिवारिक जीवन की शांति भंग हो जाएगी, बिल्कुल गलत है।

प्रात: डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि 90 प्रतिशत हिंदुओं में तलाक का प्रचलन है तो क्यों न शेष 10 प्रतिशत लोगों पर भी इसे लागू कर दिया जाए। शेष 10 प्रतिशत लोगों पर इसे लागू करना उचित होगा। यदि कोई तलाक न हो, तो यह ठीक है। परन्तु महिला और पुरुष तलाक चाहते हैं, तो वे हिंदू धर्म छोड़कर मुसलमान या ईसाई बन जाते हैं। और ऐसा करके वे अपने फायदे के लिए उन धर्मों का इस्तेमाल कर उन धर्मों का अपमान करते हैं। अत: हमें वर्तमान परिस्थितियों को स्वीकार कर, तलाक की अनुमति दे देनी चाहिए।

अतः, महोदय, और ज्यादा कुछ नहीं कहना है। केवल अपने भाइयों को यह बताना चाहती हूँ कि जब महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिए दबाव डाला है, हमने महत्त्वपूर्ण हितों की अनदेखी नहीं की। इस मामले में हम रूढ़िवादी रहे हैं। आप जानते हैं कि हमने अपने राजनैतिक अधिकारों के लिए भी गलत बातों को बढ़ावा नहीं दिया। जब अंग्रेज यहां थे, तब भी हमने हमेशा संयुक्त मतदाता की बात कही। यहां तक कि नए संविधान में भी हमने अलग अधिकारों की मांग नहीं की। यदि हम यह नहीं समझते कि यह पूरे समाज के हितों के खिलाफ होगा, तो हमने अलग अधिकारों के लिए बल दिया होता। यदि हिंदू महिला लाभान्वित होती है तो मैं समझती हूँ कि इससे पूरा हिंदू समाज लाभान्वित होगा। यह अधिकांश लोगों के हित में है। इसलिए हम इस पर जोर दे रहे हैं।

मैं यह कहना चाहूंगी कि ज्यादातर पुरुष हमारे सहायक और मददगार रहे हैं। वे हमारी प्रगति के रासते में नहीं आए हैं। यह महात्मा गांधी के प्रभाव के कारण ऐसा हो सकता है। आप सब जानते हैं कि महात्मा गांधी महिलाओं के अधिकारों के बहुत बड़े समर्थक थे। जो प्रथा उन्होंने स्थापित की, पुरुषों ने उसका अनुसरण किया है। महात्मा गांधी के प्रभाव के कारण, हमारे नेताओं के सहानुभूतिपूर्वक रवैये के कारण, हमें अपने अधिकारों के लिए कभी नहीं लड़ना पड़ा, जैसे कि अन्य देशों की महिलाओं को लड़ना पड़ा है। अतः मेरा विश्वास है कि हम अच्छी परम्पराओं का अनुसरण करेंगे, हम सहयोग की भावना को कायम रखेंगे, जैसे कि पिछले वर्षों में होता रहा है और सदस्य इस विधेयक का समर्थन करेंगे और इस बात को सोचकर इसका समर्थन करेंगे कि वे महिलाओं को अधिकार नहीं दे रहे हैं, वे महिलाओं के साथ न्याय नहीं कर रहे हैं बल्कि वे समाज के साथ न्याय कर रहे हैं। यह एक ऐसा उपाय है, जिससे हम हिंदू समाज को सुदृढ़ बना रहे हैं। हिंदू समाज में बहुत दोष हैं। अब हम आजाद हैं। यदि विश्व में हमें अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखना है, तो पहले अपने घर को व्यवस्थित करना होगा। यदि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो समाज में अपनी प्रतिष्ठा को बनाए नहीं रख सकते। अतः हम सबको मिलकर अपने घर की त्रुटियों को सुधारना चाहिए। मेरी आपसे प्रार्थना है और मेरा विश्वास है कि आप इस अच्छे उपाय का समर्थन करेंगे।

तत्पश्चात् सभा बैठक शुक्रवार, 25 फरवरी, 1945 के पूर्वाह्न सवा ग्यारह बजे तक के लिए स्थगित हुई।

*हिंदू कोड–जारी

****माननीय उपाध्यक्ष** : सदन में अब डॉ. अम्बेडकर द्वारा 31 अगस्त, 1948 को प्रस्तुत निम्नलिखित प्रस्तावों पर आगे विचार किया जाएगा :

*संविधान सभा (विधायी), खंड 2, भाग II, 25 फरवरी, 1949, पृष्ठ 877–78

**संविधान सभा (विधायी), खंड 2, भाग II, 25 फरवरी, 1949, पृष्ठ 895–936

"कि हिंदू कानून की कुछ शाखाओं में संशोधन करने और उन्हें संहिताबद्ध करने वाले विधेयक, जैसा कि प्रवर समिति ने रिपोर्ट दी है, पर विचार किया जाए।"

पंडित ठाकुर दास भार्गव।

श्री नजीरुद्दीन अहमद (पश्चिम बंगाल-मुस्लिम) : महोदय, मैंने संशोधन प्रस्तुत किए हैं और मैं समझता हूँ कि उन पर मैं बोलूं और दूसरे सदस्य पर बोलें। यदि मैं अपनी बात कहने के बजाय अब उनकी बात सुनता रहूँ और उसके बाद बोलूं, तो उन्हें उत्तर देने का अवसर कहां मिलेगा?

माननीय उपाध्यक्ष : मैं समझता हूँ कि संशोधन प्रस्तुत करने वाले सदस्य बात में बोलें, तो उनके लिए अच्छा रहेगा क्योंकि वे जानते हैं कि उन्हें उत्तर देने का अवसर नहीं मिलेगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं उत्तर देना नहीं चाहता।

माननीय उपाध्यक्ष : यह अच्छा रहेगा कि माननीय सदस्य अपने प्रस्ताव के विरोध और समर्थन में कुछ भाषण सुनें ताकि वे उत्तर दे सकें और वे एक बार ही बोल सकें। मैंने पंडित ठाकुर दास भार्गव को बोलने के लिए कहा है। किस सदस्य को कब बोलना है, यह निर्णय करना अध्यक्षपीठ का काम है। मैं समझता हूँ कि पंडित दास भार्गव बोलें तो, अच्छा रहेगा।

पंडित ठाकुर दास भार्गव (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : महोदय, हिंदू संहिता विधेयक, जो पूरे भारत में''

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : माननीय सदस्य ने कहा, मैं समझ नहीं पाया।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उन्होंने डॉ. डी.एन. मित्तर की वर्तमान रिपोर्ट का खंडन करने के लिए उन्हीं एक पिछले लेख का उदाहरण दिया। हमारे पास उनका पहले वाले लेख के साथ-साथ बाद वाला लेख भी है और मैंने दोनों पर विचार किया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैंने उनका बाद वाला लेख नहीं देखा है। वह क्या है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : बाद वाला लेख इस रिपोर्ट में है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आपने बाद वाला लेख कहा तो मुझे लगा कि आप इसके बाद की किसी चीज पर बात कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : सवाल यह है कि उनका पहले वाला लेख क्या था और मौजूदा लेख क्या है तथा क्या कोई बदलाव नहीं है? यदि हाँ, तो कौन-सा बदलाव हुआ है? उन्होंने बहुत पहले एक पैंफलेट लिखा था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : पैंफलेट।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : एक पुस्तक।

माननीय डॉ. डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : मुझे लगा की अभी आप ने 'पेम्फलेट' बोला।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : आप जो भी नाम चाहें दे दें। मैं नाम के लिए नहीं लड़ता।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह किताब कितनी बड़ी थी जिसके बारे में आप कुछ बता सकते हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह आपको लाइब्रेरी में मिल जाएगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आप इसे पैम्फलेट बता चुके हैं। यह ''पेम्फलेट कितना बड़ा है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अगर जिरह ही करनी है, तो मुझे 'विटनेस बॉक्स' में बुला लिया जाए, मैं तब जवाब दूंगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं यह जानना चाहूँगा कि मेरे मित्र संदर्भ देने से पहले तथ्यों के प्रति आश्वस्त हैं। यदि यह सक पैम्फलेट है, तो मुझे बहुत आश्चर्य है। यह किताब लगभग 700 पृष्ठों की है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : आकार ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसमें अभिव्यक्त विचार महत्वपूर्ण है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, विचार क्या थे?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उसमें अभिव्यक्त विचार ये थे कि हिंदू महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की जाए और उन्हें बेहतर अधिकार दिए जाएँ। मैं माननीय मंत्री के सामने हर बात दोहरा नहीं सकता, क्योंकि मैं सदन में हंगामा खड़ा करना नहीं चाहता और इससे ज्यादा जोर से नहीं बोलना चाहता। वर्तमान विचारों में उन्होंने इस विधेयक का विरोध किया है। और माननीय मंत्री के दिमाग में स्पष्ट रूप से उनके पहले वाले विचार हैं, तथा अधिकांश सदस्य इसका फायदा उठा रहे हैं। मैं बताना चाहता हूँ कि विचारों का परिवर्तन के पक्ष में तर्क स्वयं डॉ. डी. एन. मित्तर ने दे दिए हैं। अगर विचारों का परिवर्तन अपराध है, तो विचारों का अंधानुकरण, जबकि यह गलत साबित हो चुका हो, तर्क पर आधारित परिवर्तन से ज्यादा बड़ा अपराध है। डॉ. मित्तर ने महिलाओं को और अधिक अधिकार दिए जाने के पक्ष में अपने स्पष्ट विचार रखे हैं। मैंने परिशिष्ट-II का एक अनुच्छेद पढ़ा है, जिसमें सरकार ने लोगों को वचन दिया है कि विधेयक को

जनमत के अनुरूप नया रूप दिया जाएगा। यही वह बात थी, जिससे डॉ. मित्तर को परेशानी थी। वस्तुतः उन्होंने पाया कि उनकी सोच भारतीय जनमत, जो उनके विचारों के विरूद्ध है, की सोच से काफी आगे है।

इसलिए उन्होंने अधिसूचना में इस अनुच्छेद का उल्लेख किया है, जिसमें सरकार द्वारा विधेयक में भारतीय जनमत के अनुरूप परिवर्तन लाने की बात कही गई है। अब डॉ. मित्तर बाढ़ देखते हुए अपने विचार बदल लिए है। यह ऐसा कानून है, जिसने पूरे देश को प्रभावित किया, यही कारण है कि उन्हें विधेयक के विरुद्ध जाना पड़ा, क्योंकि जनमत यही है। जनमत के सम्मान में अपने व्यक्तिगत विचारों का परित्याग करना अतार्कित नहीं है। मेरा विश्वास है कि माननीय मंत्री और अन्य मंत्रियों के भी व्यक्तिगत विचार हैं, सामूहिक भलाई के लिए उन्हें अपने विचारों को दबाना पड़ता है। मैंने मंत्रियों को अक्सर अपनी विचारधारा के खिलाफ बोलते सुना है। ऐसा करना अनुचित या गलत नहीं है। यह बिल्कुल स्वाभाविक है। यहाँ डॉ. मित्तर ने जनमत की भावनाओं को जानने और तनदुसार विधेयक में परिवर्तन लाते हुए इस विधेयक को नया रुख देने का बहुत बड़ा लोक–उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया है। मैं पूछता हूँ : अगर डॉ. डी.एन. मित्तर ने अपने विचार बदल लिए हैं, तो इसमें गलत क्या है? उन्होंने एक कार्य की जिम्मेदारी ली और वह जिम्मेदारी क्या थी? जनमत का पता करना और जनमत विधेयक के विरुद्ध था। जब राय ली जा रही थी, तब वह स्वयं मौजूद थे और मौखिक साक्ष्य से संबंधित रिपोर्ट में एक अनुच्छेद है जो महत्वपूर्ण है और इसका विशेष तौर पर उल्लेख किया गया है। जब समिति लाहौर में थी और ....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उन्हें काले झंडे दिखाए गए?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मात्र काले झंडे नहीं उससे भी जयादा। महिलाओं की भारी संख्या, हजारों में मुझे सही संख्या याद नहीं है–मैं सही संख्या बताकर सदन को भी परेशान नहीं करना चाहता।

माननीय अध्यक्ष : वह कौन–सा वर्ष था?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह सब इस जाँच के संबंध में 1945 में हुआ था। वे लाहौर गए थे, जहाँ बड़ी संख्या में महिलाएँ आई और उन्होंने साक्ष्य के कार्य को बाधित किया। उन्होंने कहा, ''हमें यह नहीं चाहिए। इससे हमें कोई फायदा नहीं होगा। यह हमारी सोच के विरुद्ध है।''

बाबू रामनारायण सिंह : सुनिए, सुनिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वस्तुतः हालात इतने गंभीर थे कि जब उनके सामने महिलाएँ हजारों की संख्या में इस बिल का विरोध कर रही थीं, तो वह आगे नहीं बढ़

पा रहे थे। उन्हें और उनकी भावनाओं को दबा पाना मुश्किल था और इसलिए साक्ष्य के लिए आगे की कार्यवाही पूरी तरह रोक दी गई। उन्होंने इसी का उल्लेख किया है। अगर वह अपनी बात पर दृढ़ नहीं रहने के दोषी हैं, तो भी उन्हें थोड़ी ईमानदारी दिखाने का श्रेय तो दिया ही जाना चाहिए।

बाबू रामनारायण सिंह : सुनिए सुनिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : क्या अपने विचारों पर कायम रहने का मतलब, अपने विचारों से चिपके रहना है, भले ही ये विचार गलत साबित हो गए हों? यह असंगति है या हठधर्मिता है। यह न अच्छाई है, न ही उचित है। इन सज्जन को जब पता चला कि न केवल पुरुष मत अपितु स्त्री मत पूरी तरह उनके विरुद्ध थे, तो उन्होंने कहा कि वे भी इसके विरुद्ध थे। क्या किसी व्यक्ति के लिए यह उचित या अच्छा होगा कि उनके इस बेहुदे व्यक्तिगत मत का उल्लेख करें? यदि ऐसा है, तो कोई भी माननीय मंत्री के लेखों व भाषणों का उल्लेख भी उनके विरुद्ध कर सकता है। पर ऐसा उचित नहीं होगा। अतः प्रत्येक लेख एवं भाषण को संदर्भ के अनुसार ही लिए जाएं।

ऐसा प्रायः इसलिए किया जाता है कि हम जनता के लिए करते हैं, अतः उनके हित में हमें अपने व्यक्तिगत मत को दबाना पड़ता है। अतः डॉ. मित्तर ने भी अपने देश के हित में ऐसा किया और जनता के मत को बचाने के लिए साहसपूर्वक अपने व्यक्तिगत मत को त्याग दिया। यहाँ डॉ. मित्तर ने एक देशभक्त के रूप में अपने कर्तव्य का परिचय दिया, इसलिए उन पर दोषारोपण नहीं किया जाना चाहिए। इसी तरह, अन्य माननीय सदस्यों ने भी क्या कर दिया है? मैं उन पर नाराज नहीं होना चाहता हूँ, लेकिन, उन सभी ने यह वादा कर दिया है कि अब विधेयक पर जनमत के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाएगा। पर वे अपने निजी मतों पर भी अडिग हैं। असल में वे डॉ. मित्तर थे उनके मत बदले जाने के लिए तंग किया जा रहा हैं। महोदय, क्या हमें अपने मत कभी भी बदलने नहीं चाहिएं? पर हमें अपने मतों में परिवर्तन लाने ही होंगे।

माननीय अध्यक्ष : ध्यान दीजिए। मैं, माननीय सदस्य को बताना चाहूँगा कि उन्हें प्रत्येक मुद्दे पर सामान्य सिद्धांतों और सभी विवरणों में जाने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें, केवल मुद्दे पर ध्यान आकर्षित कराना है तथा अगले मुद्दे पर जाना है। क्योंकि यदि वे इसी तरह चलते रहेंगे तो अगले दो दिन तक चलते रहेंगे–इस चर्चा का कोई अंत नहीं होगा। और मैं उन्हें इस तरह चलते जाने के लिए अनुमति नहीं दूंगा। उन्हें उपयुक्त समय के अंदर अपनी बात अवश्य समाप्त करनी है और मेरा मानना है कि अगले 15 मिनट इसके लिए पर्याप्त हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं आपके आदेश का पालन करता हूँ। श्रीमान्, मुझे आशा है कि ये पन्द्रह मिनट मुझे पूरे दिए जाएंगे।

माननीय अध्यक्ष : हाँ, वे 3-15 तक अपनो वक्तव्य पूरा कर दें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं इस तथ्य पर जोर देना चाहता हूँ कि हमारा देश प्रजातांत्रिक है। हम प्रजातांत्रिक निकाय के तौर पर कार्य कर रहे हैं। हम नहीं कह सकते कि प्रजातंत्र हमारे समाज के लिए अनुपयुक्त है। वह प्रजातंत्र ही है जो हमें यहाँ लाया है। उक्त प्रजातंत्र ब्रिटिश सरकार से शक्ति हस्तातंरण के लिए पर्याप्त थी। प्रजातंत्र हमें हमारा संविधान बनाने की शक्ति के लिए पर्याप्त है तथा मेरा मानना है कि प्रजातंत्र हिंदू, कानून के मामले में इसके अपने हितों को समझने के लिए लक्ष्य प्रतिष्ठा और सक्षम है। अतः, जन- मत से न बचा जाए न इसे नज़रअंदाज किया जाए, न ही इसके प्रति अरुचि दिखाई जाए।

इस जनमत को सुनिश्चित करने में कौन-सी हानि है? वस्तुतः मेरा कथन है कि विधेयक की काँट-छाँट की गई है। इसके असामान्य परिवर्तन किए गए हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि इसमें अनिष्ठकारी असामान्य परिवर्तन किए गए, अपितु सत्यनिष्ठ परिवर्तन ही किए गए। तथापि असामान्य परिवर्तन भी कम नहीं हैं। बाइबल में भी परिवर्तन किए गए हैं, किन्तु सत्यनिष्ठ परिवर्तन। ऐसा किसी बड़े अधिकारी विद्वान ने किया है। इसलिए, मेरा कथन है कि विधेयक में अनेक परिवर्तन हुए हैं। बहरहाल, यह विधेयक प्रवर समिति के पास इस आश्वासन के साथ प्रस्तुत किया गया था कि इसमें कोई गंभीर परिवर्तन नहीं किए गए थे तथा जो कुछ परिवर्तन किए गए थे, उन्हें सदस्यों के नोटिस में लाया गया था। फिर भी महोदय, यह सभी सदस्यों के लिए संभव या व्यावहारिक है कि उन सभी परिवर्तनों को नोट किया जा सके? वस्तुतः यह असंभव है कि इन सभी परिवर्तनों को नोट किया जा सके। अतः प्रवर समिति को बताया गया था कि विभागीय विधेयक मूल विधेयक की एक पुनर्कृति मात्र है और कोई गंभीर परिवर्तन नहीं किए गए हैं। इसीलिए वे वहाँ उन परिवर्तनों को नोट करके विचार करने में विफल रहे। यह उनकी गलती नहीं है। इस परिप्रेक्ष्य में, हालाँकि प्रवर समिति ने अन्जाने में ही अपनी पर्याप्त कोशिश की थी। मेरा कथन है कि आश्वासत के कारण ही उन्होंने महत्वपूर्ण परिवर्तनों को नोट करना छोड़ दिया होगा और इसके बाद श्रीमान यदि ऐसा हुआ है, यदि काफी परिवर्तन किए गए है, और ये परिवर्तन महत्वूर्ण हैं, तभी प्रवर समिति को बहुमत द्वारा आश्वासन दिया गया था कि विधेयक इस तरह परिवर्तित नहीं किया गया था। लेकिन यह पुनः प्रकाशन के लिए दिया गया मात्र एक सामान्य-सा आश्वासन था। उन्हें बताया गया था कि विधेयक इस तरह संशोधित नहीं किया है जैसा स्थाई आदेश 41(5) के अंतर्गत पुनः प्रकाशन के लिए अपेक्षित है, अतः प्रवर समिति द्वारा यथासंशोधित विधेयक पारित किया जाए। यह केवल सामान्य रूप से रखा जाने वाला प्रमाणपत्र है। अतः मैंने सभी गंभीरताओं के परिप्रेक्ष्य पूछा है कि क्या किए गए परिवर्तनों के खुलासे के आलोक में विधेयक अत्यधिक ढंग से संशोधित नहीं किया गया है? मूल विधेयक पर हमने जनमत नहीं लिया था और जो

जनमत प्राप्त किया, वह उसके विरुद्ध था। इसलिए हमें, जनमत सुनिश्चित कराना चाहिए। जो बाद में, विधेयक को विभिन्न प्रांतीय सरकारों के पास विचार-विमर्श के लिए भेजा गया था। पर विभिन्न सरकारों की सलाहों को भी सदन में संदर्शित नहीं किया गया। इन्हें एकत्रित करके सदस्यों के बीच परिचालित अवश्य किया गया। बहरहाल, मैं केवल बंगाल सरकारे के मत के विषय में कहना चाहूँगा मैं, विरोध के किसी डर के बिना कहता हूँ कि बंगाल में विरोध अत्यधिक हैं। वहाँ आप उत्तराधिकार की 'मिताक्षर' पद्धती समाप्त करने का प्रस्ताव रख रहे हैं और बंगाल में उसे उनकी परिवारिक जीवन में स्वीकार करने के लिए कह रहे है। इसीलिए बंगाल में आपका सबसे बड़ा विरोध होगा।

एक माननीय सदस्य : आपत्तियाँ तो हर ओर से है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यकीनन, आपत्तियाँ सभी जगह से हैं। कुछ शिक्षित एवं संस्कारी महिलाओं सहित संपूर्ण बंगाल की सोच है कि विधेयक की यहां दरकार नहीं है। वस्तुतः कई महिलाएं जैसे स्वर्गीय श्री आशुतोष की पत्नी जो डॉ. मुखर्जी की माँ है, तथा श्री बी.एन. मुखर्जी की पत्नी, श्रीमती रानू मुखर्जी एवं अन्य महिलाओं ने भी प्रस्ताव का विरोध किया है।

डॉ. मोन मोहन दास : अन्य महिलाएँ कौन हैं, कृपया उनके नाम भी बताएँ?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुझे अध्यक्ष महोदय के अनुरोध का आदर करना है कि इसे जल्द समाप्त करूं। मैं अध्यक्ष महोदय के अनुरोध की बजाय अपने माननीय मित्र की बात को तवज्जों नहीं दे सकता। महोदय, रिपोर्ट में उनके नाम दिए गए हैं। मेरे माननीय मित्र का अनुरोध कि नाम बताएँ दर्शाता है, कि उन्होंने रिपोर्ट नहीं पढ़ी है। यह दयनीय स्थिति है कि मतों के संकलन को पढ़ा नही गया। यह भी शोचनीय है कि निजी सदस्यों को सूचना एकत्र करने के लिए सारा श्रम व धन लगाना पड़े और तब वे इस सूचना को सदन के पास मुहैया कराएँ। किंतु सभी नाम रिकार्ड में हैं और यह किसी भी सदस्य के लिए अनावश्यक है कि उन तथ्यों के बारे में पूछे जो रिकार्ड में हैं। यह शोचनीय है कि मुझसे इसका हवाला मांगा गया है।

महोदय, मैं कह रहा था कि बंगाल में काफी विरोध है। यहाँ कलकत्ता, उच्च न्यायालय के पाँच न्यायाधीशों जिनमें अब संघीय न्यायालय में पदासीन है, ने भी इसका विरोध किया है। उनके मत रिपोर्ट में भी हैं, और उन्हें डॉ. मित्तर की रिपोर्ट में भी संदर्भित किया गया है। इसी के साथ कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायधीश भी हैं। उनमें एक श्री एम.सी. चटर्जी हैं, और अब वे उच्च न्यायालय के जज हैं, वे भी इसके विरोध में हैं। डॉ. श्यामाप्रसाद इसी तरह इस मामले पर हिंदू महासभा ने भी अपने अध्यक्ष डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी की सहमति से साक्ष्य स्वरूप इस विधेयक का विरोध किया

था। इसके पश्चात् डॉ. आर.बी. पॉल, जो एक विख्यात अंतर्राष्ट्रीय स्तर के न्यायाधीश हैं, ने भी इसका विरोध किया है। उन सबके मत हमारे समक्ष हैं। वस्तुतः बंगाल में इस प्रकार के मतों के परिप्रेक्ष्य में, मुझे आश्चर्य है कि बंगाल से ही एक सदस्य ने नामों के बारे में जानना चाहा है।

महोदय, अतः मैं इतना कहना चाहता हूँ कि विधेयक जनता की रायशुमारी के लिए जनता के पास जाना चाहिए। यदि हिंदू मत इसके विरोध में हैं तो क्यों आप इसे कानून का दर्जा देना चाहते हैं जिसे उनके द्वारा स्वीकार नहीं किया जा रहा है।

एक माननीय सदस्य : यह एक तानाशाही है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : हाँ, यह नितांत तानाशाही है। यहाँ भय है कि यदि इसे चुनाव से पहले जनता के समक्ष भेजा जाता है, तो मुमकिन है कि इससे मुश्किलें बढ़ेंगी। किंतु क्या आप जानते हैं कि कौन-सी जटिलताएं सामने आएंगी यदि इसे चुनाव से पूर्व पारित किया जाता है? निरक्षर जनता इससे बौखला जाएगी क्योंकि इस विधेयक में उनका जीवन बुरी तरह प्रभावित हो जाएगा। उनके लिए यह सरल नहीं होगा कि तानाशाही फरमान के तहत तुरंत उनके जीवन को बदल दें। रूस में भी लेनिन इतनी जल्दी या बिना संपर्क के कुछ नहीं करते थे जैसा कि हम रायशुमारी की घोर अवहेलना करते हुए ऐसा करने की कोशिश कर रहे हैं। रूस में जनमत के सम्मान की अपेक्षा की जाती है और उसका दावा किया जाता है। किंतु यहाँ ऐसा कुछ नहीं है। यह भय से उत्पन्न जनता के पास जाता है तो यह अस्वीकृत हो जाएगा। ऐसा मान लिया गया है कि जनता इसके पक्ष में है। यदि ऐसा है तो क्यों नहीं इसे कानूनी दर्जा देने के लिए जनता का सहयोग लिया जाता? महोदय, सामान्य रूप से यह हिंदुओं के लिए घातक है और यह महिलाओं के व्यापक हितों के लिए भी घातक है और सामान्यतः जन सामान्य के लिए भी घातक है। अतः इसका कोई अर्थ नहीं है कि अपने विचारों को अनिच्छुक जनता पर थोपा जाए। क्या यह व्यक्तिगत हित का मामला नहीं बन गया है कि कोई भी अपने मत को लागू कराने के लिए स्वतंत्र है। किंतु प्रजातांत्रिक व्यवस्था में कानून मंत्री के तौर पर आना और अपने प्राधिकार को जनमत से ऊपर रखना कहाँ तक उचित है? क्या उनके लिए यह उचित और सही है कि जनमत को दर-किनार करें; उसे अनदेखा करें, उसे उलझाएँ या उससे बचें? यह एक गलत तरीका है, एक उलझाने वाली प्रवृत्ति, जिसे प्रजातांत्रिक सरकार की किसी भी पद्धति में पसंद नहीं किया जाएगा। आप क्यों नहीं जनता के पास जाते यदि आपको लगता है कि कानून उनके पक्ष में है? क्या जनता के अपने विचार इतने पिछड़े हुए हैं कि वे निर्णय लेने में सक्षम नहीं होंगे? उनके लिए क्या सही है या क्या गलत है? यहाँ प्रश्न यह नहीं है कि सिद्धांततः सही क्या है, बल्कि यह है कि सही परिस्थितियाँ क्या हैं और यह सब स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर है। कुछ प्रथाएँ अच्छी मानी जाती हैं और कुछ अच्छी नहीं मानी

जातीं, पर आप सभी व्यक्तियों को एक ही जामा पहना रहे हैं। क्या आप सभी व्यक्तियों को एक ही ढांचे में ढालने की कोशिश कर रहे हैं? क्या माननीय कानून मंत्री को प्रयास करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति उन्हीं के जैसा समझदार और प्रभावी बन जाए? आप 'असमानता' को क्यों समाप्त करना चाहते है? 'असमानता कोई बुराई नहीं है। यह प्रकृति में है कि विविधता में असमानता होती है। भारत एक बहुत महाद्वीपीय देश है और यह अपनी विशिष्टताओं के अनुसार विकसित हुआ है और प्रत्येक प्रांत की अपनी एक अलग संस्कृति है। तो आप क्यों अपनी एक कलम के बल पर उनके सभी प्रकार के विचारों को समाप्त कर देना चाहते हो और सभी के लिए एक जैसा कानून बनाना चाहते हो?

हिंदू बड़े कानून-विद्वान नीति-निर्माता वे वस्तुतः हमारा 'हिंदू कानून' हमें देने वाले विशिष्ट"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह केवल 'उपसंहार' है, न कि कोई तर्क!

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उनमें सहनशीलता थी और वे अपने कानून बलपूर्वक लागू नहीं करते थे। 'मनु स्मृति' के अनुसार उन्होंने अपने कानून बलात् लागू नहीं किए थे। उन्होंने कहा था कि कानून प्रदेश के रीति-रीवाजों के तहत प्रवृत्त किए जाने चाहिए। जो कोई पढ़ेगा उसे ऐसा पाएगा और इसलिए, हिन्दू कानून विद्वान ऐसे किसी कानून को नहीं चाहते जो एक समान है। उनके कानून और उनकी सभ्यता के प्रचार-प्रसार की उनकी विधियाँ बलात न होकर वस्तुतः अभिप्रेरक होती थीं और उन्होंने पूर्वी स्वतंत्रता दे रखी थी। और मैं दृढ़तापूर्वक कहता हूँ, कि संपूर्ण विवरण पढ़ने के बाद भी वे अपने कानून को उसके गुण-दोषों के आधार पर प्रचारित करने की अनुमति देते थे, कि बलपूर्वक। स्थानीय परंपराएं न केवल अब महत्वपूर्ण हिस्सा हैं अपितु मनु के समय भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं और यही कारण है कि आज कई कानून अलग-अलग हैं। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार यह एक जैविक पद्धति है जिसके कारण मतभेद भी होते हैं। वस्तुतः विविधाएँ कोई बुराई नहीं है। हमारा देश कोई छोटा देश नहीं है। यह एक बड़ा देश है जहाँ महाद्वीपीय सभी विशेषताएँ हैं और इस विविधता को पर्याप्त तथ्यों एवं सजग विचारों के बिना भुलाया नहीं जाना चाहिए।

महोदय, श्री कॉमथ ने वर्तमान विधेयक को एक नई स्मृति, डॉ. अम्बेडकर की 138वीं स्मृति के रूप में तुलना की है। मेरा मानना है कि यह कोई स्मृति नहीं है, स्मृति को श्रुति से शुरू होती है। यह तो एक दिखावा मात्र है कि यह श्रुतियों के सिद्धांतों जैसी है। यह एक विधेयक है, जो स्मृति नहीं है किंतु एक नया 'वेद' है। (**पं. लक्ष्मी कांत मैत्रेय :** "यह 'विस्मृति' है।") यह विस्मृति भी है क्योंकि इसमें अतीत का विस्मरण हैं। राउ समिति की रिपोर्ट के बचाव में डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं अपनी कलम की नोक से भी पवित्र कानून और परंपराएँ, नियम, विधियाँ, निर्णय, प्रिवी परिषद के सिद्धांत त्याग दिए और वे सभी नष्ट हो गए हैं।

यानी यह एक विस्मृति है जैसा पंडित मैत्रेय ने व्यंग्य स्वरूप कहा था। यह एक विस्मृति है यानी नितांत विस्मरण! यह एक नया वेद भी है। हमारे चार वेद हैं : सामवेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, तथा अर्थवेद। मैं सोचता हूँ कि इन नए वेद को 'डॉ. अम्बेडकर वेद' पुकारना चाहिए। और यह पांचवां वेद पुराने चारों वेदों की अवहेलना करता है। और स्वयं को सबसे ऊपर मानता है। महोदय, अब मैं धन्यवाद करता हूँ।

* **पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव** : अध्यक्ष महोदय, हम कल से हिंदू संहिता विधेयक पर चर्चा कर रहे हैं। हमने इस पर फरवरी में भी चर्चा की थी। मैं इसके गुण-दोषों पर चर्चा करने से पहले यह बताना चाहता हूँ कि यह विधेयक काफी विवादास्पद प्रकृति का है जिसका उद्देश्य हिन्दू समाज की संरचना को ध्वस्त करना है। अत: रिकार्ड में मैं यह प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि मेरा घोर विरोध यह है कि सरकार इस महत्वपूर्ण मामले का यह किस तरह अनुसरण कर रही है। जिससे हिंदू समाज के लिए जीवन व मृत्यु का प्रश्न उपस्थित हो गया है?

यह सुविदित है कि इस विधेयक को लगभग अंतिम दिन अर्थात् 9 अप्रैल, 1948 को सदन में शीघ्रता से प्रस्तुत किया गया था जबकि इस पर इस तरह की चर्चा नहीं की गई थी, जैसी कि सदन में सामान्य विधेयक की भी, सामान्य रूप से की जाती है। इसके अतिरिक्त, हमने पाया कि इस मामले पर निरंतर विचार किए जाने के बजाय सरकार की कामना है कि बजट सत्र के कारण समय की कमी होते हुए भी और इस सदन के माध्यम से विधेयक को पारित कर लिया जाए। अतः मैं सम्मानपूर्वक विनम्र निवेदन करता हूँ कि क्या सदन के लिए यह उचित है कि ऐसे महत्वपूर्ण मामले के मुल्यांकन में, आरंभ से ही विधेयक को प्रमुख स्थान नहीं दिया गया और गलत तरीके से प्रस्तुत किया गया? तथापि, यह सरकार पर निर्भर है कि वह निर्णय लें। पर मैने महसूस किया है कि यह मेरा कर्तव्य है कि मैं सरकार को आगाह करूँ कि वह इस पर धैयपूर्वक विचार करे और ऐसे मामले में जल्दबाजी से काम न ले तथा इस विधेयक को हड़बड़ी में प्रस्तुत न करे। मैं पूछना चाहता हूँ, उस हिन्दू समाज का क्या होगा, जिस हिंदू समाज ने सदियों से चले आ रहे विदेशी हमलों और विदेशी शासन की मार झेली है? क्या उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाएगा यदि इन उपायों को संवैधानिक रूप से दे दिया जाएगा? मेरा कहना यह है कि इस अनावश्यक हड़बड़ी और जल्दबाजी के कारण के बारे में मेरे विद्वान मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद ने इंगित किया था, अब, कानून मंत्री जान गए होंगे कि हिंदुओं का जनमत मुल्यांकन से पर है। महोदय, मैं यहाँ यह कहने का भी साहस रखता हूँ कि जनमत इसके विरुद्ध है। इसका क्या मापदंड है

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 3, भाग II, 2 अप्रैल, 1949, पृष्ठ 2276-89

कि जनमत इसके विरुद्ध या इसके पक्ष में है? इसका मात्र मापदंड यह भी हो सकता है कि मतों का बहुमत क्या है जिसे रिकार्ड में रखा गया हैं? मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि राउ समिति द्वारा मतों के मूल्यांकन के बारे में मत यह था कि वे उनके प्रत्येक अनुच्छेद के विरुद्ध थे। अतः जनमत के ताजा अनुमान के बिना कानून मंत्री सहित प्रत्येक व्यक्ति के लिए यही माना जाएगा कि इस देश में इस विधेयक को जनमत का समर्थन प्राप्त है।

अब प्रश्न उठता है कि हिंदू कानून के संहिताकरण की क्या आवश्यकता है क्या उपयोगिता है? हिंदू कानून के संहिताकरण की मांग कौन कर रहा है? हम जानते हैं कि संहिताकरण केवल दो शर्तों के तहत अनिवार्य है। पहली शर्त यह है कि यदि किसी मुद्दे विशेष पर न्यायिक मतों में गंभीर टकराव है तो विधायिका के लिए यह अनिवार्य है कि संशयों में हस्तक्षेप और उनका स्पष्टीकरण करें। दूसरी शर्त यह है कि जनमत कानून में परिवर्तन करना चाहता है। ये केवल दो शर्तें ऐसी हैं जहाँ हिंदू कानून के संहिताकरण के प्रयास का औचित्य है। अतः मैं इस मामले विशेष में कहना यह चाहता हूँ कि यहाँ दोनों ही शर्तें नहीं है। जहाँ तक हिंदू कानून के मुख्य सिद्धांतों का संबंध हैं, मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि ये सुविदित और सुस्थापित हैं। हिंदू कानून की कई पुस्तकों में ये सिद्धांत स्मृतियों और आलेखों से लिए गए हैं जिन्हें मौखिक रूप से व्याख्ययित माना और प्रकाशित भी किया गया है। यह भी नितांत स्पष्ट है कि हिंदू कानून के प्रत्येक जटिल मुद्दों की स्पष्ट व्याख्या की जा चुकी है। इस विधेयक को प्रस्तुत किए जाने के दौरान कानून मंत्री ने कहा है कि हिंदू कानून के अनुसरण में हिंदू समाज या संयुक्त परिवार की विशेषताओं का न्यायिक प्रक्रिया के कारण क्षरण हुआ है किंतु क्या इसी से संहिताकरण का कोई औचित्य है। प्रीवी परिषद और उच्च न्यायालयों के न्यायिक मतों और निर्णयों से स्पष्ट हो गया है जो अब इस पर किसी भी संदेह की गुंजाइश नहीं है। चाहे संयुक्त हिंदू परिवार के उस कर्ता या प्रबंधक की शक्तियाँ हों, जब वह पिता न हो या चाहे संयुक्त हिंदू परिवार का कोई पिता, जब प्रबंधक के तौर पर अपने कार्यों एवं शक्तियों का निर्वहन करता हो किंतु कानून में उसके अधिकार और शक्तियों को परिभाषित किया जा चुका है।

धार्मिक दायित्वों के विवादित सिद्धांतों, जिन पर कई बार विभिन्न उच्च न्यायालयों और प्रिवी कार्उसिल के बीच गंभीर टकराव होता था उनका भी निपटान कर दिया गया है। अब हम जानते हैं एक पुत्र के क्या कर्तव्य हैं और यह भी हम जानते हैं कि उसके पिता के दायित्वों के बदले में उसकी जिम्मेदारी की सीमा क्या है। इसी प्रकार विवाह, इत्यादि के संबंध में भी हिंदू कानून बिल्कुल स्पष्ट है। फिर प्रश्न उठता है कि क्या देश में कोई ऐसा मत और बहुतायत में जनमत है, जिसके लिए सरकार को हिंदू कानून तथा संहिताकरण अपेक्षित है? मेरा विनम्र कथन है कि ऐसा कुछ भी नहीं है और हिंदू कानून के संहिताकरण के प्रयास के लिए कोई औचित्य ही नहीं है।

जहाँ तक संहिताकरण के इतिहास का प्रश्न है, तो यह प्रयास पहली बार नहीं किया जा रहा है। मैं सविनय सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि हिंदू कानून के संहिताकरण के लिए ब्रिटिश शासन के दौरान विभिन्न प्रयास किए गए थे और प्रत्येक ऐसे अवसर पर यह मामला सुदृढ़ धारणों से स्थगित भी किया गया था। काफी पहले 1833 में एक आयोग रॉयल चार्टर द्वारा स्थापित किया गया था। अनंतर 1853 में एक विधि आयोग भी बनाया गया था। 1856 में प्रकाशित इन आयोगों की रिपोर्ट में हिंदू कानून को संहिताकरण के प्रस्ताव को इस कारण से अस्वीकृत कर दिया गया था कि यह एक व्यर्थ का प्रयास है और इससे हिंदू कानून की प्रगति व विकास बाधित हो जाएँगे। इसी प्रकार 1861 में और पुनः 1921 में, पहले मामले में भारत संघ के सचिव और दूसरे मामले में सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की मंजूरी के साथ गवर्नर जनरल ने विधि आयोग स्थापित किए थे। उनके संहिताकरण के मुद्दे के निर्णय विधि आयोग के निष्कर्षों के समानुरूप ही थे। बाद में 23 मार्च, 1921 को इस सदन के एक विशिष्ट सदस्य ने हिंदू कानून के संहिताकरण के लिए एक आयोग के गठन का एक गैर-सरकारी प्रस्ताव प्रस्तावित किया था। जब इस सदन में इस प्रस्ताव पर चर्चा की गई, तो विधि विभाग हिंदू कानून के एक बहुत विख्यात विद्वान एवं सम्मानीय न्यायाधीश श्री डॉ. तेज बहादुर सप्रू के अधीन था। तब वहाँ संहिताकरण अनिवार्य है या नहीं, आवश्यक है या नहीं, वह हिंदूसमाज के लिए बेहतर होगा या नहीं, से संबंधित सभी मुद्दों पर गर्म-जोशी से चर्चा की गई थी। मैं इस सदन और माननीय कानून मंत्री का ध्यान उस उत्तर की ओर दिलाना चाहता हूँ, जिसे सर टी.बी. सप्रू द्वारा भारत सरकार की ओर से दिया गया था। वे स्वयं हिंदू कानून के ज्ञाता थे। तथापि उन्होंने इंगित किया कि समाज के व्यक्तिगत कानून का संहिताकरण कोई सरल मामला नहीं है, अर्थात् यह एक विस्मयकारी कार्य होगा, जहाँ सदियों से श्रेष्ठ कानून ज्ञाताओं का श्रेष्ठ ज्ञान अपेक्षित होगा। उन्होंने सदन का ध्यान जर्मन संहिता की ओर आकर्षित कराया जिसे 1834 से 1896 के 50 वर्षों के अनथक परिश्रम के साथ ही प्रस्ताविक एवं संहिताबद्ध किया जा सका था और तथ्य भी यही है कि कम से कम तीन आयोगों द्वारा फिर उन्होंने इंगित किया कि 1896 तक भी, वह जर्मन संहिता अंतिम प्रारूप में नहीं आ पाई और वह विख्यात जर्मन न्यायधीशों के दो पक्षों जिनमें एक का प्रतिनिधित्व सेवोग्री और दूसरे का प्रतिनिधित्व थेबाउट कर रहे थे, के मध्य संहिताकरण के पक्ष और विपक्ष में एक लगातार कड़ी चर्चा के बाद ही, 4 वर्षों बाद, यह कार्य पूरा हो पाया था। अतः, 1900 में, लगभग 50 वर्षों के निरंतर परिश्रम के बाद ही वह संहिता पूरी हुई और इम्पीरियल जर्मन सरकार द्वारा अनुमोदित हो पाई। महोदय, ऐसा ही, देश के श्रेष्ठ विधि ज्ञाताओं के कई वर्षों के निरंतर प्रयासों के परिणामस्वरूप योरूपीय महाद्वीप की स्विस संहिता के साथ भी हुआ और संहिताएँ भी इसी प्रकार पूरी हो पाई थीं। इन क्षेत्रों और इनकी स्थितियों की तुलना यदि भारत की स्थितियों या

भारत के प्राचीन इतिहास तथा प्राचीन काल से अब तक चली आ रही हिंदू कानून के विकास में विधि की निरंतर धाराओं से की जाए, तो मेरा कथन है कि हिंदू कानून का संहिताकरण एक व्यर्थ का प्रयास है। यह व्यर्थ का प्रयास इसलिए होगा क्योंकि इसमें हिंदूओं के व्यक्तिगत कानून का संहिताकरण किया जाएगा। यहाँ मैं सविनय पूछता हूँ कि आखिर इस कानून का स्रोत क्या है? यह स्पष्ट है कि किसी मानव का इसमें हाथ नहीं है अर्थात् किसी मानवी शक्ति ने हिंदू कानून को प्रस्थापित करने का प्रयास नहीं था। इस कानून की स्वीकृति के पीछे कोई प्रतासंपन्न शक्ति भी कहीं थी, अपितु वह अपेक्षाओं की नैतिक स्वीकृति और साधू-संतों के गहन सोच का परिणाम था। इस तरह इसके मूल को खोजना कठिन है और स्मृतियां जिनकी संख्या 138 बताई गई है, का उद्देश्य भी कानून बनाना नहीं था। वे स्मृतियाँ वेद पर आधारित थीं और हम जानते हैं कि ऋग्वेद विश्व की प्राचीनतम पुस्तक है। भारत के दो मुख्य ग्रंथों के विद्वान-लेखक विज्ञनेशवर तथा जिमुता वाहना द्वारा भी हिंदू कानून के संहिताकरण या समाज के लिए किसी नए कानून सृजित करने का प्रयास नहीं किया गया। उनकी अपनी टीकाएँ भी केवल स्मृतियों पर आधारित हैं। ब्रिटिश और मुस्लिम शासन के लम्बे कार्यकालों के दौरान भी जो कुछ किया गया है वह भी हिंदू कानून के सुपरिचित सिद्धांतों की साधारण व्याख्या मात्र है। तो अब, हिंदू कानून के किसी संहिताकरण की आवश्यकता क्यों हैं? यदि जर्मन और स्विस देशों ने जो भारत की तुलना में कम महत्वपूर्ण हैं-अपने सम्बन्धों के नियंत्रण हेतु एक संतोषजनक संहिता बनाने के लिए 50 से 60 वर्ष लिए, तो हम भारत में जहाँ हिंदू कानून का मूल स्रोत रहस्य में छिपा है, के कानून के संहिताकरण का प्रयास क्यों किया जाए? हमें बताया गया है कि ऐसा इस विविधता वाले देश में एकरूपता लाने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए और अन्य कारण यह भी कि हिंदू समाज में महिलाएँ पुरुषों के हाथों लम्बे समय से प्रताड़ित व पीड़ित होती रही हैं, इसलिए इन्हें उनसे मुक्ति दिलाई जाए। एकरूपता के संबंध में मेरा कथन है कि वह मौजूदा परिप्रेक्ष्य में प्राप्त नहीं की जा सकती और न ही अन्य किसी भी सूरत में ऐसा होना संभव है।

इस दौरान अध्यक्ष महोदय ने अपनी कुर्सी छोड़ी जिसे माननीय उपाध्यक्ष महोदय (श्री एम.अनंथसयनम आयंर) ने ग्रहण किया।

उत्तराधिकार के कानून के संबंध में भी, या ऐसे मामलों में जहाँ ज्येष्ठा के अधिकार का नियम परंपरा से मौजूद है अथवा अनुदानों या इनामों के मामलों में कहा गया है कि इस विधेयक में निर्धारित उत्तराधिकार के नियम लागू नहीं होंगे।

प्रवर, धारा 7 में हालांकि सपिण्डों के मध्य विवाह वर्जित है, यह कहा गया है कि ऐसा स्थानीय रिवाजों के अधीन हो सकता है और इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती है जहाँ यह परंपराओं द्वारा स्वीकार्य है। तथापि एकरूपता का भूत इस विधेयक के

मसौदाकार को अभी भी सताए हुए हैं, फिर भी वहाँ महिलाओं की दासता से 'व्यक्ति मुक्ति' का कोई उपाय नहीं है। मेरा कथन है कि जो हिंदू कानून और हिंदूसमाज में महिला के उचित स्थान देने के इच्छुक हैं, उन्हें पश्चिम की नज़रों के बजाए हमारी अपनी सभ्यता की नजरों से इस मामले को देखना चाहिए। हमें यह भी अवश्य जानना चाहिए कि हमारे अपने विधिवेत्ता इन बहुत कठिन और जटिल प्रश्नों को किस तरह व्याखायित करते है। पूर्वी और पश्चिम देशों में इन प्रश्नों से संबंधित दृष्टिकोण एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत है। हमारा विश्वास है कि हमारे जीवन का हमारे अतीत से संबंध है और हमारे भावी जीवन से भी संबंध होगा, इसलिए हमारे कानून के नियम विशेष परिवेश के अनुसार बनाए जाएँ। यही कारण है कि हमारे साधु-संतों ने इन मामलों पर हिंदू समाज की समग्र बेहतरी के अनुसार अपना दृष्टिकोण रखा था। हमें अपने कानून बनाने के प्रयास में अपने विधिवेताओं द्वारा पद्धति विशेष में कानून बनाने के लिए प्रेरित आदर्शों के अनुरूप ही अपना दृष्टिकोण रखना चाहिए। जब तक हम इस विषय में कुछ नहीं करते हम अपने मूल्यों का महत्व भी नहीं समझ सकते हैं।

महोदय, मैं बुरा नहीं मानूँगा यदि कानून मंत्री घोषित कर दें कि यह विधेयक अपने गुण-दोषों के अनुसार चलेगा और या हिंदू समाज के उन आदर्शों के अनुसार रहेगा, जैसे कि वे अब मौजूद हैं। किंतु जिस बात ने मुझे दुःख पहुँचाया है वह यह है कि उन्होंने कहा कि इसके उपाबंध हमारे स्वीकृत सिद्धांतों के अनुरूप है। यह सर्वविदित है कि शैतान भी बाइबल से उदाहरण दे सकता है। मेरा कथन यह है कि इस विधेयक का प्रत्येक उपखण्ड-चाहे वे विवाह या तलाक, या फिर दत्तकग्रहण या उत्तराधिकार से संबंधित हो-हमारे हिंदू कानून के मौलिक सिद्धांतों के विरुद्ध हैं। तदनुसार, इसका परिणायम भी इतना सुखद नहीं होगा। तब हिंदू समाज का प्रत्येक घर एक नरक में तब्दील हो जाएगा जहाँ बहन व भाई, पति और पत्नी तथा बच्चों और उनके पिता के मध्य झगड़े होने लगेंगे। अतः इस कानून द्वारा हिंदू समाज की मौलिकता समाप्त हो जाएगी। यही चिन्ता का विषय है अतः इस पर जनमत संग्रह या मत-संग्रह अवश्य कराना चाहिए, ताकि यह पता चल सके कि क्या देश में जनता का मत इस कार्यवाही के पक्ष में है या इसके विरोध में है।

मेरा कहना था कि हिंदू कानून के संहिताकरण की कोई आवश्यकता नहीं थी। तब प्रश्न यह उठता है कि क्या इस कानून के बनने और लागू करने से वांछित एकरूपता प्राप्त हो जाएगी? हमारा पिछले संवैधानिक कानूनों का अनुभव क्या है? भारत सरकार द्वारा 1923 में एक सिविल जस्टिस समिति का गठन किया था और एक समिति ने विभिन्न संविधियों के अध्ययन के उपरांत यह संस्तुति की थी कि संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, संविदा अधिनियम और साक्ष्य कानून को संशोधित किया जाए और इसकी

समीक्षा शीघ्रातिशीघ्र विधायिका के पास भेजा जाए। क्या विधायिका ने इसके लिए समय निकाला है? परिणाम क्या हुआ? परिणाम यह है कि कानून उपबंधों के अनुसार निर्देशित किया जा रहा है और प्राधिकारी ने स्वयं ही इसकी उपयोगिता को कमतर कर दिया है। यदि हिंदू संहिता को संविधि पुस्तक में लाया जाता है, तो उसमें भी जो शर्तें रहेंगी उनसे यह एक कठोर संहिता बन जाएगी, जिस पर जनता के अधिकार निर्भर हो जाएँगे। इससे हिंदू कानून का महत्व इसका लचीलापन, इसकी वर्तमान स्थिति में सुसंगतता का हनन हो जाएगा। यह मात्र ठूँठ बन कर रह जाएगा। क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या हिंदू कानून के संहिताकरण द्वारा मतभेदों और विवादों को कम किया जा सकेगा? और मैं कहने का साहस रखता हूँ कि ऐसा नहीं होगा। पिछले विधायकों की विभिन्न अवस्थाओं के हमारे अनुभव भी यही कहते हैं। अतः इससे मेरे कथन को समर्थन मिल जाता है।

उदाहरणार्थ हिंदू कानून पुनर्विवाह अधिनियम, 1871 में लागू हुआ था। महोदय, अब यह विधायिका का एक बहुत ही सरल खंड है, किंतु क्या इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों को बनाए रखने से संबंधित मतों पर कोई मतैक्य हुआ है?

श्रीमती जी. दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य) : क्या आप विधवा विवाह अधिनियम का भी विरोध कर रहे हैं?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मुझे आशा है कि मेरे मित्र मुझे धैयपूर्वक सुनेंगे। हमें विपक्ष के मतों के लिए थोड़ी सहनशीलता और धैर्य भी रखना और सीखना चाहिए। मेरा संकेत था कि मात्र अधिनियम द्वारा एकरूपता और मतभेद का समाधान संभव नहीं है। इस हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1872 के उपबंधों और व्याख्या के बावजूद हमने पाया कि अनुच्छेद 2 के बनाने पर विभिन्न उच्च न्यायालयों के मध्य गंभीर टकराव देखा गया है। प्रश्न उठता है कि कोई महिला पारंपरिक रिवाजों के अनुसार पुनर्विवाह करती है तो क्या अपने पति की सम्पत्ति में उसका अधिकार समाप्त हो जाएगा? इस मामले पर हमारे पास इलाहाबाद उच्च न्यायालय और अवध मुख्य न्यायालय का मत है कि चूँकि महिला ने रीति-रिवाजों के मुताबिक पुनर्विवाह किया है इसलिए पहले पति की सम्पत्ति में उसका अधिकार बरकरार रहेगा। एक अन्य उच्च न्यायालय ने अन्य मत व्यक्त किया है। इसी तरह, इस अधिनियम के सरल शब्द "बहन" की व्याख्या के संबंध में भी गंभीर मतभेद हैं। कुछ उच्च न्यायालय कहते हैं कि 'बहन' में 'हॉफ सिस्टर (सौतेली बहन) शामिल नहीं है। जबकि नागपुर उच्च न्यायालय ने इस शब्द पर व्यापक विचार के बाद निष्कर्ष निकाला है उसे भी शामिल किया जाए। उपरोक्त के संबंध में मेरा अभिकथन यह है कि हिंदू कानून प्रक्रिया में आज जो कठिनाई है वह मात्र इस तथ्य से समाप्त नहीं हो जाएंगी कि यहाँ हिन्दू संहिता विधेयक आ जाएगा।

श्री.एल. कृष्णास्वामी भारती : क्या आपका आशय यह है कि विरोध को अनुमति दी जाए?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मेरा यही कहना है कि यदि यह विधयेक अधिनियम बन भी जाता है तो विरोधा रहेगा और यह उच्च न्यायालय पर निर्भर होगा कि वह इसके विभिन्न उपबंधों की विभिन्न तरीकों से व्याख्या करें। हिंदू कानून से संबंधित विभिन्न मतों और विविध मुद्दों का स्वत: समाधान नहीं होगा, क्योंकि यह उच्च न्यायालयों और उच्च न्यायालयों पर निर्भर होगा कि किसी उपबंध विशेष पर अपनी व्याख्या करें। अत: विवाद अवश्य उभरेंगे, जैसा कि हमारे पिछले विधायी कानूनों में भी देखा गया है। अस्तु मेरी सविनय याचना है कि हिंदू कानून का संहिताकरण करना एक बेकार और व्यर्थ का प्रयास है और इस दिशा में किए गए किसी भी प्रयास से हिंदू कानून की गतिशीलता, इसका लचीलापन तथा इसका महतव कम हो जाएगा। इसलिए "मौजूदा परिप्रेक्ष्य में अतिशय कल्पनाशील होने की सलाह दी जा सकती हैं।

मेरा अगली बात भी बहुत महत्वपूर्ण है कि किसी तरह मौजूदा विधेयक का उद्गम हुआ है और क्या जिस परिस्थिति में यह पनपा है, उस पर आगे भी अनुसरण करने का कोई औचित्य है? मैं सविनय आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि 1941 में हिंदू कानून समिति का गठन किया गया था और उसके संभागों द्वारा हिंदू कानून के संहिताकरण के प्रश्न पर विचार किया गया था और उस समिति ने विधेयक भी तैयार किए थे। एक विधेयक हिंदुओं के मौखिक इच्छा उत्तराधिकार और दूसरा विवाह संबंधी कानून का था। जब ये दो विधेयक विधायिका के समक्ष आए, तो दोनों विधायिकाओं (उस समय हमारी विधायिका द्विसदन आधारितथी) की संयुक्त बैठक बुलाई गई थी और यह निर्णय लिया गया था कि यह बेहतर होगा कि हिंदू कानून, संभागों के बजाए एक संपूर्ण भाग में अधिनियमित किया जाए और इस उद्देश्य से मौजूदा राउ समिति अपने अस्तित्व में आई।

महोदय, अब जब एक महिला सदस्य ने सदन को संबोधित किया है बेशक एक उत्साही महिला ने, जो इसके पक्ष में हैं तो उन्होंने कहा है कि यह विधेयक कई वर्षों से देश के सामने रहा है यानी लगभग 10 वर्षों से और राउ समिति ने इस बारे में हजारों साक्षियों की जांच की है और देश का व्यापक दौरा भी किया है। सविनय कहता हूँ कि उक्त महिला द्वारा दी गई घोषणा में कोई सच्चाई नहीं थीं, क्योंकि हमने समिति के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों की जांच की थी। इतने थोड़े साक्ष्यों का महत्व ही क्या था? 20 जनवरी, 1949 को अस्तित्व में राउ समिति ने एक विधेयक प्रस्तावित किया था, जिसे कुछ चुनिंदा और प्रख्यात अधिवक्ताओं की राय के लिए परिचालित किया गया था। उनकी राय प्राप्त होने के बाद, समिति ने निर्णय लिया था कि जिस मसौदे को उन्होंने

मूल रूप से तैयार किया था इसे संपूर्ण भारत में परिचालित किया जाए। तब विधेयक भारतीय भाषाओं में अनुदित किया गया और उसकी लगभग 6000 प्रतियाँ वितरित की गई थीं। 5 अगस्त, 1944 को उस पर मत आमंत्रित किए गए थे और मत प्राप्ति के बाद समिति ने देश का दौरा भी किया। मैं सदन को बताना चाहता हूँ उस समिति ने देश का दौरा किया था। लेकिन वह दौरा कुछ प्रांतों के प्रमुख नगरों और शहरों तक सीमित था और जहाँ तक मुझे स्मरण है वह दौरा एक दर्जन से अधिक शहरों का नहीं था। जैसे इलाहाबाद, बम्बई, कलकत्ता, पूना, पटना, लाहौर आदि। तो क्या यह समिति का एक व्यापक दौरा था? इन कुछ प्रमुख नगरों और शहरों की जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या की तुलना में कितनी है? क्या किसी भी माध्यम द्वारा इन शहरों में साक्षियों की जांच करने के उद्देश्य से समिति द्वारा किये गये दौरे से इस विधेयक पर देश की वास्तविक सम्मति का कोई संकेत मिलता है।

तब रिकार्ड किए गए साक्ष्यों की सीमा कितनी थी? आइए देखें। उस पर कुल 121 साक्षियों और 201 संस्थाओं के लगभग 257 व्यक्तियों द्वारा ही मत व्यक्त किए गए थे। यही कुल साक्ष्य थे। अत: क्या मैं एक अति प्रासंगिक प्रश्न पूछने का साहस कर सकता हूँ? देश की विशालता के मद्देनजर और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि वास्तविक भारत के हिंदू शहरों में नहीं अपितु गांवों में रहते हैं, क्या कल्पना के स्तर पर भी यह साक्ष्य पर्याप्त है? उनमें जो कृषक हैं, वे जनसंख्या के 90 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस विशाल देश और विभिन्न प्रांतों में व्याप्त विभिन्न मतभेदों के मद्देनजर कल्पना के स्तर पर भी क्या समिति द्वारा साक्ष्यों की जांच को पर्याप्त और उपयुक्त माना जा सकता है। मैं सम्मानपूर्वक कहना चाहता हूँ। ऐसा संभव नहीं है।

आइए, इस साक्ष्य के परिणाम का कुछ और विश्लेषण कर लें। मेरा कहना है कि प्रत्येक मुद्दा, जो मौजूदा संहिता का आधार है, से संबंधित मत मुख्यत: और पूर्णत: किसी भी परिवर्तन के विरोध में ही था। उदाहरणार्थ, वह मौलिक सिद्धांत देखें जो इस विधेयक के चारों भागों में प्रतिस्थापित हैं। वह है पुत्रों, पुत्रियों, विधवाओं, आदि का समान उत्तराधिकार।

माननीय उपाध्यक्ष : मौजूदा कानून के मुताबिक भी एक विधवा समान उत्तराधिकारी है।

श्री. एल. कृष्णास्वामी भारती : फिर भी वे अब इसका विरोध कर रहे हैं। शायद वे इसे निरस्त करना चाहते हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : पुत्र के साथ पुत्री के समान उत्तराधिकार के प्रस्ताव के पक्ष में केवल 78 और इसके विरोध में 215 साक्षी थे। विधवा की सीमित

संपत्ति के संबंध में महिला उत्तराधिकारी को पूर्ण स्वामित्व में हस्तांतरित करने के 49 और इसके विरोध में 119 मत पड़े थे।

तलाकशुदा के मामले में 112 इसके पक्ष मैं और 119 इसके विरोध में पड़े थे। दत्तकग्रहण और परिवर्तन के मामलों में 36 इसके पक्ष में और 38 इसके विरोध में मत आए थे। अन्य मुद्दों पर परिवर्तन के विरुद्ध मत अपेक्षाकृत अधिक थे। अतः मैं पूछना चाहता हूँ कि इस विधेयक को लाना कितना न्यायसंगत है?

कुछ माननीय सदस्य : न्यायसंगत नहीं है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : इस संसद के अनेक सदस्यों ने यह दावा किया है कि अधिकांश जनमत इस विधेयक के पक्ष में है।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : एक विवाह के बारे में क्या कहना है?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मैं उचित समय पर उस मुद्दे पर भी आऊंगा। मेरा कथन है कि यदि यह एक प्रजातांत्रिक कानून है, यदि यह कानून देश की जनता के बहुमत के अनुसार लाने का दावा करता है, तो इसका यही किया जाए कि इस महात्वहीन कानून को दरकिनार कर दिया जाए क्योंकि देश में जो कोई भी जनमत है वह सुस्पष्ट रूप से इसके विरुद्ध ही है। मुझे खेद है कि मुझे वह समाचार-पत्र नहीं मिला, जिसमें कानून मंत्री द्वारा दी गई राय प्रकाशित की गई थी। इसी फरवरी में इस कार्यवाही पर हमारी चर्चा शुरू होने से पहले यह वह दिन था जब उन्होंने न ही इसके पक्ष में साक्ष्यों को महत्व दिया, न ही उनके पक्ष में जनमत पर। अपितु इसकी गुणवत्ता पर जोर दिया। तब किसी अन्य ने नहीं, अपितु स्वयं कानून मंत्री द्वारा स्पष्टतः स्वीकार किया गया है कि जहाँ तक जनमत की संख्या का मामला है, वह उनके विरुद्ध था। यह तथ्य है कि कुछ व्यक्ति, बेशक वे विख्यात हैं और वे चाहते हैं कि इस कानून को देश पर थोप दिया जाए, तो यह हमें स्वीकार्य नहीं हो सकता। इसमें जनमत का आधार राउ समिति द्वारा लिया गया जनमत है। इसमें कोई अन्य आधार नहीं है, जिसे सदन के सदस्यों के सामने रखा जाए और यह कहा जा सके कि जनमत इस कानून के पक्ष में है, न कि इसके विरोध में। इधर हम विभिन्न संगठनों से भी विरोध-पत्र प्राप्त कर रहे हैं…

बाबू रामनारायण सिंह : प्रति दिन।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : विभिन्न उच्च न्यायालयों और अन्य सिविल जजों से भी, देश के विभिन्न हिस्सों के बार संघों से भी… मैंने इन मतों का अध्ययन किया है और पाया है कि इस कानून को अधिनियमित करने के संदर्भ में हमारा बहुलता से इसके विरोध में है।

अगली बात यह है कि यदि यह मान भी लिया जाए कि जनमत निर्णायक की भूमिका नहीं निभा सकता, तो इस मौजूदा विधायिका में ही इसे कानून का रूप दिये जाने की क्या आवश्यकता है? मैंने पहले ही इंगित किया था और मैं इस बहस की पुनरावृत्ति नहीं चाहूँगा, किंतु मैं सविनय कहना चाहता हूँ कि मौजूदा विधायिका का लक्ष्य संविधान का गठन करना है या फिर तात्कालिन मामलों से संबंधित वे कानून बनाना है जिनके लिए कानूनी प्रक्रिया अनिवार्य है। अतः कल्पना के किसी भी दायरे में भी यह मुद्दा नहीं आ सकता कि हिंदू संहिता विधेयक एक ऐसा कानून है, जिसे सरकार को जरूर बनाना चाहिए, चाहे देश की जनता इसके विरोध में ही क्यों न हो।

अब मैं इस विधेयक में समाहित विभिन्न प्रावधानों की जांच और समीक्षा की कार्यवाही करता हूँ। जैसी मैंने टिप्पणी की थी, मैंने महसूस किया है और मैं सत्यनिष्ठा से महसूस करता हूँ कि तत्कालीन प्रावधानों की मौलिकताएं जिन्हें इस विधेयक में समाहित किया गया है वे हिंदू समाज के अस्तित्व के लिए खतरनाक हैं, और यही हमारे साधू-संतों ने भी कहा है। अतः यह मेरा कष्टदायक कर्तव्य है कि इसका उपबंधों के आधार पर कड़ा विरोध करूँ। यहाँ प्रश्न उठता है कि इस विधेयक के माध्यम से हिन्दू समाज के बारे में कौन से मूल परिवर्तन किए जाने हैं और वे अपेक्षित परिवर्तन कहाँ तक हिंदू विचारधारा और आदर्शों के अनुरूप हैं। अतः मेरा एक सादर सुझाव है कि इस हिंदू संहिता को इस्लामिक संहिता की भांति तैयार कर लिया जाए।

श्री ए. करुणाकार मेनन (मद्रास : सामान्य) : यही धारणा है कि हमारे मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद इसका विरोध कर रहे हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : बेशक, यह टिप्पणी मुझ पर लागू नहीं होती। मैं इस पर विद्वान सदस्यों की भांति ही उत्सुकता महसूस कर रहा हूँ। महोदय, अब दूसरा प्रश्न। यह "विवाह और तलाक" शीर्षक के अंतर्गत द्वितीय भाग से संबंधित है। इसकी धाराएँ 5 से 51 में समाहित की गई हैं। आइए देखें कि इस विधेयक के उपबंधों के अधीन विवाह के प्रकार किस प्रकार से विवाह की हिंदू अवधारणा के अनुरूप है। ये मेरा कथन है कि इस विधेयक की धारा 7 में सांस्कारिक विवाह का जो उपबंध है, वह हिंदू विवाह की अवधारणा एवं आदर्श की तुलना में बिल्कुल अलग है। ये मात्र छलावा है कि इसमें विवाह की वास्तविकता को छिपाया गया है। अन्यथा धारा 10 और 21 तक के उपबंधों का समावेश वहाँ नहीं किया जाता। हिंदुओं के लिए और मैं सोचता हूँ कि इस मुद्दे पर कोई विवाद नहीं हो सकता-और इस विषय पर दो मत भी नहीं हैं। निःसंदेह यदि हम हिंदू विचारधारा और आदर्शों को निशाना बनाते है, यदि हमें उन्हें त्याग देने की मंशा है, तब यह एक अलग मामला है। एक हिंदू के लिए विवाह सांस्कारिक होता है और यह भंग नहीं किया जा सकता। यह दंपत्ति के मध्य एक धार्मिक

बंधन है, यह ऐसा कोई बंधन नहीं है, जिसे कभी भी समाप्त कर दिया जाए। यह कोई अनुबंधित संबंध नहीं है। यह ऐसा संबंध है जिसमें आध्यात्मकता का पुट भी रहता है। कल्पना के किसी भी दायरे में, किसी भी पक्ष द्वारा छल या कपट से इसे समाप्त नहीं किया जा सकता। यही हिंदू विवाह की अवधारणा रही है। जहाँ तक हिंदू ग्रंथों का संबंध है, तो मैं यहाँ किसी ऐसे ग्रंथ या स्मृति या उद्धरण को भी चुनौती देता हूँ जो इसके विरोध में हो। अतः, मेरा कथन है कि जहाँ तक धारा 100 में समाहित 'विवाह और तलाक' में सिविल विवाह का संबंध है, तो उसमें हिंदू कानून में सिविल विवाह के लिए अपेक्षित शर्तें शामिल की गई हैं। इसमें धारा 7 की उप-धारा 6 में वर्णित प्रावधानों को छोड़ दिया है और धारा 7 की अन्य 5 उप-धाराओं तक सीमित रखा है। अतः सपिण्डों के बीच विवाह पूर्णतः वैध है, बशर्ते यह धारा 10 के अंतर्गत एक सिविल विवाह हो। यह सांस्कारिक विवाह की वैधता और सिविल विवाह की वैधता के मध्य विभेद या अंतर है। तब धारा 21 क्या कहती है? इसके अनुसार यह उन पार्टियों पर निर्भर है, जो धारा 7 में वर्णित सांस्कारिक विवाह करते हैं फिर पंजीयक के पास जाते हैं। और उनसे सिविल विवाह पंजीकृत कराने का अनुरोध करते हैं, और पंजीयक के पास भी इसके सिवा कोई विकल्प नहीं है। इन तीन प्रावधानों का कानूनी प्रभाव क्या है? वह सच है कि सपिंडों के बीच कोई विवाह न किया जाए। यह शर्त अनुच्छेद 10 में नहीं है और पंजीयक इस तथ्य को जानते हुए कि इस कारण से सांस्कारिक विवाह अवैध है फिर भी वह इसे सिविल विवाह के तौर पर पंजीकृत कर सकता है। अतः यहाँ सांस्कारिक विवाह के छद्म का अनावरण हो जाता है क्योंकि इस तरीके से सपिंडों के मध्य किया गया विवाह कपटपूर्ण है। फिर भी वे इसे सांस्कारिक विवाह के तौर पर कर सकते हैं, इसके बाद सिविल विवाह करके इसकी अवैधता को निरस्त कर सकते हैं।

अब हम अनुच्छेद 8 के प्रावधानों पर आते हैं। यह उल्लिखित है कि सांस्कारिक विवाह को 'विवाह प्रमाणपत्र रजिस्टर' में भी दर्ज कराना चाहिए और यदि इसे दर्ज नहीं किया जाता तो चूकने वाले को नियमानुसार दंडित किया जा सकता है। जहाँ तक इसकी वैधता का संबंध है, तो यह संदेहास्पद है कि यह वैध है या अवैध। यकीनन, राउ विधेयक की सीमाएँ थीं। विधेयक संबंधित पक्षों को छूट देता था कि वे इसका इन्दराज रजिस्टर में कराए या नहीं। राव विधेयक में केवल इस उद्देश्य से यह प्रावधान समाहित किया गया था कि इससे विवाह का साक्ष्य सुविधाजनक बन जाता। किंतु इस प्रयोजन को मौजूदा विधेयक में शामिल नहीं किया गया है। यहाँ उल्लिखित है कि ऐसा किसी भी प्रांतीय सरकार पर निर्भर है कि वह सांस्कारिक विवाह के पंजीकरण को अनिवार्य करे या नहीं करे। अनुच्छेद 6 के प्रावधान के अनुसार कोई विवाह तभी वैध होगा, जब वह विधेयक के प्रावधानों के अनुसार ही किया जाए। यदि ऐसा नहीं किया

जाता तो वह वैध विवाह नहीं है। अतः अनुच्छेद 6, 7, 10 एवं 21 कहता है कि कोई विवाह प्रमाणपत्र-रजिस्टर में विवाहित दंपत्ति द्वारा पंजीकृत न कराने पर अवैध माना जाएगा। मैं सम्मानपूर्वक पूछना चाहता हूँ कि इस प्रकार के प्रावधान से किस तरह के विधायी परिणाम आ सकते हैं। वे हिंदू समाज के मूल आदर्शों और शास्त्रों के व्यादेशों के प्रतिकूल हैं, जिनमें विवाह को अटूट बंधन माना गया है और उसे समाप्त नहीं किया जा सकता? और क्या यदि कोई विवाहित दंपत्ति अनजाने में इस आशय की प्रविष्टी प्रमाण-पत्र रजिस्टर में नहीं करता, तो क्या उसका विवाह भी अवैध हो जाएगा?

अब इस विधेयक में अगले महत्वपूर्ण प्रावधान अर्थात् तलाक के प्रावधान पर आते हैं। वहाँ पिछली परंपराओं के बारे में प्रश्न उठाया गया है और माननीय कानून मंत्री द्वारा नारद एवं पराशर स्मृतियों का हवाला यह सिद्ध करने के लिए दिया गया है कि तलाक प्रथा हिंदू समाज में पहले भी मौजूद थी। मैं सम्मानपूर्वक कहना चाहता हूँ कि राउ समिति के असंतुष्ट सदस्य, श्री द्वारका नाथ मित्तर द्वारा यह उद्घृत किया गया था कि उन्होंने समिति के समक्ष इन उक्त पवित्र ग्रंथों को प्रस्तुत किया था। पर उन्होंने उनकी व्याख्या मात्र अपने संस्कृत के ज्ञान के आधार पर ही नहीं, अपितु विद्वान पंडितों के ज्ञान के आधार पर भी की थी। उन्होंने बताया था कि नारद तथा पराशर की अमित व्याख्या तथा विश्लेषण केवल यह है कि विवाह की प्रक्रिया से पूर्व, सगाई होने तक ही सम्बन्ध-विछेद मुमकिन है, वह विवाह संपन्न होने के बाद संभव नहीं है। प्रथा को प्रमाणित करने के लिए स्मृतियों को आधार नहीं बनाना चाहिए।

माननीय कानून मंत्री द्वारा प्रस्तुत और पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा दोहराए गए वक्तव्य में बताया गया था कि हिंदू समाज में 90 प्रतिशत तलाक के मामले पहले से मौजूद हैं। और पंडित ठाकुर दास भार्गव के अनुसार तो हिंदूसमाज में तलाक के मात्र 90 प्रतिशत नहीं, अपितु 95 प्रतिशत मामले मौजूद हैं। मैं सम्मानपूर्वक पूछना चाहता हूँ कि यदि आपने तो कहा वह तथ्य है, तो तलाक से संबंधी कानून को लागू करने की आवश्यकता क्या है? आप बहुसंख्यक के लिए कानून बनाने की सोच रहे हैं, न कि निराश अल्पसंख्यक के लिए। जिस तलाक के प्रावधान को आप इस अधिनियम में लाना चाहते हो, उससे हिंदू समाज के उन 90 प्रतिशत या 95 प्रतिशत लोगों का जीवन और दुखदायी हो जाएगा, जिनके मध्य तलाक के मामले पहले से, जैसा आपने कहा मौजूद हैं, क्योंकि मौजूदा विधेयक के प्रावधानों के अनुसार विवाह से संबंधित पक्षों की जिम्मेदारी होगी कि वे तलाक लेने से पूर्व विवाह भंग किए जाने की प्रक्रिया हेतु न्यायालय के समक्ष जाएँ। एक सदस्य ने प्रवर समिति को लिखे अपने असहमति की टिप्पणी में अद्भुत किया है कि देश के अधिकतर भागों में कृषकों के बीच तलाक किसी करार या अन्य तरीके से ग्राम की पंचायत के समक्ष अत्यंत सरल तरीके से लिया जा सकता है। अतः

आपको इस कानून के प्रभाव पर अवश्य विचार करना चाहिए। क्योंकि यह जनसंख्या के 90 प्रतिशत लोगों को जो कृषक हैं, प्रभावित करेगा। आखिर क्या प्रभाव होगा, यदि धारा 34 को सांविधिक पुस्तक में शामिल कर लिया जाए? तब प्रत्येक दम्पत्ति, विवाह से संबंधित प्रत्येक सदस्य, प्रत्येक पार्टी, न्यायालय में जाने के लिए मजबूर हो जाएंगे और अपील करते रहेंगे जब तक उनका तलाक प्रभावी नहीं हो जाता।

मेरा निवेदन है कि इससे लाभ नहीं होगा, अपितु बहुसंख्यकों के लिए, जहाँ तलाक की प्रथा प्रचलन में है यह काफी अलाभकारी होगा। इसलिए, इस तरह के प्रावधानों को अधिनियमित करने से न केवल 5 प्रतिशत निराश अल्पसंख्यक लोग प्रभावित होंगे, अपितु यह बहुसंख्यक 90 प्रतिशत के लिए भी अलाभकारी होगा। इसलिए, जब तक इन प्रावधानों में आमूलचूल परिवर्तन व संशोधन नहीं किया जाता, तब तक इसे सांविधानिक पुस्तक में न शामिल किया जाए। अब मैं दत्तकग्रहण के मसले पर आता हूँ। इस विधेयक के विद्वान और मसौदाकारों ने हिंदू कानून में रेखांकित दत्तकग्रहण की मूलभूत अवधारणा को ही अनदेखा कर दिया है। जहाँ तक मेरी छोटी-सी जानकारी है, उसके अनुसार दत्तकग्रहण किसी कानून द्वारा मान्यताप्राप्त नहीं है। मुस्लिम कानून में रीति-रिवाजों द्वारा ऐसा प्रचलन में था, पर अब इसे कानून द्वारा निरस्त किया जा रहा है। हिंदू अवधारणा के अनुसार भी किसी हिंदू का जीवन उसकी धार्मिक परंपरा और धर्म की सोच के साथ इतना घुला-मिला है कि उन दोनों को अलग करना नामुमकिन है।

श्री एच.वी. कॉमथ : क्या माननीय कानून मंत्री इस समय किसी विश्राम या ध्यानावस्था में हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं माननीय सदस्य को सुन रहा हूँ।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : हिंदू कानून में मेरा निवेदन था कि दत्तकग्रहण धार्मिक विश्वासों पर निर्भर है, जिसके अनुसार किसी दिवंगत व्यक्ति की आत्मा की मुक्ति के लिए यह आवश्यक है कि उसका कोई पुत्र हो जो उसके लिए पूजा अर्चना करे। ताकि उसे मोक्ष प्राप्त हो सके। इसलिए यदि आप दत्तकग्रहण से संबंधित कानून बनाने जा रहे हैं, तो आपको इस अवधारणा को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। यदि आप इसे जारी रखते हैं तो आप दत्तक ग्रहण के सिद्धांत में निहित आत्मा को सम्मान देते है। (**एक सम्मानीय सदस्य :** 'आत्मा क्या है? (यानी दत्तकग्रहण की वैधता के लिए इस विधेयक में आपने कौन से मापदंड निर्धारित किए हैं? जबकि हिंदू कानून कहता है कि वरिष्ठतम एवं इकलौते पुत्र को गोद नहीं लिया जा सकता। इस प्रमुख विशेषता के बावजूद यदि आप इसके बरअक्स यह चाहते हैं कि वरिष्ठतम एवं इकलौते पुत्र भी गोद लिया जा सकता है। (**एक माननीय सदस्य :** 'यह अनुचित है।')

बाबू रामनारायण सिंह : ऐसा अज्ञानता के कारण होता है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : यह दत्तकग्रहण की मूल अवधारणा पर प्रहार है, क्योंकि हिंदू कानून के अनुसार वरिष्ठतम या इकलौता पुत्र ही अपने दिवंगत पिता का अंतिम संस्कार संपन्न करता है। इसी प्रकार, इस विधेयक में जिस लड़के को दत्तक पुत्र बनाना है उसके लिए कौन-सी पात्रताएं निर्धारित की गई हैं? उसमें तीन शर्तें निर्धारित की गई हैं। यानी उसकी उम्र 15 वर्षों से कम होनी चाहिए, वह विवाहित नहीं होना चाहिए, और वह हिंदू अवश्य होना चाहिए। मैं सम्मानपूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि इस प्रकार के प्रावधान द्वारा आप हिंदुओं को बड़ी दुविधा में डाल रहे हैं क्योंकि दत्तकग्रहण से संबंधित हिंदू समाज की सुविदित अवधारणा और रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह कोई अपात्रता नहीं है न ही उम्र कोई बाधा या अपात्रता है। मैं आपसे पूछता हूँ कि क्यों आप इस तरह शर्तें आरोपित कर रहे हैं? क्या अतीत में कानून के प्रयोग से संबंधित आपके अनुभवों से लगता है कि ये प्रतिबंध आवश्यक हैं? मेरी कानून संबंधी तुच्छ जानकारी कहती है कि ऐसा कोई मामला नहीं है, जहाँ कोई कठिनाई उत्पन्न हुई हो। वहाँ पारंपरिक कानून द्वारा विवाहित लड़के को भी गोद लेने की वैधता को मान्यता दी गई है। इसी तरह, बेशक उसकी उम्र कुछ भी हो, गोद लेना वैध है। तब किन कठिनाइयों के अनुभवों के कारण मौजूदा कानून में परिवर्तन करना आवश्यक समझा गया है? इसमें कोई विवाद नहीं हो सकता कि जब आप कोई परिवर्तन करने का प्रयास करते हो, तो आपके पास अवश्य कोई अकाट्य कारण होने चाहिए, अन्यथा आपको मौजूदा कानून को आवश्यक मान्यता देनी होगी। इसके बाद दत्तकग्रहण के प्रभाव के बारे में। आपने हिंदू कानून की प्रत्येक सुस्थापित परंपरा को अलविदा कह दिया है। राउ विधेयक ने प्रस्तावित किया था कि दत्तकग्रहण के प्रभाव के अंतर्गत गोद लेने के तीन वर्षों के भीतर अर्जित संपत्ति के स्वामित्व को स्वीकार करना होगा। मौजूद विधेयक इसके आगे जाता है और कहता है कि जैसे ही दत्तकग्रहण प्रक्रिया पूरी होती है तो संपत्ति को संवितरित करने का कोई प्रश्न नहीं उठेगा। अब तारीख से आधा हिस्सा विधवा या पुरुष को जाएगा और बाकी आधा दत्तक पुत्र को जाएगा। मेरा सविनय अनुरोध है कि क्यों आप इस दत्तकग्रहण में नया सिद्धांत लाने के इच्छुक हैं? इसके पीछे कौन-सा कारण है? क्या अतीत में कोई समस्या उत्पन्न हुई है।

अब संयुक्त हिंदू परिवार में व्यवधान का प्रश्न आता है। मुझे ऐसा लगता है कि एक बहुत ही महत्वपूर्ण और मूलभूत परिवर्तन किए जाने की कोशिश की जा रही है। क्यों संयुक्त हिंदु परिवार की इस कालिक प्राचीन सम्मानित व्यवस्था आपको अब खटकने लगी है? यह कहा गया है कि संयुक्त हिंदू परिवार जिस मूल रूप से स्थापित हुए थे, उनकी विशेषताओं का विभिन्न कानूनों द्वारा हनन हुआ है।

यह मुझे भी स्वीकार्य है। किंतु यदि आप संयुक्त हिंदू परिवार पद्धति का आदर करते हैं तो आपका दायित्व है कि इसका अंत न करें, क्योंकि इसका विदेशी शासन के दौरान काफी हनन हो चुका है। अतः संयुक्त हिंदू परिवार पद्धति में जो कठिनाइयां और त्रुटियां उत्पन्न हो गई हैं, उनका विधायी निराकरण किया जाए और इसकी पूर्ववत् स्थिति को पुनर्स्थापित किया जाए। उसकी पुरानी अच्छाइयों को भी बरकरार रखना चाहिए। जबकि ऐसा नहीं किया जाता है। मैंने माननीय कानून मंत्री से भी कोई ऐसा शब्द नहीं सुना है जिसमें संयुक्त परिवारों की किसी हानिकारक त्रुटि का जिक्र किया गया हो।

महोदय मैं कहता हूँ कि इस विधेयक के माध्यम से संयुक्त हिन्दू परिवारि को टुकड़ों में बांटा जा रहा है। राउ समिति ने जो प्रस्ताव दिया था वह इतना खतरनाक नहीं था, जैसा हम विधेयक के प्रावधानों में प्रस्तावित है। मैं वर्तमान विधेयक की धारा 86 और 87 पर आपका ध्यानाकर्षित करना चाहता हूँ। भाग III-ए की धारा 1 और 2 में राउ समिति ने केवल यह उल्लेख किया है कि परिवार में मुखिया की मृत्यु होने पर, सम्पत्ति पर जीवित सदस्यों का अधिकार न होकर उत्तराधिकारियों का होगा। इसका आशय कम से कम एक पीढ़ी तक मुखियागिरी को कायम रखना है। वर्तमान प्रवर समिति और हमारे कुछ सदस्यों सहित कानून मंत्री द्वारा यह भी सहन अथवा पसंद नहीं किया गया।

फलस्वरूप उपबंध 86 और 87 के साथ इस अधिनियम को लागू किए जाने से यह निश्चित है कि भारत में विद्यमान प्रत्येक संयुक्त परिवार में स्वतः ही विवाद पैदा हो जाएंगे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : संयुक्त परिवार और संयुक्त सम्पत्ति के बची अन्तर है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मैं इसी बात पर आ रहा हूँ।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : यह आपको पटरी से उतारना चाह रहे हैं। और कृपया अपनी बात जारी रखें।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : विधेयक की धारा 86 और 87 में उल्लेख है कि कोई भी कानूनी अदालत जन्म के आधार पर किसी दावे को संज्ञेय रूप में नहीं लेगी। जिस दिन यह विधेयक प्रभावी हो जाएगा। इसके बाद प्रत्येक संयुक्त परिवार विघटित माना जाएगा, ताकि संयुक्त किरायेदारी को सामान्य किरायेदारी के साथ-साथ इस विधान के द्वारा परिवर्तिक किया जा सके। किन्तु मैं पूछता हूँ, आप ऐसा क्यों चाहते हैं? क्या कानून में, विद्यमान हिन्दू संयुक्त परिवार में आज कोई अनिश्चितता है? मैं सादर कहना चाहता हूँ, नहीं है। हर कोई जानता है कि सहसमांशित का क्या अर्थ है और सहममांशिता वाली सम्पत्ति की क्या-क्या स्थितियाँ हैं। पर आप इसे विभाजित क्यों करना चाहते हैं?

मेरा सादर कहना यह है कि राउ समिति ने जो भी व्यवस्था की, यह उसके भी विरुद्ध है। और जनता की राय, जो जांच के लिए ली गई थी, उस विधेयक पर लागू नहीं है जो आज यहाँ विद्यमान है, बल्कि उस विधेयक पर लागू है, जो राउ समिति द्वारा तैयार किया गया था। अत: ऐसी कोई जानकारी यहाँ पूर्णत: अनुपलब्ध है कि ऐसे महत्वपूर्ण परिवर्तनों का मुद्दा इस विधेयक के ढांचे में क्यों शामिल किया गया है।

अस्तु, एक संयुक्त हिंदू परिवार के क्या लाभ हैं? सहसमांशिता वाली सम्पत्ति के क्या लाभ हैं? मैं कहता हूँ कि...

श्री बी. एन. मुनावल्ली (बम्बई प्रांत) : क्या हानियां कोई नहीं हैं?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : बेशक, हानियां भी हैं, यदि हर व्यक्ति पूरी तरह से अपने लिए स्वार्थी हो जाए, और अपने संबंधियों के प्रति कुछ भी आदर नहीं करते। किन्तु यदि आप समाज को उस नजरिये से देखें, जिससे स्मृतियां हमें देखना चाहती हैं, तो हमें दूसरों के लिए भी, अन्य सदस्यों के लिए भी, त्याग करना चाहिए। परिवार के एक संयुक्त परिवार बनाने के लिए कुछ कुर्बानी करनी चाहिए, इससे कोई हानि नहीं होगी। इसमें लाभ ही लाभ है हानि नहीं। पर मेरा कहना है कि प्रत्येक हिंदू परिवार द्वारा संभवत: इसे अपनाया नहीं जा सकता।

मेरे एक मित्र ने यहां मुझे स्मरण कराया है कि बंगाल और असम में मिताक्षर का रिवाज नहीं है। किंतु, महोदय, आप पूरे देश को सामने रखें और....

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : संयुक्त परिवार भी मौजूद है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : 30 करोड़ जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं-ऐसी जनसंख्या जो कश्मीर से कन्या कुमारी और गुजरात से देश के दूरस्थ स्थान तक बसती हैं और आप उस संयुक्त परिवार की व्यवस्था को भंग करना चाहते हैं, जिसके व्यापक रूप से इतनी बड़ी जनसंख्या प्रभावित होगी। क्या इस विधि व्यवस्था से आप परिवार को भी भंग करना चाहते हैं? यदि यह व्यवस्था जर्जर हो जाती है, यदि यह जीर्ण-शीर्ण हो जाती है, यदि यह, जैसा एक सदस्य ने कहा है, एक ऐसी स्थिति में आ जाती है कि हमें इसके लिए आंसू बहाने की कोई आवश्यकता नहीं है, तो इसे एक प्राकृतिक मौत करने दें। आप विघटन की कुल्हाड़ी स्वयं क्यों चलाते हैं और इसे मारना चाहते है?

महोदय, अब मैं उत्तराधिकार के प्रश्न पर आता हूँ। इस पर यहाँ मुझे एक बहुत बड़ी शिकायत मिली है। जैसा मेरे मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद ने कहा है कि राउ समिति के विधेयक के स्थान पर एक विभागीय समिति का विधेयक लाया गया था और इस विभागीय विधेयक में नए विचार रखे गए थे। धारा 94 में यह व्यवस्था है कि इस

विधेयक में उल्लिखित उत्तराधिकार के नियमों को शामिल नहीं किया जाएगा। मूल राउ समिति विधेयक में यह व्यवस्था थी कि कृषि सम्पत्ति का प्रत्येक टुकड़ा, यहाँ निर्धारित उत्तराधिकार के नियमों द्वारा शासित नहीं होगा, क्योंकि भारत सरकार के अधिनियम के अंतर्गत यह केन्द्र सरकार के कार्यक्षेत्र और न्यायाधिकार में नहीं आता। राउ विधेयक में यह नहीं कहा गया है कि केन्द्रीकरण राउ विधेयक में यह नहीं कहा गया है कि केन्द्रीयकृत रूप से शासित क्षेत्रों के मामलों में जो सीधे भारत सरकार के नियंत्रण और पर्यवेक्षण में हैं, कोई छूट नहीं है।

श्रीमान्, विभागगीय विधेयक में 'गवर्नर के प्रांतों में' जैसे शब्द प्रयुक्त हुए थे, फलस्वरूप मेरे प्रांत अजमेर-मेड़वाड़ के साथ-साथ दिल्ली और कुर्ग, जो केन्द्रीय प्रशासन के कार्यक्षेत्र है, के प्रांतों में भी प्रत्येक कृषि सम्पत्ति यहां उल्लिखित उत्तराधिकार के नियमों द्वारा शासित होगी। इस विसंगति को देखें, जो इस कानून के द्वारा तय कर दी गई थी। वह कानून जो भारी मात्रा में सम्पत्ति को शासित करेगा, वह गर्वनर वाले प्रांतों में बिल्कुल भिन्न होगा, जबकि केन्द्र द्वारा शासित क्षेत्रों में एकदम विपरीत होगा। क्या यह वही समानता है, जिसे एक छोटे से अलग कानून के द्वारा लाने का उद्देश्य है? क्या यह समानता के आदर्श से सामंजस्य बिठाना होगा अथवा यह इसके विरुद्ध होगा। क्या मैं इस बारे में सादर पूछ सकता हूँ? मेरा कहना है कि उत्तराधिकार के वे सभी नियम जो आपने विधेयक के प्रावधानों में उल्लिखित किए हैं, यदि उन्हें मेरे प्रान्त में कृषि सम्पत्ति के लिए लागू किया जाता है-और क्या मैं अपने प्रान्त और अपने प्रान्त में रहने वाले लोगों की कुछ जानकारी के आधार पर बोल सकता हूँ-मैं कहता हूँ कि कानून में उल्लिखित निर्देश न मानते हुए उसका उल्लंघन किया जाएगा, क्योंकि आपने उत्तराधिकार के जो नियम निर्धारित किए हैं, वे लोगों के प्रचलित उपायों और रिवाजों से इतने भिन्न हैं कि वे उन्हें शासन के नियम के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे, भले ही उनका जीवन जोखिम में पड़ जाए। आपने भाग VIII, अध्याय 2 और अनुसूची VII में उत्तराधिकार के जो नियम शामिल किए हैं, वे क्या हैं? क्या वे हिंदू कानून के स्वीकार्य सिद्धांतों में प्रस्तुत किया गया है और इनका संकेत भी कहा किया गया है? विरासत के लिए आपने क्या आधार लिए हैं? आप कहते हैं, यह 'नैसर्गिक प्रेम और स्नेह है'। विरासत के मामले में जहाँ तक सादृश्यता और सगोत्रता का संबंध है, हिन्दू कानून के मौलिक सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है। हिन्दू कानून में उत्तराधिकार का एक मौलिक सिद्धांत यह है कि यह उत्तरवर्तियों की क्षमता और देयता पर आधारित है कि वे अपने माता-पिता के लिए कैसी श्रद्धा रखते हैं। यह मौलिक क्षमता है जिसे विरासत के कानून में शामिल किया जाना चाहिए। निसंदेह, दृष्टिकोण यह है कि हम हिन्दू कानून का ध्यान नहीं रख रहे हैं। यह वहां से 'हिन्दू' शब्द को हटाने की तुलना में एक अलग मामला है,

इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु यदि आप हिन्दू कानून के सिद्धांतों को शामिल करना चाहते है, तो विरासत के सिद्धांतों पर विचार करने से पहले सबसे पहले आपको उत्तरवर्तियों द्वारा अपने पूर्वजों की श्रद्धा रखे जाने की क्षमता ओर देयता पर विचार करना होगा, और यही दायभाव का आधार है।

माननीय डॉ. बी.आर अम्बेडकर : उनमें सभी आपके लिए श्रद्धा दिखा सकते हैं और सम्पत्ति प्राप्त कर सकते हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : उत्तराधिकार के इस अभिनव नियम को लागू करने के क्या कारण हैं? यदि और भाई के पुत्र को एक बेहद घटिया स्थिति में ढकेल दिया गया है। भाई और भाई का पुत्र इसमें पुत्री की पुत्री, पुत्री के पुत्र और पुत्र की पुत्री के बाद आते हैं। क्या यह स्थिति हिन्दू कानून के स्वीकार्य सिद्धांतों के अनुसार हैं? (**कई आवाजें :** 'नहीं, नहीं।) क्या यह परिवार को विघटित नहीं करेगी? क्या इससे परिवार में चिरस्थायी अशांति पैदा नहीं होगी, परिवार के सदस्यों में अनबन नहीं होगी? यह कल्पनातीत है। आज भी, हिन्दू समाज के अनुसार यद्यपि यह सदियों से घोर अत्याचार का विषय रहा है, आज भी भाई-भाई के बीच प्रेम और स्नेह बाकी है। जब मैं कुछ टिप्पणियाँ करता हूँ, तो मैं कृषक आबादी को ध्यान में रखता हूँ। आप जब किसी गांव में जाते हैं, तो आप देखेंगे कि वहाँ 10 में से 9 परिवार संयुक्त परिवार के तौर पर ही रहते हैं। वहाँ भाई, भाई के साथ रहता है। वह अलग नहीं है और जैसे ही आप पुत्री की पुत्री, पुत्री के पुत्र को भाई अथवा भाई के पुत्र की तुलना में प्राथमिकता देते हैं, तो मैं सादर कहना चाहता हूँ कि समाज उसे सहन नहीं करेगा अथवा यदि वह इसे सहन भी करता है, तो आज तो शांति बनी हुई है, कुछ ही समय में वह गायब हो जाएगी। अतः आपको उत्तराधिकार के नए नियमों को लागू करने से पूर्व चतुराई से काम लेना होगा कि ये नियम हिन्दू कानून के स्वीकार्य सिद्धांतों के इतने विपरीत, इतने प्रतिकूल न हों।

महोदय, अब मैं एक पुत्री को पुत्र के समान उत्तराधिकार दिए जाने के धार्मिक सिद्धांत पर आता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मै सोचता हूँ कि इसके बारे में वे कुछ पहले भी कह चुके हैं; इसके विस्तार की कोई आवश्यकता नहीं है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : महोदय, यह तर्क रखा गया है कि धर्मग्रंथों और आस्था के अनुसार पिता की विरासत में पुत्री का एक विशिष्ट हिस्सा था, जो मनु और याज्ञवल्क्य से ऊपर है, किन्तु हिन्दू कानून के पाठों की मेरी सरसरी जानकारी यह

है कि जो भी हिस्सा दिया जाता है, वह अविवाहित पुत्री को दिया जाता है और हमें इस पर कोई आपत्ति नहीं होती, और आज भी एक अविवाहित पुत्री को उसका हिस्सा दिए जाने पर कोई आपत्ति नहीं की जाती है। तब आज यह प्रश्न उठता है कि वास्तविक स्थिति क्या है? क्या कोई इसे नकार सकता है कि आज हमारों में से एक भी पुत्री अविवाहित नहीं रहती। परिवार की हैसियत के अनुसार पुत्री को पुत्रों के समान ही शिक्षा और सम्मान दिया जाता है। जब उसका विवाह होता है, तो परिवार की रिति के अनुसार उसे दहेज दिया जाता है, पर विवाह के बाद भी भाई के साथ उसका रिश्ता नहीं टूटता। जहाँ तक मेरा अनुभव है, परिवार के हर समारोह में उसे आमंत्रित किया जाता है और उसके माता-पिता के घर में विवाह आदि अवसरों पर रिवाज के अनुसार उसे नियम राशि आदि भी दी जाती है। क्या कोई यह कह सकता है कि अदालती कानून का सहारा घर में खुशियां और निष्कपटता लेकर आएगा? ऐसा कोई भी कदम स्थिति को बिगाड़ ही देगा और विधेयक के प्रावधानों के लिए अदालत का सहारा लेना हमारे लिए बहुत शर्म की बात होगी। हम नहीं चाहते कि हमारी पुत्रियां और बहनें अदालत में जाएं। हमारे मनीषियों ने भी कभी ऐसा कार्य नहीं किया कि उन्हें अदालतों का सहारा लेना पड़ा हो। परिवार में हमारी पुत्रियों की स्थिति के अनुसार एक ऐसा अलग-सा सद्व्यवहार है, जिसे कहीं और देख पाना बहुत कठिन है। जैसा कि मैंने कहा था, विवाह के बाद भी, त्योहार आदि के अवसरों के लिए पुत्री को देने के लिए पारिवारिक बजट में एक निश्चित हिस्सा रहता है। यह प्रश्न उठा था, कि क्या अपने अधिकारों को मनवाने के लिए वह अदालत में जा सकती है? महोदय, यदि किसी परिवार में एक लड़की का पिता अथवा भाई, उसके प्रति अपने कर्तव्यों को निर्वाह नहीं करते, तो उन्हें समाज द्वारा गिरी हुई निगाहों से देखा जाता है। निर्धारित रीति-रिवाजों के अनुसार परिवार में भाई के विवाह के समय प्रत्येक पुत्री को मौजूद रहना चाहिए। मैं माननीय सदस्यों से कहना चाहता हूँ कि एक तय समारोह के अनुसार दूल्हा और दुल्हन के घर में प्रवेश से पहले बहन और उसके पति को एक विशेष रस्म अदा करनी पड़ती है। यह प्राचीन समय से चले आ रहे रिवाज़ हैं। हम पुत्रियों को एक सुनिश्चित स्थान देते हैं। तब परिवार की सम्पत्ति में से उसे एक हिस्सा देकर आपको क्या लाभ होगा? इस सुधार का एक औचित्य यह है कि एक पुत्र और पुत्री के बीच बराबर समानता होनी चाहिए। क्या मैं जान सकता हूँ कि इस तथ्य में कोई समानता है? क्या यह दिखावटी समानता नहीं है, जो आप अपनी पुत्री को सौंपने जा रहे हैं? परिस्थितियाँ एकदम अलग हैं। हमारी पुत्री को एक भिन्न परिवार में जाना होता है, जब कि पुत्र को नहीं जाना होता। ये शर्तें हमारे परिवेश में निहित होती हैं। अतः, आप जो भी कानून बनाएँ, वे परिवेश के अनुकूल होने चाहिए

तथा वे उनका उल्लंघन करने वाले नहीं होनी चाहिए। यदि आप परिवेश का उल्लंघन करने वाला कोई कानून बनाते हैं, तो हमारा समाज टुकड़ों में बंट जाएगा।

अब, प्रश्न है कि आज हिन्दू समाज में सम्पत्ति के स्वामियों का प्रतिशत कितना है? यह बहुत सार्थक प्रश्न है क्योंकि, विद्यमान रिवाजों के अनुसार, न केवल पिता के लिए यह नैतिक बाध्यता है कि वह अपनी पुत्री का विवाह करे, बल्कि एक भाई भी, भले ही उसे विरासत में कोई सम्पत्ति मिली हुई हो अथवा नहीं, यह सोचता है कि यह उसका नैतिक कर्तव्य है कि वह अपने पिता के न होने की स्थिति में अपनी बहन का विवाह करवाए।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : क्या आप सोचते हैं कि यदि एक भाई अपनी बहन को एक हिस्सा देता है, तो वह अपने नैतिक कर्तव्य का निर्वाह नहीं करेगा?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : माननीय सदस्य एक हिस्से की बात कर रही है, जबकि मैं ऐसे परिवार की बात कर रहा हूँ जिसके पास सम्पत्ति नहीं है। ऐसे परिवार में बहन का क्या होगा? आप किसी गांव अथवा शहर में जाएं। आप देखेंगे कि एक परिवार में पिता की मृत्यु हो चुकी है और बहन अपने भाई के साथ रहती है। भाई अपनी बहन का विवाह करना नैतिक कर्तव्य मानता है और वह इस उद्देश्य के लिए धन उधार भी लेता है। जब तक वह इस पवित्र विश्वास का निर्वाह नहीं कर लेता, वह अपने बारे में बिल्कुल नहीं सोचता।

माननीय उपाध्यक्ष : क्या माननीय सदस्य अपनी बात शीघ्र समाप्त करना चाहेंगे?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : श्रीमान्, मैं एक घंटे का समय और लेना चाहूँगा।

माननीय उपाध्यक्ष : तो सदन स्थगित किया जाता है।

इसके बाद सदन सोमवार, 4 अप्रैल, 1949 को 11.15 बजे तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

*हिन्दू संहिता – जारी...

माननीय उपाध्यक्ष : जैसा प्रवर समिति की रिपोर्ट में कहा गया है, अब हम हिन्दू कानून की विभिन्न धाराओं को संशोधित और उनको संहिताबद्ध करने के लिए प्रस्तावित विधेयक पर विचार-विमर्श के लिए आगे कार्रवाई करेंगे। इसलिए श्री मुकुट बिहारी लाल भार्गव अपना भाषण जारी रखें।

श्री आर.के. सिंधवा (सी.पी. और बेरार : सामान्य) : इससे पहले कि हम इस विधेयक पर विचार-विमर्श शुरू करें, हम जानना चाहेंगे कि इस संबंध में कार्यक्रम क्या है। क्या यह अनिश्चित समय के लिए जारी रहेगा? मैं आम सहमति से यह अनुरोध करूंगा कि माननीय सदस्यों के भाषणों के लिए कुछ समय-सीमा निर्धारित की जाए, ताकि जितना संभव हो सके, उतने सदस्य इस विचार-विमर्श में भाग ले सकें।

माननीय उपाध्यक्ष : मैं सदन को सूचित करना चाहता हूँ कि यह एक सरकारी विधेयक है और उन्हें दो दिन का समय दिया गया है। अत: अध्यक्ष इसमें कुछ नहीं कर सकता।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव (अजमेर-मेड़वाड़) : महोदय, मैं हिन्दू संहिता पर अपना असमाप्त भाषण जारी रखना चाहूँगा। किन्तु महोदय, इससे पहले मैं इस स्मरण ीय सत्र के पहले दिन माननीय प्रधानमंत्री द्वारा की गई घोषणा की ओर सादर आपका ध्यानाकर्षित करना चाहता हूँ।

महोदय, माननीय प्रधानमंत्री ने इस उपाय का एक सरल और आवश्यक कानून के रूप में हवाला दिया था। इसके उत्तर में मैं सादर निवेदन करता हूँ कि यह उपाय जो सदन के समक्ष विचार-विमर्श के लिए रखा गया है, इतना सरल नहीं है। मैं यह बताने की आज्ञा भी चाहता हूँ कि इस विधेयक के कुछ विरोधी देरी किए जाने वाली नीतियां अपनाने के लिए माननीय प्रधानमंत्री द्वारा भी दोषी ठहराए गए हैं। वे इस असेम्बली और यहाँ चल रही कार्यवाही से भली-भांति परिचित हैं तथा शीघ्र ही जान जाएंगे कि इस उपाय पर पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं हुआ है। मैं कहना चाहूँगा कि यह इतना महत्वपूर्ण उपाय है, जो हिन्दू समाज के जीवन और मृत्यु के प्रश्न को प्रभावित करने जैसा है, जो केवल बहुत थोड़े समय के लिए सदन के संज्ञान में लाया गया है। यदि आप पिछले अवसरों को देखें जब शारदा अधिनियम और हिन्दू महिलाओं के लिए सम्पत्ति के अधिकार अधिनियिम जैसे कानून इस विधायिका के समक्ष रखे गए थे, आप पाएंगे कि उनसे कितने विवाद उत्पन्न हुए थे। इन विधेयकों की तुलना में, यह विधेयक बहुत ही ज्यादा महत्व

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसंबर, 1949, पृष्ठ 464-9।

का है। यह पूरे हिन्दू समाज के मूलभूत ढांचे को प्रभावित करता है। श्रीमान्, यदि इस विधेयक को संविधि पुस्तक में रखा जाता है, तो इस पर लोग मुझसे भिन्न मत भी रख सकते हैं, माननीय प्रधानमंत्री मुझसे भिन्न मत रख सकते हैं-इससे हिन्दू समाज का सम्पूर्ण विनाश हो जाएगा। किन्तु मैं ऐसा सोचता हूँ कि अभिप्राय यह नहीं है कि तीस मिलियन हिन्दू अपने विलोप होने के लिए उठ खड़े होंगे, बल्कि यह कि हिन्दू समाज की विशिष्ट विशेषताएं और चरित्र विलुप्त होना जारी रखेंगे।

यह कोई सरल उपाय नहीं है। तथ्य यह है कि इस विधेयक का उद्देश्य पूरे ढांचे का सम्पूर्ण उन्मूलन करके हिन्दू समाज का निर्माण करना है। इसका उद्देश्य विवाह कानून में परिवर्तन, तलाक संबंधी कानून, गोद लेने संबंधी कानून, अल्पसंख्यक और संरक्षण संबंधी कानून, हिन्दू संयुक्त परिवार कानून, उत्तराधिकार संबंधी कानून और हर उस कानून में परिवर्तन करना है, जो हिन्दू समाज और उसकी बची हुई विशेषताओं का निर्माण करता है। कुल मिलाकर इससे नींव का मात्र एक स्तंभ नहीं, बल्कि वे सभी स्तंभ, जिन पर हिंदू समाज टिका है, हिल रहे हैं। इसलिए महोदय, यह कहना स्पष्ट और उचित होगा कि कानून बनाने वालों के रूप में, हम चूंकि जनता के हितों के संरक्षक हैं, हमें अपनी पूर्ण क्षमता के साथ अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना चाहिए और ये देखना चाहिए कि हम जिन उपायों पर विचार कर रहे हैं, देश की जनता उन्हें कितना चाहती है। एक साधारण कानून के रूप में इस उपाय का बखान करना, मैं सादर कहना चाहता हूँ, उचित नहीं है।

आगे मेरा कहना है कि यदि एक साधारण कानून के रूप में इसका बखान करना उचित नहीं है, जो एक अनिवार्य उपाय के रूप में इसे चित्रित करना भी हानिकारक ही है। मैं सादर पूछता हूँ कि इस उपाय के लिए, आवश्यक क्या हैं? यदि इस विधेयक को स्थगित रखा जाता है और नई विधायिका, स्वतंत्र भारत में वयस्क मताधिकार के साथ प्रभुसत्ता संपन्न संसद का चुनाव होने तक इसे संविधि-पुस्तक में नहीं रखा जाता है, तो क्या होगा? क्या कोई ऐसी व्याधि है जिससे हिन्दू समाज इतनी अनिवार्यता के साथ ग्रस्ति है कि यदि इस विधेयक को संविधि-पुस्तक में रखे बिना कुछेक माह गुजर जाते हैं, तो पूरा समाज टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाएगा? मैं कहता हूँ कि किसी भी रूप में यह अनिवार्य नहीं है। अतः हम बहुत अच्छी तरह से एक या दो और वर्षों तक प्रतीक्षा कर सकते हैं। हिन्दू समाज, जो सदियों से सफलतापूर्वक बना हुआ है, जिसने कई सभ्यताएं, कई विदेशी आक्रमण देखें हैं और सैकड़ों वर्षों तक राजनैतिक गुलामी भी देखी है, वह इस छोटे से कानून के बिना एक या दो और वर्षों तक बहुत अच्छी तरह रह सकता है।

श्रीमान्, यदि हम प्रतीक्षा करें...

श्री एस. नागप्पा (मद्रास : सामान्य) : श्रीमान्, मुझे आपत्ति है। माननीय सदस्य सदन पर आरोप लगाते हुए कह रहे हैं कि यह सदन इस मामले पर कार्रवाई के लिए सक्षम नहीं है और हमें एक नए सदन के चुनाव तक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

माननीय उपाध्यक्ष : मि. नागप्पा ने जो कुछ कहा है, उसमें आपत्ति जैसी कोई बात नहीं है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : श्रीमान्, अपने माननीय मित्र द्वारा बाधा पहुँचाए जाने के बावजूद मैं जोर देकर यह कहना चाहूँगा कि जिस रूप में यह सदन निर्वाचित है, उसमें यह इस प्रकार की महत्वपूर्ण प्रकृति के उपाय पर कार्रवाई करने के लिए सक्षम नहीं है। अतः प्रश्न यह है कि...

श्री तजामुल हुसैन (बिहार : मुस्लिम) : श्रीमान्, मुझे आपत्ति है। अध्यक्ष द्वारा यह निर्णय दिया जा चुका है कि यह सदन इस विधेयक पर कार्रवाई के लिए सक्षम है। उस नियम के बाद, क्या कोई माननीय सदस्य यह प्रश्न उठा सकता है कि सदन सक्षम है अथवा नहीं?

माननीय उपाध्यक्ष : इसमें कोई हानि नहीं है अध्यक्ष का निर्णय है कि यह सदन इस विधेयक पर विचार करने के लिए सक्षम है और इसके अनुसार ही इस विधेयक का अवलोकन किया जा रहा है। यदि माननीय सदस्य कोई अन्य प्रश्न उठाना चाहें, विधिक का तकनीकी बाधाओं के अलावा कोई अन्य कारण रखना चाहें तो वह ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं। किंतु मैं माननीय सदस्य को परामर्श दूंगा कि पिछले वक्ताओं में से लगभग हरेक ने इस मुद्दे को उठाया है और यह मुद्दा अब लगभग बासी हो चुका है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : महोदय, केवल मेरे माननीय मित्र की बाधा ने मुझे उकसाया है कि मैंने यह टिप्पणी की है। इस महत्वपूर्ण उपाय को पारित करने के लिए मैंने विधायिका की संवैधानिक शक्ति पर कोई प्रश्न नहीं उठाया था। किन्तु प्रश्न एक औचित्य का है। क्या आप एक पूर्ण-रुपेण विधायिका के कार्यों को अपना सकते हैं, क्या यह सदन, जिसका प्रादुर्भाव भारत के संविधान का निर्माण के विशेष उद्देश्य से किया गया है, ऐसा कर सकता है? अतः मेरा कहना है कि प्रश्न की संवैधानिक अवधारण के अलावा, इस विधायिका की संवैधानिक शक्ति के मुद्दे के अलावा, यह प्रश्न एक औचित्य का है, और औचित्य भी एक बहुत ही महत्व का है। और मैं महसूस करता हूँ कि अपने काबिल दोस्त द्वारा बाधा पहुंचाए जाने के बावजूद मुझे अपनी आत कहने का अधिकार है, और सदन में जो मेरे उक्त मित्र के साथ हैं, वे इस बहुत ही महत्त्व वाले उपाय पर कार्रवाई से पहले तीन बार अवश्य सोचें। और मेरा यह भी कहना है कि यह उपाय अनिवार्य नहीं है और सरकार को इस प्रश्न को सदन के समक्ष विश्वास

मत का एक मुद्दा बनाने की घोषणा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इस प्रश्न पर ठण्डे दिमाग से कार्रवाई करने की आवश्यकता है और हमें इसके दूरगामी परिणामों पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या यह उपाय हिन्दू समाज के पूरे ढांचे और उसके निर्माण पर विध्वंसक प्रभाव तो नहीं डालेगा?

अब मैं अपने भाषण के पहले चरण, जहाँ से मैंने छोड़ा था, पर आता हूँ। मैं उस अभिनव कानून पर बात कर रहा था, जो इस कानून के एक भाग के रूप में लाया गया है, अर्थात् पुत्री को पुत्र के समान मानते हुए उत्तराधिकार में समान स्थान दिया गया है। मेरा सादर निवेदन यह था और है, कि इस अभिनव कानून को पूरी तरह समाप्त किया जाए और यह भी कि यह अभिनव कानून हिंदू समाज के संपूर्ण ढांचे को ढहा देगा। मैं बताता हूँ यह कैसे संभव है। हिन्दू समाज की वास्तविक दशा क्या है? पुरुष और महिला के बीच भेद, पुत्र और पुत्री के बीच भेद, इसी परिस्थिति में यह अंतर्निहित है। पुत्र अपने पूरे जीवनकाल में, अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक, उसी परिवार के साथ रहता है जहाँ उनका जन्म हुआ है। पुत्री को एक अनजान परिवार में जाना पड़ता है। इस अन्तर्निहित परिस्थिति के फलस्वरूप क्या परिणाम सामने आते हैं? हिन्दू कानून के निर्माताओं, वे व्यक्ति जिन्होंने हमें वेद दिए, क्या वे इतने निचली सोच वाले थे, क्या वे लिंग अनुपात के इतने विरुद्ध थे कि उन्होंने केवल असमानता अथवा अन्याय के दृष्टिकोण यह सब किया? मैं सादर कहता हूँ कि यह सम्पूर्ण वेदों और हिन्दू कानून का एक गलत पाठ है। वस्तुत: यदि पैतृक सम्पत्ति के उत्तराधिकार का अधिकार पुत्री को दिया जाता है, तो उसके परिणाम सोचकर ही मैं सिहर जाता हूँ। माननीय कानून मंत्री, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा था, कि एक हिन्दू व्यक्ति के बारह पुत्र और एक पुत्री है तथा उसकी मृत्यु होने पर उसकी सम्पत्ति को बारह हिस्सों में बांटा जाता है, ऐसी स्थिति में यदि सम्पत्ति को बारह की बजाय तेरह हिस्सों में बांटा जाए तो क्या आसमान गिर पड़ेगा? मैं माननीय कानून मंत्री से सादर पूछना चाहता हूँ कि वे इसकी विपरीत स्थिति मानकर देखें, जहाँ एक व्यक्ति के बारह पुत्रियां हों और एक पुत्र हो। उस स्थिति में क्या होगा?

माननीय श्री जगजीवन राम (श्रम मंत्री) : अब तेरह हिस्से होंगे।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : क्या एक परिवार के मकान में तेरह हिस्से किए जा सकते हैं? ग्रामीण भारत को देखें, शहरी भारत की बात नहीं सोचें, जहां लोग महलों में रहते हैं, बल्कि ग्रामीण भारत की सोचें जहां एक परिवार बहुत छोटे से घर में रहता है। यदि पिता की मृत्यु के बाद, उसके मकान को तेरह हिस्सों में बांट दिया जाए और तेरह दामादों को उस मकान में समायोजित करना हो, तो क्या होगा? और महोदय, जैसा कि इस कानून में प्रस्ताव है कि पुत्री पर छोड़ दिया जाए कि वह जिससे चाहे उससे विवाह कर ले, तब बे-रोकटोक होने पर यदि वह एक गैर-हिन्दू से विवाह कर

लेती है, और उत्तराधिकार के लिए भी अपात्र न हो, तो परिणाम क्या होगा? परिणाम यह होगा कि प्रत्येक घर, और प्रत्येक परिवार पुश्तैनी दुश्मनी वाला परिवार बन जाएगा, जिसमें झगड़े होंगे और इससे भी बुरी स्थिति-हत्याएं तक होंगी। अत:, महोदय, मैं सादर अनुरोध करता हूँ कि जब आप एक कानून का निर्माण कर रहे हैं तो आप केवल एक व्यक्ति का ही उदाहरण न लें, जिस पर माननीय कानून मंत्री ने सदन का ध्यानाकर्षित किया है, बल्कि आपको प्रत्येक काल्पनिक मामले पर भी विचार करना होगा, और आपको उसी आधार पर कानून बनाना होगा।

लेकिन हिन्दू समाज में पुत्री की स्थिति को लेकर यह घटिया मनोवृत्ति आई क्यों है? मैं यहाँ इसके निहितार्थ का ही विरोध करता हूँ क्योंकि वास्तविकता यह है कि हिन्दू समाज में पुत्री को बहुत उन्नत और ऊँचा स्थान प्राप्त है। एक अनजान परिवार में उसके विवाह के बाद भी अपने पिता के नैसर्गिक परिवार से उसके संबंध समाप्त नहीं होते। प्रत्येक अवसर पर, चाहे वह किसी का जन्म हो, मृत्यु हो, विवाह अथवा अन्य कोई अवसर हो, उसे अपने पिता के घर आकर कुछ अनिवार्य रीतियाँ निभानी पड़ती हैं, और उन अवसरों पर हिन्दू परिवार में पुत्री को तोहफे भी दिए जाते हैं। इस तरह पुत्री के अनेक नैसर्गिक परिवार से संबंध लगातार जारी रहते हैं। यदि वह एक बच्चे को जन्म देती है, तो उसके भाई उसे तोहफे देते हैं। श्रीमान्, मैं जोर देकर यह कहना चाहता हूँ कि बहन के परिवार में होने वाले प्रत्येक विवाह-समारोह में, उसके भाइयों को तोहफे देने पड़ते हैं, चाहे वह विवाह लड़के का हो अथवा लड़की का, भाई तोहफे देते हैं। प्रत्येक अवसर पर तोहफे देना अनिवार्यता है। तो इतना होने पर श्रीमान्, मैं कैसे कह सकता हूँ कि पुत्री को सम्पत्ति से कुछ प्राप्त नहीं होता? मेरा कहना है कि यह प्रश्न जो उठाया गया है, यदि आप हिन्दू सभ्यता और हिन्दू विचारधारा के दृष्टिकोण से देखें तो उसके पीछे पूरी मानसिकता ही गलत है। निसंदेह यदि आपका निष्कर्ष स्वेदशी नहीं है, यदि वह हिन्दू विचारधारा का नहीं है, या भारतीय नहीं है, बल्कि भारत-विरोधी और हिन्दू विचारधारा-विरोधी है, तो बेशक आप विरोधी दृष्टिकोण रखेंगे।

आइए, अब हम विचार करें कि परिवार की पैतृक सम्पत्ति में पुत्री को एक हिस्सा देने का क्या परिणाम होता है। आप मुस्लिम परिवार का उदाहरण देखें। पैतृक सम्पत्ति में उसका हिस्सा दिए जाने का अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि चचेरे भाई-बहनों में विवाह बिल्कुल आम हो जाएगा, और देर-सवेर प्रतिबंधित सीता तक विवाह प्रचलित हो जाएंगे, भले ही आप उसे पसंद करें अथवा नहीं। यह इसके परिणाम भी अवश्यभावी होंगे। यदि आप पैतृक सम्पत्ति में पुत्री के हिस्से का इतिहास देखें तो कई देशों में जैसे मिस्र, यूनान, रोम अथवा इस्लामिक कानून के अंतर्गत, आप इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे, और वह अंतिम निष्कर्ष होगा, कि यदि एक हिस्सा दिया जाना हो, तो पहले चचेरे भाई-बहन से विवाह करने के कानूनी अधिकार के दायरे को निश्चित रूप से बढ़ाना होगा। इस बारे

में जहाँ तक हिन्दूवादी दृष्टिकोण का संबंध है, यह एक आपदा की भाँति होगा, जिसे कोई हिन्दू परिवार बर्दाश्त नहीं कर पाएगा।

अब मैं अगले मुद्दे पर आता हूँ। क्या आप सोचते हैं कि इस छोटे से कानून में यह व्यवस्था करके कि पुत्री का सम्पत्ति में हिस्सा पुत्र के बराबर है, आप वह करने जा रहे हैं, जो आप चाहते हैं, जिसे कहा जाए तो, आप पुत्री को सम्पत्ति का अधिकार प्रदान करेंगे? मैं सादर कहता हूँ कि ऐसा नहीं है। दूसरी ओर आप अनेक कुरीतियों का मार्ग प्रशस्त करेंगे और उनका दायरा भी बढ़ा देंगे। इस कानून के अंतर्गत जैसा कि हिन्दू संहिता में इसे शामिल किया गया है, किसी भी पिता के लिए यह विकल्प उपलब्ध होगा कि वह सम्पत्ति अपने किसी भी पुत्र को मौखिक तौर पर पुरस्कार स्वरूप दे दे, अथवा एक वसीयत द्वारा समस्त सम्पत्ति का निपटारा कर दे। क्या इस पर कोई रोक है? मैं पूछता हूँ, यदि कोई रोक नहीं है, तो जब तक समाज पुत्री को बराबर का हिस्सा देने को तैयार नहीं हो जाता, तब तक इस कानून का परिणाम केवल पैतृक सम्पत्ति की व्यवस्था अथवा पिता द्वारा अपने पुत्रों को समस्त संपत्ति मौखिक रूप से पुरस्कार स्वरूप दे देने की व्यवस्था करना होगा। एक वकील होने के नाते मुझे अदालतों का भी अनुभव है; यहाँ कुछ अन्य मित्र भी हैं जिन्हें अदालतों का पूर्ण अनुभव है। क्या यह एक तथ्य नहीं है कि वसीयत और इच्छा-पत्र के प्रत्येक दस मामलों में से नौ मामले अदालत में जाते हैं और बहुत लम्बी कानूनी प्रक्रिया को बढ़ावा देते हैं? निपटान क्षमता के संबंध में न केवल प्रश्न, अपितु प्रश्न वसीयत करने वाले, जो अपनी वसीयत और इच्छा को लागू करने के लिए स्वतंत्र है, के संबंध में उठता है वसीयत जैसे एक जटिल दस्तावेज की विभिन्न धाराओं की व्याख्या में इसे तैयार करने संबंधी जटिल प्रश्न पैदा होते हैं। वह भी एक न्यायालय में नहीं, बल्कि सर्वोच्च न्यायालय अर्थात् प्रिवी काउंसलि में भी पैदा होते हैं। यदि यह स्थिति है, तो क्या मैं कुछ पूछ सकता हूँ कि आप पुत्री के हितों की रक्षा में कैसे सफल होंगे? मेरा सादर कथन है कि आप यह छोटा-सा विघटनकारी कानून बनाकर पुत्री के हितों की रक्षा नहीं करेंगे, परन्तु आप उसे एक निश्चित हानि पहुंचा रहे हैं, जिसे वापस ला पाना आपके लिए कठिन ही होगा। एक हिंदू परिवार का नितांत मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भी बदल जाएगा जैसे ही कानून में यह व्यवस्था की जाती है कि पैतृक सम्पत्ति में पुत्री का हिस्सा भी होगा, भाई अपनी बहन की देखभाल और विवाह आदि के व्यय के कर्तव्य से स्वयं को एकदम मुक्त महसूस करेगा। आज हिंदू परिवारों की क्या स्थिति है? कितने प्रतिशत परिवारों के पास अचल संपत्ति है? मेरा कहना है कि यह संख्या चालीस प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती। शेष साठ प्रतिशत परिवारों का क्या होगा? मैं सोचकर सिहर जाता हूँ। उन साठ प्रतिशत परिवारों का क्या होगा जो मिताक्षर कानून द्वारा शासित हैं, जिनके पास बिल्कुल भी सम्पत्ति नहीं है? क्योंकि कानून द्वारा बहन को भाई के बराबर दर्जा दिया जाता है, तो भाई जो अभी तक अपनी बहन को उसका विवाह होने तक उसके पालन-पोषण को एक बोझ या उत्तरदायित्व

समझता है और उसका विवाह करता है, उसे देहज देता है, उसे सब-कुछ प्रदान करना चाहता है, वह कर्तव्यनिष्ठ भाई इस स्थिति में स्वयं को जिम्मेदारियों से मुक्त समझ लेगा। परिणाम यह होगा, यानी इस अनर्थकारी प्रावधान का परिणाम, कि पुत्री को कोई संबंधित लाभ नहीं मिल पाएगा। अतः, मेरा सादर निवेदन का यह आधार नहीं है कि पुत्री, पुत्र के समान नहीं है, न ही मेरा कथन लिंगानुपात के विरुद्ध किसी पूर्वाग्राह के कारण है, बल्कि स्वयं पुत्री के हितों को लेकर है, कि यह प्रावधान नहीं किया जाना चाहिए। निस्संदेह पुत्री के पास अपने हितों की रक्षा के लिए अन्य माध्यम है। वे अपने पति की सम्पत्ति में, अपने ससुर की सम्पत्ति में बहुमूल्य अधिकार पा सकती हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : हम वे पहले ही दे चुके हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : यदि वे पहले दिए जा चुके हैं तो पैतृक सम्पत्ति में उसे हिस्सा देना बिल्कुल जरूरी नहीं है। जहाँ तक मैं भी कानून को समझता हूँ, उसमें जो सीमित प्रकृति का अधिकार दिया गया है; आप निश्चिय तौर पर उसे व्यापक बना सकते हैं, और पुत्री को उसके ससुर की सम्पत्ति में उसके पति के समान एक अधिकार दे सकते हैं। यह एक बहुत अच्छा सुझाव है जिस पर हम विचार कर सकते हैं।

महोदय, अब मैं इस क्रांतिकारी कानून के अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तनों पर आता हूँ। मेरा अभिप्राय संयुक्त परिवार के विघटन से है। इस विधेयक की धारा 86 के अंतर्गत एक बहुत महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि कोई भी कानूनी अदालत यहाँ से आगे जन्म के अधिकार को संज्ञेय मानने की पात्र नहीं होगी। मैं इस प्रावधान से उत्पन्न होने वाले बुरे परिणामों को सोचकर सिहर उठता हूँ। यह बताया गया है कि बंगाल और असम, कानून की दयाभाग व्यवस्था द्वारा पहले से ही शासित हैं, जिसमें संयुक्त परिवार को मान्यता नहीं दी जाती। इस व्यवस्था में परिवार का प्रत्येक सदस्य समान अधिकार रखता है। क्या इसका अभिप्राय यह है कि यह व्यवस्था पूरे भारत में लागू की जानी चाहिए? यदि पांच करोड़ आबादी इस व्यवस्था द्वारा शासित होती है, और पच्चीस करोड़ अन्य व्यवस्था द्वारा, तो क्या यह कानून न्यायोचित है कि इस पांच करोड़ के लोगों को कानून को अन्य पच्चीस करोड़ पर भी लागू किया जाए? मैं कहता हूँ कि यह बिल्कुल गलत है। मेरा कहना है कि जन्म द्वारा अधिग्रहण का अधिकार एक हिंदू पुत्र का एक मूल्यवान अधिकार है। यह ऐसा अधिकार है, जो पिता के खर्चीली और धन लुटाने की प्रवृत्ति के कारण दिया गया है। इसी मूल्यवान अधिकार से हजारों हिंदू परिवारों की सम्पत्ति बच सकी है। अब इसी अधिकार को इस अनर्थकारी कानून की धारा 86 के अनुसार हटाया जा रहा है। न केवल यही, धारा 87 में यह व्यवस्था है कि इस अलग कानून के प्रभावी होने से प्रत्येक संयुक्त परिवार का अनिवार्य रूप से विघटन होगा। अतः एक अनिवार्य बँटवारा क्या करना चाहिए? मेरा कहना है कि ये प्रावधान साधारण प्रकृति के नहीं हैं;

वे एक क्रांतिकारी और अतिवादी प्रकृति के हैं और निश्चित ही ऐसा कोई कारण नहीं है कि इस व्यापक प्रवृत्ति वाले परिवर्तनों को लागू क्यों करना चाहिए।

अब मैं एक बहुत महत्वपूर्ण प्रावधान पर आता हूँ, जो इस विधेयक में शामिल किया गया है जिसे विवाह के विघटन के तौर पर जाना जाता है। इसके बारे में धारा 30 में उल्लेख है। इसमें वे आधार हैं, जिनसे विघटन हो सकता है। इससे संबंधित अन्य धारा 33 में वे आधार दिए गए हैं, जिने आधार पर कोई भी पार्टी विवाह से न्यायिक पृथकता का दावा कर सकती है। तत्पश्चात् इसमें एक विवाह को अमान्य अथवा अमान्यकरण ीय घोषित करने के प्रावधान दिए गए हैं। जहाँ तक हिन्दू कानून और हिन्दू समाज का संबंध है, ये प्रावधान नितान्त नए हैं। वस्तुतः कानून के इस प्रावधानों और कानून के अन्य प्रावधानों को इस विधेयक में शामिल करके वकीलों के लिए एक स्वर्ग का निर्माण किया गया है। किसी विवाह को अमान्य घोषित कराने के लिए मामले को न्यायालय में लाया जा सकता है। विवाह को समाप्त घोषित कराने के लिए पार्टियां न्यायालय की शरण ले सकती हैं। न्यायिक रूप से अलग होने के लिए वे न्यायालय में जा सकते हैं। अनेक यूरोपीय देशों में विवाह के विघटन के मामलों से हमने क्या सबक सीखे हैं? यह वास्तव में बहुत आश्चर्यजनक और विस्मयकारी है कि पश्चिमी देशों के अनुभव और अमेरिका तथा इंग्लैण्ड के अनुभव, जहाँ प्रत्येक छह विवाहों में से एक विवाह का विघटन होता है, से हमने कोई सबक नहीं सीखा है। हमारे समाज में किसी भी स्तर पर, हमारी यह स्थिति नहीं है कि हमें अनिवार्य रूप से न्यायालय की शरण लेने की शुरुआत करनी चाहिए। धारा 34 में व्यवस्था है कि प्रत्येक विवाह का विघटन केवल जिला अदालतों के माध्यम से हो सकता है और इसमें यह भी व्यवस्था है कि विघटन का प्रत्येक मामला धारा 44 के अंतर्गत पुष्टि के लिए स्वतः उच्च न्यायालय को जाना चाहिए। मैं पूछता हूँ कि क्या इससे वकीलों के समृद्ध होने का रास्ता नहीं खुल रहा है? क्या किसी कानून को समाज में अधिकाधिक मुकदमेबाजी को बढ़ावा देना चाहिए? अतः, मेरा कहना है कि न्यायिक रूप से पृथक होने और विवाह के विघाटन के लिए धारा 30 और 33 में दिए गए प्रावधान न केवल हिंदू समाज के स्वीकार्य आदर्शों का विरोध करते हैं, घूम–फिर कर वे हमारी सभ्यता और संस्कृति का भी विरोध करते हैं। वे प्रत्यक्षतः सांस्कारिक विवाह के विरोधी हैं, क्योंकि यह एक संविदात्मक संबंध नहीं हैं, जिसे किसी भी पार्टी द्वारा अपने झक्कीपन और सनक से समाप्त किया जा सकता है, बल्कि यह विवाह का पवित्र बंधन है, जिसकी जड़ें हमारे अतीत में हैं और जिसका प्रभाव भविष्य में भी दिखाई देगा। यही हिन्दू विवाह की अवधारणा है। न्यायिक पृथक्कीकरण और विवाह के विघटन के ये प्रावधान हमारी वैवाहिक अवधारणा के बिल्कुल विरोधी हैं और अभी भी जबकि पश्चिमी देश जो इस तरह के वैवाहिक संबंधों, तलाक और ऐसा ही सब, कुछ के आदी हैं–से ऊब जाते हैं, और जब उनके विद्वान विचारक भी इस व्यवस्था को समाज के लिए घातक समझ रहे

हैं, तो यह वास्तव में आश्चर्यजनक बात है कि हम इसका अनुकरण करने का प्रयास कर रहे हैं। अत: मेरा कहना है कि आपको बहुत सावधान रहना चाहिए। यों न्यायिक रूप से अलग होने के कारण क्या हैं? एक परगमन का मामला लें इसमें कानून कहता है कि वैवाहिक संबंध न्यायिक पृथक्करण अथवा विवाह के विघटन द्वारा समाप्त किए जा सकते हैं। किन्तु दम्पत्ति में इस बीमारी के कीटाणु भी हो सकते हैं और मैं सादर सदन का ध्यान इस ओर दिलाना चाहूँगा कि क्या यह एक तथ्य नहीं है कि यदि आपस में झगड़ा हो जाता है-साधारणतया परिवारों में अक्सर झगड़े हो भी जाते हैं-तो यदि विधेयक में ये प्रावधान रहते हैं, तो वे दम्पत्ति को किसी भी समय झगड़े के लिए प्रोत्साहित करेंगे अथवा यहाँ कि वे झगड़ों के हल के लिए न्यायालय की शरण लेंगे और महोदय, यह निम्नस्तरीय है-कि एक महिला अपने पति पर और एक पति अपनी पत्नी पर बड़ी आसानी से परगमन का आरोप भी लगा दे और हर ओर ऐसे लोग भी मिल जाएंगे जो परिवारों को विघटित करना चाहते हैं। इस तरह अत्यंत तुच्छ कारणों का परिणाम यह होगा कि तलाक के मामले सामने आ जाएँगे। हमारा समाज अनेक शताब्दियों से अनेक आक्रमणों के बाद भी टिका रहा है और आक्रमणों के होते हुए भी विश्व में एक आदर्श संस्था के रूप में सफलतापूर्वक खड़ा हुआ है, जिसका कारण 'पवित्र भक्ति' की अंतर्निहित व्यवस्था है। और ये प्रावधान उन समुदायों की भी सहायता नहीं करते, जो अपने रिवाज के अनुसार तलाक का सहारा लेते हैं। ये प्रावधान बड़ी बाधाएं उत्पन्न करते हैं और उन्हें न्यायालय की शरण में जाने के लिए मजबूर करते हैं। ये हमारी संस्कृति और सभ्यता और आदर्श वैवाहित जीवन के हमारे स्वीकार्य आदर्शों के विरोधी हैं। एक तर्क हमेशा दोहराया जाता है, कि इस उपाय के संबंध में कुछ भी मूलभूत अथवा क्रांतिकारी नहीं है, और विवाह तथा तलाक संबंधी प्रावधान एक पारस्परिक अनुमति और समर्थन करने वाली प्रकृति का है। यदि ऐसा है, तो धारा 5 और 51 तक इन सभी प्रावधानों को हटा दिए जाए और विधेयक में यह धारा जोड़ दी जाए कि प्रत्येक हिन्दू इतना सक्षम हो सके कि वह अपनी पसंद के व्यक्ति से विवाह कर सके। यही एक समर्थन देने लायक हल भी होगा। वह व्यक्ति बहुत अच्छी तरह से, अपने जोखिम पर, अपनी बहन से भी विवाह कर सकता है। अत: इतने सारे अनुच्छेदों के साथ एक इतने व्यापक विधेयक की कोई उपयोगिता नहीं है। क्यों न इनहें समाप्त कर दिया जाए और एक सामान्य अनुच्छेद की व्यवस्था की जाए, जो एक आदर्श एवं सरल बात होगी साथ ही यह उस सभ्यता और परिवेश के लिए भी एक आदर्श होगा, जिससे हम गुजर रहे हैं। अत: मेरा कहना है कि हिंदू पूर्वी दृष्टिकोण से ये प्रावधान पूर्णत: अरुचिकर हैं, अत: उन्हें इस प्रकार के किसी विधेयक में शामिल नहीं किया जा सकता और न ही बर्दाशत किया जा सकता है।

मैं अगले मुद्दे पर आता हूँ। इस विधेयक के प्रावधानों में, धारा 91 अपेक्षित धारा है-एक महिला को चाहे विरासत के द्वारा अपने पिता से अथवा ससुर से अथवा किसी

अन्य स्रोत से जो सम्पत्ति प्राप्त होती है, वह पूर्णतया उसी की सम्पत्ति होगी और महिला की सम्पत्ति के अंतरण के नियम धारा 106 से 109 में दिए गए हैं। पर ये प्रावधान पारिवारिक जीवन में शांति बनाए रखने में सहायक नहीं हैं, इनकी प्रवृत्ति विघटनकारी है। यहाँ भी प्रत्येक प्रावधान हिंदू आदर्शों की स्वीकार्य अवधारणा का विरोध करता है और आप देखेंगे कि एक महिला को जो पैतृक सम्पत्ति मिलती है और धारा 91 के अनुरूप जो पूर्णतया उस महिला की ही सम्पत्ति होगी, उसे धारा 106 से 109 के अंतर्गत निचले क्रम पर रखा जाएगा। इस प्रकार उत्तराधिकार की सम्पत्ति पति और बच्चों में समान रूप में बंट जाएगी। यदि पति अथवा बच्चे नहीं हों, तो विधेयक के अंतर्गत कौन व्यक्ति सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होगा। इसमें माता-पिता और पति के संबंधी हो सकते हैं। मैं इस सदन के प्रत्येक माननीय सदस्य से विनम्र और सादर भाव से पूछता हूँ कि क्या हिन्दुओं की इस धरती पर कोई ऐसा माता-पिता हैं, जो अपनी पुत्री से सम्पत्ति प्राप्त करना चाहेंगे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्यों नहीं? इसमें क्या नुकसान है?

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : शायद मेरे माननीय मित्र भारत से नहीं विदेश से आए हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मैं दक्षिण भारत से हूँ।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : भारत में कोई भी माता-पिता शायद ही अपनी पुत्री से कुछ प्राप्त करने की सोचेंगे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : पंजाब में ऐसा होता होगा।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : पूरे उत्तर भारत में ऐसा होता है। दक्षिण भारत के बारे में अधिकारपूर्वक नहीं कह सकता। किंतु जहाँ तक उत्तर भारत का संबंध है यह विचार ही घृणास्पद है। निस्संदेह यह नियम उन लोगों के लिए अपवाद स्वरूप है जो धन और सम्पत्ति से बड़ा कुछ भी नहीं मानते। उनके लिए धर्म और चिन्ता का विषय नहीं है। परन्तु मैं उन अपवादों की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं उत्तर भारत के साधारण माता-पिता की बात कर रहा हूँ। वे अपनी पुत्री से कुछ स्वीकार करें यह सोचकर ही उनकी आत्माएं विद्रोह कर देंगी। कन्यादान के समय जब एक पिता और माँ एक-साथ बैठकर अपनी पुत्री का हाथ वर के हाथ में देते हैं, तथा उसे देहज और आभूषण आदि भी देते हैं, उसके बाद हमारे देश में इस हिस्से में, माता-पिता अपनी पुत्री के घर का पानी तक नहीं पीते।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : हमारे यहाँ कि स्थिति इतनी खराब नहीं है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : यह आपके यहाँ एक रिवाज हो सकता है या प्रचलन हो सकता है, किन्तु हमारे यहाँ अधिकाशं लोग इस विचार का विरोध करेंगे। वे

पुत्री से उसकी पैतृक सम्पत्ति लेने के कल्पना भी नहीं कर सकते। इस प्रकार हस्तांतरण के नियमों का सम्पूर्ण ताना-बाना हिन्दू विरोधी विचारों पर आधारित है। यदि श्री भारती थोड़ा कष्ट करके उत्तर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में जाएं, तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि, माता-पिता की बात तो छोड़ ही दें, एक गांव के निवासी उस दूसरे गांव में पानी तक नहीं पीते, जहाँ उनके गांव की बेटी ब्याही गई हो।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मुझे बताया गया है कि वे ऐसे गांवों में जाते ही नहीं हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : अस्तु सम्पत्ति हस्तांतरण संबंधी नियमों में माता-पिता के बाद, एक स्त्री की सम्पत्ति पाने का हक अन्य किसी व्यक्ति को है? इसके लिए व्यवस्था है कि सम्पत्ति पति के रिश्तेदारों को जाए। यह भी घृणास्पद है, क्योंकि इससे परिवारों से पुश्तैनी दुश्मनी उत्पन्न होगी। यदि पुत्री को अपने पिता से सम्पत्ति मिलनी है, तो पति के रिश्तेदारों को वह सम्पत्ति क्यों मिलनी चाहिए?

इसीलिए तो हमारे कानून निर्माताओं ने 'स्त्री धन' की अनेक श्रेणियां बनाई हैं, जो संबंधियों की विभिन्न श्रेणियों के अनुसार है। पर आप हमारे कानून-निर्माताओं, जिन्होंने वे महत्वपूर्ण प्रावधान बनाए के उच्चतर उद्देश्यों को समझ पाने में सक्षम नहीं हैं, और आप केवल उन्हें सरल बनाने के लिए उनके आदर्शों को कुर्बान कर देना चाहते हैं। 'स्त्रीधन' की हमारी स्वीकार्य धारणाओं के अनुसार, यदि पिता की ओर से सम्पत्ति प्राप्त हुई हो, तो पिता के रिश्तेदार उसके हकदार होते हैं। तो इसी तरह का कोई प्रावधान अनुच्छेद 106 से 109 में शामिल क्यों नहीं किया जाता। वह हिन्दू विचारधारा को अधिक स्वीकार्य होगा।

अब मैं विधायक के अन्य प्रावधानों पर आता हूँ। जिस दिन से यह विधेयक प्रभावी होगा, सम्पत्ति के संयुक्त अधिभोग को सामान्य अधिभोग में परिवर्तित मान लिया जाएगा। विधेयक की धारा 115 में एक प्रावधान यह किया गया है कि प्रत्येक वारिस को छूट दी गई है कि वह न्यायालय की शरण ले सकता है पारिवारिक सम्पत्ति के बंटवारे का दावा कर सकता है। क्या यह प्रावधान उन परिवार में शांति बनाए रखने और उसके रखरखाव में सहायक सिद्ध होगा? पिता की मृत्यु के बाद, पुत्री, पुत्र, एक पूर्व-मृत पुत्र की पत्नी इत्यादि न्यायालय की शरण लेंगे और अनुच्छेद 115 में उल्लिखित अपेक्षानुसार बंटवारे का दावा करेंगे। यह इस्लामिक कानून की तरह होगा, जो पूरी तरह हिंदू विचारधारा का विरोधी है और यहाँ इस प्रकार के किसी विधेयक में सहन नहीं हो पाएगा।

यह दावा किया जाता है कि यह संहिता मतभेद सुलझाएगी, क्योंकि यह एक ऐसा व्यापक कानून होगा जो हिंदूधर्म की प्रत्येक व्याधि का उपचार कर देगा। क्या इस विधेयक में कोई त्रुटियां नहीं हैं और जब तक उनमें सुधार किया जाएगा, क्या वे हिंदूसमाज को छिन्न-भिन्न नहीं कर देंगी? धारा 88 और 89 के अंतर्गत, आप धर्मनिष्ठ बाध्यताओं के

सिद्धांतों का निराकरण कर सकते हैं। धारा 89 के अंतर्गत आपने व्यवस्था की है कि संयुक्त परिवार के बकाया शुल्कों का भुगतान परिवार के सदस्यों द्वारा किया जाएगा। यदि पिता की मृत्यु हो जाती है, तो ऐसी स्थिति में आपने क्या प्रावधान किया है? अंतिम संस्कार के खर्चों को कौन वहन करेगा अथवा श्राद्ध की व्यवस्था कौन करेगा, अथवा ऐसे अवसरों से जुड़े अन्य धर्मार्थ कार्यों के लिए खर्च कौन वहन करेगा। एक बार इस संहिता को संविधान में शामिल किए जाने पर क्या विभिन्न वारिसों के बीच कोई झगड़ा और पुश्तैनी दुश्मनी नहीं होगी? एक पिता की मृत्यु के बाद प्रत्येक पुत्र और पुत्री अपने पिता की सम्पत्ति को हजम करने में इतने व्यस्त हो जाएँगे कि वे श्राद्ध आदि करने के अपने उन कर्तव्यों को भूल जाएंगे, जो किसी सम्मानीय परिवार के लिए अनिवार्य है। इस संबंध में विधेयक में कोई प्रावधान ही नहीं किया गया है।

क्या यह संहिता हिंदू संयुक्त परिवार के लिए है? हिंदू कानून में सहसमांशिता वाली सम्पत्ति और संयुक्त परिवार वाली सम्पत्ति में अन्तर है। भारत में ऐसे कितने सारे परिवार हैं, जो अपना व्यवसाय कर रहे हैं? क्या विधेयक में उनके लिए कोई प्रावधान है? संयुक्त परिवार के अंतर्गत व्यवसाय में वसीयत कैसे की जाएगी?

आप इस संहिता की व्यापकता का दावा करते हैं। क्या आपने एक दत्तक पुत्र के लिए कोई व्यवस्था की है? धारा 52 से 54 के अंतर्गत 18 वर्ष की आयु पूर्ण करनेवाला एक हिंदूयुक्त अपनी पत्नी की सहमति से एक पुत्र गोद ले सकने का पात्र है। पुत्र गोद लेने के बाद यदि एक पिता के अपने यहां एक पुत्र हो जाता है, तो पैतृक सम्पत्ति में उस पुत्र के क्या अधिकार होंगे? क्या आपकी संहिता इस समस्या के हल का कुछ सुझाव देती है? हमारे हिंदू कानून-निर्माताओं अथवा स्मृतिकारों ने देश के विभिन्न भागों के लिए पर्याप्त प्रावधान किए हैं। पिता द्वारा एक पुत्र को गोद लेने के बाद यदि उसके परिवार में पुत्र का जन्म होता है, तो इस संहिता में क्या स्थिति होगी?

'रामभाग' में उसे आधा हिस्सा मिलता है, 'मिताक्षर' में उसे एक तिहाई और बॉम्बे प्रेसिडेंसी में उसे एक चौथाई हिस्सा मिलता है? इस बारे में आपने क्या प्रावधान किया है? यदि नहीं, तो क्या यह भ्रम उत्पन्न नहीं करेगा और वह भी दुखदायी भ्रम। क्या आपने संयुक्त परिवार की सम्पत्ति के बंटवारे का तथा कई अन्य बातों का प्रावधान किया है, जो हिंदू कानून की शाखाओं के लिए अनिवार्य और जटिल है? अतः मेरा सादर यह कहना है कि यह विधेयक ऐसी समस्याएँ और प्रश्न उत्पन्न करेगा, जिनका उत्तर देना बहुत कठिन होगा।

तो प्रश्न यह उठता है कि उस पुत्र के अधिकार और कर्तव्य क्या होंगे, जिसका संयुक्त परिवार की सम्पत्ति में कोई हिस्सा नहीं है। वर्तमान परिस्थितियों में, एक पुत्र अपने जन्म के साथ ही सम्पत्ति में अधिकार पा लेता है और वह एक ऐसा कवच है जिसे वह अपने रहन-सहन शिक्षा और अन्य बातों के लिए उपयोग कर सकता है। आप

मुझे अपने विधेयक की धारा 126 और 128 के प्रावधानों की जानकारी दे सकते हैं, जिनमें उल्लेख है कि प्रत्येक पति का कर्तव्य है कि वह अपनी पत्नी की देखभाल करें, और पत्नी उससे किसी आधार जैसे कुष्ठरोग आदि के कारण अलग गुजारा भत्ते देने का दावा कर सकती है। इससे मुकदमेबाजी के लिए रास्ता खुल जाता है और वकीलों की चांदी हो जाती है। और धारा 128 में, आप कहेंगे कि बच्चों और बुजुर्ग माता-पिता के सिर गुजारे का प्रावधान किया गया है। किन्तु धारा 126 और 128 के अंतर्गत क्या आपने बड़े प्रभावी ढंग से उनके अधिकारों की रक्षा की है? मेरा कथन है कि नहीं की है। अपने उन्हें उस स्थिति से भी बदतर स्थिति में रख दिया है, जो उन्हें वर्तमान हिंदू कानून में प्राप्त है। वर्तमान हिंदू कानून के तहत एक पुत्र को विरासत में यह अधिकार मिलता है कि वह पारिवारिक सम्पत्ति में से अपना गुजारा कर सकता है, और यदि पिता अथवा प्रबंधक अथवा परिवार के कर्ता कर्तव्यपरायण नहीं हैं और पुत्र के हितों की नहीं सोचता तो वह पुत्र समस्या के हल के लिए न्यायालय में जा सकता है। यहाँ तक कि वह बँटवारे का दावा भी कर सकता है। हिंदू कानून का प्रत्येक विद्यार्थी यह जानता है कि चूंकि हिंदू कानून में एक अवयस्क को बंटवारे के दावे के संबंध में बहुत सीमित अधिकार प्राप्त हैं, यदि पिता अथवा प्रबंधक अथवा परिवार का कर्ता अवयस्क को क्षति पहुंचाने और उससे द्वेष के कारण अपनी शक्ति का दुरुपयोग करता है, तो उस अवयस्क के लिए कानून का रास्ता खुला होता है और वह अपने बंटवारे के लिए अधिकार को लागू कराने के लिए न्यायालय की शरण में जा सकता है। यह एक मूल्यवान अधिकार है और यहाँ आप उस मूल्यवान अधिकार को छीन रहे हैं।

इसी प्रकार आप कहते हैं कि धारा 126 में आपने पत्नी के रहन-सहन के लिए तथा धारा 128 में बच्चों और बुजुर्ग माता-पिता के रहन-सहन के लिए प्रावधान किए हैं। यदि किसी पति के पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है, यदि वह कमा नहीं सकता, यदि उसके पास अपने गुजारे के लिए भी कुछ नहीं है, तो वह अपनी पत्नी को कैसे पाल सकता है? अत: मैं कहता हूँ कि पत्नी को दिया गया यह कृत्रिम अधिकार एक शर्म की बात है और एक कागजी अधिकार भर हैं। वर्तमान हिंदू कानून में प्रत्येक पत्नी को अपने रहने और गुजारा करने संबंधी बहुमूल्य अधिकार प्राप्त हैं। और यदि प्रबंधक अथवा कर्ता इस अधिकार का दुरुपयोग करता है, तो वह न्यायालय के माध्यम से अपना अधिकार प्राप्त कर सकती है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : भले ही उसके पति के पास एक फूटी कौड़ी न हो।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मैं संयुक्त परिवार की सम्पत्ति की बात कर रहा हूँ। यदि आप एक छोटे से कानून के द्वारा निर्णय लेते है तो मामला अलग होगा कि सम्पत्ति का हरेक हिस्सा गायब हो जाना चाहिए और प्रत्येक सम्पत्ति का समाजीकरण और राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। किन्तु, संयुक्त परिवार को बनाए रखते हुए, आप अवयस्कों,

विधवाओं, और महिलाओं को उनके उन बहुमूल्य अधिकारों से वंचित कर रहे हैं, जो वर्तमान हिंदू कानून में विद्यमान है। समानता, जो कि एक ढोंग है, और कागजी समानता के नाम पर आप एक गलत काम कर रहे हैं, जिसे ठीक कर पाना बहुत कठिन होगा। अतः मेरा कहना है कि इस छोटे से कानून की हर दृष्टिकोण से जांच करना न केवल हिंदूकानून के स्वीकार्य सिद्धांतों का विरोध करना है, अपितु हिंदू समाज में एक ऐसा भ्रम उत्पन्न करने को बाध्य होने जैसा है, जिससे उबरना अथवा ठीक कर पाना बहुत कठिन कार्य है।

श्रीमान्, इससे पहले मैं अपनी बात समाप्त करूँ मैं सार रूप से बताना चाहता हूँ कि 2 अप्रैल को और आज मैंने क्या कहा है। मैंने कहा था कि हिंदू कानून के संहिताकरण की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं है और न ही इसकी कोई इच्छा व्यक्त की गई है। यह न तो आवश्यक है न ही अपेक्षित। देश की न्यायिक राय के अनुसार इसकी कोई अपेक्षा भी नहीं की गई है। इसके इस प्राधिकार को लेकर कोई मतभेद नहीं हैं कि इसके लिए विधायिका के हस्तक्षेप के अधिकार की आवश्यकता पड़ती हो। इस प्रकार के उपाय के लिए जनता की कोई मांग भी नहीं है। राउ समिति ने जिन साक्ष्यों का सहारा लिया, मैंने उनका मात्रात्मक विश्लेषण अपने 2 अप्रैल के अभिभाषण में किया था और मैंने कहा था कि राउ समिति के विधेयक में शामिल प्रत्येक नवीन विचार और परिवर्तन को लेकर, राउ समिति द्वारा दर्ज साक्ष्य में ली गई राय का जबरदस्त विरोध हुआ था, जिसे वर्तमान हिंदू संहिता विधेयक में और ज्यादा बिगाड़ दिया गया है जैसा कि प्रवर समिति के कार्य में भी प्रतीत होता है। तलाक के प्रश्न पर, सांस्कारिक सह-सिविल विवाह के मामले में, प्रत्येक बिंदु पर, धारा 21 के अंतर्गत पारंपरिक विवाह के संबंधित व्यक्ति की इच्छा का सहारा लेकर सिविल विवाह में तब्दील करने को बाध्य किया जा रहा है, जिसका विरोध हुआ है और देश के कोने-कोने से विरोध हुआ है। कोने-कोने से प्राप्त यह अभूतपूर्व राय संयुक्त परिवार को समाप्त करने के विरोध में था। अतः प्रत्येक महत्वपूर्ण बिंदु पर, अधिकांश सम्मतियाँ राउ समिति विधेयक के विरोध में थीं। अब भी, देश के कोने-कोने से, न्यायिक क्षेत्रों से, बार-एसोसिशनों से, अन्य नागरिकों से जो रुझान मिलते जा रहे हैं, वे सभी समान रूप से एक ही राय रखते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकार के क्रांतिकारी उपाय की कोई आवश्यकता नहीं है। अतः, मैंने कहा था और में आज पुनः दोहराता हूँ कि हिंदू कानून का संहिताकरण न तो इच्छित है न ही आवश्यक।

मैंने यह इंगित किया है कि विधेयक में उल्लिखित विवाह के प्रावधान, विवाह के लिए भ्रमात्मक हैं। यह वस्तुतः सांस्कारिक विवाह के वेश में हिंदू संहिता में इस्लामिक और ईसाई विवाहों के सिद्धांतों की शुरुआत हैं। किसी भी हिंदू के लिए यह शर्मनाक होगा कि वह इस प्रकार विवाह करे जो किसी अन्य की इच्छा के अनुसार बदलकर एक सिविल विवाह में बदल दिया जाए। इसे बर्दाश्त नहीं किया जा सकता।

श्री एस. नागप्पा : यह विधेयक सांस्कारिक विवाहों पर रोक नहीं लगा रहा।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मैं आपके तर्क का पहले ही उत्तर दे चुका हूँ। यह ऐसा तर्क है, जिसे सदन में और बाहर अक्सर दोहराया जाता है, कि यह एक अधिकार देने वाला, एक अनुमति देने वाला उपाय है। यदि ऐसा है, तो सब कुछ समाप्त कर दिया जाए और विधेयक में एक बहुप्रयोजनीय धारा रखी जाए कि कोई भी किसी से भी विवाह करने के लिए सक्षम है। इससे आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी। आपने सांस्कारिक विवाह को कामोत्तेजक बना दिया है? आपने विधेयक में सांस्कारिक विवाह का जो चरित्र उपलब्ध कराया है, वह उपहास मात्र है, सांस्कारिक विवाह के प्राचीन मूल्यों का अपमान है। यह केवल यथार्थ के प्रति लोगों को धोखा देने जैसा है, उन्हें यह ऐसा विश्वास दिलाने जैसा है कि यह स्थापित व्यवस्था के विरुद्ध नहीं है। यह एक कृत्रिमता है, जो हिंदू समाज के प्रति अपराधकर्म करने जैसा है। कोई भी स्वाभिमानी हिंदू शायद ही इस व्यवस्था को बर्दाश्त कर पाए। अतः बेहतर होगा कि धारा 5 से 52 तक में उल्लिखित प्रावधानों को हटा दिया जाए। ये पूर्णतया हिंदू विचारध, हिंदू संस्कृति और हिंदू सभ्यता के विरुद्ध है। विवाह के इन प्रावधानों के संबंध में यही मेरा कथन है। जहाँ तक तलाक की धाराओं का संबंध है, मैं पहले ही अपनी बात रख चुका हूँ। दत्तकग्रहण के बारे में, मैंने कहा था और आज भी वही बात दोहराई है कि दत्तकग्रहण की अवधारणा हिंदू कानून की उपज है, और इस आधुनिक युग में, आप जिन्हें अपने विकसित विचार कहते हैं, यदि आप दत्तकग्रहण को आदर्श नहीं मानते हैं, तो दत्तकग्रहण की अवधारणा को पूरी तरह समाप्त कर दें। किन्तु आपने इस बारे में अनाप-शनाप व्यवस्था की है दत्तकग्रहण के लिए वैसी अवधारणा की व्यवस्था न करें। विधेयक के प्रावधानों के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक हिंदू, एक पुत्र गोद ले सकता है। इसमें गोत्र का कोई प्रतिबंध नहीं है, जाति का कोई प्रतिबंध नहीं है, प्रतिष्ठा का कोई प्रतिबंध नहीं है, और यह व्यक्ति-विशेष पर छोड़ दिया गया है कि वह किसी को भी गोद ले सकता है। पर जिन्हें, हिंदू कानून की संहिताओं की पूर्ण जानकारी है, वे भली-भाँति जानते हैं कि परिवार में किसी अजनबी को गोद लेकर आने के लिए कानून के क्या स्रोत हैं। न्यायिक निर्णयों की पवित्रता और प्राधिकार के पीछे पूर्णतः स्थापित रीति-रिवाज और प्रथाएं हैं। जिनमें समान गोत्र का एक परिवार का केवल एक सदस्य गोद लिया जा सकता है। यह कदम उठाए जाने पर घातक परिणामों की परवाह किए बिना, उन सभी प्रथाओं; उन सभी स्थापित रीति-रिवाजों को आसानी से विदा किया जा रहा है। इस प्रकृति वाले प्रावधान के पालन की बाध्यता के बहुत भयानक परिणामों को सोचकर ही मैं सिहर उठता हूँ। इस तरह की गोद लेने की प्रक्रिया की व्यवस्था करने की बजाय बेहतर होगा कि इस प्रक्रिया को समाप्त ही कर दिया जाए। वस्तुतः मुझे यह टिप्पणी करने की अनुमति दें-और मैं पूर्ण जिम्मेदारी के साथ यह कहता हूँ-कि इस विधेयक के प्रायोजकों में हिंदू संस्कृति से संबंधित हर बात के प्रति एक अन्तर्निहित विरोध एक अन्तर्निहित विद्वेष है, और इसी कारण हम देखते है कि इस प्रकार के प्रावधान, कोई विचार किए, बिना और यह जाने बिना कि दत्तकग्रहण की

अवधारणा के पीछे हिंदू कानून-निर्माताओं की क्या मंशाए थीं, इस विधेयक में शामिल किए जा रहे हैं। हिंदू कानून के अंतर्गत दत्तकग्रहण का एक-मात्र उद्देश्य यह था कि कोई व्यक्ति अपनी मृत्यु के पश्चात् किए जाने वाले धार्मिक कृत्यों की पूर्ति के लिए एक पुत्र पा सकता था। दत्तकग्रहण की अवधारणा का एकमात्र उद्देश्य यही था किन्तु यह व्यवस्था करके कि किसी भी ऐसे-गैरे का दत्तकग्रहण किया जा सकता है, आप इस अवधारणा की जड़ ही काट रहे हैं। अत:, ऐसा कोई प्रावधान न करें। बेहतर है कि दत्तकग्रहण की अवधारणा को समाप्त कर दें। अनेक समाजों में यह व्यवस्था है ही नहीं। यदि आप इस व्यवस्था के इतने शत्रु हैं, तो इसे अनंतकाल तक जारी रखने की जरूरत क्या है? अत: दत्तकग्रहण अवधारणा का उपहास बिल्कुल न करें।

महोदय, मैं बताना चाहूँगा कि इस विधेयक में प्रत्येक प्रावधान पर एक ऐसा लांछन है जो हिन्दू-विरोधी है और इसलिए किसी भी हिंदू को यह स्वीकार्य नहीं हो सकता। अत: मेरे लिए तो यह विधेयक इसके प्रायोजकों के द्वारा किया गया एक कपटपूर्ण प्रयास है, जिसमें हिंदूओं को उनकी भारतीय परम्पराओं से दूर अरब और जेरूसलम के तरीके सिखाने का प्रयास है। तो इस तरह की हिंदू संहिता की आवश्यकता क्या है? आप कलम की एक नाक से पूरे हिंदू समुदाय के लिए भारतीय उत्तराधिकार अधिनियिम, 1925 के प्रावधानों का विस्तार क्यों नहीं करते? यह सुविधाजनक और सरल तरीका-और हम सरल संविधान के प्रति बहुत आसक्त हैं-हमारे पूरे हिंदू समाज के लिए उपलब्ध कराना भी बहुत ही सरल होगा।

इससे पहले कि मैं अपनी बात समाप्त करूँ, मैं सोचता हूँ कि यह मेरा कर्तव्य है, और एक सत्यनिष्ठ कर्तव्य है कि मैं इस बारे में एक चेतावनी वाली टिप्पणी भी करूँ। आप बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि हिंदू कानून एक ऐसा कानून है, जो कहीं बाहर से नहीं आया है। यह ऊपर से नहीं थोपा गया है, यह एक अलौकिक शक्ति का सृजन नहीं है, यह किसी राजा अथवा विधायिका के हुक्मनामे का परिणाम नहीं है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। यह पिछली कई शताब्दियों से होने वाला स्वाभाविक विकास है। इसमें स्मृतियां और प्राचीन पुस्तकों के मूल पाठों द्वारा कानूनों का सृजन नही हुआ है; उनमें केवल हिंदू कानून के स्वीकृत सिद्धांतों का उल्लेख और व्याख्या की गई है किन्तु जैसा कि उन सिद्धांतों के बारे में मूल पाठों में पढ़ा भी जा सकता है, वे हिंदू समाज को चलाने वाली शक्ति कभी नहीं रहे हैं। हिंदू समाज को चलाने वाली शक्ति है, उसकी सतत् विकसित होती प्रथाएं और रीति-रिवाज और, वे भी समाज के विभिन्न वर्गों को चला रहे थे। यह विकास स्वाभाविक भी था। वस्तुत:, यह यथार्थवादी दृष्टिकोण से देखें, तो हिंदूसमाज इस सदन की भांति कुछ निर्वाचित व्यक्तियों की तरह काम नहीं करता, बल्कि लगातार सत्रों में काम करने वाली पूरे समाज की विधायिका है, जो आवश्यकतानुसार अपने कानून को संशोधित और संगठित करती है। यही हिंदू कानून की सर्वोच्य सुंदरता है। और अब उसी को आप विकृत कर रहे हैं, उसे एक छोटा-सा कानून बनाकर तोड़ रहे हैं, जिसके लिए

समाज की सदैव परिवर्तनशील परिस्थितियों से इसकी अनिवार्यता, नम्यता, गतिशीलता, स्वाभाविकता और स्वीकार्यता छीन रहे हैं। महोदय, इस सदन का एक विनम्र सदस्य होने के नाते, यह बताना मेरा कर्तव्य है कि इसमें हस्तक्षेप करने से पहले आपको अत्यंत सावधानी बरतनी चाहिए। हमारे कानून का प्रादुर्भाव सदियों के विकास का परिणाम है और इसके पुरातन संस्थानों, रिवाजों और प्रथाओं के साथ हस्तक्षेप करने से पहले आपको एक बात अवश्य दिमाग में रखनी चाहिए। हमारा भारत इलाहाबद और दिल्ली जैसे बड़े शहरों में नहीं बसता है। असली भारत पांच लाखो गांवों में बसता है। ग्रामीणों का जीवन अपने समाज के ताने-बाने में इतने करीब से गुंथ चुका है कि इस नए कानून के द्वारा आप जो भी संशोधन करें, उनसे उनकी पुरातन प्रथाओं, रिवाजों, जिनका वे सदियों से पालन कर रहे हैं, के छिनने से पहले वे अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसका विरोध भी करेंगे। हिंदू समाज का कोई भला किए बिना, आप केवल कुछ असंतुष्ट व्यक्तियों का मार्ग प्रशस्त करेंगे जो इस नवीन कानून का लाभ लेना चाहते हैं।

डॉ. मोन मोहन दास (पं. बंगाल) : क्या वह इस सदन के कुछ सदस्यों पर आरोप नहीं लगा रहे हैं? उन्होंने एक ही बात को कोई बार दोहराया है।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव : मैंने इस सदन के किसी सदस्य का जिक्र नहीं किया है। मेरे माननीय मित्र को सामने वाले के विचार सुनने के लिए सब्र और सहनशीलता रखनी चाहिए। मेरा कहना यह है कि आप इस छोटे से कानून से हिंदू कानून की स्वाभाविक वृद्धि और विकास को रोक नहीं सकते और यदि आप इसे पारित करते हैं, तो आप हिंदू कानून में कुछ जोड़ने की बजाय इसकी सुंदरता को बिगाड़ देंगे। यह छोटा-सा कानून अपनी प्रकृति में इतना विघटनकारी और विनाशकारी है कि इसे व्यवहार में लाने के प्रति एक रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने की कल्पना तक मुश्किल है। माननीय प्रधानमंत्री और सदन के नेता ने कल यह सुझाव दिया था कि हमें एक औपचारिक अथवा अनौपचारिक बैठक में करना चाहिए ताकि यह विचार हो सके कि किन परंपरावादी और गैर-परंपरावादी अनुच्छेदों पर सहमति बन सकती है। इस मुद्दे पर मैं उनके साथ हूँ। किन्तु मैं सोचता हूँ कि विधेयक की रचना एक मानसिक और मनोवैज्ञानिक नजरिये के साथ की गई है, जो हिंदू विचारधारा के लिए पूरी तरह असंगत और अस्वीकार्य है। फलस्वरूप, इस उपय के लिए एक रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने के हमारे सतत् प्रयासों के बावजूद, ऐसा करना बहुत कठिन होगा। इसे अपनाने के लिए सरकार के पास सबसे सुरक्षित तरीका इस उपाय को रोक देना होगा और वयस्क मताधिकार के द्वारा चयनित विधायिका के साथ-साथ हिंदू समाज के संपूर्ण ढांचे को बदलने के लिए निर्वाचन के द्वारा एक शासन देश के साथ एक अधिक उपयुक्त समय की प्रतीक्षा की जा सकती है। मैं कहता हूँ कि जब तक ऐसा शासनादेश नहीं मिल जाता, और मेरा प्रश्न है और यह तीखा प्रश्न इस कानून उपयुक्तता के बारे में है ताकि हिंदू समाज के इस अत्यावश्यक महत्व से संबंधित उपाय से निबटा जा सके।

इन्हीं शब्दों के साथ, महोदय, मैं अपनी बात को विराम देकर अपनी सीट पर जा रहा हूँ।

श्री लोकनाथ मिश्रा (उड़ीसा : सामान्य) : एक व्यवस्थागत आपत्ति है। यद्यपि मैं इस विधेयक के विचार-विमर्श का विरोध नहीं करना चाहता, मैं सोचता हूँ कि जो संविधान हमने हाल ही में पारित किया है, के कारण इस विचार-विमर्श को पूर्णतया रोक दिया जाएगा। निस्संदेह, यह तर्क दिया जा सकता है कि वह अभी प्रभावी नहीं हुआ है। किन्तु हम बिल्कुल आश्वस्त हैं कि हम अभी इस विधेयक को पारित नहीं कर रहे हैं और बिल के पारित होने तक संविधान प्रभावी हो ही जाए। यदि आप मुझे अनुमति दें, मैं यह बताने के लिए विस्तारपूर्वक वह कारण भी बता सकता हूँ कि यह विधेयक संविधान के विरुद्ध है।

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने आपकी आपत्ति को ध्यानपूर्वक सुना है। नया संविधान अभी तक क्रियान्वित नहीं हुआ है। वह अभी प्रभावी नहीं हुआ है। मैं इस प्रश्न पर कोई निर्णय नहीं दूंगा कि यदि यह प्रभावी होता है तो क्या यह इस विधेयक के कानून बनने की राह में रोड़ा बन जाएगा। वर्तमान संविधान के अंतर्गत यह सदन इस विधेयक के आगे बढ़ाने के लिए पूर्णतया सक्षम है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी (मद्रास : सामान्य) : इस उपाय की महत्ता और इस तथ्य के मद्देनजर कि बोलना चाह रहे लोगों की संख्या काफी ज्यादा है, क्या अध्यक्ष महोदय अपने विवेक का इस्तेमाल करते हुए इस मुद्दे पर विचार करेंगे और एक समय-सीमा लागू करेंगे?

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

कुछ माननीय सदस्य : हाँ, हाँ।

माननीय उपाध्यक्ष : कृपया व्यवस्था बनाए रखें।

श्री एम. तिरुमला राव (मद्रास : सामान्य) : यह मुद्दा श्री सिधवा द्वारा भी उठाया गया और आपने उसका निपटान भी किया था।

माननीय उपाध्यक्ष : मि. सिधवा ने एक अन्य मुद्दा उठाया था। वह जानना चाहते हैं कि क्या सदन में कल यह चर्चा जारी रहेगी और उसके लिए कितना समय निर्धारित किया गया है। मेरा उत्तर है कि यह एक सरकारी विधेयक है और यह सरकार पर है कि वह दिनों की संख्या निर्धारित करे। स्थिति यह है कि अध्यक्ष केवल यह बता सकता है कि किसी विधेयक विशेष पर होने वाली चर्चा पर्याप्त है अथवा नहीं। जहाँ तक इस विधेयक का संबंध है, माननीय सदस्य अच्छी तरह जानते हैं कि कोई समय-सीमा लागू नहीं की जा सकती। (बहुत अच्छा!)।

माननीय सदस्य कृपया प्रतीक्षा करें और देखें। इस विधेयक पर सामान्य चर्चा काफी पहले 24 फरवरी, 1949 को शुरू हुई थी। यह चर्चा 25, 26, 28 फरवरी, 1 मार्च, 1 अप्रैल और 2 अप्रैल को जारी रही। यह माननीय सदस्य ने छह घण्टे और आठ मिनट लिए। कुल मिलाकर हमने 6 दिन, 9 घण्टे और 20 मिनट इस में व्यतीत किए। इस विषय पर अभी तक केवल 14 माननीय सदस्य बोल चुके हैं। अंतिम वक्ता जिन्होंने अभी अपनी चर्चा समाप्त की है, वे पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव हैं, जिन्होंने 2-4-49 को अपराह्न 3.15 बजे चर्चा आरंभ की थी, जो 5 तारीख तक दोपहर 1.45 बजे तक जारी रही। आज भी वह 11.50 बजे से 12.57 बजे तक बोले। इस गति से, यदि सभी माननीय सदस्यों को बोलने का अवसर दिया जाएगा। तो हमें लगभग एक वर्ष तक बैठना होगा। सदस्यों को बोलने का मौका दिया जाना चाहिए। भाषणों में उठाए गए अनेक मुद्दे काफी जागरूक करने वाले हैं। भाषणों के विरुद्ध मैं कुछ नहीं कहूँगा। किन्तु, माननीय सदस्यों की ओर से बोले जाने के बड़ी संख्या में अनुरोध मुझे प्राप्त हुए हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय (पं. बंगाल : सामान्य) हम सभी इतने अंधेरे में हैं हमें हर ओर प्रकाश चाहिए।

माननीय उपाध्यक्ष : प्रकाश हर तरफ से आ रहा है। किन्तु हम यदि इसी गति से चलते है; तो हर ओर से प्रकाश नहीं आ पाएगा। अत:, मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे, जहाँ तक संभव हो, अपने भाषणों को आधे घण्टे की सीमा के भीतर समिति करें। सभी संकल्पों के लिए माननीय सदस्यों को पन्द्रह मिनट का समय दिया जाता है और इस समय के भीतर वे अच्छी तरह से अपनी बात रख सकते हैं। मैंने उन्हें दुगना यानी पर्याप्त समय दिया है। किन्तु मैं इसके लिए आग्रह नहीं करता। यह सदन को मेरा सुझाव भर है। अन्यथा, यदि कल समापन किया जाता है, तो संभवत: उस समय तक कभी-कभी जानबूझ कर अथवा अनजाने में, अनेक सदस्य बोल चुके होंगे, और तब यदि सदन के समापन की घोषणा हो तो, उसे भी स्वीकार करना होगा। मैं इस बारे में अग्रिम चेतावनी दे रहा हूँ।

माननीय श्री के. संथानम (परिवहन और रेल राज्य मंत्री) : मैं केवल यह कहना चाहता हूँ कि मैं आपके द्वारा निर्धारित समय-सीमा से पहले ही अपनी बात समाप्त कर लूंगा। मुझे आशा है कि आप मुझे अपराह्न में अपनी बात रखने की अनुमति देंगे।

माननीय उपाध्यक्ष : यह मुझे पहले नहीं कहना चाहिए था। यह निर्णय मैं माननीय सदस्यों पर छोड़ रहा हूँ, ताकि सभी सदस्यों को बराबर मौका मिल सके। सामान्यत: यदि सदन सहमत हो तो, मैंने आधे घण्टे की समय-सीमा सुझाई है।

कुछ माननीय सदस्य : सहमत हैं।

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं।

माननीय उपाध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्ड, श्री साहू कुछ कहना चाहते हैं।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा : सामान्य) : महोदय, मैं जानना चाहूँगा कि क्या उन सदस्यों को बोलने के लिए प्राथमिकता दी जाएगी, जो अपना भाषण पांच, सात अथवा दस मिनटों तक सीमित रखने के इच्छु हों।

माननीय उपाध्यक्ष : इस प्रकार, यदि मुझे उक्त सुझाव स्वीकार करना है, तो मुझे उम्मीद है कि माननीय सदस्य अपने पत्रों में मुझे यह संकेत भी देंगे कि वे कितने मिनट लेना चाहते हैं और जैसे ही उक्त समय पूरा होगा मैं घंटी बजा दूंगा।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय : इससे पहले कि आप सदन स्थगित करें, मैं केवल एक बात कहना चाहता हूँ। अपने अभी कहा है कि यह पूरी तरह सदस्यों पर निर्भर है कि वे कब समापन करना चाहते हैं। किन्तु समस्त संसदीय प्रक्रिया के अनुसार, यह अध्यक्ष पर निर्भर है कि क्या चल रही चर्चा पर्याप्त है अथवा नहीं और क्या समापन न्यायोचित है अथवा नहीं। यह एक स्थापित प्रक्रिया है और आपने भी दोहराया है कि आप इसका पालन करते हैं। उक्त बयान के मद्देनजर, क्या आप आज भी, पहले यह बात कह सकते हैं, कि कल आप समापन स्वीकार कर लेंगे?

माननीय उपाध्यक्ष : अध्यक्ष को अग्रिम तौर पर विचार करने का कोई अधिकार नहीं है। अब दोपहर का एक बज रहा है और सदन 2.30 जब तक के लिए स्थगित किया जाता है।

तत्पश्चात् दोपहर के भोजन के लिए सदन 2.30 बजे तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

दोपहर 2.30 बजे सदन पुन: शुरू हुआ, उपाध्यक्षप महोदय (श्री एम. अनंतसमनम आयंगर) ने अपना आसन ग्रहण किया।

हिंदू संहिता – जारी ....

माननीय श्री के. संथानम : श्रीमान् जैसी कि प्रवर समिति ने हिंदू संहिता तैयार की है, मैं तहे-दिल से उसका समर्थन करता हूँ। महोदय, मैं उस कानून की निर्माण-प्रक्रिया के आरंभ से ही इसकी प्रगति को देख रहा हूँ। मुझे राउ समिति के समक्ष गवाही देने का अवसर मिला था कि चूँकि यह संहिता उक्त समिति ने तैयार की है, इसमें अनेक परिवर्तन हुए हैं और, मेरी राय में, इसमें संतुलित सुधार हुआ है।

महोदय, मैं सोचता हूँ कि एक संविधान निर्माता निकाय के रूप में हमने पिछले दिनों जिस महान संविधान का कार्य पूरा किया है, उसके सामाजिक परिवेश में यह हिंदू संहिता मात्र उस कार्य को आगे बढ़ाने जैसा है। महोदय, उक्त संविधान के मूल कारक क्या हैं? यह भारत के एक राजनैतिक शक्ति के रूप में एकीकरण, सशक्तीकरण और सुदृढ़ीकरण पर आधारित है। इसी प्रकार यह विधेयक भी हिंदू समुदाय के एकीकरण, सशक्तीकरण और सदृढ़करण पर आधारित है। महोदय, जब तक हिंदू समुदाय में एकता, सशक्तता और सुदृएता नहीं आती, मुझे नहीं लगता कि जिस महान संविधान का हमने निर्माण किया है, वह सफलतापूर्वक कार्यान्वित हो सकता है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : तलाक द्वारा एकीकरण होगा?

माननीय श्री के. संथानम : बात यह है कि, राजनैतिक तौर पर आप बहुत विकसित हो सकते हैं, अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में आप समाजवाद का उपदेश दे सकते हैं, किन्तु तो भी सामाजिक स्थिरता के प्रति आस्थावास होना पूर्णतया असंगत और अवास्तविक है। भारत को सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ना है अथवा बिल्कुल नहीं बढ़ना है और मैं सोचता हूँ कि सामाजिक क्षेत्र में भी परिवर्तन और सुधार उतना ही अपरिहार्य है जितनी राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रों में हमारी प्रगति।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : विवाह में लोकतंत्र भी?

माननीय श्री के. संथानम : मेरे माननीय मित्र कुछ सकते हैं कि केवल हिंदू समुदाय के लिए एक एकीकृत संहिता की बजाय हम पूरे देश के लिए एक समान संहिता क्यों नहीं बना सकते?

तो, महोदय, जब हम संविधान का निर्माण कर रहे थे तो कई लोग कहते हैं कि हमें प्रान्तों की क्या आवश्यकता है, हम भारत सरकार के अधिनियम के अंतर्गत उक्त निर्माण क्यों कर रहे थे, और हम राजप्रमुखों को क्यों बनाए हुए थे? महोदय, इसके उत्तर में हमारा तर्क था कि जब हम परिवर्तन और सुधार चाहते हैं, तो जहाँ तक संभव है, हम विद्यमान आधारशिलाओं पर, विद्यमान ताकतों और परिवर्तन तथा सुधार करने वाली

ताकतों के एक न्यायिक सम्मिश्रण का संरक्षण चाहते हैं। यह विधेयक समान सिद्धांत पर आधारित है। यह काफी हद तक हिंदू कानून का संरक्षण करना चाहता है जबकि यह आधुनिक आवश्यकताओं और विचारों के भी अनुकूल है और वहीं परिवर्तन भी करना चाहता है जहाँ ऐसे परिवर्तनों की आवश्यकता है। मैं सोचता हूँ कि केवल यही एक तरीका है कि जिससे पूरा देश और साथ ही हिंदू समाज आंतरिक बाधाओं और हिंसक आंदोलनों के बिना ही प्रगति कर सकता है। महोदय, हमारी नीति एक शांतिपूर्ण और स्वैच्छिक परिवर्तन लाना है और यह विधेयक सामाजिक क्षेत्र में उस शांतिपूर्वक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

महोदय, मैं इस विधेयक की धाराओं की बात नहीं करना चाहता। अभी इसका समय नहीं आया है और यदि हम प्रत्येक धारा पर विचार करेंगे तो यह प्रावधानों विशेष की छानबीन करने जैसा हो जाएगा।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : वह स्थिति आएगी ही नहीं।

माननीय श्री के. संथानम : ठीक है, देखेंगे।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : जब तक कि सदन से बाहर खड़े स्तर पर लाठियाँ न चलने लगें।

माननीय श्री के. संथानम : कुछ लोग भविष्यवाणी कर रहे थे कि संविधान कभी पारित नहीं होगा; किन्तु हमने इसे पारित कर दिया है। उसी प्रकार, हम इस विधेयक को संविधान-पुस्तिका में रखने जा रहे हैं।

महोदय, मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि कुछ धाराएं अथवा कुछ भाग मामूली से परिवर्तनों अथवा समायोजनों के लिए ग्रहणशील नहीं हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : मामूली ढंग से!

माननीय श्री के. संथानम : मैं स्वयं को इस विधेयक में निहित व्यापक सिद्धांतों तक ही समिति रखूंगा, और विवरणों को किसी भावी अवसर के लिए छोड़ दूंगा।

महोदय, इस विधेयक के चार पहलू हैं, अर्थात्, संहिताकरण, एकीकरण, तर्कसंगतता और सुधार।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी (असम: सामान्य) : और जालसाजी भी।

माननीय श्री के. संथानम : देखिए, वह पक्ष मैं आप पर छोड़ता हूँ। जहाँ तक अलग–अलग भागों में दत्तकग्रहण, अल्पसंख्यकों, संरक्षणता और गुज़ारा आदि का संबंध है, वह मात्र गुजारा आदि का संबंध है, वह मात्र हिंदू कानून का संहिताकरण है।

(**एक माननीय सदस्य :** मेरा एक प्रश्न है।) आप इस पर प्रश्न कर सकते हैं, किन्तु मैं सोचता हूँ कि सर बी.एन.राउ माननीय सदस्य की अपेक्षा कहीं अधिक बड़े कानूनी जानकार हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : यह कोई तर्क नहीं है। वह हो भी सकते हैं, और नहीं थी। मैं तर्क को समझता हूँ, किन्तु मैं इस तरह के आक्षेप का पक्ष नहीं ले सकता।

माननीय उपाध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : किंतु उस तर्क का क्या अर्थ है कि फलाँ-फलाँ व्यक्ति यहाँ उपस्थित व्यक्तियों से ऊपर है? क्या यह कोई तर्क है?

माननीय उपाध्यक्ष : इसका भी कोई अर्थ नहीं है कि माननीय सदस्य एक साथ बोले जा रहे हैं। प्रत्येक माननीय सदस्य को अवसर मिलेगा और जब तक सदन चाहेगा, मैं यहाँ बैठने को तैयार हूँ।

जहाँ तक माननीय सदस्य द्वारा सर बी. एन. राउ संदर्भ देने का संबंध हैं, शायद उनका आशय था कि वह कलकत्ता उच्च न्यायालय के जज थे और यह कहना असंसदीय नहीं है कि किसी व्यक्ति विशेष की राय अति महत्वपूर्ण है। एक व्यक्ति के रूप में भी माननीय सदस्य का शायद यह आशय था कि वह उन्हें किसी अन्य सदस्य की तुलना में ज्यादा अच्छी तरह जानते हैं।

माननीय श्री के. संथानम : महोदय, मैंने मात्र यह कहा था कि सर बी.एन. राउ प्रश्नकर्ता से बेहतर कानूनी जानकार हैं।

साजेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : श्रीमान्, मुझे एक आपत्ति है। हिंदू कानून पूर्णतया और आंतरिक रूप से हिंदू धर्म से संबद्ध है। तब क्या कोई यह बात बर्दाश्त कर सकता है कि कोई गैर-हिंदू व्यक्ति हिंदू कानून और सिद्धांतों का प्राधिकारी हो सकता है।

माननीय अध्यक्ष : मैं माननीय सदस्यों के मतभेदों की बहुत सराहना कर सकता हूँ। किन्तु इसमें उत्तेजित होने जैसी कोई बात नहीं हैं पहले हम धैर्य रखें और सभी माननीय सदस्य एक सौहार्दपूर्ण वातावरण में ही चर्चा में अपना-अपना योगदान दें।

श्री. एल. कृष्णास्वामी भारती : जिस माननीय सदस्य ने अभी व्यवधान डाला है उन्होंने यह कहा प्रतीत होता है कि श्री बी. एन.राउ हिंदू नहीं है यह एक छल-कपट वाली बात है, जिसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। श्री बी.एन. राउ यहाँ नहीं हैं, अत: महोदय, उनका बचाव करना आपका कर्तव्य बनता है।

माननीय अध्यक्ष : मैं यह बताने की स्थिति में नहीं हूँ कि कोई व्यक्ति विशेष किस धर्म से है। मैं व्यक्तिगत तौर पर यह नहीं जानता। किंतु मैं उम्मीद करता हूँ कि माननीय सदस्य अपनी सीमा में रहेंगे, और चूंकि उन्हें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, इसके बल

पर उन्हें दूसरों की बुराई नहीं करनी चाहिए। उन्हें अपनी सीमा को नहीं लांघना चाहिए, और यदि कोई सदस्य किसी की निन्दा करता है, तो यह गलती ही है।

माननीय श्री के. संथानम : महोदय, मैं व्यावधानों का बुरा नहीं मानता। किन्तु यदि इस विधेयक के विरोधी यह सोचते हैं कि ऐसी चालें चलना उनका एकाधिकार है, तो वे गलती कर रहे हैं। महोदय, मैं पूरे जोर-शोर से यह कहता हूँ कि श्री बी.एन. राउ उसी भाँति एक हिंदू हैं, जैसे इस सदन में अन्य लोग हैं और जहाँ तक मेरा संबंध है, मैं कह सकता हूँ कि मेरे पूर्वज बहुत ही परंपरावादी हिंदू परिवारों से आए है, और अभी तक मैंने कभी मछली का एक टुकड़ा तक नहीं खाया है। और मैं दावा कर सकता हूँ कि अपेक्षाकृत अधिक परंपरावादी भी हूँ...

श्री एच.वी. कॉमथ (सी.पी. एवं बिरार : सामान्य) : क्या मछली खाना या नहीं खाना परंपरावादिता की कोई परीक्षा है?

माननीय श्री के. संथानम : हमारे राज्य में मछली खाना सर्वाधिक शास्त्र विरुद्ध समझा जाता है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : और हमारे राज्य में इटली और रसम खाना सबसे ज्यादा आपत्तिजनक समझा जाता है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य कृपया इटली और मछली की बजाय विवाह और तलाक जैसी ज्यादा स्थायी चीजों की बात करें।

श्री आर.के. सिधवा : हम सदन को मछली बाजार न बनाएं।

माननीय श्री के. संथानम : मैं पुन: कहता हूँ कि जहाँ तक दत्तकग्रहण, संरक्षण, अल्पसंख्या आदि का प्रश्न है, उनमें सिर्फ वर्तमान कानून का संहिताकरण है, जैसा कि ब्रिटिश न्यायालयों के निर्णयों में देखा जा सकता है। महोदय, मनु ने जो कुछ लिखा है, याज्ञवल्कय ने जो कुछ लिखा है, वर्तमान हिंदू कानून वह कानून है जिसकी पिछले एक सौ पचास वर्षों से ब्रिटिश न्यायालयों में व्याख्या की जाती है, और इस व्याख्या के सामने, मनु और यज्ञनवाल्कय भी पूरी तरह से असहाय हैं। अत: हिंदू कानून अब ऐसा कानून है जिसकी व्याख्या और निर्धारण अब इस देश में ब्रिटिश न्यायाधीशों द्वारा कर दिया गया है।

एक माननीय सदस्य : ब्रिटिश न्यायाधीश?

माननीय श्री के. संथानम : ब्रिटिश अथवा उनके रंग में रंगे न्यायाधीश। अत: श्रीमान्, मैं सोचता हूँ कि हम इतने सक्षम तो हैं कि हम उस कानून को बदल सकें जिसे ब्रिटिश न्यायाधीशें ने हमारे प्राचीन कानून को वर्तमान हिंदू कानून में बदल दिया है।

महोदय, अब मैं हिंदू संहिता के आगे पहले इसका एकीकरण वाले भाग पर आता

हूँ। मुझे आश्चर्य है कि भविष्य पर नजर रखने वाले किसी भी हिंदू को यह कहना चाहिए कि जहाँ तक कानून का प्रश्न है, कोई एकीकरण आवश्यक नहीं है। प्रत्येक भाग में एक क्षेत्रीय कानून हो सकता है, जैसे बंगाल में हम दायभाग कानून को रख सकते हैं, मालाबार में मरुमाकट्टय कानून और अन्य भागों में मिताक्षर कानून इत्यादि का पालन हो सकता है, जैसा कि प्राचीन समय में होता था। जब लोग यह कहते हैं कि राजनीति और अर्थव्यवस्था के मामले में हमें 1950 ई. में होना चाहिए, तो मैं लोगों की बात समझ नहीं पाता हूँ, किन्तु जहाँ तक कानून का सवाल है, क्या हमें 1950 ई. पू. में होना चाहिए? महोदय, ऐसा कहना पूरी तरह से एक विघटनकारी और विनाशकारी स्थिति है। यदि हिंदूओं को एक समुदाय बनना है, यदि उन्हें अपनी महत्ता बरकरार रखनी है, उन्हें एक कानून, भले ही वह दायभाग हो अथवा मिताक्षर के अंतर्गत आना चाहिए। मैं समझ सकता हूँ कुछ लोग कहते हैं कि "हमें मिताक्षर के अंतर्गत लाना चाहिए।" मैं अन्य लोगों की बात को भी समझता हूँ कि उन सभी को दायभाग कानून के अंतर्गत लाया जाए। किन्तु यह कहा जाता है कि हिन्दुओं को विभिन्न क्षेत्रीय समूहों में विभक्त किया जाना चाहिए, जिसमें प्रत्येक का अपना कानून हो। तब यदि एक बंगाली, मालाबार में जाता है, तो न्यायालयों को तीन प्रकार के हिंदू कानूनों की व्याख्या करनी होगी, जो मैं सोचता हूँ कि, हिंदू समाज के दुर्भाग्य का फैसला होगा। महोदय, हिंदू समाज के शत्रु इससे बेहतर कुछ मांग नहीं कर सकते कि हिन्दुओं पर एक दर्जन क्षेत्रीय कानून लागू किए जाएं। महोदय, इस विधेयक के द्वारा हम अंततः हिंदू समाज को एक एकीकृत हिंदू कानून के अंतर्गत ला रहे हैं, चाहे वह कोई भी कानून हो। अतः संपूर्ण हिंदू समाज के लिए एक एकीकृत हिंदू कानून ही होना चाहिए। महोदय, इस विधेयक में...

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : महोदय, एक नियमापत्ति है। माननीय सदस्य इस सदन में साम्प्रदायिकता की बातें कर रहे हैं। वे समस्त हिंदुओं को, संभवतः मुस्लिमों और ईसाईयों के विरुद्ध एक करने की बात कर रहे हैं। वे हिंदुओं के लिए एक कानून चाहते हैं; अतः वे साम्प्रदायिकता का उपदेश दे रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : यह नियमापत्ति केवल बहस को उकसाने वाली है, अतः यह वास्तव में कोई आपत्ति वाली बात नहीं है।

माननीय श्री के. संथानम : महोदय, जिस दिन यह विधेयक विधान पुस्तक में आ जाएगा इसे अपनाने की समस्त प्रक्रिया आरंभ हो जाएगी और इससे पहले कि यह प्रक्रिया लंबी चले इस देश में शेष भारतीय नागरिक भी उक्त कानून के अनुसार व्यवहार करना आरंभ कर देंगे। और यदि आवश्यक हुआ, तो हम उनमें मामूली बदलाव भी कर देंगे, ताकि पूरा देश एक सिविल कोड के अंतर्गत आ सके। महोदय, यह प्रक्रिया एक

विघटन वाली प्रक्रिया नहीं है अपितु एक समकेन वाली प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया जारी रहेगी और लंबे समय तक चलेगी।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : यह बाहर चल रही है।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य) : यह भीतर भी चल रही है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : आपकी प्रेरणा से।

माननीय श्री के. संथानम : मैं इस सदन में काफी समय से इन व्यावधानों के कारण चिंतित हूँ।

अब, प्रश्न यह है कि क्या हमें दायभाग या मिताक्षर कानून को प्राथमिकता देनी चाहिए। मेरे मित्र पंडित मुकुट बिहारी लाल ने कहा है कि बीस करोड़ लोग मिताक्षर का पालन करते हैं और पांच करोड़ दायभाग का, तब हम बीस करोड़ लोगों वाले कानून की बजाय पांच करोड़ लोगों वाले कानून को क्यों चुने? मैं समझता हूँ कि तुलनात्मक दृष्टि से मिताक्षर कानून प्राचीन ग्रामीण समुदायों की दृष्टि से लागू किया गया था, जिनकी मुख्य सम्पत्ति, कृषि-भूमि होती थी। यह समाज की उस अवधारणा पर आधारित था, जिसमें जन्म का अधिकार और जीवन-यापन शामिल था। परन्तु हम उस प्रारंभिक समुदाय से तेजी से उभरते हुए एक आधुनिक समुदाय में आ रहे हैं, जिसमें सम्पत्ति अचल से चल में परिवर्तित होती जा रही है। अब आपकी अचल सम्पत्ति कम होती जा रही है और चल सम्पत्ति बढ़ रही है। यहाँ तक कि अचल सम्पत्ति, चल सम्पत्ति में परिवर्तित की जा रही है, यह परिवर्तन, शेयरों, नकद बचत, जमा राशि और सरकारी प्रतिभूतियों तथा अन्य रूपों में हो रहा है। अत: हमें वह व्यवस्था अपनानी चाहिए जो वास्तविक अचल सम्पत्ति से अवास्तविक और काल्पनिक सम्पत्ति में बदलाव के साथ काम आती है। जहाँ बड़ी मात्र में अवास्तविक सम्पत्ति होती है, वहां यह जन्म संबंधी अधिकार वास्तव में अव्यावहारिक होता है। आप इसे लागू नहीं कर सकते। यह सदैव पिता का अधिकार होता है कि वह प्रतिभूतियाँ अथवा शेयरों अथवा चल संपत्ति का निपटान करे। एक पुत्र के लिए यह संभव नहीं है कि उसे विरासत में शेयर का अधिकार मिले। उसके लिए कृषि भूमि का अधिकार विरासत में मिलना संभव है, किन्तु नकद प्रतिभूतियों अथवा अन्य चल सम्पत्ति में उसे विरासत का अधिकार मिल पाना संभव नहीं है। इसीलिए ऐसा है कि इस विधेयक द्वारा मिताक्षर कानून की बजाय दायभाग व्यवस्था को प्राथमिकता दी गई है: ऐसा इसलिए नहीं है कि मिताक्षर कानून बीस करोड़ लोगों का अनादर करता है, न ही इसलिए कि इसे दायभाग कानून की तुलना में कोई विशेष प्राथमिकता दी है, आज, जन्म के बाद से ही विरासत में प्राप्त अधिकार और जीवन-यापन का अधिकार पिछड़े हुए और अव्यावहारिक हो चुके हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : आदिकालीन!

माननीय श्री के. संथानम : या तो हम कानून के द्वारा जानबूझ कर उन्हें हटा दें, अन्यथा वे अनियमित अव्यवस्थित तरीके से स्वतः समाप्त हो जाएंगे।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : तो अन्य मामलों में भी बंगाल का ही अनुकरण किया जाए।

कुछ माननीय सदस्य : ऑर्डर, ऑर्डर।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : महोदय, एक व्यवस्थागत आपत्ति है, कि किसी सदस्य को 'ऑर्डर, ऑर्डर कहने का क्या अधिकार है। मैंने देखा है कि श्रीमती दुर्गाबाई भी 'ऑर्डर, ऑर्डर' कह रही थी।

श्रीमती रेणुका रे (पं. बंगाल : सामान्य) क्या यह कोई आपत्ति है?

माननीय अध्यक्ष : मैं यह देखकर बहुत प्रसन्न हूँ कि मेरे साथ-साथ माननीय सदस्य भी अध्यक्ष के अधिकार का अनुमोदन कर रहे हैं।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : (खड़ी हो गई)।

माननीय श्री के. संथानम : मुझे खेद है कि मैं असम की अपनी माननीय मित्र को रास्ता नहीं दे सका।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमारी चौधरी : ठीक है, मैं चुप रहूंगी। यदि आप महिलाओं की क्रूरता से दुखी होना चाहते हैं, तो आप दुखी हों।

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर।

माननीय श्री के. संथानम : महोदय, संयुक्त परिवार के तथाकथित पवित्र संस्थान के बारे में काफी कुछ कहा जा चुका है। मध्यकालीन और प्राचीन काल में, यह तथाकथित संयुक्त परिवार अवश्य ही उपयोगी उद्देश्यों की पूर्ति करता होगा। मेरा यह काम नहीं है कि मैं उसे झुठलाऊँ। किन्तु, आज संयुक्त परिवार केवल विवादों में हैं। मैं कृषक वर्गों को जानता हूँ; मैं आपमें से कई लोगों की अपेक्षा संभवतः सबसे अधिक ग्रामीण क्षेत्रों में रहा हूँ। मैंने लगातार दस वर्षों तक ग्रामीण क्षेत्रों में रहकर कार्य किया है। श्रीमान्, मैं एक बात जानता हूँ कि जब एक किसान के बेटे का विवाह होता है, तो किसान अपने बेटे के लिए एक नया घर बनाता है, उसे पैतृक भूमि का हिस्सा देता है, भले ही वह एक एकड़ हो अथवा आधा एकड़ अथवा एकड़ का चौथाई हिस्सा हो, पर अपने बेटे का एक अलग परिवार बसाता है। जब तक ऐसा न किया जाए, किसान यह मानता है कि उसके परिवार में एकता नहीं रहेगी। कुछ बहुत अमीर व्यक्तियों के मामले में, तथाकथित

संयुक्त परिवार व्यवस्था बनी रह सकती है, जिसमें आय-कर संबंधी धोखेबाजी और अन्य उद्देश्यों के लिए लेखा-जोखा रखने की दोहरी प्रणाली अपनाई जा सकती है। साधारण रूप से, आज भी, मध्यम वर्गीय परिवारों में, क्या होता है? एक बेटा गांव में रहता है; एक बेटा दिल्ली में रहता है और सरकारी नौकरी करता है; एक बेटा मद्रास में रहकर कोई अन्य नौकरी करता है; एक अन्य बेटा बिजनेस करता है। तब एक संयुक्त परिवार चलाने और पैतृक सम्पत्ति का रख-रखाव करने का क्या अर्थ है? इससे बेहतर है कि उन्हें बँटवारे की अनुमति दी जाए। तत्पश्चात्, यदि वे स्वेच्छा से वापस आना चाहें और एक साथ रहना चाहें तो, उन्हें एक सहकारी संस्था बनाने दें, उन्हें आधुनिक परिस्थितियों के अनुकूल किसी भी प्रकार का विधिक व्यक्तित्व बनने दें। अपने पूर्वजों की पूजा-अर्चना करने वाली संयुक्त परिवार व्यवस्था को वर्तमान परिस्थितियों पर ध्यान दिए बिना, जारी रखने के लिए, मैं समझता हूँ कि यह कोरी रूढ़िवादी परंपरा चलाना होगा।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद (बिहार : सामान्य) एक प्रतिवादी निर्णय करने लगा है!

माननीय श्री के. संथानम : मेरे बिहार के माननीय मित्र प्रतिवादी का सबसे बड़ा उदाहरण है, जैसा कि संविधान के निर्माण के समय उन्होंने सिद्ध किया था। और मुझे यकीन है कि वह यहाँ भी सिद्ध करेंगे।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद : आप भी।

माननीय श्री के. संथानम : मैं कोई मौका नहीं दे रहा हूँ।

माननीय अध्यक्ष : आप आपस में बातें न करें। मुझे बेहद अफसोस है; मैं भी इसमें थोड़ा शामिल रहा हूँ और मैंने पाया है कि एक तरह का कटु वाद-विवाद जारी है। जब तक अच्छा हास-परिहास चले, उसमें कोई नुकसान नहीं है। तथापि, माननीय सदस्य को अपना पक्ष रखने की अनुमति मिलनी चाहिए। अन्यथा वह अपनी बातों के क्रम में गड़बड़ी कर सकते हैं। इससे वह हतोत्साहित होंगे।

सार्जेन्ट रोहिणी कुमार चौधरी : श्री संथानम बहुत अच्छे मूड में हैं।

माननीय श्री के. संथानम : क्योंकि मेरा पक्ष सरल और सीधा-सादा है और मुझे किसी के प्रति खराब व्यवहार करने अथवा किसी तरह का हौआ खड़ा करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

अब मैं अगले तथ्य, तर्क संगतिकरण, पर आता हूँ। यह ऐसा बिंदु है, जिससे पिता की सम्पत्ति में पुत्री के अधिकार पर बड़ी मात्रा में विरोध उठ खड़ा हुआ है। यदि कोई पुरानी सम्पत्ति बँटवारे के बिना रह सकती हो और उस सम्पत्ति में केवल कृषि भूमि शामिल हो, तो मुझे ऐसा कहने वालों के प्रति सहानुभूति है, जो कहते हैं कि परिवार में

एक विदेशी, एक बाहरी व्यक्ति को लाना बहुत असुविधाजनक हो सकता है। पर मैं पहले ही बता चुका हूँ कि अब सम्पत्ति, अचल से चल सम्पत्ति में परिवर्तित हो रही है।

डॉ. पी.एस. देशमुख (सी.पी. एवं बिरार : सामान्य) : ऐसा कैसे हो सकता है? भू-संबंधी समस्त सम्पत्ति कभी समाप्त नहीं हो सकती। हिंदू संहिता विधेयक भूमि को विलुप्त नहीं कर सकता।

माननीय श्री के. संथानम : जहाँ तक कृषक समुदाय का संबंध है, विवाह होने पर वे स्वतः अलग हो जाते हैं। यदि एक दामाद गांव में आकर रहना चाहता है, तो मुझे ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उसे अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

डॉ. पी.एस. देखमुख : इसके बाद, नियम यही होगा कि फूट डालो और राज करो।

माननीय श्री के. संथानम : यदि पुत्रों को बांटा जा सकता है, तो पुत्री को भी बांटा जा सकता है। भविष्य में सम्पत्ति में नगर प्रतिभूतियां और अन्य चीजें भी शामिल होंगी। अतः, ऐसा कोई कारण नहीं है कि पुत्री को पुत्र के समान अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। समायोजन के उद्देश्य से, मैं एक या दो बातों को छोड़ने को तैयार हूँ। एक परिवार में विवाहित पुत्रियों के हिस्से के आकलन के मामले में, मैं सोचता हूँ कि कोई धनराशि निर्धारित करना अनुचित नहीं होगा, जो उनके विवाह के लिए खर्च की जा सकती है। कई मध्यम वर्गीय परिवारों में, विवाह-समारोहों पर किया जाने वाला खर्च पुत्री को मिलने वाले हिस्से से यदि अधिक नहीं तो अक्सर बराबर तो होता ही है। पर मैं सोचता हूँ कि यह एक बेहतर निर्धारण होगा। इसी प्रकार, यदि केवल एक निवास-स्थान हो अथवा कृषि-भूमि का एक छोटा सा टुकड़ा हो, तो मैं सोचता हूँ कि यह कहना अनुचित नहीं होगा कि जहाँ तक पुत्री के हिस्से का संबंध है, उसे मकान में अथवा अचल सम्पत्ति में से एक हिस्सा दिए जाने की बजाय नकद रूप में अथवा चल सम्पत्ति के रूप में उसका हिस्सा दे दिया जाना चाहिए।

चौ. रणबीर सिंह (पूर्वी पंजाब : सामान्य) : पर वह नकदी कहाँ से आएगी?

माननीय श्री के. संथानम : यदि आपका कोई साहूकार है, तो आपको नकदी कहाँ से प्राप्त हो जाएगी? क्या यह संभव नहीं है? इसकी अदायगी आसान वार्षिक किस्तों में या किसी अन्य तरीके से की जा सकती है। एक सौहार्दपूर्वक परिवार में समायोजन सरल ही होगा। पर जिस परिवार में सौहार्द नहीं है, वहाँ न्यायालय भी किसी पक्ष से भेदभाव के बिना इस बोझ को समायोजित करने के लिए कोई उपाय सुझा सकता है। इन समायोजनों की शर्त पर, मुझे ऐसा कोई तर्कसंगत औचित्य दिखाई नहीं पड़ता कि पुत्री को भी पुत्र के समान ही सम्मान क्यों नहीं दिया जाना चाहिए? मुझे नहीं लगता कि इसमें किसी प्रकार की कठिनाई है। पर हर प्रकार के हौवे खड़े किए गए हैं। आखिरकार,

एक पुत्री ही वधू बनती है। यदि पुत्री को एक हिस्सा मिलता है, तो इसी प्रकार दूसरे घर में भी पुत्री को उसका हिस्सा मिलता है और आगे चलकर, पुरुष और स्त्री के बीच आत्म–सम्मान और सामाजिक समानता स्थापित करते हुए कानूनी अधिकारों के समायोजन के सिवाय, सम्पत्ति संबंधी व्यवस्थाएं काफी हद तक समान हो जाएंगी, क्योंकि वर्तमान समय में पुत्री अपने पिता के घर से कुछ लेकर नहीं जाती–उससे अधिक उसे अपने ससुर के घर में प्राप्त हो जाता है। अब से, विधेयक के तहत, उसे अपने पिता के घर से थोड़ी–बहुत प्राप्ति होगी; जो ससुर के घर की प्राप्ति से कम ही होगी। पर आगे चलकर, सम्पत्ति के बँटवारे में अधिक अन्तर नहीं रहेगा। अत: यह प्रक्रिया सभी संबंधितों के लिए संतोषप्रद, और अधिक आत्म–सम्मान वाली होगी। पुत्री यह महसूस करेगी कि वह भी अपने भाई के बराबर सम्मान पा रही है; केवल वही सब–कुछ नहीं है। मैं सोचता हूँ कि हमें इस भावना को पूरे देश में प्रोत्साहित करना चाहिए। नीतियों में हमने सभी सामाजिक असमानताओं को समाप्त कर दिया है; हमने महिलाओं को भी पुरुषों के समान अधिकार दिए हैं। तो उत्तराधिकार और विरासत के मुद्दे पर ही क्यों लिंग संबंधी भेदभाव बरता जाए? मैं सोचता हूँ कि जितनी जल्दी हम स्वेच्छा से भेदभाव करना छोड़ देंगे, देश उतना ही सशक्त होगा। अन्यथा, किसी न किसी दिन, वयस्क मताधिकार के आधार पर पूरे देश में महिलाओं में इतनी भावना जागृत हो जाएगी कि हमें परिवर्तन करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। तब तो भारत के पुरुषों के लिए यह शर्मनाक बात ही होगी। इसलिए बेहतर होगा कि आप अग्रिम रूप से अब वयस्क मताधिकार प्रदान करें, ताकि हम संभवत: पांच अथवा छह करोड़ महिलाओं, जिन्हें वोट देने का अधिकार होगा, के पास जाकर यह कह सकें कि "देखिए आपने जो चाहा था हमने वही काम कर दिखाया है; हमने आपको मताधिकार दिलाया है; हमने आपको सम्पत्ति का अधिकार दिलाया है; आप पुरुषों के समकक्ष हैं। अब लिंग भेद संबंधी विवाद नहीं होंगे।"

इस प्रश्न का अंतिम बिंदु है, सुधार। अब तक विवाह के मामलों में शायद ही सुधार का कोई प्रयास हुआ है। अत: यह आंशिक रूप से वैकल्पिक और आंशिक रूप से अनिवार्य है। मैं चाहता हूँ कि मेरे सभी मित्र और इस सदन के सदस्य उठें और कहें कि क्या वे इस सुधार को अनुमोदित करेंगे अथवा नहीं। वे इस विषय पर चुप्पी साधे हुए हैं और तीन घण्टे तक बोलने के बावजूद, मुझे नहीं पता चल पाता कि लोग इस विषय से बचते क्यों हैं? तो वे एक विवाह–प्रथा को लागू करना चाहते हैं अथवा नहीं?

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : एक विवाह प्रथा पहले से ही स्थापित है।

माननीय श्री के. संथानम : फिर भी कुछ लोग वास्तव में दो अथवा अधिक पत्नियां होने का लुत्फ उठाते हैं, तो कुछ अन्य एक से अधिक पत्नियां होने की संभावना का मानसिक लुत्फ उठाते हैं।

श्री एच. वी. कॉमथ : बहुपति प्रथा के बारे में क्या ख्याल है?

माननीय श्री के. संथानम : मैं कहता हूँ कि यह एक ऐसी बात है कि जिसमें प्राचीन आर्य परम्परा ने एक भारी गलती की थी। अब यही समय है कि हम, जो महान आर्यों को अपना यशस्वी पूर्वज मानते हैं, यह स्वीकार कर लें कि यह एक भूल थी और इसमें स्वेच्छा तथा सर्वसम्मति से सुधार कर लें। अब बहुविवाह प्रथा जारी नहीं रहनी चाहिए। किन्तु जब तक आप बहुत बड़े मामलों के लिए तलाक की पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध नहीं कराते, समस्त और संपूर्ण एक विवाह-प्रथा भी एक कल्पना बन जाएगी। अत: जब तक हम ऐसी व्यवस्था नहीं कराते, बुराइयाँ जारी रहेंगी।

श्रीमती रोहिणी कुमार चौधरी : क्या आप सहमत हैं कि पर-पुरुष गमन के लिए महिलाओं पर भी मुकदमा चलाया जाना चाहिए?

माननीय श्री के. संथानम : मैं मानता हूँ कि समान अपराधों के लिए महिलाओं को समान सजाएं दी जा रही हैं किन्तु असम के मेरे माननीय मित्र इस विषय के संबंध में सहृदय हैं। एक विवाह-प्रथा और तलाक के प्रावधान साथ-साथ चलते हैं। उन्हें एक समन्वित कानून के रूप में लिया जाना चाहिए और इस संबंध में यह विधेयक एक सुधार का सुझाव देता है जो शास्त्रों द्वारा भले स्वीकृत न हो, किन्तु यह एक सुधार है...

पंडित गोविन्द मालवीय (उ.प्र. : सामान्य) क्या मैं यह समझूं कि यदि तलाक को स्वीकृति नहीं मिलती है तो माननीय सदस्य एक विवाह-प्रथा का विरोध करेंगे?

माननीय श्री के. संथानम : मैं किसी भी स्थिति में एक विवाह-प्रथा का समर्थन करूंगा। यदि मेरे मित्र एक विवाह-प्रथा का पक्ष लेते हैं और उसी समय कोई पति यदि नपुंसक अथवा एक अपराधी घोषित हो जाता है, तो ऐसी हालत में तलाक न होना जैसी 'विपरीत स्थिति' नहीं होनी चाहिए। अत: मैं सोचता हूँ कि वे एक असंगत स्थिति में एक विवाह-प्रथा को जारी रखना चाहता है। पर मैं इसकी एक संगत स्थिति चाहता हूँ। हमारी सोच में यही फर्क है।

मैं केवल एक और पहलू की बात करूंगा। इस विधेयक की एक और महान विशेषता की जो जाति-प्रथा से समस्त कानूनी लड़चनें समाप्त कर देगी। हमने संविधान द्वारा अस्पृश्यता का उन्मूलन कर दिया है। अब हम सामाजिक सुधार को आगे बढ़ाना चाहते हैं और जाति से संबंधित विधि अड़चनों को समाप्त करना चाहते हैं। इस विधेयक में चाहे यह विवाह हेतु हो अथवा किसी अन्य उद्देश्य के लिए, तथा कथित अछूतों से लेकर तथाकथित आचार्य ब्राह्मणों में सभी हिंदू हैं- सभी एकसमान हैं।

कुछ माननीय सदस्य : किसी जाति के बिना, हिंदू कौन हो सकता है?

माननीय श्री के. संथानम : मेरे मित्र ने कहा "किसी जाति के बिना, हिंदू कौन हो सकता है?" पर मेरे अनुसार, किसी जाति के साथ हिंदू एक राक्षस है। (सुनिए, सुनिए)। हम इस देश में एक जाति रहित हिंदू समुदाय स्थापित करना चाहते हैं। या तो हम पूर्णतः हिंदू होना बन्द करें, अथवा एक जाति विहीन हिंदू धर्म की स्थापना करें। हमारे लिए इसके सिवा विकल्प नहीं बचा है।

श्री लक्ष्मी नारायण साहू : मुसलमानों को भी हिंदू कहा जा सकता है।

माननीय श्री के. संथानम : जिस दिन मुसलमान, गीता और वेदों को स्वीकार कर लेंगे, उसी दिन से मैं उन्हें भी हिंदू मानने को तैयार हो जाऊँगा।

माननीय उपाध्यक्ष : हम एक-दूसरे पर टीका-टिप्पणी न करें। माननीय सदस्य अपनी बात जारी रखें। हर कोई एक-दूसरे को प्रभावित करना चाहता है।

माननीय श्री के. संथानम : व्यावधानों के बावजूद, मैं अपने कुछ मित्रों को आश्वस्त करना चाहता हूँ। मेरे मित्र श्री तिरुमला राव ने कहा है कि मैं गीता की शपथ ले रहा हूँ। मैं कहा रहा हूँ कि प्राचीन ग्रंथ हिंदुओं के लिए न्यूनतम धर्म सिद्धांत बताते हैं। इस प्रकार, यदि विधेयक के बाद, हिन्दू, मुस्लिमों और ईसाइयों के बीच कोई भेदभाव नहीं रखा जाता, तो यह पूरे देश के लिए बेहतर होगा। हम ऐसे भेदभावों को बनाए रखने से गौरवान्वित नहीं होते, जिनका कोई अर्थ नहीं है अथवा जो असंगत है। यदि मुसलमान भी ऐसे सभी भेदभाव समाप्त कर दें तो असंगत होते हैं; यदि ईसाई भी वे सभी भेदभाव समाप्त कर दें, जो असंगत हैं, तो एक लंबी बातचीत से पहले हम स्वयं को ऐसी जगह पा सकेंगे, जहाँ हम सब एक हो सकते है- भले ही हम अपने आपको कुछ भी कहें। इसी बीच, संविधान में और इस विधेयक में हमारा उद्देश्य यह देखना है कि इस देश में बहुसंख्यक समुदाय शक्तिशाली हो, एकीकृत हो और उसमें वे पूर्वाग्रह और प्रतिक्रियाएं न हों, जो हमें सम्प्रदायों में विभक्त करती हो। हमें तो ऐसा सशक्त आधार चाहिए जिस पर भावी भारत के गौरव और शक्ति का सृजन किया जा सके। मुझे विश्वास है कि इस विधेयक के बिना और यह विधेयक जिन परिवर्तो की हामी देता है, के बिना हिंदू समुदाय एक कमजोर, टूटा-फूटा एवं अप्रगतिशील समुदाय रहेगा और यदि अधिसंख्यक लोग इस अवस्था में बने रहेंगे, तो हम उन राजनीतिक और आर्थिक अवसरों पर अधिक लाभ नहीं उठा सकेंगे जो संविधान और ईश्वर ने हमें प्रदान किए है। अतः मैंने कहा है कि यह वस्तुतः उस संविधान का पूरक है, जिसका हमने निर्माण किया है और यह कहना श्रेयस्कर होगा कि जिस निकाय ने संविधान का निर्माण किया है, वही इस हिंदू संहिता को कानून के रूप में सामने ला रहा है। मैं आशा करता हूँ कि इस बात को संविधान में शामिल किया जाएगा और हमारी भावी पीढ़ी यह कहेगी कि ये वही लोग हैं, जिन्होंने न केवल संविधान का निर्माण किया है बल्कि हिंदू कानून में भी सुधार किया है।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : संविधान को नष्ट कर दिया है।

माननीय श्री के. संथानम : मुझे विश्वास है कि हमारे पूर्वज हमें देख रहे हैं और इस कार्य के लिए हमें आशीर्वाद दे रहे हैं।

श्री लोकनाथ मिश्र : मैं एक जानकारी देना चाहता हूँ। मेरे मित्र ने अभी-अभी वेदों और भागवद् गीता की शपथ ली है। क्या वह ऐसे किसी प्रावधान को अस्वीकार करने को तैयार हैं, जो इनके सिद्धांतों के विरुद्ध जाएगा।

माननीय श्री के. संथानम : यदि वे गलत सिद्धातों पर आधारित होंगे, तो मैं उन्हें अस्वीकार करने के लिए बाध्य हूँ।

माननीय उपाध्यक्ष : इस तर्क पर अधिक बात करना अनावश्यक है।

माननीय श्री के. संथानम : श्रीमान् मैं सदन को उबाना नहीं चाहता। मैंने उन मुख्य मुद्दों पर बात की है जो मेरे दिमाग में आए हैं मैं उनसे अपील करना चाहता हूँ जो प्राचीन पूर्वाग्रहों के कारण यह महसूस करते हैं कि उनका कर्तव्य विधेयक का विरोध करना है, वे एक अन्य दृष्टिकोण से अपने व्यवहार पर पुनर्विचार करें। दृष्टिकोण है, एक जातिरहित हिंदू समुदाय का, जिसमें भेदभाव नहीं हो, जहाँ सभी एकसमान हों। यदि हम वर्तमान में बिखरे हुए, कमजोर और एक हजार वर्ष से दासोचित हिंदू समाज को एक बहुत सशक्त, स्वस्थ और महान समुदाय में परिवर्तित कर सकें तो हम ऐसा काम कर पाएंगे जिस पर हमारे पुत्र और पौत्र गौरव का अनुभव करेंगे।

श्री एच.वी. पाटसकर (बम्बई : सामान्य) : महोदय, हम एक ऐसे विधेयक पर विचार-विमर्श कर रहे हैं, जो हिंदू समाज के ढांचे में क्रांति लाने जा रहा है। ऐसा समाज जिसमें इस समय 25 करोड़ से अधिक लोग शामिल हैं। अत: यह अस्वभाविक नहीं है कि जो कुछ घटित हो रहा है उनमें आम आदमी ने भी रुचि लेनी शुरू कर दी है और यह सभी के हित में है और इस तथ्य पर ध्यान दिया जाए कि जब हम इस विधेयक के माध्यम से हिंदू समाज के सम्पूर्ण ढांचे में क्रांतिकारी परिवर्तन करने जा रहे हैं, तो यह वांछनीय नहीं है कि हम उन भावनाओं को अनदेखा करें, जो विधेयक में निहित प्रावधानों के संबंध में आम आदमी के जहन प्रावधानों के संबंध में आम आदमी के जहन में उठ चुकी हैं।

इस समय आम आदमी शिक्षा के मामले में पिछड़ा हुआ है। वह अपनी और अपने आश्रितों के जीवन-यापन की समस्या से चिंतित है। वह पैसे की कमी के चलते और कुछ नहीं तो कपड़ों की कमी भी झेलता है, और सामान्यता वह अपने जीवन को बहुत कष्टप्रद पाता है। इसके बावजूद, उसने इस विधेयक में रुचि लेना आरंभ किया है क्योंकि

वह सोचता है कि यह विधेयक उसके हिंदू समाज के उस ढांचे को प्रभावित करने जा रहा है, जो पिछली कई शताब्दियों के विकास का परिणाम है। अतः हमें समाज के संपूर्ण ढांचे के बदलने जैसे गम्भीर कार्य को करने से पहले उस समाज से जुड़े व्यक्ति को शिक्षित करना चाहिए। मैं सर्वप्रथम यह स्पष्ट करूंगा कि मैं विधेयक के कई प्रावधानों के विरुद्ध नहीं हूँ, परन्तु इस उद्देश्य के लिए जो समय चुना गया है, मेरी समझ से वह सर्वाधिक असामयिक है। मैं केवल 20 मिनट का समय लेना चाहता हूँ और यदि मुझे बिना व्यावधान अपनी टिप्पणीयां करने की अनुमनि दी जाए तो, मैं इतने समय में अपनी बात समाप्त कर सकूंगा, क्योंकि मुझे पता है कि इस सदन के अनेक सदस्य पक्ष में अथवा विपक्ष में बोलकर इस चर्चा में भाग लेना चाहते हैं।

जहाँ तक मैं विधेयक के बारे में आम आदमी की प्रतिक्रिया को समझ सका हूँ, मैं सोचता हूँ कि इस सरकार को अपना ध्यान आम आदमी को प्रभावित करने वाली समस्याओं जैसे भोजन, कपड़ा, मुद्रा स्फीति और अन्य कई बातों पर केन्द्रित करना चाहिए। जब वह अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताओं के लिए चिंतित हैं और उसे अपने जीवन-यापन की आवश्यकताएं पूरी करनी हैं तो वह स्वभाविक रूप से पूछ सकता है कि सरकार क्यों चिंतित है कि उसका विवाह कैसे होना चाहिए? उसकी केवल एक पत्नी होनी चाहिए अथवा उससे ज्यादा, जबकि वह अकेले का पेट तक नहीं भर सकता। ये सब चीजें आवश्यक भी हो सकती हैं और मैं उनमें सुधार का विरोधी नहीं हूँ। यह माना जा चुका है कि हमारे नेता भी कह रहे हैं कि हम नाजुक दौर से गुजर रहे हैं। हम आम लोगों कि कठिनाइयां जानते हैं। अभी भोजन, कपड़ा और जीवन की अन्य आवश्यकताओं का अभाव है। यों आम आदमी की तुलना में हम यहाँ सुखमय जीवन जी रहे हैं। वह स्वाभाविक रूप से सोचता है कि नेताओं को विवाह, उत्तराधिकार आदि से संबंधित समस्याओं के बारे में सोचने की बजाय दिन-प्रतिदिन की समस्याओं के हल पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। ये बातें सदियों पहले से चली आ रही हैं और इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि यह सब, कुछ महीनों अथवा कुछ वर्षों तक अभी ऐसे ही चलता रहे।

यदि हमारी बहनें, जो विधेयक के बारे में उत्साहित हैं अथवा हमारे अन्य मित्र, जो हिंदू कानून के तत्काल संहिताकरण और संशोधन की दुहाई दे रहे हैं, यदि वे ग्रामीण क्षेत्रों में आम आदमी के समक्ष प्रस्ताव रखें तो वे पाएंगे कि वह अन्य कई बातों के प्रति अधिक चिन्तित हैं कि वह आश्चर्यचकित है कि इस समय आपको इस सदन में इस प्रकार के उपाय करने की आवश्यकता होने लगी है। वह स्वाभाविक रूप से सोचता है कि इसे आने वाले समय पर छोड़ देना चाहिए। देश में अनेक प्रकार के असंतोष व्याप्त हैं। विभाजन के कारण शरणार्थियों की समस्या है जिनके पुनर्वास और जीवन-यापन की जरूरतें हैं। तो इस समय क्या यह आवश्यक है हम इस प्रश्न पर इतनी गंभीरता से सोचें कि हमारे विवाह किस प्रकार होने चाहिए?

अतः इस विधेयक को प्रस्तुत करने के लिए जो समय चुना गया है, वह उपयुक्त नहीं है और इससे स्थिति बेहतर होने के बजाय खराब होने की संभावना है।

इस संहिता के अंतर्गत किन विषयों पर चर्चा की गई है? विवाह, उत्तराधिकार तथा दत्तकग्रहण, जहाँ तक विवाह का सम्बन्ध है तो यहाँ वर्तमान सिविल विवाह अधिनियम है, जिसके अंतर्गत जो परंपरागत तरीके से विवाह नहीं करना चाहते विवाह कर सकते हैं। वस्तुतः ऐसे कई लोग कर भी रहे हैं। अतः, इस पर कार्यवाही करना इतना तत्कालिक नहीं है जितना दर्शाया गया है।

एक माननीय सदस्य : उस अधिनियम के अंतर्गत आपको बताना होगा कि आप किसी भी धर्म से सम्बन्ध नहीं रखते हो।

श्री एच.वी. पाटसकर : मेरे प्रिय मित्र अब ऐसा नहीं है:- यह अतीत के गर्त में चला गया है। अब सिविल विवाह के अंतर्गत कोई भी दो हिंदू जो किसी भी जाति या समुदाय से संबंधित हैं, किसी भी धर्म से संबंधित नहीं होने की घोषणा किए बिना भी शादी कर सकते हैं, और उन्हें ऐसा करने से कोई नहीं रोक सकता।

उत्तराधिकारी से संबंधित प्रश्न के बारे में काफी ऊहा-पोह है। हमने अपने संविधान में लिंग की समानता के सिद्धांत दिए हैं और आज के दौर में किसी के लिए यह मुमकिन नहीं कि उससे पीछे हट जाए। अतः लिंग की समानता के संबंध में कोई आपत्ति भी नहीं है। एक पिता के जिसके एक पुत्र और एक पुत्री है, इन दोनों को वह समान रूप से प्यार करेगा और इनमें कोई भेद-भाव नहीं करेगा। किंतु उत्तराधिकार के मामले में उन्हें अलग दृष्टिकोण से देखा जाता है। इस संबंध में आपको हमारे समाज के मौजूदा ढांचागत कई सदियों के दौरान हुई प्रगति का परिणाम है। हिंदू धर्म उस तरह का धर्म नहीं है जिस तरह ईसाई धर्म है, पारसी धर्म है, या इस्लाम एक धर्म है...

एक माननीय सदस्य : तब वह धम्र कैसा है?

श्री एच.वी. पाटसकर : ईसाईयत ऐसा धर्म है जिसमें वे ईसा मसीह में विश्वास रखते हैं और बाइबल में दिए उनके उपदेशों का अनुसरण करते हैं। पारसी लोग जोरास्टर के अनुयायी हैं और इस्लाम धर्म में वे पैगाम्बर मोहम्मद में विश्वास रखते और कुरान उनकी पवित्र पुस्तक हैं। किंतु हिंदू धर्म क्या है? हिंदुत्व में न केवल वेदों के अनुयायी या राम व कृष्ण या शिव के अनुयायी हैं या विभिन्न रूपों में अनेक देवताओं के भक्त शामिल हैं, अपितु इसमें प्रकृति की पूजा करने वाले और किसी भी तरह के नास्तिक तथा जो भगवान के एकल रूप में विश्वास नहीं रखते, वे भी शामिल हैं। इनके पूजा स्थल, पूजा पद्धति और पूजा का उद्देश्य भी अलग-अलग तरह के होते हैं। हिंदुत्व में उत्तरोत्तर प्रगति हुई है जिसमें सामाजिक और धार्मिक आस्थाओं की धाराएँ एवं उपधाराएँ हैं तथा

कई सदियों से प्रचलित परंपराएँ मौजूद हैं। इसमें सभी आस्थाओं को समाहित किया गया है और कृष्णावन्तोविश्वमार्यम के आदर्श के साथ निरंतर प्रगति की है। फिलहाल हिंदुत्व में ऐसी प्रगतिशीलता है, जिसमें जीवन के सभी विभिन्न रूपों में समाहित किया गया है। वर्तमान में हिंदुत्व एक लचीली व्यवस्था है, किंतु ऐसी यह सदा नहीं रही है। हमारा धर्म किसी व्यक्ति-विशेष के धर्म-सिद्धांतों या पुस्तक-विशेष पर आधारित नहीं है, अपितु धर्म क्या है, पर आधारित है। और धर्म का *अर्थ है : धारयते अनने इति धर्मे या धारणात् धर्मम् :* इत्यादुह धर्म वह है जो समाज को बनाए रखे। इसी आदर्श पर हिंदू समाज आधारित है अर्थात् जो समाज के आस्तित्व और विकास के लिए आवश्यक है। निःसंदेह मैं स्वीकार करता हूँ कि हिंदू समाज की मौजूदा स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। किंतु ऐसी स्थिति लम्बे समय तक नहीं रहेगी। इसीलिए मैंने आपका ध्यान इस ओर दिलाया है क्योंकि तभी आप इस पर विचार करेंगे कि इस विधेयक पर आपत्ति क्यों की गई है। कारण यह है कि समाज को बनाए रखना ही धर्म है और समाज को बनाए रखना हमारा आदर्श है। वर्तमान में हमारा समाज कुछ स्थिर भी प्रतीत हो सकता है, किंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। हिन्दूत्व अपने उत्कर्ष के दौरान बड़े परिवर्तनों के दौर से भी गुजरा है। मैं इसके परिवर्तनों से भयभीत नहीं हूँ, क्योंकि अतीत में भी इसमें कई परिवर्तन हुए हैं। एक समय था, जब इस भूमि पर बौद्ध धर्म फल-फूल रहा था और यह ने केवल भारतवर्ष में फैला अपितु भारत वर्ष से बाहर भी दूर-दूर के देशों तक फैला था। किंतु आज बहुत कम बौद्ध यहाँ रह गए हैं। उनका क्या हुआ? हिंदू धम्र में ही शामिल हो गए हैं। उनमें आमूल-चूल परिवर्तन हो गए हैं और मौजूदा पीढ़ी ही उनकी उत्तराधिकारी है। इससे पता चलता है कि हम कौम नहीं हैं और हमने समाज की परिवर्तनशील आवश्यकताओं के अनुरूप अपने को ढाल लिया है। ब्रिटिश शासन के दौरान भी हमारे कानून में कई परिवर्तन हुए हैं, अतः मैं उन लोगों में नहीं हूँ, जो कहते हैं कि हिंदू कानून में परिवर्तन नहीं होने चाहिए। पिछले अध्यक्ष माननीय श्री सनथानम ने सही कहा था कि न्यायालयों द्वारा न्यायिक विवेचनाएँ, जो उत्तराधिकार दत्तकग्रहण और विवाह से संबंधित विभिन्न कानूनों के नियम-सिद्धांतों के अनुकूल नहीं हैं, उनसे न केवल हमारे सामाजिक और आर्थिक जीवन में बदलाव आया है अपितु कई विसंगतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। अतः हमें उन विसंगतियों को दूर करना चाहिए। और अपने कानून को बदलते समाज की जरूरतों के अनुसार बनाना चाहिए। पूरा विश्व बड़ी तेजी से बदल रहा है, अतः हम भी इससे अछूते नहीं रह सकते हैं। हम यह नहीं कह सकते कि हम अपने को बाकी दुनिया से अलग रखेंगे। यह कोई नया विचार नहीं है। किंतु कानून का संहिताकरण एक अलग प्रक्रिया है और उसका संशोधन एक अलग बात है। यहाँ एक विधेयक दोनों बातें चाहता है अर्थात् यहाँ हम कानून को संहिताबद्ध करना चाहते हैं और इसके प्रावधानों में संशोधन भी करना चाहते हैं। जहाँ तक संहिताकरण का संबंध है, तो मेरा मानना है कि हम विसंगतियाँ दूर करना चाहते हैं। आज

के दौर में हमारे पास कानून की कई तरह की प्रणालियाँ हैं। कई स्थानों पर दायभाग है तो कई स्थानों पर मिताक्षर प्रचलित है और 'बाम्बे स्कूल' की अपनी विशेषताएँ हैं तथा दक्षिण भारत के कुछ भागों में इसे मारूमकट्ट्यम के नाम से जाना जाता है। किंतु जिन क्षेत्रों में यह प्रचलन में है वहाँ यह सुपरिभाषित है और किंचित मात्र में स्थिरता भी है, इसलिए यदि हम वर्तमान में सर्वप्रथम सु-परिभाषित क्षेत्रों में कानून के संहिताकरण की कार्यवाही शुरू करते हैं, तो इससे न केवल एकरूपता आएगी अपितु व्यापक स्तर पर संशोधन की प्रक्रिया भी शुरू हो जाएगी। मात्र कानून के संहिताकरण से अधिक विवाद भी नहीं होगा, क्योंकि यह कानून मौजूद है। इस प्रश्न की इसे ब्रिटिश न्यायधीशों के न्यायालयों में संशोधित किया गया है, के बावजूद इसमें किंचित स्थिरता है। इसलिए यदि हम अपने को केवल संहिताकरण तक सीमित रखते हैं, तो मेरा मानना है कि आज जो इतना ज्यादा विरोध दिख रहा है वह नहीं होगा। केवल इतना ही नहीं, बल्कि यदि हम केवल संहिताकरण करते हैं, तो हम जनता का सौहार्द भी पाएंगे और मेरा विश्वास है कि इसके बाद धीरे-धीरे और अन्य मामलों के लिए हिंदू संहिता में संशोधन करना भी आसान हो जाएगा। किंतु मौजूदा कानून में जिस तरीके से संशोधन करने का प्रस्ताव किया गया है, वह एक अलग मामला है। जब से राउ समिति गठित हो गई थी तब से जो साक्ष्य लिए गए हैं और जो रिपोर्टें और विधेयक तैयार किए गए, उनमें दोनों मामले एक साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया। अर्थात् संहिताकरण के साथ-साथ संशोधन भी। यकीनन दोनों पूरे नहीं हो सके हैं। यदि वे अपने को मात्र संहिताकरण तक सीमित रखते, जो ऐसा उन्हें काफी समय पहले कर देना चाहिए था। पर अब तो मामला संशोधन के स्तर तक पहुंच गया है। अस्तु, मेरा इस सब पर यही दृष्टिकोण है।

मैंने पूर्व में कहा था कि यह विधेयक तीन विभिन्न मामालों में संबंधित है अर्थात् विवाह, विरासत और उत्तराधिकार से। आईए, देखें कि इस पर हमारे समाज का प्रमुख विचार क्या है? जीवन में आधुनिक विचारों, आधुनिक शिक्षा और आधुनिक पद्धतियों के प्रभाव के परिणामस्वरूप यकीनन जनसाधारण के मस्तिष्क पर भी प्रभाव पड़ा है। विशेषकर देश की शिक्षित महिलाओं पर और हमने अपने संविधान में समानता के सिद्धांत को भी स्वीकार किया है, इसलिए सरसरी तौर पर देखा जाए तो सहज रूप से यही कहेगा कि उत्तराधिकार के मामले में किसी पुत्र या पुत्री के मध्य भेदभाव क्यों किया जाता है। किंतु मामला इतना सीधा-सरल भी नहीं है। एक पिता की इच्छा पुत्र या पुत्री को बेहतरी में कोई फर्क नहीं दिखता है। स्वभावतः, उसका प्यार और प्रभाव एक-समान ही होता है। कोई भी संवेदनशील व्यक्ति यह नहीं सोचेगा कि पुत्र को सब कुछ मिले और पुत्री वंचित रहे। असल में, ऐसा हुआ भी नहीं है। यहाँ मध्यम वर्ग के परिवारों के हवाले भी दिए गए थे। यदि हम धनाढ्यों को अलग रखें, जिनकी संख्या काफी कम है, तो हम पाते हैं कि एक पिता अपने पुत्र को अपेक्षा पुत्री के विवाह पर ज्यादा खर्च करते हैं। अनेक मामलों

में अपने पुत्रों की शिक्षा पर लगने वाला खर्च भी पुत्री पर कर दिया जाता है। मैंने यहाँ 'अनेक मामलों में' कहा है इन मामलों को मैं इसी तरह देखता हूँ। तब उत्तराधिकार के मामले में विरोध क्यों हो रहा है? इसके लिए हमें अपने हिन्दू समाज के संपूर्ण ढांचे पर अवश्य विचार करना चाहिए। मैंने माननीय मित्र पंडित मुकुट बिहारी भार्गव ने इस संबंध में एक हवाला दिया था। मैं उसी बात पर थोड़े से समय में कुछ कहना चाहूँगा। हमारे हिन्दू समाज का संपूर्ण ढांचा कई सदियों के परिणामस्वरूप उभर कर सामने आया है। हमारे समाज की मूलभूत इकाई 'परिवार' है और इस परिवार को एक इकाई के रूप में निरंतर विकसित रखने से ही यकीनन हमारा समाज स्थिर रहेगा। परिवान बने रहना यकीनन हमारा मुख्य उद्देश्य है उसके साथ समय-समय पर हमारे सभी कानून और परंपराएं बनती रहती हैं। यहाँ मुख्य बात थी परिवार का बने रहना, जो इस ढांचे की इकाई थी। विवाह के बाद पुत्रियाँ सहज रूप से अलग परिवार की हो जाती हैं जबकि पुत्र निरंतर उस परिवार में बने रहते हैं। इस निरंतरता को बनाए रखने और इसे टूटने से बचाने के लिए संयुक्त परिवार पद्धति की शुरूआत हुई थी। संयुक्त परिवार पद्धति हिन्दू समाज की एक विशिष्ट विशेषता थी? क्योंकि हिंदू समाज का आधार है परिवार का बने रहना। इसी कारण से संयुक्त परिवार पद्धति हिंदू कानून में एक विशिष्ट संस्था है, जो कानून की अन्य पद्धतियों में नहीं है, क्योंकि अन्य पद्धतियाँ कमोवेश व्यक्तिवाद पर आधारित हैं। यही संयुक्त परिवार पद्धति, एक या दो पीढ़ी पहले तक सही तरीके से चलती रही है। इसने कई गत सदियों से हमारे सामाजिक ढांचे की निरंतरता और स्थिरता को भी बनाए रखा है। इसी कारण से अब पुत्री को उत्तराधिकार दिए जाने के संबंध में आपत्ति की जा रही है। यह आपत्ति राजनीतिक या सामाजिक कारणों से नहीं है बल्कि इसका कारण है कि यदि आपने पुत्री के उत्तराधिकार की इजाजत दी, तो संयुक्त परिवार पद्धति पर आधारित संपूर्ण सामाजिक संरचना ध्वस्त हो जाएगी।

आधुनिक विश्व का रूझान व्यक्तिवाद की ओर है। कई स्थानों पर संयुक्त परिवार पद्धति टूट रही है। मैं यहाँ तक कह सकता हूँ कि इन आधुनिक परिस्थितियों के अंतर्गत संयुक्त परिवार पद्धति ज्यादा लम्बे समय तक नहीं चल पाएगी, किंतु यहाँ प्रश्न यह है कि क्या हम धीरे-धीरे व्यक्तिवाद द्वारा प्रतिस्थापित कर रहे हैं या यथाप्रस्तावित कानून द्वारा इसे विखंडित करने की कोशिश कर रहे हैं। यदि हम तत्काल हिन्दू समाज को विखंडित करना चाहते हैं। तो मुझे भय है कि हम इस समाज की नींव को नेस्ता-नाबूद कर रहे हैं जिसके अनदेखे और अप्रतयाशित परिणाम सामने होंगे। खतरा मात्र यह नहीं कि पुत्रियों के उत्तराधिकार के रास्ते खुलें, बल्कि तथ्य यह है कि उत्तराधिकार की शुरूआत से संपूर्ण समाज प्रभावित हो जाएगा। इसलिए इसका इतना विरोध है। यदि हम प्रगतिशील प्रक्रिया द्व ारा परिवार के विखंडन की प्रक्रिया में मदद करते हैं, जो विभिन्न आर्थिक एवं सामाजिक कारणों से पहले ही शुरू हो चुकी है तो भी वही परिणाम होंगे जो हमारा लक्ष्य है, पर

वे तत्काल या अकस्मात नहीं होंगे। विधेयक में एक ऐसी धारा है जो स्पष्ट कहती है कि इस संहिता के प्रारंभ होने की तिथि से संपूर्ण संयुक्त परिवार की अवधारणा समाप्त हो जाएगी। आप ऐसा तुरंत करने के लिए प्रयासरत हैं, अतः मेरी सोच है कि इससे निश्चित तौर पर समाज के मौलिक विचारों को ठेस पहुंचेगी, और जो समाज की एकता के लिए कई सदियों से संयुक्त परिवार का आधार रहे हैं। अतः मैं अपने जोशीले सुधारक मित्रों से अपील करता हूँ कि मैं आपके साथ हूँ, क्योंकि निःसंदेह यह पद्धति परिवर्तित की जानी चाहिए और आज इस विश्व में कोई भी इसका लम्बे समय तक प्रतिरोध नहीं कर पाएगा। पर प्रश्न यह उठता है कि क्या ऐसा हम धीरे-धीरे करेंगे, क्या हम जनता को अपने साथ रखेंगे और उतना ही चलेंगे जितना वह हमारे साथ चल सकती है? या हम उन्हें अपने साथ जबरदस्ती रखेंगे और दूसरी तरफ क्या हम मात्र कलम के जोर और विधायी प्रक्रिया से इस संयुक्त परिवार पद्धति को नष्ट कर देंगे? आज के दौर में असमान्य परिस्थितियों के कारण जनता कई ऐसी समस्याओं से चिन्तित है, पर इस प्रश्न ने भी उसे आकर्षित किया है और ऐसी किसी भी तात्कालिक कार्यवाही से ऐसे परिणाम आने की संभावना जो न ही सुधारकों के लिए, न किसी और के लिए उचित होंगे। मैं सहमत हूँ कि हम लम्बे समय तक यथावत् नहीं रह सकते हैं। अतीत में भी हिंदू समाज में विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। पर हम किसी को बलात लागू करने का प्रयास करेंगे, तो मैं यकीन से कह सकता हूँ कि परिणाम बहुत अच्छे नहीं होंगे। यह परिवर्तन भी धीरे-धीरे लागू होने चाहिए।

महोदय, मुझे एक बात पर आश्चर्य है। यहाँ हम दत्तकग्रहण के संरक्षण का प्रयास कर रहे हैं। मैं नहीं जानता इसका क्या प्रयोजन है। दत्तकग्रहण हिंदू कानून के लिए विलक्षण बात है। अन्य समाजों में भी बच्चों को गोद लिया जाता है, किंतु वह परिवार को बनाए रखने के लिए उद्देश्य से नहीं होता केवल बच्चों के प्रति लगाव और उनके लालन-पोषण के लिए मानवीय इच्छापूर्ति के लिए होता है। मुझे पता चला है कि अमेरिका और इंग्लैण्ड में भी गोद लेने का रिवाज है, किंतु उनका गोद लेने का उद्देश्य अलग होता है। हिंदू कानून की मौजूदा पद्धति में दत्तकग्रहण एक विलक्षण प्रक्रिया है, क्योंकि संयुक्त परिवार की हिंदू व्यवस्था संयुक्त परिवार को जारी रखने पर आधारित होती है। इस कानून द्वारा जिस तरीके से आप संयुक्त परिवार का विखंडन कर रहे हैं, तब उसके बाद गोद लेने के प्रावधान की आवश्यकता क्या है? इसे एक अलग दृष्टिकोण से भी देखें। क्यों गोद लेना हिन्दू समाज की एक विलक्षण विशेषता रही हैं? क्योंकि संयुक्त परिवार का आधार हिंदू समाज की मुख्य विशेषता थी और इसे जारी रखने के लिए गोद लेना वांछनीय था। संयुक्त परिवार के बिखराव के और व्यक्तिवाद के आगमन के फलस्वरूप मेरा मानना है कि हम क्यों दत्तकग्रहण को संरक्षण देने में अपना समय नष्ट कर रहे हैं। मैं निश्चित रूप से दत्तकग्रहण का विरोधी हूँ। अब तो दत्तकग्रहण के 100

मामलों में से 99 मामले अदालतों में हैं, क्योंकि संपूर्ण मानसिकता में परिवर्तन आ गया है। जब कोई विधवा एक लड़का गोद लेती है, तो वह सोचती है कि दत्तक-पुत्र उसकी संपत्ति व अन्य मामलों में निःशुल्क सहायता करेगा। पर वह लड़का सोचता है कि जो गोद ले रहा है उससे कुछ-न-कुछ तो प्राप्त होगा। इसीलिए वर्तमान में दत्तकग्रहण मात्र स्वार्थपरक प्रयोजन के लिए किया जा रहा है और जो गोद लेने की पूर्व अवधारणा थी वह विलुप्त हो रही है। इस विधेयक के प्रावधानों के लागू के होने बाद, संपूर्ण परिवार पद्धति विलुप्त हो रही है। इस विधेयक के प्रावधानों के लागू होने के बाद, संपूर्ण परिवार पद्धति विलुपत हो जाएगी और विश्व के अन्य हिस्सों की तरह यहाँ भी व्यक्तिवादी समाज आ जाएगा। इसलिए अब दत्तकग्रहण का प्रावधान बनाने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। ऐसा करने से दुविधा ही होगी। यदि हम जो कुछ कर रहे हैं, वह सुसंगत और तर्कशील होना चाहिए, तो हमें गोद लेने के प्रावधान से बचना चाहिए।

मैं अब विवाह और तलाक के मुद्दों पर आता हूँ। माननीय सदस्य श्री संथानम ने एक बात प्रत्येक से पूछी थी कि वे एक विवाह-प्रथा के पक्ष में थे या उसके विरोध में थे? मैं कहूँगा कि एक विवाह-प्रथा आज के दौर में नितांत आवश्यकता है।

मैं यह नहीं सोचता हूँ कि इस सदन में कोई सदस्य इसका विरोध करेगा, किंतु क्या हिंदू संहिता विधेयक इस प्रयोजनार्थ आवश्यक है? हमने बम्बई प्रांत में देखा है कि वहाँ एक विवाह-प्रथा है और कुछ मामलों में तलाक की अनुमति भी है। इन मामलों के आगे हमने कुछ भी अतिरिक्त नहीं किया है। एक विवाह को वैधानिक करना है, तो मैं कह सकता हूँ कि इस पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती। इस संबंध में वैचारिक कारणों के अलावा व्यावहारिक आधार भी इसके पक्ष में ही है। कोई भी अब एक से अधिक पत्नी रखना भी नहीं चाहता। केवल कुछ करोड़पति या अरबपति इस विलासिता को हासित कर सकते हैं, और शेष के पास इसकी गुंजाइश ही नहीं है। माननीय श्री थनथानन ने सुझाव दिया है कि यह कोई मानसिक विलासिता नहीं है। अतः सामान्यतः किसी मानसिक विलासित की इच्छा के बिना कोई भी ऐसा नहीं करता, जबकि इसके साथ उसकी पत्नी और बच्चे हों। अस्तु, यही है कि यह एक आम धारणा है और मैं भी सोचता हूँ कि दोनो पक्ष इस पर सहमत होंगे कि एक विवाह-प्रथा अवश्य जारी रहनी चाहिए।

किंतु हमें तलाक से संबंधित मुद्दे को दिग्भ्रमित करने का प्रयास करना चाहिए। जैसे ही आप एक विवाह कराते हो, उसके बाद यदि पता चले कि उसका साथी कोढ़ी है, तो आपको तलाक की व्यवस्था करनी होगी। यदि आप नहीं करते तो आप उन्हें उनके वैवाहिक अधिकार से वंचित कर रहे हो। कुछ मामलों में तलाक एक विवाह-प्रथा का पूरक परिणाम भी होता है। प्राचीन कानूनी सलाहकार मनु ने भी ऐसे मामलों में इसका प्रावधान किया है-

नष्टे मृते प्रव्रलिते क्लीखे च पतिते पतौ
पंचत्स आपत्सु समुनाटीणा पतिरन्यों विधीयते।

लेकिन मुख्य मुद्दा जो मैं समझता हूँ यह है कि क्या आप कानून द्वारा एक विवाह-प्रथा को सुनिश्चित कर रहे हो या नहीं। पर यह तो नियम 10,000 में कम से कम 9,999 व्यक्तियों पर लागू होने जा रहा है। इसलिए इस प्रश्न से हमारे मस्तिष्क को आंदोलित नहीं होना चाहिए। महोदय, इन विचारों के अलावा यहाँ एक अंतिम बात यह है कि संविधान के अनुच्छेद 44 के अनुसार एक सार्वभौमिक सिविल संहिता बनाने का अवश्य प्रयास करना चाहिए जिसे बनाने का अवश्य प्रयास करना चाहिए जिसे हमने पहले ही पारित कर दिया है। हमने अपने संविधान में एक नीति-निर्देशक सिद्धांत समाहित किया है कि पूरे भारत के लिए एक सार्वभौमिक सिविल संहिता बनाने का प्रयास जारी रहेगा। मैं चाहता हूँ कि आप गंभीरतापूर्वक विचार करें कि क्या इस प्रकार के कानून केवल हिंदूओं के लिए लागू करने से हम उस अपनी प्रगति के उस आदर्श की तरफ जा पाएंगे? अतः मेरा मानना है कि हम आगे जाने के बजाए पीछे की तरफ जा रहे हैं? मेरे माननीय मित्र श्री सनथानम को लगता है कि अनुच्छेद 44 के पारित होने के बाद इस कार्यवाही से हम उस आदर्श की तरफ जाने का प्रयास कर रहे हैं, जिसका उद्देश्य हिंदुओं की एकता को संगठित करना है। ऐसा हो भी सकता है या नहीं भी हो सकता है। किंतु इस राष्ट्र की सुरक्षा के हित में क्या संगठित करने का अर्थ केवल हिंदूओं को संगठित करना है, अथवा इस राष्ट्र के सभी नागरिकों को संगठित करना है? क्या सभी भारतवासियों के लिए एक जैसा कानून नहीं होना चाहिए? विवाह, उत्तराधिकार आदि विश्व के सभी देशों की सिविल संहिताओं में शामिल किए जाते हैं, अतः भारत में भी ऐसा ही अवश्य करना चाहिए। इस तरह यह संहिता भारत के सभी नागरिकों पर लागू होनी चाहिए, चाहे वे हिंदू या ईसाई, पारसी या मुस्लिम हों। इस दृष्टिकोण से तो हम बिल्कुल विपरीत दिशा में जा रहे हैं। मैं आपको बताता हूँ क्यों? धार्मिक या अर्ध-धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की प्रच्छन्न नीति विदेशी सरकार की उपज थी। यह उनके हितों के कारण हम पर थोपी गई थी, न कि हमारे हितों के कारण, पर आज ऐसा क्या है, जो हमें एक समान सिविल संहिता में इन सभी बातों को शामिल करने से रोक रहा है?

मौजूदा हिंदू संहिता विभिन्न परिस्थितियों के अंदर निर्मित की गई थी और तब निर्मित की गई थी जब एक समान सिविल संहिता बनाने का कोई आदर्श हमारे समक्ष नहीं था। किंतु अब काफी परिवर्तन आ गए हैं विशेषकर पाकिस्तान बनने के बाद हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि देश के सभी विविधाओं को एक दूसरे के समीप लाया जाए, चाहे वे हिंदुओं, ईसाइयों, मुसलमानों या पारियों के मध्य हों। मैं नहीं चाहता कि ऐसे मामलों में केवल हिंदुओं के लिए कुछ किया जाए। हमने अपने देश के सभी नागरिकों को एक समान करने के उद्देश्य से पहले ही एक साथ चुनाव कराने का निर्णय ले लिया है। अतः एक समान सिविल संहिता से सभी व्यक्ति एक धारा में आ जाएंगे।

यही वह प्रक्रिया है, जिसका अनुसरण करना चाहिए और जिसमें हम सबका ध्यान व हित अपेक्षित है। हमें उस विचार को अवश्य छोड़ देना चाहिए, कि हम उत्तराधिकार के नियमों और अन्य धर्मों के व्यक्तियों के सामाजिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। इस विचार को निश्चित ही त्याग दें। मौजूदा दौर में एक सुव्यवस्थित समाज बनाने के बजाए हम इस पुराने ढांचे से जुड़े हुए हैं, जिसका निर्माण तब किया गया था, जब हमें अलग-थलग रखने का लक्ष्य था। तब विचारों में परिवर्तन हुआ है। हमारे देशवासियों की सुरक्षा और संपन्नता भी एक समान सिविल सिंहिता के अधिनियमन की मांग करती है। मुझे यह चिन्ता नहीं है कि ऐसा करने से कुछ पारंपरिक मित्रों की भावनाएं आहत होंगी। हम, अंशतः पुरानी बातें से और अंशत: नई बातों से जुड़कर नहीं रह सकते। इस संबंध में मैं बताना चाहता हूँ कि एक समान सिविल संहिता गोआ में प्रचलित है। कानून मंत्री स्वयं इस बारे में जानते हैं। पूर्तगालियों के अधीन भारत के इस किस्से में उत्तराधिकार, आदि का कानून ईसाइयों, हिंदुओं, मुस्लिमों एवं प्रत्येक व्यक्ति पर एक समान रूप से लागू है। यदि ऐसा है, तो हमें इससे क्यों भय है? हमारा भय यह है कि अतीत से हमने क्या हासिल किया है, यानी हमारी रूढ़िवादिता। मैंने धार्मिक और अर्ध-धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप के करने के बारे में जो कहा था। वह ब्रिटिशों ने अपने प्रयोजनों के लिए किया गया था क्योंकि वे हमें बाँटकर अलग-थलग रखना चाहते थे। पर अब राष्ट्र के अपने सभी लोगों को संगठित करना हमारा आदर्श है। इसलिए इस तरह के विधेयक पर कार्यवाही करने के बजाय हमारे कानून मंत्री को 26 जनवरी, 1950 के तुरंत बाद एक समान सिविल संहिता को भारत के सभी लोगों पर लागू करना चाहिए। मैं जानता हूँ कि मेरी उत्साही सदस्य बहनें सोचती हैं कि मैं जब बोलने के लिए खड़ा हुआ था तो मैं इस विधेयक के विरोध में था। किंतु मुझे यह कहने दिया जाए कि मैं पूर्णतः सभी बातों में समानता चाहता हूँ, लेकिन उस तरीके से नहीं जिस तरीके से हम यह कर रहे हैं। यहाँ हम एक चीज को समाप्त करके दूसरी तरफ कठिनाइयां उत्पन्न कर रहे हैं। एक समान सिविल संहिता के संबंध में, हम अपने हिंदू मित्रों को बता सकते हैं कि संयुक्त हिंदू परिवार प्रथा अवश्य जानी चाहिए, ऐसा देश के हित में भी आवश्यक है। किंतु हम विपरीत दिशा में कार्य कर रहे हैं। अत: मुझे भय है कि इससे बहुत ही अवांछनीय और अप्रत्यशित परिणाम सामने आएंगे। मैं एक उदाहरण उद्धत करना चाहूँगा बंबई प्रांत के अहमदनगर शहर में एक युवा हिंदू विधवा एक मुस्लिम से शादी करना चाहती थी। मैं नहीं जानता था परन्तु वह मुस्लिम से शादी करने को इच्छुक थी। जैसा आप जानते हो इन दिनों देश काफी नाजुक दौर से गुजर रहा था, उसमें कई समस्याएं थीं। कई उपद्रव हुए थे और कई जानें चली गई थीं, इसलिए वह मुस्लिम व्यक्ति न केवल अपनी सुरक्षा के लिए भयभीत था, अपितु अपने समुदाय की सुरक्षा के लिए भी भयभीत था। उसने कहा कि मैं विवाह नहीं कर सकता। वह इस्लाम कबूले बिना शादी नहीं कर सकती थी, क्योंकि इस मुस्लिम व्यक्ति के पहले से पत्नी और बच्चे थे। बम्बई प्रांत में ही हमने ऐसा कानून बनाया है, जिसमें

किसी हिंदू को एक साथ एक से अधिक पत्नी रखने की अनुमति नहीं है, किंतु वहाँ मुसलमानों पर ऐसा कोई बंधन नहीं है। मौजूदा विधेयक के अनुसार भी आप मुसलमानों को कई पत्नियाँ रखने का अधिकार दे रहे हैं और वे किसी भी समय चार पत्नियाँ तक रख सकते हैं। परिणाम यह होगा कि यदि कोई धनाढ्य व्यक्ति एक और विवाह करना चाहता है, तो वह स्वयं मुसलमान बन जाएगा, और तब वह अपनी इच्छानुसार जितनी चाहे उतनी पत्नियां रख लेगा। इसलिए इन परिप्रेक्ष्यों में देश के हित में मांग यह है कि हमें सभी के लिए एक समान सिविल संहिता बनाने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए। यही संपूर्ण विश्व में हो रहा है। और जैसा मैंने पहले भी कहा था कि इस प्रकार की संहिता भारत में पुर्तगलियों के अधीन गोवा में भी प्रचलित है। यहाँ प्रस्तुत मौजूदा हिंदू संहिता हमारे पूर्व शासकों की एक कृत्रिम सोची-समझी रणनीति थी, क्योंकि वे हमें अलग रखने का प्रयास कर रहे थे। अब हमें उस पुराने ढर्रे से निजात पाने का प्रयास करना चाहिए। हमें एक सु-स्थापित एक समान समाज बनाने का ही प्रयास करना चाहिए।

अब हिन्दू, मुस्लिम या अन्य कोई किसी धार्मिक सम्प्रदाय के बजाय, हमें एक राष्ट्र अर्थात् एक वास्तविक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र बनाना चाहिए।

इसके लिए एक समान सिविल संहिता बनाना नितांत आवश्यक है। अतः मेरा सुझाव है कि इस विधेयक पर अभी आगे कार्यवाही न की जाए। इसलिए मैं, अपने माननीय कानून मंत्री से अपील करता हूँ कि इस विधेयक को वापस लेकर इस विधेयक में मैं समाहित मामलों से संबंधित एक समान सिविल संहिता प्रस्तुत करें, ताकि वह हिन्दू, ईसाईयों, मुसलमानों, पारसियों, यहूदियों या अन्यों सभी नागरिकों पर एक समान रूप से लागू की जा सके।

***श्री रामसहाय (मध्य भारत : सामान्य)** : महोदय, इस विधेयक की प्रवर समिति के समक्ष प्रस्तुत के दौरान, इसका स्वागत करते हुए मैंने कहा था कि प्रवर समिति के सदस्यों को इसकी उन विशेषताओं पर भी विचार करना चाहिए जिनका आधुनिक संस्कृति और सभ्यता के साथ मतभेद है। किंतु मैंने देखा है कि उन्होंने उस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया है हम केवल कल ही जान पाए हैं कि इस संबंध में एक समिति का गठन एक बार दुबारा किया जा रहा है। केवल इस कारण से ही मैंने इस सदन का थोड़ा और समय लिया है। मैंने इस विधेयक का विरोध नहीं किया है। मैं केवल कुछ संशोधन चाहता हूँ, जिससे जो इसका विरोध कर रहे हैं उनके दृष्टिकोणों को कुछ हद तक समायोजित किया जा सके और इसी कारण से मैंने सदन का कुछ समय लिया है।

मेरा कथन है कि माननीय श्री संथानम के मुताबिक इस विधेयक के माध्यम से हम सभी जाति-विभेदों को निरस्त करने जा रहे हैं। और एकता की ओर बढ़ने वाले हैं। मैं

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसंबर, 1949, पृष्ठ 496-98

सहमत हूँ कि ऐसे विचार और इस प्रकार का कोई विधेयक स्वागत योग्य है और हमें इसीलिए इसका स्वागत अवश्य करना चाहिए। मेरे मत से किसी को भी इस पर आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि अंतरजातीय विवाह, दत्तकग्रहण मुमकिन हो जाएँ तथा एक–दूसरे के साथ अन्य पारिवारिक संबंध विकसित हो जाएं। किंतु इस संबंध में मैंने थोड़ी कठिनाई भी अनुभव की है जिसे मैं सदन के समक्ष चाहूँगा। यह उत्तराधिकार मामले से संबंधित है। निःसंदेह उत्तराधिकार की परंपरा का कई स्थानों पर प्रचलन है और उसका अनुपालन भी किया जा रहा है, जबकि यहाँ पुत्रियों को समान आधार पर हिस्सा दिया गया है। मुझे इस पर भी कोई आपत्ति नहीं है कि वे अधिक हिस्सा उन्हें दें। पर मैं सदन के समक्ष संभावित कठिनाइयों के संबंध में कुछ बातें रखना चाहता हूँ जो भविष्य में घटित हो सकती हैं जब इस तरह की समस्याए आएंगी।

वर्तमान में, पुत्रियों का हिंदू समाज में विशेष दर्जा है जबकि अन्य जगह ऐसा नहीं है। हमने जाने या अनजाने में सामाजिक परंपराओं के साथ अनावश्यक छेड़–छाड़ की है और अब पश्चाताप स्वरूप एवं क्षतिपूर्ति हेतु इस विधेयक को प्रस्तुत कर रहे हैं। यह निश्चित रूप से हमारा दुर्भाग्य ही है। इसके बावजूद मैं कहूँगा कि सुधार हेतु अभी काफी गुंजाइश बाकी है। मेरे मत से कोई भी हिंदू पिता अपनी पुत्री के साथ भेदभाव नहीं करना चाहेगा अपितु उसे अधिकाधिक देने की चाहत ही रखता है।

बाबू श्यामनारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : ऐसा काफी हद तक सही है।

श्री राम सहाय : एक पिता अपनी पुत्री का विवाह उस घर में करना चाहता है जिसका स्तर उससे ऊपर हो। न केवल पिता, मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कोई हिंदूभाई भी यह नहीं चाहेगा कि उसकी बहन का विवाह किसी अच्छे घर में न हो। हजारों या लाखों में कोई इसका अपवाद हो सकता है, किंतु ऐसा भी हो सकता है कि कोई न कोई न मिले। अतः मैं यह समझ नहीं पाता कि उत्तराधिकार के मामले में क्यों हम पुत्रों और पुत्रियों के बीच समानता के लिए लड़ें। मैंने ऐसा इसलिए कहा है क्योंकि हमारे समक्ष हमारे मध्यम वर्ग में संपत्ति बंटवारे को लेकर भाइयों के बीच झगड़े होते रहते हैं। अभी पुत्री को दूसरे परिवार में उसका हिस्सा दिया जाता है। किंतु क्या पुत्री को भी अपने पिता की संपत्ति में अपने हिस्से के बारे में नहीं सोचना चाहिए? मेरे विचार में इससे हमारे सामाजिक सरोकार में निश्चित रूप से व्यवधान पैदा होगा। मैंने सदन के समक्ष इस विचार में इस मुद्दे को पेश किया है कि इससे कुछ हद तक भाई और बहन के मध्य प्रेम में भी दरार पड़ सकती है। जब संपत्ति के बंटवारे पर भाईयों के बीच पारिवारिक टकराव मुमकिन है, तो निश्चित है अलग परिवार में रह ही पुत्री के साथ गम्भीर झगड़े होंगे। जब भाईयों में, जिनमें आपसी प्रेम है के बावजूद झगड़ा पैदा हो सकता है, तो पुत्री कहाँ जाएगी? कौन है जो उनके सौहार्द को बचाएगा? इसके बरअक्स कौन मुकद्दमेबाजी के लिए प्रेरण्य और राह दिखाएगा? मैं

यह बिल्कुल नहीं समझ पाता कि हम क्यों एक परिपक्व स्थिति में छेड़खानी करें? यह पूरी तरह जानते हुए भी कि ऐसा करने से घर में कलह ही होगी।

इसी में हिंदू संयुक्त परिवार के संबंध में भी कुछ कहना चाहता हूँ। हमने सहकारी संस्थाएँ स्थापित करने को मान्यता दी है और उसमें जन-साधारण के सहयोग को आमंत्रित किया है, ताकि इस विचार को देश में फैलाया जा सके। फिर हम क्यों संयुक्त परिवार पद्धति को समाप्त करने पर आमादा हैं, जो 'सहयोग' को सिद्धांत पर आधारित है? उपरोक्त दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए विधेयक में कुछ ऐसे प्रावधान होने चाहिए, जिससे इन दोनों समस्याओं का समाधान हो सके। मेरी राय में जनता के कुछ वर्गों में फैली अधीरता और जिस प्रावधान से यह कार्यवाही विवादास्पद हुई है उसका कारण है- 'उत्तराधिकार का मुद्दा'। मुद्दा इसलिए यदि किसी तरह हम उत्तराधिकार के इस मुद्दे पर सहमत हो जाएँ, तो इस पर उचित विचार-विमर्श करके कार्यवाही को आगे बढ़ा सकते हैं। और इस संहिता को सर्वसम्मति से पारित कर सकते हैं। मैं सदन का ज्यादा वक्त न लेते हुए मात्र यह कहना चाहूँगा कि जो सदस्य अगली समिति में नियुक्त किए जाने हैं, वे कठिनाई को मद्देनजर अपनी औपचारिक बातचीत जारी रखें इसलिए नहीं कि किसी पुत्री को उसके पिता की संपत्ति में से हिस्सा नहीं दिया जाए अपितु यह देखें इससे हमारी सामाजिक पद्धति में किसी तरह का व्यवधान न आए।

यहाँ एक और विवादित बात ने मुझे झकझोरा है। मैं गलत हो सकता हूँ किंतु मैंने जहां तक इस पर सोचा है और मुझे ऐसा लगा कि एक पुत्र और एक पुत्री के मामले में इस विधेयक के अनुसार किसी पुत्र का केवल अपने माता-पिता की संपत्ति में हिस्से का हक है, जब कि किसी पुत्री को अपने ससुर की संपत्ति में भी हिस्सा दिया जा सकता है। यहाँ मैं इस असमानता के लिए कोई उचित कारण नहीं देख पाता हूँ। मैं समझ नहीं सका कि इसमें ऐसा प्रावधान क्यों बनाया गया है। माननीय कानून मंत्री से अनुरोध है कि चर्चा के दौरान इस पहलू पर भी कुछ प्रकाश डालें कि किस कारण से इस प्रावधान को शामिल किया गया है। अब सदन का अधिक समय न लेते हुए मैं यहीं पर अपनी बात समाप्त करता हूँ।

***श्री कृष्ण चंद्र शर्मा (यू.पी. : सामान्य) :** महोदय, मैंने इस चर्चा को बड़े ध्यान से सुना है। मैं अपने वरिष्ठों विशेषकर पंडित ठाकुर दास भार्गव और पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रेय द्वारा व्यक्त विचारों का बड़ा आदर करता हूँ। इसलिए उनके बाद मैं उनके समर्थन की भी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। क्योंकि उनके अनुसार यह हिंदू संहिता विधेयक हमारी संस्कृति और सभ्यता के साथ छेड़छाड़ करता है और यदि इसे कानूनी जामा पहना दिया गया,

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 6, भाग II, 12 दिसंबर, 1949, पृष्ठ 498-502

तो हमारे समाज की पूरी व्यवस्था ही ढह जाएगी और इससे हमारी धार्मिक व्यवस्था और हमारी प्राचीन संस्कृति में भी अनुचित एवं अनुप्युक्त हस्तक्षेप हो जाएगा। पर यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे इसमें ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा।

इस संहिता के संबंध ऐसा कुछ नहीं है, जो किसी भी मामले में हमारे धर्म के साथ हस्तक्षेप करे। यह संहिता सही है या गलत यह अलग प्रश्न है। किंतु प्रस्तावित विधेयक पर हिंदू धर्म से कोई सरोकार नहीं है और यदि वह विधेयक पारित होता है तो हिंदू धर्म अच्छा व बुरा जैसा भी है, इसके बाद भी वैसा नहीं रहेगा। दूसरा प्रश्न संस्कृति का है। प्रश्न यह है कि क्या कोई घर A या B का है? वह रामकुमार और कृष्णकुमार का हो सकता है और उनके साथ यदि विमलकुमारी भी शामिल हो जाए, तो इससे भी हिंदू संस्कृति प्रभावित नहीं होगी। मेरे मित्र मुझे बीच में टोकें, इससे पहले ही मैं कहना चाहूँगा कि वे संस्कृति के आधार को समझें। कोई संस्कृति तब तक संस्कृति नहीं है, जब तक उसमें समाज के विकास और प्रगति के दृष्टिकोण की कोई बात न हो। यदि संस्कृति मात्र स्थैतिक है तो यह ज्यादा नहीं चलेगी तथा न ही लम्बे समय तक बरकार रहेगी। यदि हिंदू संस्कृति भी स्थैतिक होती, तो वह टिकाऊ न हो पाती और लंबे समय तक बरकरार रह पाती। संस्कृति का प्रगति के साथ कुछ-न-कुछ संबंध अवश्य रहता है और उसका सरोकार प्रगतिशील समाज से भी अवश्यंभावी है। संस्कृति खतरे में है ऐसा कहने से पूर्व हमें इस सब पर विचार कर लेना चाहिए। संस्कृति और धर्म और वर्तमान हिंदू समाज या हिंदू कानून, यहाँ तक कि हिंदूधर्म भी उस तरह के नहीं हैं जिस तरह के वे वैदिक समय थे। क्या आप इस पर विश्वास कर सकते हैं कि यूनानी यहाँ आए, रोमवासी यहाँ आए, उनका प्रभाव यहाँ पड़ा, उससे क्या हम अप्रभावित रह सके? क्या हमारे पास कोई हृदय, मस्तिष्क तथा ग्राह्यता नहीं थी? उस ग्राह्यता और प्रगतिशीलता की क्षमता के कारण ही हम अपनी महानता को बरकरार रख सके। अगर हम में ग्राह्यता की क्षमता न होती तो हम इतने लम्बे समय तक टिके ही न रह पाते। यही मेरा उत्तर है। इसलिए हमें तार्किकता का मार्ग अपनाना चाहिए, हमें प्रत्येक मुद्दे पर तार्किक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। 'स्मृति' में जो हिंदू कानून दिया गया है, वह स्मृतिकारों से पूर्व के रीति-रिवाजों और तत्कालीन प्रयोगों का मात्र संहिताकरण है। हमारी पूर्व 'स्मृतियाँ' हैं और उनमें विभिन्न मुद्दों पर मतभेद भी हैं। यानी एक ही मुद्दे पर विभिन्न स्मृतिकारों ने विभिन्न दृष्टिकोण दिए हैं। प्रीवी कौंसिल ने कहा है कि एक दूसरे से भिन्न होने के बावजूद, उनकी व्याख्याओं को मात्र इसलिए स्वधार्य नहीं किया गया क्योंकि यह स्मृतियाँ या सच्चाई या वेदों पर आधारित हैं, अपितु इसलिए कि जो स्मृति में दर्ज है, वे उस स्मृति से पहले के प्रयोग या रीति-रिवाज होते थे। हिंदू कानून के अनुसार परंपराएं लिखित कानून और लिखित ग्रंथों से ऊपर होती हैं। अब इस दृष्टिकोण के आधार पर मैं आपसे गंभीरतापूर्वक पूछना चाहूँगा कि क्या यह धर्म का कोई प्रश्न है क्या यह संस्कृति का प्रश्न है; क्या हिंदू समाज रामकुमार और कृष्णकुमार के साथ

विमलकुमारी का शामिल करने से पतित हो जाएगा? अतः इस प्रश्न में धर्म को न लाया जाए। इसमें संस्कृति या अन्य बातों को भी न लाएँ और यह न करें कि हिंदू समाज पतित हो जाएगा। अतः मेरा कहना है कि हिंदू समाज, हिंदू संस्कृति, न ही हिंदू धर्म कभी इतना कमजोर रहा है कि वह इस अधिनियम से या किसी अन्य अधिनियम के पारित होने से यह गिर जाएगा। वह काफी मजबूत है।

इसके बाद यह भी कि यह मात्र हमारा दावा नहीं है कि हम ईश्वर की संतान हैं। यहाँ छः बड़ी सभ्यताएँ हुई हैं और प्रत्येक बड़ी सभ्यता ने दावा किया है कि वह ईश्वर से उत्पन्न हुई हैं। मुसलमान भी ऐसा कहते हैं, ईसाई भी ऐसा कहते हैं, जापानी भी कहते हैं। "मैं भगवान का पुत्र हूँ।" 1559 में चीनी सम्राट ने जार्ज III को एक पत्र में लिखा था, चीनी शासक को ईश्वर ने भेजा है। इसलिए उसके क्षेत्र का ब्रिटिश व्यापार से कुछ भी लेना-देना नहीं है, इसीलिए उसे विदेशियों द्वारा कलंकित होने से बचाया जाएगा। किंतु 49 वर्षों बाद जब अंग्रेजों ने चीन से युद्ध किया, तो अंग्रेजों के साथ अफीम का व्यापार भी किया गया। तब ईश्वर पुत्र का वह क्षेत्र कहाँ चला गया था? और तब वे ईश्वर-पुत्र कहाँ भाग गए थे जब अंग्रेजों की बंदूकें उनके सामने आई थीं? उधर अंग्रेज भी यही दावा करते थे कि यह उनका दायित्व है कि उन्हें अन्य 'मानवों को सभ्य बनाने के लिए अफ्रीका और भारत भेजा गया था तब ऐसा करना ही उनकी नियति में था। किंतु वे सभी दावे झूठे साबित हुए-ऐसे झूठे, जेसा हमारे अपनी 'सच्चाई के एकाधिकार' के दावे के साथ भी हुआ। मैं हिंदू हूँ, और मैं ब्राह्मण हूँ, और मुझे हिंदू और ब्राह्मण होने पर गर्व है, किंतु मैं ऐसा दावा नहीं करना चाहूँगा जहाँ सच्चाई पर मेरा स्वयं का एकाधिकार है और मैं कहूँ कि सच्चाई केवल मेरे पूर्वजों के पास भी नहीं थी किसी अन्य पास। यदि सच्चाई केवल मेरे पूर्वजों के पास थी, न कि किसी अन्य के पास, तो यह अनुचित अनैतिक ही था। या शायद पूर्वजों ने भी उसी ईश्वर ने इस पृथ्वी पर अन्य व्यक्तियों को उत्पन्न किया। अतः मेरा अनुरोध केवल यह है-और मेरा अनुरोध एक हिंदू बच्चे को अपने बड़ों के प्रति पूरी नम्रता और सम्मान के साथ है- कि कृपया धर्म को इसमें न घसीटें, संस्कृति को इसमें न लाएं। और यह भी न कहें कि हिंदू समाज पतित हो जाएगा। अतः इसे इसी दृष्टिकोण के आधार पर, सामान्य ज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर तथा आधुनिक संसार में प्रचलित कानूनों के आधार पर स्वीकार करें। प्रत्येक देश का कानून, उस देश की आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों का प्रतिफल और परिणाम के साथ-साथ उन स्थितियों से सामंजस्य स्थापित करने के लिए उसकी बौद्धिक क्षमता की अभिव्यक्ति भी है।

मैं अब अगली बात पर आता हूँ। हम लम्बे समय से इस विश्व में कुछ अलग तरह से रहते रहे है। मैंने कहा था कि जहाँ छह प्रकार की सभ्यातएं थी उनमें चीनी शासक, जापानी सम्राट, अंग्रेज राजा, रूसी जार और भारत के बादशाह बाबर आदि सभी ने यह दावा किया था कि ईश्वर ने ही उन्हें यहाँ भेजा था क्योंकि...

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : मेरे माननीय मित्र हिंदू संहिता के किस विशेष धारा का हवाला दे रहे हैं?

श्री कृष्ण चंद्र शर्मा : मैं आपकी टिप्पणी का हवाला दे रहा हूँ। जैसा पूर्व में मैंने कहा कि उन सभी ने कहा था कि वे उच्चतम थे और बहुत बलशाली थे और ऐसा उन्होंने इसलिए कहा था क्योंकि वे अन्य लोगों को समझ नहीं सके और उन्हें उनके बारे में जानकारी ही नहीं थी। अतएव उन्होंने कहा था कि उनका धर्म ही सर्वश्रेष्ठ है। किंतु अब आप विमान, जहाज, साहित्य एवं मुद्रणालय तथा प्रकाशन के माध्यमों से विश्व के सभी लोगों से संपर्क कर सकते हैं। इससे आपने दूसरे लोगों को जाना है और आप उनसे प्रभावित भी हुए हैं। अगर आप अपने बच्चों की मेज देखें तो वहाँ आपको बनार्ड शॉ और शेक्सपिअर का साहित्य दिख जाएगा। पर वहाँ आपको 'गंगा लहरी' नहीं मिलेगी। किंतु आप इससे यह नहीं समझेंगे कि बच्चा हिंदू नहीं है क्योंकि उसकी मेज पर केवल बर्नाड था और शेक्सपीअर या पर्ल बक हैं इस तरह प्रत्येक सोच और कार्रवाई विश्व के सभी देशों को प्रभावित करती है और असर डालती है। अब आपके पास ऐसा कोई कानून नहीं होगा जो अन्य के प्रभावों से वंचित हो। वह गतिशील होगा तभी वह लोगों का भविष्य बेहतर बनाने में मददगार होगा। इससे वंचित होकर, इससे अलग होकर आप कमजोर हो जाएंगे। इसलिए वैज्ञानिक आधार पर ही कानून बनाए जाएं। अतीत में पूर्वाग्रह रहे होंगे और अलग तरह के रीति-रिवाज रहे होंगे तथा वहाँ कई अन्य बातें भी संभव रही होंगी किंतु आज धर्म भी वैज्ञानिक अध्ययन का विषय है। आप यह नहीं कह सकते कि जिस चीज पर आप विश्वास करते हैं वही धर्म है। कोई भी इसे स्वीकार नहीं करेगा। धर्म वह है, जो मानव को उच्चतर बनाता हो और उसके जीवनदर्शन को ईश्वर के समीप लाता हो और मानवता के स्तर से उसे देवत्व की ओर ले जाता हो। यही कुछ ऐसे स्वीकार्य सिद्धांत हैं, जिनसे बचना मुश्किल है। इसलिए इस 20वीं शताब्दी में प्रत्येक चीज धर्म है, न ही प्रत्येक चीज संस्कृति है न ही प्रत्येक चीज किसी समाज का आधार है। यहाँ किंचित स्वीकृत सिद्धांत हैं, जिन्हें बहुतायत में विश्व द्वारा न्यायविदों, धार्मिक गुरुओं, विश्व के महान हस्तियों द्वारा समाज, संस्कृति एवं धर्म के रूप में स्वीकार किया गया है। जो कुछ आप बोलते हैं। और जिस पर विश्वास करते हैं वह न धर्म है, न कोई संस्कृति है और न ही समाज का कोई आधार है।

मेरे मित्र ने मुझसे पूछा, मैं किस का हवाला दे रहा था। श्री मुल्ला से 'हिंदू कानून' पुस्तक में प्रथम पृष्ठ पर जातियों के बारे में बताया गया है। उसमें हिंदू समाज की चार जातियों का उल्लेख है। उसके दूसरे पैरा में बताया है क्या व्यायरूप 'शुद्र' है? तीसरा पैरा कहता है कि क्या मराठे शूद्र हैं या क्षत्रिय हैं? मैं विनम्रपूर्वक आपसे पूछता हूँ : क्या इसमें संस्कृति या धर्म की कोई बात है? धर्म का आशय सांसारिक प्रेम से दैनिक आनन्द में ले जाना है। और संस्कृति का अर्थ आलोक और सौहार्द है। लोगों का जाति के आधार पर वर्गीकरण कोई संस्कृति नहीं है और इसका धर्म से तो कोई संबंध ही नहीं है।

एक माननीय सदस्य : केवल कृषि?

श्री कृष्ण चंद शर्मा : कृषि आप को भोजन देती है। पर आपके ऐसे विचार आपको क्या देंगे?

अब मैं आपको हिन्दू-कानून के स्रोतों के बारे में भी बताऊंगा। मेरा मानना है कि मेरे माननीय मित्र जो एक वकील है और वह इसकी सराहना करेंगे। हिंदू कानून के स्रोत हैं:- श्रुतियाँ, स्मृतियाँ, रीति-रिवाज जो कानून के समतुल्य हैं; व्याख्याएँ और इनके अतिरिक्त प्रीवी काउंसिल और अन्य न्यायालयों के न्यायिक निर्णय। जहाँ तक श्रुतियों का संबंध है तो उसके बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। मैंने श्री जायसवाल के संदर्भ से कहा था जिनकी प्राचीन राजतंत्र पर अच्छी पकड़ है, और उनके अनुसार स्मृतियों में जो भी उल्लिखित है वह प्रचलित रीति- रिवाजों एवं प्रचलनों का संहिताकरण मात्र है। मैंने कहा था कि कुछ बातों पर स्मृतियों में मत-भेद भी हैं। टीकाकारों ने उन्हें स्वीकार किया है पर उन्होंने उन्हें प्राधिकार के रूप में इसलिए नहीं स्वीकारा है कि वे यह बताएँ कानून क्या था, अपितु इसलिए कि वे यह बताएँ। वह अस्तित्व में था। हिंदू कानून के सिद्धांतों के अनुसार उसमें लिखित कानून की अपेक्षा, रीति-रिवाजों एवं परंपराओं का ज्यादा महत्व है उन्हें ही स्वीकारा जाता है। अब प्रीवी काउंसिल और उच्चतम न्यायालयों के मामले आते हैं। यह किस प्रकार बना? 1868 तक स्थिति यह थी कि हिंदू कानून को अंग्रेज जजों द्वारा हिंदू पंडितों के सहयोग से लागू कराया जाता था। पर पंडितों की न्यायालयी सरकारी मध्यस्थता को न्यायालयों में 1868 में समाप्त कर दिया गया था। आपका केस कानून पंडितों के सहयोग से अंग्रेजों के निर्णय का परिणाम है। मैं अब आपको बताता हूँ कि जब भी देश पर आक्रमणकारी ने शासन किया जब भी देश पर घुसपैठियों ने शासन किया, देश के असम्मानित व्यक्ति, जो ज्यादा विद्वान नहीं थे, वे ही उनके साथ रहे। अत: एवं, चाहे उन्हें किसी भी स्तर पंडित माना जाए वे अनैतिक व्यक्ति थे। अत: वे हिंदुओं के प्रतिनिधि नहीं थे। अब आप कहते हैं कि आप हिंदू कानून परिवर्तित नहीं करना चाहते क्योंकि हिंदू कानून ही पवित्र है? वह हिंदू कानून क्या है? अनैतिक व्यक्तियों की सहायता या सुझाव से अंग्रेजों का बनाया हुआ! यही आपका हिंदू कानून है, तो पीछे कौन-सी पवित्रता है? यही मेरी बात है। अब आप इस मौजूदा विधेयक को उसके अपने गुणों के आधार पर देखें और न्यायसंगत सिद्धांतों के अनुसार मौजूदा संहिता का अवलोकन करें। न्यायसंगत सिद्धांतों के अनुसार ही किसी कानून का अवलोकन आवश्यक है और वह अच्छाई के लिए किया जाता है।

इस संहिता में सर्वप्रथम विवाह और तलाक पर चर्चा की गई है। यदि आप गत दो या तीन वर्षों के दौरान पारित विभिन्न गौण अधिनियमों का अवलोकन कर लें, तो आप पाएँगे कि यह मात्र संहिताकरण है और इसमें नया कुछ नहीं है। आप सांस्कारिक विवाह कर सकते हैं और आप सिविल विवाह भी कर सकते हैं। आप पाएँगे कि हिंदू

लोग विभिन्न जातियों से विवाह कर लेते हैं, उसके बावजूद वे हिंदू बने ही रहते हैं। आप यह नहीं कह सकते कि वे जाति से बाहर हो गए हैं। अतः, क्या प्रचलन में है, पूर्व तथ्य क्या है; आप इसे कानून के तौर पर लें। मैं नहीं मानता कि आप यहाँ कोई परिवर्तन कर रहे हैं। न्यायिक सम्बंध-विच्छेद और विवाह की समाप्ति के संबंध में भी असलियत में जाएँ: कोई व्यक्ति नपुसंक था, कोई पति दूसरी औरत या रखैल को रखे हुए हैं, कोई एक व्यक्ति हिंदू नहीं रहा, व्यक्ति स्थायी तौर पर पागल हो गया हो, कोई व्यक्ति लाइलाज कोढ़ की बीमारी से ग्रस्त हो गया। मैं अब आपके सामने एक सीधा प्रश्न रखता हूँ। क्या हिंदू श्रुतियों या स्मृतियों के किसी कानून या संदर्भ में कुछ भी ऐसा है, जो इस शर्तों का खंडन करता हो? मैंने मनुस्मृति को देखा और पाया कि इस संबंध में कुछ भी असंगत नहीं है। यदि मेरे माननीय मित्र इसमें कुछ असंगत पाते हैं, तो वे इनमें संशोधन कर सकते हैं। मैं स्मृतियों के विरुद्ध नहीं हूँ और मुझे उन पर गर्व है। मैंने उनका अध्ययन किया है और मैंने उनमें ऐसा कुछ भी असंगत नहीं पाया है। यदि ये शर्तें सामाजिक न्याय के नियमों के अनुकूल हैं, तो मुझे ऐसा कोई कारण नजर नहीं आता कि आप इसे स्वीकार न करें। क्या आप स्त्रियों के दुश्मन हैं? क्या आप अपनी माँ और पुत्री के दुश्मन हैं? हमारी माँ एक सम्मानीय हस्ती है और हमारी पुत्री हमारे जीवन और संबंधों का अंग है। क्या ऐसा नही है? तब आप क्यों रुदन करते हो कि यह हिंदूस्तान की प्रतिष्ठा गिरायेगा और हिंदू समाज के टुकड़ों में बांटेगा। हमारे धर्म में ऐसा कुछ नहीं है, संस्कृति और हिंदू समाज के आधार पर भी ऐसा कुछ भी नहीं है, जो उक्त स्थितियों के विरुद्ध या उनके प्रतिकूल हो।

अब दत्तकग्रहण का मामला लें। मेरा अपना अनुभव है कि हमारे समाज की प्रगति के इस स्तर पर यह अनावश्यक है और इसका कोई अर्थ नहीं हैं। मनु का एक अध्याय ऐसा है, जो दत्तकग्रहण पर है: अर्थात् पुत्रविहीन पिता का स्वर्ग में कोई स्थान नहीं है। उस अध्याय का यही सार है। उस समय आर्य, मूल आदिवासियों या गैर-आर्यों का सामना कर रहे थे। अत: यह स्वाभाविक था कि वे अपनी संख्या बढ़ाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने इसे इस तरह पेश किया था: किसी हिंदू के तीन ऋण होते हैं: एक ईश्वर के प्रति ऋण, (2) ऋषियों के प्रति ऋण, (3) पित्तों के प्रति ऋण। अर्थात् अपनी प्रजाति के प्रति ऋण या प्रजाति की परंपरा को बढ़ाना। जब मनु ने स्मृतियाँ लिखी थीं, तब प्रजाति को बढ़ाना आवश्यक था। ऐसा करना आज आवश्यक नहीं है। आज, इस बात की चिन्ता नहीं कि हमारे बच्चे नहीं हैं दूसरी तरफ चिन्ता इस बात की है कि हमारे पास भोजन व कपड़े नहीं हैं। अगर हमारी संख्या कम है तो हमारे पास ये चीजें बहुतायत में होंगी। इसलिए इस स्तर पर मैं दत्तकग्रहण हेतु कोई तर्क नहीं देखता हूँ। पूजा-अर्पण और ऐसी बातों के पीछे ये यही मंशा थी कि हमारे समाज में दान-पुण्य की भावना बनी रहे और स्वर्ग का रास्ता खुला रहे। किंतु, मानव समाज ने अब इस कदर प्रगति कर ली है और

इस तरह संगठित हो गया है कि इस संसार में दान-पुण्य की और सामाजिक सेवा तथा उदारता के लिए भी काफी जगह है बजाय इसके, कि हम अपने पूर्वजों, जिनका अब इस संसार से कोई वास्ता नहीं है, के लिए कुछ करते रहें। अतः बेहतर यह होगा कि इस बृहत विश्व के लिए कुछ किया जाए। अब दत्तकग्रहण ऐसी संस्था है, जिसका कोई अर्थ नहीं है। इसकी वर्तमान समाज में कोई उपयोगिता भी नहीं है।

एक माननीय सदस्य : वे आपके भाषण पर आज रात चिंतन करेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : विभागीय विधेयक में मूल विधेयक की धारा 10 को पूर्णतः हटा दिया गया है-पूर्णतः भुला दिया गया है। वास्तव में, मुस्लिम कानून की भांति हिंदू कानून में भी नामित उत्तराधिकारी, एग्नेट, कॉग्नेट और अन्य असंबद्ध उत्तराधिकारी बन जाते हैं। इनमें विचारक, आचार्य, शिष्य और साथी-ब्रह्मचारी तथा एक ही शिक्षक से शिक्षा पाने वाले सभी शिष्य उत्तराधिकारी होते हैं। लेकिन विभागीय विधेयक में आचार्य और साथी-ब्रह्मचारी के सम्मान तथा उनकी भावनाओं को पूर्णतः अनदेखा कर दिया गया है। यह भी एक गंभीर परिवर्तन है। मुझे आशा है कि मैं अंततः सफल हो जाऊँगा कि कानून मंत्री इन गंभीर परिवर्तनों के साथ-साथ कई अन्य परिवर्तनों के बारे में सहमत हो जाएंगे।

इसके बाद हम, विभागीय विधेयक की धारा 109 और अंतिम विधेयक की धारा 108 पर आते हैं। ये प्रावधान नितांत नए हैं।

इस धारा में कुछ नए उत्तराधिकारियों का परिचय दिया गया है, जिन्हें मूल बिल में शामिल नहीं किया गया था।

स्त्रीधन के उत्तराधिकार के संबंध में भी कुछ परिवर्तन किए गए हैं। इसके बाद, भाग II, उपबंध-14 में जहाँ उत्तराधिकारी साथ-साथ रहते...

(5.00 बजे सायं)

माननीय उपाध्यक्ष : यदि माननीय सदस्य जल्दी समाप्त करना चाहते हैं। तो हम कुछ अतिरिक्त मिनटों के लिए रुक सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : नहीं, श्रीमान्।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई : यदि माननीय सदस्य समाप्त करना चाहें, तो हम पांच मिनट और रुक सकते हैं।

माननीय उपाध्यक्ष : अब मैं यह अध्यक्ष महोदय पर छोड़ता हूँ।

अब सदन कल प्रातः 10:45 तक के लिए अब स्थगित की जाती है।

इसके बाद सदन शनिवार 2 अप्रैल, 1949 प्रातः 10:45 बजे तक के लिए स्थगित कर दी गई।

*हिन्दू संहिता – जारी...

माननीय अध्यक्ष : अब प्रस्ताव पर आगे विचार हेतु सदन की कार्यवाही शुरू की जाएगी ताकि संशोधित किए जाने वाला विधेयक और हिंदू कानून कुछ खंडों के संशोधन एवं संहिताकरण पर विचार किया जा सके जिसके बारे में प्रवर समिति द्वारा रिपोर्ट लिया गया है।

श्री महावीर त्यागी (यू.पी. : सामान्य) : श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूँ कि हम कब इस बिल पर चर्चा करेंगे क्योंकि कुछ सरकारी काम–काज हैं और हम सुनिश्चित करना चाहते हैं कि इस बिल पर कब तक और विचार किया जाएगा? अब, इस चरण में विधायी विलंब किया जा रहा है, और सभी सदस्य बोलने के लिए उत्सुक हैं, पर उन्हें दो या तीन दिनों से बोलने का कोई मौका नहीं दिया जा रहा। अत: श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूँ कि फिलहाल, इस बिल पर कितनी लम्बी बहस और चलेगी?

माननीय अध्यक्ष : यह मेरे लिए मुश्किल है कि यह बात सकूँ कि इस बिल पर कितनी लम्बी चर्चा होगी। यह सदस्यों के ऊपर ज्यादा निर्भर करता है। मैं कह सकता हूँ शायद एक दिन अर्थात् 4 तारीख तक, मुझे लगता है कि अगले सप्ताह सभी कार्य दिवस सरकारी कार्यवाही के लिए आबंटित हैं तथा यह सरकार का मामला है कि वह कौन–सा विधेयक सदन के समक्ष प्रस्तुत करना चाहती है। और यह उसकी प्राथमिकता पर निर्भर है, जहाँ विभिन्न दृष्टिकोणों को भी ध्यान में रखा जाता है।

श्री महावीर त्यागी : श्रीमान्, मैं आपके मार्फत अनुरोध करता हूँ कि सरकार को अत्यावश्यक कार्यों को पहले लेना चाहिए और इस विधेयक–विचार अंत में किया जाए या हम पर छोड़ दिया जाए कि कौन–सा विधेयक पहले लिया जाए ताकि हम अगले विधेयकों के लिए तैयार को सकें। हम, अन्य विधयकों पर चर्चा में भाग लेने के लिए उत्सुक हैं।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय (पं. बंगाल : सामान्य) : श्रीमान् मेरे माननीय मित्र, श्री महावीर त्यागी द्वारा मैं आप द्वारा की गई टिप्पणी की सराहना करता हूँ कि ऐसे मामलों पर सदन को निर्णय लेना चाहिए कि किसी बिल पर कितनी लम्बी बहस चले। और इससे यही आशय निकलता है कि जब भी वक्ताओं की ज्यादा संख्या हो और वे लम्बे समय तक इसे जारी रखना चाहते हैं तो वे ऐसा कर सकते हैं। मैं आपकी इस टिप्पणी का आशय कुछ ऐसा ही समझता हूँ। यकीनन, मुझे लगता है कि अध्यक्ष के हाथ में यह नहीं है कि कितने दिनों का आबंटन किया जाए। इस क्रम में मैं, सोचता हूँ कि अध्यक्ष

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 3, भाग II, 2 अप्रैल, 1949, पृष्ठ 2246–89

महोदय समझ सकते हैं कि सदस्यों के लिए यह कितना कठिन है जो इस प्रस्ताव या यकीनन बोलना और इस पर पूरी चर्चा करना चाहते हैं। यों वे जानते ही हैं कि इस सत्र के दौरान क्या किसी और विधेयक पर विचार किया जा रहा है।

मैंने कल कहा था कि शुरू में ही जब यह प्रस्ताव लाया गया था, तब अधिकतर सदस्यों का मानना था कि इस विधेयक को इस सत्र में दोबारा न लाया जाए। वस्तुतः जब ऐसे महत्वपूर्ण और बृहत बिल को दोबारा विचारार्थ लाया गया था तब हम चाहते थे कि सदस्यों को समय से पूर्व सूचना दी जाए, परंतु ऐसा नहीं किया गया। मेरे मत की संपूर्ण महत्ता इस बात में है कि जब हमें यह पता है कि इस पर चर्चा होगी और यह केवल आज तक ही चलेगी तो हम यह बात समझ सकते हैं। लेकिन दूसरी तरफ हमें बताया गया कि इस सत्र में अतिरिक्त दिनों की व्यवस्था की जाएगी, यह अलग मामला है। परन्तु जो सदस्य इसके पक्ष या विपक्ष में बोलना चाहते हैं और इस चर्चा में आना और भाग लेना चाहते हैं, वे सूचना के अभाव में आ ही नहीं पाएँगे। हमने कल इस पर शुरूआत की, पर कई माननीय सदस्य इसमें भाग नहीं ले पाए। उदाहरणार्थ श्री के. एम. मुंशी यहाँ आए और प्रस्ताव पर बोलकर चले गए तथा कई सदस्य ऐसे थे जो इस महत्वपूर्ण बिल पर एक या दूसरे तरीके से बोलना चाहते थे। यदि सदन आपके माध्यम से जान सकें-ऐसा कहना और करना आपके लिए संभव भी है-कि कुछ अतिरिक्त दिनों की व्यवस्था कराई जा रही है, तो इससे वास्तव में, सहायता मिलेगी। अन्यथा हम नहीं जानते हैं कि इस महत्वपूर्ण बिल के संबंध में हम क्या कर पा रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : मैं, जानता चाहता हूँ कि क्या मानसिक कानून मंत्री इस स्थिति में हैं कि हमें मार्गदर्शन दे सकें।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (कानून मंत्री): मैं केवल इतना कह सकता हूँ कि इस बिल पर चर्चा की जाएगी। अगला चरण क्या होगा इस बात को बताने में असमर्थ हूँ, क्योंकि सरकार कार्रवाई की व्यवस्था का मुद्दा सरकार की एक समिति जिसे ''प्राथमिकता समिति'' कहते हैं के अंतर्गत है। समिति ने इस बिल के दिनों का निर्धारण किया था। समिति दोपहर बाद पुनः बैठक करेगी और इस पर अपना निर्णय लेगी। इसके अलावा, इस विषय पर मैं कुछ भी कहने में असमर्थ हूँ।

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : इस परिप्रेक्ष्य में मैं, अध्यक्ष महोदय के समक्ष सम्मानपूर्वक कहना चाहता हूँ कि अध्यक्ष महोदय के पास पर्याप्त शक्तियाँ ये देखने के लिए निहित हैं कि इस बिल के संबंध में यह प्रक्रिया ग्रहण नहीं की जाए। जब तक माननीय सदस्यों को पर्याप्त सूचना न दी गई हो, और जब यह प्रस्ताव आया तब आप निश्चित रूप से यह कहने के लिए सक्षम थे: ''मैं इस प्रस्ताव को लाने की अनुमति नहीं दूँगा, क्योंकि इससे हम महत्वपूर्ण चर्चा में भाग लेने वाले माननीय सदस्यों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।''

लेकिन इसी सत्र के दौरान समय-समय पर जिस तरीके से इस विधेयक को उठाया गया है, उस संबंध में मेरी शुरू से ही शिकायत रही है, जिसकी वजह से माननीय मंत्री भी अपना निश्चित मत नहीं बना सके। यह अपने आप में मेरे साथ अन्य माननीय सदस्यों पर भी की गई गंभीर प्रतिकूल टिप्पणी का विषय भी रहा है। और आज भी माननीय कानून मंत्री असमंजस में हैं कि क्या इस महत्वपूर्ण बिल के लिए और दिन दिए जाएं अथवा नहीं। यदि ऐसा होता है, तो मुझे आशा है कि इस सप्ताह के अंत में यदि अल्प सूचना पर कोई बिल विचारार्थ लाया जाता है, तो आप वैसे किसी भी प्रस्ताव को निश्चित रूप से निरस्त कर देंगे।

माननीय अध्यक्ष : चाहे कुछ भी हो, फिलहाल यह प्रश्न काल्पनिक ही आज तो हम इसी बिल पर चर्चा कर रहे हैं।

पंडित मुकुट बिहारी लाल भार्गव (अजमेर मेड़वाड़) : यह स्पष्टता बहुत ही अनुचित है कि आज भी सरकार इस विषय पर निर्णय नहीं ले सकी है। 30 मार्च को आपने सहर्ष सदन के नेता से पूछा था कि क्या स्थिति है? श्री मैत्रेय द्वारा इस विशेष प्रश्न को भी प्रस्तुत किया था कि हिंदु संहिता पर कार्रवाई की जा रही है अथवा नहीं। तब सरकारी बेंच ने इस प्रश्न का उत्तर 'न' में दिया था। उसके बाद पहली बार में 31 को पता चला कि बिल पर कार्रवाई की जा रही है। श्री चौधरी जो चर्चा में भाग लेना चाहते थे, वे आशय से असम चले गए, यह सोचकर यह बिल सदन के समक्ष प्रस्तु नहीं होगा। इसलिए, ये स्पष्टत: सदस्यों के हित में नहीं है कि यह बिल इस तरह सदन में प्रस्तुत किया गया है। अध्यक्ष महोदय के पास सदस्यों के अधिकारों को संरक्षित रखने की पर्याप्त शक्ति है।

सेठ गोविंद दास (सी.पी. एवं बरार : सामान्य) : आपको स्मरण होगा कि उस तारीख को सदन के नेता ने घोषणा की थी कि बहुत संभावना है कि दिनाक 7 अप्रैल को स्थगन हो सकता है। तब मैंने प्रश्न किया था कि इस सत्र में हिंदू संहिता विधेयक को विचारार्थ लाया जा रहा है अथवा नहीं। श्रीमान्, तब आपने यह कहा था कि ''इस मामले में आपका कोई सरोकार नहीं है और यह सरकार का मामला है कि सदन की कार्यवाही की कर्मसूची तय करें। अब, इस सत्र के अवसान के दौरान जब कि कई सदस्य अनुपस्थित हैं, यह उचित नहीं है कि इस तरह के विवादस्पद विधेयक पर कार्यवाही शुरू की जाए। मैं, उन सदस्यों के साथ हूँ, जो अभी बोले हैं और मेरा कथन है कि इस सदन के सदस्यों के अधिकारों व विशेषाधिकारों का बचाव करना आपकी जिम्मेदारी है तथा यह निहित अधिकार आपके पास भी है। अत: मैं आपसे अनुरोध करता हूँ, कि सरकार से कहें कि इस सत्र को अवसान के दौरान और सदस्यों को बिना पर्याप्त सूचना दिए बिना, इस बिल पर कार्यवाही की जानी उचित नहीं है। मैं, आपसे अनुरोध करता हूँ कि विधेयक के विचारार्थ चरण पर इस चर्चा को कम से कम इस शाम तक स्थगित किया जाए ताकि सदन के अगले सत्र में, जब हम शरद्कालीन सत्र में मिलें, तब इस पर कार्रवाई की जा सके।

माननीय अध्यक्ष : वर्तमान में यह प्रश्न मात्र एक है, क्योंकि कानून मंत्री ने यह नहीं कहा है कि चर्चा को न जारी रखने का प्रस्ताव है। अतः यदि सहमति हो, तो प्रश्न है कि प्रस्ताव पर आगे चर्चा कब की जाएगी (हस्तक्षेप)। उन्होंने कहा है कि यह 'प्राथमिकता समिति' के निर्णय पर निर्भर है। मैं भरसक प्रयत्न करूंगा और जहाँ तक सदन में मेरी शक्ति है, मैं सदस्यों की सभी न्यायसंगत एवं उचित मांगों को स्वीकार करूँगा। सरकारी कामकाज की व्यवस्था के प्रश्न पर मेरा मानना है कि यह थोड़ी ज्यादती होगी कि मुझसे हस्तक्षेप करने के लिए कहा जाए। और जहाँ तक इस बिल का संबंध है कि मेरा मानना है कि सदन में जो कुछ कहा गया है उसके परिप्रेक्ष्य में अन्य कुछ भी किए जाने की आवश्यकता नहीं है। चूँकि कामकाज की प्राथमिकताओं पर निर्णय लेने के लिए सरकार पूर्णतः सक्षम है, अतः मेरा मानना है कि वे भी सदस्यों की भावनाओं के प्रति जिम्मेदार है। अब हमें इस मामले में आगे जाने की आवश्यकता नहीं है। हमें विचाराधीन प्रस्ताव या आगे कार्यवाही शुरू कर देनी चाहिए।

श्री एच.वी. कॉमथ (सी.पी. एवं बरार : सामान्य) : श्रीमान्, मैं आपसे जानना चाहता हूँ कि यहाँ सरकारी कामकाज की व्यवस्था में अंतिम निर्णय किसका होता है?

माननीय अध्यक्ष : जहाँ तक सरकारी कामकाज का संबंध है, उसमें सरकार ही अंतिम निर्णायक है। अतः जहाँ तक प्राथमिकता का सवाल है, तो मेरी उस कार्यवाही में कोई दखल नहीं है।

सेठ गोविन्द दास : अंतिम प्राधिकार आपके पास ही है। यदि वे कोई भी मुद्दा सदन के समक्ष प्रस्तुत करना चाहते हैं तो प्रस्तुत कर सकते हैं। पर अंतिम प्राधिकार आपके ही पास है।

माननीय अध्यक्ष : फिलहाल, माननीय सदस्यगण अपनी सुविधानुसार ऐसा सोचते हैं, पर मेरा मानना है कि मेरे लिए यह जिम्मेदारी काफी ज्यादा है। मैं, सभी ब्यौरों और सरकार की आवश्यकताओं से वाबस्ता नहीं हूँ। मेरा मानना है कि मैं इस तरह के मामलों में उनके कामकाज को समायोजित करने के उनके विवेक के साथ हस्तक्षेप नहीं कर सकता हूँ। माननीय सदस्यों के लिए श्रेष्ठ तरीका यही है कि सरकार को उनके मतों के दबाव की अनुभूति होने दी जाए। इसके बाद स्थिति को समायोजित किया जाए। मेरा प्रयास यही हो सकता है कि मैं देखूँ, कि एक सार्थक चर्चा हो सके। उपर्युक्त दृष्टिकोण के अनुसार मैं निश्चित रूप से वह करूँगा, जो मैं कर सकता हूँ।

सेठ गोविन्द दास : हम आपके माध्यम से सरकार से अनुरोध कर रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : सदस्यों के लिए ऐसा करने के लिए, कई अन्य माध्यम भी हैं।

श्री अरुण चंद्र गुहा (पं. बंगाल : सामान्य) : हमें अब सूचित किया जाए कि सदन कब स्थागित किया जाएगा। यदि ऐसा नहीं किया जाता, तो हमें अपने कामकाज की व्यवस्था में कठिनाई होगी।

माननीय अध्यक्ष : इस संबंध में, मेरे द्वारा एक दिन स्पष्ट की जा चुकी है। मैंने माननीय प्रधानमंत्री से सूचना दिए जाने का अनुरोध किया था और उन्होंने कहा था कि वह यह एक अथवा दो दिनों तक और चल सकती है। उनके लिए भी यह संभव नहीं था कि इस बारे में निश्चित रूप से कह सकें, क्योंकि कुछ अत्यावश्यक कार्य आ सकते हैं, जिन्हें वे चर्चा में व्यवधान दिए बिना प्रस्तुत करना चाहें। इसलिए, ऐसे मामले भी सदस्यों के पास आते ही हैं। परंतु मैं कहना चाहता हूँ कि हम 9 अप्रैल के बाद इस पर चर्चा के लिए नहीं बैठेंगे।

श्री अरुण चंद्र गुहा : ऐसी स्थिति में अत्यावश्यक मामले पहले निपटाए जा सकते हैं।

माननीय अध्यक्ष : अत्यावाश्यकता के अनुसार, यह सहमति का मामला बन जाता है।

मौलाना हसरत मोहानी (यू.पी. : मुस्लिम) : डॉ. अम्बेडकर की इस कठिनाई के निवारण हेतु मैं एक सुझाव देना चाहूँगा। मेरा मानना है कि किसी विधायी उपाय को, जिसमें सामाजिक सुधार शामिल हैं, सरकारी कामकाज का भाग नहीं बनाया जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि किसी प्रकार इस विधेयक में श्रीमती दुर्गाबाई या श्रीमती रेणुका रे द्वारा प्रस्तुत सामाजिक सुधार भी शामिल हैं।

इस तरह इस बिल को अनिच्छुक जनता पर थोपना नितांत अनुचित है। अतः, मैं अपने माननीय मित्रों को आमंत्रित करता हूँ कि वे अपने पूरे उत्साह और इस बीत की अनुभूति के साथ कि विवेक, वीरता का ही श्रेयष्कर भाग है, के मद्देनजर इस विचाराधीन विधेयक को स्थगित कराएँ और सरकारी विधेयक के रूप में वापस करा दें।

बाद में किसी सामान्य सदस्य द्वारा जनमत के आधार पर सामाजिक सुधारों वाले इस प्रकार के विधेयक को प्रस्तुत करा सकते हैं।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य को इस विषय पर आगे बहस करने की आवश्यकता नहीं है। यह काफी है कि उन्होंने अपना सुझाव दिया है।

श्री मुहम्मद इस्माइल खान (यू.पी. : मुस्लिम) : जैसा, माननीय मंत्री ने सदन को बताया है, इस बिल की प्राथमिकता का निर्धारण मंत्री मंडल समिति द्वारा किया गया है। यकीनन, हमें उनसे यह जानने का हक है कि क्या वे इस विधेयक को प्राथमिकता पर रखे जाने के लिए इच्छुक हैं अथवा नहीं हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अब कुछ और कहने का इच्छुक नहीं हूँ। अब, मैं यही कहना चाहता हूँ कि सरकार का ऐसा कोई आशय नहीं है कि इस विधेयक को त्वरित मतदान द्वारा पारित कराया जाए।

माननीय अध्यक्ष : अब, श्रीमान नजीरुद्दीन अहमद अपना भाषण समाप्त कर दें। मैं, भाषणों पर समय-सीमा लागू करना नहीं चाहता हूँ। उन्होंने कल सारे दिन अपनी बात रखी और मेरा मानना है कि पिछली बार भी उन्होंने 48 मिनट तक भाषण दिया था। सटीक रूप से कहा जाए तो कुल मिलाकर उन्होंने 3 घंटे और 28 मिनट का समय ले लिया है।

यहाँ मैं उनके भाषण की समय-अवधि के आधार पर पैमाइश नहीं कर रहा हूँ। लेकिन अब मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि इस तथ्य पर विचार किया जाए कि फिलहाल, विधेयक पर विचार करने के लिए यह एक सामान्य प्रस्ताव है।

अत:, इसकी प्रत्येक धारा का व्यवस्थित क्रम से विवरण नहीं दिया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करना उचित नहीं होगा। जैसा मैं कल माननीय सदस्य के तर्क से समझ गया था कि इस विधेयक में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं। इसलिए इस विधेयक को नया माना जाए अथवा इसको जनता के हेतु परिचालित किया जाए। अत: इस बहस को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें इस बिल की प्रत्येक धारा का विश्लेषण करने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें मूल रूप से किए गए महत्वपूर्ण परिवर्तनों को सभी उदाहरणों सहित पेश करने की आवश्यकता नहीं है। मेरा मानना है कि वर्तमान स्तर पर यही उनकी बहस के लिए पर्याप्त होगा। बाद में जब विधेयक प्रत्येक धारा पर चर्चा के लिए प्रस्तुत हो, तो उन्हें किसी भी संशोधन का प्रस्ताव करने की सुविधा मिलेगी।

***श्रीमान नजीरुद्दीन अहमद (पं. बंगाल : मुसलमान):** श्रीमान् मैं इस सुझाव के लिए आपका शुक्रगुजार हूँ। मैंने कब महत्वपूर्ण परिवर्तनों के बारे में बताया था? आज, मैं स्वयं को कुछ अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन तक सीमित रखूँगा। (हस्तक्षेप)।

माननीय अध्यक्ष : मुझे हस्तेक्षप के संबंध में एक कठिनाई की अनुभूति होती है। इससे मूल मुद्दे से ध्यान भटक जाता है और अध्यक्ष के रूप में मुझ पर दबाव पड़ने से मेरे लिए इसे जारी रखना और उन्हें चर्चा के दायरे में लाना कठिन हो जाता है। यदि, कोई हस्तक्षेप नहीं हो तो कम समय लेगा।

एक माननीय सदस्य : लेकिन तब काफी नीरसता आ जाएगी।

माननीय अध्यक्ष : वस्तुत: इससे बोरियत से छुटकारा मिलता है लेकिन ऐसा ज्यादा होना सदन के लिए खतरनाक भी है।

---

*सी.ए. (विधि.) डी., खंड 3, भाग II, 2 अप्रैल, 1949, पृष्ठ 2249-76

अतः कोई हस्तक्षेप या विषयेतर टिप्पणी न की जाए, क्योंकि इससे मामला हल्का पड़ जाएगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान् मैं, स्वयं को विभागीय प्रारुप द्वारा किए गए कुछेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों तक ही समिति रखूँगा। मैं अब मूल बिल के भाग III की ओर आता हूँ और विभागीय बिल की धारा 126 की उप-धारा (2) की तरफ ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ जो अंतिम विधेयक की धारा 124 की उप-धारा (2) के समतुल्य है। यह एक नई उप-धारा है जो एक नए सिद्धांत का परिचय देती है, अर्थात् सम्पत्ति का कोई भी स्थानांतरण भुगतान किए गए अनुसरण के अधिकार को निरस्त नहीं करेगा। वस्तुतः संपत्ति संबंधी अनुरक्षण को सांविधिक प्रभार माना गया है। चाहे सही या गलत यह एक नया मामला है जिसे प्रवर समिति द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है, अपितु विभागीय समिति द्वारा पेश किया गया है।

इसके बाद मूल बिल के भाग III ए की तरफ जाएँ, जो उत्तराधिकार से संबंधित है। धारा 1 एवं 2 जो महत्वपूर्ण उपबंध है उन्हें पूर्णतः विभागीय बिल तथा अंतिम बिल से हटा दिया गया है। मैं इस विषय पर विस्तार से जाना चाहता, किंतु इसे माननीय मंत्री महोदय के विचारार्थ छोड़ देता हूँ।

इसके बाद, विभागीय विधेयक की धारा 131 (अंतिम बिल की धारा 130), उप-धारा (1) जो भरण-पोषण से संबंधित है, आती है। यह एक नया मामला है जिसमें काफी बड़ा परिवर्तन किया गया है। पुनः, विभागीय बिल की धारा 133 (अंतिम बिल की धारा 132) के अंतर्गत कुछ परीक्षण किए गए है और उसमें काफी अलग तरह का परिवर्तन किया गया है। इस धारा की उप-धारा (2) का भाग (बी) एक नया परिवर्तन है जो मूल बिल, भाग III, की धारा 6(1) के समतुल्य है।

इसके पश्चात, मूल विधेयक में भाग III ए की उप-धारा (1) भाग (जी) और (एच) भी महत्वपूर्ण उपबंध हैं, जिन्हें विभागीय विधेयक से पूर्णतः हटा दिया गया है।

भाग III-ए में मूल विधेयक में धारा 6 की उप-धारा (1) के उपबंधों को गलत ढंग से विभागीय विधेयक से हटा दिया गया है। यह हटाया जाना एक महत्वपूर्ण मामला है। विभागीय विधेयक (अंतिम विधेयक की धारा 133) की उप-धारा (2) जो अविवाहित पुत्री के वैवाहिक खर्चों से संबंधित है। यह एक नया उपबंध है जो मूल विधेयक में नहीं था।

इसके बाद, मूल विधेयक के भाग III-ए की धारा 7 जो परिवार से बाहर रहने वाला विधवा के भरण-पोषण से संबंध है। इसे विभागीय बिल के साथ-साथ अंतिम बिल से भी हटा दिया गया है।

अतः एवं मूल बिल के धारा III-ए में महत्वपूर्ण उपबंधों के साथ गंभीर चूक की गई है। मैंने इनका हवाला दिया है, क्योंकि मैं अलग-अलग किए गए परिवर्तनों पर ही नहीं अपितु इन परिवर्तनों के समेकित प्रभावों से भी परिचित कराना चाहता हूँ।

इसके बाद कुल बिल का भाग IV जो विवाह और तलाक से संबंधित है, वह विभागीय और अंतिम बिल के भाग II के समतुल्य है।

मैं उनके केवल प्रमुख मुद्दों पर चर्चा करूंगा। उनमें विवाह से संबंधित धाराएँ पूर्णतः और समूल परिवर्तित कर दी गई हैं; उन पर कुछ विस्तृत चर्चा अपेक्षित है। सांस्कारिक विवाह के संबंध में हिंदू समाज में जो रीतियाँ प्रचलित हैं वे सुविदित हैं। मूल बिल में जिन वैवाहिक पद्धतियों को छोड़ दिया गया है, वे रीति-रिवाजों एवं सामाजिक प्रथाओं के अनुसार लागू मानी जा सकती हैं। मूल बिल में विवाह की वैधता की शर्त हेतु सांस्कारिक विवाह के पंजीकरण का कोई प्रावधान नहीं था। मैं यह बताने का प्रयास कर रहा हूँ कि विभागीय विधेयक में ही ऐसे परिवर्तन प्रस्तुत किए गए हैं। वे अनजाने में हो सकते हैं, किंतु मुझे परिवर्तन ऐसे प्रतीत होते हैं, कि विवाह तब तक वैध नहीं होंगे जब तक इसे पंजीकृत न किया गया हो। वहाँ पंजीकरण वैकल्पिक नहीं है जैसा मुसलमानों के मामले में होता है। वहाँ विभागीय विधेयक द्वारा पुरानी औपचारिकताओं में हस्तक्षेप किया गया है और वहाँ विवाह की वैधता तभी मानी जाएगी, जब पंजीकरण किया गया हो। अन्यथा, मैं सिद्ध करने का प्रयास करूँगा कि विवाह अवैध हो सकता है।

मूल विधेयक का भाग IV इस विषय से संबंधित है। धारा 2 में उल्लिखित था कि हिंदू विवाह दो प्रकार का होता है-यानी सांस्कारिक विवाह एवं सिविल विवाह। यहाँ सिविल विवाह फिलहाल मेरा मुद्दा नहीं है, क्योंकि मूलतः 'हिंदू विवाह' के दो रूप हैं-सांस्कृतिक विवाह तथा सिविल विवाह, मूल विधेयक में यही प्रावधान था। हिंदू विवाह के सुपरिचित रीति-रिवाजों एवं अपेक्षाओं पर ये दोनों रूप निर्भर रहते थे और, इस हेतु कोई पंजीकरण कराए जाने की आवश्यकता नहीं थी। अतः सदन को विभागीय विधेयक में समतुल्य धाराओं पर सहर्ष विचार करना होगा। मूल विधेयक मात्र यह कहता है कि सांस्कारिक विवाह, विवाह के कई रूपों में एक प्रकार का विवाह है। इसकी विस्तृत रूपरेखा को इसे पक्षों के विवेक पर छोड़ दिया गया है।

विभागीय विधेयक की धारा 6 में जो अंतिम बिल की धारा 6 के समतुल्य भी हैं, निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं "यहाँ जो व्यक्त किया गया है, के अलावा हिन्दुओं के बीच कोई भी विवाह तब तक वैध नहीं माना जाएगा, जब तक इस भाग के उपबंधों के अनुसार इसे सांस्कारिक या सिविल विवाह के तौर पर अनुष्ठापित न किया गया हो।

मूल उपबंध के अनुसार विवाह हिंदू समाज में प्रचलित धार्मिक रीति-रिवाजों के अनुसार सांस्कारिक रूप में किया जाता है, किंतु विभागीय विधेयक के अनुसार कोई भी विवाह तब तक वैध नहीं माना जाएगा जब तक उसे इस भाग की व्यवस्था के अनुसार न किया जाए।

आइए, अब इस भाग के उपबंधों पर भी विचार करते हैं। हम इस विधेयक के अन्य भाग अर्थात् विभागीय विधेयक की धारा 9 के समतुल्य मूल विधेयक के भाग IV की धारा 6 के साथ-साथ अंतिम विधेयक पर भी आते हैं। (**एक माननीय सदस्य :** "कृपया ध्यान दें कि डॉ. अम्बेडकर जी मौजूद नहीं है।") धारा 9 सांस्कारिक विवाह के पंजीकरण से संबद्ध है। मूल विधेयक में उल्लिखित था- "सांस्कारिक विवाह के प्रमाण की सुविधा के लिए इस अध्याय के अनुच्छेद 6 के अंतर्गत उपलब्ध हिंदू सिविल विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका में ऐसे विवाह से संबंधित विवरणों को दर्ज करने संबंधी नियमों का निर्धारण किया जाए।"

बाबू रामनारायण सिंह (बिहार : सामान्य) : सूचना के लिए मैं जानना चाहता हूँ कि सरकार की ओर से यहाँ कौन आपकी इस चर्चा को सुन रहा है?

माननीय अध्यक्ष : कोई न कोई यहाँ अवश्य होगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य) : उसी की ओर से टिप्पणियाँ लिख रहा हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : शिष्टता के नाते मंत्री महोदय को यहाँ मौजूद रहना चाहिए था।

श्री बी.एल. सोंधी (पूर्वी बंगाल : सामान्य) : कानून मंत्री जी आने ही वाले हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : विवाह के सबूत को सुनाकर बनाने के लिए रजिस्टर में विवरण दर्ज करने के लिए संस्था द्वारा बनाए गए नियमों की मूल धारा का उपबंध किया गया है, पर विवाह की वैधता पूर्णतः यथावत् रखी गई है। सबूत के मामले में इससे अतिरिक्त सुविधा मिलेगी यानि विवाह के विवरण हिन्दू सिविल विवाह प्रमाण-पत्र पुस्तिका में दर्ज किए जा सकते हैं और इसकी नियमों द्वारा व्यवस्था की जा सकती है। यह सबूत को केवल सुविधाजनक बनाने के लिए था। यह एक अनिवार्य शर्म नहीं थी, न ही विवाह की वैधता को प्रभावित करने वाली कोई शर्त थी। यह सभी कुछ जो वहाँ उल्लिखित था, एक सामान्य नियम था, एक बहुत हितकारी नियम था। यानी विवरण रजिस्टर में दर्ज किए जा सकते थे और उन नियमों से विवाह निर्धारित किया जा सकता था। ऐसा केवल सबूत को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से किया गया था। इससे विवाह की वैधता किसी भी स्थिति में प्रभावित नहीं होती। वस्तुतः यदि किसी विवाह

का विवरण इस रजिस्टर में दर्ज नहीं हो तो भी विवाह वैध माना जाता किंतु, पंजीकरण होने से विवाह 'प्रमाणिक सबूत' बन जाता और किसी न्यायालय में प्रविष्टि की प्रमाणित प्रतिलिपि को न्यायिक सूचना माना जा सकता था। लेकिन विभागीय विधेयक की समकक्ष धारा में यह इस तरह उल्लिखित है :

''किसी भी सांस्कारिक विवाह के प्रमाण को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से प्रांतीय सरकार द्वारा उपलब्ध नियमों के द्वारा (और यहां यह देश इस प्रकार समाप्त होता है) (क) ऐसे विवाह से संबंधित विवरण को हिंदू विवाह प्रमाणपत्र पुस्तिका में दर्ज किया जाएगा...''

वस्तुतः यह बाध्यता यहीं पर पूरी नहीं हुई है, बल्कि यहाँ से केवल शुरू हुई है।

श्रीमान् इसके बाद, हम विभागीय विधेयक की धारा (बी) पर आते हैं। मूल विधेयक की धारा 6 की उप-धारा (3) में उल्लिखित है: ''इसी प्रकार की प्रविष्टि किए जाने की कोई बाध्यता नहीं होगी।''

श्रीमान् मैं आपसे जानना चाहता हूँ कि विभागीय बिल की समतुल्य भाषा पर विचार किया जाए। मैं, आपकी अनुमति से मूल विधेयक दोहराना चाहता हूँ- ''इस प्रकार की प्रविष्टि किए जाने की कोई बाधयता नहीं होगी।''

श्री महावीर त्यागी : इसक अर्थ क्या यह है कि विवाहित व्यक्तियों को रजिस्ट्रर के कार्यालय जाना होगा?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मूल विधेयक के अनुसार इस प्रकार की प्रविष्टि किए जाना अनिवार्य नहीं है। यह सुस्पष्ट है। किंतु हम विभागीय विधेयक के समतुल्य उपबंधों पर विचार करें।

''इस प्रकार की प्रविष्टि कराना अनिवार्य है।''

श्री जसपत राय कपूर (यू.पी. सामान्य) : मैं इस विषय पर बाद में आऊंगा। उसमें ''किस स्थान पर'' भी उल्लिखित है। वे बहुत ही असुविधाजनक स्थान हैं।

इसलिए मूल कानून को नियमानुसार सबूत को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से पुस्तिका में विवाह का विवरण दर्ज किया जा सकता है। किंतु प्रविष्टि कराना अनिवार्य नहीं होगा। परंतु विभागीय बिल की संशोधित धारा में ब्यौरा दर्ज किया जाएगा तथा ऐसे मामलों में प्रविष्टियाँ कराना अनिवार्य होगा।

इसके पश्चात्, और भी है। यानी विभागीय विधेयक की धारा 9 की उप-धारा (2) के अनुसार निम्न निर्देश है-

"उपधारा (1) के अंतर्गत नियम बनाने के लिए प्रांतीय सरकार उपबंध कर सकती है कि इसका उल्लंघन करने पर जुर्माना लगाया जाएगा जो रुपये 100 तक का हो सकता है।"

यह टिप्पणी थोड़ी अस्पष्ट भी है, क्योंकि अनिवार्य शर्त का निर्वाहन पंजीयक अधिकारी से आवश्यक है अथवा वह पार्टी को संबोधित है? किंतु इस पर तफसील से चर्चा बाद में की जा सकती है।

श्री महावीर त्यागी : आप यहाँ किस धारा का हवाला दे रहे हैं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : विभागीय विधेयक की धारा 9 (2) के साथ अंतिम विधेयक की धारा 9 (2)। वस्तुत: प्रांतीय सरकार अनुपालन न करने वालों या उन पार्टियों पर, जिन्होंने कभी दर्ज न किया हो या इसे दर्ज भी कराया हो तो संदेह होने पर दण्ड लगा सकती है। इन्हें इस उपबंध के उल्लंघन का दोषी माना जाएगा।

बाद में इस मामले को संदेह के घेरे में नहीं छोड़ा गया है, बल्कि इसे स्पष्ट कर दिया है।

माननीय अध्यक्ष : जिन मामलों में विवाह की वैधता प्रभावित नहीं होगी, वहाँ महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं कहाँ? यह केवल विस्तृत चर्चा का मामला है। इस पर माननीय सदस्य भी बोल सकते हैं जब हम विधेयक की प्रत्येक धारा की विस्तृत चर्चा करेंगे।

श्री महावीर त्यागी : श्रीमान् यह महत्वपूर्ण मामला है। इस मामले में यह एक बड़ा परिवर्तन है। पार्टियों को निर्देश देना होगा कि अब ससुराल के बजाय पंजीयक के कार्यालय में जाएं।

माननीय अध्यक्ष : मौजूदा चर्चा का दायरा पिछले कानून में किए गए परिवर्तनों के संदर्भ में हैं, जिसे राउ समिति ने प्रस्तावित किया था तथा प्रवर समिति ने ग्रहण किया। पंजीकरण का एक छोटा-सा ब्यौरा दिये जाना अनिवार्य है। जहाँ तक विवाह की वैधता का मामला है तो यह किसी भी दशा में प्रभावित नहीं होगा। मैं, इस पर अन्य कोई चर्चा नहीं कराना चाहता हूँ, मैं यह नहीं कहता कि परिवर्तन वांछनीय है अथवा नहीं, किंतु इस विषय पर अब चर्चा कराना विषयेत्तर चर्चा मानी जाएगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं उपरोक्त के साथ अंतिम बिल के संबंध में भी एक दो वाक्यों का हवाला देना चाहूँगा। धारा 138 नियम बनाने की शक्ति धारा 2, उप-धारा (ii) में उल्लेख है:

"वे मामले एवं दायरे, जिनमें सांस्कारिक विवाह के विवरण अनिवार्यत: दर्ज किये जाएंगे और इसका उल्लंघन करने पर दण्ड""

इस तरह यहाँ अनिवार्य पंजीकरण की व्यवस्था की गई है। मैं इस प्रश्न पर आ रहा हूँ कि यह कैसे विवाह को प्रकाशित करता है।

(एक माननीय सदस्य : ऐसा करना प्रांतीय सरकार के विवेक पर निर्भर है।") निःसंदेह यह प्रांतीय सरकार के विवेक पर है। लेकिन उस सरकार को एक नई शक्ति दी गई है, जिसे प्रयुक्त किया जा सकता है।

मैं पुनः विभागीय विधेयक की धारा 6 पर आता हूँ। यह अंतिम विधेयक की धारा 6 के समतुल्य है :

"हिंदुओं के मध्य कोई भी विवाह तब तक मान्य नहीं होगा, जब तक उसे वर्तमान प्रावधानों के सांस्कारिक विवाह या सिविल विवाह के तौर पर मान्यता न दी गई हो।"

मूल विधेयक की धारा के अनुसार ये औपचारिकताएँ जरूरी नहीं थीं। विभागीय विधेयक है: " इस भाग के प्रावधान" के अनुसार विवाह का पंजीकरण अनिवार्य है। वस्तुतः सांस्कारिक विवाह और सिविल विवाह को एक-दूसरे के समतुल्य कर दिया गया है। पहले केवल सिविल विवाह का पंजीकरण अनिवार्य था। विभागीय विधेयक की धारा 6 की वाक्य-संरचना में परिवर्तन के साथ पंजीकरण की अनिवार्यता के संयुक्त प्रभाव के फलस्वरूप ऐसा प्रतीत होता है कि कोई विवाह जो इस धारा के अनुसार पंजीकृत नहीं है, और जिसका विवरण दर्ज नहीं किया गया है, वह अवैध विवाह होगा। अतः कोई भी विवाह वैध नहीं होगा जब तक उससे इस भाग के अनुसार पूरा न किया गया हो।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : यह कहाँ लिखा है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह मेरी व्याख्या है, जिसे मैं सदन के विचारार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ। वस्तुतः यह माननीय कानून मंत्री के जहन से काफी दूर है कि वे इसके परिणामों के प्रभाव को जान सकें। उन्होंने अपने भाषण में यह स्पष्ट किया है कि विवाह से संबंधित प्रावधान अनिवार्य नहीं हैं, बल्कि वैकल्पिक हैं। यह भी हो सकता है कि ये प्रभाव अनभिप्रेतित थे, किंतु चाहे यह अभिप्रेतित या नहीं, अभाव तो है ही। तदनुसार कोई भी विवाह वैध नहीं होगा, जब तक कि उसे इस भाग के अनुसार विधिवत पूरा न किया गया हो। तो और इस चूक के लिए जुर्माने का भी प्रावधान है। सदन अनिच्छुक है या विधेयक का मसौदाकार इस व्याख्या को अमान्य कर सकता है, फिर भी यह व्याख्या का प्रश्न है, मानो यह भावना का प्रश्न नहीं है। मुद्दा यह है कि क्या यह व्याख्या वैध है? यदि ऐसा है, तो यह बहुत ही महत्वपूर्ण परिवर्तन है। यद्यपि यह परोक्ष रूप से ही बताता है की कोई विवाह अवैध होगा यदि उसे पंजीकृत न किया गया हो, यह एक भयावक प्रस्तावना होगी तथा इससे कानून का घोर उल्लंघन हो जाएगा। पंजीयक अधिकारी उन पार्टियों से काफी दूरी पर हो सकता है, जो दुर्गम क्षेत्रों में रह रही हैं

और हमारे देश की इस स्थिति में विशेषकर पिछड़ी जनता के लिए, यह प्रावधान नितांत अनीतिकर और अनुपयोगी ही है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान् यदि आप मुझे अनुमति दें, तो...

माननीय अध्यक्ष : इस बहस के पक्ष-विपक्ष पर कोई चर्चा न की जाए।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : ऐसा मैंने केवल स्पष्टीकरण के उद्देश्य से चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : यदि हम स्पष्टीकरण एवं अगामी चर्चा में पड़ते हैं तो यह कभी समाप्त न होने वाला भाषण हो जाएगा। मुद्दा यह है कि माननीय सदस्य अपनी व्याख्या कर रहे हैं। पर मैं इस तथ्य की ओर सबका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि इससे विवाह की वैधता प्रभावित नहीं होगी। यदि वे फिर भी इस बहस को जारी रखना चाहते हैं, तो उन्हें ऐसा करने दें। इससे उनका भाषण छोटा हो जाएगा।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान्, यदि आप मुझे अनुमति देते हों, तो मैं केवल एक बात पर उनसे स्पष्टीकरण चाहता हूँ यह धारा इन शब्दों से शुरू होती है

''किसी सांस्कारिक विवाह के साक्ष्य को सुविधाजनक बनाने के लिए'''

माननीय अध्यक्ष : मैं इस बात से पूर्ण भिज्ञ हूँ। पर मैं इसे उनके समक्ष उस तरह प्रस्तुत नहीं करूँगा। मैं कहना चाहता हूँ कि इससे किसी भी तरह विवाह की वैधता प्रभावित नहीं होती है। लेकिन हम किस प्रकार उन्हें मनवा सकते हैं? आइए, अब हम उनकी ओर मुखातिब होते हैं। यही संक्षिप्त तरीका है जिससे हमारे समक्ष उनके भाषण का समायन हो सकेगा। अन्यथा, हमें उनके भाषण के प्रत्येक मांग पर चर्चा करनी होगी। जब माननीय सदस्य-गण उनके भाषण को शांतिपूर्वक सुन रहे हैं तो इसका आशय यह नहीं है कि वे उनके कथनों से भी सहमत हैं। अतः अब वे अगली बात पर आगे बढ़ सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं अब विभागीय विधेयक की धारा 8 पर आता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : यह बेहतर होगा कि माननीय सदस्य सदन के समक्ष अंतिम विधेयक के संदर्भ प्रस्तुत करें और उसके परिवर्तनों का जिक्र करें। अन्यथा, मैं उनका अनुसरण नहीं कर पाऊंगा, क्योंकि वे एक साथ तीन या चार विधेयकों का हवाला दे रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं मूल विधेयक से शुरू करता हूँ। यकीनन, यह अंतिम विधेयक की धारा 8 भी है। मूल विधेयक को भाग IV की धारा 4 के अनुसार :

''सांस्कारिक विवाह रीति-रिवाजों एवं संबंधित पक्षों के रीति-रिवाजों/परंपराओं के अनुसार अनुष्ठापित किए जा सकते हैं।''

लेकिन संशोधित मसौदा की धारा 8, उप-धारा (1) के अनुसार:

"सांस्थारिक विवाह तब तक संबंधित पक्षों पर बाध्यकारी और पूर्ण नहीं होंगे जब तक ऐसे विवाहों के लिए अनिवार्य रीति रिवाजों तथा पक्षों के रीति रिवाजों के अनुसार उन्हें अनुष्ठापित न किया गया हो।"

श्रीमान्, मेरे अनुसार यह बहस का मुद्दा नहीं है। ऐसा भूलवश हुआ है। किंतु मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैं किसी आवश्यक तर्कपूर्ण परिणाम के लिए इस व्याख्या पर जोर नहीं देना चाहता हूँ। लेकिन मेरा मानना है कि इसे शायद अनजाने में लाया गया है और यहाँ संदेह की भी संभावना है, जैसा विवाहों की वैधता के संबंध में भी देखा गया है। मैं प्रत्येक अधिवक्ता की भावना को समझता हूँ? जज और राजनेता इस पंजीकरण के आधार पर विवाह की अवैधता के खिलाफ होंगे। किंतु यहाँ राजनीति भी है; अतः यह अवधारणा पूर्णतः वैध और सांवैधानिक ही होनी चाहिए।

व्याख्या क्या है? यदि आप इन नए उपबंधों के अनुसार विवाह संपन्न नहीं करते, तो विवाह अवैध होगा। नतीजा यह है कि क्या हम उपबंध के औचित्य से सहमत हैं या नहीं? मेरी सहज बुद्धि कहती है कि जब तक विवाह का ब्यौरा रजिस्ट्रर में दर्ज नहीं किया जाता, तब तक विवाह अवैध माना जाएगा। मैंने यह सदन के विचारार्थ प्रस्तुत किया है।

मैंने पहले भी प्रविष्टियाँ किए जाने के संबंध में उपबंधों का हवाला दिया है कि इनकी प्रविष्टियाँ कराना अनिवार्य हो जाएगा।

माननीय अध्यक्ष : ऐसा आपने कह दिया है; अतः इसे दोहराने की आवश्यकता नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : क्या इसे संबंधित पक्षों अथवा पंजीयन अधिकारी के लिए अनिवार्य कर दिया है?

माननीय अध्यक्ष : यह विस्तृत चर्चा का विषय है। फिलहाल, हमें इस पर जाने की आवश्यकता नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं, अब अल्पसंख्यक और अभिभावकता से संबंधित मूल विधेयक को भाग V पर आता हूँ। इसलिए धारा 3 को अंतिम एवं विभागीय विधेयक से पूर्णतः हटा दिया गया है। मुझे पर धारा की तह में जाने की आवश्यकता नहीं है, किंतु यह एक महत्वपूर्ण धारा है, जिसे छोड़ दिया गया है। यहाँ एक गंभीर परिवर्तन किया गया है। यहाँ अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन भी किए गए हैं, पर मैं इस विषय पर कुछ नहीं कहूँगा।

अब, मैं कूल विधेयक के भाग VI पर आता हूँ जो 'दत्तकग्रहण' से संबंधित है। इसकी धाराओं 1 और 2 को छोड़ दिया गया है। विभागीय विधेयक की धारा 55 और अंतिम विधेयक की धारा 55(1) तथा उप-धारा बिल्कुल नई धाराएँ हैं। पुनः, मूल विधेयक की भाग VI की धारा 19 की उप-धारा को छोड़ दिया गया है। एक नई धारा पूर्णतः भिन्न शर्तों के साथ प्रस्तावित की गई है। विभागीय विधेयक की धारा 68 जो अंतिम विधेयक धारा 68 के समतुल्य है, की उप-धारा (1) एक नई धारा है। वहाँ दोनों विधेयकों की धारा की उप-धाराओं से संबंधित उपाबंध भी नए हैं पुनः मूल विधेयक की धारा 19 की उप-धारा (3) के साथ उसकी दो शर्तों को अंतिम विधेयक से पूर्णतः हटा दिया गया है। पुनः इस धारा की उप-धारा (5) को हटा दिया गया है। इसी प्रकार, मूल बिल (भाग VI) की धारा 21 को हटा दिया गया है। भाग VI में मूल विधेयक की धारा 25 के साथ दो उप-धाराएँ और दो अन्य भाग की पूर्वतः हटा दिए गए हैं। अतः मेरा कहना है कि विभागीय विधेयक द्वारा अत्यंत महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं। यद्यपि यह स्पष्ट है कि प्रवर समिति के माननीय सदस्यों ने अनुभव किया है कि विभागीय विधेयक में किए गए परिवर्तनों को प्रस्ताविक किया गया था, किंतु आश्वासन के मद्देनजर यह भी महसूस किया गया है, कि कोई परिवर्तन नहीं किए गए हैं। वस्तुतः उनके ध्यान को विशेष रूप से आकर्षित नहीं किया गया था, और इसका भय है कि उन्होंने कभी इन विवरणों पर पूर्णतः विचार नहीं किया है। ऐसा नहीं होता, यदि वे अपना ध्यान मूल विधेयक पर रखते और प्रत्येक धारा के अनुसार कार्यवाही करते या वे पहले स्वयं बैठते और फिर इसे तैयार करने के लिए विभाग को निर्देश देते।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य उसी बात को उजागर कर रहे हैं जो उन्होंने कल कहीं थीं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं उन्हीं बातों को दुबारा दोहराने का इच्छुक नहीं हूँ। इस परिप्रेक्ष्य में मेरा कहना है कि साधारण-सी बात यह है कि यह एक महत्वपूर्ण मामला है, क्योंकि इस विधेयक के उचित एवं पूर्ण विचार के संबंध में प्रवर समिति पूर्वाग्राही रही है।

मैं प्रवर समिति के सदस्यों पर कोई दोषारोपण नहीं करना चाहता हूँ किंतु प्रत्येक धारा की उचित तुलना किए बगैर प्रवर समिति के सदस्यों के लिए भी यह काफी कठिन हो जाएगा कि वे सभी परिवर्तनों को समझ सकें।

हम इसके बाद इस विधेयक से संबंधित अन्य मामलों पर आते हैं। उत्तराधिकार का मुद्दा लम्बे समय से देश की सोच को उद्वेलित कर रहा है। मेरा मानना है कि इस विधेयक में पुत्री की स्थिति पर एक बहुत ही विवादित उपबंध है। वस्तुतः मुझसे पूछा गया था कि क्यों है कि मैं अपनी हिंदू बहनों को देने से मना कर रहा हूँ, जबकि मैंने अपनी मुस्लिम बहन को दे रहा हूँ। इसका उत्तर भी बहुत आसान है।

मुस्लिम कानून के मुताबि, पुत्र को हिस्सा दिया जाता है और इस कानून को कई अन्य परिप्रेक्ष्यों, इतिहास, समाज एवं अन्य बातें, जो इसकी तसदीक करती हैं के संदर्भों के साथ बनाया गया है। यहाँ एक प्रकार का न्याय है जिसे मुस्लिम समाज 1350 वर्षों से सहन और स्वीकार कर रहा है। किंतु हमारी हिंदू बहनें विभिन्न प्रथाओं के तहत लगभग 3 से 4 हजार वर्षों से इसे सहन कर रही हैं। जहाँ तक दो प्रथाओं के मध्य पुत्री की स्थिति की तुलना का संबंध है तो यह बिल्कुल सुसंगत नही होगा। असल में, कानून की दो प्रथाएँ उनके मामलों को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से देखती हैं और ये विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित हैं मुस्लिम कानून के तहत उत्तराधिकार की पद्धति पुराने अरबी रीति-रिवाजों से ग्रहण की गई हैं। ऐसा स्पष्ट एवं अनिवार्य परिस्थिति के कारण हुआ था। अरब में कोई अचल संपत्तियाँ नहीं थीं। वहाँ रेगिस्तान था, इसलिए केवल चल संपत्तियाँ थीं। जब एक व्यक्ति की मृत्यु होती थी...

श्री तजामुल हुसेन (बिहार : मुस्लिम) : सूचना के तहत मैं पूछना चाहता हूँ कि माननीय सदस्य ने कहा कि अरब में कोई अचल संपत्ति नहीं थी। तब वे वहाँ के घरों के बारे में क्या कहेंगे?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह प्रश्न अनावश्यक है। मैं माननीय सदस्य को बताऊंगा कि जर्मन वासी वॉन क्रेमर की साहित्यिक पुस्तक 'दी ओरएिंट अन्डर द कालफिस' पढ़ें। इस पुस्तक में वांछित सूचना प्राप्त हो जाएगी। इसका अनुवाद स्वर्गीय खुदा बक्श ने किया है। इस विषय पर केवल यही पुस्तक है। इस पुस्तक में एक विशेषज्ञ के दृष्टिकोण से संपूर्ण विषय पर लिखा गया है। मैं विनम्रतापूर्वक अपने माननीय मित्र को बताना चाहता हूँ कि अन्य जानकारी के लिए भी इस पुस्तक को पढ़ें। किंतु मैं सदन में इसका संपूर्ण विवरण देना चाहता हूं, क्योंकि ऐसा करना अपेक्षित नहीं है।

मेरा अभिप्राय था कि मेरे विद्वान मित्र का यह प्रश्न कि वहाँ अचल संपत्ति नहीं है वास्तव में यहाँ प्रश्न ही नहीं उठता है। अरब में निश्चित तौर पर कुछ अचल संपत्ति भी होती है, किंतु अधिकांश लोगों के पास अचल संपत्ति नहीं होती है। (हस्तक्षेप) कोई अन्य हस्तक्षेप नहीं। मुझे मानवीय अध्यक्ष महोदय ने कहा है कि हस्तक्षेप का खेद जताया पर बुरा न मानें, परंतु यह मुश्किल ही है कि कार्यवाही के दौरान अपने कान बंद कर लूँ।

एक माननीय सदस्य : तो मुंह बंद कर सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं यथाशीघ्र संतुष्ट हो जाने पर कि मैंने अपने कर्तव्य का निर्वहन कर लिया है और जैसे ही मुझे महसूस होगा कि अधिकतर सदस्य मुझे सुनना नहीं चाहते, तो मैं वो भी निश्चित तौर पर कर लूँगा।

श्रीमान्, इस पुस्तक में वहाँ का पूरा इतिहास दिया गया है। जब वहाँ कोई मरता है। वह एक चादर या कुछ कपड़े या एक घोड़ा या ऊंट या कुछ अलग तरह का समान छोड़ जाता है। और पुराने अरबी रीति-रिवाजों के अनुसार उन्हें निकट परिजनों के मध्य बांट दिया जाता है। लेकिन वहाँ इससे कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती। वहाँ कुरान के अनुसार किसी व्यक्ति विशेष को कोई विशेष हिस्सा नहीं दिया जाता है। वहाँ उत्तराधिकार का मौजूदा स्वरूप पुराने अरब के रिवाजों से ही लिया गया है, जिसे मुस्लिम विद्वानों विशेषकर बड़े विद्वानों के मुस्लिम कानून, अबू हनिफा तथा अन्य द्वारा संशोधित और परिवर्तित किया गया है।

मैं इसमें विस्तार से नहीं जाना चाहता हूँ मेरे कहने का अभिप्राय मात्र यह है कि मुस्लिम दृष्टिकोण इतिहास का मामला है। चाहे वह सही हो या गलत, यहाँ वह मुद्दा नहीं है। अब तथ्य यही है कि मैं हिंदू पुत्री को हिस्सा देने के विरुद्ध हूँ। इसलिए नहीं कि मैं अपनी हिंदू बहनों को देने का अनिच्छुक हूँ या मैं मुस्लिम बहनों को क्यों देता हूँ। यहाँ जो किसी मुस्लिम के साथ अच्छा है, वह उनके पुराने रिवाजों और भावनाओं पर निर्भर है। इसी प्रकार किसी हिंदू के लिए क्या अच्छा है वह हिंदुओं के पुराने रीति-रिवाजों एवं भावनाओं पर निर्भर करता है। जब अरबों ने मध्य देशों पर विजय पाई, तो वहाँ दिक्कतें भी पैदा हुईं क्योंकि उन्होंने अचल संपत्ति भी प्राप्त कर ली थी। यह इतिहास का विषय है कि उन्हें भी बड़ी संख्या में भागीदारों को सम्पत्ति का उत्तराधिकार देने में कठिनाई महसूस हुई, जिससे विघटन को बढ़ावा मिला। इसके बाद वक्फ की व्यवस्था आई, जिसे हम आज देखते हैं। यह व्यवस्था पवित्र पुस्तक के कुछ पैरों में मुस्लिम दृष्टगणों द्वारा व्यक्त विचार पर आधारित थी और तभी उन्होंने वक्फ विकसित करने का प्रयास किया। उसी कारण वे अब बंटवारे के बुरे प्रभाव को प्रभावहीन कर देना चाहते हैं। भारत में वक़्फ़ के कानून को भारतीय अदालतें और विशेषकर प्रिवी कार्उंसिल द्वारा और विकसित किया गया और इसी से काफी हद तक वक्फ कानून के घरेलू उद्देश्यों के लागू करना विफल हो गया। यह सर्वविदित है कि 1913 में, श्री जिन्ना सदन में एक विधेयक लाए और उन्होंने एक अधिनियम-वक्फ अधिनियम पारित करवाया, जिससे उन वक़्फ़ों की वैधता को मान्यता मिल गई, जो मुस्लिमों के लिए बराबर काम कर रहे थे। यह बंटवारों के अत्यन्त सूक्ष्म दुष्प्रभावों को निष्फल करने का एक प्रयास था। सम्पत्ति के बंटवारे के लेकर यह मुस्लिम दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न था। एक मुस्लिम की पहचान उसका एकल व्यक्तित्ववादी होना है। वास्तव में, अत्यल्प बंटवारे ने उन्हें अलग-अलग रहने की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर किया। भाई-भाई लम्बे समय तक संयुक्त परिवार में नहीं रहते; वे जल्दी अलग हो जाते हैं। हमने हाल ही के भारतीय इतिहास में बड़े पैमाने पर अलग-अलग रहने की प्रवृत्ति देखी है। अतः, एक मुस्लिम का दृष्टिकोण अलग रहने का होता है, जबकि एक हिन्दू का दृष्टिकोण संयुक्त परिवार के दृष्टिकोण वाला होता है। हिन्दू एक संयुक्त परिवार के रूप में रहता है। परिवार एक इकाई की तरह होता है और वे एक परिवार के दृष्टिकोण महिला के अधिकारों का

पक्ष लेते हैं। मुस्लिम दृष्टिकोण इससे भिन्न है। वस्तुतः हिन्दू परिवार की एक महिला, पुरुषों के समकक्ष ही होती है, अतः असमानता का जो प्रश्न यहाँ उठाया गया है, वह प्रश्न ही नहीं उठता। वहाँ महिलाएँ हर तरह से पुरुषों के समान होती हैं, क्योंकि हिन्दू परिवार की अर्थव्यवस्था में प्रत्येक महिला की मान्य भूमिका होती है। यह प्रश्न के दृष्टिकोण का हल है। यद्यपि मैं इस सदन के किसी भी मामले पर कानून बनाने के प्राधिकार का कोई प्रश्न नहीं कर रहा, मैं केवल चर्चा किए बिना इस कानून के लिए सदन के अंतर्गत हिन्दू संस्कृति रही है उसके ब्यौरों पर ही प्रश्न करूंगा। अतः एक हिन्दू विधवा की स्थिति पर भी उसी नजरिए से विचार करना चाहिए और यदि पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद वह प्रतीत होता है कि कोई व्यवस्था जीर्ण-शीर्ण हो चुकी है, तो यह हिन्दू समाज का दायित्व है कि वह उसे बदले। यह मेरा दायित्व नहीं है कि मैं इसे बदलूं। मैं केवल कुछ तथ्यों को उजागर कर सकता हूँ, जो विधायिका के एक सदस्य के रूप में मेरे मस्तिष्क में आते हैं इसमें मेरा मत नहीं चलेगा, इसमें बहुमत का मत काम करेगा। मेरा कर्तव्य है कि मैं अपने ध्यान में आने वाले तथ्यों को प्रस्तुत करूं। अतः मैं कहता हूँ कि हिन्दू कानून महिलाओं के साथ गैर-न्यायिक नहीं है। यह कानून महिला को परिवार का एक हिस्सा मानते हुए पूर्ण न्याय करता है, जहाँ उस परिवार में महिला की भी भूमिका होती है। वस्तुतः इस विधायिका में हम विभिन्न भूमिकाएं अदा करते हैं। यहां असमानता और भेद-भाव का कोई प्रश्न नहीं है। हमें सभी भूमिकाएं अदा करनी होती हैं। इन परिस्थितियों में मेरा कहना है कि इस दृष्टिकोण से हिन्दू महिलाओं की स्थिति पर विचार-विमर्श किया जाना चाहिए। मुस्लिमों में बँटवारे का मुद्दा बहुत दूर हो चुका है। एक पुत्री का हिस्सा परिवार में कैसे विवाद पैदा कर देता है, विचारणीय विषय है। जैसे ही किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, जिसके परिवार में पुत्र और पुत्रियां दोनों हों, जहां पुत्रियों तत्क्षण अपने हिस्से पा लेती हैं। उनका परिवार होता है, और अधिकाशं मामलों में वे अन्य परिवारों मे चली जाती हैं। वास्तव में, मुस्लिम समाज में अन्तर-जातीय विवाह बँटवारे के दुष्प्रभावों को कम करने के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। एक प्रावधान यह भी है कि यदि कोई व्यक्ति अपनी सम्पत्ति किसी बाहरी व्यक्ति को हस्तांतरित कर देता है, तो मूल भागीदार को यह अधिकार दिया गया है कि वह मूल्य चुका कर उस हिस्से को पुनः खरीद सकता है। किन्तु जैसा कि प्रत्येक वकील जानता है कि किसी परिकल्पना के लिए एक मुकदमा दायर करना कई विधिक कठिनाइयां पैदा करता है और वे शायद ही जीत जाते हैं। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए वक्फ एक अन्य प्रयास है। एक मुस्लिम पुत्री को मिलने वाला हिस्सा पारिवारिक सम्पत्ति को सुदृढ़ करने में सहायक नहीं है।

श्री तजामुल हुसैन : मैं यहां बाधा नहीं पहुंचाना चाहता, किंतु चूंकि यह एक मुस्लिम कानून की बात है, मेरी इसमें रुचि है। मैं अपने माननीय मित्र से जानना चाहता हूँ कि क्या उन्होंने मुस्लिम कानून के अंतर्गत सृजित उत्तराधिकार के कानून का अनुमोदन नहीं किया है?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं यह कहना चाहूंगा कि यहाँ यह प्रश्न ही नहीं उठता।

श्री तजामुल हुसेन : अध्यक्ष महोदय यह बता सकते हैं कि यह प्रश्न उठता है अथवा नहीं?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : तो भी, मैं इस पर कोई विवाद नहीं खड़ा करूंगा। मुस्लिम परिवार कैसे बिखरता है और कैसे पृथक होता है, यह हमारे लिए लम्बे अनुभव का मुद्दा है, जैसा कि मेरा विश्वास है और आपके जैसे वकीलों का भी। जब एक पुत्री का विवाह होता है, कुछ समय के लिए परिवारिक सौहार्द उन्हें एक साथ रखता है, परन्तु एक समय आता है जब पुत्री अपने पिता के घर आती है और पुत्री एवं भाई की पत्नी के बीच गलत -फहमी उत्पन्न हो जाती है। पुरुषों की तुलना में महिलाएं ज्यादातर गैर-जरूरी मामलों पर भिन्न मत रखती हैं। वे अधिक संवेदनशील होने के कारण भी भिन्न होती हैं।

श्री महावीर त्यागी : आप महिलाओं की निन्दा कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह निन्दा करने वाली बात नहीं है। यह उनका चरित्र-चित्रण है। महिलाओं की संवेदनशीलता प्रवृत्ति उन्हें ज्यादा आकर्षक, अधिक रुचिकर और अधिक प्रिय बनाती है। यदि महिलाएं भी हमारी तरह कठोर हृदय, शक्तिशाली और कठोर होतीं तो जीवन असंभव हो गया होता। वस्तुतः यह महिलाओं की प्रवृत्ति की सुदंरता ही है कि वे पुरुषों से इतनी भिन्न हैं। यह दो भिन्न प्रकारों का संगम ही है, जो जीवन को सहनीय और आनंददायक बनाता है। अतः मैं जो टिप्पणी कर रहा था, उसमें निन्दा जैसी कोई बात नहीं थी।

जब पुत्री अपनी भाभी से नाराज हो जाती है तो वह अपने पति के पास वापस जाती है और कहती है "मैं अपना हिस्सा चाहती हूँ।" तब देर-सवेर समस्या शुरू होती है। ऐसा हर घर में होता है। बहन का पति अपने सालों के पास आता है और एक हिस्सा मांगता है। और जब हिस्से के लिए मना किया जाता है, तब वह अपना हिस्सा अपनी पत्नी के भाई को बेच देना चाहता है। वह भाई वास्तव में मांगी गई पूरी कीमत देने के लिए इच्छुक नहीं होता अथवा सक्षम नहीं होता, तो वह व्यक्ति गांव में दूसरे व्यक्ति के पास जाता है और छोटी-सी राशि देकर भी अपनी सम्पत्ति उसे बेच देता है-और इस वायदे के साथ बेचता है कि समस्या की समाप्ति पर और राशि दी जाएगी। और तब नए अधिकार कुछ वास्तविक प्रदर्शन शुरू हो जाता है। यानी एक आपराधिक अथवा दीवानी मुकदमा दायर हो जाता है। इसमें साधारण मारपीट से लेकर हत्याएं तक होती हैं, पंजीकरण की कार्यवाहियों से बंटवारे की कार्यवाहियां होती हैं और यही आगे चलता रहता है। यदि यह विधेयक पारित हो जाता है, तो वकील आभारी होंगे, क्योंकि इससे उनके धंधे की पर्याप्त वृद्धि होगी। न्यायिक प्रक्रिया शुरू होती है और पांच अथवा दस वर्ष अथवा बीस वर्षों

तक समाप्त नहीं होती। परिवारों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी मुकदमों पर मुकदमे चलते रहते हैं और पूरा गांव गुटबन्दी में बंट जाता है। यदि एक परिवार में कई भाई हों, तो वे एक साथ रह सकते हैं, एक साथ सम्पत्ति का प्रबंधन कर सकते हैं, यद्यपि उनकी पत्नियां आपस में झगड़े करती रहती हैं। इसी तरीके से हिन्दू संयुक्त परिवार व्यवस्था काम करती है। यानी एक मुस्लिम परिवार और एक हिन्दू परिवार में सिवाय इसके कोई अन्तर्निहित अन्तर नहीं है कि मुस्लिम बँटवारे और पृथक रहने के आदी रहे हैं, और हिन्दू संयुक्त और सामूहिक जीवन जीने के आदी हैं। संभवतः बहुत थोड़े से मेरे प्रिय हिन्दू मित्र वास्तविक कठिनाई को देख सकते हैं, जो पुत्री को हिस्सा देने से उत्पन्न होगी। वस्तुतः इससे पुत्री को कभी लाभ नहीं होगा। लाभ को संतुलित करने के प्रयास से तुलनात्मक हानि होती है। मान लो एक मुकदमे और एक हिस्से से एक पुत्री एक हद तक लाभान्वित हो जाती है। वह अपने पति के घर जाती है, उसके अपने पुत्र और पुत्रियां होते हैं। वह सब कुछ जो वह अपने भाई से लेकर गई थी, वह उसकी पुत्री उसके पुत्रों से ले लेगी। महिलाओं के व्यक्तिगत और अलग जीवन पर विचार करने की बजाय, यदि हम उसे पारिवारिक जीवन का एक हिस्सा मानें, तो ऐसी स्थिति में लाभ और हानि का असंतुलन नहीं होगा। मैं कहता हूँ कि पुत्री का हिस्सा अंतहीन जटिलताओं और मुकदमेबाजी, झगड़ों और गलतफहमियों की शुरूआत करेगा और कुछ नहीं। वास्तव में, यह मेरा कटु अनुभव है कि कोई भी मुस्लिम परिवार तीन पीढ़ियों तक समृद्ध नहीं रहा है। इन और अन्य बातों ने उन्हें कंगाल ही बनाया है। मुद्दा यह नहीं है कि व्यवस्था अच्छी है अथवा खराब।

जहाँ तक हिन्दुओं का प्रश्न है, उन्होंने अपनी व्यवस्था को स्वीकार कर लिया है और जब तक बहुमत इस बात से आश्वस्त न हो जाए कि वह जिस व्यवस्था में जी रहे हैं और जो इतनी सशक्त हैं, एक ऐसी व्यवस्था जो अनेक विदेशी आक्रमणों के विध्वंसों के बाद भी टिकी हुई है, जब तक वे इस बात से आश्वस्त न हो जाएं कि व्यवस्था खराब है, इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। मेरा तर्क यह है कि हिंदू बहन और मुस्लिम बहन के बीच अंतर करना बहुत खतरनाक होगा, क्योंकि उनकी स्थिति समतुल्य नहीं है और वास्तव में उनमें अन्तर करने वाले जो तत्त्व मौजूद हैं, वे विभिन्न इतिहासों, विचारों और माहौल से उत्पन्न हुए हैं। इसलिए, हिंदू बहन और मुस्लिम बहन की स्थिति के बीच कोई साधारण समानता नहीं है। मैं सोचता हूँ कि सभी विचारणीय पहलुओं में एक पुत्री के हिस्से को लेकिन निष्पक्ष विचार होना चाहिए। स्वयं पुत्री के लिए भी यह कोई शुद्ध लाभ वाली बात नहीं है। यह विखण्डन को बढ़ावा देता है। मैंने इसका विस्तार से उल्लेख नहीं किया होगा, किन्तु इस तथ्य के लिए कि 9 अप्रैल को जब विधेयक प्रवर समिति को भेजा गया था, मैंने इस अनिष्टकारी प्रवृत्ति का उल्लेख किया था और श्रीमती हंसा मेहरा ने आश्चर्य व्यक्त किया था कि पुत्री को हिस्सा देने से मुकदमेबाजी अथवा संपत्ति के बंट जाने का बढ़ावा मिलेगा। इस तथ्य के कारण कि शायद हमने जिस अनिष्ट का अनुभव किया है,

भाग्यवश हिन्दू समाज में अनुभव नहीं किया गया है। यही कारण है कि गलतफहमी की संभावना थी, और इसलिए मैंने इस मामले का उल्लेख किया है। श्रीमान्, मैं कहता हूँ कि हिन्दू विचारधारा और हिंदू परिवारों के संदर्भ में पुत्री की स्थिति पर विचार किया जाना चाहिए। हर कोई पुत्री को स्नेह करता है। इसका अच्छे से विवाह करता है, और विवाह के समय अनेक तोहफे दिए जाते हैं, वही दहेज होता है और इसके अलावा कभी-कभी बड़ी सम्पत्तियां भी दी जाती हैं। और अपने पिता के घर में पुत्री मेहमान बन जाती है। परन्तु यदि आप उसे सम्पत्ति का एक हिस्से दे देते हैं तो भाई-बहन में आगे चलकर प्रेम का रिश्ता न रहकर वह रिश्ता व्यापार में बदल जाएगा, जिससे आपसी हित टकराते हैं। वास्तव में यदि पुत्रियों को हिस्सा देते हुए हिंदू समाज की जड़ों को बेचने की अनुमति दी जाती है तो इससे प्रेम समाप्त हो जाएगा। श्रीमान्, यह कुछ ऐसे विचार हैं जिनके बारे में मुझे विश्वास है कि उन पर निष्पक्ष रूप से विचार किया जाना चाहिए।

श्री महावीर त्यागी : आपका अनुभव कैसा है?

अध्यक्ष महोदय : ऑर्डर, ऑर्डर।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मेरा अनुभव यह है कि हम कंगाल हो चुके हैं। यदि हिंदू समाज यह सोचता है कि कंगाल होना एक कलाप्रेम है, तो इस व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए उनका स्वागत है। कुल मिलाकर हम सम्पूर्ण-समानता वाले वर्गविहीन समाज की शुरूआत की बातें सुनते हैं। वस्तुत: यह समानता गरीबी और दरिद्रता की होगी। किन्तु मैं अपनी व्यवस्था की शिकायत नहीं कर रहा। और कुल मिलाकर, यह स्थान इस पर चर्चा करने का है भी नहीं। मैं यहां केवल यह कहना चाहता हूँ कि पूरे विषय पर हिंदू समाज को सोच-समझकर विचार करना चाहिए, इसे मात्र भाई और बहन की समानता के परिप्रेक्ष्य में नहीं देखना चाहिए। यह मात्र एक नारे से बढ़कर है। यहां मैंने कुछ पहलुओं की ओर थोड़ा सा इशारा किया है। कई अन्य मुद्दे भी हैं किन्तु मेरे लिए सभी पहलुओं पर टिप्पणी करना कठिन है। यह हो सकता है कि मैंने कुछ छोटे-छोटे पहलुओं पर अधिक जोर दिया हो और अन्य कुछ पर ध्यान न दिया हो। परन्तु ये कुछेक ऐसी टीका-टिप्पणीयां है जो, जहाँ तक पुत्रियों का संबंध है, लोगों को सोचने, न कि उन पर काम करने, के लिए मजबूर कर सकती हैं।

और अब प्रश्न उठता है समानता का। कुछ मामलों में क्या महिलाएं भी कभी-कभार पुरुषों से श्रेष्ठ नहीं होती हैं? मेरा मानना है कि कई क्षेत्रों में वे श्रेष्ठ होती हैं। वह घर की मालकिन होती हैं। वह अपने पति की आत्मा, उसकी जेब, उसकी सम्पत्ति, उसकी अभिरूचियों, उसकी सनक आदि की मालकिन होती है, हर चीज उसके द्वारा नियंत्रित की जाती है। अत: मैं कहता हूँ कि महिला को सिर्फ इसलिए स्वयं को अनदेखा किया जाना महसूस नहीं करना चाहिए, कि उसे कोई हिस्सा नहीं दिया जा रहा है। वास्तव में,

परिवार में उसकी हैसियत अविवादित होती है। क्या कोई ऐसी महिला है, जिसे परिवार में सम्मान अथवा प्रेम नहीं मिलता? क्या उसकी कोई व्यक्तिगत आवश्यकता होती है? क्या उसे अपने पति, भाईयों और अपने बच्चों और अपने भाईयों के बच्चों के हित के अलावा और कुछ चाहिए होता है? यही हिन्दू परम्परा है। लेकिन यह अच्छी है अथवा बुरी, इस पर मुझे यहाँ चर्चा नहीं करनी है।

एक माननीय सदस्य : बिल्कुल सही है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यह हिंदू समुदाय पर है। यह उस समुदाय पर है कि वह कह सकता है कि क्या जो व्यवस्था पिछले चार हजार वर्षों से चल रही है...

बाबू रामनारायण सिंह : उससे भी अधिक समय से।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वह ऐसा कह सकते हैं कि क्या वह वास्तव में इतनी बेकार और इतना जर्जर है- डॉ. अम्बेडकर के कथनानुसार-कि इसकी पूरी तरह मरम्मत आवश्यक है, कि इसे तोड़ने और पुनस्थापित करने की आवश्यकता है। और क्या वास्तव में हिंदू समाज में उक्त राहत और पुनर्वास से संबंधित कोई समस्या उत्पन्न हुई है? मैं सोचता हूँ कि ऐसा अभी कुछ भी नहीं है। इसलिए यह समस्या मात्र एक बौद्धिक क्रांति की है। यह विधिक सिद्धांत की भी मात्र एक कल्पना है। यह समानता का एक अनावश्यक सटीक प्रश्न है जो इस बँटवारे के मूल में है, यही समस्त चर्चा में है और विद्वेषपूर्ण भी है। अन्यथा यह सब एक सरल कार्य है। क्या आप अपनी पारिवारिक व्यवस्था से संतुष्ट नहीं हैं? या यह आपको संतोष प्रदान करती है? क्या इस व्यवस्था ने समय के थपेड़ों से आपकी रक्षा की है?

डॉ. मॉन मोहन दास (पं. बंगाल : सामान्य) इससे देश की मुस्लिम जनसंख्या में वृद्धि हो गई है।

माननीय अध्यक्ष : ऑर्डर, ऑर्डर। हमारे समक्ष यहाँ सामाजिक ढांचे का विषय नहीं है। हम केवल हिंदू संहिता में दिए गए कुछ प्रावधानों पर चर्चा कर रहे हैं। इस पर हम बहुत अधिक विस्तार में न जाएं या अन्य प्रश्नों पर बात न करें। अन्यथा मुझे माननीय सदस्य से उनकी बात समाप्त करने को कहना पड़ेगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यदि आप पुत्री को सम्पत्ति में हिस्से की अनुमति देते हैं, तो बड़ी संख्या में टाल-मटोल होगी, और वसीयतों से संबंधित अनेक मामले सामने आएंगे। पिता की मृत्यु के बाद, वसीयतों को बढ़ावा मिलेगा। पुत्र सम्पत्ति को अपने हक में रखने का प्रयास करेंगे और ऐसा हो सकता है कि मरता हुआ पिता दबाव में आकर वसीयत तैयार कर दे अथवा वसीयतें गढ़ी जा सकती हैं। यानी ऐसी स्थितियां बन सकती हैं। वास्तव में, यह कुछ ऐसे मामले हैं, जिन पर यहाँ पर विचार किया जाना चाहिए।

श्रीमान्, इसके बाद उत्तराधिकार का एक सामान्य पहलू भी है। वस्तुतः, यह एक ऐसा मामला है जिस पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

अब, मैं विधेयक के अगले भाग पर आता हूँ, जिसका नाम है, विवाह। वस्तुतः यह एक विवाह में प्रथा के बारे में है। मैं कहता हूँ कि एक विवाह–प्रथा सैद्धांतिक तौर पर अच्छी है और व्यवहार में भी अच्छी है। और मेरा भी विश्वास है कि ज्यादातर व्यक्तियों के दो पत्नियां नहीं होती हैं। एक ही पत्नी काफी मूल्यवान और सताने के लिए भी काफी है। वास्तव में, दो पत्नियां होना एक दुलर्भता ही है। यह एक विरलता है क्योंकि आम तौर पर मैंने किसी के दो पत्नियां नहीं देखी हैं। ऐसा बहुत कम होता है। यह बात बहुत विशेष मामलों तक ही समिति है, क्योंकि राजनैश्त और आर्थिक परिस्थितियों की अत्यावश्यकता किसी के लिए भी दो पत्नियों से विवाह करना असंभव बनाती हैं। किन्तु मुद्‌दा यह है कि क्या हमें कानून के द्वारा अथवा आम जनता के राय से एक विवाह–प्रथा को लागू करने का प्रयास करना चाहिए। कुछ व्यक्तियों की स्थिति ऐसी हो सकती है, कि मौज–मस्ती के लिए दो पत्नियों से विवाह नहीं करते, बल्कि पुत्र की चाह में ऐसे विवाह करते हैं। हिन्दू मान्यता के अनुसार, एक पिता को मरणोपरांत नर्क, जिसे 'पूथ' भी कहा जाता है, से बचाने के लिए पुत्र की आवश्यकता होती है। एक व्यक्ति जो आपको पूथ से बचाता है, उसे 'पुत्र' यानि बेटा कहते हैं। अन्यथा व्यक्ति निश्चित रूप से नर्क यानि पूथ में जाता है। हिन्दुओं के अनुसार एक पुत्र का होना एक धार्मिक आवश्यकता है और पुत्र होने का अर्थ है कि, यदि पत्नी बांझ है, तो पति दूसरे विवाह का प्रयास करता है। मेरे अनुभव के अनुसार ऐसा हुआ है, और कई अन्य लोगों के अनुभव में भी ऐसा हुआ होगा कि पति का दूसरा विवाह इसलिए हुआ, क्योंकि पहली पत्नी बांझ है और मैंने कई खुशहाल परिवार भी देखे हैं, जहाँ पहली पत्नी, जिसके कोई बच्चा नहीं था, ने वास्तव में अपने पित को दूसरे विवाह के लिए उकसाया अथवा प्रेरित किया है, और पहली पत्नी बहुत खुशी–खुशी पूरे परिवार के साथ रही है। पुत्र के मामले में इसी तरह की इच्छा या विश्वास बंगाल के भारतीय मुसलमान में भी व्याप्त है।

श्री तजामुल हुसैन : मैं अपनी और अन्य माननीय सदस्यों की जानकारी के लिए एक प्रश्न करना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ कि एक हिंदू पिता को अपनी मुक्ति के लिए एक पुत्र की आवश्यकता होती है तो क्या अपनी मुक्ति के लिए एक हिंदू माँ को भी एक पुत्र की आवश्यकता होती है? और यदि माँ को आवश्यकता होती है, तो उसे बहुपतित्व का अधिकार मिलना चाहिए।

माननीय अध्यक्ष : हमें सदन के बाहर भी काफी अच्छी जानकारी मिल सकती है। इसलिए सदन के भीतर, इस समय, हम हिंदू संहिता की बात जारी रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अतः मेरा कहना है कि बहु विवाह-प्रथा अमूर्त तर्क और अमूर्त विधान के दृष्टिकोण से इतनी खतरनाक नहीं है, जितनी समझी जाती है। एक विशेष संदर्भ में इस पर विचार किया जा सकता है। यदि एक हिन्दू पति की यह इच्छा है कि उसे एक पुत्र की प्राप्ति हो और इस उद्देश्य से वह पुनः विवाह करना चाहता है, पर यदि वह अपनी पहली पत्नी के रहते ऐसा नहीं कर सकता, तो इससे तलाक की कार्रवाइयों को बढ़ावा मिलेगा। एक विवाह के प्रावधान में, पहली पत्नी के जीवनकाल में अथवा पहली पत्नी के साथ वैवाहिक संबंध बने रहने की स्थिति में दूसरे विवाह पर रोक के कारण तलाक को बढ़ावा मिलेगा। हमें इसे केवल मौज-मस्ती नहीं समझना चाहिए। वास्तव में ऐसा हमारे इतिहास में और अनेक यूरोपीय देशों में भी घटित हुआ है। नेपोलियन बोनापार्ट ने जोसफिन नामक महिला से विवाह किया, जो उनकी प्रिय पत्नी थी। उसके कोई बच्चा नहीं हुआ और नेपोलियन अपने विशाल साम्राज्य के सिंहासन पर आसीन करने के लिए एक उत्तराधिकारी चाहता था। वह साम्राज्य उसने अपने कौशल से खड़ा किया था अतः उसके लिए उसने क्या किया? उसने अपनी पहली पत्नी को तलाक दे दिया, यद्यपि वह उससे असीम प्रेम करता था, किन्तु एक पुत्र की चाह और अपने परिवार को स्थायी और अपने से बेहतर बनाने की इच्छा के चलते, उसने एक राजकुमारी से विवाह किया और उसने सोचा कि आस्ट्रिया की राजकुमारी के साथ शाही गठबंधन से वह सदा के लिए अपनी शक्ति को बढ़ा सकेगा और वह दोनों के साथ खुश भी रहेगा। यह एक ऐतिहासिक उदाहरण ही है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडरकर : नेपोलियन का बाद में क्या हुआ?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उसकी सेंट हेलेना में दुखदायी मृत्यु हो गई।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि उसे साम्राज्य की स्थापना की इच्छा न हुई होती, तो शायद वह ज्यादा जिन्दा रहता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, यह इतिहास से एक उदहारण था। यदि एक पुत्र की चाह में एक हिंदू को विवाह से रोका जाता है और यदि वह मानता है कि पुत्र उसके लिए आवश्यक है, और यदि उसे विश्वास है कि उसकी पत्नी उसके पुत्र को जन्म नहीं दे सकती है, तो वह कुछ बहाना करने की सोचेगा। कई मामलों में तब वह बेमेल विवाह कर लेता है। क्या आप किसी व्यक्ति को बेमेल विवाह करने से रोक सकते हैं, अथवा उसे इस पूरे धार्मिक विश्वास के साथ एक तकनीकी अपराध करने से रोक सकते हैं कि वह जो कुछ कर रहा है केवल और पूरी तरह से अपने विवेक के अनुसार कर रहा है? यह एक ऐसे व्यक्ति की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करने जैसा होगा, जो पूरी तरह से धार्मिक विचारों और धार्मिक आस्थाओं से बंधा हुआ है। इसलिए ऐसे विशेष मामलों में इन मुद्दों पर विधायिका द्वारा नहीं, बल्कि जनता की राय से कार्रवाई की जानी चाहिए।

बहु-विवाह प्रथा अन्दर ही अन्दर क्षीण हो रही है और बहाने आदि बनाकर इस प्रक्रिया में नकली हड़बड़ी नहीं करनी चाहिए। बहु-विवाह प्रथा पर पूर्णतया प्रतिबंध लगाना एक दोष है और विधेयक के रास्ते में आने वाली एक व्यावहारिक कठिनाई भी। यदि एक व्यक्ति को एक दूसरी पत्नी की जरूरत है, तो उसे पाकिस्तान जाने से कौन रोक सकता है? **(श्री महावीर त्यागी :** आपका दूसरे पति के बारे में क्या ख्याल है?)। कुछ जगहों पर दूसरे पति का होना भी प्रचलन में है। श्री त्यागी को इस बात की जानकारी भी होगी। बहु-विवाह प्रथा भारत में प्रतिबंधित हो जाएगी और आप इसकी जानकारी होने से मना करेंगे। परन्तु जिस व्यक्ति को एक पुत्र अवश्य चाहिए, उसे एक अन्य विवाहित पत्नी अपने घर लाने से दूसरी पत्नी जो पाकिस्तान जाकर ब्याही है-कौन-सी बात रोकती है? और यह भी हो सकता है कि पत्नी भी इसके लिए सहमत रही हो। तब क्या आप एक ऐसा कानून पारित कर देंगे जो हिंदुओं की गहरे पैठ चुकी भावनाओं और विश्वास के विरुद्ध हो। ऐसे गंभीर मामलों पर विचार किया जाना है। एक सशक्त विधायिका के लिए यह कोई महत्वपूर्ण विषय नहीं है कि वह हिन्दुओं के प्रचलित सिद्धांतों और मौलिक विचारों के विरुद्ध जाए। इस प्रकार के सशक्त कानून को लागू करने से पहले हमें इस मामले पर सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए और उसके बाद ही दूसरे विवाह के मामले में दण्ड, कानूनी सजा का प्रावधान किया जाना चाहिए। मेरा कहना है कि हमें ऐसा कानून पारित नहीं करना चाहिए, जो हमारी जनता के लिए लोकप्रिय न हो, जो निरपवाद रूप से उसका उल्लंघन करने और बहाने बनाने को बढ़ावा देता हो। हमें शारदा अधिनियम का परिणाम ज्ञात है। शारदा अधिनियम का पहला प्रभाव यह पड़ा कि कानून लागू होने से पहले ही लाखों बाल-विवाह संपन्न हो चुके थे। इसका पहला प्रभाव यह भी हुआ कि बहुत-सा ऐसा अनिष्ट हुआ, जिसे रोकना इस कानून का उद्देश्य था। उसके बाद आज भी क्या स्थिति है? मान लीजिए किसी व्यक्ति की एक विवाह योग्य पुत्री है, जिसकी आयु शारदा अधिनियम द्वारा निर्धारित मानक आयु के अनुरूप नहीं है, और मान लीजिए एक उपयुक्त दूल्हा (वर) उपलब्ध है, तो क्या आप उस पिता अथवा अभिभावक को नैतिक तौर पर दोषी ठहरा सकते हैं, जो अपनी अवयस्क पुत्री का विवाह करता है? क्या ऐसा करना मात्र इसलिए असुरक्षित होगा कि वह व्यक्ति किसी सैद्धांतिक कानूनी अथवा राजनीतिक समझ का उल्लंघन करता है? कानून द्वारा प्रचलित रीतियों को एकदम असंभव नहीं बनाया जाना चाहिए। प्राचीन रीतियां लोगों की आस्थाओं और अभिरुचियों से जुड़ी होती हैं। शारदा अधिनियम व्यापक रूप से इसीलिए विफल हुआ है और जनता की राय इस बारे में इतनी सशक्त है कि आज शारदा अधिनियम के तथाकथित उल्लंघन के विरुद्ध कोई मुकदमा शायद ही दायर हुआ हो। वास्तव में उस कानून को एक संशोधन द्वारा लागू किया गया था और उसके विरुद्ध एक शिकायतकर्ता के समक्ष कई कठिनाइयां हैं। उसमें पहली समस्या तो यह है कि वह उस लागत राशि को जमा कराए जो उसके मुकदमा हारने की स्थिति में जब्त कर ली

जाएगी, इसलिए उसके सामने अतिरिक्त कठिनाइयां खड़ी हो जाएंगी। अतः हुआ क्या है? बाल विवाह का समर्थन नहीं करता, किंतु आपराधिक मुकदमों अथवा जोर-जबर्दस्ती से इस प्रथा को तब तक रोका नहीं जा सकता, जब तक कि लोकप्रिय भावनाओं के द्वारा इसको समर्थन और सहारा दिया जाता रहेगा। उच्च शिक्षित वर्ग में बाल-विवाह का व्यावहारिक तौर पर प्रश्न ही नहीं उठता, किन्तु निर्धन वर्ग को देखिए। यदि निर्धन वर्ग की कोई कन्या, जो अभी विवाह योग्य आयु की नहीं हुई है, एक पति की देखभाल और संरक्षण के बिना अविवाहित रखी जाती हैं, तो ऐसी अनुमति देना सुरक्षित नहीं होगा और यदि ऐसी लड़की को पति के संरक्षण के बिना रहने दिया जाए तो अनेक बुराइयां और कठिनाइयां भी खड़ी हो जाएंगी। इसका परिणाम यह होगा कि यदि उसे अपनी कानूनी आयु की होने तक रोका जाता है, तो उसके लिए पति आसानी से नहीं मिल सकेगा और इस कारण अनेक तरह की अन्य कठिनाइयां खड़ी हो जाएंगी। मेरा कहना है, श्रीमान्, कि शारदा अधिनियम की इस असफलता को ध्यान में रखते हुए ही, हमें सभी परिस्थितियों में पूरी सख्ती के साथ और ज्यादा उम्मीदों के बिना अनिवार्य एक विवाह-प्रथा के बारे में भी विचार करना चाहिए। मैं सोचता हूँ कि यह मामला गंभीर व्यावहारिक विचार-विमर्श का है, यह सिद्धांतों और नारों का मामला नहीं है। अब मैं तलाक के प्रश्न पर भी आता हूँ। तलाक किसी परिवार के समस्त दुखों के लिए रामबाण नहीं है। शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसकी अपनी पत्नी के साथ कोई गलतफहमी न हुई हो और शायद ही कोई ऐसा परिवार होगा, जो इस कारण से दुखी न हुआ हो। यदि पति और पत्नी के बीच सदैव अच्छे संबंध रहेंगे तो जीवन असहनीय जो जाएगा। तब खुशियां भी, खुशियां नहीं होंगी। जब तक खुशियों में दुखों और झगड़े के क्षण न हों, खुशियां पूर्ण नहीं हो सकती। वास्तव में इसी तरह की गलतफहमियां-पुनर्मिलन के लिए भी अपनाई जाती हैं। हमारे समाज में विरह और मिलन दोनों मिलकर खुशियों का कारण बनते हैं। अतः कभी-कभी गलतफहमियां भी आवश्यक होती हैं। मैं सभी अनुभवी व्यक्तियों को अपनी बातें सुना रहा हूँ। अपने जीवन में एक विक्षिप्त व्यक्ति ही हमेशा खुश रह सकता है। यदि व्यक्ति बुद्धिमान है और उसका आकर्षक व्यक्तित्व भी है, तो उसके मतभेद भी होंगे, किन्तु आगे चलकर, पत्नी को भी सफलता मिल जाएगी। अतः यदि आप कुछ समय के लिए एक दम्पत्ति को एक साथ रहने के लिए अकेला छोड़ दें, तो उनकी गलतफहमियां शरद् ऋतु के बादलों की तरह छंट जाएंगी। अतः मैं कहना चाहती हूँ कि हमें तलाक देने में जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए।

अब मुस्लिम रिवाजों से तुलना की बात आती है। ''यदि एक मुस्लिम व्यक्ति अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है, तो इसी प्रकार, किसी हिन्दू व्यक्ति को भी समान अधिकार क्यों नहीं मिलना चाहिए? एक ईसाई धर्म का व्यक्ति अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है? तो एक हिन्दू व्यक्ति ऐसा क्यों नहीं कर सकता?'' मैं यह कह सकता हूँ कि इन मामलों में तीनों धर्मों की व्यवस्थाएं पूरी तरह से एक-दूसरे से भिन्न हैं। तथापि व्यावहारिक कारणों

से एक मुस्लिम व्यक्ति अपनी पत्नी को तलाक देने के लिए स्वतंत्र नहीं है। उसे तलाक देने के असीमित अधिकार हैं, किन्तु उसे मेहर की रकम जुटानी होती है, जो आमतौर पर उसकी पहुंच से बाहर होती है, क्योंकि यदि उसकी क्षमता 10,000 रुपये अथवा एक लाख रुपये तक पहुंच सकती है। मुस्लिम विवाह कानून में यह स्पष्ट व्यवस्था है कि मेहर की रकम एक मुस्लिम पति के तलाक देने के असीमित अधिकार पर रोक लगा देती है। अतः यह प्रत्येक मुस्लिम पति पर एक बहुत प्रभावी व्यावहारिक रोक है, यद्यपि वह अपनी पत्नी से असंतुष्ट भी हो सकता है। वास्तव में इसे एक पर्याप्त निवारक स्थिति माना जा सकता है, जिसमें अनेक दबंग पतियों को तलाक देने के प्रयास से रोका जा सकता है। इसी तरह यदि एक हिन्दू पति अपनी पत्नी से असंतुष्ट होता है, तो उसका असंतोष को दूर करने के लिए हमें थोड़ा समय देना चाहिए। यदि आप इसका रास्ता आसान बना देते हैं तो इसका परिणाम यह होगा कि ज्यादा पार्टियां अदालतों में जाएंगी और वहाँ से उन वकीलों को लाभ पहुंचाएंगी, जो सदन के एक वर्ग के लिए अभिशाप है। जिन्हें अदालतों में तलाक की कार्यवाहियों का अनुभव है, वे जानते हैं कि वहां कैसे-कैसे घिनौने विवरणों का हवाला दिया जाता है। एक सभ्य व्यक्ति को उन्हें सुनना भी नहीं चाहिए। वहां दूसरे के सामने जारकर्म सिद्ध करना होता है, अन्यथा तलाक की अनुमति नहीं दी जाती। तलाक लेने वाले परिवारों में दुख इतने ज्यादा होते हैं कि परिवार के दुखों के लिए तलाक को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। यदि हिन्दू पत्नी अथवा पति को अदालत में जाने का अधिकार दे दिया जाए, तो इसका यह प्रभाव होगा कि अस्थायी गलतफहमियां, जो समय के साथ दूर हो सकती हैं, वे जीवन भर के दुखों का कारण बन जाएंगी। अतः विद्यमान समस्याओं को हल करने के प्रयास में आप केवल नई समस्याएं ही पैदा करेंगे।

(इसी समय अध्यक्ष अपनी कुर्सी से उठ गए और उपाध्यक्ष महोदय (श्री एम. अनंतसायनम आयंगर) ने इसका स्थान ग्रहण किया)

इस संदर्भ में अदालत का आश्रय उपलब्ध कराया जाता है तो, यह होगा कि महिला की अपेक्षा पुरुष इस प्रावधान का लाभ उठा लेगा। यह सुझाव देना नितांत मूर्खता होगी कि कोई दुखी महिला तलाक की कार्यवाही से राहत पा सकेगी, क्योंकि ऐसा अवश्य संभावित है कि वह स्वयं की बलि चढ़ा देगी। अधिकांश मामलों में पति गलत प्रकार से आरोप लगाते हुए न्यायालय में जाएगा क्योंकि विधेयक में उनका उल्लेखी किया गया है, और एक पक्षीय आधार पर तलाक पा लेगा। जो यह जानते हैं कि यदि एक महिला न्यायालय का शरण में जाती है, तो हमारा समाज यह कल्पना कर सकता है कि इसकी क्या संभावना है कि उस महिला के विरुद्ध लगे आरोप सिद्ध नहीं होंगे। तब उस महिला केस कौन लड़ेगा, जिसका पति उसे अलग कर देना चाहता है? यह पुरुष ही है जो अक्सर न्यायालय की शरण लेता है। और यदि पत्नी बांझ हो तथा पति को दूसरे विवाह

के द्वारा एक पुत्र पाने की इच्छा हो, तो न्यायालय की शरण में जाने की प्रवृत्ति बढ़ती ही जाएगी। अब, मान लीजिए कि एक व्यक्ति अपनी पत्नी से तलाक ले लेता है, तो उस महिला का क्या होगा? वह कहां जाएगी? तलाक हो जाने के बाद, वह पति–विहीन हो जाएगी, और नैतिक मूल्य विहीन तथा जीवन–यापन के भौतिक साधनों से विहीन हो जाएगी? तब कौन उस महिला का मित्र बनेगा? क्या इस विधेयक के प्रयोजक? मैं नहीं सोचना कि वे आगे कदम बढ़ाएंगे। क्या वह अपने भाई का सहारा लेगी? नहीं। क्या वह उस पति, जिसने उसे त्यादा दिया है? के भले के लिए अपने पारिवारिक सम्पत्ति का एक हिस्सा लेकर अपने भाई को विरोधी नहीं बन चुकी होगी? परिणाम यह होगा कि उसके दुखों के प्रति उसके पिता की भावना भी पूरी तरह उदासीन हो चुकी होगी। तो वह किस प्रकार अपना जीवन–यापन करेगी?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वह नजीरुद्दीन अहमद से विवाह कर लेगी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं नहीं सोचता कि कोई तलाकशुदा महिला, जिसमें अपने बारे में समझ होगी, मुझे चुनेगी। मैं सोचता हूँ कि माननीय मंत्री महोदय का चयन बेहतर होगा।

माननीय उपाध्यक्ष : ईश्वन न करे कि ऐसा कुछ घटित हो। हमें यहाँ चर्चा नहीं करना चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इसमें अध्यक्ष महोदय को मेरी ओर से कुछ गंभीर बात सुनाने का आशय नहीं था।

माननीय उपाध्यक्ष : किन्तु मैं गंभीर हूँ। माननीय सदस्य को माननीय मंत्री महोदय से यह टिप्पणी इसलिए सुनने को मिली थी, क्योंकि उन्होंने पूछा था: 'वह महिला कहां जाएगी?'

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडरकर : क्योंकि वह इतनी संवेदना के साथ अपनी बातें व्यक्त कर रहे थे, कि मैंने वह सुझाव उनकी बुद्धिमानी के लिए दिया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने इस पर कोई नाराजगी नहीं जताई। मैंने इस मजाक का पूरा आनंद लिया है। किन्तु मजाक की बात छोड़कर, मैं गंभीरता पूर्वक पुनः पूछता हूँ कि वह कहां जाएगी? एक तलाकशुदा यूरोपियन महिला का मामला लें। उसके पास संसाधन हैं। वह शिक्षित है। वह कोई नौकरी पा सकती है। वह एक शार्टहेन्ड–टाइपिस्ट बन सकती है। वह हमारे किसी भी दूतावास में नौकरी कर सकती है और जहाज में निशुल्क लिफ्ट प्राप्त कर सकती है तथा वेतन और भत्ते प्राप्त कर सकती है। ऐसी महिलाएं पूर्णतया स्वतंत्र होती हैं। वे अजनबियों के साथ मित्रता कर सकती हैं। वह प्रशिक्षित होती हैं और आत्मनिर्भरता की आदी होती हैं।

अत: एक सभ्य यूरोपियन महिला स्वयं अपने पैरों पर खड़ी हो सकती है और उसकी स्थिति हमारे देश की किसी प्रगतिशील, फैशनेबल महिला से नहीं, बल्कि गरीब महिला से बिल्कुल भिन्न है, जिसका कोई हमदर्द नहीं है और जिसके पति ने उसे त्यादा दिया है और उसके पिता से भी उसके संबंध समाप्त हो चुके हैं। जैसा कानून मंत्री ने मज़ाक में कहा, लेकिन तलाकशुदा महिला के लिए पति को पाना सरल नहीं है; भले ही वह वैसा चाहती हो। उसके लिए एक उपयुक्त पति एकदम उपलब्ध नहीं होता, अत: उसकी स्थिति बहुत कठिन हो जाएगी और ऐसी महिला तलाक व्यवस्था की बदतरीन शिकार बनती जाएगी। तब न्यायालय के आरोप भी इतने गंभीर होंगे कि उन पर विचार करना होगा। ऐसे केसों में न्यायालय की कार्यवाही भी घृणित होगी, और हमारे समाज की आज की स्थिति में, हमारे लिए असंभव होगा कि वह पति और पत्नी के न्यायालय की शरण लेने की अनुमति दी जाए।

अब इसका एक अन्य पहलू भी है। आदिवासी और कुछ अन्य जातियों में एक तरह का पारंपरिक तलाक होता है जिसमें औपचारिकताएं बहुत साधारण होती हैं। उन्हें बहुत आसानी और शीघ्रता से तलाक मिल जाता है, किन्तु यदि उन पर न्यायालय में जाने का दबाव डाला जाएगा, तो इसका यह अभिप्राय होगा कि वे वित्तीय और अन्य कारणों से ऐसा नहीं कर पाएंगी। जिस तलाक को वे अपने रीति-रिवाज के अनुसार आसानी से पा सकती हैं, वह उनके लिए वर्जित हो जाएगा। इस तरह जब आप एकरूपता पाना चाहते हैं, तो आप मामलों को जटल बना देना चाहते हैं। सैद्धांतिक तौर पर कानून में एकरूपता हो सकती है, किन्तु गरीब लोगों के विरुद्ध यह कड़ाई से काम करेगी। आसान तलाक के नाम पर लोग न्यायालयों का रुख करेंगे, तब समय एक समाधान का प्रभाव छोड़ चुका होगा, घरेलू खुशियां छिन्न-भिन्न हो जाएंगी और संबंधित पार्टियां और समाज तब हमेशा के लिए पश्चाताप करेंगी। इन गरीब लोगों के जीवन-यापन के सरल तरीकों पर यह कृत्रिम कानून थोपना बहुत कड़ा कार्य होगा। इससे चीजें महंगी होंगी, क्योंकि प्रत्येक आदेश के लिए उच्च न्यायालय के निर्णय का सहारा लेना होगा और यह एक महंगा कार्य होगा। इन सब के बावजूद मैं कहता हूँ कि पार्टियों को स्वयं के निर्णय पर छोड़ देना चाहिए। इस कानूनी तरीके से तलाक की शुरूआत सभ्यता के विभिन्न चरणों से लोगों के सभी वर्गों के लिए लागू करना बहुत हानिकारक होगा। अपनी दलितों के समर्थन अथवा उन्हें शक्ति प्रदान करने के लिए यहां लोगों के लिए संस्कृत के श्लोकों का उद्धरण देना एक रिवाज़ है। अत: मैं भी एक प्रयास करूंगा: जिसका भाव है:-

जब दो बकरे लड़ते हैं, तो वे अपने पिछले पांवों पर खड़े हो जाते हैं और सींग आपस में भिड़ाकर एक गंभीर प्रभाव छोड़ते हैं, किन्तु उनकी वास्तविक भिडन्त बहुत छोटी होती है। जब एक बहुत विशाल समारोह में लाखों ऋषि एक श्राद्ध के लिए जुटते हैं, तो केवल एक मिनट में लिए जा सकने वाले भोजन की मात्रा ही पर्याप्त होती है।

जैसे प्रात:काल में घुमड़े बादलों में बिजली की कड़वाहट लगती तो धमकी भरी है, किन्तु अन्त में इनसे कोई भारी वर्षा नहीं होती। इसी तरह वैवाहिक झगड़े, यद्यपि गंभीरता से और धमकी भरे अंदाज से शुरू होते हैं, पर उनके अन्त में कोई गंभीरता नहीं होती।

इसलिए घरेलू झगड़ों में नैसर्गिक और सामाजिक दबावों की अनुमति ही दी जानी चाहिए ताकि मेल-मिलाप आसानी से कराया जा सके।

तलाक के बाद आपको उन्हें समय देना चाहिए। तलाक के मामलों में ताली एक हाथ से नहीं बजती। इसे हर व्यक्ति के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। माननीय कानून मंत्री ने एक बहुत नया तर्क दिया है कि 90 प्रतिशत लोग यहाँ 'शुद्र- है और ये 90 प्रतिशत लोग तलाक की प्रक्रिया में शामिल होते हैं, इसलिए यह सही और उचित ही होगा कि बहुमत के कानून को शेष 10 प्रतिशत के लिए भी लागू किया जाए। यह कोई न्यायसंगत तर्क नहीं है। यह स्वीकार्य भी नहीं है। भारत में मुस्लिम बहुत ही कम संख्या में है। क्या इसी एक कारण से सभी मुस्लिमों को परिवर्तित करके हिंदू बना देना चाहिए अथवा उन पर हिंदू कानून थोप देने चाहिए? तब उदाहरण के लिए, हिंदू रीति के अनुसार उनके मृत शरीरों का अंतिम संस्कार किया जाना चाहिए? अन्य उदाहरण लें। पाकिस्तान में हिंदू अल्पसंख्यक हैं। क्या हिंदू उसे न्यायसंगत कहेंगे, यदि मुस्लिम कानून उन पर भी थोप दिया जाए? और वहाँ की बहुसंख्यक आबादी के रीति-रिवाजों के अनुसार हिंदू भी अपने मृत परिजनों को दफनाने लगें? अत: बहुमत वाले तर्क का यहाँ भी कोई महत्व नहीं है।

जहां तक 90 प्रतिशत लोगों द्वारा तलाक की अपनी प्रथा से संबंधित वक्तव्य का प्रश्न है, मद्रास से प्रकाशित समाचार-पत्र 'हिंदू' के संपादकीय में कहा गया है कि जहां तक मद्रास का संबंध है, यह एक 'नितांत झूठ' वक्तव्य है। यानी वह मद्रास की अनुसूचित जातियों अथवा शूद्रों पर बिल्कुल भी लागू नहीं होती।

अब मैं बंगाल के बारे में अपने अनुभवों की बात करता हूँ। बंगाल के कई विख्यात सदस्य यहां हैं, विशेषकर पंडित मैत्रेय उनमें से एक हैं। यदि मैं गलत हूँ तो वे मेरी बात का सुधार भी कर सकते हैं। क्या बंगाल के 90 प्रतिशत शूद्रों में यह रिवाज है…?

पंडित लक्ष्मी कांत मैत्रेय : यह एकदम विवेकशून्य बात है।

एक माननीय सदस्य : वह एक शूद्र नहीं है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैत्रेय, एक शूद्र?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : हम उन्हीं के बीच में रहते हैं। क्या अधिकांश शूद्रों में रिवाज है कि वे तलाक का सहारा लेते रहें?

बाबू रामनारायण सिंह : कुछ मामलों में।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : सचमुच! किन्तु इससे भी यह 90 प्रतिशत शूद्रों का नियम नहीं बन जाता। पीछे असम के कुछ सदस्य खुसफुसा रहे हैं कि ऐसा है। मैं मानता हूँ कि असम में चाय की पैदावार होती है और तलाक की भी! किन्तु बंगाल तलाक के बिना चाय की पैदावार कर लेता है। श्रीमान् मैं कहता हूँ कि इस बारे में बहुमत का तर्क एक गलत अवधारणा पर आधारित है। यह वास्तविकता नहीं है। ऐसा हो सकता है कि बम्बई में यह बहुत प्रचलित हो और इसी कारणवश माननीय कानून मंत्री भारत के अन्य भागों में भी इसे लागू (करने के लिये) प्रभावित हो गए हों। अतः, यह मानना कि 90 प्रतिशत लोग तलाक को स्वीकार करते हैं तथ्यों पर आधारित नहीं है। और यदि यह सत्य भी हो, तो यह उन पर लागू नहीं किया जाना चाहिए, जो उस व्यवस्था का पालन नहीं करते। यह तर्क विफल हो गया है, अतः उसके समर्थन में उसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। यह व्यवस्था दो तरह की हो सकती है-सीधा तलाक अथवा एक समान तलाक। यद्यपि एक एक-समान प्रक्रिया और नियम उन सभी मामलों में कठिनाइयां पैदा करेंगे, जहां रीति-रिवाज के अनुसार तलाक का एक साधारण रूप प्रचलित है, और ऐसे परिवारों में भी दुख और बाधाएं उत्पन्न करेंगे, जहां तलाक का प्रचलन नहीं है। वर्तमान समय में जबकि कानूनी अदालतों का रुख करना सरल है, निर्धन वर्गों की तुलना में धनाढ्य वर्ग इस प्रक्रिया के तथाकथित लाभ उठाना चाहेंगे। अतः, यदि तलाक, तलाक दिया जाना हो, तो यह लोगों की सहमति से दिया जाना चाहिए। पहली पत्नी की सहमति से विशेष परिस्थितियों के अंतर्गत दूसरे विवाह की अनुमति भी दी जा सकती है। यों बहुविवाह प्रथा तेजी से समाप्त होती जा रही है पर इसे कानूनन समाप्त नहीं किया जाना चाहिए। इससे तलाक की कार्यवाहियों को बढ़ावा मिलेगा, अथवा व्यक्ति यहां से पाकिस्तान अथवा बर्मा अथवा मलाया या अन्य देशों में जाकर दूसरा विवाह करके वापस आ जाएगा। इसलिए, यदि समाज पर्याप्त प्रगति नहीं करता है और एक-विवाह प्रथा तथा तलाक की आवश्यकता को लेकर शिक्षित नहीं होता या पर्याप्त जागृत नहीं होता, तो उनके द्वारा इस तरह का प्रावधान स्वीकार नहीं किया जाएगा और कई मामलों में टालमटोल को बढ़ावा मिलेगा। अतः अदालती कार्यवाही को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। पुनः यदि तलाक की कार्यवाहियां अक्सर होती रहेंगी तो उनसे पर्याप्त मात्रा में दुखों को भी बढ़ावा मिलेगा।

श्री खुर्शीद लाल (संचार उप मंत्री) क्या मैं जान सकता हूँ कि यदि तलाक इतना बुरा है, तो क्या माननीय सदस्य मुस्लिम कानून में से तलाक को खत्म करने का समर्थन करेंगे?

श्री नजीरुद्दीन अहमद : माननीय सदस्य यद्यपि प्रवर समिति के सदस्य हैं, वह इस मामले पर सदन में हुई पिछली चर्चा के दौरान उपस्थित नहीं थे। मैं सोचता हूँ कि

माननीय सदस्य पोस्टकार्डों की दरों में की गई बढ़ोतरी पर अपनी गंभीर चिंता व्यक्त करें न कि इस चर्चा के बीच में एक असंबद्ध तरीके से बाधा डालें। माननीय सदस्य की अनुपस्थिति में इस मामले पर पहले ही बहुत व्यापक चर्चा की जा चुकी है।

श्री खुर्शीद लाल : क्या यहाँ 'पोस्टकार्ड' का कोई संबंध है?

माननीय उपाध्यक्ष : बेहतर यह होगा कि हम यहाँ 'पोस्टकार्डों' से तलाक ले लें!

श्रीरामनाथ गोयनका (मद्रास : सामान्य): मैं समझता हूँ कि आपको शरियत कानून में परिवर्तन करने का प्रस्ताव लाना चाहिए।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : शरियत कानून को समाप्त करना वर्तमान कानून में हस्तक्षेप करना होगा। हिन्दुओं में एक विवाह-प्रथा और तलाक की शुरूआत करना वर्तमान कानून में हस्तक्षेप करना ही होगा। इन दोनों के बीच यही अन्तर है। वास्तव में आपको स्वीकार्य कानून में आसानी से हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और इस प्रकार मुस्लिम कानून की सादृश्यता भी यहाँ लागू नहीं की जानी चाहिए।

श्री एच.वी. कॉमथ : क्या वह प्रत्येक बात स्वीकार करते हैं जो विद्यमान है, अथवा क्या वह किसी बात में पूरी तरह परिवर्तन चाहते हैं?

माननीय उपाध्यक्ष : सदन प्रस्तुत विधेयक के अलावा अभी किन्हीं अन्य परिवर्तनों के लिए चिंतित नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : परिवर्तन का प्रश्न एक अकादमिक प्रश्न है। पर कानून में परिवर्तन का प्रश्न इतिहास की तरह प्राचीन है। वास्तव में संस्कार ही होते हैं जो केवल इसलिए परिवर्तनों का प्रयास करते हैं क्यों वे चाहते हैं परिवर्तन हों। वे केवल इस आधार पर परिवर्तन करते हैं कि यह एक परिवर्तन है। कुछ अन्य ऐसे भी हैं जो किसी परिवर्तन के लिए कभी तैयार नहीं होते, क्योंकि परिवर्तन एक नवीनीकरण होता है। इसकी चर्चा एक क्लासिकल पैसेज में मैकाले द्वारा की गई थी। और उन्होंने कहा था कि सर्वोत्तम बुद्धि सीमा रेखा के नजदीक दोनों सीमाओं के बीच रहती है। इसलिए कानून में परिवर्तन मात्र अपने भले के लिए स्वीकार नहीं करना चाहिए। पुनः, समस्त विचार-विमर्श के बावजूद, पुराने कानून का कड़ाई से अनुपालन करना भी उसी प्रकार गलत होगा। स्थिति यह है कि आपको समय के साथ अवश्य चलना चाहिए और इससे भी बेहतर विचार यह होगा कि आप लोगों को अपने साथ लेकर चलें। मैं यहाँ नैतिक अधिकार का उल्लेख कर रहा हूँ। कानूनी अधिकार हमें प्राप्त हैं। हमारे पास इतने अधिकार हैं कि हम जो चाहें वह कानून तोड़ सकते हैं और जो चाहें कानून बना सकते हैं। इसी को कानूनी अधिकार समझा जाता है। मैं इस पर प्रश्न नहीं करता। किन्तु आपके पास ऐसा कौन-सा नैतिक अधिकार है कि आप यह परिवर्तन करना चाहते हैं...

बाबू रामचरण सिंह : नहीं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : ...जो लोगों के वर्गों यानी 30 करोड़ लोगों को, उनकी सहमति के बिना प्रभावित करेगा? मैं यहां सभी परिवर्तनों का विरोध करने नहीं आया हूँ। मैं यहां उस परिवर्तन का विरोध करने आया हूँ, जो जनता की राय से स्वीकृत नहीं हुआ है। आपको ऐसा कौन-सा नैतिक अधिकार प्राप्त है कि आप उनकी स्वीकृति के बिना कठोर परिवर्तन कर दें?

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : हमने उनकी सहमति प्राप्त कर ली है; हम उनका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : तो आपने एक बहुत महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रश्न उठा दिया है। इस सदन का चुनाव संशोधन का प्रारुप तैयार करने के उद्देश्य से किया गया था...

माननीय उपाध्यक्ष : जहां तक संवैधानिक मुद्दे का प्रश्न है मैं जानता हूं कि इस संबंध में माननीय अध्यक्ष द्वारा पहले से ही एक नियमावली उपलब्ध करा दी गई है। यह एक प्रभुसत्ता संपन्न निकाय है जो कोई भी कानून बना सकती है। यदि माननीय सदस्य के पास अन्य आधार हों, तो वह अपनी बात जारी रख सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैं सदन के प्राधिकार का खण्डन नहीं कर सकता। हमें हिन्दू समाज अथवा मुस्लिम समाज को नष्ट करने और उन्हें किसी नए धर्म-विहीन समाज में शामिल करने का अधिकार है। इस अधिकार पर कभी भी कोई विवाद नहीं है। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या जनता इस कानून के साथ है?

मुझे विश्वास है कि वे इस कानून के साथ नहीं हैं, वे इसके विरुद्ध हैं। (**एक माननीय सदस्य :** 'वे इसके साथ है।') आप कैसे जानते हैं कि वे इसके साथ हैं? इस अत्यधिक महत्व के मामले को निर्वाचकों के समक्ष रखा जाना चाहिए। यह एक संवैधानिक प्रक्रिया है। वास्तव में परसों श्री ओस्बर्न ने हमें बताया था कि वह कुछ चीजों को शामिल करने को तब तक सहमत नहीं होंगे, जब तक कि उन मामलों को विशेष रूप से निर्वाचकों के समक्ष न रखा जाए और उनके द्वारा अनुमति न दे दी जाए। वास्तव में वे ऐसा कुछ नहीं कर सकते। वे निर्वाचकों की सहमति के बिना एक संवैधानिक तरीके से कार्रवाई के लिए स्वयं को असक्षम समझते हैं। परन्तु हम अब इतने उच्च हो चुके हैं कि हम निर्वाचकों की असहमति को भी सहन कर सकते हैं। वस्तुतः एक बार यह चर्चा हुई थी कि सविस्तार वर्णन करने का अभिप्राय उद्देश्य को समाप्त करना होता है। इसलिए यदि कोई चुनाव होगा तो हिंदू कोड पारित नहीं होगा। इस सत्र में यह चर्चा भी पूर्णतया विपरीत रुख में हुई है। उन्होंने कहा है कि उन्होंने यह दिखा दिया है कि निर्वाचक हमारे साथ हैं। यह उनकी स्वीकृति ही है कि यह विधेयक यहाँ

लाया गया है। लेकिन ऐसा न हो तो उनकी स्वीकृति और न उनकी सहमति है कि आप इस कानून को यहाँ लाए हैं।

इस कानून की शुरूआत कैसे हुई। इसका सृजन एक विदेशी सरकार के प्राधिकार के अंतर्गत हुआ जो उस समय अपना अस्तित्व बचाए रखने को लेकर संघर्षशील थी। अंग्रेजी सत्ता अपने पूर्ण उन्मूलन के डर से भयाक्रांत थी। ब्रिटिशों के लिए यह जीवन और मृत्यु का संघर्ष था। यहीं वह समय था जब एक गृह सदस्य, सर रेगीनाल्ड मैक्सवेल ने राउ समिति की नियुक्ति की। इस प्रकार यह सृजन-प्रक्रिया एक विश्व युद्ध के दबाव की छांव में शुरू हुई, जब इंग्लैण्ड का अस्तित्व खतरे में था। जब यह विधेयक तैयार हुआ था, इसका प्रस्ताव अंतरिम सरकार के कानून मंत्री श्री जोगेन्द्र नाथ मंडल द्वारा रखा गया था। उस समय देश में विनाशकारी संघर्ष का दौर था, जान-माल की व्यापक हानि हुई और अभूतपूर्व पैमाने पर शांति भंग हो रही थी। वह समय था, जब तत्कालीन मंत्री जानते थे कि उनका कार्यकाल अस्थायी है, जब उनका ध्यान पहले से ही पाकिस्तान पर केन्द्रित था और इसलिए इस विधेयक में उनकी कोई रुचि नहीं बची थी। यह वे परिस्थितियां थीं, जब विधेयक सदन के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। वस्तुतः उस समय तक पाकिस्तान एक परिकल्पना से अधिक समय था, जब विधेयक संसद में लाया गया"

माननीय उपाध्यक्ष : मैंने देखा है कि यहां अनेक व्यक्ति प्रतीक्षा सूची में हैं। माननीय सदस्य पहले ही डेढ़ दिन का समय ले चुके हैं। वह अपनी बात कब समाप्त करना चाहेंगे? क्या उन्हें स्वयं कोई अनुमान हैं?

एक माननीस सदस्य : इस सदन में किसी को कोई अनुमान नहीं है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : यहां तक कि कानून मंत्री को भी कोई अनुमान नहीं है। वास्तव में यह टिप्पणी इस हस्तक्षेप के फलस्वरूप निकली है। अभी मैं कुछ समय और ले सकता हूँ।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : कितना समय? सदन जानने की इच्छुक है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : सदन यह जानने का पात्र था कि विधेयक पर कितनी देर तक विचार-विमर्श होगा, पर इसका कोई उत्तर नहीं दिया गया। इसीलिए मेरी स्थिति और कठिन हो गई है।

तत्पश्चात् सदन दोपहर के भोजन अर्थात् 2.30 बजे तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

दोपहर के भोजन के बाद 2.30 बजे सदन पुन: एकत्र हुआ। अध्यक्ष महोदय (माननीय श्री जी.वी. मावलंकर) अपने स्थान पर आसीन हुए।

श्री एच.वी. कॉमथ : श्रीमान्, ऐसा प्रतीत होता है कि सदन में कोरम नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : मैं समझता हूँ कि कोरम पूरा है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, दोपहर के भोजन से पूर्व जब हम यहाँ से गए थे, तो मैं इस प्रश्न पर बात कर रहा था कि क्या सदन के लिए इस कानून को पारित करना उचित होगा। इस सदन की संवैधानिक शक्ति के बारे में मुझे संदेह नहीं है कि हम इस प्रकृति के कानून को पारित करने के लिए संवैधानिक रूप से सक्षम हैं। प्रश्न वास्तव में यह है कि क्या हमें नैतिक अधिकार है, अथवा क्या इस कानून को पारित करना हमारे लिए नैतिक तौर पर उचित होगा। संपूर्ण रूप से प्रश्न यह होगा कि क्या हमारे निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा सदन को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से इस कानून से सहमत होने का प्राधिकार दिया गया है। कुछ माननीय सदस्य कहते हैं कि जनता इस विधेयक के साथ है। मेरी राय है कि जनता विधेयक के साथ नहीं है। इस संबंध में पहले ही बड़ी संख्या में आपत्तियाँ प्राप्त हो चुकी हैं। मेरा विश्वास है कि विधानसभा के कार्यालय में, आपत्तियों की बाढ़ आ गई है और उनकी मात्रा इतनी अधिक है कि उन्हें वर्गीकृत अथवा सार रूप में नहीं रखा जा सकता या किसी सुव्यवस्थित तरीके से निपटाया भी नहीं जा सकता। आपत्तियां अभी भी बड़े विशाल पैमाने पर प्राप्त हो रही हैं। इससे जनता की भावनाओं की तीव्रता का पता चलता है। प्रश्न यह है कि क्या एक लोकतांत्रिक समाज में, एक लोकतांत्रिक आधार पर गठित विधायिका में हमें जनता की राय प्राप्त किए बिना ऐसा कानून पारित कर देना चाहिए? जैसा कि मैं कह रहा था विधेयक की अपनी अवधारणा एक बाहरी सरकार की देन थी, जो इस संकल्पना के समय से ही अपने अस्तित्व के लिए लड़ रही थी और उसी में व्यस्त थी। इस विधेयक को सदन में एक ऐसे कानून मंत्री द्वारा प्रस्तुत किया गया था, जो उस समय अंतरिक सरकार के एक मंत्री थे, और स्वयं वह पाकिस्तान पलायन करने का प्रयास कर रहे थे। इसलिए उन्हें इस विधेयक में बिल्कुल भी रुचि नहीं थी।

श्री एच.पी. कॉमथ : वह उसी बात को दोहरा रहे हैं, जो उन्होंने सुबह कही थी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अब वर्तमान विधेयक माननीय मंत्री, डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत किया गया है, जबकि भारत में बड़ी संख्या में गंभीर समस्याएं हैं। इससे प्रमाणित हो जाता है, जैसा कि कानून मंत्री की स्वीकारोक्ति से भी प्रतीत होता है, कि वर्तमान विधेयक किसी विचार के बिना मात्र पूर्ववत जारी रखा गया है। यह तब की बात है, जब इसे प्रवर

समिति को भेजा गया था। तब कानून मंत्री को मालूम हुआ कि विधेयक का प्रारूप उचित ढंग से तैयार नहीं किया गया था और इसमें संशोधनों की आवश्यकता थी। भले ही वे संशोधन महत्वपूर्ण थे अथवा नहीं, यह एक अलग मुद्दा है। किन्तु इसमें पूरी तरह संशोधन की आवश्यकता थी। अतः उन्होंने संपूर्ण विधेयक का प्रारुप पुनः तैयार किया। वस्तुतः उस समिति का परिणाम एक पुस्तक के रूप में सामने आया जिसे "द हिंदू कोड" कहा गया और जो बिल्कुल वैसी ही है, जैसा कि उसे संशोधित विधेयक में प्रस्तुत किया गया है और डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, कानून मंत्री द्वारा इसका आशय "एक विधेयक जो हिंदू कानून की विभिन्न धाराओं को संशोधित और वर्गीकृत करता है," के रूप में व्यक्त किया गया है। इस प्रकार जो विधेयक श्री जोगेन्द्र नाथ मण्डल द्वारा प्रस्तुत किया गया था, उसे बाद में डॉ. अम्बेडकर द्वारा भी एक नए विधेयक के रूप में ही परिवर्तित कर दिया गया। मैं जिस मुद्दे की बात कर रहा हूँ, वह यह है कि विधेयक पर कभी भी कोई विचार-विमर्श नहीं हुआ है, न ही सरकार ने जब पहली बार इसे प्रायोजित करने का प्रयास किया उससे पूर्व उस पर कोई उपयुक्त विचार-विमर्श किया गया। वस्तुतः जैसे ही यह पता लगा कि विधेयक का प्रारुप उचित रूप से तैयार नहीं किया गया, और इसे पूर्णतः पुनः लिखे जाने की आवश्यकता है और इसके विवरणों में बड़ी मात्रा में परिवर्तनों की आवश्यकता है, तो वही समय था जब विधेयक को वापस ले लिया जाता। किन्तु इसे वापस लिए बिना कानून मंत्री ने इसमें अनेक परिवर्तन किए और एक नया विधेयक प्रस्तुत कर दिया। इससे प्रतीत होता है कि विधेयक पर कभी भी विस्तृत विचार-विमर्श नहीं हुआ। यदि यह तथ्य है कि संपूर्ण विधेयक में गंभीर परिवर्तन करने के बारे में सरकार को भी अपना विचार बदलना पड़ा था, तो इससे यही प्रतीत होता है कि अपने अभूतपूर्व स्रोतों के साथ सरकार इसे स्वीकार करने में सफल नहीं रही–न ही देश ने इसे स्वीकार किया।

श्रीमान्, इस वर्तमान विधान परिषद का चयन एक विशिष्ट उद्देश्य से किया गया है।

श्री तजामुल हुसैन : मुझे डर है कि माननीय सदस्य वहीं बातें दोहरा रहे हैं।

माननीय अध्यक्ष : मुझे नहीं मालूम कि उन्होंने क्या यह सब कुछ कह दिया है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : उन्होंने यह सब सुबह कह दिया है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने बामुश्किल इस पर बात शुरू की थी। इस सदन का चुनाव इस कानून को पारित करने के लिए नहीं हुआ था।

श्री तजामुल हुसैन : श्रीमान्, उन्होंने बिल्कुल यही कहा था। यह सब आपकी अनुपस्थिति में कहा गया था।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : कृपया मुझे अपनी बात को आगे बढ़ाने दें। प्रश्न यह है कि क्या इसके लिए हमें प्राधिकृत किया गया है। वास्तव में इस सदन का प्राधिकार एक अप्रत्यक्ष चुनाव पर आधारित है; क्योंकि कोई प्रत्यक्ष चुनाव नहीं हुआ था।

श्री एच.वी. कॉमथ : यही बात उन्होंने पहले कही थी और उपाध्यक्ष महोदय ने इस मुद्दे पर नियम का हवाला दिया था।

माननीय अध्यक्ष : यदि उन्होंने ऐसा कहा था तो मैं यह बात माननीय सदस्य पर छोड़ता हूँ, क्योंकि मैं स्वयं यह नहीं जानता।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : श्रीमान्, मैं इसे विस्तार से बताना चाहता हूँ।

माननीय अध्यक्ष : इसे विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है। अब वह अगले मुद्दे पर आ सकते हैं।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उस समय दोपहर के भोजन का समय हो गया था।

माननीय अध्यक्ष : यह बहुत स्पष्ट प्रतीत होती है और इसकी कोई व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है कि इस सदन का चुनाव प्रत्यक्ष मतों द्वारा नहीं हुआ है, या यह कि चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से हुआ है, और इसका चुनाव एक विशिष्ट उद्देश्य अर्थात् संविधान के निर्माण के लिए किया गया था, इसलिए इस स्तर पर यह मुद्दा इस प्रकार के कानून के लिए नहीं उठाया जाना चाहिए। इस मुद्दे पर ज्यादा चर्चा की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि माननीय सदस्य का इस मुद्दे पर ही अधिक समय लगाने का विचार है, तो मैं उनका समर्थन करने में असमर्थ हूँ।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मुद्दा यह है कि जैसे ही मैंने अपनी बात आरंभ की श्री कृष्णास्वामी भारती ने इसका विरोध कर दिया।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : श्रीमान्, यहां इस मुद्दे पर व्यक्तिगत स्पष्टीकरण जरूरी है। मैंने उस समय कुछ नहीं कहा था।

माननीय अध्यक्ष : कोई सदस्य विशेष किसी बात को दावे के साथ कहता है अथवा उसके लिए मना करता है, पर यदि वास्तविक तथ्य रखे गए हैं, तो उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि उसे प्राधिकार है तो है, यदि नहीं तो नहीं है। किसी एक सदस्य द्वारा एक या किसी दूसरे तरीके से दावे के साथ कोई बात कही जाती है, उससे वस्तुतः कोई अन्तर नहीं पड़ता। अतः कृपया विवरणों का उल्लेख किए बिना अपनी बात रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : प्रश्न यह है कि यह इतना सुस्पष्ट नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : यह सुस्पष्ट है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : नहीं, श्रीमान्, श्री भारती के समक्ष यह सुस्पष्ट नहीं है।

माननीय अध्यक्ष : माननीय सदस्य को ऐसे सदस्य को संतुष्ट करने पर ध्यान नहीं देना चाहिए, जो संतुष्ट होना ही नहीं चाहते। वह पूरे सदन को संबोधित कर रहे हैं। उन्हें पता होना चाहिए सदन में ऐसे सदस्य हैं, जिन्हें काफी कुछ समझ है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : मैंने जिस बात के लिए मना किया है, वह समझ की बात नहीं है। वह बात है दिमाग को बंद कर लेने की कठिनाई यही है। कुछ व्यक्ति संतुष्ट होना ही नहीं चाहते।

माननीय अध्यक्ष : उन्हें संतुष्ट नहीं किया जा सकता। हम अपना समय उन्हें संतुष्ट करने के लिए व्यतीत न करें। माननीय सदस्य अपना अगला मुद्दा रखें।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : अतः आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हमें यह कानून पारित करने के लिए हमें कोई नैतिक प्राधिकार प्राप्त नहीं है। वस्तुतः, सरकार ने एक विधेयक तैयार किया, तत्पश्चात् उसे परिचालित करने के लिए भेज दिया। मैं द्वितीय हिंदू कानून समिति की रिपोर्ट के पृष्ठ 41 परप परिशिष्ट–II का उल्लेख करता हूँ–"राउ समिति द्वारा तैयार विधेयक को परिचालित करने के लिए भेजा गया था और विधेयक को बड़ी संख्या में जन निकायों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों और प्राधिकरणों को भेजा गया था तथा उनकी राय मांगी गई थी।" 5 अगस्त, 1944 की अधिसूचना में यह पूर्णतया स्पष्ट किया गया था कि हिंदू कानून समिति जनता की राय के परिप्रेक्ष्य में प्रारुप को उस रूप में संशोधित करने की इच्छुक है, जैसे कि उसके द्वारा लिखित और मौखिक तौर पर बताया गया है। यह बहुत महत्वपूर्ण पक्ष है और इसके लिए वर्तमान स्थिति के रहस्य पर से परदा उठना चाहिए। विधेयक को जनता की राय के लिए प्रस्तुत किया गया था और उसमें यह स्पष्ट कहा गया था कि विधेयक को जनता की राय के अनुरूप संशोधित किया जाएगा। जनता की क्या राय थी? मामले के एक चरण में जनता की राय "हिंदू कानून समिति, खंड I एवं II में प्रस्तुत लिखित बयान" में निहित है। मेरा मानना है कि सदन के सदस्यों द्वारा इस राय पर कभी भी पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं किया गया अथवा सदन के अनेक सदस्यों द्वारा इस पर कभी भी विचार नहीं किया गया। जब ये सम्मतियाँ प्राप्त हुईं, तो इनका विश्लेषण किया गया था, उसके बाद मौखिक साक्ष्य भी आंतत्रित किए गए और बड़ी संख्या में गवाहियों की जांच भी की गई थी। इनका विवरण "हिंदू कानून समिति के समक्ष वर्ष 1945 में प्रस्तुत किए गए मौखिक साक्ष्य" में देखा जा सकता है। इन खंडों का यदि विश्लेषण किया जाए और इन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ा जाए,

तो स्पष्ट होगा कि जनता की जो राय ली गई, वह प्रचुर मात्रा में हिंदू संहिता के विरुद्ध थी। इसका परिणाम यह हुआ कि हिंदू कानून समिति ने अपने निजी दृष्टिकोणों का पालन किया और विधेयक में यहां-वहां संशोधन कर दिए, जो जनता की राय के अनुरूप नहीं थे। इसके बावजूद कलकत्ता उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश डी.एन. मित्तर, जो एक सदस्य भी थे, के द्वारा अपनी असहमति टिप्पणी में इस साक्ष्य का बहुत सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया गया है। वास्तव में, उन्होंने एक व्यापक असहमति टिप्पणी लिखी है। मैं इस मामले पर बात नहीं करना चाहता, किन्तु उन्होंने विभिन्न शीर्षों के अंतर्गत इस राय का विश्लेषण किया, अर्थात् क्या हमें कोडिफिकेशन की आवश्यकता है अथवा नहीं, क्या विवाह कानून को बदला जाना चाहिए, क्या तलाक होने चाहिए, आदि। उन्होंने प्रत्येक शीर्ष में राय और साक्ष्य का, उनके पक्ष और विपक्ष में विश्लेषण किया है, और मेरा कहना है कि सदन द्वारा उनकी वह रिपोर्ट बहुत सावधानीपूर्वक विचार-विमर्श किए जाने की अपेक्षा रखती है। विभिन्न रायों को पुन: विषयों के अनुरूप के साथ-साथ प्रान्तों के अनुरूप वर्गीकृत किया गया है। डॉ. डी.एन. मित्तर के अनुसार, साक्ष्य के प्रभाव के संबंध में, कोडिफिकेशन, तलाक की कार्यवाहियों और अन्य मामलों के बारे में प्रत्येक बिंदु पर राय प्रचुर मात्रा में विधेयक के विरुद्ध थी। जनता की राय कोडिफिकेशन के सीधे विरुद्ध थी। यानी जनता की राय और साक्ष्य प्रचुर मात्रा में विधेयक के सिद्धांतों के विरुद्ध थे। हिंदू कानून समिति की रिपोर्ट केवल बहुमत की रिपोर्ट है। डॉ. डी.एन. मित्तर द्वारा वस्तुत: इसका विरोध किया गया था, परन्तु अन्य सदस्यों ने सोचा कि उनके मूल विधेयक में यहां-वहां थोड़े संशोधन करके इनमें फिट किया जा सकता है। वे संशोधन जनता के राय के अनुरूप नहीं थे, बल्कि वे संशोधन उनकी अपनी सोच के अनुरूप थे। अत: मैं कहता हूँ कि विधेयक को जनता की राय के विपरीत तैयार किया गया है। यही वह आधार है जिस पर मेरा तर्क टिका है। यद्यपि श्री कृष्णास्वामी भारती ने कहा है कि विधेयक के पीछे जनता की राय है, पर मैं यह बताने का साहस कर रहा हूँ कि जनता की राय इसके विरुद्ध है।

एक माननीय सदस्य : एक प्रश्न।

श्री तजामुल हुसैन : नहीं, बिल्कुल नहीं। यह विधेयक के लिए है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : जहाँ तक लिखित राय का संबंध है, यह वास्तव में विधेयक के विरुद्ध है।

इस प्रकार, मेरा कहना है कि जनता की राय पर उचित विचार किया गया, जैसा कि एक लोकतांत्रिक सरकार को करना चाहिए। वस्तुत: यह विधेयक लोकतंत्र को नकारने

जैसा है और जिन परिस्थितियों में रचा गया है, वे अभी प्रचलन में नहीं है। अब एक पूर्ण–रूपेण लोकतंत्र का समय है और इसमें जनता की राय को माना जाना चाहिए तथा वैधानिक प्रस्तावों को प्रभावी बनाते समय उनका पालन किया जाना चाहिए। अतः मेरा कहना है कि जहां तक लिखित राय का प्रश्न है, वह विधेयक के विरुद्ध है, किन्तु अलिखित राय क्या है? हमने आपके कार्यालय में बड़ी संख्या में विरोध दर्ज होते देखे हैं और हमने बड़ी संख्या में बैठकों की कार्यवाहियों को सुना है। वास्तव में हमने इस शहर के बीच भी बैठकों का आयोजन किया हैं। बैठकों में भारी उपस्थित रही है और कई माननीय सदस्य और माननीय कानून मंत्री भी उनमें आमंत्रित किए गए हैं, कुछ सदस्य उपस्थित हुए, किन्तु कानून मंत्री शामिल नहीं हुए।

बाबू रामनारायण सिंह : उनमें उपस्थित होने की हिम्मत नहीं थी।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : उन्होंने उपस्थित होना आवश्यक नहीं समझा, क्योंकि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जहां तक विधेयक का संबंध है, उनके लिए जनता की राय कोई मापदण्ड अथवा मार्गदर्शन नहीं है। वास्तव में, डॉ. डी.एन. मित्तर ने जनता की राय के संबंध में एक स्पष्ट विश्लेषण प्रस्तुत किया है। माननीय कानून मंत्री ने कहा है कि वह डॉ. डी.एन. मित्तर का खंडन करने के लिए उनके एक पूर्व विश्लेषण का उद्धरण देंगे।

---

(56)

भाग 3 – दत्तकग्रहण

अध्याय 1

सामान्य दत्तक ग्रहण

52. इस भाग के उल्लंघन में दत्तकग्रहण का निषेध :

(1) इस संहिता के प्रभावी होने के बाद कोई भी हिंदू पुरुष इस भाग में दिए गए तरीके के अतिरिक्त न तो दत्तकग्रहण कर सकता है न दे सकता है।

(2) धारा 66 की उप–धारा (2) के मामलों को छोड़ कर इस भाग के उल्लंघन में किया गया दत्तक ग्रहण अमान्य होगा।

भाग 4, धारा 1, 17 तथा 27, पृष्ठ 24, 27, 28

(3) अमान्य दत्तकग्रहण न तो दत्तक को उसके ग्रहीता परिवार में कोई अधिकार देता है और न ही जन्म के परिवार से उसका अधिकार समाप्त करता है।

(57)

53. वैध दत्तकग्रहण की अर्हताएं : कोई भी दत्तक ग्रहण तब तक वैध नही माना जा सकता जब तक कि–

(1) जो व्यक्ति दत्तक दे रहा है उसके पास इसकी क्षमता हो साथ ही उसे दत्तक देने का अधिकार भी हो;

भाग 6, धारा 4, पृष्ठ 24

(2) जो व्यक्ति दत्तक ले रहा है उसके पास इसकी क्षमता हो;

(3) वह व्यक्ति जिसे गोद लिया जा रहा है वह इसके काबिल हो;

(4) दत्तकग्रहण शारीरिक रूप से गोद लेने व देने से ही पूर्ण माना जाएगा;

(5) दत्तकग्रहण इस भाग में निर्दिष्ट अन्य शर्तों का पालन करता हो।

(58)

दत्तक ग्रहण की क्षमता

54. हिंदू पुरुष के दत्तकग्रहण की क्षमता :

कोई भी हिंदू पुरुष जो मानसिक रूप से स्वस्थ हो व 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका हो पुत्र के दत्तकग्रहण की क्षमता रखता है;

बतर्शे कि एक हिंदू पुरुष जिसकी एक पत्नी जीवित है, बिना उसकी सहमति के अथवा यदि उसकी एक से अधिक पत्नियां है, तो वह उनमें से किसी एक की सहमति के बिना दत्तकग्रहण नहीं कर सकता। जबकि पत्नी या पत्नियां अपनी सहमति देने में असमर्थ हो। *भाग 6, धारा 5(1), पृष्ठ 24*

स्पष्टीकरण—इस धारा के उद्देश्य के लिए एक पत्नी अपनी सहमति देने के लिए अक्षम मानी जायेगा यदि उसकी मानसिक स्थिति ठीक न हो या उसने 18 वर्ष की आयु पूर्ण न की हो ।

(56)

भाग 3—दत्तकग्रहण

अध्याय 1

सामान्य दत्तक ग्रहण

52. इस भाग के उल्लंघन में दत्तक ग्रहण का निषेध :

(1) इस संहिता के प्रभावी होने के बाद कोई भी हिंदू पुरुष इस भाग मे दिए गए तरीके के अतिरिक्त न तो दत्तकग्रहण कर सकता है न दे सकता है।

(2) धारा 66 की उप-धारा (2) के मामलों को छोड़ कर इस भाग के उल्लंघन में किया गया दत्तकग्रहण अमान्य होगा।

(3) अमान्य दत्तक ग्रहण न तो दत्तक को उसके ग्रहीता परिवार में कोई अधिकार देता है और न ही जन्म के परिवार से उसका अधिकार समाप्त करता है।

(57)

53. वैध दत्तक ग्रहण की अर्हताएं : कोई भी दत्तकग्रहण तब तक वैध नही माना जा सकता जब तक कि—

(1) जो व्यक्ति दत्तक दे रहा है उसके पास इसकी क्षमता हो साथ ही उसे दत्तक देने का अधिकार भी हो;

(2) जो व्यक्ति दत्तक ले रहा है उसके पास इसकी क्षमता हो;

(3) वह व्यक्ति जिसे गोद लिया जा रहा है वह इसके काबिल हो;

(4) दत्तकग्रहण शारीरिक रूप से गोद लेने व देने से ही पूर्ण माना जाएगा;

(5) दत्तकग्रहण इस भाग में निर्दिष्ट न्य शर्तों का पालन करता।

(58)

54. हिंदू पुरुष के दत्तक ग्रहण की क्षमता :

कोई भी हिंदू पुरुष जो मानसिक रूप से स्वस्थ हो व 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका हो पुत्र के दत्तक ग्रहण की क्षमता रखता है;

बतर्शे कि एक हिंदू पुरुष जिसकी एक पत्नी जीवित है, बिना उसकी सहमति के अथवा यदि उसकी एक से अधिक पत्नियां है, तो वह उनमें से किसी एक की सहमति के बिना दत्तक ग्रहण नहीं कर सकता। जबकि पत्नी या पत्नियां अपनी सहमति देने में असमर्थ हो।

स्पष्टीकरण—इस धारा के उद्देश्य के लिए एक पत्नी अपनी सहमति देने के लिए अक्षम मानी जायेग यदि उसकी मानसिक स्थिति ठीक न हो या उसने 18 वर्ष की आयु पूर्ण न की हो ।

(59)

55. विधवा की दत्तकग्रहण की क्षमता :

(1) कोई भी हिंदू विधवा जो मानसिक रूप से स्वस्थ हो व 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुकी हो, अपने पति के लिए पुत्र के दत्तक ग्रहण की क्षमता रखती है।

बशर्ते कि–

क. उसके पति .... ने उसके दत्तकग्रहण को निषिद्ध न किया हो, तथा

ख. उसके दत्तकग्रहण की क्षमता को समाप्त न कर दिया हो।

(2) उप–धारा (1) में उल्लिखित कोई भी हिंदू विधवा जिसने 18 साल की आयु पूरी न की हो, को लड़के के दत्तकग्रहण से रोक नहीं सकता है यदि आगे दिए प्रावधानों के तहत उसे अधिकार प्रदान किए गए हों।

(60)

56. दत्तकग्रहण संबंधी अधिकार या निषेध :

(1) कोई भी हिंदू पुरुष जिसमें जैसे ऊपर कहा गया है, एक पुत्र के दत्तकग्रहण की क्षमता हो अपनी मृत्यु के पश्चात् अपनी पत्नी को उसके लिए एक पुत्र के दत्तकग्रहण का अधिकार दे सकता है या उसे ऐसा करने से निषिद्ध) कर सकता है;

(2) जहां एक से अधिक पत्नियां हों वहाँ किसी एक या सब को दत्तकग्रहण का अधिकार दिया जा सकता है या निषेध किया जा सकता है।

(3) जहां किसी हिंदू ने, जो अपने पीछे दो या दो से अधिक विधवाएं छोड़ गया है; किसी एक को या अधिक को स्पष्ट रूप से एक पुत्र के दत्तकग्रहण का अधिकार दिया है तो उसे अन्य के दत्तकग्रहण को निषिद्ध करना होगा।

(61

57. अधिकार देने, निषेध करने या उसी को रद्द करने का तरीका :

(1) दत्तकग्रहण का अधिकार देने या निषेध करने की मान्यता तब तक मान्य नहीं होगी जब तक उसे भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का XVI) के तहत पंजीकृत माध्यम द्वारा जारी न किया गया हो या भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 63 के तहत वसीयत द्वारा न किया गया हो;

(2) इस प्रकार प्रदत्त किसी भी अधिकार या निषेध को पूर्व उद्धृत पंजीकृत दस्तावेज या वसीयत द्वारा रद्द किया जा सकता है;

(3) वसीयत द्वारा प्रदत्त अधिकार या लगाए गए निषेध को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 70 के अनुसार अन्य तरीकों से भी रद्द किया जा सकता है, जैसा कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925 (1925 का XXXIX) की तीसरी अनुसूची में बदलाव किया गया है।

(59)

55. विधवा की दत्तकग्रहण की क्षमता :

(1) कोई भी हिंदू विधवा जो मानसिक रूप से स्वस्थ हो व 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुकी हो, अपने पति के लिए पुत्र के दत्तकग्रहण की क्षमता रखती है।

बशर्ते कि–

क. उसके पति स्पष्ट अथवा अन्तर्निहित रूप से .... ने उस दत्तकग्रहण को निषिद्ध न किया हो, तथा *भाग 6, धारा 5(2), पृष्ठ 24*

ख. उसके दत्तकग्रहण की क्षमता को समाप्त न कर दिया हो।

(2) उप-धारा (1) में उल्लेखित कोई भी प्रावधान एक हिंदू विधवा को जिसने 18 साल की आयु पूरी न की हो, अपने पति को दत्तकग्रहण से रोक नहीं सकता यदि आगे दिए प्रावधानों के तहत उसे अधिकार प्रदान किए गए हों।

(60)

56. दत्तकग्रहण संबंधी अधिकार या निषेध :

(1) कोई भी हिंदू पुरुष जैसे ऊपर कहा गया एक पुत्र के दत्तकग्रहण की क्षमता हो अपनी मृत्यु के पश्चात् अपनी पत्नी को उसके लिए एक पुत्र के दत्तकग्रहण का अधिकार दे सकता है या उसे ऐसा करने से निषिद्ध कर सकता है; *भाग 6, धारा 6, पृष्ठ 24*

(2) जहां एक से अधिक पत्नियां हों वहां किसी एक या सब को दत्तकग्रहण का अधिकार दिया जा सकता है या निषेध किया जा सकता है।

(3) जहां किसी हिंदू ने, जो अपने पीछे दो या दो से अधिक विधवाएं छोड़ गया है; किसी एक को या अधिक को स्पष्ट रूप से एक पुत्र के दत्तक ग्रहण का अधिकार दिया है तो उसे अन्य के दत्तकग्रहण को निषिद्ध करना होगा।

(61)

57. अधिकार देने, निषेध करने या उसी को रद्द करने का तरीका :

(1) दत्तक का अधिकार देने या निषेध करने की मान्यता तभी तक होगी जब उसे भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का XVI) के तहत पंजीकृत साधन द्वारा जारी किया गया हो या भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 63 के तहत वसीयत द्वारा किया गया हो; *भाग 6, धारा 7, पृष्ठ 24*

(2) इस प्रकार प्रदत्त किसी भी अधिकार या निषेध को पूर्व उद्धृत पंजीकृत दस्तावेज या वसीयत द्वारा रद्द किया जा सकता है;

(3) वसीयत द्वारा प्रदत्त अधिकार या लगाए गए निषेध को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 70 के अनुसार अन्य तरीकों से भी रद्द किया जा सकता है, जैसा कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, (1925 (1925 का XXXIX) की तीसरी अनुसूची में बदलाव किया गया है।

(62)

58. दो या अधिक विधवाओं के मध्य दत्तकग्रहण का अधिकार : जहाँ कोई हिंदू पुरुष अपने पीछे दो या अधिक विधवाओं को उसके लिए दत्तकग्रहण करने के अधिकार के साथ छोड़ दिया गया है वहां उनके बीच इस अधिकार का निर्धारण निम्न प्रावधानों से होगा :

(क) यदि उसने सभी या उनमें से किसी एक को प्राथमिकता का संकेत देते हुए इस आधार पर ये अधिकार दिया है तो दत्तकग्रहण के अधिकार में उसी क्रम का पालन होगा।

(ख) यदि उसने इस प्रकार का कोई संकेत नहीं दिया है तो धारा 59 के अनुसार विधवाओं की वरिष्ठता द्वारा क्रम तय होगा कि किसे ये अधिकार दिया जाए;

(ग) यदि उसने न तो किसी को दत्तकग्रहण का अधिकार दिया है न उसका निषेध किया है तो धारा 59 में निर्धारित नियमों के अनुसार उनकी वरिष्ठता के क्रम में उनका अधिकार तय होगा।

(घ) यदि कोई विधवा जिसके पास खंड ब या स के तहत दत्तक ग्रहण का अधिकार है वह यदि चाहे तो किसी पंजीकृत प्रपत्र द्वारा अगली वरिष्ठ विधवा को ये अधिकार दे सकती है। यदि वह ऐसा घोषित नहीं करती और दत्तकग्रहण के लिए बिना उचित कारण इंकार करती है अथवा इसके लिए अन्य वरिष्ठ अथवा अन्य विध वा द्वारा आमंत्रित किए जाने पर एक निश्चित समय के भीतर अपने अधिकार का प्रयोग करने में असफल रहती है तो ये अधिकार उसके बाद की वरिष्ठ विधवा को चला जाएगा और ये क्रम वरीयतानुसार अंतिम विधवा तक जारी रहेगा।

(63)

59. पत्नियों व विधवाओं के मधय वरिष्ठता : इस भाग के उद्देश्य के लिए – किसी व्यक्ति की पत्नियों एवं विधवाओं के बीच वरिष्ठता का क्रम उसी क्रम से तय होगा जो कि उनके विवाह का क्रम है। जिस महिला का विवाह पहले हुआ है, वह बाद में विवाह होनेवाली महिला से वरिष्ठ मानी जाएगी।

(64)

60. विधवा के गोद लेने का अधिकार पूर्व अभ्यास से निःशेष नहीं होगा : एक विधवा इस भाग के प्रावधान के अधीन उत्तराधिकार के लिए एक की मृत्यु के बाद दूसरा पुत्र गोद ले सकती है। इस तरह वह कई पुत्र गोद ले सकती है जब तक कोई प्राधिकारी यदि कोई हो, तो उस पर उसके पति द्वारा अन्यथा प्रदत्त प्रावधान न लगा दे।

(62)

58. दो या अधिक विधवाओं के मध्य दत्तकग्रहण का अधिकार : जहां कोई हिंदू पुरुष अपने पीछे दो या अधिक विधवाओं को उसके लिए दत्तकग्रहण करने के अधिकार के साथ छोड़ा गया है वहां उनके बीच इस अधिकार का निर्धारण निम्न प्रावधानों से होगा :

(क) यदि उसने सभी या उनमें से किसी एक को प्राथमिकता का संकेत देते हुए इस आधर पर ये अधिकार दिया है तो दत्तकग्रहण के अधिकार में उसी क्रम का पालन होगा।

(ख) यदि उसने इस प्रकार का कोई संकेत नहीं दिया है तो धारा 59 के अनुसार विधवाओं की वरिष्ठता का उनका क्रम तय होगा कि किसे ये अधिकार दिया जाए। *भाग 6, धारा 8, पृष्ठ 25*

(ग) यदि उसने न तो किसी को दत्तकग्रहण का अधिकार दिया है न उसका निषेध किया है तो धारा 59 में निर्धारित नियमों के अनुसार उनकी वरिष्ठतानुसार उनका अधिकार तय होगा।

(घ) यदि कोई विधवा जिसके पास खंड ब या स के तहत दत्तकग्रहण का अधिकार है वह यदि चाहे तो किसी पंजीकृत प्रपत्रद्वारा अगली वरिष्ठ विधवा को ये अधिकार दे सकती है। यदि वह ऐसा घोषित नहीं करती और दत्तकग्रहण के लिए बिना उचित कारण इंकार करती है अथवा इसके लिए अन्य वरिष्ठ अथवा अन्य विधवा द्वारा आमंत्रित किए जाने पर एक निश्चित समय के भीतर अपने अधिकार का प्रयोग करने में असफल रहती है तो ये अधिकार उसके बाद की वरिष्ठ विधवा को चला जाएगा और ये क्रम वरियतानुसार अंतिम विधवा तक जारी रहेगा।

(63)

59. पत्नियों व विधवाओं के मध्य वरिष्ठता : इस भाग के उद्देश्य के लिए - किसी व्यक्ति की पत्नियों एवं विधवाओं के बीच वरिष्ठता का क्रम उसी क्रम से तय होगा जो कि उनके विवाह का क्रम है। जिस महिला का विवाह पहले हुआ है वह बाद में विवाह होने वाली महिला से वरिष्ठ मानी जाएगी। *भाग 6, धारा 9, पृष्ठ 25*

(64)

60. विधवा के गोद लेने का अधिकार पूर्व अभ्यास से निःशेष नहीं होगा : एक विधवा इस भाग के प्रावधान के अधीन उत्तराधिकार के लिए एक की मृत्यु के बाद दूसरा पुत्र गोद ले सकती है। इस तरह वह कई पुत्र गोद ले सकती है जब तक कोई प्राधिकारी यदि कोई हो, तो उस पर उसके पति द्वारा अथवा अन्यथा प्रदत्त प्रावधान अधिकार प्रदान करता है।

भाग 6, धारा 10, पृष्ठ 25

(65)

61. विधवा के अधिकार की समाप्ति :

(1) एक विधवा के दत्तकग्रहण का अधिकार समाप्त हो सकता है यदि-

(अ) यदि वह पुनर्विवाह कर ले, अथवा

(ब) जब उसके पति का कोई हिंदू पुत्र अपनी मृत्यु के बाद एक हिंदू पुत्र, विधवा या पुत्र की विधवा को छोड़ जाए,

(स) यदि वह हिंदू न रह जाए।

स्पष्टीकरण:- (1) इस उप-धारा में पुत्र का अभिप्रायः पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र है, चाहे वह खून के वैध रिश्ते से हो या फिर दत्तक लिए पुत्र द्वारा।

(2) विधवा के दत्तक ग्रहण का अधिकार एक बार समाप्त हो जाने के बाद पुनः नहीं दिया जा सकता।

(66)
दत्तक देने की क्षमता

62. दत्तक देने की क्षमता रखने वाले व्यक्ति :

(1) लड़के के माता अथवा पिता के अतिरिक्त किसी अन्य को उसे गोद देने का अधिकार नहीं है।

(2) उप-धारा 3 के खंड ब व स के प्रावधान के होते हुए पिता यदि जीवित है तो उसे अकेले गोद देने का अधिकार है किंतु उस अधिकार का प्रयोग वह तब तक नहीं कर सकता जब तक कि उस बच्चे की मां यदि वह अपनी सहमति देने में सक्षम है, सहमति न दे दे।

(3) माता लड़के को दत्तक दे सकती है –

(क) यदि पिता की मृत्यु हो चुकी हो;

(ख) यदि पिता ने भाग 7 की धारा 110 की उप-धारा (1) में दी गई किसी रीति के अनुसार पूर्णतया व अंतिम रूप से संसार का त्याग कर दिया हो।

(ग) यदि वह हिंदू न रह गया हो, अथवा

(घ) यदि वह अपनी सहमति देने में सक्षम न हो :

बशर्ते कि पिता ने भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का XVI) के तहत पंजीकृत प्रपत्र द्वारा या उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 63 के अनुसार की गई वसीयत के अनुसार उस पर रोक न लगा दी हो।

(4) पिता या माता जो पुत्र का दत्तकग्रहण कर रहे हो अनिवार्यत: मानसिक रूप से स्वस्थ हों व 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुके हों।

स्पष्टीकरण:- इस धारा के उद्देश्य के लिए–

1. "पिता" अथवा "माता" में गोद लिए हुए माता या पिता शामिल नहीं हैं, तथा

2. एक पिता या माता, जैसा भी मामला हो, अपनी सहमति देने में सक्षम नहीं हो सकते हैं यदि वे मानसिक रूप से अस्वस्थ हों या उन्होंने 18 वर्ष की आयु पूर्ण न की हो।

(65)

61. विधवा के अधिकार की समाप्ति :

(1) एक विधवा के दत्तकग्रहण का अधिकार समाप्त हो जाता है यदि–

(क) जब यदि वह पुनर्विवाह कर ले, अथवा

(ख) जब उसके पति का कोई भी हिंदू पुत्र अपनी मृत्यु के बाद अपने पीछे एक हिंदू पुत्र, विधवा या पुत्र की विधवा को छोड़ जाए

भाग 5, धारा 10, पृष्ठ 25

(ग) यदि वह हिंदू न रह जाए;

स्पष्टीकरण;- (1) इस उप-धारा में पुत्र का अभिप्राय: पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र है, चाहे वह खून के वैध रिश्ते से हो या फिर दत्तक लिए पुत्र द्वारा।

(2) विधवा के दत्तकग्रहण का अधिकार एक बार समाप्त हो जाने के बाद पुनः नहीं दिया जा सकता।

(66)
दत्तक की क्षमता

62. दत्तक देने की क्षमता रखने वाले व्यक्ति :

(1) लड़के के माता अथवा पिता के अतिरिक्त किसी अन्य को उसे गोद देने का अधिकार नहीं है।

(2) उप-धारा 3 के खंड ब व स के प्रावधान के होते हुए पिता यदि जीवित है तो उसे अकेले गोद देने का अधिकार है किंतु उस अधिकार का प्रयोग वह तब तक नहीं कर सकता जब तक कि उस बच्चे की मां यदि वह अपनी सहमति देने में सक्षम है, सहमति न दे दे। *भाग 5, धारा 12, पृष्ठ 25*

(3) माता लड़के को दत्तक दे सकती है -

(क) यदि पिता की मृत्यु हो चुकी हो;

(ख) यदि पिता ने भाग 7 की धारा 110 की उप-धारा (1) में दी गई किसी रीति के अनुसार पूर्णतया व अंतिम रूप से संसार का त्याग कर दिया हो;

(ग) यदि वह हिंदू न रह गया हो, अथवा

(घ) यदि वह अपनी सहमति देने में सक्षम न हो :

बशर्ते कि पिता ने भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का XVI)के तहत पंजीकृत प्रपत्र द्वारा या उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 63 के अनुसार की गई वसीयत के अनुसार उस पर रोक न लगा दी हो ।

(4) पिता या माता जो पुत्र का दत्तकग्रहण दे रहे हों अनिवार्यतः मानसिक रूप से स्वस्थ हों व 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुके हों।

स्पष्टीकरण:- इस धारा के उद्देश्य के लिए-

1. "पिता" अथवा "माता" में गोद लिए हुए माता या पिता शामिल नहीं है, तथा

2. एक पिता या माता, जैसा भी मामला हो, अपनी सहमति देने में सक्षम नहीं हो सकते हैं यदि वे मानसिक रूप से अस्वस्थ हों या उन्होंने 18 वर्ष की आयु पूर्ण न की हो।

(67)
दत्तकग्रहण करने की क्षमता

63. दत्तकग्रहण किसे किया जा सकता है? : किसी लड़को को किसी भी हिंदू पुरुष या स्त्री द्वारा गोद नहीं लिया जा सकता :

(1) यदि निम्न स्थितियों की संतुष्टि न हो तो किसी लड़के को गोद नहीं लिया जा सकता–

(क) वह एक हिंदू हो,

(ख) वह शादीशुदा न हो,

(ग) उसे पहले से ही गोद न लिया गया हो,

(घ) उसने 15 साल की आयु पूरी न की हो।

(68)

64. कुछ व्यक्ति जिन्हे गोद लिए जाने के लिए सक्षम घोषित किया गया है: किसी शक की गुंजाइश न हो इसलिए निम्न व्यक्तियों को गोद लिए जाने की सहमति हैं, यथा:–

(1) सबसे बड़ा अथवा अपने पिता का इकलौता पुत्र;

(2) उस स्त्री का पुत्र जिससे गोद लेने वाले पिता ने कानूनन विवाह न किया हो, तथा विशेषकर पुत्री का पुत्र, बहन का पुत्र, या मां की बहन का पुत्र; तथा

(3) कोई अजनबी चाहे वह गोद लेने वाले पिता के निकट संबंधी हो।

(69)
आवश्यक संस्कार

65. दत्तकग्रहण की पूर्णता : दत्तकग्रहण तब तक वैध व बाध्यकारी नहीं है जब तक कि पुत्र जिसे दत्तक लिया गया है, शारीरिक रूप से संबंधित पालक या उनके प्राधिकार से उसको स्थानान्तर करने की अभिलाषा से दत्तक देने वाले परिवार से दत्तकग्रहण करने वाले परिवार में न ले जाया जाए।

स्पष्टीकरण :– दत्तकग्रहण की वैधता के लिए 'दत्ता होमम' का अनुष्ठान आवश्यक नहीं है।

(67)
दत्तकग्रहण करने की क्षमता

63. दत्तकग्रहण किसे किया जा सकता है? : (1) किसी भी हिंदू पुरुष या स्त्री द्वारा किसी लड़की को गोद नहीं लिया जा सकता।

(2) यदि निम्न व्यवस्थाओं की संतुष्टि न हो तो किसी लड़के को गोद नहीं लिया जा सकता– *भाग 6, धारा 3, पृष्ठ 24*

(क) वह एक हिंदू हो,

(ख) वह शादीशुदा न हो,

(ग) उसे पहले से ही गोद न लिया गया हो,

(घ) उसने 15 साल की आयु पूरी न की हो।

(68)

64. कुछ व्यक्ति जिन्हे गोद लिए जाने के लिए सक्षम घोषित किया गया है: किसी शक की गुंजाइश न हो इसलिए निम्न व्यक्तियों को गोद लिए जाने की सहमति हैं, **यथा:–**

(1) सबसे बड़ा अथवा अपने पिता का इकलौता पुत्र; *भाग 6, धारा 14, पृष्ठ 26*

(2) उस स्त्री का पुत्र जिससे गोद लेने वाले पिता ने कानूनन विवाह न किया हो, तथा विशेष कर पुत्री का पुत्र, बहन का पुत्र; या मां की बहन का पुत्र तथा

(3) कोई अजनबी यद्यपि गोद लेने वाले पिता के निकट संबंधी हो।

(69
आवश्यक संस्कार

65. दत्तकग्रहण की पूर्णता : दत्तक ग्रहण तब तक वैध व बाध्यकारी नहीं है जब तक कि पुत्र जिसे दत्तक लिया गया है उसे शारीरिक रूप से सम्बन्धित पालक या उनके प्राधिकार से उसे स्थानन्तर करने की अभिलाषा से दत्तक देने वाले परिवार से दत्तक ग्रहण करने वाले परिवार में न ले जाया जाए। *भाग 6, धारा 15, पृष्ठ 26*

स्पष्टीकरण :- दत्तक ग्रहण की वैद्यता के लिए 'दत्ता होमम' का अनुष्ठान आवश्यक नहीं है।

(70)
दत्तकग्रहण के लिए अन्य शर्तें

66. अन्य शर्तें :

(1) हर दत्तक ग्रहण में निम्न शर्तों का अनुपालन अनिवार्य रूप से होना चाहिए:-

(i) वह पिता जो दत्तक दे रहा है या जिसे दत्तक दिया गया है उन का कोई हिंदू पुत्र, पौत्र, या प्रपौत्र (चाहे वह वैध रक्त संबंध से हो या दत्तक ग्रहण से) अनिवार्य रूप से दत्तकग्रहण के समय जीवित न हो।

स्पष्टीकरण :- दत्तक ग्रहण के समय वास्तविक रूप से अजन्मे यद्यपि वह गर्भ में पनप रहा हो और बाद में जीवित जन्म ले, को इस खंड के लिए जीवित नहीं माना जाएगा।

(ii) एक ही बालक एक साथ दो या दो से अधिक व्यक्तियों द्वारा दत्तक नहीं लिया जा सकता न ही दो या उससे अधिक बालकों को एक-साथ एक ही व्यक्ति द्वारा दत्तक लिया जा सकता है।

(iii) प्रत्येक दत्तकग्रहण में देने वाले व ग्रहण करने वाले की मुक्त सहमति होनी चाहिए।

(2) यदि दत्तक देने वाले व ग्रहण करने वाले की सहमति जोर जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, धोखा, गलतबयानी या गलती से ली गई हो तो दोनों में से कोई पक्ष दत्तकग्रहण को अवैध घोषित करने के लिए वाद ला सकता है:-

न्यायालय ऐसे मुकदमे को खारिज कर सकता है बशर्ते :

(क) जोर-जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, गलतबयानी या गलती पकड़ में आने के दो वर्ष से अधिक समय के बाद मुकदमा दायर किया गया हो; अथवा

(ख) यदि जोर-जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, गलतबयानी या गलती, जैसा भी मामला हो, के सामने आने के बाद भी सहमति देने वाला दत्तकग्रहण की पुष्टि करता है, और ऐसी पुष्टि से किसी अन्य के अधिकार पर असर न पड़ता हो।

(3) जहां उप-खंड (2) के धारा 'क' में दी गई समय-सीमा के भीतर कोई मुकदमा दायर नहीं होता और जहां उक्त उप-खंड की धारा 'ख' के तहत दत्तक ग्रहण की पुष्टि की जाती है वहां दत्तकग्रहण की तिथि से सभी उद्देश्यों के लिए उसे प्रभावी व वैध माना जाएगा।

(70)
दत्तकग्रहण के लिए अन्य शर्तें

66. अन्य शर्तें :

(1) हर दत्तकग्रहण में निम्न शर्तों का अनुपालन अनिवार्य रूप से होना चाहिए:-

(i) वह पिता जो दत्तक दे रहा है या जिसे दत्तक दिया गया है उन का कोई हिंदू पुत्र, पौत्र, या प्रपौत्र (चाहे वह वैध रक्त संबंध से हो या दत्तकग्रहण से) अनिवार्य रूप से दत्तकग्रहण के समय जीवित न हो।

भाग 6, धारा 16, पृष्ठ 26

स्पष्टीकरण :- दत्तकग्रहण के समय वास्तविक रूप से अजन्मे यद्यपि वह गर्भ में पनप रहा हो और बाद में जीवित जन्म ले, को इस खंड के लिए जीवित नहीं माना जाएगा।

(ii) एक ही बालक एक साथ दो या दो से अधिक व्यक्तियों द्वारा दत्तक नहीं लिया जा सकता न ही दो या उससे अधिक बालकों को एक-साथ एक ही व्यक्ति द्वारा दत्तक लिया जा सकता है।

(iii) प्रत्येक दत्तक ग्रहण में देने वाले व ग्रहण करने वाले की मुक्त सहमति होनी चाहिए।

(2) यदि दत्तक देने वाले व ग्रहण करने वाले की सहमति जोर-जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, धोखा, गलतबयानी या गलती से ली गई हो तो दोनों में से कोई पक्ष दत्तक ग्रहण को अवैध घोषित करने के लिए वाद ला सकता है:-

न्यायालय ऐसे मुकदमें को खारिज कर सकता है बशर्ते :

(क) जोर-जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, गलतबयानी या गलती पकड़ में आने के दो वर्ष से अधिक समय के बाद मुकदमा दायर किया गया हो; अथवा

(ख) यदि जोर-जबरदस्ती, गैर-जरूरी प्रभाव, गलतबयानी या गलती, जैसा भी मामला हो, के सामने आने के बाद भी सहमति देने वाला दत्तकग्रहण की पुष्टि करता है, और ऐसी पुष्टि से किसी अन्य के अधिकार पर असर न पड़ता हो।

(3) जहां उप-खंड (2)के धारा 'क' में दी गई समय-सीमा के भीतर कोई मुकदमा दायर नहीं होता और जहां उक्त उप-खंड की धारा 'ख' के तहत दत्तकग्रहण की पुष्टि की जाती है वहां दत्तकग्रहण की तिथि से सभी उद्देश्यों के लिए उसे प्रभावी व वैध माना जाएगा।

(71)

अध्याय 2

दत्तकग्रहण के प्रभाव

67. दत्तकग्रहण के प्रभाव : एक दत्तक पुत्र दत्तकग्रहण की तिथि से दत्तक परिवार में सभी उद्देश्यों के लिए दत्तक पिता का पुत्र मान लिया जाता है और उसी तिथि से उसके सारे संबंध जन्म के परिवार से अलग हो जाते हैं और वह दत्तक परिवार में दत्तकग्रहण से प्रतिस्थापित हो जाते हैं।

बतर्शे कि-

(क) वह बालक किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकेगा जिस से वह यदि अपने जन्म के परिवार में होता, विवाह नहीं कर पाता।

(ख) जो कोई संपत्ति, दत्तक पुत्र में दत्तकग्रहण के पूर्व निहित हो गई थी, इस शर्त पर उसमें निहित रहेगी कि उस संपत्ति से जुड़ी कोई जिम्मेदारी, यदि कोई हो तो, इसमें उसके जन्म के परिवार के संबंधियों के भरण-पोषण करने की जिम्मेदारी भी शामिल है, भी उसकी होगी;

(ग) दत्तक पुत्र, जो सम्पदा दत्तकग्रहण के पूर्व उसमें निहित थी, उसे किसी व्यक्ति को सिवाय धारा 68 में दिए गए तरीके व सीमा के, अनिर्निहित नहीं कर सकेगा।

(72)

68. दत्तकग्रहण द्वारा संपत्ति को निर्निहित करना : जहां इस संहिता के प्रभावी होने के बाद कोई विधवा दत्तकग्रहण करती है तो वह दत्तक पुत्र -

(क) दत्तक पुत्र होने के नाते वह विधवा व अन्य विधवाएं यदि कोई हों, की संपत्ति में आधे का स्वामी होगा जैसे दत्तक पिता का उत्तराधिकारी को होता है।

(ख) यदि दत्तकग्रहण ग्रहीता पिता के पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र की मृत्यु के पश्चात् हुआ हो तो आधी संपत्ति ग्रहीता माता और यदि अन्य विधवाएं, यदि कोई हों जो वह ग्रहीता पिता से प्राप्त करती है, इसके अतिरिक्त, आधी सम्पत्ति उन पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र का उत्तराधिकारी होने के नाते ग्रहीता माता प्राप्त करती :

हर मामले में संपत्ति में हिस्सा वैसा ही होगा जैसा कि दत्तक ग्रहण से ठीक पहले था:-

बशर्ते कि यदि सारी संपत्ति या उसका एक हिस्सा जो उसे या उन्हें विरासत में परम्परा, रीति-रिवाज अथवा किसी अनुदान या कानून द्वारा अविभाज्य रूप से मिला हो, दत्तक पुत्र उस पूरी जागीर को अविभाज्य ही रहने देगा जैसा कि दत्तक ग्रहण से ठीक पहले था इसके साथ ही खंड क या ख के तहत प्राप्त सम्पत्ति का वह अधिकारी हो सकता है।

(71)

अध्याय 2
दत्तकग्रहण के प्रभाव

67. दत्तक ग्रहण के प्रभाव : एक दत्तक पुत्र दत्तकग्रहण की तिथि से ग्रहीता परिवार में सभी उद्देश्यों के लिए ग्रहीता पिता का पुत्र मान लिया जाता है और उसी तिथि से उसके सारे संबंध जन्म के परिवार से अलग हो जाते हैं और वह दत्तक ग्रहीता परिवार में दत्तक ग्रहण से प्रति स्थापित हो जाते हैं :

बशर्ते कि–

(क) वह बालक किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकेगा जिस से वह यदि अपने जन्म के परिवार में होता, विवाह नहीं कर पाता; *भाग 6, खंड 18, पृष्ठ 27*

(ख) जो कोई संपत्ति, दत्तक पुत्र में दत्तक ग्रहण के पूर्व निहित हो गई थी, इस शर्त पर उसमें निहित रहेगी कि उस संपत्ति से जुड़ी कोई जिम्मेदारी, यदि कोई हो तो, इसमें उसके जन्म के परिवार के संबंधियों के भरण-पोषण करने की जिम्मेदारी भी शामिल है, भी उसकी होगी;

(ग) दत्तक पुत्र, जो सम्पदा दत्तक ग्रहण के पूर्व उसमें निहित थी, उसे किसी व्यक्ति को सिवाय धारा 68 में दिए गए तरीके व सीमा के, अनिर्निहित नहीं कर सकेगा।

(72)

68. दत्तकग्रहण द्वारा संपत्ति को अनिर्निहित करना :

(1) जहां इस अधिनियम के लागू होने के बाद कोई विधवा दत्तकग्रहण करती है तो वह दत्तक पुत्र –

(क) दत्तक पुत्र होने के नाते वह विधवा व अन्य विधवाएं यदि कोई हों, को वंशानुगत प्राप्त संपत्ति में आधे का स्वामी होगा जैसे वह दत्तक पिता के उत्तराधिकारी के बतौर दत्तकग्रहण से ठीक पहले होता। *भाग 6, धारा 19, पृष्ठ 27*

(ख) यदि दत्तकग्रहण ग्रहीता पिता के पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र की मृत्यु के पश्चात् हुआ हो तो आधी संपत्ति ग्रहीता माता और अन्य विधवाएं यदि कोई हों, जो वे ग्रहिता पिता से प्राप्त करतीं और इसके अतिरिक्त आधी सम्पत्ति जो उसके पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र का उत्तराधिकारी होने के नाते प्राप्त करती :

संपति में हिस्सा वैसे ही निश्चित होगा जैसा कि दत्तकग्रहण से ठीक पहले थाः-

बशर्ते कि यदि सारी संपत्ति या उसका एक हिस्सा जो उसे या उन्हें विरासत में किसी परम्परा, रीति-रिवाज अथवा किसी अनुदान या कानून द्वारा अविभाज्य रूप से मिला हो, दत्तक पुत्र उस पूरी जागीर को अविभाज्य ही रहने देगा जैसा कि दत्तकग्रहण से ठीक पहले था इसके साथ ही उसे खंड अ या ब के तहत प्राप्त संपत्ति का वह अधिकारी बनाया जा सकता है।

(2) उप-खंड (1) के प्रावधान भारत के प्रांतों में कहीं भी रिक्त कृषि-भूमि पर लागू होंगे।

(73)

69. ग्रहीता माता-पिता को अपनी संपत्तियों के निवर्तन का अधिकार : दत्तक ग्रहण से माता अथवा पिता अपनी संपत्ति को जीवित व्यक्तियों के बीच अंतरण या वसीयत द्वारा निवर्तन के अधिकार से वंचित नहीं होते जब तक कि इसके विपरीत कोई समझौता न किया गया हो।

(74)

70. विधुर द्वारादत्तक ग्रहण के मामले में ग्रहीता माता का निर्धारण :

(1) यदि कोई हिंदू जिसकी एक पत्नी जीवित है, पुत्र गोद लेता है तो वह दत्तक पुत्र की ग्रहीता माता मानी जाएगी। *भाग 6, धारा 22, पृष्ठ 27ए 28*

(2) जहां हिंदू की एक से ज्यादा पत्नियां जीवित हैं-

(i) वह पत्नी जिसके सहयोग से या जिसकी सहमति से दत्तकग्रहण हुआ है, अथवा

(ii) यदि एक से ज्यादा पत्नियों का सहयोग या सहमति ली गई है तो विवाह में पत्नियों के मध्य वरीष्ठतम पत्नी को जिसका सहयोग या सहमति ली गई है। दत्तक पुत्र को ग्रहीता माता व अन्य पत्नियों को उसकी सौतेली माएं माना जाएगा।

(3) यदि कोई विधुर अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद किसी समय दत्तकग्रहण करता है तो दत्तकग्रहण से ठीक पहले जिस पत्नी की मृत्यु हुई है उसे ग्रहीता माता माना जाएगा व अन्य मृत पत्नी जो ग्रहीता माता नहीं या बाद में विवाह किए जाने वाली पत्नी उसकी सौतेली माँएं मानी जाएंगी दत्तक पुत्र की, जब तक कि ग्रहीता पिता ने कोई निर्देश या साफ संकेत न दिया हो कि इन पत्नियों में से कोई अन्य उसकी ग्रहीता माता होगी। ऐसे मामले में कोई पूर्व मृत पत्नी जो दत्तक माता नहीं है और कोई पत्नी जिससे बाद में ग्रहीता पिता ने विवाह किया है गोद लिए गए पुत्र की सौतेली मांएं मानी जाएंगी। *भाग 6, धारा 22 (3), पृष्ठ 38*

(4) जहां किसी अविवाहित ने दत्तकग्रहण किया है बाद में वह जिस से विवाह करेगा वह दत्तक पुत्र की सौतेली मां मानी जाएगी।

(73)

69. ग्रहीता माता पिता को अपनी संपत्तियों के निवर्तन का अधिकार : दत्तक ग्रहण से माता अथवापिता अपनी संपत्ति को जीवित व्यक्तियों के बीच अंतरण या वसीयत द्वारा निवर्तन के अधिकार से वंचित नहीं होते जब तक कि इसके विपरीत कोई समझौता न किया गया हो। *भाग 6, धारा 21(2), पृष्ठ 27*

(74)

70. विधुर द्वारा दत्तक ग्रहण के मामले में ग्रहीता माता का निर्धरण :

(1) यदि कोई हिंदू जिसकी एक पत्नी जीवित है, पुत्र गोद लेता है तो वह दत्तक पुत्र की ग्रहीता माता मानी जाएगी।

(2) जहां एक हिंदू की एक से ज्यादा पत्नियां जीवित हैं–

(i) वह पत्नी जिसके सहयोग से या जिसकी सहमति से दत्तक ग्रहण हुआ है, अथवा

(ii) यदि एक से ज्यादा पत्नियों की सहयोग या सहमति ली गई है तो विवाह में पत्नियों के मध्य वरीष्ठतम पत्नी को दत्तक पुत्र की ग्रहीता माता व अन्य पत्नियों को उसकी सौतेली माँएं माना जाएगा।

भाग 6, धारा 22, पृष्ठ 27, 28

(3) यदि कोई विधुर अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद किसी समय दत्तक ग्रहण करता है तो दत्तक ग्रहण से ठीक पहले जिस पत्नी की मृत्यु हुई है उसे ग्रहीता माता माना जाएगा व अन्य मृत पत्नी जो ग्रहीता माता नहीं है या बाद में विवाह किए जाने वाली पत्नी उसी सौतेली माँएं मानी जाएंगी दत्तक पुत्र की, जब तक कि ग्रहीता पिता ने कोई निर्देश या साफ संकेत न दिया हो कि इन पत्नियों में से कोई अन्य उसकी ग्रहीता माता होगी। ऐसे मामले में पूर्व मृत पत्नी जो ग्रहीता माता नहीं है व वह पत्नी जिससे बाद में पिता ने विवाह किया है गोद लिए गए पुत्र की सौतेली माँएं मानी जाएंगी।

भाग 6, धारा 23(3), पृष्ठ 38

(4) जहां किसी अविवाहित ने दत्तकग्रहण किया है बाद में वह जिस से विवाह करेगा वह दत्तक पुत्र की सौतेली मां मानी जाएगी।

(75)

71. विधवा द्वारादत्तक ग्रहण किए जाने पर ग्रहीता माता का निर्धारण :

(1) जहां मृत हिंदू की कई विधवाओं में से कोई एक दत्तकग्रहण करती है उसे ग्रहीता माता माना जाएगा। व अन्य विधवाएं दत्तक पुत्र की सौतेली माँएं होगी।

(2) जहां दो या ज्यादा विधवाएं मिल कर दत्तक ग्रहण करती हैं, वहां विवाह में वरिष्ठतम विधवा उस पुत्र की ग्रहीता मां होगी व अन्य विधवा या विधवाएं उसकी सौतेली माँएं होंगी।

(76)

72. वैध दत्तकग्रहण का रद्द नहीं होना : मान्य रीति से संपन्न हुआ दत्तकग्रहण, ग्रहीता माता-पिता अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता न ही दत्तक पुत्र अपनी इस स्थिति का परित्याग कर अपने जन्म के परिवार में वापिस जा सकता है।

(77)

73. कुछ समझौते का निष्प्रभावी होना : दत्तकग्रहण न करने का समझौता या दत्तक ग्रहण (गोद लिए) पुत्र के अधिकारों को कम करना निष्प्रभावी शून्य है।

(75)

71. विधवा द्वारा दत्तक ग्रहण किए जाने पर ग्रहीता माता का निर्धारण :

(1) जहां मृत हिंदू की कई विधवाओं में से कोई एक दत्तकग्रहण करती है उसे ग्रहीता माता माना जाएगा व अन्य विधवाएं दत्तक पुत्र की सौतेली माँएं होंगी। *भाग 6, धारा 21, पृष्ठ 28*

(2) जहां दो या ज्यादा विधवाएं मिल कर दत्तकग्रहण करती हैं, वहां विवाह में वरिष्ठतम विधवा उस पुत्र की ग्रहीता मां होगी व अन्य विधवा या विधवाएं उसकी सौतेली माँएं होंगी।

(76)

72. वैध दत्तकग्रहण का रद्द नहीं होना : मान्य रीति से संपन्न हुआ दत्तक ग्रहण, ग्रहीता माता-पिता अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता न ही दत्तक पुत्र अपनी इस स्थिति का परित्याग कर अपने जन्म के परिवार में वापिस जा सकता है।

(77)

73. कुछ समझौते का निष्प्रभावी होना : दत्तक ग्रहण न करने का समझौता या दत्तक ग्रहण (गोद लिए) पुत्र के अधिकारों को कम करना निष्प्रभावी शून्य है। *भाग 6, धारा 20, पृष्ठ 20*

अध्याय 3

पंजीकरण या दत्तकग्रहण का अभिलेखन

74. पंजीकरण दत्तकग्रहण का प्रमाणीकरण :

(1) राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर अपने सरकारी गजट में ये निर्देश दे सकती है कि राज्य या अधिसूचना में बताए गए क्षेत्र में इस भाग के प्रावधान के तहत कोई दत्तक -ग्रहण वैध नही होगा जब तक कि कागजात पंजीकरण के समय लागू किसी कानून के तहत पंजीकृत कोई लिखित प्रमाण न हो।

(2) जहां उप-धारा (1) के तहत किसी पंजीकृत प्रमाण की आवश्यकता हो, वहां दत्तकग्रहण के प्रमाण के लिए उस दस्तावेज के अतिरिक्त अन्य किसी प्रमाण को पेश नहीं किया जा सकता।

74अ. दत्तक ग्रहण का अभिलेखन उन मामलों में जहां धारा 74 लागू नहीं होती: जहां धारा 74 के तहत कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई है वहां राज्य सरकार इस भाग के तहत किए गए किसी दत्तकग्रहण के प्रमाण की सुविधा के इरादे से, नियमों के तहत, उस दत्तकग्रहण के बारे जो दस्तावेज देती है, की प्रविष्टि उस रजिस्टर में दत्तक की जायेगी जिसकी देखभाल राज्य सरकार द्वारा नियुक्त प्राधिकारी द्वारा की जाती है। बशर्ते कि ऐसे प्राधिकारी को धारा 75 में बताए गए तरीके द्वारा अर्जी दी गई हो।

75. अर्जी कब लगाई जाए व उसमें दिए जाने वाले दस्तावेज : धारा 74अ के तहत दत्तकग्रहण करने वाले व दत्तक देने वाले दोनों द्वारा हस्ताक्षरित अर्जी दत्तक ग्रहण के 90 दिन के भीतर दी जानी चाहिए। इसमें निम्नलिखित जानकारी व मांगी गई अन्य जानकारियां दी जानी चाहिए :-

(i) दत्तकग्रहण की तिथि;

(ii) दत्तकग्रहण का प्रकार;

(iii) उस या उन व्यक्तियों के नाम और जिनके द्वारा दत्तकग्रहण किया गया है;

(iv) यदि दत्तकग्रहण करने वाला पिता विवाहित है तो उस की पत्नी का नाम; और यदि वह विधुर है तो उसकी पूर्व मृत पत्नी का नाम;

यदि यहां दो या दो से अधिक पत्नियां या मृत पत्नियां है तो जिस क्रम व तिथि में उस के साथ उनका विवाह हुआ था और उस पत्नी या पूर्व मृत का नाम जो कि पत्नी माता कहलाएगी।

(v) यदि दत्तकग्रहण करने वाली एक महिला है तो उसके पति का नाम और, सह-पत्नियों या सह-विधवाओं के नाम यदि कोई हो;

(vi) उस व्यक्ति का नाम व उम्र जो दत्तक दे रहा है;

(vii) दत्तक दिए जाने वाले लड़के का नाम उसके जन्म के परिवार का;

(viii) दत्तक लिए गए लड़के की आयु; व

(ix) दत्तकग्रहण करने वाले परिवार में गोद लिए गए लड़के का नाम।

(78)
अध्याय 3
दत्तकग्रहण का अभिलेखन

74. पंजीकरण व दत्तकग्रहण के लिए आवेदन : जब इस भाग के प्रावधान के अनुसार कोई दत्तक ग्रहण किया जाता है और दोनों पक्षों की यह इच्छा है कि इस उद्देश्य हेतु संधारित दत्तकग्रहण के रजिस्टर में उसका अभिलेखन कराया जाए तो वे राज्य सरकार द्वारा सरकारी गजट में अधिसूचना जारी कर नियुक्त किए अधिकारी, जिसे उस जगह, जहां दत्तक ग्रहण हुआ है का क्षेत्राधिकार हो, को प्रार्थना पत्र दे सकते हैं।

भाग 6, धारा 30, पृष्ठ 29

(79)

75. अर्जी कब लगाई जाए व उसमें दिए जाने वाले दस्तावेज : दत्तकग्रहण करने वाले व दत्तक देने वाले दोनो द्वारा हस्ताक्षरित प्रार्थना-पत्र होंगे और दत्तकग्रहण के 90 दिन के भीतर दिये जायेंगे। इसमें निम्नलिखित जानकारी व अन्य निर्धारित जानकारी होगी।

(i) दत्तकग्रहण की तिथि;

(ii) दत्तकग्रहण का प्रकार;

(iii) उस या उन व्यक्तियों के नाम और जिनके द्वारा दत्तकग्रहण किया गया है;

भाग 6, धारा 31, पृष्ठ 29

(iv) यदि दत्तकग्रहण करने वाला पिता विवाहित है तो उस की पत्नी का नाम; और यदि वह विधुर है तो उसकी पूर्व मृत पत्नी का नाम;

यदि यहां दो या दो से अधिक पत्नियां या मृत पत्नियां है तो जिस क्रम व तिथि में उस के साथ उनका विवाह हुआ था और उस पत्नी या पूर्व मृत का नाम जो कि पत्नी माता कहलाएगी।

(v) यदि दत्तकग्रहण करने वाली एक महिला है तो उसके पति का नाम और, सह पत्नियों या सह विधवाओं के नाम यदि कोई हो;

(vi) उस व्यक्ति का नाम व उम्र जो दत्तक दे रहा है;

(vii) दत्तक दिए जाने वाले लड़के का नाम उसके जन्म के परिवार का;

(viii) दत्तक लिए गए लड़के की आयु; व

(ix) दत्तक ग्रहण करने वाले परिवार में गोद लिए गए लड़के का नाम।

(80)

76. दत्तक ग्रहण का अभिलेखन : यदि धारा 74अ के तहत नियुक्त प्राधिकारी संतुष्ट होता है कि आवेदन पर दत्तक ग्रहण करने और देने वाले दोनों के हस्ताक्षर हैं व दत्तकग्रहण उसी तरह लिया गया है जैसा कि कहा गया है, तब वह दत्तकग्रहण को दत्तकग्रहण रजिस्टर में अभिलेखन करेगा।

(80)

76. दत्तक ग्रहण का अभिलेखन : यदि धारा 74अ के तहत नियुक्त प्राधिकारी संतुष्ट होता है कि आवेदन पर दत्तकग्रहण करने और देने वाले दोनो के हस्ताक्षर हैं व दत्तकग्रहण उसी तरह लिया गया है जैसा कि कहा गया है, तब वह दत्तक ग्रहण को दत्तक ग्रहण रजिस्टर में अभिलेखन करेगा।

(81)

भाग 4

अवयस्कता एवं संरक्षण

77. परिभाषा : इस भाग में -

(क) "अवयस्क" से अभिप्राय उस व्यक्ति से है जिसने अठारह वर्ष की आयु पूरी न की हो;

(ख) "प्राकृतिक संरक्षक" से अभिप्राय धारा 78 में दिए गए संरक्षकों से है लेकिन इनमें ये संरक्षक शामिल नहीं है- *भाग 5, धारा 3, पृष्ठ 22*

(i) अवस्क के पिता की इच्छा से नियुक्त किए गए संरक्षक, अथवा

(ii) न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित, अथवा

(iii) कोर्ट ऑफ वार्ड से संबंधित किसी अधिनियम के द्वारा या उसके तत्वाधान में अधिकार प्राप्त व्यक्ति।

(82)

78. एक हिंदू अवयस्क के स्वाभाविक संरक्षक : एक हिंदू अवयस्क की शारीरिक सुरक्षा व संपत्ति की सुरक्षा के लिए उसके स्वाभाविक संरक्षक होंगे:-

(1) एक लड़के या अविवाहित लड़की के संबंध में - पिता, व उसके बाद माता: बशर्ते यदि अवयस्क ने तीन साल की आयु पूरी नहीं की है तो वह माता के देखभाल में रहेगी; *भाग 5, धारा 1, पृष्ठ 22*

(2) एक जारज लड़का या अविवाहित जारज लड़की के संबंध में-माता व उसके बाद पिता;

(3 विवाहित कन्या के संबंध में -उसका पति

परंतु कोई भी व्यक्ति इस धारा के तहत अवयस्क के प्राकृतिक संरक्षक की भूमिका नहीं निभा सकता यदि,

(1) यदि वह हिंदू न रहा हो; अथवा

(2) उसने धारा 110 की उप-धारा (1) के तहत पूर्णतया व अंतिम रूप से संसार का परित्याग कर दिया हो।

(83)

79. दत्तक पुत्र की स्वाभाविक संरक्षता : दत्तक पुत्र जो अवयस्क है की स्वाभाविक संरक्षता गोद लेने के बाद उसके जन्म के परिवार से गोद लेने वाले परिवार में आ जाती है। *भाग 5, धारा 5, पृष्ठ 22*

(81)

भाग 4

अवयस्कता एवं संरक्षण

77. परिभाषा : इस भाग में -

(1) "अवयस्क" से अभिप्राय उस व्यक्ति से है जिसने अठारह वर्ष की आयु पूरी न की हो; *भाग 5, धारा 1, पृष्ठ 22*

(2 "प्राकृतिक संरक्षक" से अभिप्राय धारा 78 में दिए गए संरक्षकों से है लेकिन इनमें ये संरक्षक शामिल नहीं है-

(i) अवस्क के पिता की इच्छा से नियुक्त किए गए संरक्षक, अथवा

(ii) न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित, अथवा

(iii) कोर्ट ऑफ वार्ड से संबंधित किसी अधिनियम के द्वारा या उसके तत्वाधन में अधिकार प्राप्त व्यक्ति।

(82)

78. एक हिंदू अवयस्क के स्वाभाविक संरक्षक : एक हिंदू अवयस्क की शारीरिक सुरक्षा व संपत्ति की सुरक्षा के लिए उसके स्वाभाविक संरक्षक होंगे:-

(1) एक लड़के या अविवाहित लड़की के संबंध में - पिता, व उसके बाद माता: बशर्ते यदि अवयस्क ने तीन साल की आयु पूरी नहीं की है तो वह माता के देखभाल में रहेगी;

भाग 5, धारा 4, पृष्ठ 22

(2) एक जारज लड़का या अविवाहित जारज लड़की के संबंध में-माता व उसके बाद पिता;

(3 विवाहित कन्या के संबंध में -उसका पति

परंतु कोई भी व्यक्ति इस धारा के तहत अवयस्क के प्राकृतिक संरक्षक की भूमिका नहीं निभा सकता यदि,

(1) यदि वह हिंदू न रहा हो; अथवा

(2) उसने धारा 110 की उपधारा 1. के तहत पूर्णतया व अंतिम रूप से संसार का परित्याग कर दिया हो।

(83)

79. दत्तक पुत्र की स्वाभाविक संरक्षता : दत्तक पुत्र जो अवयस्क है की स्वाभाविक संरक्षता गोद लेने के बाद उसके जन्म के परिवार से गोद लेने वाले परिवार में आ जाती है। *भाग 5, धारा 5, पृष्ठ 22*

(84)

80. स्वाभाविक संरक्षक की शक्तियां :

(1) इस धारा के प्रावधान के अधीन एक हिंदू अवयस्क के स्वाभाविक संरक्षक को वे सभी कार्य करने का अधिकार है जो अवयस्क के लाभ अथवा उसकी संपत्ति की प्राप्ति, सुरक्षा या लाभ के लिए आवश्यक अथवा उचित व सही हो। किंतु किसी भी मामले में संरक्षक अवयस्क को व्यक्तिगत इकरारनामे में नहीं बांध सकता।

(2) न्यायालय की पूर्व आज्ञा के बिना प्राकृतिक संरक्षक नहीं कर सकता–

(क) अवयस्क की अचल संपत्ति के किसी भाग को बंधक या शुल्क, या बिक्री, उपहार, अदल-बदल या किसी अन्य तरीके से हस्तांतरित या;

(ख) ऐसी संपत्ति के किसी भाग को पांच वर्ष से ज्यादा समय या अवयस्क के वयस्क होने की तिथि के एक साल से ज्यादा समय के लिए पट्टे पर नहीं दे सकता।

(3) प्राकृतिक संरक्षक द्वारा उप-धारा (1) अथवा (2) के उल्लंघन के फलस्वरूप अचल संपत्ति के लिए की गई कोई व्यवस्था शून्य हो जाएगी यदि उससे अवयस्क या अन्य कोई प्रभावित होता हो। *भाग 5, धारा 6, पृष्ठ 23*

(4) उप-धारा (2) में कहे किसी कार्य के लिए न्यायालय प्राकृतिक संरक्षक को आज्ञा नहीं दे सकता बशर्ते वह आवश्यक हो या अवयस्क की भलाई के लिए हो।

(5) उप-धारा (2) के तहत न्यायालय से आज्ञा के लिए दी गई अर्जी के संबंध में द गार्जियंस एंड वार्ड एक्ट, 1890 (1890 का VIII) लागू होगा, और इस संबंध में आज्ञा के लिए दी गई अर्जी ऐसे मानी जाएगी जैसे वह उस एक्ट की धारा 29के तहत है, विशेषत:–

(क) आवेदन के संबंध में सुनवाई को उस अधिनियम की धारा 4अ के अर्थ के दायरे में समझा जाएगा;

(ख) न्यायालय प्रक्रिया को परखेगा और उसके पास उस अधिनियम की धारा 31 की उप-धारा (2) (3) व (4) में बताए गए अधिकार होंगे; व

(ग) इस धारा की उप-धारा (2) में बताए किसी कार्य के लिए न्यायालय आवेदन को ठुकराता है तो प्राकृतिक संरक्षक उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है।

(6) इस धारा में "न्यायालय" से अभिप्राय स्थानीय सीमा के दायरे में स्थित जिला न्यायालय है जहां उस अचल संपत्ति या उसका कोई भाग है, जिसके संबंध में, आवेदन किया गया है, स्थित है अथवा गार्जियन एंड वार्ड एक्ट, 1890 (1890 का VIII) की धारा 4ए के तहत अधिकार प्राप्त कोई न्यायालय है।

(84)

80. स्वाभाविक संरक्षक की शक्तियां :

(1) इस धारा के प्रावधान के अधीन एक हिंदू अवयस्क के स्वाभाविक संरक्षक को वे सभी कार्य करने का अधिकार है जो अवयस्क के लाभ अथवा उसकी संपत्ति की प्राप्ति, सुरक्षा या लाभ के लिए आवश्यक अथवा उचित व सही हो किंतु किसी भी मामले में संरक्षक अवयस्क को व्यक्तिगत इकरारनामे में नहीं बांध सकता।

(2) न्यायालय की पूर्व आज्ञा के बिना प्राकृतिक संरक्षक नहीं कर सकता-

(अ) अवयस्क की अचल संपत्ति के किसी भाग को बंधक या शुल्क, या बिक्री, उपहार, अदल बदल या किसी अन्य तरीके से हस्तांतरित या ;

(ब) ऐसी संपत्ति के किसी भाग को पांच वर्ष से ज्यादा समय या अवयस्क के वयस्क होने की तिथि के एक साल से ज्यादा समय के लिए पट्टे पर नहीं दे सकता।

(3) प्राकृतिक संरक्षक द्वारा उपधारा 1 अथवा 2 के उल्लंघन के फलस्वरूप अचल संपत्ति के लिए की गई कोई व्यवस्था शून्य हो जाएगी यदि उससे अवयस्क या अन्य कोई प्रभावित होता हो।

(4) उप-धारा (2) में कहे किसी कार्य के लिए न्यायालय प्राकृतिक संरक्षक को आज्ञा नहीं दे सकता बशर्ते वह आवश्यक हो या अवयस्क की भलाई के लिए हो।

भाग 5, खंड 6, पृष्ठ 23

(5) उप-धारा (2) के तहत न्यायालय से आज्ञा के लिए दी गई अर्जी के संबंध में द गार्जियंस एंड वार्ड एक्ट, 1890 (1890 का VIII) लागू होगा, और इस संबंध में आज्ञा के लिए दी गई अर्जी ऐसे मानी जाएगी जैसे वह उस एक्ट की धारा 29के तहत है, विशेषत:-

(अ) आवेदन के संबंध में सुनवाई को उस अधिनियम की धारा 4अ के अर्थ के दायरे में समझा जाएगा;

(ब) न्यायालय प्रक्रिया को परखेगा और उसके पास उस अधिनियम की धारा 31 की उप-धारा (2) (3) व (4) में बताए गए अधिकार होंगे; व

(स) इस धारा को उप-धारा (2) में बताए किसी कार्य के लिए न्यायालय आवेदन को ठुकराता है तो प्राकृतिक संरक्षक उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है।

(6) इस धारा में "न्यायालय" से अभिप्राय स्थानीय सीमा के दायरे में स्थित जिला न्यायालय है जहां उस अचल संपत्ति या उसका कोई भाग है, जिसके संबंध में, आवेदन किया गया है, स्थित है अथवा गार्जियन एंड़ वार्ड़ एक्ट, 1890 (1890 का VIII) की धारा 4ए के तहत अधिकार प्राप्त कोई न्यायालय है।

(85)

81. प्राकृतिक संरक्षक द्वारा अधिकार का निरसन : जहां किसी हिंदू अवयस्क का प्राकृतिक संरक्षक किसी अन्य व्यक्ति को अवयस्क का अधिकार सौंपता है, तो ये रद्द करने योग्य है सिवाय वहां-

भाग 5, खंड 6, पृष्ठ 23

(क) जहां इस तरह रद्द करने की आज्ञा अवयस्क के हित में न हो; अथवा

(ख) जहां प्राकृतिक संरक्षक हिंदू न रहा हो; अथवा

(ग) जहां किन्हीं अन्य पर्याप्त कारणों से इस तरह की आज्ञा देना अवयस्क के लिए वांछनीय न हो।

(86)

82. वसीयती संरक्षक व उसके अधिकार :

(1) एक हिंदू पिता, अपनी इच्छा से अपने वैध अवयस्क बच्चे के लिए उसके शरीर अथवा संपत्ति, या दोनों के लिए संरक्षक की नियुक्ति कर सकता है: *भाग 5, धारा 8, पृष्ठ 23*

परंतु यदि माता जीवित हो और अपने अवयस्क बच्चे के संरक्षक की भूमिका निभा सकती हो तो यह धारा किसी अन्य को अधिकृत करने का अधिकार नहीं देती।

(2) इस भाग के तहत संरक्षक जिसे नियुक्त किया गया है, को पिता की मृत्यु के बाद अवयस्क के संरक्षक की भूमिका निभाने व वे सभी कार्य करने जो वसीयत में दी गई सीमा व यदि कोई प्रतिबंध हों तो उनका पालन करते हुए, करने का अधिकार है।

(3) इस भाग के प्रावधानो के अनुसार, एक हिंदू विधवा, अपनी इच्छा से अपने किसी अवयस्क बच्चे के दैहिक संरक्षण के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकती हैं:

बशर्ते यदि उसके पति ने किसी व्यक्ति को ऐसे बच्चे के दैहिक संरक्षण के लिए नियुक्ति पहले ही न कर रखा हो।

(4) अवयस्क लड़की नियुक्त संरक्षक का अधिकार उसके विवाह के बाद समाप्त हो जाएगा।

(87)

83. धार्मिक पालन-पोषण के लिए संरक्षक की जिम्मेदारी : यह एक हिंदू अवयस्क के संरक्षक की जिम्मेदारी है कि वह अवयस्क का पालन-पोषण अवयस्क के पिता के धर्म के अनुसार करे। *भाग 5, धारा 9, पृष्ठ 23*

(88)

84. वास्तविक संरक्षक अवयस्क की संपत्ति के साथ छेड़छाड़ नहीं कर सकता : इस संहिता के लागू होने के बाद कोई भी व्यक्ति इस आधर पर कि वह अवयस्क का वास्तविक संरक्षक है, उसकी संपत्ति से छेड़छाड़ करने या उसके विषय में कोई निर्णय नहीं कर सकेगा। *भाग 5, धारा 10, पृष्ठ 23*

(85)

81. प्राकृतिक संरक्षक द्वारा अधिकार का निरसन : जहां किसी हिंदू अवयस्क का प्राकृतिक संरक्षक किसी अन्य व्यक्ति को अवयस्क का अधिकार सौंपता है, तो ये रद्द करने योग्य है सिवाय वहां –

(अ) जहां इस तरह रद्द करने की आज्ञा अवयस्क के हित में न हो; अथवा

(ब) जहां प्राकृतिक संरक्षक हिंदू न रहा हो; अथवा

(स) जहां किन्हीं अन्य पर्याप्त कारणों से इस तरह की आज्ञा देना अवयस्क के लिए वांछनीय न हों।

भाग 5, धारा 7, पृष्ठ 23

(86)

82. वसीयती संरक्षक व उसके अधिकार :

(1) एक हिंदू पिता, अपनी इच्छा से अपने वैध अवयस्क बच्चे के लिए उसके शरीर अथवा संपत्ति, या दोनों के लिए संरक्षक की नियुक्ति कर सकता है।

परंतु यदि माता जीवित हो और अपने अवयस्क बच्चे के संरक्षक की भूमिका निभा सकती हो तो यह धारा किसी अन्य को अधिकृत करने का अधिकार नहीं देता।

(2) इस भाग के तहत संरक्षक जिसे नियुक्त किया गया है, को पिता की मृत्यु के बाद अवयस्क के संरक्षक की भूमिका निभाने व वे सभी कार्य करने जो वसीयत में दी गई सीमा व यदि कोई प्रतिबंध हों तो उनका पालन करते हुए, करने का अधिकार है।

भाग 5, धारा 8, पृष्ठ 23

(3) इस भाग के प्रावधानो के अनुसार, एक हिंदू विधवा, अपनी इच्छा से अपने किसी अवयस्क बच्चे के दैहिक संरक्षण के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकती हैं बशर्ते;

यदि उसके पति ने किसी व्यक्ति को ऐसे बच्चे के दैहिक संरक्षण के लिए नियुक्ति पहले ही न कर रखी हो।

(4) अवयस्क लड़की नियुक्त संरक्षक का अधिकार उसके विवाह के बाद समाप्त हो जाएगा।

(87)

83. ये संरक्षक की जिम्मेदारी है कि वह अवयस्क का पालन पोषण हिंदू धर्म में करे : यह एक हिंदू अवयस्क के संरक्षक की जिम्मेदारी है कि वह अवयस्क का पालन पोषण अवयस्क के पिता के धर्म के अनुसार करे।

भाग 5, धारा 9, पृष्ठ 23

(88)

84. वास्तविक संरक्षक अवयस्क की संपत्ति के साथ छेडछाड नहीं कर सकता : इस संहिता के लागू होने के बाद कोई भी व्यक्ति इस आधर पर कि वह अवयस्क का वास्तविक संरक्षक है, उसकी संपत्ति से छेड़छाड़ करने या उस के विषय में कोई निर्णय नहीं कर सकेगा।

भाग 5, धारा 10, पृष्ठ 23

(89)

85. अवयस्क का हित ही परम आवश्यक होना : न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को किसी हिंदू अवयस्क का संरक्षक नियुक्त करने या घोषणा करने में अवयस्क का हित सबसे प्रमुख होगा जिसे और किसी भी व्यक्ति को इस भाग के या धारा 24 के प्रावधान के तहत नियुक्त नहीं किया जा सकता, यदि न्यायालय को ये लगता है कि उसकी संरक्षता अवयस्क के हित में नहीं हैं।

भाग 5, धारा 12, पृष्ठ 22

(89)

85. अवयस्क का हित ही परम आवश्यक होना : न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को किसी हिंदू अवयस्क का संरक्षक नियुक्त करने या घोषणा करने में अवयस्क का हित सबसे प्रमुख होगा जिसे और किसी किसी भी व्यक्ति को इस भाग के या धारा 24 के प्रावधान के तहत नियुक्त नहीं किया जा सकता, यदि न्यायालय को ये लगता है कि उसकी संरक्षता अवयस्क के हित में नहीं हैं।

भाग 5, धारा 12, पृष्ठ 22

(90)

भाग 5—संयुक्त परिवार व सहदायिकी

अध्याय 1

सामान्य सिद्धांत

86. जन्म और उत्तरजीविता के अधिकार का सामान्यतः निरसन : इस संहिता के लागू होने के बाद इस भाग के मामलों व इस भाग के प्रावधान में स्पष्ट रूप से उल्लिखित सीमा को छोड़कर किसी हिंदू को न कोई अधिकार प्राप्त होगा और न वह रूचि रखेगा–

(क) किसी पूर्वज की संपत्ति में, अपने जीवनकाल में केवल इस कारण कि वह उस पूर्वज के परिवार में जन्मा है; अथवा

(ख) संयुक्त परिवार की किसी संपत्ति में जो उत्तरजीविता के नियम पर आधरित है।

(91)

87. संयुक्त अभिवृति को सामान्यतः साझा अभिवृत्ति से बदला जाना : इस संहिता के लागू होने के बाद इस भाग में उल्लेखित मामलों व स्पष्ट रूप उल्लेखित सीमा के अतिरिक्त संयुक्त परिवार के सभी सदस्य जिस संपत्ति को संयुक्त रूप से धारण करते हैं उसे साझा अभिवृत्ति माना जाए जैसे यदि उस संपत्ति का विभाजन हुआ होता तो प्रत्येक स्त्री या पुरुष अपने हिस्से की संपत्ति को इस प्रकार लेते मानों वह उसके पूर्णतया मालिक है :

परंतु इस धारा में उल्लिखित कोई नियम संयुक्त परिवार के किसी सदस्य, यदि कोई हो तो, के भरण-पोषण व रिहायशी के अधिकार को प्रभावित नहीं करेगा, उन व्यक्तियों के अलावा जो अपना भाग स्वतंत्र रूप से रखने के पात्र हैं तथा ऐसा अधिकार उसी तरह प्रभावी होगा जैसा तब होता यदि ये संहिता लागू न हुई होती।

(90)

भाग 5—संयुक्त परिवार की संपत्ति

अध्याय 1

सामान्य सिद्धांत

86. परिवार में जन्म लेने मात्र से संपत्ति में अधिकार होने को बढ़ावा न देना: इस संहिता के लागू होने पर और इसके बाद केवल इस कारण कि वह उस परिवार में जन्मा है, किसी पूर्वज की संपत्ति में अपने जीवनकाल में हक का दावा किसी कोर्ट में मान्य नहीं होगा।

भाग 3 (अ), धारा 2, पृष्ठ 12

स्पष्टीकरण:-इस भाग में "संपत्ति" में चल व अचल दोनों प्रकार की संपत्ति शामिल है चाहे वह पैतृक संपत्ति हो अथवा नहीं, तथा चाहे वह परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा संयुक्त रूप से प्राप्त की गई हो अथवा किसी पैतृक संपत्ति में अभिवृद्धि से मिली हो या अन्य प्रकार से प्राप्त हुई हो।

(91)

87. संयुक्त अभिवृत्ति को सामान्यत: साझा अभिवृत्ति से बदला जाना– इस संहिता के लागू होने पर और बाद में कोई कोर्ट उत्तरजीविता के नियम से संचालित किसी संयुक्त संपत्ति में अधिकार को मान्य नहीं करेगा या अधिकार नहीं देगा और संयुक्त परिवार के सभी सदस्य जिस संपत्ति को संयुक्त रूप से धरण करते हैं उसे साझा अभिवृत्ति माना जाए और इस संहिता के लागू होने पर उसे ऐसा मानेंगे जैसे यदि उस संपत्ति का विभाजन हुआ होता तो प्रत्येक स्त्री या पुरुष अपनी हिस्से की संपत्ति को इस प्रकार लेते मानों वह उसके पूर्णतया मालिक है :

भाग 3 (अ), धारा 2, पृष्ठ 11

परंतु इस धारा में उल्लिखित कोई नियम संयुक्त परिवार के किसी सदस्य, यदि कोई हो तो, के भरण–पोषण व रिहायशी के अधिकार को प्रभावित नहीं करेगा, उन व्यक्तियों के अलावा जो अपना भाग स्वतंत्र रूप से रखने के पात्र हैं तथा ऐसा अधिकार उसी तरह प्रभावी होगा जैसा तब होता यदि ये संहिता लागू न हुई होती :

परंतु ये भी कि किसी स्त्री के मामले में, जो इस धारा के प्रावधान के तहत पैतृक संपत्ति स्वतंत्र रूप से प्राप्त करने की अधिकारी हो, केवल उस सीमित संपदा को प्राप्त करने की अधिकारी होगी, जो इस संहिता के लागू होने से पहले प्रभावी कानून के अनुसार हिंदू स्त्री की जागीर के रूप में जानी जाती थी और उसकी मृत्यु के बाद वह संपत्ति उसी व्यक्ति को वापिस चली जाएगी जो इस संहिता के लागू होने से पूर्व उसका अधिकारी था।

भाग 2, धारा 3, पृष्ठ 3

---

(92)

88. धर्मिक कर्तव्य के नियम निरसन : इस संहिता के लागू होने के बाद कोई न्यायालय उप-धारा (2) द्वारा चिन्हित किसी पारंपरिक वंशज से किसी ऋण की वसूली के विरुद्ध, जो किसी पैतृक पूर्वज द्वारा देय है, अथवा ऐसे किसी ऋण की अदायगी के संबंध में कार्रवाई करने या इस संबंध में संपत्ति के हस्तांतरण अथवा ऐसे किसी ऋण की संतुष्टि के लिए उस वंशज के धर्मिक कर्तव्यों के आधर पर बचने का अधिकार नहीं देता।

(2) ऐसे किसी ऋण के संबंध में जो इस संहिता के प्रभाव में आने से पूर्व लिया गया है, उप-धारा 2 में उल्लिखित कोई प्रभाव नहीं डालेगा।

(क) ऐसे किसी वंशज के विरुद्ध किसी ऋणदाता द्वारा कार्रवाई करने का अधिकार, अथवा

(ख) ऐसे किसी ऋण के संबंध में, या उसकी संतुष्टि के लिए किया गया हस्तांतरण,

और ऐसा कोई अधिकार अथवा हस्तांतरण धर्मिक कर्तव्य के तहत उसी तरह व उसी सीमा तक लागू होगा जैसा तब होता यदि ये संहिता प्रभाव में न आई होती।

स्पष्टीकरण:- उपधारा 2 के उद्देश्य के लिए प्रयुक्त "ऐसे वंशज" का अभिप्राय ऐसे पुरुष पारंपरिक वंशज से है जो इस संहिता के प्रभावी होने से पूर्व पैदा हुआ है या गोद लिया गया है।

(93)

89. इस संहिता के प्रभाव में आने से पूर्व लिए ऋणों के प्रति संयुक्त परिवार की जिम्मेदारी : वहां जहां इस संहिता के लागू होने से पूर्व कोई ऋण संयुक्त परिवार के प्रबंधक अथवा कर्ता द्वारा परिवार के हित के उद्देश्य से अनुबंधित किया गया है, इस अधिनियम मे उल्लिखित प्रावधान ऐसे किसी ऋण को चुकाने की जिम्मेदारी को प्रभावित नहीं करता तथा ऐसी जिम्मेदारी संयुक्त रूप से सभी की अथवा किसी एक की जो उसके लिए जिम्मेदार है, उसी तरह व उसी सीमा तक होती है, जैसी यदि ये संहिता प्रभाव में न होती, तब होती।

(92)

88. धर्मिक कर्तव्य के नियम का निरसन : इस संहिता के लागू होने के बाद कोई न्यायालय उप-धारा (2) में मान्य किसी पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र से किसी ऋण की वसूली के विरुद्ध, जो पिता, दादा या परदादा द्वारा देय है, अथवा ऐसे किसी ऋण की अदायगी के संबंध में कार्रवाई करने या इस संबंध में संपत्ति के हस्तांतरण अथवा ऐसे किसी ऋण की संतुष्टि के लिए उस पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र के धर्मिक कर्तव्यों के आधर पर बचने का अधिकार नहीं देता।

(2) ऐसे किसी ऋण के संबंध में जो इस संहिता के प्रभाव में आने से पूर्व लिया गया है, उप-धारा (2) में उल्लिखित कुछ भी प्रभावी नहीं होगा :

(क) ऐसे किसी पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र के विरुद्ध किसी ऋण दाता द्वारा कार्रवाई करने का अधिकार, अथवा

(ख) ऐसे किसी ऋण के संबंध में, या उसकी संतुष्टि के लिए किया गया हस्तांतरण,

और ऐसा कोई अधिकार अथवा हस्तांतरण धर्मिक कर्तव्य के तहत उसी तरह व उसी सीमा तक लागू होगा जैसा तब होता यदि ये संहिता प्रभाव में न आई होती।

स्पष्टीकरणः- उप-धारा (2) के उद्देश्य के लिए प्रयुक्त "पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र" का अभिप्राय उस पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र से है जो इस संहिता के प्रभावी होने से पूर्व पैदा हुआ है या गोद लिया गया है।

(93)

89. इस संहिता के प्रभाव में आने से पूर्व लिए ऋणों के प्रति संयुक्त परिवार की जिम्मेदारी : वहां जहां इस संहिता के लागू होने से पूर्व कोई ऋण संयुक्त परिवार के प्रबंधक अथवा कर्ता द्वारा परिवार के हित के उद्देश्य से अनुबंधित किया गया है, इस अधिनियम मे उल्लिखित प्रावधान ऐसे किसी ऋण को चुकाने की जिम्मेदारी को प्रभावित नहीं करता तथा ऐसी जिम्मेदारी संयुक्त रूप से सभी की अथवा किसी एक की जो उसके लिए जिम्मेदार है, उसी तरह व उसी सीमा तक होती है, जो यदि ये संहिता प्रभाव में न होती, तब होती।

(94)
पाठ 2
मिताक्षरा सहदायिकी

90. अध्याय का लागू होना : ये अध्याय उन हिंदुओं पर लागू होता है जो यदि ये संहिता प्रभाव में न आई होती तो मिताक्षरा शाखा की हिंदू विधि से संचालित होते।

90क. परिभाषा : इस अधयाय में–

"पैतृक संपत्ति" से अभिप्राय ऐसी कोई संपत्ति जो किसी हिंदू पुरुष को विरासत में उसके पिता , दादा अथवा पड़दादा से प्राप्त हुई हो, तथा इसमें शामिल है–

(क) किसी पैतृक पूर्वज की संपत्ति में से विभाजन पर मिला भाग,

(ख) पैतृक संपत्ति में कोई अभिवृद्धि;

किंतु इसमें ये शामिल नहीं हैं–

(i) हिंदू ज्ञानार्जन लाभ अधिनियम, 1930 (1930 का XXX) के अनुसार उसके द्वारा ज्ञानार्जन से प्राप्त लाभ;

(ii) कोई संपत्ति जो उसके द्वारा विरासत के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार से प्राप्त की गई हो;

(iii) पैतृक संपत्ति के नियमानुसार उसके पितृ पक्ष के तुरंत पहले के तीन पूर्वजों के अतिरिक्त किसी अन्य द्वारा प्राप्त संपत्ति;

(iv) उसके अधिकार में कोई अन्य पृथक संपत्ति;

तथापि ऐसी कोई या सभी संपत्ति कुछ समय के लिए संयुक्त या सहदायिक संपत्ति के रूप में हो सकती है।

स्पष्टीकरण: पैतृक संपत्ति में अभिवृद्धि में उस संपत्ति से प्राप्त आय, उस आय से खरीदी या अधिगृहित संपत्ति अथवा ऐसी संपत्ति की सहायता से प्राप्त पैदावार या उस पैदावार को बेचने से प्राप्त आय और उस आय से खरीदी कोई संपत्ति आती है।

90ख. सहदायिकी :

(1) एक व्यक्ति एक सहदायक बनता है, यदि निम्न स्थितियां संतुष्ट होती हैं, यथा–

(i) कि वह,

(क) या तो किसी पैतृक संपत्ति में अधिकारी हो, अथवा

(ख) वह ऐसी संपत्ति प्राप्त करने वाले के परिवार में जन्मा हो और वह पुरुष वंशक्रम में ऐसे व्यक्ति का पारंपरिक पूर्वज हो, तथा

(ii) उप-धारा (ब) के खंड (i) में उल्लेखित किसी व्यक्ति के संबंध में, उसे कुछ समय के लिए उसे चार कोटियों तक अलग न किया गया हो-

(क) उस व्यक्ति से जिसे विरासत में ऐसी संपत्ति मिली हो, अथवा

(ख) किसी व्यक्ति जिसे वह विरासत मिली है, का कोई भी वंशज और जो पुरुष वंशक्रम में उसका सबसे बड़ी आयु का जीवित पैतृक पूर्वज हो।

(2) उप-धारा 1 के तहत डिग्रियों का संगणना के उद्देश्य के लिए संबंधित व्यक्ति और वह व्यक्ति जिसके संबंध में मापन किया जाएगा, उसे एक डिग्री गिना जाएगा।

(3) वहां जहां सहदायिकी के सदस्यों के बीच विभाजन होता है तो वह सहदायक जो अलग हुए हैं एक दूसरे के संबंध में सहदायक होने से वंचित हो जाएंगे, मगर ये तब तक समझा नहीं जाएगा जब तक इसके विपरीत सिद्ध न हो :-

(क) कि इस विभाजन के कारण जो व्यक्ति अलग हुआ है केवल अलग होने के आधार पर अपने स्वयं के पुरुष वंशक्रम के संबंध में सहदायक नहीं रह जाएगा; अथवा

(ख) कि, जहां केवल कोई एक सहदायक अलग हुआ हो, और बाकी सहदायक केवल इसी कारण एक दूसरे के बीच सहदायक होने से वंचित हो जाएंगे।

(4) "सहदायिकी" दो या दो से अधिक पुरुष व्यक्तियों का निकाय है जो उस समय के लिए सहदायक है।

(95)

90ग. सहदायिकी संपत्ति के मामले : किसी सहदायिकी के किसी एक सदस्य द्वारा अधिकृत संपत्ति ,चाहे वह इस संहिता के प्रभावी होने से पूर्व अधिकृत की गई हो या बाद में, निम्न नियम लागू होंगे-

(क) पैतृक संपत्ति प्राप्त किसी व्यक्ति के परिवार में जन्म लेने के कारण प्रत्येक सहदायक उस संपत्ति में अपने पिता के बराबर अभिरुचि रखेगा;

(ख) सहदायिकी के सभी सदस्य संपत्ति को संयुक्त अभिधारी की भाँति रखेंगे;

(ग) किसी सहदायक की मृत्यु होने पर (एकमात्र उत्तरजीवि सदस्य के अतिरिक्त) संपत्ति में उसका हक उत्तरजीविता के नियम द्वारा उत्तरजीवी को हस्तांतरित होगा न कि उत्तराधिकार द्वारा उसके उत्तराधिकारी कों;

(घ) खंड (ग) में उल्लिखित प्रावधान के बावजूद जहां किसी सहदायक की मृत्यु हो जाती है, तो अन्य लोगों के साथ स्वयं उसकी पत्नी व पुत्री भी संपत्ति में शामिल होंगे-

(i) विधवा के मामले में उसका हक,उसके पुत्रों के हक के बराबर होगा,

(ii) अविवाहित कन्या के मामले में हक पुत्र से आधा व विवाहित कन्या के मामले में पुत्र के हक का एक चौथाई होगा।

(96)

90घ. सहदायिक संपत्ति के विलगाव में मामले में सहदायक के हक की सीमा : न तो कोई सहदायक और न कोई स्त्री जिसे धारा 90 के खंड (घ) के प्रावधान के अनुसार पैतृक संपत्ति में हक मिला है, केवल इस कारण वह सहदायक है अथवा पैतृक संपत्ति को अधिकृत या हस्तांतरित करने का अधिकार रखता है, सिवाय उस पुरुष या स्त्री की यह अविभाज्य संपत्ति है और उसमें अन्य हक रखते हैं, तथा कोई न्यायालय ऐसे किसी सदस्य या स्त्री के विरुद्ध जारी किसी डिक्री के निष्पादन के लिए किसी पैतृक संपत्ति के खिलाफ कार्रवाई नहीं करेगा सिवाय उस सहदायक या उस स्त्री, जैसा भी मामला हो, से संबंधित संपत्ति के।

(97)

90ङ. सहदायिकी संपत्ति के विभाजन की मांग का अधिकार :

(1) कोई भी सहदायक और स्त्री जो धारा 90 ग के खंड (घ) में उल्लिखित प्रावधानों के तहत हक रखते हैं, किसी भी समय अपने हिस्से की संपत्ति को अपने व्यक्तिगत आनंद के लिए विभाजन की मांग करने का दावा कर सकते हैं, चाहे अन्य पक्ष इससे सहमत हों या न हों।

(2) जहां कोई स्त्री जिसे उप-धारा (1) के अनुसार ऐसा कोई अधिकार मिला है, अपने हिस्से की संपत्ति के विभाजन व अपने अलग आनंद के लिए मांग किए बिना मृत्यु प्राप्त कर लेती है तो उसका अधिकार उसकी मृत्यु के बाद सहदायकों के पास वापिस चला जाएगा।

(98)

90च. कुछ मामलों में किसी सहदायक को अन्य सहदायक की संपत्ति आदि बेचने का अधिकार : धारा 90 घ में उल्लिखित प्रावधान के बावजूद एक सहदायक जो धर्म परिवर्तन के कारण हिंदू न रह गया हो अथवा एक स्त्री जिसे धारा 90 ग के खंड घ में उल्लिखित प्रावधानों के अनुसार पैतृक संपत्ति में अधिकार मिला है और वह अपने हिस्से की संपत्ति को अपने अलग आनंद के लिए उपयोग करना चाहती हैं, उन्हें किसी अन्य सहदायक की सहायता की आवश्यकता होगी व उन पर विभाजन अधिनियम, 1893 (1893 का IV) के प्रावधान लागू होंगे जैसे यदि विभाजन होता और वह सहदायक जो हिंदू न रह गया हो या वह स्त्री, जैसा भी मामला हो, सहदायिकी से संबंधित किसी घर के हिस्से के हकदार होते, तब लागू होते।

(99)

90छ. विभाजन में हिस्सों का आबंटन : विभाजन में सहदायिकी के सदस्यों के हिस्सों को नियमित करने के लिए निम्न नियम लागू होंगे-

(क) जहां एक पिता व उसके पुत्रों में विभाजन हो, प्रत्येक पुत्र अपने पिता के बराबर हिस्सा लेगा;

(ख) यदि विभाजन भाइयों के बीच हो तो प्रत्येक भाई को बराबर भाग मिलेगा;

(ग) जहां विभाजन सहदायिकी की विभिन्न शाखाओं के परिवारों में हो, संपत्ति सभी शाखाओं में बराबरी से बंटेगी;

(घ) जहां विभाजन सहदायिकी की समान शाखा के सदस्यों में हो, संपत्ति प्रति व्यक्ति बराबर बंटेगी।

(100)

90ज. सहदायिकी की समाप्ति : उस समय तक जब कि परिवार में कोई अन्य सहदायक न हो, प्रत्येक व्यक्ति जो कोई पैतृक संपत्ति अधिकृत करता हो अपनी संपत्ति का पूरी तरह अधिकारी होगा, तथा उसकी मृत्यु पर, उसकी संपत्ति उसके उत्तराधिकारियों को उत्तराधिकार द्वारा हस्तांतरित होगी न कि उत्तरजीविता के द्वारा।

(101)
मरूमक्कतायम, अलियसंतान और नंबूदरी संयुक्त परिवार

90.झ मरूमक्कतायम, अलियसंतान और नंबूवरी संयुक्त परिवारों के लिए विशेष प्रावधान : इस भाग में उल्लिखित कोई भी प्रावधान किसी तारवाड़, तवाझी, कुटुम्ब, कावारू अथवा इलोम पर लागू नहीं होंगे, जिन पर यदि ये संहिता पारित न हुई होती तो मरूमक्कतायम, अलियसंतान अथवा नंबूदरी कानून लागू होता। इस कानून के प्रावधान के अतिरिक्त किसी व्यक्ति के अधिकार (चाहे वह उत्तराधिकार द्वारा हों या अन्य भांति) संबंधी सभी मामले चाहे वह किसी व्यक्ति, अथवा प्रबंधन अथवा विभाजन के हों, तारवाड़, तवाझी, कुटुम्ब अथवा इलोम और उसकी संपत्ति उसी कानून से संचालित होंगे जो इस संहिता के प्रभावी होने से ठीक पूर्व लागू होता।

(102)
अध्याय 4
विविध

90ञ. बचाव : इस भाग में उल्लेखित कोई भी प्रावधान–

(क) इस भाग में उल्लिखित कोई भी प्रावधान उस जागीर पर लागू नहीं होगा जो उत्तराधिकार के किसी रिवाज के नियम द्वारा अथवा किसी दान द्वारा अथवा किसी कानून द्वारा किसी अकेले उत्तराधिकारी को जाती हो; अथवा

(ख) कोई जागीर जो किसी *स्थानम* (पवित्र स्थान) और समय-समय पर किसी एक व्यक्ति द्वारा किसी कानून, रिवाज, अथवा परम्परा जो त्रावणकोर-कोचीन राज्य में, अथवा मद्रास राज्य के मालाबार, दक्षिण कनारा, तथा नीलगीरि जिलों मे लागू कानून द्वारा उपयोग की जाती हो; अथवा

(ग) त्रावणकोर- कोचीन राज्यों में स्थित निम्न क्षेत्र, यथा-

इडापल्ली, पूंजार तथा किलीमानूर क्षेत्र तथा वलियम्मा, थम्पूरन कोवीलगम क्षेत्र पैलेस फंड शामिल हैं।

90. अविभक्त संपदा का बचाव : इस भाग में उल्लेखित कोई भी प्रावधान, उस जागीर पर लागू नहीं होगा जो उत्तराधिकार के किसी रिवाज के नियम द्वारा अथवा किसी दान द्वारा अथवा किसी कानून द्वारा किसी अकेले उत्तराधिकारी को जाती हो।

(103)

भाग 6

स्त्री की संपत्ति

91. स्त्री संपत्ति की प्रकृति :

(1) इस संहिता के लागू होने के बाद किसी स्त्री द्वारा अधिकृत संपत्ति पूर्णतया उसकी संपत्ति होगी।

(2) उप–धारा (i) में उल्लेखित प्रावधान स्त्री द्वारा उपार्जित संपत्ति पर लागू नहीं होंगे चाहे वह उसे उपहार में प्राप्त हुई हो, या किसी वसीयत के तहत या जहाँ वसीयत स्पष्ट रूप से अथवा जरूरी शर्तों के साथ, ऐसी संपत्ति में एक प्रतिबंधित जागीर नियत करती है:

परंतु ऐसी कोई शर्तें केवल स्त्री जाति होने के कारण नहीं लगाई जाएंगी।

स्पष्टीकरणः- इस धारा में "संपत्ति" में चल व अचल दोनों तरह की संपत्ति जो किसी स्त्री द्वारा उपार्जित की गई है, शामिल हैं। चाहे वह संपत्ति उसे विवाह से पूर्व मिली हो, विवाह पर या विवाह के बाद, अथवा विधवा होने पर मिली हो और चाहे विरासत में मिली हो या साधन रूप में , अथवा बंटवारे में हो अथवा भरण–पोषण के एवज में या उसके बकाये के रूप में प्राप्त हुई हो, अथवा किसी व्यक्ति द्वारा, चाहे वह रिश्तेदार हो अथवा नहीं, उपहार में प्राप्त हुई हो अथवा अपने कौशल या श्रम से मिली हो या खरीदी हो, किसी नुस्खे से या अन्य कोई तरीका जो भी हो द्वारा मिली हो।

(104)

92. स्त्री संपत्ति के दायित्व का हस्तांतरण :

(1) जहां इस संहिता के लागू होने के बाद किसी स्त्री की मृत्यु होती है तो उसके द्वारा उपार्जित संपत्ति चाहे वह इस संहिता के प्रभावी होने से पहले अर्जित की गई हो या बाद में, यदि वह पैतृक संपत्ति है तो भाग 7 में बताए तरीके द्वारा उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित हो जाएगी।

(2) उप–धारा (ii) में उल्लिखित प्रावधान स्त्री उस सम्पत्ति पर लागू नहीं होंगे जो मृत्यु के समय उसके पास सीमित संपदा जिसे हिंदू स्त्री संपदा के नाम से जाना जाता है वह संपत्ति निम्न तरह से हस्तांतरित होगी–

(i) जहां इस तरह की संपत्ति विरासत में मिली है तो वह उस व्यक्ति को जाएगी जो भाग 7 के अनुसार उस व्यक्ति का उत्तराधिकारी है, जो उस संपत्ति का पूर्ण तया अधिकारी था और यदि वह अधिकारी बिना वसीयत के उस स्त्री के तुरंत बाद मर चुका हो।

(ii) जहां ऐसी सीमित संपत्ति विभाजन द्वारा या किसी और तरीके से प्राप्त हुई हो जिसका प्रावधान न हो। तो यह उस व्यक्ति को हस्तांतरित होती जो यह कानून पारित न होने की स्थिति में अधिकृत हुआ होता।

(103)
भाग 6
स्त्री की संपत्ति

91. स्त्री संपत्ति की प्रकृति :

(1) इस संहिता के लागू होने के बाद किसी स्त्री द्वारा अधिकृत संपत्ति पूर्णतया उसकी संपत्ति होगी।

भाग 2, धारा 13, पृष्ठ 9

(2) उप-धारा (1) में उल्लेखित प्रावधान स्त्री द्वारा उपार्जित संपत्ति पर लागू नहीं होंगे चाहे वह उसे उपहार में प्राप्त हुई हो, या किसी वसीयत के तहत जहां उपहार वसीयत जिसमें स्पष्ट रूप से अथवा जरूरी शर्तों के साथ, ऐसी संपत्ति में एक प्रतिबंधित जागीर नियत करती है :

परंतु ऐसी कोई शर्तें केवल स्त्री जाति होने के कारण नहीं लगाई जाएगी।

स्पष्टीकरणः- इस धारा में "संपत्ति" में चल व अचल दोनों तरह की संपत्ति, जो किसी स्त्री द्वारा उपार्जित की गई है, शामिल हैं। चाहे वह संपत्ति उसे विवाह से पूर्व मिली हो, विवाह पर या विवाह के बाद, अथवा विधवा होने पर मिली हो। और चाहे विरासत में मिली हो या साधन रूप में, अथवा बंटवारे में हो अथवा भरण-पोषण के एवज में या उसके बकाये के रूप में प्राप्त हुई हो, अथवा किसी व्यक्ति द्वारा, चाहे वह रिश्तेदार हो अथवा नहीं उपहार में प्राप्त हुई हो अथवा अपने कौशल या श्रम से मिली हो या खरीदी हो, किसी नुस्खे से या अन्य कोई तरीका जो भी हो द्वारा मिली हो।

(104)

92. स्त्री संपत्ति के दायित्व का हस्तांतरण :

(1) जहां इस संहिता के लागू होने के बाद किसी स्त्री की मृत्यु होती है तो उसके द्वारा उपार्जित संपत्ति चाहे वह इस संहिता के प्रभावी होने से पहले अर्जित की गई हो या बाद में, यदि वह पैतृक संपत्ति है तो भाग 7 में बताए तरीके द्वारा उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित हो जाएगी।

भाग 2, धारा 3, पृष्ठ 3

(2) उप-धारा (i) में उल्लेखित स्त्री उस सम्पत्ति पर लागू नहीं होंगे जो मृत्यु के समय उसके पास थी सीमित संपदा जिसे हिंदू स्त्री संपदा के नाम से जाना जाता है वह संपत्ति निम्न तरह से हस्तांतरित होगी–

(i) जहां इस तरह की संपत्ति विरासत में मिली है तो वह उस व्यक्ति को जाएगी जो भाग 7 के अनुसार उस व्यक्ति का उत्तराधिकारी है जो उस संपत्ति का पूर्ण तया अधिकारी था और यदि वह अधिकारी बिना वसीयत के उस स्त्री के तुरंत बाद मर चुका हो।

(ii) जहां ऐसी सीमित संपत्ति विभाजन द्वारा या किसी और तरीके से प्राप्त हुई हो जिसका प्रावधान न हो, यदि ये कानून लागू पास न हुआ हो तो वह उसे हस्तांतरित होगी जो इसके लिए अधिकृत है।

----

(105)

93. दहेज का पत्नी के लिए न्यास होना :

(1) इस संहिता के लागू होने के बाद होने वाले विवाह के मामलों में विवाह के अवसर पर, या इस शर्त पर अथवा इस लिहाज से ऐसे विवाह के लिए दिया गया दहेज उस स्त्री की संपत्ति होगी जिस का विवाह उस समारोह में हुआ है।

(2) जहां कोई दहेज उस स्त्री, जिसका विवाह हो रहा है, जैसा कि पहले कहा गया है, के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को मिलता है तो वह इस विश्वास से उसे रखेगा कि वह उस महिला के लाभ के लिए व अलग प्रयोग के लिए है और अठारह वर्ष पूरे कर लेने के बाद उस स्त्री को और यदि वह स्त्री अठारह वर्ष पूर्ण होने से पहले मृत्यु प्राप्त कर लेती है तो भाग 7 में बताए गए उसके उत्तराधिकारी को हस्तांतरित कर देगा।

स्पष्टीकरणः- इस भाग में "दहेज" में शामिल है–कोई संपत्ति जो उस विवाह के लिहाज से स्थानांतरित की गई है अथवा स्थानांतरण के लिए जिसकी सहमति दी गई हो अथवा उसकी ओर से विवाह के किसी भी पक्ष या किसी रिश्तेदार द्वारा अन्य पक्ष के किसी भी रिश्तेदार को चाहे वह सीधे तौर पर हो या छिपे तौर पर उस अवसर पर या उस शर्त पर या उस विवाह अवसर को ध्यान में रखते हुए दी गई हो, लेकिन इसमें वह छोटे उपहार शामिल नहीं हैं जो रिवाज के रूप में दूल्हे या उसके रिश्तेदारों को किसी भी पक्ष के रिश्तदारों द्वारा दिए गए हों।

(105)

93. दहेज का पत्नी के लिए न्यास होना :

(1) इस संहिता के लागू होने के बाद होने वाले विवाह के मामलों में विवाह के अवसर पर, या इस शर्त पर अथवा इस लिहाज से ऐसे विवाह के लिए दिया गया दहेज उस स्त्री की संपत्ति होगी जिस का विवाह उस समारोह में हुआ है।

भाग 4, धारा 28, पृष्ठ 20

(2) जहां कोई दहेज उस स्त्री जिसका विवाह हो रहा है, जैसा कि पहले कहा गया है, के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को मिलता है तो वह इस विश्वास से उसे रखेगा कि वह उस महिला के लाभ के लिए व अलग प्रयोग के लिए है और अठारह वर्ष पूरे कर लेने के बाद उस स्त्री को और यदि वह स्त्री अठारह वर्ष पूर्ण होने से पहले मृत्यु प्राप्त कर लेती है तो भाग 7 में बताए गए उसके उत्तराधिकारी को हस्तांतरित कर देगा।

स्पष्टीकरणः- इस भाग में "दहेज" में शामिल है–कोई संपत्ति जो उस विवाह के लिहाज से स्थानांतरित की गई है अथवा स्थानांतरण के लिए जिसकी सहमति दी गई हो अथवा उसकी ओर से विवाह के किसी भी पक्ष या किसी रिश्तेदार द्वारा अन्य पक्ष के किसी भी रिश्तेदार को चाहे वह प्रत्यक्ष तौर पर हो या अप्रत्यक्ष तौर पर उस अवसर पर या उस शर्त पर या उस विवाह अवसर को ध्यान में रखते हुए दी गई हो, लेकिन इसमें वह छोटे उपहार शामिल नहीं हैं जो रिवाज के रूप में दूल्हे या उसके रिश्तेदारों को किसी भी पक्ष के रिश्तदारों द्वारा दिए गए हों।

(106)

भाग 7 – उत्तराधिकार

अध्याय 1

प्रयोग

94. इस भाग के अमल के बाहर रखी कुछ जागीरें : ये भाग इन पर लागू नहीं''' :

(1) कोई जागीर जो रिवाज के तौर पर अथवा किसी अनुदान के तौर पर या किसी कानून द्वारा किसी एक उत्तराधिकारी को जाती हो, और अन्य कोई संपत्ति जो धारा 90 ज में बताई गई हो, अथवा,

(2) कोई संपत्ति जो भाग 5 के प्रावधान के अनुसार सहदायिकी के किसी उत्तरजीवी सदस्यों को उत्तरजीविता के अनुसार मिली हो,

(3) कोई जागीर जो एक तारवाड़, तावाझी, कावारू अथवा इलियम जिस पर धारा 90 इ लागू होती हो।

(107)

95. भाग पर अमल : धारा 94 के प्रावधान में जो स्पष्ट रूप से कहीं गई है को छोड़कर यह भाग इस संहिता के लागू होने के बाद किसी मरते हुए निर्वसीयती हिंदू के उत्तराधिकार के निम्न मामलों को अधिनियमित करती है, यथा:-

(क) चल संपत्ति के मामलों में बशर्ते ये सिद्ध हो जाए कि वह निर्वसीयती स्त्री या पुरुष अपनी मृत्यु के समय उस क्षेत्र जिसमें ये अधिनियम लागू होता है, निवासी नहीं था;

(ख) अचल संपत्ति के मामले में जहां संपत्ति कथित सीमा में आती हो चाहे मृत्यु के समय वह निर्वसीयती उस कथित क्षेत्र का निवासी हो अथवा नहीं;

स्पष्टीकरण-इस भाग के उद्देश्य के लिए किसी हिंदू का निवासस्थान भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 6 से 18 में दिए गए प्रावधान के अनुसार निश्चित होगा।

(108)

96. उत्तराधिकार के उद्देश्य के लिए परिवार से पृथक और अपृथक पुत्रों आदि में कोई विभेद नहीं होगा :

(1) वह पुत्र जो निर्वसीयती के साथ हो और वह पुत्र जो उससे अलग हो गया हो, अथवा वह पुत्र जो पुनः उसके साथ रहने लगा हो;

(2) उस स्त्री उत्तराधिकारी में .... जो एक विधवा है और जो विधवा नहीं है, एक गरीब या अमीर, वह जिसके बच्चे हैं, और वह जिसके बच्चे नहीं हैं या होने की संभावना नहीं है, कोई अंतर नहीं होगा।

----

(106)

भाग 7– उत्तराधिकार

अध्याय 1

सामान्य

94. कुछ जागीरें जिन पर यह भाग लागू नहीं : ये भाग इन पर लागू नहीं होगा''' :

(1) गर्वनर प्रांतों में खेती की जमीन अथवा, *भाग 2, धारा 1, पृष्ठ 2*

(2) कोई जागीर जो उत्तराधिकार के किसी रिवाज, और किसी अनुदान या कानून से किसी इकलौते उत्तराधिकारी को जाती हो।

(107)

95. भाग पर अमल : धारा 94 के प्रावधान के रहते हुए यह भाग इस संहिता के लागू होने के बाद किसी मरते हुए निर्वसीयती हिंदू के उत्तराधिकार के निम्न मामलों को अधिनियमित करती है, यथा:–

(क) चल संपत्ति के मामलों में बशर्ते ये सिद्ध हो जाए कि वह निर्वसीयती स्त्री या पुरुष अपनी मृत्यु के समय भारत के किसी भी क्षेत्र का निवासी नहीं था; *भाग 2, धारा 3, पृष्ठ 3*

(ख) अचल संपत्ति के मामले में जहां संपत्ति भारत के किसी भी क्षेत्र में आती हो चाहे मृत्यु के समय वह निर्वसीयती भारत के किसी क्षेत्र का निवासी हो अथवा नहीं।

स्पष्टीकरण–इस भाग के उद्देश्य के लिए किसी हिंदू का निवास स्थान भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) की धारा 6 से 18 में दिए गए प्रावधान के अनुसार निश्चित होगा।

(108)

96. उत्तराधिकार के उद्देश्य के लिए विभाजित व अविभाजित परिवार के पुत्रों में कोई विभेद नहीं होना : निर्वसीयती उत्तराधिकार में कोई विभेद नहीं होगा:

(1) वह पुत्र जो निर्वसीयती के साथ हो और वह पुत्र जो उससे अलग हो गया हो, अथवा वह पुत्र जो पुनः उसके साथ रहने लगा हो; *भाग 2, धारा 7, (नियम 2 और 4), पृष्ठ 6*

(2) उस स्त्री उत्तराधिकारी.में. वह जो विवाहित है और वह जो विवाहित नहीं है और वह स्त्री उत्तराधिकारी जो एक विधवा है और जो विधवा नहीं है, एक गरीब या अमीर, वह जो जिसके बच्चे है और वह जिसके बच्चे नहीं हैं या होने की संभावना नहीं है। *भाग 2, धारा 14, पृष्ठ 10*

(109)

अध्याय 2

पुरुषों की निर्वसीयती संपत्ति में उत्तराधिकार

सामान्य सिद्धांत

97. परिभाषा :

(1) **इस भाग के संबंध में आवश्यक है अन्यथा जब तक आवश्यक न हो-**

(क) ''गोत्रज"- एक व्यक्ति दूसरे का गोत्रज माना जाएगा यदि दोनों पुरुषों में रक्त संबंध हो या दत्तक संबंध हो;

(ख "बंधु".- वह व्यक्ति दूसरे का बंधु माना जाएगा यदि दोनों पुरुषों में खून का संबंध या दत्तक संबंध हो;

(ग) ''उत्तराधिकारी" से अभिप्राय कोई स्त्री या पुरुष जिसे इस भाग के तहत किसी निर्वसीयती के उत्तराधिकारी के रूप में निश्चित किया गया हो;

(घ) "निर्वसीयती" वह व्यक्ति जिसने अपनी संपत्ति के संबंध में वसीयत न की हो और ऐसी संपत्ति को निर्वसीयती छोड़ कर मर गया हो।

(2) इस भाग में प्रयुक्त पुरुष संबंधी शब्दों में यदि इस विषय या संदर्भ में विरुद्ध न हों के इसमें महिलाओं को शामिल न किया जाए।

(110)

98. हिंदू पुरुषों के संबंध में उत्तराधिकार के सामान्य नियम : वह संपत्ति जो कोई हिंदू पुरुष निर्वसीयती छोड़ गया है, इस भाग की धारा 105 अ से 105 जे तक, दोनों शामिल, में तय नियमों के अनुसार हस्तांतरित की जाएगी;-

(क) प्रथम, आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 में तय संबंधी होने के नाते प्रथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों को;

(ख) द्वितीय, वर्ग 1 में शामिल संबंधियों में प्राथमिकता के अनुसार यदि कोई उत्तराधिकारी न हो तो आठवीं अनुसूची के वर्ग 2 में दिए संबंधियों को प्राथमिकता के अनुसार;

(ग) तृतीय, यदि इन दोनों वर्गों में से कोई भी प्राथमिक उत्तराधिकारी न हो तो धारा 102 में दर्शाये गोत्रज संबंधियों को, तथा

(घ) अंतिम, यदि कोई गोत्रज न हो तो धारा 103 में कहे उसके संबंधी बंधुओं को दर्शाये।

(111)

99. प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों के उत्तराधिकार का क्रम : प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों में वह संबंधी जो आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 में हैं, उन्हें संयुक्त रूप से लिया जाए व जो वर्ग 2 में प्रथम स्थान में हैं उन्हें दूसरे क्रम में व जो दूसरे क्रम में हैं उन्हें तीसरे क्रम में रखा जाए और आगे भी यही क्रम दोहराया जाएगा।

(109)

अध्याय 2

हिंदू पुरुषों की निर्वसीयत उत्तराधिकार संपत्ति में उत्तराधिकार सामान्य सिद्धांत

98. परिभाषा :

(1) इस भाग के संबंध में विषय या संदर्भ के विरुद्ध बशर्ते न हो–

(क) "गोत्रज"– एक व्यक्ति दूसरे का गोत्रज माना जाएगा यदि दोनों पुरुषों में रक्त संबंध हो या दत्तक संबंध हो;

(ख) "बंधु"– वह व्यक्ति दूसरे का बंधु माना जाएगा यदि दोनों पुरुषों में खून का संबंध या दत्तक संबंध हो;

भाग 2, धारा 2, पृष्ठ 2 और भाग 2, धारा 5, पृष्ठ 2

(ग) "उत्तराधिकारी" से अभिप्राय कोई स्त्री या पुरुष जिसे इस भाग के तहत किसी निर्वसीयती के उत्तराधिकारी के रूप में निश्चित किया गया हो;

(घ) "निर्वसीयती" वह व्यक्ति जिसने अपनी संपत्ति के संबंध में वसीयत न की हो और ऐसी संपत्ति को निर्वसीयती छोड़ कर मर गया हो।

(2) इस भाग में प्रयुक्त पुरुष संबंधी शब्दों में यदि विषय या संदर्भ में जरूरी न हो तो इसमें महिलाओं को शामिल न किया जाए।

(110)

98. हिंदू पुरुषों के संबंध में उत्तराधिकार के सामान्य नियम : इस भाग के प्रावधान वह संपत्ति जो कोई हिंदू पुरुष मरते हुए निर्वसीयती छोड़ गया, में तय नियमों के अनुसार हस्तांतरित की जाएगी:–

(क) प्रथम, सातवीं अनुसूची के वर्ग 1 में तय संबंधी होने के नाते प्रथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों को;

भाग 2, धारा 4, पृष्ठ 4

(ख) द्वितीय, यदि वर्ग 1 में शामिल संबंधियों में प्राथमिकता के अनुसार यदि कोई उत्तराधिकारी न हो तो सातवीं अनुसूची के वर्ग 2 में दिए संबंधियों को प्राथमिकता के अनुसार;

(ग) तृतीय, यदि इन दोनों वर्गों में से कोई भी प्राथमिक उत्तराधिकारी न हो तो धारा 102 में दर्शाये गोत्रज संबंधियों को, तथा

(घ) अंतिम, यदि कोई गोत्रज न हो तो धारा 103 में उसके संबंधी बंधुओं को दर्शाये।

(111)

99. प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों के उत्तराधिकार का क्रम- प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों वह संबंधी जो आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 में हैं उन्हें संयुक्त रूप से लिया जाए व जो वर्ग 2 में प्रथम स्थान में है उन्हें दूसरे क्रम में व जो दूसरे क्रम में हैं उन्हें तीसरे क्रम में रखा जाए और आगे भी यही क्रम दोहराया जाएगा।

----

100. वर्ग 1 में प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों में संपत्ति का बंटवारा :

(1) आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 में प्राथमिक उत्तराधिकारियों में निर्वसीयती की संपत्ति का बंटवारा इस प्रकार होगा कि विधवा का भाग उसके प्रत्येक पुत्र के समान होगा। इसमें पूर्व मृतक पुत्र जो अपने पीछे एक पुत्र छोड़ गया है और पुत्र के पुत्र का पुत्र, जो निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित हों, भी शामिल है तथा प्रत्येक अविवाहित कन्या का हिस्सा प्रत्येक पुत्र से आधा व विवाहित कन्या का हिस्सा पुत्र से एक चौथाई होगा:

परंतु जहां किसी मृतक पुत्र का कोई पुत्र अथवा पुत्र का पुत्र न हो बल्कि उसकी मृत्यु के समय उसकी या उसके पुत्र की जीवित विधवा है तो निर्वसीयती के पुत्र के भाग का आधा उस मृतक पुत्र की विधवा को मिलेगा।

(2) पूर्व मृतक पुत्र को दिया गया हिस्सा उप-धारा (1) के तहत निम्न तरीके से विभाजित होगा:-

(क) यदि ऐसा पूर्व मृतक पुत्र अपने पुत्र या पुत्र के पुत्र को निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित छोड़ गया है तो उसका हिस्सा उसकी विधवा के बराबर होगा जो उस मृतक पुत्र के पुत्र को दिया जाएगा। इसमें वह मृतक पुत्र भी शामिल है जो निर्वसीयती से पूर्व मृत हो व अपने पुत्र को उसकी मृत्यु के समय जीवित छोड़ गया हो:

परंतु यदि ऐसे पूर्व मृतक का कोई पुत्र किसी विधवा को निर्वसीयती की मृत्यु के समय छोड़ कर जाता है, और कोई पुत्र छोड़ कर नहीं जाता है तो ऐसे पुत्र का हिस्सा ऐसे पूर्व मृतक के अन्य पुत्र से आधा होगा।

(ख निर्वसीयती की मृत्यु से पूर्व मृत पुत्र का पुत्र यदि निर्वयीसती से पहले मर चुका हो , का हिस्सा उसकी विधवा व उसके पुत्रों में बराबर हिस्सों में बंटेगा।

(ग) यदि पूर्व मृतक पुत्र अपने पीछे एक विधवा अथवा पुत्र की विधवा या दो या दो से ज्यादा पुत्र की विधवाएं छोड़ गया है, और कोई पुत्र या पुत्र का पुत्र जो निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित हो, छोड़ कर नहीं गया है तो ऐसे पूर्व मृतक पुत्र का भाग उसकी विधवा और उसके पुत्र की विधवा या पुत्रों की विधवाओं में इस तरह बंटेगा कि उस विधवा का हिस्सा उसके पुत्रों की विधवाओं से दुगुना होगा।

(3) इस धारा के उद्देश्य के लिए कोई व्यक्ति जो एक से अधिक विधवा छोड़ गया है तो एक विधवा को मिलने वाला हिस्सा सभी विधवाओं में बराबर बांटा जाएगा।

112

100. वर्ग 1 में प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों में संपत्ति का बंटवारा :

(1) वर्ग 1 में प्राथमिक उत्तराधिकारियों में निर्वसीयती की संपत्ति का बंटवारा इस प्रकार होगा कि विधवा का भाग उसके प्रत्येक पुत्र के समान होगा। इसमें पूर्व मृतक पुत्र जो अपने पीछे एक पुत्र छोड़ गया है और पुत्र के पुत्र का पुत्र, जो निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित हो भी शामिल है। तथा प्रत्येक कन्या का हिस्सा प्रत्येक पुत्र के बराबर होगा:

भाग 4, धारा 7, पृष्ठ 6

परंतु जहां किसी मृतक पुत्र का कोई पुत्र अथवा पुत्र का पुत्र न हो बल्कि उसकी मृत्यु के समय उसकी या उसके पुत्र की जीवित विधवा है तो निर्वसीयती के पुत्र के भाग का आधा उस मृतक पुत्र की विधवा को मिलेगा।

(2) पूर्व मृतक पुत्र को दिया गया हिस्सा उपधारा 1 के तहत निम्न तरीके से विभाजित होगा:-

(क) यदि ऐसा पूर्व मृतक पुत्र अपने पुत्र या पुत्र के पुत्र को निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित छोड़ गया है तो उसका हिस्सा उसकी विधवा के बराबर होगा जो उस मृतक पुत्र के पुत्र को दिया जाएगा। इसमें वह मृतक पुत्र भी शामिल है जो निर्वसीयती से पूर्व मृत हो व अपने पुत्र को उसकी मृत्यु के समय जीवित छोड़ गया हो:

परंतु यदि ऐसे पूर्व मृतक का कोई पुत्र किसी विधवा को निर्वसीयती की मृत्यु के समय छोड़ कर जाता है, और कोई पुत्र छोड़ कर नहीं जाता है तो ऐसे पुत्र का हिस्सा ऐसे पूर्व मृतक के अन्य पुत्र से आधा होगा।

(ख) निर्वसीयती की मृत्यु से पूर्व मृत पुत्र का पुत्र यदि निर्वयीसती से पहले मर चुका हो, का हिस्सा उसकी विधवा व उसके पुत्रों में बराबर हिस्सों में बंटेगा।

(ग) यदि पूर्व मृतक पुत्र अपने पीछे एक विधवा अथवा पुत्र की विधवा या दो या दो से ज्यादा पुत्र की विधवाएं छोड़ गया है, और कोई पुत्र या पुत्र का पुत्र जो निर्वसीयती

की मृत्यु के समय जीवित हो छोड़ कर नहीं गया है तो ऐसे पूर्व मृतक पुत्र का भाग उसकी विधवा और उसके पुत्र की विधवा या विधवाओं में इस तरह बंटेगा कि उस विधवा का हिस्सा उसके पुत्रों की विधवाओं से दुगुना होगा।

(3) इस धारा के उद्देश्य के लिए कोई व्यक्ति जो एक से अधिक विधवा छोड़ गया है तो एक विधवा को मिलने वाला हिस्सा सभी विधवाओं में बराबर बांटा जाएगा।

उदाहरण

i. किसी निर्वसीयती के उत्तराधिकारी तीन पुत्र हैं, क, ख, ग, पूर्व मृत पुत्र घ के पांच पौत्र हैं और दो पर-पौत्र हैं, दूसरे पूर्व मृत पुत्र के पूर्व मृत पुत्र ड. से। क, ख, ग प्रत्येक के एक हिस्सा लेने और घ तथा ड. की शाखाएं प्रत्येक एक हिस्सा लेते हैं। घ की शाखा के पोत्र व ड. की शाखा के प्रपोत्र उनकी शाखाओं को मिले हिस्से को बराबर बांटते हैं निर्वसीयती का प्रत्येक पुत्र इस प्रकार विरासत की संपत्ति का पांच वां हिसा लेता है, प्रत्येक पौत्र बीसवां हिसा और प्रत्येक परपौत्र दसवां हिस्सा।

ii. निर्वसीयती का केवल एक पुत्री अथवा विधवा पीछे बची हों तो सारी पैतृक संपत्ति उन्हें मिलेगी।

iii. निर्वसीयती के जीवित उत्तराधिकारी विधवा तथा पूर्व मृतक पुत्र से दो पोत्र हैं तो एक भाग विधवा को व अन्य एक भाग दोनों पोत्रों को बराबर बंटेगा। यानी विधवा को पैतृक संपत्ति का आधा व पौत्रों को चौथाई हिस्सा मिलेगा।

iv. यदि उत्तरजीवी एक पुत्री व एक पूर्वमृतक पुत्र की विधवा है तो पुत्री को एक व विधवा को आधा भाग मिलेगा।

v. जहां उत्तरजीवी एक पुत्र, एक पुत्री व एक पूर्वमृतक की विधवा है तो, पुत्र व पुत्री को एक-एक भाग व विधवा को आधा भाग मिलेगा।

vi. उत्तरजीवी एक पुत्र, एक पुत्री, पूर्वमृतक पुत्र की विधवा व एक पुत्र है। पुत्र व पुत्री को एक एक भाग व विधवा व उसके पुत्र को एक भाग संयुक्त रूप से मिलेगा जिसे दोनों में बराबर भागों में बांटा जाएगा।

vii. उत्तरजीवी उत्तराधिकारी हैं-

(क) विधवा

(ख) पुत्र,

(ग) पुत्री,

(घ) पूर्व मृतक पुत्र की विधवा,

(ङ) अन्य मृतक पुत्र की विधवा व दो पुत्र

विधवा को एक भाग मिलेगा, पुत्र व पुत्री को एक एक भाग, पहले उल्लेखित विधवा-घ को आध भाग व ङ. में दिए गए उत्तराधिकारियों को एक भाग मिलेगा जो उनमें बराबरी से बंटेगा।

8. उत्तरजीवी हैं-

(क) पुत्र,

(ख) मृतक पुत्र की एक विधवा व तीन पुत्र,

(ग) खंड ख में दिए मृतक पुत्र के अन्य मृतक पुत्र की विधवा।

पुत्र को एक भाग व खंड ख और ग में दिए गए उत्तराधिकारियों को संयुक्त रूप से एक भाग मिलेगा। बाद वाला हिस्सा ऐसे बंटेगा कि ख में दिए गए उत्तराधिकारियों को एक एक भाग और ग में दिए गए उत्तराधिकारी विधवा को उसका आध भाग मिलेगा। फलस्वरूप निर्वसीयती की पैतृक संपत्ति का एक भाग, उसके पूर्व मृतक पुत्र की विधवा को 1/9 व तीनों पुत्रों को भी 1/9 प्रत्येक को व पूर्व मृतक पुत्र के पूर्व मृतक पुत्र की विधवा को 1/18 वां भाग मिलेगा।

(114)

101. वर्ग 2 में प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों में बंटवारे का तरीका : एक निर्वसीयती की संपत्ति का आठवीं अनुसूची के वर्ग 2 में शामिल उत्तराधिकारियों में इस प्रकार आबंटन होगा कि सभी को बराबर भाग मिले।

(115)

102. उत्तराधिकारी जो गोत्रज हों : आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 या 2 में शामिल उत्तराधिकारियों के अभाव में मृतक के बंधु जो मृतक से पांच कोटी तक संबंध रखते हों इस भाग के नियमों के अनुसार अधिकारी होंगे।

भाग 1, धारा 8, पृष्ठ 7

(114)

101. वर्ग 2 में प्राथमिकता प्राप्त उत्तराधिकारियों में आबंटन का तरीका : एक निर्वसीयती की संपत्ति का आठवीं अनुसूची के वर्ग 2 में शामिल उत्तराधिकारियों में इस प्रकार आबंटन होगा कि सभी को बराबर भाग मिले।

(115)

102. उत्तराधिकारी जो गोत्रज हों : आठवीं अनुसूची के वर्ग I या 2 में शामिल उत्तराधिकारियों के अभाव में मृतक के गोत्रज जो मृतक से पांच कोटी तक संबंध रखते हों इस भाग के नियमों के अनुसार अधिकारी होंगे।

----

(116)

103. बंधु जो उत्तराधिकारी हैं : आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 व दो में दिए किसी प्राथमिक उत्तराधिकारी या गोत्रज के अभाव में मृतक के वह बंधु जो उससे पांच कोटी तक संबंधित हैं, इस भाग में तय नियमों के अनुसार उत्तराधिकार के अधिकारी हैं।

(117)

104. गोत्रज व बंधुओं के बीच उत्तराधिकार का क्रम : गोत्रज या बंधु जैसा भी मामला हो,के बीच उत्तराधिकार का क्रम निम्न प्राथमिकता के नियमों के अनुसार निर्धारित किया जाएगा-

नियम 1- दो उत्तराधिकारियों में उसे जिसके पास बढ़ते क्रम की कम या कोई कोटी नहीं है, को प्राथमिकता दी जाएगी,

नियम 2- जहां बढ़ते क्रम की कोटी की संख्या समान हो या न हो प्राथकिता उसे मिलेगी जिसके पास बढ़ते क्रम की कम या कोई कोटी न हो।

नियम 3- जहां उतरते क्रम की कोटियों की संख्या समान हो अथवा न हो वे उत्तराधिकारी जो पुरुष वंशक्रम में हैं उनको स्त्री वंशक्रम के बजाए प्राथकिता दी जाएगी, प्रथम दृष्टया, निर्वसीयती से उत्तराधिकारी तक गिना जाने पर उत्तराधिकारियों में फर्क किया जा सके।

नियम 4- जहां दो रेखाओं में फर्क न किया जा सके तो स्त्री उत्तराधिकारियों पर पुरुष उत्तराधिकारियों को प्राथमिकता दी जाएगी।

नियम 5- जहां इन नियमों के तहत किसी उत्तराधिकारी को प्राथमिकता प्राप्त न हो तो सभी को समान माना जाएगा।

---

(116)

103. बंधु जो उत्तराधिकारी हैं : आठवीं अनुसूची के वर्ग 1 व 2 में दिए किसी प्राथमिक उत्तराधिकारी या गोत्रज के अभाव में मृतक के वह बंधु जो उससे पांच कोटी तक संबंधित हैं, इस भाग में तय नियमों के अनुसार उत्तराधिकार के अधिकारी है। *भाग 1, धारा 8, पृष्ठ 7*

(117)

104. गोत्रज व बंधुओं के बीच उत्तराधिकार का क्रम : गोत्रज या बंधु जैसा भी मामला हो, के बीच उत्तराधिकार का क्रम निम्न प्राथमिकता के नियमों के अनुसार निर्धारित किया जाएगा- *भाग 2, धारा 9, पृष्ठ 7 और 8*

नियम 1- दो उत्तराधिकारियों में उसे जिसके पास चढ़ते क्रम की कम या कोई कोटी नहीं है, को प्राथमिकता दी जाएगी,

नियम 2- जहां उपरी क्रम की कोटी की संख्या समान हो या न हों प्राथमिकता उसे मिलेगी जिसके पास बढ़ते क्रम की कम या कोई कोटी न हो।

नियम 3- जहां उतरते क्रम की कोटियों की संख्या समान हो अथवा न हो तब, उत्तराधिकारी जो पुरुष वंश क्रम के हैं, को स्त्री वंशक्रम की बजाय प्राथमिकता दी जाएगी, प्रथमदृष्टया निर्वसीयती से उत्तराधिकारी तक गिना जाने पर उत्तराधिकारियों में अलगाव न किया जा सके।

नियम 4- जहां दो रेखाओं में फर्क न किया जा सके तो स्त्री उत्तराधिकारियों पर पुरुष उत्तराधिकारियों को प्राथमिकता दी जाएगी।

नियम 5- जहां इन नियमों के तहत किसी उत्तराधिकारी को प्राथमिकता प्राप्त न हो तो सभी को समान माना जाएगा।

उदाहरण

इस उदाहरण में निर्वसीयती के समान पूर्वज के उपरी क्रम में पिता के लिए पि व माता के लिए माँ का प्रयोग किया गया है और निचले क्रम मे निर्वसीयती के समान उत्तराधिकार क्रम में पु. व क. का प्रयोग पुत्र और कन्या के लिए क्रमश: किया गया है। यथा मापिपुपु निर्वसीयती की माता के पिता के पुत्र का पुत्र यानी माता के भाई का पुत्र है तथा पि क पु पिता की कन्या के पुत्र के लिए प्रयोग किया गया है। (बहन का पुत्र)

1. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (1) पुकपुपु (पुत्र की कन्या के पुत्र का पुत्र) तथा (ख) पिककपु (पिता की कन्या की कन्या का पुत्र) प्रथम के पास उपरी क्रम की प्राथमिकता प्राप्त कोई कोटी नहीं है जबकि दूसरे के पास उपरी क्रम की दो कोटी है। इसलिए पहले को प्राथमिकता मिलेगी।

2. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) पिककक (बहन की कन्या की कन्या) तथा (ख) मापिपुपुक(मामा के पुत्र की कन्या) प्रथम के पास उपरी क्रम की प्राथमिकता प्राप्त केवल एक डिग्री है जबकि दूसरे के पास ऐसी दो डिग्रियां हैं, पहले को प्राथमिकता मिलेगी।

3. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) पिकपुपु (बहन के पुत्र का पुत्र) तथा (ख) मापिपुपुक (मामा के पुत्र की कन्या) पहला जिसके पास एक कोटी है दूसरे के मुकाबले जिसके पास दो कोटियां हैं प्राथमिकता पाएगा।

4. मुकाबले में उत्तराधिकारी है (क)मापिकपुपु (माता की बहन के पुत्र का पुत्र) तथा (ख) मापिपिकपुं (माता के पिता की बहन का पुत्र) प्रथम जिसके पास दो कोटियां है को दूसरा जिसके पास ऐसी तीन कोटियां है के मुकाबले प्रथमिकता मिलेगीं।

5. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) मापिमा (माता के पिता की मां) तथा (ख) पिपिपि कपुपु (पिता के पिता की बहन के पुत्र का पुत्र) दोनों मामलों में उपरी क्रम की कोटियां समान हैं किंतु निचले क्रम की कोटी प्रथम के पास कोई कोटी नहीं है जबकि दूसरे के पास ऐसी तीन कोटियां हैं। इसलिए पहले वाले को प्राथमिकता दी जाएगी।

6. मुकाबले में उत्तराधिकारी (क) पिमापि (पिता की माता के पिता) तथा (ख) मापिपिपि (माता के पिता के पिता) दोनों मामलों में उपरी क्रम की कोटियां समान हैं जबकि निचले क्रम की कोई कोटी नहीं है। लेकिन दोनो उत्तराधिकारियों में प्रथम दृष्टि से ही भेद है पहला पुरुष क्रम में व दूसरा स्त्री क्रम में है, इसलिए पहले को प्राथमिकता मिलेगी।

7. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) पिकपुपु (बहन के पुत्र का पुत्र) तथा (ख) पिककपु (बहन की कन्या का पुत्र) दोनो उत्तराधिकारी उपरी व निचले क्रम में समान दूरी पर है असमानता तीसरे बिंदु में है। यहां पहला पुरुष क्रम में है व दूसरा पिता के माँ के बहन का पुत्र। इसलिए पहले को प्राथमिकता मिलेगी।

8. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) पिमापुपु (पिता की माता के भाई का पुत्र) तथा (ख) पिमापिकपु (पिता की माता की बहन का पुत्र) पहले को प्राथमिकता मिलेगी।

9. मुकाबले में उत्तराधिकारी हैं (क) पिककपु (बहन की कन्या का पुत्र) तथा (ख) पि ककक (बहन की कन्या की कन्या) पहले उत्तराधिकारी को प्राथमिकता मिलेगी।

(1117अ)

105. कोटियों का संगणन :

(1) गोत्रज या बंधुओं के बीच उत्तराधिकार का क्रम निश्चित करने के उद्देश्य से निर्वसीयती के साथ उत्तराधिकारियों के रिश्ते, चढ़ते या उतरते क्रम की कोटी अथवा दोनों जैसा भी मामला हो, को देखा जाता है।

(2 चढ़ते या उतरते क्रम की कोटी विशेष कर निर्वसीयती के साथ विशेष तौर पर गिनी जाएगी।

(3) हर पीढ़ी चाहे वह बढ़ते क्रम में हो या घटते क्रम में, को एक कोटी माना जाएगा।

105. कोटियों का संगणन :

(1) गोत्रज या बंधुओं के बीच उत्तराधिकार का क्रम निश्चित करने के उद्देश्य से निर्वसीयती के साथ उत्तराधिकारियों के रिश्ते, चढ़ते या उतरते क्रम की कोटी अथवा दोनों जैसा भी मामला हो, को देखा जाता है। *भाग 2, धारा 8, पृष्ठ 7*

(2) चढ़ते या उतरते क्रम की कोटी विशेष कर निर्वसीयती के साथ गिनी जाएगी।

(3) हर पीढ़ी चाहे वह बढ़ते क्रम में हो या घटते क्रम में, को एक कोटी माना जाएगा।

उदाहरण

1. विचारणीय उत्तराधिकारी निर्वसीयती के पिता की माता के पिता हैं। उनके पास निचले क्रम की कोई कोटी नहीं है लेकिन उच्च क्रम की तीन कोटियां है जो (क) निर्वसीयती के पिता (ख) उस पिता की माता (ग) उसके पिता (उत्तराधिकारी) का प्रतिनिधित्व करती है।

2. विचारणीय उत्तराधिकारी निर्वसीयती के पिताकी माता के पिता की माता है। उनके पास निचले क्रम की कोई कोटी नहीं है किंतु उपरी क्रम की चार कोटी हैं जो (क) निर्वसीयती के पिता (ख) उस पिता की माता (ग) उसके पिता (घ) उसकी माता (उत्तराधिकारी) का प्रतिनिधित्व करती है।

3. विचारणीय उत्तराधिकारी निर्वसीयती के पुत्र की कन्या के पुत्र की कन्या है। उसके पास ऊपरी क्रम की कोई कोटी नहीं है, लेकिन निचले क्रम की चार कोटियां हैं जो निर्वसीयती के (क) पुत्र (ख) उस पुत्र की कन्या (ग) उसके पुत्र (घ) उसकी पुत्री (उत्तराधिकारी) का प्रतिनिधित्व करती है।

4. विचारणीय उत्तराधिकारी निर्वसीयती की माता के पिता की कन्या का पुत्र है। उपरी क्रम की तीन कोटी (क) निर्वसीयती की माता (ख) उसके पिता तथा (ग) समान उसके पिता के पिता का प्रतिनिधित्व करती है तथा निचले क्रम की दो कोटियां हैं जो (क) समान पूर्वज की पुत्री अर्थात माता के पिता के पिता तथा (ख) उसका पुत्र (उत्तराधिकारी) का प्रतिनिधित्व करती है।

---

(118)

पुरुष मरूमक्कत्तायस इत्यादि की संपत्ति का उत्तराधिकार

105क. पुरुष मरूमक्कत्तायस इत्यादि के निर्वसीयती मरने पर उत्तराधिकार के नियम : इस अध्याय में कोई भी प्रावधान होने के बावजूद कोई पुरुष हिंदू जो निर्वसीयती मर गया हो उसकी, पृथक अथवा स्वतः अर्जित संपत्ति के संबंध में -

(क) उस व्यक्ति के संबंध में जिस पर मरूमक्कत्तायस अथवा अलियसंतान कानून लागू होता है, यदि ये संहिता प्रभावी नहीं होती, तो संपत्ति का हस्तांतरण धारा 105 ग से 105 झ में शामिल नियमों के अनुसार व उसी क्रम से होगा।

(ख) उस व्यक्ति के संबंध में जिस पर, यदि ये संहिता प्रभावी न हुई होती तो नंबूदरी कानून लागू होता तो संपत्ति का हस्तांतरण धारा 105 जे में शामिल नियमों के अनुसार व उसी क्रम में होगा।

(119)

105ख. पारंपरिक वंशज की परिभाषा : धारा 105 स से 105 ञ व धारा 109 अ तथा 109 ब में पद ''पारंपरिक वंशज'' ऐसे व्यक्ति के संबंध में प्रयोग किया गया है जिसका मतलब उस व्यक्ति का कोई वंशज, चाहे वह पुरुष वंशक्रम में हो या स्त्री वंशक्रम में या कुछ सीमा तक पुरुष वंशक्रम में हों और कुछ सीमा तक स्त्री वंशक्रम में तथा ऐसे व्यक्ति का कोई बच्चा शामिल है।

(120)

105ग. वहां जहां उत्तराधिकारी पारंपरिक वंशज हो वहां संपत्ति का हस्तांतरण :

(1) जहां कोई निर्वसीयती अपने पीछे एक पारंपरिक वंशज या वंशजों को छोड़ गया हो और अपनी माता अथवा विधवा या दो या अधिक विधवाएं छोड़ गया हो या दोनों मां व विधवा या विधवाएं छोड़ गया हो, सारी संपत्ति उन्हें हस्तांतरित हो जाएगी।

(2) माता अथवा विधवा की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति उसके पारंपरिक वंशज या वंशजों को जाएगी।

(121)

105घ. बंटवारे के नियम : वहां जहां धारा 105 ग में उल्लिखित पारंपरिक वंशज हैं वहां संपत्ति का बंटवारा उत्तराधिकारियों में निम्न नियमों के तहत बंटेगा–

(क) प्रत्येक बच्चे, (पुत्र अथवा पुत्री) को बराबर भाग मिलेगा।

(ख) यदि पुत्र निर्वसीयती से पूर्व मृतक है तो खंड़ घ के विषय अनुसार ऐसे बच्चे के पारंपरिक वंशज को वह संपत्ति जाएगी जो उस बच्चे का मिलती यदि वह जीवित होता।

(ग) निर्वसीयती के पूर्व मृतक से पोते, पोती या नाती, नातिन है तो उन्हें वही भाग मिलेगा जो उस बच्चे को मिलता, यदि वह निर्वसीयती की मृत्यु के समय जीवित होता :

परंतु यदि ऐसा नाती या पोता भी पूर्व में मृत्यु प्राप्त कर चुका है तो खंड़ ग के प्रावधान के अनुसार ऐसे नाती या पोते के पारंपरिक वंशज को वह हिस्सा मिलेगा जो उस नाती या पोते को मिलता यदि वह जीवित होता।

(घ) वह संपत्ति उसके दूरस्थ वंशजों को समान रूप से जाएगी।

(ङ) एक बच्चे के पोते, नातियों व उसके पारंपरिक वंशजों को निर्वसीयती की संपत्ति में से कोई हिस्सा नहीं मिलेगा यदि निर्वसीयती की मृत्यु के समय ऐसा बच्चा जीवित हो।

(च) जहां कोई विधवा या एक से अधिक विधवाएं हैं तो सभी विधवाओं को वह हिस्सा जो उस बच्चे को मिलता, बराबर भाग में बंटेगा।

(छ) माता एक बच्चे को मिलने वाली संपत्ति के बराबर की अधिकारी है;

(122)

105ङ. जहां कोई पारंपरिक वंशज नहीं, बल्कि, एक विधवा या माता हो वहां संपत्ति का हस्तांतरण :

(1) जहां निर्वसीयती अपने पीछे कोई पारंपरिक वंशज न छोड़ गया हो, बल्कि, उसकी माता व एक या अधिक विधवाएं हों तो आधी संपत्ति माता व बाकी आधी संपत्ति विधवा अथवा विधवाओं को बराबर भाग में मिलेगी;

(2) विधवा की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति माता को हस्तांतरित हो जाएगी।

(123)

105च. जहां माता नहीं बल्कि विधवा व माता के पारंपरिक वंशज उत्तराधिकारी है, संपत्ति का हस्तांतरण :

(1) वहां, जहां निर्वसीयती अपने पीछे कोई पारंपरिक वंशज या माता को नहीं बल्कि एक या अधिक विधवाएं और अपनी माता के पारंपरिक वंशजों को छोड़ गया है

तो संपत्ति का आधा भाग विधवा या विधवाओं को बराबर मात्रा में व बाकी आधा हिस्सा उसके पारंपरिक वंशजों को जाएगा।

(2) निर्वसीयती की माता के वंशजों की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति विधवा या विधवाओं में बराबर हिस्सों में और विधवाओं की अनुपस्थिति में उसकी (निर्वसीयती) माता के पारंपरिक वंशजों को जाएगी।

(124)

105छ. जहां उत्तराधिकारी माता की माता या उसके वंशज अथवा पिता हों वहां संपत्ति का हस्तांतरण :

(1) जहां निर्वसीयती अपने पीछे धारा 105ग, 105घ व 105ङ में उल्लिखित उत्तराधिकारी न छोड गया हो बल्कि अपने पिता और अपनी माता की माता या उसके वंशजों को छोड़ गया हो तो आधी संपत्ति पिता व आधी संपत्ति उसकी माता की माता और उनकी अनुपस्थिति में उसके पारंपरिक वंशजों को जाएगी।

(2) माता की माता या उसके वंशज के न होने पर सारी संपत्ति पिता को जाएगी और पिता के न होने पर सारी संपत्ति माता की माता या उसके वंशजों को जाएगी।

(125)

105ज. अन्य मामलों में हस्तांतरण :

(1) जहां निर्वसीयती अपने पीछे धारा 105ग, 105ङ., 105च 105छ में उल्लिखित उत्तराधिकारियों में से किसी को भी नहीं छोड कर नहीं गया हो वहां सारी संपत्ति उसकी माता की नानी को जाएगी अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसके वंशज या वंशजों, निकटस्थ पूर्व अथवा बाद के वंशजों को जाएगी, इनमें अति दूरस्थ पूर्व अथवा बाद के वंशज शामिल नहीं है।

(126)

105झ. माता के पारंपरिक वंशजों व अन्य पूर्व वंशज के बीच बंटवारे के नियम: जहां निर्वसीयती की संपत्ति या उसके किसी भाग के बंटवारे के लिए, यदि माता अथवा अन्य वंशज बिना वसीयत के मर जाते हैं तो

उसकी माता के दो या अधिक पारंपरिक वंशज या अन्य पूर्वपुरुष हों वहां बंटवारा धारा 105 ग के खंड क से ड. के नियमों के अनुसार हो।

(127)

105ञ. नंबूदरी पुरुषों में उत्तराधिकार के विशेष नियम : बावजूद इस अध्याय में दिए गए किसी भी नियम के किसी हिंदू पुरुष की पृथक अथवा स्वतः अर्जित संपत्ति यदि ये संहिता प्रभावी नहीं होती, तो नंबूदरी कानून के नियमों के अनुसार निर्धारित होती, यदि वह हिंदू निर्वसीयती मर जाता है तो इस संबंध में संपत्ति का हस्तांतरण निम्नलिखित नियमों के क्रमानुसार हस्तांतरित होगी–

(क) जहां निर्वसीयती अपने पीछे कोई पारंपरिक वंशज या वंशजों अथवा एक या अधिक विधवाएं अथवा वंशज व विधवाएं दानों छोड़ गया है तो सारी संपत्ति इस धारा के खंड (क) से (च) में उल्लिखित नियमों के अनुसार हस्तांतरित होगी।

(ख) जहां निर्वसीयती अपने पीछे खंड क में बताए संबंधियों मे किसी को नहीं छोड़ गया है तो संपत्ति का हस्तांतरण धारा 97 से 108 में उल्लिखित नियमों के अनुसार व उसी क्रम से होगा।

---

(128)

स्त्री की निर्वसीयती संपत्ति का उत्तराधिकार

सामान्य प्रावधान

106. एक हिंदू स्त्री के उत्तराधिकारी : धारा 109 (क) व 109 (ख) में स्पष्टतः उपबंधित मामलों को छोड़कर एक हिंदू स्त्री जो निर्वसीयती मर गई है उसकी संपत्ति इस भाग में तय नियमों के अनुसार हस्तांतरित की जाएगी–

(क) प्रथम, पति व बच्चे, इसमें उससे पूर्व मृत बच्चे के बच्चे भी शामिल हैं; तथा

(ख) दूसरे, यदि उप-धारा (क) में उल्लेखित कोई उत्तराधिकारी नहीं है तो धारा 109 में उल्लेखित नियमों के अनुसार व उसी क्रम में जिस क्रम में उनके नाम उल्लेखित है।

(129)

107. उत्तराधिकारियों के बीच हिस्सों का बंटवारा :

(1) जहां एक हिंदू स्त्री अपने पीछे अपने पति व बच्चों को छोड़कर निर्वसीयती मर जाती है, तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड़कर मरी है उसके पति व बच्चों में इस प्रकार बंटेगी कि उन्हें बराबर हिस्सा प्राप्त हो;

(2) यदि एक हिंदू स्त्री पति नहीं केवल बच्चों को छोड कर निर्वसीयती मर जाती है, तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड़कर मरी है उसके बच्चों में इस प्रकार बंटेगी कि प्रत्येक को बराबर हिस्सा प्राप्त हो;

(3) यदि निर्वसीयती मृत स्त्री का कोई बच्चा उसके जीवनकाल में मर जाता है और उस स्त्री की मृत्यु के समय उस मृत के बच्चे जीवित हों तो ऐसे बच्चों के बच्चों को वही हिस्सा मिलेगा जो उस बच्चे को मिलता यदि वह जीवित होता ।

(130)

108. जहां कोई बच्चा नहीं तब पति का उत्तराधिकारी होना : जहां कोई स्त्री केवल अपने पति को अपने पीछे छोड़कर मर जाती है अपने बच्चे या बच्चों के बच्चे जो धारा 107 के तहत उत्तराधिकार के लिए नामित हैं, को नहीं छोड़कर जाती तो वह सारी संपत्ति जिसे वह निर्वसीयत छोड़कर मरी है, उसके पति को हस्तांतरित हो जाएगी।

(128)
हिंदू स्त्री की संपत्ति का उत्तराधिकार

106. एक हिंदू स्त्री के उत्तराधिकारी : इस अधयाय के प्रावधान से एक हिंदू स्त्री जो निर्वसीयती मर गई है, उसकी संपत्ति इस भाग में तय नियमों के अनुसार हस्तांतरित की जाएगी–

(क) प्रथम, पति व बच्चे, इसमें उसके पूर्व मृत बच्चे के बच्चे भी शामिल है; तथा

(ख) दूसरे, यदि यदि खंड क में उल्लेखित कोई उत्तराधिकारी नहीं है तो धारा 109 में उल्लेखित नियमों के अनुसार व उसी क्रम में जिस क्रम में उनके नाम उल्लेखित है।

भाग 2, धारा 14, पृष्ठ 9

(129)

107. उत्तराधिकारियों के बीच हिस्सों का बंटवारा :

(1) जहां एक हिंदू स्त्री अपने पीछे अपने पति व बच्चों को छोड़ कर निर्वसीयती मर जाती है, तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड़कर मरी है, उसके पति व बच्चों में इस प्रकार बंटेगी कि उन्हें बराबर हिस्सा प्राप्त हो; *भाग 2, धारा 14, पृष्ठ 9*

(2) यदि एक हिंदू स्त्री पति नहीं, केवल बच्चों को छोड़कर निर्वसीयती मर जाती है, तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड़कर मरी है उसके बच्चों में इस प्रकार बंटेगी कि प्रत्येक को बराबर हिस्सा प्राप्त हो; *भाग 2, धारा 14, पृष्ठ 9*

(3) यदि निर्वसीयती मृत स्त्री का कोई बच्चा उसके जीवन काल में मर जाता है और उस स्त्री की मृत्यु के समय उस मृत के बच्चे जीवित हों तो ऐसे बच्चों के बच्चों को वही हिस्सा मिलेगा जो उस बच्चे को मिलता यदि वह जीवित होता ।

(130)

108. जहां कोई बच्चा नहीं तब पति का उत्तराधिकारी होना : जहां कोई स्त्री केवल अपने पति को अपने पीछे छोड़कर मर जाती है, अपने बच्चे या बच्चों के बच्चे जो धारा 107 के तहत उत्तराधिकार के लिए नामित हैं, को नहीं छोड़कर जाती तो वह सारी संपत्ति जिसे वह निर्वसीयत छोड़कर मरी है, उसके पति को हस्तांतरित हो जाएगी।

(131)

109. स्त्री संपत्ति के अन्य उत्तराधिकारी : जहाँ एक हिंदू स्त्री धारा 107 अथवा 108 में उल्लिखित उत्तराधिकारियों को बिना छोडे मर जाती है तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड कर मरी है , निम्न उत्तराधिकारियों को इसी क्रम से हस्तांतरित होगी; यथा–

(1) माता, पिता;

(2) पति के उत्तराधिकारी उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते यदि संपत्ति उसकी होती और वह निर्वसीयती मर जाती अपनी पत्नी के बाद।

(3) माता के उत्तराधिकारी उसी दृष्टि से, उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते जब वह अपनी पुत्री के ठीक पीछे निर्वसीयती मर जाती;

(4) पिता के उत्तराधिकारी उसी दृष्टि से, उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते जब वह अपनी पुत्री के ठीक पीछे निर्वसीयती मर जाता।

---

(131)

109. स्त्री संपत्ति के अन्य उत्तराधिकारी : जहाँ एक हिंदू स्त्री धारा 107 अथवा 108 में उल्लेखित उत्तराधिकारियों को बिना छोड़े मर जाती है तो वह संपत्ति जिसे वह निर्वसीयती छोड़कर मरी है , निम्न उत्तराधिकारियों को इसी क्रम से हस्तांतरित होगी; यथा–

(1) माता, पिता;

भाग 2, धारा 14, पृष्ठ 2

(2) पति के उत्तराधिकारी उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते यदि संपत्ति उसकी होती और वह निर्वसीयती मर जाती अपनी पत्नी के बाद।

(3) माता के उत्तराधिकारी उसी दृष्टि से, उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते जब वह अपनी पुत्री के ठीक पीछे निर्वसीयती मर जाती;

(4) पिता के उत्तराधिकारी उसी दृष्टि से, उसी क्रम व नियमों के अनुसार जो तब लागू होते जब वह अपनी पुत्री के ठीक पीछे निर्वसीयती मर जाता।

(132)

मरूमक्कतायम स्त्री आदि की संपत्ति का उत्तराधिकार

109क. मरूमक्कतायम या अलियसंतान स्त्री के निर्वसीयती मर जाने पर हस्तांतरण के नियम : इस भाग में किये प्रावधान के बावजूद, पृथक अथवा स्वयं अर्जित संपत्ति जिस पर यदि ये संहिता प्रभावी न हुई होती तो मरूमक्कतायम या अलिय संतान कानून लागू होता, यदि वह स्त्री निर्वसीयती छोड़कर मर जाती है तो वह संपत्ति निम्न नियमों व क्रम के अनुसार हस्तांतरित होगी, यथा–

(क) जहां निर्वसीयती अपने पीछे एक या अधिक पारंपरिक वंशजों को छोड़ गई हो तो ऐसी सारी संपत्ति धारा 105 (घ) के खंड (क) से (ग) में दिए गए प्रावधानों के अनुसार उन वंशज या वंशजों को हस्तांतरित हो जाएगी;

(ख) किसी पारंपरिक वंशज की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति निर्वसीयती की माता अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसके परंपरागत वंशज या वंशजों को जाएगी;

(ग) जहां निर्वसीयती अपने पीछे अपने किसी पारंपरिक वंशज या अपनी माता को न छोड़ गई हो बल्कि अपने पति व अपनी नानी या उसके पारंपरिक वंशज या वंशजों को छोड़ गई हो तो आधी संपत्ति उसकी नानी और उनकी अनुपस्थिति में उसके पारंपरिक वंशजों को हस्तांतरित हो जाएगी।

(घ) निर्वसीयती की नानी या उसके पारंपरिक वंशजों की अनुपस्थिति में उसके पति और उसके पति की अनुपस्थिति में उसकी नानी व उसकी अनुपस्थिति में उसके वंशज या वंशजों को हस्तांतरित हो जाएगी।

(ङ) जहां निर्वसीयती उपरोक्त उप–धाराओं में उल्लिखित उत्तराधिकारियों में से किसी को भी अपने पीछे छोड़कर नहीं गई हो तो सारी संपत्ति उसकी माता की नानी और उसकी अनुपस्थिति में उसके पारंपरिक वंशज या वंशजों तथा ऐसे किसी वंशज की अनुपस्थिति में उसके निकटस्थ पूर्व बढ़ते अथवा उतरते क्रम के वंशजों और उसके वंशजों को हस्तांतरित होगी, इसमें बहुत दूर के पूर्व बढ़ते अथवा उतरते क्रम के वंशजों व उसके वंशज शामिल नहीं हैं।

(च) निर्वसीयती की संपत्ति या उसके किसी भाग का बंटवारा, जिसमें उसकी माता या उसके अन्य वंशजों के दो से ज्यादा उतरते अथवा बढ़ते क्रम के पारंपरिक वंशज पूर्ववर्ती धाराओं के तहत हकदार हैं धारा (घ) की उप–धारा (क) से (ङ) में उल्लेखित नियमों के अनुसार होंगी यदि माता अथवा अन्य वंशज ऐसी संपत्ति के संबंध में निर्वसीयती मर गए हों अथवा अपने पीछे पूर्व कथित वंशज छोड गए हों।

(133)

109ख. नंबूदारी स्त्री के निर्वसीयती मरने पर उत्तराधिकार के नियम : इस अध्याय में किए प्रावधान के बावजूद एक हिंदू स्त्री की पृथक या स्वयं अर्जित संपत्ति जो यदि ये संहिता प्रभावी न हुई होती तो नंबूदारी कानून से संचालित होती तो ऐसी संपत्ति के विषय में निर्वसीयती मरने पर उसका हस्तांतरण निम्न नियमों के तहत व उसी क्रम से होगा, यथा–

(क) जहां निर्वसीयती अपने पीछे किसी पारंपरिक वंशज या वंशजों को छोड़ गया है तो सारी संपत्ति ऐसे वंशज या वंशजों को धारा 105घ की उप-धारा (क) से (ङ) में उल्लेखित नियमों के अनुसार हस्तांतरित हो जाएगी;

(ख) किसी पारंपरिक वंशज की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति उसके पति को हस्तांतरित हो जाएगी;

(ग) उसके पति की अनुपस्थिति में सारी संपत्ति का हस्तांतरण धारा 109 में उल्लेखित नियमों के अनुसार व उसी क्रम में होगा।

(134)

एक साधु की संपत्ति का हस्तांतरण

110. साधु आदि के लिए नियम :

(1) जहां कोई व्यक्ति पूरी तरह और अंतिम रूप से एक साधु, अथवा संन्यासी अथवा स्थायी रूप से किसी धर्मिक गुरू का शिष्य बन जाता है तो उसकी संपत्ति उसी क्रम व नियमों के अनुसार उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होगी जो तब होती यदि वह ऐसे परित्याग से पूर्व निर्वसीयती मर जाता;

(2) यदि संपत्ति का अर्जन ऐसे परित्याग के पश्चात् किया गया है तो संपत्ति उसके संबंधियों को नहीं बल्कि निम्न प्रकार से हस्तांतरित होगी:–

(क) संन्यासी के संबंध में उसी आश्रम के उसके एक आत्मीय धार्मिक बंधु को ;

(ख) किसी साधु के संबंध में किसी रीति-रिवाज अथवा परम्परा, जैसा भी मामला हो, उसके उत्तम शिष्य को; तथा

(ग) अविरल रूप से एक धार्मिक शिष्य के संबंध में उसके गुरू को।

---

(134)
एक साधु की संपत्ति का हस्तांतरण

110. साधु आदि के लिए नियम :

(1) जहां कोई व्यक्ति पूरी तरह व अंतिम रूप से एक साधु, अथवा संन्यासी अथवा स्थायी रूप से किसी धार्मिक गुरू का शिष्य बन जाता है तो उसकी संपत्ति उसी क्रम व नियमों के अनुसार उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होगी जो तब होती यदि वह ऐसे परित्याग से पूर्व निर्वसीयती मर जाता; *भाग 1, धारा 2, पृष्ठ 9*

(2) यदि संपत्ति का अर्जन ऐसे परित्याग के पश्चात् किया गया है तो संपत्ति उसके संबंधियों को नहीं बल्कि निम्न प्रकार से हस्तांतरित होगी:-

(क) संन्यासी के संबंध में उसी आश्रय के उसके एक आत्मीय धार्मिक बंधु को;

(ख) किसी साधु के संबंध में किसी रिवाज अथवा उपयोग, जैसा भी मामला हो, उसके उत्तम शिष्य को; तथा

(ग) अविरल रूप से एक धार्मिक शिष्य के संबंध में, उसके गुरू को।

---

(135)

उत्तराधिकार से संबंधित सामान्य प्रावधान

111. सगे संबंधी को सौतेले संबंधी से ज्यादा प्राथमिकता दी जाना : निर्वसीयती संपत्ति के उत्तराधिकार के संबंध में सगे संबंधियों को सौतेले संबंधियों की बनिस्पत ज्यादा अहमियत दी जाएगी, यदि अन्य मामलों में संबंधों की प्रकृति समान रहती है।

(136)

112. दो से ज्यादा उत्तराधिकारी होने पर उत्तराधिकार का तरीका : यदि किसी निर्वसीयती की संपत्ति में दो या ज्यादा संयुक्त उत्तराधिकारी हैं, तब संपत्ति इस प्रकार दी जाएगी।

(क) वैसे ही, जब तक इस भाग में स्पष्ट रूप से उल्लेखित प्रावधान के विरुद्ध न तो, प्रति व्यक्ति न कि प्रति शाखा;

(ख) संयुक्त अभिवृत्ति के बजाए साझा अभिवृत्ति के अनुसार।

(137)

113. गर्भस्थ शिशु का अधिकार : निर्वसीयती की मृत्यु के समय गर्भ में पल रहा व्यक्ति जो बाद में जीवित उत्पन्न होता है निर्वसीयती की संपत्ति में वही दाय प्राप्त करेगा जो तब होता जब वह बच्चा, लड़का या लड़की निर्वसीयती की मृत्यु से पूर्व उत्पन्न होता। ऐसी अवस्था में दाय निर्वसीयती की मृत्यु की तिथि से प्रभावशील होकर उसमें निहित समझा जाएगा।

(138)

114. उत्तरजीविता के संबंध में पूर्वधरणा : जहां दो व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में मरे हैं जिसमें यह अनिश्चित है कि उनमें से कोई, यदि कोई है, किस का उत्तरजीवी है तब जब तक इसके विरुद्ध सिद्ध न हो जाए, यह माना जाएगा कि कम आयु वाला बड़ी आयु वाले का उत्तरजीवी रहा।

(135)

उत्तराधिकार से संबंधित सामान्य सिद्धांत

111. सगे संबंधी को सौतेले संबंधी से ज्यादा प्राथमिकता दी जाएगी : निर्वसीयती संपत्ति के उत्तराधिकार के संबंध में सगे संबंधियों को सौतेले संबंधियों की बनिस्पत ज्यादा अहमियत दी जाएगी, यदि अन्य मामलों में संबधें की प्रकृति समान रहती है।

भाग 2, धारा 15, पृष्ठ 10

उदाहरण

1. सगे भाई को सौतेले भाई के मुकाबले प्राथमिकता दी जाएगी; लेकिन सौतेले भाई को सगे भाई के पुत्र के मुकाबले प्राथमिकता दी जाएगी, क्योंकि भाई-भाई के पुत्र के मुकाबले ज्यादा करीबी उत्तराधिकारी माना जाता है।

2. सौतेले चाचा को सगे चाचा के पुत्र के मुकाबले प्राथमिकता दी जाएगी, क्योंकि चाचा चाचा के पुत्र के मुकाबले करीबी उत्तराधिकारी माना जाता है।

3. सगे भाई की पुत्री को सौतेले भाई की पुत्री की पुत्री के मुकाबले प्राथमिकता दी जाएगी लेकिन पहले को सौतेले भाई की पुत्री के पुत्र के मुकाबले प्राथमिकता नहीं मिलेगी क्योंकि संबधों की प्रकृति दोनों मामलों में समान नहीं है दूसरा, उत्तराधिकारी यद्यपि सौतेला है किंतु धारा 104 के नियम 4 के आधार पर करीबी उत्तराधिकारी है।

(136)

112. दो से ज्यादा उत्तराधिकारी होने पर उत्तराधिकार का तरीका : यदि किसी निर्वसीयती की संपत्ति में दो या दो से ज्यादा संयुक्त उत्तराधिकारी हैं तो संपत्ति इस प्रकार दी जाएगी,

(क) वैसे ही, जब तक इस भाग में स्पष्ट रूप से बतलाए गए प्रावधान के के विरुद्ध न हो, प्रति व्यक्ति न कि प्रति शाखा; और

भाग 2, धारा 24, पृष्ठ 11

(ख) संयुक्त अभिवृत्ति की बजाए साझा अभिवृत्ति के अनुसार।

(137)

113. गर्भस्थ शिशु का अधिकार : निर्वसीयती की मृत्यु के समय गर्भ में पल रहा व्यक्ति जो बाद में जीवित उत्पन्न होता है, निर्वसीयती की संपत्ति में वही दाय

प्राप्त करेगा जो तब होता जब वह बच्चा, लड़का या लड़की निर्वसीयती की मृत्यु से पूर्व उत्पन्न होता। ऐसी अवस्था मे दाय निर्वसीयती की मृत्यु से प्रभावशील होकर उसमें निहित समझा जाएगा।

(138)

114. उत्तरजीविता के संबंध में पूर्वधरणा : जहां दो व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में मरे हैं जिसमें यह अनिश्चित है कि उनमें से कोई, यदि कोई है, किस का उत्तरजीवी है तो तब तक इसके विरुद्ध सिद्ध न हो जाए यह माना जाएगा कि कम आयु वाला बड़ी आयु वाले का उत्तरजीवी रहा।

भाग 2, धारा 16, पृष्ठ 14

---

(139)

115. कुछ मामलों में विभाजन अधिनियम, 1893 लागू : इस संहिता के लागू होने के बाद जहां निर्वसीयती की अचल संपत्ति अथवा व्यवसाय का हिस्सा, चाहे वह उसके अकेले का हो अथवा किसी के साझे में:-

(क) निर्वसीयती के एक या सभी पुत्रों, पौत्रों, परपौत्रों को अन्य संबंधियों के साथ हस्तांतरित हो, और उनमें से कोई एक उसके विभाजन के लिए वाद लाए,

(ख) आठवीं अनुसूची के वर्ग (I) में उल्लिखित पुरुष संबंधियों के साथ एक पुत्री को हस्तांतरित होगी और ऐसे पुरुष संबंधियों में से कोई पुत्री के भाग को उसके अलग प्रयोग (जो ऐसा करने का अधिकार रखता हो) विभाजन के लिए दबाव डालता है;

विभाजन अधिनियम, 1893 (1893 का IV) प्रावधान उसी प्रकार लागू होगा जैसे यदि निर्वसीयती का परिवार संयुक्त होता और वह स्त्री या पुरुष उसके एक भाग के हस्तांतरण के अधिकारी होते।

---

(139)

115. कुछ मामलों में विभाजन अधिनियम, 1893 लागू : इस संहिता के लागू होने के बाद जहां निर्वसीयती की अचल संपत्ति अथवा व्यवसाय का हिस्सा, चाहे वह उसके अकेले का हो अथवा किसी के साझे में, निर्वसीयती के एक या अधिक पुत्रों, पौत्रों, परपौत्रों को, अन्य संबंधियों को एकसाथ हस्तांतरित हो, और उनमें कोई एक उसके विभाजन के लिए वाद लाए।

भाग 2, धारा 12, पृष्ठ 9

विभाजन अधिनियम, 1893 (1893 का IV) का प्रावधान उसी प्रकार लागू होगा जैसे यदि निर्वसीयती का परिवार संयुक्त होता और वह स्त्री या पुरुष उसके एक भाग के हस्तांतरण के अधिकारी होते।

---

(140)

उत्तराधिकारियों की अपात्रता

116. संन्यासी आदि अपात्र हैं : कोई व्यक्ति जिसने पूरी तरह व अंतिम रूप से धारा 110 की उप-धारा 1 के अनुसार परित्याग कर दिया है वह किसी भी संबंधी, चाहे वह रक्त से हो, विवाह से हो अथवा दत्तक से हो, की संपत्ति में दाय के लिए अपात्र माना जाएगा।

(141)

117. अपवित्र पत्नी अपात्र है : ऐसी स्त्री जो विवाह के पश्चात् अपने पति के जीवन काल मे अपवित्र हो, संपत्ति में दाय के लिए अपात्र मानी जाएगी बशर्ते उसने अपनी अपवित्रता को निरस्त न किया हो :

बशर्ते कि किसी ने ऐसी स्त्री पर पति की संपत्ति में दाय पर सवाल न खड़े किए हों और ऐसी कानूनी कार्रवाई जिसमें वह और उसका पति पक्षकार हों, कोर्ट ने उसे अपवित्र माना हो और बाद में इस मुद्दे के बारे में कोर्ट की राय बदल न गई हो।

(142)

118. कुछ विधवाओं के पुर्नविवाह करने से अपात्रता : किसी पूर्वमृतक पुत्र, पौत्र अथवा परपौत्र की विधवा, पिता या भाई की विधवा यदि निर्वसीयती के उत्तराधिकार के निर्धारण के समय पुनर्विवाह कर चुकी हो तो उन्हें उत्तराधिकार का अधिकारी नहीं माना जाएगा।

(140)
उत्तराधिकारियों की अपात्रता

116. संन्यासी आदि अपात्र होना : कोई व्यक्ति जिसने पूरी तरह व अंतिम रूप से धारा 110 की उप-धारा (1) के अनुसार परित्याग कर दिया है वह किसी भी संबंधी, चाहे वह रक्त से हो, विवाह से हो अथवा दत्तक से हो, की संपत्ति में दाय के लिए अपात्र माना जाएगा। *भाग 2, धारा 18, पृष्ठ 11*

(141)

117. अपवित्र पत्नी का अपात्र होना : ऐसी स्त्री जो विवाह के पश्चात् अपने पति के जीवनकाल मे अपवित्र हो, संपत्ति में दाय के लिए अपात्र मानी जाएगी बशर्ते उसने अपनी अपवित्रता को निरस्त न किया हो : *भाग 3, धारा 19, पृष्ठ 11*

बशर्ते कि किसी ने ऐसी स्त्री पर पति की संपत्ति में दाय पर सवाल न खड़े किए हों और ऐसी कानूनी कार्रवाई जिसमें वह और उसका पति पक्षकार हों कोर्ट ने उसे अपवित्र माना हो और बाद में इस मुद्दे के बारे में कोर्ट की राय बदल न गई हो।

(142)

118. कुछ विधवाओं के पुर्नविवाह करने से अपात्रता होना : किसी पूर्वमृतक पुत्र, पौत्र अथवा परपौत्र की विधवा, पिता या भाई की विधवा यदि निर्वसीयती के उत्तराधिकार के निर्धरण के समय पुर्नविवाह कर चुकी हो तो उन्हें उत्तराधिकार का अधिकारी नहीं माना जाएगा।

---

(143)

119. खूनी व्यक्ति का अपात्र होना : कोई व्यक्ति जो खूनी हो अथवा खून करने के लिए उकसाने का अपराधी हो, उसे उस व्यक्ति की संपत्ति में दाय, अथवा अन्य किसी संपत्ति के लिए भविष्य में उत्तराधिकार के लिए अपात्र माना जाएगा जिसका खून हुआ है, या जिसके खून करने के लिए उकसाया गया है।

(144)

120. वे वंशज जिन्होंने धर्म परिवर्तन कर लिया हो : इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व या पश्चात् जहां, कोई व्यक्ति किसी अन्य धर्म में परिवर्तन के बाद हिंदू न रह गया हो तो उसके धर्म परिवर्तन के बाद जन्मे वंशज अपने किसी भी हिंदू संबंधी की संपत्ति में दाय के लिए अपात्र है जब तक ऐसे बच्चे या वंशज उत्तराधिकार के निर्धारण के समय हिंदू हों।

(145)

121. उत्तराधिकारी के अपात्र होने पर उत्तराधिकार का निर्धारण : यदि इस अध्याय के प्रावधान अनुसार किसी व्यक्ति को उत्तराधिकार में दाय के लिए अपात्र घोषित कर दिया गया है तब ऐसी संपत्ति का हस्तांतरण इस प्रकार होगा जिस प्रकार तब होता यदि ऐसा व्यक्ति निर्वसीयती से पूर्व मर चुका हो।

(146)

122. बीमारी, शारीरिक, विकलांगता इत्यादि अपात्रता नहीं हैं : किसी भी व्यक्ति को किसी संपत्ति से इस भाग में उल्लिखित कारणों के अतिरिक्त अन्य कारण, बीमारी, शारीरिक या विकलांगता आदि के कारण उत्तराधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।

(147)

राजसात

123. उत्तराधिकारियों का विफल होना : यदि कोई निर्वसीयती इस भाग के प्रावधान के अनुसार अपने किसी पात्र उत्तराधिकारी को नहीं छोड़ गया है तो ऐसे में सारी संपत्ति सरकार को चली जाएगी और सरकार उस संपत्ति का उपयोग निर्वयसीयती के दायित्वों व जिम्मेदारियों को पूरा करेगी जैसे एक उत्तराधिकारी करता।

(143)

119. खूनी अपात्र है : कोई व्यक्ति जो खूनी हो अथवा खून करने के लिए उकसाने का अपराधी हो उसे उस व्यक्ति की संपत्ति में दाय, अथवा अन्य किसी संपत्ति के लिए भविष्य में उत्तराधिकार के लिए अपात्र माना जाएगा, जिसका खून हुआ है, या जिसके खून करने के लिए उकसाया गया है। *भाग 2, धारा 20, पृष्ठ 11*

(144)

120. धर्म परिवर्तन कर चुके वंशज का अपात्र होना : इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व या पश्चात् कोई व्यक्ति किसी अन्य धर्म में परिवर्तन के बाद हिंदू न रह गया हो तब उसके धर्म परिवर्तन के बाद जन्में वंशज अपने किसी भी हिंदू संबंधी की संपत्ति में दाय के लिए अपात्र है बशर्ते ऐसे बच्चे या वंशज उत्तराधिकार के निर्धारण के समय हिंदू न हों। *भाग 2, धारा 20, पृष्ठ 11*

(145)

121. उत्तराधिकारी के अपात्र होने पर उत्तराधिकार : यदि इस अध्याय के अनुसार किसी व्यक्ति को उत्तराधिकार में दाय के लिए अपात्र घोषित कर दिया गया है तब ऐसी संपत्ति का हस्तांतरण इस प्रकार होगा जिस प्रकार तब होता यदि ऐसा व्यक्ति निर्वसीयती से पूर्व मर चुका हो। *भाग 2, धारा 22, पृष्ठ 11*

(146)

122. बीमारी, शारीरिक, विकलांगता इत्यादि अपात्रता नहीं है : किसी भी व्यक्ति को किसी संपत्ति से इस भाग में उल्लेखित कारणों के अतिरिक्त अन्य कारण, बीमारी, शारीरिक या विकलांगता आदि के कारण उत्तराधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। *भाग 2, धारा 23, पृष्ठ 11*

(147)
राजसात

123. उत्तराधिकारियों की का विफल होना : यदि कोई निर्वसीयती इस भाग के प्रावधान के अनुसार अपने किसी पात्र उत्तराधिकारी को नहीं छोड़ गया है तो ऐसे में सारी संपत्ति सरकार को चली जाएगी और सरकार उस संपत्ति का उपयोग निर्वसीयती के दायित्वों व जिम्मेदारियों को पूरा करेगी जैसे एक उत्तराधिकारी करता। *भाग 2, धारा 25, पृष्ठ 11*

(148)

अध्याय 3

वसीयती उत्तराधिकार

124. वसीयती उत्तराधिकार :

(1) कोई हिंदू वसीयत अथवा ऐसे अन्य वसीयती साक्ष्य द्वारा किसी संपत्ति को जिसके लिए वह ऐसा करने का अधिकारी है, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) के प्रावधानों के अनुसार अथवा अन्य कोई कानून जो उस समय चल रहा हो और हिंदुओं पर भी लागू हो, अपनी संपत्ति को प्रवृत कर सकता है,

(2) यहां दिए गए अधिकार किसी हिंदू को प्राधिकृत नहीं करते,–

(क) किसी व्यक्ति को अपने अधिकार से वंचित करने से, जिसे इस संहिता अथवा उस समय लागू अन्य कानून के तहत भरण–पोषण के लिए नामित किया गया है,

(ख) किसी ऐसी संपत्ति अथवा संपदा में अभिरुचि जिसमें वह कानूनन नहीं रख सकता।

---

(148)

अध्याय 3

वसीयती उत्तराधिकार

124. वसीयती उत्तराधिकार :

(1) कोई हिंदू वसीयत अथवा ऐसे अन्य वसीयती साक्ष्य द्वारा किसी संपत्ति को जिसके लिए वह ऐसा करने का अधिकारी है, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का XXXIX) के प्रावधानों के अनुसार अथवा अन्य कोई कानून जो उस समय चल रहा हो और हिंदुओं पर भी लागू हो, अपनी संपत्ति को प्रवृत कर सकता है।

भाग 3, धारा 1, पृष्ठ 12

(2) यहां दिए गए अधिकार किसी हिंदू को प्राधिकृत नहीं करते, –

(क) किसी व्यक्ति को अपने अधिकार से वंचित करने से जिसे इस संहिता याउस समय लागू कानून के तहत भरण पोषण के लिए नामित किया गया है,

(ख) किसी ऐसी संपत्ति अथवा संपदा में अभिरुचि जिसमें वह कानूनन नहीं रख सकता।

---

(149)

अध्याय 8

भरण-पोषण

125. भरण-पोषण से अभिप्राय : इस भाग में "भरण-पोषण" में शामिल हैं-

(1) सभी मामलों में भोजन, कपड़ा, आवास, शिक्षा व बीमारी में देखभाल व इलाज; तथा

(2) अविवाहित कन्या के संबंध में उसके विवाह व अन्य आकस्मिक व विवेकपूर्ण खर्चे।

पारिवारिक सदस्यों के भरण-पोषण की व्यक्तिगत जिम्मेदारी

126. पत्नी का भरण-पोषण :

(1) इस भाग के प्रावधानों के अधीन, एक हिंदू पत्नी, चाहे वह इस कानून के लागू होने से पूर्व हो या बाद में, अपने पति के जीवनकाल में पति व उसके बाद उसके पिता द्वारा भरण-पोषण की अधिकारी है।

(2) एक हिंदू पत्नी तभी तक अपने पति से भरण-पोषण की मांग कर सकती है जब तक वह उसके साथ रहती है :

परंतु पत्नी बिना अपने भरण-पोषण पाने के अधिकार को खोए बिना अलग रहने की अधिकारिणी है यदि,

(क) यदि वह किसी खतरनाक प्रकार के कोढ़ से ग्रस्त हो अथवा रतिज संबंधी छूत की बीमारी से ग्रस्त हो और उससे संपर्क स्थापित न कर सकता हो;

(ख) अगर वह उसी घर में, जिसमें उसकी पत्नी रह रही है, किसी रखैल को रखता हो;

(ग) अगर वह किसी ऐसी क्रूरता के लिए अपराधी हो, जिससे उसके लिए उसके साथ रहना असुरक्षित हो;

(घ) अगर वह परित्याग का अपराधी हो अर्थात् वह बिना किसी कारण व बिना उसकी सहमति अथवा उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे छोड़ कर चला गया हो;

(ङ) किसी अन्य धर्मग्रहण करने के कारण उसके हिंदू होने को खारिज कर दिया गया हो;

(च) यदि अन्य कोई कारण हो जो उसके अलग रहने को न्यायोचित ठहराता हो।

(3) एक हिंदू पत्नी अलग रहकर भरण-पोषण पाने की अधिकारिणी नहीं है यदि वह अपवित्र हो अथवा अन्य धर्मग्रहण कर लेने के कारण उसके हिंदू होने को खारिज कर दिया गया हो।

(150)

127. विधवा पुत्रवधू का भरण-पोषण : धारा 126 के तहत एक ससुर की अपनी विधवा पुत्रवधू के भरण-पोषण की जिम्मेदारी उस सीमा तक ही है, यदि उसके पास इसके लिए साधन हो व विधवा पुत्रवधू अपनी संपत्ति अथवा अपने पति की जागीर या अपने पुत्र या उसकी जागीर से स्वयं को पोषित करने के काबिल न हो। ऐसी कोई भी जिम्मेदारी उसके पुनर्विवाह करने पर समाप्त हो जाती है।

---

(149)
अध्याय 8
भरण-पोषण

125. भरण पोषण से अभिप्राय : इस भाग में "भरण-पोषण" में शामिल हैं-

(1) सभी मामलों में भोजन, कपड़ा, आवास, शिक्षा व बीमारी में देखभाल व इलाज; तथा

(2) अविवाहित कन्या के संबंध में उसके विवाह व अन्य आकस्मिक व विवेकपूर्ण खर्चे।

भाग 3ए, धारा 3, पृष्ठ 2

पारिवारिक सदस्यों के भरण-पोषण की व्यक्तिगत जिम्मेदारी

126. पत्नी का भरण पोषण :

(1) इस भाग के प्रावधानों के अधीन, एक हिंदू पत्नी, चाहे वह इस कानून के लागू होने से पूर्व हो या बाद में, अपने पति के जीवनकाल में पति व उसके बाद उसके पिता द्वारा भरण-पोषण की अधिकारी है।

(2) एक हिंदू पत्नी तभी तक अपने पति से भरण-पोषण की मांग कर सकती है जब तक वह उसके साथ रहती है :

भाग 4, धारा 26, पृष्ठ 19 और 20

परंतु पत्नी बिना अपने भरण-पोषण पाने के अधिकार को खोए बिना अलग रहने की अधिकारिणी है यदि -

(क) यदि वह किसी खतरनाक प्रकार के कोढ़ से ग्रस्त हो अथवा रतिज संबंधी छूत की बीमारी से ग्रस्त हो और उससे संपर्क स्थापित न कर सकता हो;

(ख) अगर वह उसी घर में, जिसमें उसकी पत्नी रह रही है, किसी रखैल को रखता हो;

(ग) अगर वह किसी ऐसी क्रूरता के लिए अपराधी हो, जिससे उसके लिए उसके साथ रहना असुरक्षित हो;

(घ) अगर वह परित्याग का अपराधी हो अर्थात् वह बिना किसी कारण व बिना उसकी सहमति अथवा उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे छोड़ कर चला गया हो;

(ङ) किसी अन्य धर्मग्रहण करने के कारण उसके हिंदू होने को खारिज कर दिया गया हो;

(च) यदि अन्य कोई कारण हो जो उसके अलग रहने को न्यायोचित ठहराता हो।

(3) एक हिंदू पत्नी अलग रहकर भरण-पोषण पाने की अधिकारिणी नहीं है यदि वह अपवित्र हो अथवा अन्य धर्मग्रहण कर लेने के कारण उसके हिंदू होने को खारिज कर दिया गया हो।

(150)

127. विधवा पुत्रवधू का भरण-पोषण : धारा 126 के तहत एक ससुर की अपनी विधवा पुत्रवधू के भरण-पोषण की जिम्मेदारी उस सीमा तक ही है, यदि उसके पास इसके लिए साधन हो व विधवा पुत्रवधू अपनी संपत्ति अथवा अपने पति की जागीर या अपने पुत्र या उसकी जागीर से स्वयं को पोषित करने के काबिल न हो। ऐसी कोई भी जिम्मेदारी उसके पुनर्विवाह करने पर समाप्त हो जाती है।

भाग 3ए, धारा 8, पृष्ठ 13

---

(151)

128. बच्चों व बुजुर्ग माता-पिता का भरण-पोषण : इस धारा के प्रावधान के अनुसार एक हिंदू पूरी जिंदगी अपने वैध व अवैध बच्चों व बुजुर्ग माता–पिता के भरण–पोषण के लिए जिम्मेदार है।

(2) एक वैध व अवैध पुत्र व पुत्री अपने पिता से तब तक भरण–पोषण के अधिकारी हैं जब तक वे अवयस्क है :

परंतु एक अविवाहित कन्या जब तक वह पिता के साथ रहती है व अविवाहित है, वह अपने पिता से भरण–पोषण की मांग कर सकती है।

(3) एक पिता अपने पुत्र से भरण–पोषण की मांग कर सकता है यदि वह बुजुर्ग व असहाय है।

(152)

129. माता द्वारा बच्चों का भरण-पोषण : एक हिंदू स्त्री अपने वैध व अवैध बच्चों के भरण–पोषण के लिए बाधय है, यदि उसके पास साधन हैं व उसका पति ऐसा करने में असमर्थ है।

---

(151)

128. बच्चों व बुजुर्ग माता-पिता का भरण-पोषण : (1) इस धारा के प्रावधान के अनुसार एक हिंदू पूरी जिंदगी अपने वैध व अवैध बच्चों व बुजुर्ग माता-पिता के भरण -पोषण के लिए जिम्मेदार है।

(2) एक वैध व अवैध पुत्र व पुत्री अपने पिता से तब तक भरण-पोषण के अधिकारी हैं जब तक वे अवयस्क हैं:

परंतु एक अविवाहित कन्या जब तक वह पिता के साथ रहती है व अविवाहित है, वह अपने पिता से भरण-पोषण की मांग कर सकती है।

(3) एक पिता अपने पुत्र से भरण-पोषण की मांग कर सकता है यदि वह बुजुर्ग व असहाय है।

(152)

129. माता द्वारा बच्चों का भरण-पोषण : एक हिंदू स्त्री अपने वैध व अवैध बच्चों के भरण-पोषण के लिए बाध्य है यदि उसके पास साधन हैं व उसका पति ऐसा करने में असमर्थ है।

संपत्ति के उत्तराधिकारियों की उस पर आश्रितों के पोषण की जिम्मेदारी–

130. आश्रितों का भरण-पोषण : धारा 131 के प्रावधान के अनुसार मृतक हिंदू के उत्तराधिकारी इस बात के लिए बाधय है कि वे उसके उत्तराधिकार में प्राप्त संपत्ति पर आश्रितों का भरण–पोषण करें।

इस भाग के उद्देश्य के लिए मृतक के निम्न संबंधियों को उसका आश्रित माना गया है:–

(1) उसके पिता;

(2) उसकी माता;

(3) उसकी विधवा तब तक जब तक पुनर्विवाह नहीं करती;

(4) उसका पुत्र, उससे पहले मृत्यु प्राप्त पुत्र का पुत्र, अथवा उसके पूर्व मृतक के पूर्व मृतक पुत्र का पुत्र, जो कि अवयस्क है और तब तक जब तक वह अवयस्क रहता है। परंतु ये उस सीमा तक होगा यदि वो, पोत्र है तो अपने पिता की जागीर से, और यदि वह प्रपौत्र है तो अपने पिता या दादा की जागीर से भरण–पोषण पाने में असमर्थ रहता है।

(5) उसकी अविवाहित कन्या तब तक जब तक वह अविवाहित रहती है;

(6) उसकी विवाहित कन्या; परंतु ये उस सीमा तक होगा यदि वह अपने पति अथवा अपने पुत्र, से यदि कोई है, या उसकी संपत्ति से भरण–पोषण प्राप्त करने में असमर्थ रहती है;

(7) उसकी विधवा कन्या;

परंतु वह उस सीमा तक होगा यदि वो;

(क) अपने पति की जागीर से, अथवा

(ख) अपने पुत्र, अगर कोई हो अथवा उसकी जागीर से, अथवा

(ग) अपने ससुर या उसके पिता अथवा दोनों में से किसी की जागीर से भरण–पोषण पाने में असमर्थ रहती है;

(8) उसके पुत्र की विधवा, अथवा उसके मृतक पुत्र के पुत्र की विधवा तब तक जब तक वह पुनर्विवाह न कर ले;

परन्तु यह उस सीमा तक होगा यदि वह अपने पति की जागीर से भरण-पोषक प्राप्त करने में असफल है अथवा अपने पुत्र, यदि कोई है, अथवा उसकी सम्पदा से, अथवा नाती के विधवा के मामले में उसके ससूर की संपदा से।

(9) उसका अवयस्क अवैध पुत्र तब तक जब तक वह अवयस्क रहता है।

(10) उसकी अवैध पुत्री तब तक जब तक वह अविवाहित रहती है।

संपत्ति के उत्तराधिकारियों की उस पर आश्रितों के पोषण का जिम्मेदारी-

130. आश्रितों का भरण-पोषण : धारा 131 के प्रावधान के अनुसार मृतक हिंदू के उत्तराधिकारी इस बात के लिए बाधय है कि वे उसके उत्तराधिकार में प्राप्त संपत्ति पर आश्रितों का भरण-पोषण करें

भाग 3ए, धारा 5, पृष्ठ 12

इस भाग के उद्‌देश्य के लिए मृतक के निम्न संबंधियों को उसका आश्रित माना गया है:-

(1) उसके पिता;

(2) उसकी माता;

(3) उसकी विधवा तब तक जब तक पुनर्विवाह नहीं करती;

(4) उसका पुत्र, उससे पहले मृत्यु प्राप्त पुत्र का पुत्र, अथवा उसके पूर्व मृतक के पूर्व मृतक पुत्र का पुत्र, जो कि अवयस्क है और तब तक जब तक वह अवयस्क रहता है। परंतु ये उस सीमा तक होगा यदि वो, पोत्र है तो अपने पिता की जागीर से, और यदि वह प्रपौत्र है तो अपने पिता या दादा की जागीर से भरण-पोषण पाने में असमर्थ रहता है।

(5) उसकी अविवाहित कन्या तब तक जब तक वह अविवाहित रहती है;

(6) उसकी विवाहित कन्या; परंतु ये उस सीमा तक होगा यदि वह अपने पति अथवा अपने पुत्र, से यदि कोई है, या उसकी संपत्ति से भरण-पोषण प्राप्त करने में असमर्थ रहती है;

(7) उसकी विधवा कन्या;

परंतु वह उस सीमा तक होगा यदि वो;

(क) अपने पति की जागीर से, अथवा

(ख) अपने पुत्र, अगर कोई हो अथवा उसकी जागीर से, अथवा

(ग) अपने ससुर या उसके पिता अथवा दोनों में से किसी की जागीर से भरण-पोषण पाने में असमर्थ रहती है;

(8) उसके पुत्र की विधवा, अथवा उसके मृतक पुत्र के पुत्र की विधवा तब तक जब तक वह पुनर्विवाह न कर ले :

परन्तु यह उस सीमा तक होगा यदि वह अपने पति की जागीर से भरण-पोषक प्राप्त करने में असफल है अथवा अपने पुत्र, यदि कोई है, अथवा उसकी सम्पदा से, अथवा नाती के विधवा के मामले में उसके ससूर की संपदा से।

(9) उसका अवयस्क अवैध पुत्र तब तक जब तक वह अवयस्क रहता है।

(10) उसकी अवैध पुत्री तब तक जब तक वह अविवाहित रहती है।

---

(154)

131. उत्तराधिकारियों के आश्रितों के भरण-पोषण की सीमा : जहां कोई आश्रित वसीयत या बिना वसीयत के उत्तराधिकार में इस संहिता के लागू होने के बाद किसी हिंदू पुरुष की मृत्यु के बाद कोई हिस्सा प्राप्त न कर पाए, अथवा जहां वसीयती उत्तराधिकार के मामले में उस आश्रित स्त्री या पुरुष को इस भाग में जितना कहा गया है उससे कम हिस्सा मिलता है,

इस भाग के प्रावधान के अनुसार वह उस उत्तराधिकारी से जिसे संपत्ति का उत्तराधिकार मिला है, से भरण-पोषण पाने के अधिकारी है:

परंतु उत्तराधिकारियों की जिम्मेदारी उसी अनुपात में होगी जिस अनुपात में उन्हें संपत्ति मिली है :

परंतु ये भी कि वह व्यक्ति जो स्वयं एक आश्रित है, वह अन्य लोगों को भरण-पोषण देने का जिम्मेदार नहीं हैं, यदि उसे जो हिस्सा मिला है वह इस भाग के तहत जो उसे मिलना चाहिए उससे कम है, जिसकी जिम्मेदारी उन्हें भरण-पोषण के रूप में देनी है।

(155)
भरण-पोषण की राशि

132. भरण-पोषण की राशि :

(1) इस भाग के तहत, पत्नी, बच्चों या बूढ़े माता-पिता को देने वाले भरण-पोषण की राशि यदि कोई है, तय करने के लिए निम्न बातों को परखा जाएगा-

(क) पक्षों की स्थिति व स्तर;

(ख) दावेदार की न्यायोचित मांग;

(ग) यदि दावेदार पुत्र या पुत्री अपने पिता से अलग रह रहे हैं तो क्या उनकी ऐसी मांग न्यायसंगत है;

(घ) दावेदार की संपत्ति और ऐसी संपत्ति से प्राप्त कोई आय, और दावेदार की अपनी आय, अथवा किसी अन्य माध्यम से प्राप्त आय;

(ङ) इस भाग के प्रावधान के अनुसार उन लोगों की संख्या जिन्हें भरण-पोषण दिया जाना है।

(2) इस भाग के तहत यदि कोई आश्रित हो जिसे भरण-पोषण दिया जाना है, तो उसकी राशि निश्चित करने के लिए निम्न बातों को धयान में रख जाएगा-

(क) मृतक के सभी कर्ज चुकाने के बाद बची कुल जागीर;

(ख) अगर मृतक ने एक वसीयत द्वारा आश्रित के लिए कोई व्यवस्था का प्रावधान रखा हो;

(ग) मृतक व आश्रितों की स्थिति व स्तर;

(घ) दोनों के बीच संबंध की कोटी;

(ङ) आश्रितों की न्यायोचित मांग;

(च) आश्रितों व मृतक के बीच पूर्व रिश्ते;

(छ) उस पुरुष या स्त्री की संपत्ति, अथवा उस संपत्ति से प्राप्त अन्य आय, अथवा उनकी अपनी कमाई, अथवा अन्य किसी माध्यम से प्राप्त आय;

(ज) इस भाग के प्रावधान के अनुसार भरण-पोषण के लिए निश्चित आश्रितों की संख्या;

झ) विधवा के मामले में उसका आचरण।

---

(154)

131. उत्तराधिकारियों के आश्रितों के भरण-पोषण की सीमा : जहां कोई आश्रित वसीयत या बिना वसीयत के उत्तराधिकार में इस संहिता के लागू होने के बाद किसी हिंदू पुरुष की मृत्यु के बाद कोई हिस्सा प्राप्त न कर पाए, अथवा जहां वसीयती उत्तराधिकार के मामले में उस आश्रित स्त्री या पुरुष को इस भाग में जितना कहा गया है उससे कम हिस्सा मिलता है। *भाग 3ए, धारा 3, पृष्ठ 12*

इस भाग के प्रावधान के अनुसार वह उस उत्तराधिकारी से जिसे संपत्ति का उत्तराधिकार मिला है, से भरण-पोषण पाने के अधिकारी है:

परंतु उत्तराधिकारियों की जिम्मेदारी उसी अनुपात में होगी जिस अनुपात में उन्हें संपत्ति मिली है;

परंतु ये भी कि वह व्यक्ति जो स्वयं एक आश्रित है, वह अन्य लोगों को भरण-पोषण देने का जिम्मेदार नहीं है, यदि उसे जो हिस्सा मिला है वह इस भाग के तहत जो उसे मिलना चाहिए उससे कम है, जिसकी जिम्मेदारी उन्हें भरण-पोषण के रूप में देनी है।

(155)
भरण-पोषण की राशि

132. भरण पोषण की राशि :

(1) इस भाग के तहत, पत्नी, बच्चों या बूढ़े माता-पिता को देने वाले भरण-पोषण की राशि यदि कोई है, तय करने के लिए निम्न बातों को परखा जाएगा– *भाग 3ए, धारा 6, पृष्ठ 13*

(क) पक्षों की स्थिति व स्तर;

(ख) दावेदार की न्यायोचित मांग;

(ग) यदि दावेदार पुत्र या पुत्री अपने पिता से अलग रह रहे हैं तो क्या उनकी ऐसी मांग न्यायसंगत है;

(घ) दावेदार की संपत्ति और ऐसी संपत्ति से प्राप्त कोई आय, और दावेदार की अपनी आय, अथवा किसी अन्य माध्यम से प्राप्त आय;

(ङ) इस भाग के प्रावधान के अनुसार उन लोगों की संख्या जिन्हें भरण-पोषण दिया जाना है।

(2) इस भाग के तहत यदि कोई आश्रित हो जिसे भरण-पोषण दिया जाना है, तो उसकी राशि निश्चित करने के लिए निम्न बातों को धयान में रख जाएगा-

(क) मृतक के सभी कर्ज चुकाने के बाद बची कुल जागीर;

(ख) अगर मृतक ने एक वसीयत द्वारा आश्रित के लिए कोई व्यवस्था का प्रावधान रखा हो;

(ग) मृतक व आश्रितों की स्थिति व स्तर;

(घ) दोनों के बीच संबंध की कोटी;

(ङ) आश्रितों की न्यायोचित मांग;

(च) आश्रितों व मृतक के बीच पूर्व रिश्ते;

(छ) उस पुरुष या स्त्री की संपत्ति, अथवा उस संपत्ति से प्राप्त अन्य आय, अथवा उनकी अपनी कमाई, अथवा अन्य किसी माध्यम से प्राप्त आय;

(ज) इस भाग के प्रावधान के अनुसार भरण-पोषण के लिए निश्चित आश्रितों की संख्या;

झ) विधवा के मामले में उसका आचरण।

---

(156)

133. न्यायालय के विवेक के अनुसार भरण-पोषण की राशि :

(1) न्यायालय के विवेक पर होगा कि क्या भरण-पोषण की राशि, और यदि है, तो कितनी राशि इस भाग के प्रावधान के अनुसार तथा धारा 132 की उप-धारा (1) व उपधारा (2) को ध्यान में रखते हुए, जैसा भी मामला हो, जहां तक वे लागू होते है, दी जानी चाहिए।

(2) एक अविवाहित कन्या के मामले में निर्वसीयती से प्राप्त पैतृक संपत्ति से किसी भी मामले में आधे से अधिक नहीं होनी चाहिए जितनी कि उसे मृतक से तब मिलती यदि वह वसीयत न करके मर जाता।

(157)

134. परिस्थितियां बदलने पर भरण-पोषण की राशि को बदला जा सकता है : भरण-पोषण की राशि चाहे वह न्यायालय की डिक्री द्वारा तय की गई हो या समझौते द्वारा, चाहे वह इस कानून के लागू होने से पूर्व निर्धरित की गई हो या बाद में; उसे बाद में यदि परिस्थितियां बदलती हैं और उसे बदलना न्यायोचित हो तो बदला जा सकता है।

(158)

135. ऋणों को प्रमुखता दी जाएगी : इस भाग में दिए अन्य प्रावधानों के रहते हुए इस भाग में दिए भरण-पोषण के अधिकार की मांग से पहले ऋण के सारे विवरणों को प्रमुखता दी जाएगी।

(159)

136. भरण-पोषण कब से लागू होगा : इस भाग के प्रावधान के अनुसार आश्रितों की मांग मृतक की संपत्ति या उसके किसी भाग पर लागू नहीं होगी यदि मृतक ने वसीयत द्वारा, न्यायालय की डिक्री द्वारा, आश्रित और सपत्ति या उसके किसी हिस्से या अन्य के मालिक के मध्य किसी तरह का समझौता हो।

(160)

137. जहां कोई अन्य व्यक्ति भरण-पोषण के लिए हकदार हो वहां हस्तांतरण : यदि किसी संपत्ति से भरण-पोषण प्राप्ति के लिए किसी तीसरे व्यक्ति को अधिकार

हो और वह संपत्ति अथवा संपत्ति के किसी भाग को हस्तांतरित किया गया हो और भरण-पोषण पाने का अधिकार उस व्यक्ति के खिलाफ जा सकता हो और यदि उस व्यक्ति के पास ऐसे किसी अधिकार होने की सूचना है, ऐसे मामले में संपत्ति के खिलाफ उस अधिकार को उस सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है जिस सीमा तक यदि ये संहिता प्रभावी न हुई होती तो लागू होता।

---

(156)

133. न्यायालय के विवेक के अनुसार भरण-पोषण की राशि :

(1) न्यायालय के विवेक पर होगा कि क्या भरण-पोषण की राशि, और यदि है, तो कितनी राशि इस भाग के प्रावधान के अनुसार तथा धारा 132 की उप-धारा (1) व उप-धारा (2) को ध्यान में रखते हुए, जैसा भी मामला हो, जहां तक वे लागू होते हैं, दी जानी चाहिए। *भाग 3ए, धारा 6(2), पृष्ठ 13*

(2) एक अविवाहित कन्या के मामले में निर्वसीयती से प्राप्त पैतृक संपत्ति से किसी भी मामले में आधे से अधिक नहीं होनी चाहिए जितनी कि उसे मृतक से तब मिलती यदि वह वसीयत न करके मर जाता।

(157)

134. परिस्थितियां बदलने पर भरण-पोषण की राशि को बदला जा सकता है : भरण-पोषण की राशि चाहे वह न्यायालय की डिक्री द्वारा तय की गई हो या समझौते द्वारा, चाहे वह इस कानून के लागू होने से पूर्व निर्धारित की गई हो या बाद में; उसे बाद में यदि परिस्थितियां बदलती हैं और उसे बदलना न्यायोचित हो तो बदला जा सकता है। *भाग 3ए, धारा 7(2), पृष्ठ 14*

(158)

135. ऋणों को प्रमुखता दी जाएगी : इस भाग में दिए अन्य प्रावधानों के रहते हुए इस भाग में दिए भरण-पोषण के अधिकार की मांग से पहले ऋण के सारे विवरणों को प्रमुखता दी जाएगी। *भाग 3ए, धारा 8, पृष्ठ 14*

(159)

136. भरण पोषण कब से लागू होगा : इस भाग के प्रावधान के अनुसार आश्रितों की मांग मृतक की संपत्ति या उसके किसी भाग पर लागू नहीं होगी यदि मृतक ने वसीयत द्वारा, न्यायालय की डिक्री द्वारा, आश्रित और सपंत्ति या उसके किसी हिस्से या अन्य के मालिक के मध्य किसी तरह का समझौता हो। *भाग 3ए, धारा 9, पृष्ठ 14*

(160)

137. जहां कोई अन्य व्यक्ति भरण-पोषण के लिए हकदार हो वहां हस्तांतरण : यदि किसी संपत्ति से भरण पोषण प्राप्ति के लिए किसी तीसरे व्यक्ति को अधिकार हो और वह संपत्ति अथवा संपत्ति के किसी भाग को हस्तांतरित किया गया हो और भरण-पोषण पाने का अधिकार उस व्यक्ति के खिलाफ जा सकता हो और यदि उस व्यक्ति के पास ऐसे किसी अधिकार होने की सूचना है, ऐसे मामले में संपत्ति के खिलाफ उस अधिकार को उस सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है जिस सीमा तक यदि ये संहिता प्रभावी न हुई होती तो लागू होता।

---

(161)
भाग 9
विविध

138. नियम बनाने की शक्ति :

(1) इस अधिनियम को लागू करने के उद्देश्य से राज्य सरकार नियम बना सकती है।

(2) विशेषत: और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर विपरीत प्रभाव पड़े, ऐसे नियमों में व्याख्यायित हो सकता है:-

(क) धार्मिक विवाहों से संबंधित दस्तावेज, जिन्हें हिंदू धार्मिक विवाह रजिस्टर में दाखिल किया जाना हो और वे तरीके व परिस्थितियां जिनके तहत, ऐसी प्रविष्टी की जाएगी।

(ख) वे मामले व क्षेत्र जिनमें धार्मिक विवाहों के दस्तावेजों की आवश्यक रूप से प्रविष्टी की जाएगी और इसके विपरीत होने पर दी जाने वाली सजा।

(ग) वे क्षेत्र जिनके लिए विवाह पंजीयक की नियुक्ति की जाएगी तथा उसके कर्तव्य व कार्य;

(घ) वह तरीका जिसमें हिंदू धार्मिक विवाह रजिस्टर तथा हिंदू सिविल मैरिज सूचना पुस्तिका रखे जाएंगे तथा धारा 12 के तहत ऐसे विवाहों के लिए सूचना प्रकाशन का तरीका;

(ङ) धारा 21 के तहत आवेदन की सूचना दिए जाने का तरीका;

(च) किसी सिविल मैरिज अथवा ऐसे किसी कर्तव्य के लिए जो विवाह पंजीयक द्वारा किया गया हो, दिया जाने वाला शुल्क;

(छ) निरीक्षण के लिए दिया जाने वाला शुल्क व हिंदू विवाह रजिस्टर व हिंदू सिविल मैरिज प्रमाण-पत्र पुस्तिका के लेखे-जोखे की प्रमाणित नकल;

(ज) वे प्रारूप जिसमें व अंतराल जिसके अंदर हिंदू प्रमाणित विवाह रजिस्टर व हिंदू सिविल मैरिज प्रमाण-पत्र पुस्तिका की नकलें जन्म, मृत्यु व विवाह महा-पंजीयक को भेजी जाएंगी।

(झ) वे व्यक्ति जिसके द्वारा, वह प्रारूप जिसमें, तथा वह अधिकारी जिसे धारा 24 अ के तहत किसी विवाह की सूचना दी जाएगी;

(न) दत्तकग्रहण के अभिलेखन के आवेदन में उल्लेखित किए जाने वाले दस्तावेज;

(ट) दत्तकग्रहण के अभिलेखन के लिए दिया जाने वाला शुल्क;

(ठ) वे तरीका जिसमें दत्तकग्रहण के रजिस्टर का रख-रखाव किया जाएगा; तथा

(ड) दत्तकग्रहण के रजिस्टर में दाखिल मामलों की नकल प्रमाणित किए जाने का तरीका।

(162)

139. संशोधन व रद्द करना : प्रथम अनुसूची के तीसरे कॉलम में दिए गए कानून उसी के चौथे कॉलम में दी गई सीमा तक संशोधित किए जा सकते हैं, तथा दूसरी अनुसूची के तीसरे कॉलम में दिए गए कानून उसके चौथे कॉलम में दी गई सीमा तक रद्द किए जाएंगे।

---

(161)

भाग 9

विविध

138. नियम बनाने की शक्ति :

(1) इस अधिनियम को लागू करने के उद्देश्य से राज्य सरकार नियम बना सकती है।

(2) विशेषत: और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर विपरीत प्रभाव पड़े, ऐसे नियमों में व्याख्यायित हो सकता है:–

(क) धार्मिक विवाहों से संबंधित दस्तावेज, जिन्हें हिंदू धार्मिक विवाह रजिस्टर में दाखिल किया जाना हो और वे तरीके व परिस्थितियां जिनके तहत, ऐसी प्रविष्टी की जाएगी।

(ख) वे मामले व क्षेत्र जिनमें धार्मिक विवाहों के दस्तावेजों की आवश्यक रूप से प्रविष्टी की जाएगी और इसके विपरीत होने पर दी जाने वाली सजा।

(ग) वे क्षेत्र जिनके लिए विवाह पंजीयक की नियुक्ति की जाएगी तथा उसके कर्तव्य व कार्य;

(घ) वह तरीका जिसमें हिंदू धार्मिक विवाह रजिस्टर तथा हिंदू सिविल मैरिज सूचना पुस्तिका रखे जाएंगे तथा धारा 12 के तहत ऐसे विवाहों के लिए सूचना प्रकाशन का तरीका;

(ङ) धारा 21 के तहत आवेदन की सूचना दिए जाने का तरीका;

(च) किसी सिविल मैरिज अथवा ऐसे किसी कर्तव्य के लिए जो विवाह पंजीयक द्वारा किया गया हो, दिया जाने वाला शुल्क;

(छ) निरीक्षण के लिए दिया जाने वाला शुल्क व हिंदू विवाह रजिस्टर व हिंदू सिविल मैरिज प्रमाण–पत्र पुस्तिका के लेखे–जोखे की प्रमाणित नकल;

(ज) वे प्रारूप जिसमें व अंतराल जिसके अंदर हिंदू प्रमाणित विवाह रजिस्टर व हिंदू सिविल मैरिज प्रमाण–पत्र पुस्तिका की नकलें जन्म, मृत्यु व विवाह महा–पंजीयक को भेजी जाएंगी।

(झ) वे व्यक्ति जिसके द्वारा, वह प्रारूप जिसमें, तथा वह अधिकारी जिसे धारा 24 अ के तहत किसी विवाह की सूचना दी जाएगी;

(ण) दत्तकग्रहण के अभिलेखन के आवेदन में उल्लेखित किए जाने वाले दस्तावेज;

(ट) दत्तकग्रहण के अभिलेखन के लिए दिया जाने वाला शुल्क;

(ठ) वे तरीका जिसमें दत्तकग्रहण के रजिस्टर का रख-रखाव किया जाएगा; तथा

(ड) दत्तक ग्रहण के रजिस्टर में दाखिल मामलों की नकल प्रमाणित किए जाने का तरीका।

(162)

139. संशोधन व रद्द करना : प्रथम अनुसूची के तीसरे कॉलम में दिए गए कानून उसी के चौथे कॉलम में दी गई सीमा तक संशोधित किए जा सकते हैं, तथा दूसरी अनुसूची के तीसरे कॉलम में दिए गए कानून उसके चौथे कॉलम में दी गई सीमा तक रद्द किए जाएंगे।

---

(163)

प्रथम अनुसूची

(देखें धारा 139)

संशोधन

वर्ष	क्र.	संक्षिप्त शीर्षक	संशोधन
1	2	3	4
1872	III	विशेष विवाह कानून 1872	1. उद्देशिका में "और वह व्यक्ति जिन्होंने हिंदू, बौद्ध, सिख अथवा जैन धर्म स्वीकार किया है" का लोप किया जाएगा। 2. धारा 2 में "अथवा उन व्यक्तियों के बीच जिन्होंने निम्न में से एक या अन्य धर्म ग्रहण किया है, यानी, हिंदू, बौद्ध, सिख अथवा जैन धर्म" का लोप किया जाएगा। 3. धारा 23, 24, ... 25 तथा 26 रद्द रहेंगी।

(163)

प्रथम अनुसूची

(देखें धारा 139)

संशोधन

वर्ष	क्र.	संक्षिप्त शीर्षक	संशोधन
1	2	3	4
1872	III	विशेष विवाह कानून 1872	1. उद्देशिका में "और वह व्यक्ति जिन्होंने हिंदू, बौद्ध, सिख अथवा जैन धर्म स्वीकार किया है" का लोप किया जाएगा।

1	2	3	4
			2. धारा 2 में "अथवा उन व्यक्तियों के बीच जिन्होंने निम्न में से एक या अन्य धर्म ग्रहण किया है, यानी, हिंदू, बौद्ध, सिख अथवा जैन धर्म" का लोप किया जाएगा। 3. धारा 23, 24, गवर्नर प्रांतों के कृषि भूमि के उत्तराधिकार को छोड़कर, तथा धारा 25 तथा पूरी तरह रद्द रहेंगी।

(164)

दूसरी अनुसूची

(देखें धारा 139)

रद्द किया जाना

वर्ष	क्र.	संक्षिप्त शीर्षक	रद्द किए जाने की सीमा
1	2	3	4
		केन्द्रीय अधिनियम	
1866	XXI	धर्म परिवर्तित मूल निवासी विवाह-विघटन अधिनियम, 1866	पूरी तरह उस सीमा तक, जहां तक ये हिंदुओं पर लागू होता है, और इस संहिता से असंगत हो।
1923	XII	हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम निर्योग्ताएं निर्मूलन, 1928	वही
1929	II	हिंदू उत्तराधिकार कानून अधिनियम (संशोधन), 1929	वही
1937	XVIII	हिंदू स्त्री संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937	वही
1946	XIX	हिंदू विवाहित स्त्री के अलग निवास व भरण-पोषण अधिकार अधिनियम, 1946	वही
1946	XXXVIII	हिंदू विवाह निर्योग्यता निर्मूलन अधिनियम, 1946	वही
		राज्य अधिनियम	
1933	XXII	मद्रास नंबूदारी अधिनियम, 1932	भाग 5 व 7 को छोड़ कर पूरा

1	2	3	4
1933	XXII	मद्रास मरूमक्कतायम अधिनियम, 1932	वही
1949	IX	मद्रास अलियसंतान अधिनियम, 1949	वही
1100	II	त्रावणकोर नायर अधिनियम, 1100	वही
1100	III	त्रावणकोर एझावा अधिनियम, 1100	वही
1101	VI	नंजीनाड़ वेल्लाला अधिनियम, 1101	वही
1106	III	त्रावणकोर मलयाली ब्राह्मण अधिनियम, 1106	भाग 7 को छोड़कर पूरा
1108	VII	त्रावणकोर क्षत्रिय अधिनियम, 1108	भाग 5 व 7 को छोड़कर पूरा
1115	VII	त्रावणकोर कृष्णावाका मरुमक्कताई अधिनियम, 1115	वही
1107	VIII	कोचीन थैया अधिनियम, 1107	वही
1113	XXIX	कोचीन नायर अधिनियम, 1113	वही
1113		कोचीन मरूमक्काथैयम अधिनियम, 1113	वही
1114		कोचीन नंबूदारी अधिनियम, 1114	केवल VII को छोड़कर
1115		कोचीन मक्काथैयम अधिनियम, 1115	वही

(164)

दूसरी अनुसूची

(देखें धारा 139)

रद्द किया जाना

वर्ष	क्र.	संक्षिप्त शीर्षक	रद्द किए जाने की सीमा
1	2	3	4
		केन्द्रीय अधिनियम	
1866	XXI	धर्म परिवर्तित मूल निवासी विवाह-विघटन अधिनियम, 1866	पूरी तरह उस सीमा तक, जहां तक ये हिंदुओं पर लागू होता है, और इस संहिता से असंगत हो।
1928	XII	हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम निर्योग्ताएं निर्मूलन, 1928	पूरा केवल गवर्नर के प्रान्तों को छोड़कर जहाँ कृषि भूमि में उत्तराधिकार प्रभावित हो
1929	II	हिंदू उत्तराधिकार कानून अधिनियम (संशोधन), 1929	वही
1937	XVIII	हिंदू स्त्री संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937	वही
1946	XIX	हिंदू विवाहित स्त्री के अलग निवास व भरण-पोषण अधिकार अधिनियम, 1946	वही
1946	XXXVIII	हिंदू विवाह निर्योग्यता निर्मूलन अधिनियम, 1946	वही

(165-167)
तीसरी अनुसूची
वर्ग 1
[देखें धारा 5(अ)]
सपिंड संबंध

कॉलम 1	कॉलम 2
1. पुत्री	1. पुत्र
2. पुत्री की पुत्री	2. पुत्र का पुत्र
3. पुत्र की पुत्री	3. पुत्री का पुत्र
4. पुत्री के पुत्र की पुत्री	4. पुत्र के पुत्र का पुत्र
5. पुत्र के पुत्र की पुत्री	5. पुत्री के पुत्र का पुत्र
6. पुत्री की पुत्री के पुत्र की पुत्री	6. पुत्र की पुत्री के पुत्र का पुत्र
7. पुत्री के पुत्र के पुत्र की पुत्री	7. पुत्र के पुत्र के पुत्र का पुत्र
8. पुत्र की पुत्री के पुत्र की पुत्री	8. पुत्री की पुत्री के पुत्र का पुत्र
9. पुत्र के पुत्र के पुत्र की पुत्री	9. पुत्री के पुत्र के पुत्र का पुत्र
10. माता	10. पिता
11. बहन	11. भाई
12. बहन की पुत्री (भांजी)	12. भाई का पुत्र
13. भाई की पुत्री	13. बहन का पुत्र
14. बहन के पुत्र की पुत्री	14. भाई के पुत्र का पुत्र
15. भाई के पुत्र की पुत्री	15. बहन के पुत्र का पुत्र
16. बहन की पुत्री के पुत्र की पुत्री	16. भाई की पुत्री के पुत्र का पुत्र
17. बहन के पुत्र के पुत्र की पुत्री	17. भाई के पुत्र के पुत्र का पुत्र
18. भाई की पुत्री के पुत्र की पुत्री	18. बहन की पुत्री के पुत्र का पुत्र

19. भाई के पुत्र के पुत्र की पुत्री
20. माता की माता
21. माता की बहन
22. माता की बहन की पुत्री
23. माता के भाई की पुत्री
24. माता की बहन के पुत्र की पुत्री
25. माता के भाई के पुत्र की पुत्री
26. माता की बहन की पुत्री के पुत्र की पुत्री
27. माता की बहन के पुत्र के पुत्र के पुत्री
28. माता के भाई की पुत्री के पुत्र की पुत्री
29. माता के भाई के पुत्र के पुत्र की पुत्री
30. पिता की माता
31. पिता की बहन
32. पिता की बहन की पुत्री
33. पिता के भाई की पुत्री
34. पिता की बहन के पुत्र की पुत्री
35. पिता के भाई के पुत्र की पुत्री
36. पिता की बहन की पुत्री के पुत्र की पुत्री
37. पिता की बहन के पुत्र के पुत्र की पुत्री
38. पिता के भाई की पुत्री के पुत्र की

19. बहन के पुत्र के पुत्र का पुत्र
20. पिता के पिता
21. पिता के भाई
22. पिता के भाई का पुत्र
23. पिता की बहन का पुत्र
24. पिता के भाई के पुत्र का पुत्र
25. पिता की बहन के पुत्र का पुत्र
26. पिता के भाई की पुत्री के पुत्र का पुत्र
27. पिता के भाई के पुत्र के पुत्र का पुत्र
28. पिता की बहन की पुत्री के पुत्र का पुत्र
29. पिता की बहन के पुत्र के पुत्र का पुत्र
30. माता के पिता
31. माता का भाई
32. माता के भाई का पुत्र
33. माता की बहन का पुत्र
34. माता के भाई के पुत्र का पुत्र
35. माता की बहन के पुत्र का पुत्र
36. माता के भाई की पुत्री के पुत्र का पुत्र
37. माता के भाई के पुत्र के पुत्र का पुत्र
38. माता की बहन की पुत्री के पुत्र का

पुत्री	पुत्र
39. पिता के भाई के पुत्र के पुत्र की पुत्री	39. माता की बहन के पुत्र के पुत्र का पुत्र
40. पिता की माता की माता	40. पिता के पिता के पिता
41. पिता की माता की बहन	41. पिता के पिता का भाई
42. पिता की माता की बहन की पुत्री	42. पिता के पिता के भाई का पुत्र
43. पिता की माता के भाई की पुत्री	43. पिता के पिता की बहन का पुत्र
44. पिता की माता की बहन के पुत्र की पुत्री	44. पिता के पिता के भाई के पुत्र का पुत्र
45. पिता की माता के भाई की पुत्री का पुत्र	45. पिता के पिता की बहन के पुत्र का पुत्र
46. पिता की माता की बहन की पुत्री के पुत्र की पुत्री	46. पिता के पिता के भाई की पुत्री के पुत्र का पुत्र
47. पिता की माता की बहन के पुत्र के पुत्र की पुत्री	47. पिता के पिता के भाई के पुत्र के पुत्र का पुत्र
48. पिता की माता के भाई की पुत्री के पुत्र की पुत्री	48. पिता के पिता की बहन की पुत्री के पुत्र का पुत्र
49. पिता की माता के भाई के पुत्र की पुत्र की पुत्री	49. पिता के पिता की बहन के पुत्र के पुत्र का पुत्र
50. पिता के पिता की माता	50. पिता की माता के पिता
51. पिता के पिता की बहन	51. पिता की माता के भाई
52. पिता के पिता की बहन की पुत्री	52. पिता की माता के भाई का पुत्र
53. पिता के पिता के भाई की पुत्री	53. पिता की माता की बहन का पुत्र
54. पिता के पिता की बहन के भाई की पुत्री	54. पिता की माता के भाई के पुत्र का पुत्र
55. पिता के पिता के भाई की पुत्री	55. पिता की माता की बहन के पुत्र का पुत्र

56. पिता के पिता की बहन की पुत्री के पुत्र की पुत्री	56. पिता की माता के भाई की पुत्री के पुत्र का पुत्र
57. पिता के पिता की बहन के पुत्र के पुत्र की पुत्री	57. पिता की माता के भाई के पुत्र के पुत्र का पुत्र
58. पिता के पिता के भाई की पुत्री के पुत्र की पुत्री	58. पिता की माता की बहन की पुत्री के पुत्र का पुत्र
59. पिता के पिता के भाई के पुत्र के पुत्र की पुत्री	59. पिता की माता की बहन के पुत्र के पुत्र का पुत्र
60. पिता की माता की माता की माता	60. पिता के पिता के पिता का पिता
61. पिता की माता की माता की बहन	61. पिता के पिता के पिता के भाई
62. पिता की माता की माता की बहन की पुत्री	62. पिता के पिता के पिता के भाई का पुत्र
63. पिता की माता की माता के भाई की पुत्री	63. पिता के पिता के पिता की बहन का पुत्र
64. पिता की माता की माता की बहन के पुत्र की पुत्री	64. पिता के पिता के भाई के भाई के पुत्र का पुत्र
65. पिता की माता की माता के भाई के पुत्र की पुत्री	65. पिता के पिता के पिता की बहन के पुत्र का पुत्र

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय (भाग-II)

खंड 22	बुद्ध और उनका धम्म
खंड 23	प्राचीन भारतीय वाणिज्य, अस्पृश्य तथा 'पेक्स ब्रिटानिका', ब्रिटिश संविधान भाषण
खंड 24	सामान्य विधि औपनिवेशिक पद, विनिर्दिष्ट अनुतोशविधि, न्यास–विधि टिप्पणियां
खंड 25	ब्रिटिश भारत का संविधान, संसदीय प्रक्रिया पर टिप्पणियां, सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना–विविध टिप्पणियां
खंड 26	प्रारूप संविधान : भारत के राजपत्र में प्रकाशित : 26 फरवरी 1948
खंड 27	प्रारूप संविधान : खंड प्रति खंड चर्चा (9.12.1946 से 31.7.1947)
खंड 28	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–5) (16.5.1949 से 16.6.1949)
खंड 29	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–6) (30.7.1949 से 16.9.1949)
खंड 30	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–7) (17.9.1949 से 16.11.1949)
खंड 31	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग– I)
खंड 32	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग– II)
खंड 33	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख और वक्तव्य (20 नवंबर 1947 से 19 मई 1951)
खंड 34	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख और वक्तव्य (7 अगस्त 1951 से 28 सितंबर 1951)
खंड 35	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में
खंड 36	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में
खंड 37	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : भाषण
खंड 38	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–1 (वर्ष 1920 – 1936)
खंड 39	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–2 (वर्ष 1937 – 1945)
खंड 40	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–3 (वर्ष 1946 – 1956)

ISBN (सेट) : 978-93-5109-129-5

सामान्य (पेपरबैक) खंड 22-40

के 1 सेट का मूल्य :

ISBN 978-93-5109-139-4

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

15, जनपथ

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय

भारत सरकार, नई दिल्ली – 110 001

फोन : 011–23320588, 23320571

जनसंपर्क अधिकारी मोबाईल नं. 85880–38789

वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in

ईमेल : cwbadaf17@gmail.com